اِنَّ هٰذَا الْقُرْاٰنَ يَهْدِىْ لِلَّتِىْ هِىَ اَقْوَمُ ۔ (القرآن)

'' निस्सन्देह यह क़ुर्आन उस रास्ते की तरफ़ रहनुमाई करता है जो बिल्कुल सीधा है ।''

Dawatul Quran Vol. I
in Hindi Language

दअ्वतुल क़ुर्आन

पवित्र क़ुर्आन का हिंदी अनुवाद और भाष्य

जिल्द (Vol. I)

सूरह फ़ातिहा से सूरह तौबा
(पारा 1 से 10)

❑❑❑❑

भाष्य :

शम्स पीरज़ादा (रह.)

❍❍❍❍

हिंदी अनुवाद :

मुहम्मद नसरुल्लाह (एम.ए.)

प्राकाशन :

इदारा दअ्वतुल क़ुर्आन

५९, मुहम्मद अली रोड, मुम्बई ४०००० ३

Idara Dawatul Quran
59, Muhammad Ali Road Mumbai 400003
Phone: 23465005

..........4th Edition, April   Price Rs./- 300
.... 550

सूची

सूरह नंबर	नाम सूरह	पृष्ट
1.	अलफ़ातिहा	1
2.	अल्-बक़रः	7
3.	आले-इमरान	163
4.	अन्-निसा	240
5.	अल्-माइदह	332
6.	अल्-अ्नआम	420
7.	अल-अअ्राफ	505
8.	अल-अन्फाल	593
9.	अल्-तौबा	635
	अनुक्रम	i

तस्वीरें और नक्शे

मस्जिदे हराम का नक्शा ---64
हज्ज के स्थल ---104
उहुद की जंग का नक़्शा --214
उहुद पहाड़---215
वारिसों के हिस्सों का सारणी ---252
बनी इस्राईल का बयाबान में भटकना --------------------------------359
नूह की क़ौम का वासवस्थान ---------------------------------------531
लूत और शुऐब की कौमों के वासवस्थान -----------------------------538
समूद की इमारतों के अवशेष –------------------------------------ 539
ऐला --569
बद्र का मार्ग --599
बद्र की जंग का नक़्शा --603
मदीना से तबूक --637
कौन सा क़बीला कहाँ आबाद था----------------------------------644

प्रस्तावना

हिन्दी में दअ़वतुल क़ुरआन का प्रथम भाग (First Volume) जो सूरह फ़ातिहा से सूरह तौबा (प्रारंभिक दस पारों) पर आधारित है, का चौथा ऐडिशन प्रस्तुत करते हुए हम अल्लाह तआ़ला का शुक्र अदा करते हैं। क़ुरआन करीम के जिस सेवा कार्य हेतु इदारे की स्थापना हुई थी इस के लिए अल्लाह ने मार्ग प्रशस्त कर दिए और अपनी दया एवं कृपा की ऐसी छाया डाली कि तफ़्सीर दअ़वतुल क़ुरआन को उर्दू के अ़लावा मराठी, गुजराती, हिन्दी, और अंग्रेज़ी में भी प्रस्तुत करना हमारे लिए संभव हो सका । पूरी तफ़्सीर तीन बड़े भागों पर आधारित है।

कई लोगों तथा समूहों की ओर से इस तफ़्सीर का जो आदर सम्मान हो रहा है इस को हम अल्लाह की ख़ास मेहरबानी समझते हैं और इस के प्रकाशन संबन्धी कार्यों में उस की अतिरिक्त कृपा एवं अनुकम्पा के उम्मीदवार हैं ।

इदारा दअ़वतुल क़ुरआन एक ट्रस्ट है जिस का सर्वप्रथम लक्ष्य क़ुरआन करीम के अनुवाद और तफ़्सीर को विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित करना और बड़े पैमाने पर इस को फ़ैलाना है।ताकि क़ुरआन की दअ़वत और उस का पैग़ाम मुसलमानों में भी और ग़ैर मुस्लिमों में भी अधिक से अधिक लोगों तक आसानी से पहुँच सके।इसी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किताबों का मुल्य कम रखा जाता है।

घाटे की इस स्कीम को चलाने में जो लोग सहायक बनते हैं वे क़ुरआन करीम की एक ऐसी सेवा में सम्मिलित होते हैं जो समय की उभरती हुई माँग है ।

इस तफ़्सीर की तैयारी एक ख़ास सिस्टम से की गयी है। एक तरफ़ मूल अरबी (Arabic Text) और उस का अनुवाद है और उस के सामने के पृष्ट पर तफ़्सीरी नोट।अगर नोट के लिए एक पृष्ट कम पड़ गया है तो उस के अगले पृष्ट पर बाक़ी नोट दिये गए हैं। इस तरीक़े को अपनाने कि वजह से कहीं कहीं पृष्ट ख़ाली छोड़ देने पड़े हैं। किन्तु इस सुन्दर संकलन के कारण अध्यन करने वालों के लिए बड़ी सहूलत हो गयी है। जो लोग इस सिस्टम को निगाह में नहीं रखते वे ख़ाली पृष्ट को देख कर सोचने लग जाते हैं कि व्यर्थ में ऐसा हुआ है।

यह तफ़्सीर हमारे उस्ताद मौलाना शम्स पीरज़ादा रहमतुल्लाह अलैह ने की है जो इदारा दअ़वतुल क़ुरआन के चेअरमैन थे। दुआ़ है कि अल्लाह तआ़ला उन की ख़िदमत क़ुबूल फ़रमाए , उन की मग़फ़िरत फ़रमाए और तफ़्सीर को लोगों की इस्लाह का ज़रिआ बनाए ।

इदारा इन्शाअल्लाह मौलाना मरहूम के छोड़े हुए ज्ञान की पूँजी को लोगों तक पहुँचाने का (कार्य) पूरा पूरा प्रयत्न करता रहेगा । वहीं पाठकों से भी निवेदन है कि इस को अधिक से अधिक लोगों तक पहुँचाने में हमारी निरंतर सहायता करें।

हम दुआ़ करते हैं कि अल्लाह तआ़ला हमें क़ुरआन करीम की सेवा की अधिक से अधिक तौफ़ीक़ अता फ़रमाए।

९ शव्वाल १४२३ हि.
१४ दिसम्बर २००२ ई.

मुहम्मद सिद्दीक़ कुरैशी
सिक्रेटरी
इदारा दअ़वतुल क़ुरआन
मुम्बई ४०० ००३

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

भूमिका

क़ुर्आन करीम ब्रह्माण्ड के स्वामी (रब)की ओर से मानव जगत के नाम एक ऐसा पावन, महान, भव्य एवं क्रान्तिकारी सन्देश है जो लोगों को अचेत अवस्था से निकाल कर सचेत और जागृत करता है और उन में अपने रब (ख़ुदा) की सही पहचान पैदा कर के उस राह पर डालना चाहता है जो ख़ुदा तक पहुँचने की बिलकुल सीधी और एकमात्र राह है । यह क़ुर्आन केवल मुसलमानों को ही संबोधित नहीं करता है बल्कि धर्म और जाति के पक्षपात से परे हटकर समस्त जातियों के लोगों से संबोधित करता है चाहे उन की कोई भी भाषा हो और वे चाहे संसार के किसी भी देश या किसी भी भू भाग के रहने वाले हों।

इस परिस्थिति की वास्तविक माँग यह है कि क़ुर्आन करीम का अनुवाद विभिन्न भाषाओं में किया जाये और इस का प्रकाशन बड़े पैमाने पर किया जाए । गिने चुने लोगों तक पहुँचाने की कोशिश काफी नहीं बल्कि ज़रूरी है कि अपने इर्द गिर्द पाए जाने वाले करोड़ों लोगों तक इसे पहुँचाने का प्लान बनाया जाए ।

इस्लामी दअवत के प्रचार तथा प्रसार का उत्तम एवं प्रभावपूर्ण माध्यम क़ुर्आन ने अपनी यह शान

فَذَكِّرْ بِالْقُرْآنِ مَنْ يَّخَافُ وَعِيْدِ

(क़ुर्आन के द्वारा उन लोगों को नसीहत करो जो मेरी चेतावनी से डरें । सूरह क़ाफ) जैसी आयतों द्वारा प्रकट की हैं। दूसरी तमाम चीजें जो इस्लाम के प्रचार एवं प्रसार अथवा आवहान करने से संबन्ध रखती है उनका महत्व दूसरे दर्जे का है । अत: हर तरह के प्रचारक पाठ्यक्रमों और प्रचारक विवरणों एवं इस्लामी लिट्रेचरों में क़ुर्आन को इस्लामी दअवत अर्थात इस्लाम के प्रचार व प्रसार एवं आह्वान का केन्द्र बिन्दु बनाना चाहिए । और आह्वानकर्ता जो कुछ कहें उस में क़ुर्आन के अनुवाद को प्राथमिकता दी जानी चाहिए । उम्मत के अन्दर इस समय व्यक्ति विशेष के पिछे आँख मूँद कर चल पड़ने, पृथक पृथक गिरोह बनाने और फिर अपने ही गिरोह को सब से सही समझने अर्थात गिरोह का बेजा पक्षपात करने का जो प्रचलन है उस को समाप्त करने के लिए भी यह ज़रूरी है कि उम्मत के लोगों में क़ुर्आन के साथ पूरे विवेक के साथ संबन्ध बनाने की और दृढ़तापूर्वक संबन्ध रखने की कोशिश की जाए । ऐसी संबद्धता,ऐसा लगाव जो उन के अन्दर क़ुर्आन मजीद के समझने की क्षमता पैदा कर दे और सत्य एवं असत्य में फर्क करने की समझ पैदा कर दे ।

इस तरह इन दोहरे उद्देश्यों अर्थात ग़ैर मुस्लिमों तक क़ुर्आन का संदेश पहुँचाने और मुसलमानों में दअवत,उपदेश,प्रचार एवं सुधार के मैदान में क़ुर्आन को केन्द्र बिन्दु बनाने और उस के साथ पूरे विवेक से संबन्ध पैदा करने के लिए ज़रुरी है कि क़ुर्आन का अर्थ और टीका (तफ़्सीर) इस तरह से की जाये कि इस कि असल दअवत को समझने में पढ़ने वाले को मदद मिले । तौहीद, आख़िरत और रिसालत (एकेश्वरवाद परलोक,और ईशदूतता) की दलीलें भली भाँति स्पष्ट हों । नई विचारधारा ने जो गुमराही फैलाई है उस के मुक़ाबले क़ुर्आन ने जो सीधा मार्ग बताया है वह उज्जवल हो । क़ुर्आनी शिक्षाओं से संबन्धित जो ग़लतफ़हमियाँ पायी जाती हैं या पैदा की जाती हैं वह दूर हों, आयतों का सम्बन्ध और कलाम की तरतीब एवं उस की संबद्धता इस तरह स्पष्ट हो कि पढ़ने वाले को उसके अन्दर ज्ञान और बुद्धि के अपार खज़ानों का निशान मिले। जीवन निर्माण और उस की तरबियत एवं पवित्रता के सारे पक्ष स्पष्ट हो जाऐं, इसके तमाम क़ानून और आदेशों के औचित्य पर से सारे परदे उठ जाऐं और जीवन की हर समस्याओं में क़ुर्आन का नेतृत्व एवं उस की रहनुमाई उजागर हो जाए । इन तमाम बातों का प्रबन्ध आज के इन्सान को क़ुर्आन से क़रीब करने के लिए बहुत ही जरूरी है । फिर क़ुर्आन की आहवान विधि, सम्पर्क विधि एवं संबोधन विधि (Approach) भी बिल्कुल अलग है जो अपना एक विशेष स्थान रखती है । यह जिस को भी संबोधित करता है व्यक्तिगत रूप से उसे ख़ुदा और आखिरत से संबन्धित उस की अपनी ज़िम्मेदारियों को महसूस कराता है और उसे इस बात के लिए आमादा करता है कि वह सबसे पहले अपने अक़ीदे (आस्था) और अमल (आचरण) को दुरुस्त करें और अल्लाह का वास्तविक एवं सच्चा बन्दा बन जाए । इस बुनियादी और अन्दरूनी गुण के पैदा हो जाने ही पर उन ज़िम्मेदारियों का अदा कर लेना निर्भर है जो बाहर से और सामाजिक ढाँचे से संबन्ध रखने वाली हैं । दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि क़ुर्आन का असल निशाना इन्सान की अपनी आत्मा है न कि बाह्यव्यवस्था, इस लिए वह इन्सान के सामने सब से पहले वह बातें रखता है जो उस के दिल और दिमाग़ में इन्क़िलाब लाती हैं । इस के बाद ही वह इस क़ाबिल हो पाता है कि बाहर की दुनिया में इन्क़िलाब लाए । मगर इस नये युग में इस्लामी दअ्वत को प्रस्तुत करने का एक नया ढंग अपनाया जा रहा है जिस में इस्लामी व्यवस्था का फल्सफा बयान किया जाता है और असली ज़ोर इसी

व्यवस्था को स्थापित करने पर दिया जाता है। परिणामस्वरूप पाठक अपनी पहली ज़िम्मेदारी का एहसास सही तौर से नहीं कर पाता और न ही दीन का अभिप्राय (Spirit) समझ पाता है बल्कि उस की पूरी दृष्टि इस बाहरी इन्क़िलाब पर केन्द्रित हो कर रह जाती है। इस परिस्थिति के सुधार के लिए आवश्यक है कि समयानुसार क़ुर्आन के दअ्वती आप्रोच (Approach)की व्याख्या की जाए एवं क़ुर्आनी दअवत की व्यख्या करते समय ऐसी वार्ता शैली और ऐसे शब्द (Terms) प्रयोग करने से परहेज़ किया जाये जो इस की इस प्रथम विशेषता और इस की स्पिरिट (Spirit) को प्रभावित करती हों। यद्यपि उर्दू में कई मूल्यवान तफ़सीरें मौजूद है किन्तु उक्त उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए एक संक्षिप्त और व्यापक तफ़्सीर की ज़रूरत है जिस में मुसलमानों के ज़ेहन ही को नहीं बल्कि ग़ैर मुस्लिमों के ज़ेहन को भी सामने रखा गया हो और इस का लिहाज कर के ज़रूरी व्यख्या प्रस्तुत की गई हो। इस के अलावा इस का संक्षिप और व्यापक होना भी ज़रूरी है वर्ना विस्तार के परिणाम स्वरूप कभी उपयोगिता कम हो जाती है और इस का प्रचार एवं प्रसार मुशिकल हो जाता है। इसी प्रकार अधिक संक्षिप्त नोट होने की सूरत में ज़रूरी बातों की व्याख्या भी नहीं हो पाती और विशेष रूप से ग़ैर मुस्लिमों के लिए इस की उपयोगिता कम हो जाती है। इन ही कारणों और उद्देश्यों की ख़ातिर तफ़्सीर ''दअ्वतुल क़ुर्आन'' संकलित की गई है जिस की शुरूआत सन १९७६ ई. में की गई थी और जो उर्दू में मुकम्मल प्रकाशित हो चुकि है। अब हिन्दी में प्रारम्भिक दस पारों की तफ़्सीर (सूरह फ़ातिहा से सूरह तौबा तक) जिल्द (Volume 1) की सूरत में प्रकाशित की जा रही हैं। संपूर्ण तफ्सीर तीन जिल्दों (Three Volumes) पर सम्मिलित होगी हिन्दी में तफ़्सीर दअ्वतुल क़ुर्आन का यह अनुवाद हमारे दोस्त जनाब मुहम्मद नसरूल्लाह एम. ए. ने किया है जो बहुत आसान ज़ुबान में है।

तफ़्सीर दअ्वतुल क़ुर्आन से संबन्धित कुछ बातों का स्पष्टीकरण आवश्यक प्रतीत होता है। संकलन कर्ता ने मूल ग्रंथ (Text) का अनुवाद सीधे अरबी से उर्दू में किया है। इस बात का आवश्यक रूप से लिहाज किया है कि अनुवाद में बोलचाल की भाषा हो न कि स्वतंत्र अनुवाद, क्योंकि स्वतंत्र अनुवाद में सावधानी बरतना मुश्किल हो जाता है जब कि अल्लाह के कलाम के अनुवाद के सिलसिले में अतयंत सावधानी की आवश्यकता है। इस के अलावा स्वतंत्र अनुवाद में शब्दों की रिआयत कम की जाती है। अनुवाद की भाषा यद्यपि सरल,सुन्दर और सुबोध प्रतीत होती है किन्तु भाव अदा करना अनुवाद का बदल (विकल्प) नहीं हो सकता। किसी पंक्ति के अनुवाद और भाव बयान करने में जो अन्तर होता है वह बहरहाल बाकी रहेगा। रहा शाब्दिक अनुवाद तो उस से वांछित उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो सकती क्योंकि इस से अर्थ जटियल हो कर रह जाते हैं। हमारे ख्याल में इन दोनों के दरम्यान आम बोलचाल की भाषा में अनुवाद का तरीक़ा ही अधिक उचित है। फिर यह एक ऐसी सच्चाई है जिस का इन्कार नहीं किया जा सकता कि क़ुर्आन के वाक्य इतने अर्थपूर्ण, उसका बयान इतना व्यापक, उस की शैली ऐसी अनोखी और सुन्दर, उस की तरतीब इतनी गहरी एवं मस्तिष्क को प्रेरित करने वाली और उस के इशारे इस शान के हैं कि इस को किसी दूसरी भाषा में रुपांतरित करना कदपि असंभव है। इस लिए हम जो कुछ कर सकते हैं वह उस का क़रीब क़रीब अनुवाद है ना कि किसी अन्य भाषा में बिलकुल ठीक रुपांतरण।

तफ़्सीरी नोट संकलित करते हुए हम ने मौजूदा नये ज़माने की सोच एवं विचारधारा और क़ुर्आन की दअ्वत और सर्वशक्तिमान शासक एवं परवरदिगार की शिक्षाओं के सिलसिले में उभरने वाले प्रश्नों को सामने रखा है, ताकि ऐसी सोच और ऐसी विचारधारा के लोगों की संतुष्टि हो। किन्तु हम ने इस बात की पूरी सावधानी बरती है कि क़ुर्आन को किसी विशेष रंग में न प्रस्तुत किया जाए। चाहे वह तसव्वुफ़ का रंग हो या सियासत का, और न किसी विशेष सिद्धान्त, विशेष दृष्टिकोण एवं विशेष विचारधारा के समर्थन का इस को माध्यम बनाया जाए। और न ही इस के शब्दों (Terms) का कोई ऐसा भावार्थ बयान किया जाए जो उम्मत की मान्याताओं एवं स्वीकृतियों के विरूद्ध हो। इसी प्रकार अल्लाह के नाम और सिफ़ात के बारे में नेक पूर्वजों (सल्फ़ स्वालिहीन) के उस तरीक़े को अपनाया जाए जिस का पता इमाम मालिक रहमतुल्लाह के बयान से मिलता है। जब उन से इस्तिवा-अलअर्श के बारे में पूछा गया तो उन्हों ने फ़रमाया अल्लाह का अर्श (तख़्त) पर मुस्तवी (बुलंद) होना मालूम है, इस की कैफ़ियत (परिस्थिति) मजहूल (नामालूम) है और इसके बारे में सवाल करना बिदअत (गुमराही) है।

क़ुर्आन की टीका एवं व्याख्या का वास्तविक अधिकार हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत (तरीक़े) को है। इस लिए इस की रौशनी में तफ़सीरी नोट लिखे गए हैं। और मौक़े की मुनासिबत से हदीसें भी नक़ल कर दी गई है। अलबत्ता रिवायतों के मामले में हमने उदारता नहीं बरती है क्योंकि तफ़्सीर से सम्बन्धित बहुत सारी रिवायतें अस्वस्थ हैं अर्थात उस में संदेह की गुंजाइश निकलती है। एवं ऐसी रिवायते भी हैं जो क़ुर्आन के बयान के अनुकूल नहीं बल्कि प्रतिकूल हैं।

फ़िक्र: से संबन्धित मामलों में हम ने किसी फ़िक़्ही मसलक की पाबन्दी नहीं ओढ़ी, बल्कि जो बात भी किताब और सुन्नत से प्रमाणित अथवा उस से निकटतम मालूम हुई उस को स्वीकार

किया है । क़ुर्आन को किसी खास मसलक अथवा विशेष दृष्टिकोण, विशेष विचारधारा की व्याख्या का साधन बनाना ऐसा कठोर जुर्म है जिसके परिणामस्वरूप उम्मत के अन्दर फिर्काबन्दी की सूरत पैद हो गयी है । तफ़्सीर दअ्वतुल क़ुर्आन के सिलसिले में हम ने अरबी की प्रमाणित एवं मशहूर तफ़्सीरों से लाभ उठाया है । जैसे तफ़्सीरे तबरी, तफ़्सीर इब्ने कसीर, तफ़्सीर राज़ी, फ़त्हुलक़दीर -शोकानी, कश्शाफ़, रुहुलमआनी, अहकामुल क़ुर्आन व लिल जस्सास, सैय्यद क़ुत्ब की फ़ी ज़िलालिल क़ुर्आन, तफ़्सीर फ़राही इत्यािदि । उर्दू तफ़्सीरों में मौलाना अबुलकलाम आज़ाद की तर्जुमानुलक़ुर्आन, मौलाना सनाउल्लाह अमृतसरी की तफ़्सीर सनाई, मौलाना मौदूदी की तफ़हीमुलक़ुर्आन, मौलाना अमीन अहसन इस्लाही की तदब्बुरे क़ुरआन, अंग्रेज़ी तफ़्सीरों में मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी की तफ़्सीर,अबदुल्लाह यूसुफ़ अली की तफ़्सीर, इस के अलावा कई दूसरी अरबी और उर्दू तफ़्सीरों एवं अनुवादों से मदद ली है । फिर भी यह ध्यान रहे कि हम ने किसी एक की तफ़्सीर की पाबन्दी नहीं स्वीकार की है बल्कि शोध (Research) का तरीक़ा अपनाया है। इस के अलावा ग़ैर मुस्लिमों को ध्यान में रखते हुए आवागमन, अहिंसा, अवतार, देवमालाई विचारधारा, शिर्क (बहुदेववाद) बुत परस्ती और यह विचार की सारे धर्म एक ही हैं इत्यादि के बारे में क़ुर्आन के दृष्टिकोण को स्पष्ट करने की कोशिश की है एवं आवश्यकतानुसार बाइबिल की पंक्तियाँ भी प्रस्तुत की हैं । ताकि क़ुर्आन के बयान की मज़बूती और भी स्पष्ट हो जाए । इसी प्रकार उन नये सिद्धान्तों एवं विचारों को भी छेड़ा है जो आज मस्तिष्क पर बुरी तरह छाऐ हुए हैं । जैसे परिवार नियोजन, व्यापारी सूद स्त्री पुरुष की समानता और तलाक़ के बारे में पश्चिमी सोच, दीन की सीमित कल्पना, राजनीति और समाजिक जीवन से दीन को बेदखल करना वग़ैरह । इस के अलावा मुसलमानो में फ़ैली हुई गुमराहीयों का भी खण्डन किया गया है। मिसाल के तौर पर क़ब्रपरस्ती, बिदअतें, व्यक्तिपूजा रिवायत परस्ती, वहम एवं खुराफ़ात इत्यादि ।

यद्यपि हम ने तफ़्सीर को सरल और संक्षिप्त रखने के उद्देश्य से इल्मी बहसों को छेड़ना उचित नहीं समझा फिर भी कुछ महत्वपूर्ण जगहों पर और खास तौर से जहाँ मुफ़स्सिरीन (टीकाकारों) में मतभेद हुआ है, हम ने अपनी तहक़ीक़ पूरी दलील के साथ प्रस्तुत करने की कोशिश की है ताकि बात बिलकुल साफ़ हो जाए, इस लिए कहीं कहीं इल्मी बहस का अन्दाज अपनाना पड़ा है । अपने ज्ञान में अत्यन्त निर्घन होने के बावजूद कोशिश की है कि क़ुर्आन की बात बग़ैर किसी कमी बेशी के बिल्कुल निखर कर सामने आ जाए । और दिल एवं दिमाग़ में उतरती चली जाए । यह एक तुच्छ प्रयास है और इस में सफ़लता अल्लाह की तौफ़ीक़ पर निर्भर है ।

दुआ है कि अल्लाह तआला इस काम को पूर्ण करने का साधन प्रदान करे तथा क़ुर्आन समझने की प्रेरणा और ज्ञान एवं विवेक प्रदान करे, ग़लतियों से बचाए, ख़ताओं को क्षमा करे और इस कोशिश को क़ुबूल फ़रमाए ।

शम्स पीरज़ादा
इदारा दअ्तुल क़ुर्आन
५९,मुहम्मद अली रोड
मुंबई -४०००० ३

४ सफ़र १४१६ हि.
५ जुलाई १९९५ ई.

क़ुर्आन का अध्ययन करने वालों से

क़ुर्आन इस आसमान के नीचे वह अकेला ग्रथं है जो अपने शीर्षक,उद्देश्य विषयों की तरतीब,वाक्यों की रचना और अपनी विशेष संबोधन शैली की दृष्टी से इन्सानों द्वारा रचित किताबों से बिलकुल भिन्न और पृथक है । यह शब्द शब्द (word to word) कायनात के शासक सर्वशक्तिमान पालनहार का कलाम है जो उस के रसूल हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर २३ साल की मुद्दत में (सन ६१० ई. से ६३२ ई. तक) मक्का और मदीना में नाजिल हुआ था । इस में स्वयं अल्लाह तआला इन्सान से संबोधित है और उस पर हिदायत की राह खोल कर बता रहा है । किन्तु इस से हिदायत पाने के लिए ज़रूरी है कि आदमी साफ़ और खुले ज़ेहन से उस का अध्ययन करे और हक को स्वीकार करने के लिए अपने दिल और दिमाग़ के दरवाज़ो को खुला रखे । बेजा पक्षपात कूट-कथन (MENTAL RESERVATION) और प्रभावित बुद्धि (PREJUDICED MIND) ऐसे परदे हैं जो क़ुर्आन समझने में आड़े आते हैं ।

इस ग्रथं को इन्सानी किताबों के स्तर पर रखना और उस के विवरण को इन्सानों द्वारा रचित उसूलों और पैमानों से नापना वह बुनियादी ग़लती है जो इन्सान को ग़लत दिशा पर डाल देती है ।

यह किताब एक ऐसी हस्ती का कलाम है जो बड़ी हिकमत वाला (नीतिज्ञ एवं तत्वदर्शी) है इस लिए इस की हर आयत गहरे अर्थ से भरी हुई और इस की हर बात हिकमत से परिपूर्ण है।अब यदि इस की तफ़्सीर लिखने वाले पर या इस का अध्ययन करने वाले पर उस की हिकमतें पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो पाती तो यह मात्र उस की बुद्धि अथवा समझ का कुसूर है ।

जहाँ तक आयतों के संबन्ध का तअल्लुक है जिस तरह तारे आसमान में बिखरे हुए दिखाई देते हैं मगर वह अपनी व्यवस्था (Galaxy System) से जुड़े हुए हैं,इसी तरह क़ुर्आन की आयतें अपनी अपनी सूरतों की व्यवस्था से जुड़ी हुई हैं और कभी कभी तो यह संबन्ध इतना छिपा होता है कि ग़ौर करने ही से समझ में आता है । तथा यह भी सच्चाई है कि कितनी ही आयतों के बीच संबद्धता का कारण वे हालात होते हैं जिन में इन का अवतरण (नुज़ूल) हुआ है । अत: ऐसे में इन में इल्मी संबन्ध तलाश करने के बजाय उन की पृष्ट भूमि (पसमन्ज़र) मालूम करना चाहिए जिस से उनकी संबद्धता बंधी हुई है।

रही बात विषयों के तकरार (पुनरावृत्ती) की तो यह ऐसा ही है जैसे बादलों की गरज जिसकी अधिकता अपने साथ रहमत की बारिश भी लाती है । असल में क़ुर्आन इस तरह की कोई इल्मी किताब नहीं है जिस तरह की इल्मी किताबें इन्सान संकलित करता है और जिस में शीर्षक लगा लगा कर हर शीर्षक पर अलग अलग बहस की जाती है बल्कि वह आहवान करने वाली, शिक्षा देने वाली, नसीहत करने वाली, सुधार करने और तरबियत देनेवाली किताब है जो शरीअत का क़ानून भी बताती है और व्यवहारिक जीवन (Practical Life) में मार्ग दर्शन भी करती है इस के अलावा वह इल्म और हिकमत के मोती भी बिखेरती है । इस लिए अगर इस में एक सबक़ को बार बार दोहराया गया है तो यह इन्सान के अपने वैचारिक, व्यवहारिक प्रशिक्षण के लिए है क्यों कि क़ुर्आन का उद्देश ही चरित्र निर्माण और विशेष गुण के इन्सान तैयार करना है । फिर एक विषय को सौ रंग में बाँधना गहरे, नीतिपूर्ण और सुन्दर साहित्य की विशेषताओं में से है । इस लिए इस को मात्र विषय की पुनरवृत्ति समझना नासमझी के सिवा कुछ नहीं । यह भी ध्यान रहे कि अल्लाह के कलाम का यही अन्दाज़ पिछली आसमानी किताबों में भी रहा है। अत: ज़बूर में तौहीद और अल्लाह की हम्द एवं सना (अल्लाह का गुणगाण) के विषय को कई बार दोहराया गया है । इस से अन्दाज़ा होता है कि इन्सानों की हिदायत के लिए जब कभी अल्लाह का कलाम नाज़िल (अवतारित) हुआ है उसकी लय एक ही रही है ।

अलफ़ातिहा

यह सूरह नुबुव्वत के प्रारम्भिक दौर में मक्का में नाज़िल हुई। इस की सात आयतें हैं । इस सूरह की हैसियत क़ुर्आन के प्रस्तावना की है और इसी सम्बन्ध से इस का नाम सूरह फ़ातिहा अर्थात प्रारम्भिक सूरह है, इस की खूबी यह है कि बहुत छोटी होने के बावजूद इस में पूरे क़ुर्आन का निचोड़ मौजूद है। इसी लिए इसे उम्मुलक़ुर्आन (क़ुर्आन का सार, निचोड़) कहा गया है। क़ुर्आन की दअ्वत के बुनियादी भेदों (Points) तौहीद, आखिरत, और रिसालत को बड़ी खूबी के साथ इस में समो दिया गया है । इसी कारण इस में अल्लाह तआला की रहमत, उस के रब (पालनहार) और उस के इलाह (खुदा, मअ्बूद) होने के गुण बयान हुए हैं जो तौहीद (एकेश्वरवाद) पर दलालत करते हैं, हिसाब के दिन का मालिक होना तौहीद और आखीरत दोनों पर दलालत करता है और ईनाम याफ्ता लोंगों का रास्ता रिसालत के सिलसिले पर दलालत करता है।

इस सूरह के अर्थ पर ग़ौर, विचार करने से रहस्यों और वासतविकताओं के कई पहलू उज्जवल हो जाते हैं और ऐसा महसूस होने लगता है कि जैसे दरिया को कूज़े में (सागर को गागर में) बन्द कर दिया गया है ।

यह सूरह प्रार्थना (दुआ) शैली में है और प्रार्थना भी ऐसी जो एक सुस्भावी मनुष्य (सलीमुलफ़ितरत इन्सान) के ज़मीर (अन्तर आत्मा) की आवाज़ और उस के दिल की गहराइयों से निकला हुआ हम्द (प्रशंसा) का तराना है। गोया इस सूरह से अल्लाह तआला ने इन्सान को यह शिक्षा दी है कि वह इन शब्दों में उस के समक्ष प्राथना में लीन हो । कलाम का यह अन्दाज अत्यन्त कोमल एवं मृदुल है किन्तु जो लोग कोमलता एवं मृदुलता से अनभिज्ञ होते हैं और यह ऐतराज कर बैठते हैं कि अगर यह अल्लाह का कलाम है तो ''मैं शुरू करता हूँ अल्लाह के नाम से''कहने का क्या मतलब है ? हालांकि यहाँ बलाग़त (खुशबयानी) का पहलू निहायत रौशन है, और शैली के भाव से पूर्णतया स्पष्ट है कि ब्रहमाण्ड का सृष्टा अपने बन्दो को यह शिक्षा दे रहा है कि वह उस की हम्द-व-सना (स्तुति) इस शुरुआत के साथ और इन शब्दों में करें और इन वाक्यों के साथ उस के सामने प्रार्थना करें । इस तरह बन्दों को न केवल बन्दगी की शिक्षा दी गई है बल्कि बन्दगी के आदाब भी सिखाए गए हैं । अल्लाह तआला ने इस से पहले यहूद एवं नसारा को इस्लाम का सत्यमार्ग दिखाया था ताकि वह खुद उस पर चलें और दुनिया वालों को उस पर चलने की दअ्वत दें। लेकिन उन्होंने ग़लत रास्ते अपना कर के अपने ऊपर भी सत्य मार्ग गुम कर दिया और दुनिया वालों को भी अन्धकार में भटकने के लिए छोड़ दिया । यह दुआ (प्रार्थना) उस अन्धकार से निकलने की दुआ है । अत: इस की बरकत से दुनिया को क़ुर्आन की रौशनी मिली ।

बन्दा अल्लाह तआला से मार्ग दर्शन की प्रार्थना करता है और अल्लाह तआला उस की दुआ के जवाब में पूरा क़ुर्आन उस के सामने रख देता है कि जिसकी तलाश है हिदायत की वह राह तेरे सामने रौशन है । अब अल्लाह का नाम ले और इस राह पर चल पड़ ।

सूरह फ़ातिहा और नमाज़

नमाज़ की हर रकअत में सूरह फ़ातिहा का पढ़ना अनिवार्य है । यह अल्लाह तआला से मुनाजात (दुआ) है, और अल्लाह तआला बन्दे की ओर ध्यानकर्षित कर हर हर आयत का जवाब प्रदान करता है । हदीस क़ुदसी है जिस में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम फ़रमाते हैं कि अल्लाह तआला इरशाद फ़रमाता है :

''मैंने नमाज़ को अपने और बन्दे के दरम्यान आधा आधा तक़सीम कर दिया है और मेरे बन्दे के लिए वही कुछ है जो उस ने तलब किया । चुनांचे बन्दा जब 'अलहम्दु लिल्लाहि रब्बिल आलमीन' कहता है तो अल्लाह तआला फ़रमाता है, मेरे बन्दे ने मेरी हम्द की जब बन्दा 'अर्रहमा निर्रहीम' कहता है तो अल्लाह तआला फ़रमाता है मेरे बन्दे ने मेरी तारीफ़ की, जब बन्दा 'मालिकि यौमिद्दीन' कहता है तो अल्लाह तआला फ़रमाता है मेरे बन्दे ने मेरी बुज़ुर्गी बयान की जब बन्दा 'इय्याक नअबुदु व इय्याक नस्तईन' कहता है तो अल्लाह तआला फर्माता है यह मेरे और मेरे बन्दे के दरम्यान मुश्तरक (सम्मिलित) है, और मेरे बन्दे के लिए वह कुछ है, जो उस ने तलब किया और जब बन्दा 'इहदिनस्सिरातल मुस्तक़ीम,सिरातल्लज़ीना अन्अम्ता अलैहिम, ग़ैरिल मग़दूबि अलैहिम वलद्दाल्लीन' कहता है तो अल्लाह फ़रमाता है यह मेरे बन्दे के लिए है और मेरे बन्दे के लिए वह कुछ है जो उस ने मुझ से तलब किया।''

(मुस्लिम नसाई)

१. सूरह अलफ़ातिहा

سورة الفاتحة

अनुवाद आयतें: 7

अल्लाह रहमान और रहीम के नाम से [1]

بسم الله الرحمن الرحيم

1. हम्द [2] (प्रशंसा) अल्लाह ही के लिए है [3] जो तमाम कायनात का रब है ।[4]

الحمد لله رب العلمين ①

2. रहमान और रहीम है ।[5]

الرحمن الرحيم ②

3. जज़ा (बदले) के दिन का मालिक है ।[6]

ملك يوم الدين ③

4. हम तेरी ही इबादत करते हैं [7] और तुझ ही से मदद माँगते हैं ।[8]

إياك نعبد وإياك نستعين ④

5. हमें सीधे रास्ते की हिदायत बख़्श ।[9]

اهدنا الصراط المستقيم ⑤

6. उन लोगों का रास्ता की जिन्हें तूने इन्आम (कृपा) से नवाज़ा । [10]

صراط الذين أنعمت عليهم ⑥

7. जिन पर न तेरा प्रकोप हुआ [11] और न वे भटक गये ।[12]

غير المغضوب عليهم ولا الضالين ⑦

तफ़सीर

1. यह क़ुर्आन की प्रारम्भिक आयत है और हर सूरह की शुरूआत सिवाय सूरह तौबा के इसी आयत से हुई है। गोया इस की हैसियत तम्हीद (आरम्भिका) की सी है । यह संक्षिप्त, व्यापक, अर्थपूर्ण और बहुत ही बरकत वाले वाक्य हैं । जिसमें अल्लाह के नाम और उस के दयालुता के गुण का वर्णन है। इन प्रारम्भिक वाक्यों पर ग़ौर करने से माअरिफते इलाही (ख़ुदा की सही पहचान) के दरवाज़े ख़ुलने लगते हैं और इन्सान के अन्दर उसकी सही पहचान का पैदा हो जाना उस की दयालुता की देन है ।

किसी भी अच्छे काम को शुरू करने के लिए इन से अधिक उचित और बेहतर वाक्यों की कल्पना भी नहीं की जा सकती । यही कारण है कि हर अच्छे काम का प्रारम्भ भी इन वाक्यों '' बिस्मिल्लाह '' से करना इस्लामी सभ्यता की रीति है।

पैग़म्बरे इस्लाम हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर वह्य की शुरूआत '' पढ़ अपने रब के नाम से जिसने पैदा किया'' से हुई । बाद में अल्लाह तआला ने यह आयत बिस्मिल्लाह नाज़िल करके बन्दे की रहनुमाई फ़रमाई कि वे इस आज्ञा का पालन इन शब्दों में करें ।

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के बारे में तौरात की किताब 'इस्तिस्ना' में है:

''मैं इस के जाति-भाईयों के मध्य से इन के लिए तेरे (मूसा) समान एक नबी पैदा करूँगा । और अपना वचन उस के मुँह में डालूँगा । जो आज्ञा मैं उसे दूँगा वही वह उन्हें बताएगा । जो मनुष्य मेरे उन वचनों को, जो वह मेरे नाम से बोलेगा, नहीं सुनेगा, उस से मैं लेखा लूँगा ।''

(बाइबल, व्यवस्था विवरण 18:18,19)

यह आयत दुआ की हैसियत रखती है, गोया बन्दा अल्लाह की किताब का प्रारम्भ करते हुए अल्लाह तआला से दुआ करता है कि इस किताब का अध्ययन तेरी तौफ़ीक़ ही पर आधारित है । और हिदायत की राह मुझ पर उसी सूरत में रौशन हो सकती है और वास्तविकताओं व रहस्यों के इस अथाह समन्दर में ज्ञान व अंतर्दृष्टि के मोती, मैं उसी सूरत में चुन सकता हूँ जब कि तू मेरी सहायता करे।

बिस्मिल्लाह का 'ब' क़ुर्आन का पहला अक्षर है और अरबी व्याकरण के अनुसार यह बा-ए-इस्तेआनत है । अर्थात क़ुर्आन का पहला अक्षर ही पढ़ने वाले की यह हैसियत निश्चित कर देता है कि वह एक आजिज़ (बेबस) बन्दा है जो अल्लाह की सहायता का हर समय मोहताज है। और अल्लाह तआला अपनी मार्ग दर्शन (हिदायत) का दरवाज़ा उन ही लोगों पर खोलता है जो ख़ुदा की किताब का अध्ययन ख़ुदा बन कर नहीं करते बल्कि बन्दे की हैसियत से सत्य के खोजी और हिदायत के चाहने वाले बन कर करते हैं ।

2. मतन (Text) में हम्द का शब्द प्रयोग हुआ है जिसका अर्थ तारीफ़ और शुक्र (कृतज्ञता) दोनों का है । ''तारीफ़ अल्लाह ही के लिए है'' का मतलब यह है कि अल्लाह बड़े कमालात वाला और गुणयुक्त है। वह अवगुण, दोष एवं कमजोरीयों से न केवल पाक और मुक्त है बल्कि उसके लिए मंगल ही मंगल और सुन्दरता ही सुन्दरता है और वह खैर एवं बरकत का स्रोत (सरचश्मा) है। उस के ये गुण और खूबियाँ वैयक्तिक व स्थाई हैं और वह तमाम अच्छी खूबियों में अकेला और अद्वितीय है इस लिए अकेले वही प्रशंसनीय है और उसी के गुण गाने चाहिए। उस के सिवा कोई हस्ती नहीं है जो स्वयं अपने तौर पर अपने अन्दर खूबियाँ रखती हो । इस लिए कायनात (विश्व) में एक से अधिक ख़ुदाओं के तसव्वुर के लिए सिरे से कोई बुनियाद ही मौजूद नहीं है । और जब वास्तविकता यह है तो फिर अल्लाह के सिवा किसी दूसरी हस्ती को ईश्वर समझ कर उस के गुण गाने और उसकी माला जपने का सवाल ही कहाँ पैदा होता है?

और 'शुक्र अल्लाह ही के लिए है' का मतलब यह है कि इन्सान जिन बेशुमार नेमतों से नवाज़ा गया है वह सब अल्लाह ही की देन और उस का उपहार है । जैसे जीवन जैसी महान नेमत,खाने-पीने की उत्तम रूचि और उसी के अनुसार रिज़्क (जीविका) का सामान, औलाद जैसी आँखों की ठन्डक, बुद्धि,विवेक और ज्ञान की दौलत और दूसरी प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष नेमतें सब उस की प्रदान की हुई हैं । इस लिए कृतज्ञता का अधिकारी भी अकेले वही है। उसी की नेमतों का आभारी होना चाहिए और उसी का अभिनन्दन करने वाले और कृतज्ञ (शुक्रगुज़ार) बन कर रहना चाहिए ।

शुक्र का यह जज़्बा दीन की बुनियाद है और इसी बुनियाद पर दुनिया के रचयिता (ख़ालिक़े-कायनात) से इन्सान का उचित सम्बन्ध स्थापित होता है । अर्थात यह हिदायत की कुन्जी है । इसी लिए क़ुर्आन इन्सान का बौद्धिक व वैचारिक प्रशिक्षण इस तरह से करता है कि उस के अन्दर शुक्र का जज़्बा उभरे और वह अल्लाह तआला का प्रेमी बन जाए ।

3. अल्लाह उस हस्ती का नाम है जो सम्पूर्ण ब्रहमाण्ड का सृष्टा है । यह नाम हमेशा से उस के लिए ख़ास रहा है। इस शब्द का न तो बहुवचन बनाया जा सकता है और न ही स्त्रीलिंग बनाया जा सकता है। अरबी में इस का अर्थ हक़ीक़ी माबूद वास्तविक (पूज्य) के हैं । दूसरी भाषाओं में इस का ठीक ठीक

बदल मिलना मुश्किल है उर्दू में ख़ुदा और अंग्रेज़ी में God के शब्द आम तौर से ब्रहमाण्ड के सृष्टा के लिए प्रयोग होते हैं लेकिन ख़ुदा का बहुवचन खुदाओं और ख़ुदावन्दान बनाया जाता है और God देवी देवताओं के लिए भी बोला जाता है । इसी लिए इस का इस्त्रीलिंग GODDESS आता है जिस का अर्थ देवी के हैं। अत: शुक्र ग्रह को Goddess Venus कहा जाता है एवं ईसाईयों के त्रीश्वरवाद (तस्लीस के अक़ीदे) में हज़रत ईसा को God The Son की संज्ञा दी गई है।

(The Oxford Eng. Dictionary Vol.IV P.268,271)

मराठी में ईश्वर और परमेश्वर के शब्द खुदाऐ तआला (Supreme Being) के अर्थ में प्रयोग होते हैं लेकिन यह शिव और विष्णु के उपनाम भी हैं । शब्द ईश्वर ईश और वर से मिल कर बना है । ईश का अर्थ मालिक और हाकिम का है और वर का अर्थ उच्चतर, इस प्रकार ईश्वर का अर्थ हुआ ख़ुदाए बरतर (उच्चतर स्वामी) लेकिन इस का स्त्रीलिंग ईश्वरी आता है जो देवी के लिए बोला जाता है । (देखिए Moles Worth's Marathi Eng. Dictionary P.84) इसी तरह परमेश्वर परम और ईश्वर से मिल कर बना है। परम का अर्थ उच्च के हैं और परमेश्वर का अर्थ उच्चतर ईश्वर के। ईशवर और परमेश्वर दोनो शब्दों के प्रयोग से यह स्पष्ट होता है कि यह शब्द यद्यपि ब्रहमाण्ड के सृष्टा के लिए प्रयोग होता है लेकिन उस के लिए विशेष नहीं है बल्कि देवी देवताओं के लिए उन की विशेषता के तौर पर या उपाधि के तौर पर इन का प्रयोग होता है। इसी तरह भगवान की संज्ञा भी खुदा के लिए विशेष नहीं बल्कि विशेष गुण के तौर पर अथवा उपाधि के तौर पर देवताओं के लिए उस का प्रयोग आम है। जैसे भगवान वासुदेव इसी तरह भगवान विष्णु और शिव को भी भगवान कहा जाता है।

लिहाजा यह संज्ञाऐं क़ुर्आन की संज्ञा अल्लाह का बदल नहीं हो सकती जो ब्रहमाण्ड के सृष्टा के लिए बिलकुल विशेष है और हर प्रकार की संभावनाओं से बिलकुल पाक है। यह शब्द वाहिद (एक वचन) है इस का कोई बहुवचन (Plural) नहीं । एवं इस की महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह नाम जुबान पर आते ही ज़ेहन उस के चमत्कारी गुणों की ओर आकर्षित होने लगता है। इसी लिए क़ुर्आन में जहाँ कहीं अल्लाह आया है हम ने अनुवाद में भी लफ्ज़ अल्लाह ही रखा है।

क़ुर्आन में अल्लाह शब्द 2697 बार आया है इस से अन्दाज़ा किया जा सकता है कि इस नाम का ज्ञान कितनी विस्तारपूर्वक और व्याख्या सहित क़ुर्आन में पेश किया गया है ।

4. रब के अर्थ हैं परवरिश करने वाला और मालिक एवं आक़ा (स्वामी)। अल्लाह के कायनात के रब होने का मतलब यह है कि वह कायनात (ब्रहमाण्ड) का केवल सृष्टा और परवरदिगार ही नहीं है बल्कि इस का मालिक व आक़ा भी है। सारे के सारे अधिकार उसी के हाथ में है और कायनात (ब्रहमाण्ड) का सारा इन्तेज़ाम वही तन्हा कर रहा है । सारी मखलूक़ (सृष्टि) उस के सामने विवश है और सब उस के बे इख्तियार व असमर्थ बन्दे हैं। हक़ीक़ी हाकिम और शासक भी वही है क्योंकि मालिक और आक़ा होने का यह अनिवार्य भावार्थ है । उस की यह रुबूबिय्यत (स्वामीत्व) इस संसार तक सीमित नहीं है, बल्कि सितारों से आगे जो और जहाँ हैं वहाँ भी उस की रुबूबिय्यत प्रकाशमान है। अभिप्राय यह कि इन्सान और हैवान, जिन्न और फरिश्ते, दुनिया और आखिरत (परलोक) सब का परवरदिगार और ख़ालिक़ वही है ।

यहाँ यह पहलू विचारनीय है कि रब्बुल आलमीन (सारे जहाँ का रब) फरमाया है, रब्बुलमुसलिमीन (मुसलमानों का रब) नहीं फ़रमाया । क्यों कि अल्लाह किसी एक गिरोह, एक वर्ग, और एक सम्प्रदाय का रब नहीं है बल्कि बिना किसी भेदभाव, पूरी मानव जाति का रब है।

5. रहमान और रहीम दोनों शब्द रहमत शब्द से बने हैं और अल्लाह की सिफ़त है। रहमान मुबालगे (अतिश्योक्ति) का सीग़ा है । जिस का अर्थ है अत्यन्त दयालु । इस में कृपा एवं दया के आवेग का पहलू हावी है और यह इशारा है इस बात की तरफ कि इन्सान की रचना उस के प्रकोप के परिणामस्वरूप नहीं बल्कि कृपा एवं दया के आवेग में हुई है। और उस की यह कृपा एवं दया (रहमत) अत्यन्त विशाल और सर्वव्यापी है जिन से इन्सान का गिरोह,या विशेष सम्प्रदाय या विशेष क़ौम नहीं बल्कि पूरी इन्सानी बिरादरी लाभन्वित हो रही है। और इतना ही नहीं बल्कि सारी सृष्टि और पूरे ब्रहमाण्ड पर उस की कृपा एवं दया छायी हुई है । और सर्वव्यापी कृपा एवं दया के इस भावार्थ की दृष्टि से यह नाम अल्लाह के लिए खास हो गया है और अर्रहमान के नाम से उसी को पुकारा जाता है । गोया इस लफ्ज़ की हैसियत विशेष संज्ञा की सी है, इस लिए खुदा की सिफ़ते रहमत (कृपा एवं दया के गुण) को स्पष्ट करने के लिए अर्रहीम की वृद्धि अत्यन्त उचित हुई ।

रहीम गुण संज्ञा (इस्मे-सिफ़त) है और उस पहलू को प्रकट करता है कि उस की कृपा एवं दया (रहमत) स्थाई और अनन्त है इस से इस बात की ओर इशारा करना अभिप्राय है कि इन्सान की रचना न केवल उसकी रहमत के जोश में आने से हुई बल्कि वह उस पर बराबर अपनी रहमत की बारिश कर रहा है और जो लोग उस के रास्ते पर चलेंगे उन्हें वह हमेशा के लिए (अनन्त रूप से) अपनी रहमत से नवाज़ेगा ।

स्पष्ट रहे कि रहीम को राम के समानार्थ समझना सही नहीं क्योंकि रहीम अल्लाह वहदहू की सिफ़त है और राम एक धार्मिक

पेशवा का नाम है ।

6. अर्थात कियामत का दिन,जब कि अल्लाह अदालत बरपा करेगा और तमाम अगले पिछले इन्सानों को दोबारा ज़िन्दा करेगा ताकि उस के दरबार में पेश हो कर अपने जीवन के कारनामों का हिसाब दें और अपने अच्छे या बुरे कर्मो के अनुसार पुरस्कार या दण्ड पाऐं ।

समता एवं न्याय अल्लाह की सिफ़त है और इसका तक़ाज़ा है कि बन्दों के दरम्यान इन्साफ किया जाए।उस के वफ़ादार बन्दे इनाम से नवाज़े जाऐं और सरकशों को कड़ी सज़ा दी जाए।

ईनाम और सज़ा का यह तसव्वुर आवागमन की धारणा से बिलकुल भिन्न है। क्योंकि आवागमन एक चक्कर है जिस का न कोई प्रारम्भ है न कोई अन्त । इस धारणा के अनुसार यह दुनिया दारूल अज़ाब (यात्ना स्थल) है। यह धारणा इन्सान के दोबारा उठाए जाने, कायनात के शासक की ओर से अदालत के बरपा किये जाने, इन्सानी कर्मो का रिकार्ड पेश किये जाने और अल्लाह की तरफ से हमेशा हमेशा का ईनाम या सज़ा पाने के तसव्वुर से बिलकुल खाली है ।

अदालत की कल्पना इन्सान के स्वभाव में विद्यमान है। इसी कारण इन्सान अदालतें क़ायम करता है।अत:कायनात के शासक का एक दिन सब को जमा कर के अदालत बरपा करना कोई अनुचित बात नहीं बल्कि बुद्धिसंगत और प्रकृतिक स्वभाव से बिल्कुल मेल खाने वाली और उस का खुला तक़ाज़ा है ।

क़ुर्आन में अल्लाह तआला की सिफ़ते रूबूबिय्यत और सिफते अद्ल-व-हिकमत से आख़िरत पर तर्क वितर्क किया गया है जिस का सारांश यह है कि अल्लाह तआला ने इन्सान की परवरिश और रूबूबियत का जो सामान किया उस को इन्सान जब खुली आँखों से देखता है तो रूबूबियत का तक़ाज़ा उभर कर सामने आ जाता है कि पुरस्कार और दण्ड का एक दिन होना चाहिए । ताकि नेक लोगों को उन की नेकियों का भरपूर सिला और बदकारों (कुकर्मियों) को उनके किए कि न्यायपूर्ण सज़ा मिले । क़ुर्आन कहता है कि जिस हस्ती ने तुम्हारे लिए ज़मीन का फ़र्श बिछाया, आसमान को मज़बूत छत बनाया, तुम्हारी रौशनी के लिए सूरज और चाँद चमकाए, तुम्हारे जमालियाती ज़ौक (सौन्दर्य अभिरूचि) के लिए सितारों की रौनक़ भरी महफिल सजाई। हवा को तुम्हारी सेवा में लगाया और बारिश के द्वारा पानी का आश्चर्यजनक इन्तेज़ाम किया । तरह तरह के फल फूल और मेवे पैदा किये । नबातात और अनाज पैदा करके तुम्हारे रिज़्क का सामान पैदा किया । जानवरों को तुम्हारे लिए मुसख्खर (वशीभूत) किया और पहनने व शोभा के लिए लिबास मुहैय्या किया, तात्पर्य यह कि जिसने इस कायनात की महफ़िल को सजा कर तुम पर अपनी नेअमतों की बारिश की,उस हस्ती के बारे में क्या तुम्हारा यह ख्याल है कि उसने यह कारखाना मात्र खेल के तौर पर बनाया है और उस के पीछे कोई उद्देश्य नहीं है और क्या इन नेअमतों के सिलसिले में तुम पर कोई ज़िम्मेदारी नहीं आती कि जिस की पूछ ताछ हो? वास्तविकता यह है कि ईनाम और सज़ा का इन्कार वही कर सकता है जो नफ़्स की इच्छाओं से प्राजित हो गया हो क्यों कि इच्छाओं का दबाव उसे इस बात पर मजबूर नहीं करता कि कर्तव्यपूर्ण जीवन व्यतीत करे बल्कि उस की नजरों में ऐसी ज़िन्दगी को सुन्दर बना कर पेश करता है जिस में किसी के सामने जवाब देने का तसव्वुर न हो और उस पर न ज़िम्मेदारियों का बोझ हो और न उस की आज़ादी सीमित कर दी गयी हो। क़ुर्आन कहता है कि हर इन्सान ज़िम्मेदार है और उस से अवश्य ही उस के कर्मो के बारे में पूछ गूछ होनी है । और फैसले का एक दिन निश्चित है । जिस ने अपनी जिम्मेदारियाँ पूरी की होंगी वह कामयाब होगा और जिसने इनको नज़र अन्दाज़ किया होगा वह नाकाम रहेगा ।

ज़िम्मेदारी का यह एहसास और आखिरत का यह विश्वास आदमी को खुदा और बन्दों के अधिकारों की अदायगी पर आमादा करता है और इस के नतीजे में आदमी ज़िम्मेदाराना, कर्तव्यपूर्ण ज़िन्दगी बसर करने लगता है ।

अर्थात अक़ीदा-आख़िरत की बरकत इस दुनिया ही में जाहिर होने लगती है बशर्ते कि आदमी इस को खूब समझ कर और हक़ीक़त मान कर स्वीकार करे।

7. इबादत अब्द से है जिसका अर्थ है बन्दा और इबादत का अर्थ है बन्दगी । इस के शाब्दिक अर्थ में इताअत भी शामिल है जो खुज़ू (विनम्रता) के साथ हो। चुनांचे लिसानुल अरब में है: وسعنى العبادة فى اللغة الطاعةمع الخضوع (लिसानुल अरब जिल्द ३ पृ. २७३) इबादत की रूह अत्यन्त विनम्रता एवं तुच्छता का इज़हार है। परस्तिश और इस की विभिन्न शक्लें, मसलन क़ियाम, रुकू,सजदा, नमाज़, तवाफ, दुआ, इस्तिआज़ा फ़रयाद और हाजत रवाई के लिए पुकारना, ज़िक्र एवं तस्बीह, गुणगान, और नाम जपना सब इबादत हैं । क़ुर्आन में इबादत का शब्द एक व्यापक परिभाषा के तौर पर इस्तेमाल हुआ है जो परस्तिश, बन्दगी और बेक़ैद एवं बेशर्त आज्ञापालन (जो विनम्रता के साथ हो) के मफ़हूम पर मुश्तमिल है। अल्बत्ता चूँकि परस्तिश इस का प्रथम और सरल मफहूम (भावार्थ) है इस लिए मौक़े की मुनासिबत से यह लफ्ज़ परस्तिश के लिए इस्तेमाल होता है । यहाँ इस शब्द का व्यापक भावार्थ ही तात्पर्य है । इबादत अल्लाह के लिए खास है क्यों कि इबादत के लायक उसी की हस्ती है। एक अल्लाह के सिवा किसी की इबादत जायज़ नहीं चाहे पत्थर हो या पेड़,सूरज हो या सितारे, इन्सान हो या जिन्न और नबी हो या फ़रिश्ते।

(अधिक व्याख्या के लिए मुलाहजा हो सूर : कहफ़ नोट:135)

8. हक़ीक़ी मददगार अल्लाह ही है इस लिए मदद सिर्फ उसी से तलब करना चाहिए चाहे मदद इबादत के मामले में हो या किसी और मामले में। इस से यह बात स्पष्ट है कि किसी पैग़म्बर, वली, जिन्न, फरिश्ता या देवी देवता को मदद के लिए पुकारना हरगिज़ उचित नहीं । इस लिए कि अल्लाह के सिवा कोई मुश्किल कुशा और हाजत पूरी करने वाला नहीं है। यहाँ बन्दा खास तौर से इबादत के मामले में अल्लाह से मदद का इच्छुक है क्योंकि उस की तौफ़ीक़ के बग़ैर इन्सान उस की इबादत का सौभाग्य नहीं प्राप्त कर सकता ।

9. सीधे रास्ते से तात्पर्य वह रास्ता है जो सीधा अल्लाह तक पहुँचता है। और जिस पर चल कर आदमी मंजिले मक़सूद (अभीष्ट लक्ष्य) को पहुँच जाता है। और जो वास्तविक कल्याण एवं सफलता का ज़ामिन और अल्लाह ही रज़ा की प्राप्ति का एक मात्र द्वार है । यह रास्ता इस्लाम और केवल इस्लाम का है। जिस तरह दो बिन्दुओं के बीच केवल एक सीधी रेखा खींच सकते हैं उसी तरह अल्लाह तक पहुँचने का एकमात्र मार्ग यही इस्लाम का सीधा मार्ग है । इस से खुद बखुद उस गुमराह करने वाले सिद्धान्त का खंडन होता है कि तमाम रास्ते अल्लाह तक पहुँचते हैं लिहाज़ा आदमी जिस राह पर भी चल पड़े, खुदा तक पहुँच ही जाएगी । यह ग़लत क़िस्म की उदारता है और क़ुर्आन इन्सान को उदारता के इस धोका पूर्ण विचार (पुरफ़रेब तसव्वुर) में छोड़ना नहीं चाहता ।

इस्लाम को राजमार्ग कहने में दीने हक़ीक़ी (वास्तविक दीन) का तसव्वुर भी छिपा है अर्थात यह दीन ''धार्मिक रस्मों का संग्रह'' नहीं है बल्कि एक जीवन सिद्धान्त (Way of Life) है जिस पर चल कर और अमली जिद्दोजहद कर के ही इन्सान कामयाबी की मन्ज़िल को पहुँच सकता है।

10. अर्थात हम हक़ीक़ी ईनाम के इच्छुक हैं और तेरे हुज़ूर इस की दरख्वास्त ले कर हाज़िर हुए हैं, हम पर हिदायत और शरीअत की राह खोल दे और अपने फ़ैज़ (बखशिश) और अपनी खुशनूदी (प्रसन्नता) से हमें नवाज़ा । अल्लाह तआला अपने हक़ीक़ी ईनाम से नबियों, सिद्दीक़ीन (सच्चे लोगों),शहीदों और स्वालिहीन (नेक लोगों) को नवाज़ता रहा है। यह दुआ इसी ईनाम पाने वाले गिरोह की राह पर चलाने के लिए है। यहीं से रिसालत पर ईमान लाने कि ज़रूरत भी उभर कर सामने आ जाती है। अल्लाह के रास्ते को मालूम करने का इन्सान के पास कौन सा माध्यम है । इन्सान अपनी फ़ितरत (प्रकृति) से उस के रास्ते, उस की इबादत के तौर तरीक़े और उस की पसन्द और ना पसन्द को निश्चित (Fix) नहीं कर सकता बल्कि यह बातें अल्लाह तआला के बताने से ही मालूम हो सकती है । इसी मक़सद के लिए अल्लाह तआला ने विभिन्न जबानों और मुल्कों में पैग़म्बर भेजे ।

11. अल्लाह का प्रकोप उन लोगों पर हुआ जिन्होंने अल्लाह के दीन और उस की शरीअत को दिल की आमादगी के साथ क़ुबूल नहीं किया और इच्छाओं के पीछे पड़ कर शरअी एहकाम का विरोध करने लगे और सरकशी का रवैय्या अपना बैठे, इस की मिसाल यहूद हैं।

12. गुमराह वे लोग हुए जिन्होंने अल्लाह के दीन की नेमत को पाया लेकिन वह ग़ुलू (सीमोल्लंघन) बिदअत, सन्यास और फलसफियाना बहसों के चक्कर में पड़ कर सही रास्ते से बहुत दूर निकल गए । इस की मिसाल ईसाई हैं।

यहाँ यहूद और ईसाईयों की गुमराही की तरफ इशारा किया गया है क्यों कि सिराते मुस्तक़ीम (सीधा रास्ता) अर्थात दिने हक़ को पाने के बाद उसे गुम करने की यह जीती जागती और स्पष्ट मिसालें हैं और इस से अभिप्राय यह है कि उम्मते मुस्लिम: को मुतवज्जेह किया जाए ताकि वह इन गुमराह मिल्लतों की सी रविश न अपना लें। रहे मुशरिक, काफिर, और मुलहिद (खुदा का इन्कार करने वाले) तो वह परले दर्जे के गुमराह हैं और उन की गुमराही बयान की मुहताज नहीं ।

इस सूरह के ख़त्म पर आमीन कहना ज़रुरी हैं जिस का अर्थ है क़बूल फ़रमा।

सूरह अल्-बक़रः

२. अल्-बक़र:

नाम : इस सूरह का नाम अल् बक़र: है । यह क़ुर्आन करीम की सब से बड़ी सूरह है जो २८६ आयतों से सुसज्जित हैं । क़ुर्आन की सूरतों में अत्यंत गहरे और बड़े विषय बयान हुए हैं। इस लिए उन के नाम शीर्षक के बजाय सूरह के प्रमुख शब्द या फिर प्रारंभिक शब्दों की मुनासिबत से निर्धारित किये गये हैं जो परिचय का काम देते हैं । चूँकि इस सूरह में एक जगह गाय का वर्णन है इस लिए पहचान के तौर पर इस सूरह का नाम अल् बक़र: (गाय) रखा गया है। सूरतों के यह नाम नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अल्लाह तआला के निर्देशानुसार निर्धारित किए थे ।

नाज़िल होने का समय यह सूरह मदनी है। इस का अधिकतर भाग हिजरत के फौरन बाद मदीना में दो साल के अन्दर नाज़िल हुआ । अल्बत्ता कुछ आयतें बाद में नाज़िल हुईं। मिसाल के तौर पर सूद से बचने संबन्धीत आयतें मदीने के आख़री दौर में नाज़िल हुईं किन्तु विषय की मुनासिबत से इस में शामिल कर दी गई । ध्यान रहे कि क़ुर्आनी आयतों की तरतीब भी अल्लाह तआला के आदेशानुसार हुई हैं।

पृष्ठ भूमि हिजरत के बाद मामला यहूदियों से पेश आया था जिन की बस्तियाँ मदीने के आस पास थीं। यह लोग तौहीद, रिसालत, और आख़िरत (एकेश्वरवाद, दूतकर्म, और परलोक) को मानते थे और वास्तव में उन का दीन इस्लाम ही था किन्तु सदियों की अवनति अथवा पतन ने इन को असल दीन से बहुत दूर कर दिया था।अत: उन की आस्था (अकीदों) में ग़ैर इस्लामी तत्व काफ़ी घुल मिल गए थे और उन के व्यवहारिक जीवन में बहुत सी ऐसी रस्में और रीतियाँ शामिल हो गई थीं जो असल दीन में नहीं थीं। और जिन के सबूत स्वयं उन के ग्रंथ तौरात में न थे। इस सूरह में उन को उसी असल दीन अर्थात इस्लाम की ओर दअवत दी गई है ।

केन्द्रीय विषय सूरह का केन्द्रीय विषय हिदायत है। इस में स्पष्ट किया गया है कि जिस तरह इस से पहले अल्लाह तआला इन्सानों की हिदायत के लिए नबियों द्वारा ग्रन्थ भेजता रहा है उसी तरह उस ने हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को क़ुर्आन के साथ नियुक्त किया है। अत: क़ुर्आन और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर ईमान ले आओ। इस के बिना न तो अल्लाह को मानने का कोई औचित्य रह गया है और न ही इस के बिना जिन्दगी अल्लाह के रंग में रंग सकती है।

आयतों की तरतीब अपने कर्मानुसार सूरह का प्रारंभिक भाग आयत 1 से 20 तक भूमिका की हैसियत रखता है जिस में बताया गया है कि इस हिदायत को किस मनोवृत्ति के लोग स्वीकार करेंगे ।

आयत 21 से 29 में आम इन्सानों को संबोधित कर के उन्हें अपने रब की दासता स्वीकार करने का आवहान किया गया है क्योंकि हिदायत की राह यही है । स्पष्ट किया गया है कि जो लोग अल्लाह की हिदायत से मुँह मोड़ते हैं उनका व्यवहारिक जीवन कितना ग़लत हो कर रह जाता है और अन्जाम कितना बुरा होगा । इस के विरूद्ध जो लोग अल्लाह की दासता स्वीकार करते हैं, एवं उस की हिदायत से मुँह नहीं मोड़ते उन का व्यवहारिक जीवन किस तरह सँवरता है और उन का अन्जाम कितना अच्छा होगा ।

आयत 30 से 39 में सब से पहले इन्सान आदम की ख़िलाफत (प्रतिनिधित्व) और शैतान की मुख़ालफ़त (प्रतिद्वंद्विता) की सत्य घटना बयान की गयी है जिस से मानव इतिहास का पहला अध्याय रोशन हो कर सामने आ जाता है। और बुनियादी सवालो का संतोषजनक जवाब मिल जाता है मिसाल के तौर पर मानव और मानवता का आरम्भ किस प्रकार हुआ?दुनिया में इन्सान की पोज़ीशन (वस्तुस्थिति) क्या है? इस की रचना किसी स्कीम के तहत है या यूँ हि?और अगर स्कीम के तहत है तो वह क्या स्कीम है? इन्सान की कामयाबी का दारोमदार किस बात पर है?इस सत्य घटना से यह बात उभर कर सामने आती है कि पहले इन्सान हज़रत आदम को जो हिदायत दी गई थी वह इस्लाम ही था । और वही इन्सानियत का वास्तविक दीन है। गोया अल्लाह तआला इन्सान की रहनुमाई का साधन मानव रचना के साथ ही करता रहा है। और इन्सानियत की शुरूआत इस्लाम ही से हुई है ।

आयत 40 से 123 में बनी इस्राईल को संबोधित कर के इस हिदायत-नामे क़ुर्आन पर और इसके लाने वाले पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर ईमान लाने की दअ्वत दी गई है और साबित किया गया है कि इस हिदायत नामे का अवतरण और आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की नियुक्ति ठीक ठीक उन भविष्वाणियों के अनुकूल हुई है जो उन की अपनी किताबों तौरात इत्यादि में मौजूद हैं। बनी इस्राईल इस अहं में डूबे थे कि नुबुव्वत उन्हीं के वंश का अंश हैं और एक ऐसे नबी पर ईमान लाना जो इस वंश का अंग न हो कर अरब के उम्मियों (अन्पढ़) में पैदा हुआ हो अपनी तौहीन समझते

थे । उन से कहा गया है कि अल्लाह की हिदायत क़ुबूल करने के मामले में किसी भी प्रकार के विद्वेष, कलह एवं पक्षपात का दखल नहीं होना चाहिए वर्ना आदमी अल्लाह की हिदायत से बिलकुल ही वंचित हो जाता है चाहे वह अपने आप को कितना ही दीनदार या धार्मिक आदमी समझता रहे। इस के साथ ही साथ बनी इस्राईल का ऐतिहासिक तथ्यों से परिपूर्ण अतीत, बयान किया गया है और बता दिया गया है कि उन के अन्दर कैसी अपराधिक मनोवृत्ति परवरिश पाती रही है और किस तरह वे मानसिक, वैचारिक, नैतिक और व्यवाहारिक पतन से दोचार हुए। इस का वास्तविक कारण यह है कि उन्होंने व्यवहारिक रूप से (Practically) अल्लाह की हिदायत से मुँह मोड़ा।

बनी इस्राईल की धार्मिकता का सर्वेक्षण प्रस्तुत करते हुए दीन की उस हक़ीक़त को खुले शब्दों में बयान कर दिया गया है कि बचाव और मुक्ति का दारोमदार ईमान और अच्छे कर्मे में निहित है न कि किसी विशेष वंश या विशेष धार्मिक समूह से जुड़ने में ।

आयत 124 से 167 में हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के ख़ाना-ए-काबा––मरकज़े-तौहीद––को निर्माण करने का वृत्तांत बयान हुआ है। इस के अन्तर्गत यह बताया गया है कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम जो बनी इस्राईल, बनी इस्माईल दोनों वंश के प्रधान पितामह (जद्देअमजद) हैं और जिन को यहूदी, ईसाई,मक्का के मुश्रिकीन और मुसलमान सब ही अपना पेशवा मानते हैं। वह मात्र अल्लाह की हिदायत के अनुयायी थे और उन का दीन इस्लाम था । यहूदियत या ईसाईयत या कोई और धर्म न था। इसी इस्लाम की दअ्वत देने और दुनिया वालों की रहनुमाई के लिए अल्लाह तआला ने उम्मते-वस्त बरपा की है । जिस का क़िबला मस्जिदे-हराम (खाना-ए-काबा) है । इस क़िबला को मक्का के मुश्रिकीन के क़ब्ज़े से आज़ाद कराने के लिए ईमान वालों को जिहाद करना पड़ेगा और जान एवं माल की क़ुर्बानीयाँ देनी पड़ेंगी। साथ ही स्पष्ट किया गया है कि खाना-ए-काबा के निर्माण के समय हजरत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने जो दुआ की थी, हजरत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम इस दुआ के प्रातिक हैं और आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की दअ्वत कठोर विरोध के बावजूद सफल रहेगी और दीन इस्लाम ग़ालिब (विजयी) हो कर रहेगा ।

आयत 168 से 242 में शरीअत के एहकाम और क़ानून बयान किये गए हैं जो व्यक्तिगत जीवन से भी संबन्धित हैं और सामाजिक जीवन से भी। धार्मिक भी हैं और नैतिक भी,दाम्पत्य भी हैं और सोशल भी। यह वह रहनुमाई है जो इस्लाम ने जीवन के विभिन्न विभागों में की है समय और आवश्यकतानुसार बुनियादी अक़ीदे भी पेश किये गए हैं। क्योंकि इन्ही की बदौलत आदमी हिदायत की राह पर क़ायम रह सकता है।

आयत 243 से 283 में हिदायत का केन्द्र ख़ाना-ए-काबा को बहुदेववादियों (मुश्रिकीन) के क़ब्ज़े से मुक्त कराने के लिए जिहाद की, और इस सिलसिले में माल खर्च करने (इन्फ़ाक़) की प्रेरणा दी गई है । साथ ही अल्लाह की राह में माल खर्च करने (इन्फ़ाक़) के विपरीत सूद का हराम होना बयान किया गया है। इस के अलावा कारोबारी संबन्धों को दुरुस्त रखने के सिलसिले में भी हिदायतें (निर्देश) दी गयी हैं ।

आयत 284 से 286 उपसंहार है। इस में उन लोंगों के ईमान लाने का वर्णन है जो किसी विद्वेष, कलह और पक्षपात में लिप्त न थे कि किसी रसूल को मानें और किसी को न मानें बल्कि हक़ पसन्द (सत्यप्रिय) थे। इस लिए अल्लाह तआला ने उन पर हिदायत की राह खोल दी । अत: उन की ज़ुबान से वह दुआ अदा हुई जो उन के कर्तव्यनिष्ट होने का प्रतीक है।

तिलावत की प्रेरणा हदीस में है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फरमाया

لا تجعلوا بيوتكم مقابر ان الشيطان ينفرمن البيت الذى تقرُءُ فيه سورة البقرة (مسلم)

“ अपने घरों को क़ब्रस्तान न बनाओ,शैतान उस घर से भाग जाता है जिसमें सूरह बक़र:पढ़ी जाती है”। (मस्लिम)

यह इस लिए कि सूरह बक़र: में शैतान की साज़िशों को बेनिक़ाब किया गया है और इस में दाम्पत्य जीवन के क़ानून भी बयान किये गये हैं एवं ईमान और हिदायत की राह बिलकुल स्पष्ट कर दी गयी है । इस लिए जिस घर में इस को समझ कर पढ़ने पढ़ाने का आयोजन अथवा प्रबन्ध किया जायेगा वहाँ शैतान को फितना और फसाद बरपा करने में सफलता नहीं मिल सकेगी।

२. सूरह अल्-बक़र:

سُوْرَةُ الْبَقَرَةِ

अनुवाद आयतें: 286

अल्लाह रहमान और रहीम के नाम से

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

1. अलिफ़ लाम मीम। [1]

الٓمّٓ ۚ ﴿١﴾

2. यह अल्लाह की किताब है ।[2] इस में कोई संदेह नहीं। हिदायत [3] है मुत्तक़ियों (अल्लाह से डरनेवाले) के लिए ।[4]

ذٰلِكَ الْكِتٰبُ لَا رَيْبَ ۛ فِيْهِ ۛ هُدًى لِّلْمُتَّقِيْنَ ۙ ﴿٢﴾

3. जो ग़ैब [5] पर ईमान [6] लाते हैं, नमाज़ [7] क़ायम करते हैं और जो रिज़्क़ (जीविका) हम ने उन को दिया है उस में से ख़र्च करते हैं ।[8]

الَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِالْغَيْبِ وَ يُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَمِمَّا
رَزَقْنٰهُمْ يُنْفِقُوْنَ ۙ ﴿٣﴾

4. जो किताब (ऐ पैग़म्बर !) तुम पर नाज़िल की गई है और जो किताबें तुम से पहले नाज़िल की गई थीं उन सब पर ईमान [9] लाते हैं और आख़िरत [10] पर यक़ीन रखते हैं ।

وَالَّذِيْنَ يُؤْمِنُوْنَ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ ۚ
وَبِالْاٰخِرَةِ هُمْ يُوْقِنُوْنَ ۗ ﴿٤﴾

5. यही लोग [11] अपने रब की तरफ से हिदायत पर हैं और यही लोग फलाह [12](सफलता) पाने वाले हैं ।

اُولٰٓئِكَ عَلٰى هُدًى مِّنْ رَّبِّهِمْ ۗ
وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ ﴿٥﴾

6. जिन लोगों ने कुफ़्र (इन्कार) किया [13] उन के लिए बराबर है।तुम उन्हें ख़बरदार करो या न करो,[14] वे ईमान लाने वाले नहीं ।

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا سَوَآءٌ عَلَيْهِمْ ءَاَنْذَرْتَهُمْ
اَمْ لَمْ تُنْذِرْهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ﴿٦﴾

7. अल्लाह ने उन के दिलों और उन के कानों पर मुहर [15] लगा दी है।और उन की आँखों पर परदा है । उन के लिए सख़्त अज़ाब [16] (कठोर यातना) है ।

خَتَمَ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ وَعَلٰى سَمْعِهِمْ ۗ وَعَلٰٓى اَبْصَارِهِمْ
غِشَاوَةٌ ۫ وَّلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ﴿٧﴾

8. और लोगों में ऐसे भी हैं [17] जो कहते हैं कि हम अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान लाए हैं मगर वास्तव में वे मोमिन (ईमान लाने वाले) नहीं हैं ।

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّقُوْلُ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ
وَبِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَمَا هُمْ بِمُؤْمِنِيْنَ ۘ ﴿٨﴾

तफ़्सीर

1. यह और इस तरह के अक्षर कई सूरतों की शुरूआत में आए हैं जिन्हें ''हुरूफ़े-मुक़त्तआत'' कहते हैं इन हुरूफ़ (अक्षरों) को अलग अलग कर के पढ़ा जाता है। 29 सूरतों की शुरूआत ''हुरूफ़े-मुक़त्तआत'' से हुई है । ये हुरूफ (अक्षर) सूरतो के ख़ास ख़ास विषयों की तरफ इशारा करते हैं। इस सूरह के विषयों पर ग़ौर करने से मालूम होता है कि अलिफ़ का इशारा अल्लाह और उस की आयात (निशानियों) की तरफ़, लाम का इशारा ला इलाह इल्लल्लाह (नहीं है कोई पूज्य सिवाय अल्लाह के) की तरफ़ और मीम का इशारा तीन बातों की तरफ़ है । एक उस के मिल्क (संपत्ति) और मालिक होने की तरफ़,दूसरे मलाएका (फ़रिश्तों) की तरफ़ जिनके माध्यम से नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर क़ुर्आन नाज़िल किया गया और तीसरे मोमिनीन और मुत्तक़ीन (अल्लाह पर ईमान लाने वालों और उस का भय रखने वालों) की तरफ़ है जिन के लिए यह क़ुर्आन हिदायत और ख़ुशखबरी बन का नाज़िल हुआ। ये विषय इस सूरह में विशेष रूप से बयान हुए हैं मिसाल के तौर पर आयतुलकुर्सी आयत 255 जो इस सूरह की भव्यतम एवं प्रमुखतम आयत है अलिफ़ और लाम की बहुत ही स्पष्ट ताबीर है कि **''अल्लाहु लाइलाहा इल्ला हुव''**से शुरू होती है । गोया 'अलिफ़' अल्लाह की तौहीद (अकेले होने) का निशान है तो 'लाम' उस के नकारात्मक पक्ष अर्थात शिर्क (बहुदेववाद) के ग़लत होने की पहचान। इस के अलावा इन हुरूफ़ (अक्षरों) का सुरह के दूसरे विषयों से भी गहरा सम्बन्ध है। जैसे इस सूरह की आयत 243, 246 और 258 "الم" (अलम) से शुरू होती है जिन में तीन विभिन्न घटनाऐं बयान हुई हैं ।पहली घटना एक गिरोह की जीवन, मृत्यु की,दूसरी तालूत की और तीसरी हज़रत इब्राहीम के बादशाह के दरबार में तौहीद (एकेश्वरवाद) की दअवत पेश करने की ।

क़ुर्आन की इस विशेष शैली की मिसाल ज़बूर (भजन संहिता) में भी मौजूद है । अत: ज़बूर (भजन संहिता) के अध्याय 119 में इब्रानी शब्दों का अधिक प्रयोग हुआ है । भजन संहिता (ज़बूर)119:137 में है:-

''ص '' (इब्रानी उच्चारण सादे) हे यहोवा तू सच्चा (सादिक़) है स्पष्ट है इस आयत में सादे (''ص '') सादिक़ (सच्चा) की ओर इशारा कर रहा है। इसी तरह ज़बूर (भजन संहिता) 119:121 में है ।

''ع ''(इब्रानी उच्चारण ऐन) मैं ने तो न्याय (अद्ल) और धर्म का काम किया है ।''

इस आयत में ऐन (''ع '') अद्ल की तरफ़ इशारा कर रहा है। इसी तरह ज़बूर (भजन संहिता) 119:73 में है

''ی '' (इब्रानी उच्चारण योद) तेरे हाथों से मैं बनाया और रचा गया हूँ ।''

इस आयत में ''ی '' योद का अक्षर यद (हाथ) की तरफ इशारा कर रहा है। इसी लिए अरब वासियों को क़ुर्आन के इस संबोधन शैली में मुअम्मा या पहेली के किस्म की कोई बात महसूस नहीं हुई वरना वह ज़रूर सवाल करते कि इन अक्षरों का क्या मतलब?वैसे भी मात्र अक्षर कोई अर्थ नहीं रखते जब तक कि वह संज्ञाओं या क्रियाओं के साथ इस्तेमाल न हों । इस लिए औचित्यपूर्ण बात यही है कि इन का इस्तेमाल चिन्ह एवं संकेत के तौर पर हुआ है । जिस ज़माने में क़ुर्आन नाज़िल हुआ उस की हिफाज़त का दारोमदार ज़बानी याद कर लेने पर था और इस हक़ीक़त से इन्कार नहीं किया जा सकता कि सूरतों को याद (हिफ़्ज) कर लेने में ख़ास विषयों की ओर संकेतों से एवं सूरतों के परिचायक नामों (शीर्षकों से बड़ी मदद मिलती है और यह तरीक़ा सूरतों की पहचान करने में बड़ा ही उपयुक्त एवं सहायक होता है। इस लिए क़ुर्आन ने इस शैली को अपनाया। किसी भी सूरत में इन अक्षरों को मुअम्मा अथवा पहेली समझना सही नहीं,क्योंकि क़ुर्आन हिदायत की किताब है जो अरबी में नाज़िल हुई है, इस में अर्थों का समुद्र अवश्य है किन्तु मुअम्मे जैसी कोई बात नहीं है। (अधिक व्याख्या के लिए देखिये सूरह यूनुस नोट नं.1)

2. किताब कोई हो उस समय तक वह अल्लाह की किताब नहीं हो सकती जब तक वह स्वयं अल्लाह की ओर से अवतरित होने का दावा न करती हो और उस के संवाद अथवा लेख भी इस की शहादत (गवाही) देते हों । क़ुर्आन स्वयं अल्लाह की ओर से अवतरित होने का स्पष्ट रूप से दावा भी करता है और उस के संवाद एवं लेख भी खुली शहादत देते हैं कि यह उसी अल्लाह ही की वाणी है जो सारे जगत का रब है । इस के अल्लाह की ओर से अवतरित होने के बारे में मामूली शक की भी गुंजाइश नहीं है । क़ुर्आन को हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की रचना मानना एक बेबुनियाद एवं बुद्धि से परे की बात है क्यों कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) उम्मी (Unlettered-निरक्षर) थे और क़ुर्आन जैसा भव्यतम एवं महान ग्रंथ जिस में मानव जीवन के लिए संपूर्ण मार्गनिर्देश हो एक उम्मी के बस की बात नहीं हो सकती। इस के अलावा क़ुर्आन का यह चैलेन्ज है कि इस जैसी किताब तमाम

जिन्नात और इन्सान मिल कर भी नहीं लिख सकते। क़ुर्आन के इस चैलेनज़ का जवाब आज तक नहीं दिया जा सका। जब क़ुर्आन नाज़िल हो रहा था तो उस दौर के ज्ञानी और भाषा पर अच्छी पकड़ रखने वाले लोग भी इस का जवाब न दे सके एवं बाद के दौर का भी कोई व्यक्ति इस दावे को ग़लत साबित न कर सका।

3. क़ुर्आन के हिदायत होने का मतलब यह है कि यह किताब अल्लाह तक पहुँचने का रास्ता दिखाती है। जीवन की उलझी हुई राहों में यह किताब सीधी राह की तरफ रहनुमाई करती है और आस्था, विश्वास एवं विचार, व्यवहार, आचार एवं गतिविधियों के बारे में सही दिशा देती है। इस की रौशनी में इन्सान सही रास्ते पर चल कर अपनी अभीष्ट मन्ज़िल अथवा लक्ष्य को पहुँच सकता है शर्त यह है कि वह ख़ुले ज़ेहन से इस का अध्ययन करे और हर तरह के पक्षपात से ऊपर उठ कर हक़ बात को क़ुबूल करने के लिए आमादा हो जाए।

4. क़ुर्आन ने दूसरी जगह पर अपने ''हुदल्लिन्नास'' ''هُدًى لِلنَّاس'' (तमाम लोगों के लिए हिदायत हो -2:185) की पुष्टि की है। वास्तविकता यह है कि क़ुर्आन सरासर हिदायत है और उस की हिदायत सब ही के लिए सामान्य है। किन्तु जिस तरह सूरज की रोशनी से वही लोग फायदा उठा सकते हैं जो अपनी आँखें खुली रखें उसी तरह क़ुर्आन की रोशनी से भी वही लोग फायदा उठा सकते हैं जिन के दिलों में अपने पैदा करने वाले, पालनहार की महानता का आभास और उस के प्रकोप का भय हो। इस प्रकृतिक क्षमता को यहाँ तक़्वा (परहेज़गारी) के शब्द से व्यक्त किया गया है। मनुष्य के अन्दर यदि यह गुण हो तो वह भले और बुरे के भेद को समझ सकता है और भलाई और नेकी का इच्छुक बन सकता है। यह तक़्वा (परहेज़गारी मौलिक रूप से इन्सान की प्रकृति एवं उस के स्वाभाव में समाया हुआ है। क़ुर्आन इस गुण का पोषण करता है और इसे परवान चढ़ाता है। जो लोग इस प्रकृतिक क्षमता को नष्ट कर चुके हों और इस के फलस्वरूप वह अपने ही पैदा करने वाले पालनहार से संबन्ध न रखना चाहते हों और न दायित्वपूर्ण, कर्तव्यनिष्ठ एवं नियंत्रित जीवन व्यतीत करने के लिए आमादा हों वह क़ुर्आन की हिदायत से कोई लाभ नहीं उठा सकते। तक़्वा (परहेज़गारी) का यह स्वभाविक एवं प्रकृतिक गुण हिदायत ग्रहण करने के लिए अति आवश्यक है। आगे जो गुण बयान किये गये हैं वह इस बुनियादी तक़्वा की देन और हिदायत ग्रहण करने का फल है।

5. ग़ैब से मुराद वह सच्चाईयाँ हैं जो मानव अनुभव से बाहर हैं जैसे ख़ुदा, फरिश्ते, वह्य, जन्नत, दोज़ख इत्यादि।

''ग़ैब पर ईमान लाते हैं''का मतलब यह है कि वह मात्र अनुभव के ग़ुलाम नहीं हैं बल्कि उन सच्चाईयों को स्वीकार करते हैं जो यद्यपि उन के अनुभव और व्यवहार में नहीं आये हैं किन्तु अल्लाह का पैग़म्बर इन की सूचना दे रहा है और हमारी प्रकृति, हमारा स्वभाव और हमारी सदबुद्धि इन के हक़ होने की शहादत देती है। ग़ैब पर ईमान लाना कमज़ोर आस्था अथवा रूढ़िवादिता की परिचायक नहीं है बल्कि इस से अक़्ल की उड़ान बुलन्द होती है और इन्सान की रूहानी तरक़्क़ी होती है। जो लोग अनुभव के चौखटे में अपने आप को क़ैद कर लेते हैं और वास्तविकताओं को मात्र इस आधार पर स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होते कि वह उन के व्यवहार एवं अनुभव में नहीं आए हैं। वह ऊँचे स्थान तक पहुँचने की प्रकृतिक क्षमता खो बैठते हैं। इस के बाद न वह ख़ुदा को पहचान पाते हैं और न अपने आप को। इस महरूमी का नतीजा यह निकलता है कि वह ज़िन्दगी के मक़सद और उस के लक्ष्य के बारे में अटकल की बातें करने लगते है

6. ईमान लाने का अर्थ पूरे विश्वास और श्रद्धा के साथ मान लेना है। जो व्यक्ति अल्लाह, उस के आदेश, उस के निर्देश और उस की तमाम निशानियों पर इस तरह ईमान लाये जिस तरह क़ुर्आन में ईमान लाने का आदेश दिया गया है। जिस के अन्तर्गत रिसालत (Prophethood) और आखिरत इत्यादि पर ईमान लाना भी है एवं स्वयं को संपूर्ण रूप से उस परवरदिगार को समर्पित कर दे और उस के फैसलों पर संतुष्ट हो जाए वह मोमिन है।

स्पष्ट रहे कि ईमान वही मान्य एवं स्वीकृत है जो दिल की आमादगी के साथ हो किन्तु मुँह से स्वीकार करना भी आवश्यक है। इसी लिए इस्लाम का पहला स्तंभ यह है कि आदमी अपनी ज़बान से कलमा-ए-शहादत (मैं गवाही देता हुँ कि अल्लाह के सिवा कोई पूज्य नहीं और मैं गवाही देता हूँ कि हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अल्लाह के बन्दे और उस के रसूल हैं) कहे।

7. नमाज़ क़ायम करना, नमाज़ पढ़ने के मुक़ाबले में अधिक व्यापक बात है। नमाज़ क़ायम करने के अर्थ में पूरे दिल के लगाव के साथ एवं विनयपूर्वक (ख़ुलूस, ख़ुशूअ और ख़ुज़ूअ के साथ) नमाज़ पढ़ना, नमाज़ के सारे कार्य, खड़े होना (क़ियाम), झुकना (रूकुअ) नमस्तक (सजदा) इत्यादी को पूरे नियम से अदा करना, जमाअत (मिल कर पढ़ने) का आयोजन करना, नमाज़ की सफों (पंक्तियों) को दुरुस्त रखना, नमाज़ के समय की पाबंदी करना, अर्थात् नमाज़ को उस के पूरे सम्मान के साथ अदा करना शामिल है।

8. ख़र्च करने से अभिप्राय अल्लाह की राह में मात्र उस को प्रसन्न करने के लिए खर्च करना है, जिस में ज़कात और सदक़ा एवं खैरात की सारी किस्में शामिल हैं। यह गोया बन्दे

की ओर से इस बात को स्वीकार करना है कि माल अल्लाह का ही प्रदान किया हुआ है और इस कृपा पर वह उसका कृतज्ञ (शुक्रगुज़ार) है। नमाज़ क़ायम करना और अल्लाह की राह में खर्च करना वे बुनियादी नेकियाँ हैं जो तमाम भलाइयों का स्रोत हैं ।

9. अर्थात ये लोग हर तरह के, गिरोही, क़ौमी, नसली और भौगोलिक पक्षपात से पाक हैं। वे अल्लाह की नाज़िल की हुई किताबों में कोई भेद भाव नहीं करते कि किसी को मानें और किसी को न मानें बल्कि वे उस की तमाम किताबों को बिलकुल सही समझते हैं चाहे वह उन की अपनी क़ौम के पैग़म्बर पर नाज़िल (अवतरित) हुई हो या किसी और क़ौम के पैग़म्बर पर ।

लेकिन जो लोग अल्लाह की हिदायत के मानने वाले ही न हों या केवल इस किताब को आसमानी किताब मानते हो जो उन की अपनी क़ौम के पैग़म्बर पर नाज़िल हुई थी उन पर क़ुर्आन की हिदायत की राह खुल नहीं सकती ।

यहूदी तौरात को जो हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम पर नाज़िल हुई थी, मानते थे किन्तु इन्जील को जो हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम पर नाज़िल हुई थी और क़ुर्आन को जो हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर नाज़िल हुआ है मानने से इन्कार करते थे। इसी तरह ईसाई तौरात और इन्जील को तो आसमानी किताब मानते थे लेकिन उन्हें क़ुर्आन के आसमानी किताब होने से इन्कार था। क़ुर्आन ने अपने अनुयायियों को जिस आस्था और जिस श्रद्धा की शिक्षा दी वह यह थी कि वे हर प्रकार के पक्षपात एवं विद्धेष से ऊपर उठ कर तौरात, इन्जील, क़ुर्आन और दूसरे तमाम ग्रंथ जो नबियों पर अवतरित हुए थे, ईमान लाऐं ।

10. आखिरत का शब्द दुनिया की तुलना में उस दुनिया (लोक) के लिए बोला जाता है जहाँ इन्सान को जी उठने के बाद अपने कर्मो का अच्छा या बुरा फल पाना और हमेशा हमेशा रहने वाला जीवन भोगना है। दुनिया की वर्तमान व्यवस्था की एक दिन समाप्ति होगी जिस के बाद अल्लाह तआला एक दूसरा जगत स्थापित करेगा और उस में पूरी मानव जाति को दोबारा पैदा करेगा ताकि उन के कर्मों का हिसाब ले और नेकी करने वालों को जन्नत में और बदी करने वालों को दोज़ख़ में डाल दे। आखिरत की यह धारणा हिसाब किताब की यह विचारधारा ईसाईयों की मौलिक धारणा त्रीश्वरवाद से बिल्कुल भिन्न है, एवं इस कल्पना को निश्चित रूप से रद्द करता है ।

''आख़िरत पर यक़ीन रखते हैं '' यह इशारा इस बात की तरफ है कि आखिरत पर ईमान लाने अर्थात् इसे मानने का दावा तो बहुत से लोग कर सकते हैं किन्तु वास्तव में आखिरत पर यक़ीन रखने वाले वह परहेज़गार (मुत्तक़ी) लोग हैं जिन के सदगुण ऊपर बयान किये गये हैं।

11. अर्थात हिदायत (सत्यमार्ग पर होने के दावेदार बहुत से हो सकते हैं। जो व्यक्ति जिस धर्म से संबन्ध रखता है वह इसी भ्रम में रहता है कि उस का चुना हुआ मार्ग ही सत्य मार्ग है अथवा वह हिदायत पर है। किन्तु अल्लाह तआला की दृष्टि में जो सत्यमार्ग है उस सत्यमार्ग अथवा हिदायत पर सिर्फ वे लोग हैं जो ऊपर बयान किये गए सदगुणों से सुसज्जित हैं और मुक्ति एवं सफलता उन ही के लिए निश्चित है।

12. वास्तविक सफलता दुनिया की खुशहाली नहीं बल्कि आखिरत की सफलता है और सफल वास्तव में वे लोग हैं जो अल्लाह के निर्णय में सफ़ल ठहराए जायें। क़ुर्आन के नज़्दीक सफलता का सही माप दण्ड (मेयार) यही है और इसी को सामने रख कर अपने लिए सोचने, ग़ौर करने, और कर्म करने का मार्ग निश्चित करना चाहिए ।

13. कुफ्र का अर्थ है इन्कार करना और इस से अभिप्राय साधारणता उन बातों का इन्कार है जिन पर ईमान रखना अथवा जिनको मानना क़ुर्आन के नज़दीक ज़रूरी है। इस आयत में ख़ास तौर से वे लोग मुराद हैं जिन्होंने क़ुर्आन को अल्लाह की किताब स्वीकार करने से इन्कार किया।

14. ख़बरदार करने का मतलब कुफ्र के भयंकर परिणाम से आगाह (सचेत) करना है। जिस तरह एक डाक्टर मरीज़ को बदपरहेज़ी से डराता है और इलाज में असावधानी बरतने के परिणाम से आगाह करता है, उसी प्रकार एक पैग़म्बर बुराइयों, गुमराहियों और कुफ्र के भयंकर परिणाम से सचेत करता है। विष जान लेवा है यह तो सब को मालूम है किन्तु इस बात से लोग अनजान हैं कि कुफ्र और गुमराहियों का परिणाम भी घातक है। इसी लिए पैग़म्बर की दअ्वत (आहवान) में सचेत (ख़बरदार) करने का पक्ष हावी रहता है।

15. यहाँ उन लोगों का हाल बयान हुआ है जिन पर क़ुर्आन की सत्यता पूरी तरह स्पष्ट हो गयी थी किन्तु मात्र हटधर्मी के कारण उन्होंने इस को अल्लाह की किताब स्वीकार करने से इन्कार कर दिया था और फिर अपने इस इन्कार (कुफ्र) पर इस तरह जम गए तथा सत्य (हक़) के विरोध में इतना बढ़ गए कि सत्य स्वीकारने की क्षमता उन के अन्दर बाक़ी नहीं रही। इसी वास्तविकता को यह कह कर व्यक्त किया गया है कि ''इन के दिलों और कानों पर मुहर लगा दी है।''

मतलब यह कि इन लोगों के ईमान न लाने का कारण यह नहीं है कि सत्य इन पर स्पष्ट नहीं हुआ बल्कि इस का कारण यह है कि सत्य को नकारने का जो रवैया इन्होंने अपनाया उस के फलस्वरूप वे क़ुदरत के क़ानून की चपेट में आ गये और उन की

सत्य को सुनने, समझने और पहचानने की क्षमता लुप्त हो गई।

इस से यह हक़ीक़त उजागर होती है कि इन्सान के दिल में सत्य (हक़) उसी सूरत में प्रवेश पा सकता है जब कि वह अपना दिल, अपने कान, और अपनी आँखें खुली रखे।

16. इस से बढ़ कर जुर्म और क्या हो सकता है कि आदमी अपने रब के आदेश को ठुकराये? इस बड़े जुर्म पर वह दण्ड का ही भागीदार है ना कि ईनाम का ।

17. पहला गिरोह जिस का वर्णन शुरू की आयतों में हुआ है सच्चे ईमान वालों का है। दूसरा गिरोह जिस का वर्णन आयत 6 और 7 में हुआ है वह इन्कार करने वालों अथवा न मानने वालों का है। और तीसरा गिरोह जिन की खासियत (विशेषताऐं) 8 से 20 तक की आयतों में बयान हुई हैं उन लोगों का है जो ईमान लाने के दावेदार तो हैं किन्तु अपने ईमान में सच्चे नहीं हैं, इस से यहुदियों के दस गिरोह की ओर संकेत है जिस ने कपटी एवं दुरंगी चाल (Hypocrisy) अपना रखी थी। इस से यह बात अच्छी तरह स्पष्ट हो जाती है कि अल्लाह की दृष्टि में वही ईमान विश्वस्नीय एवं स्वीकृत है जो पूरी आस्था, निष्ठा और श्रद्धा के साथ हो अर्थात मनुष्य सच्चे दिल से अल्लाह और आखिरत को माने और उस की किताबों और उस के रसूलों (दूतो) में से किसी का इन्कार न करे। ईमान लाने का मात्र दिखावटी दावा करना और दीनदारी (धार्मिकता) का मखौटा चढ़ा लेना अल्लाह की दृष्टि में कोई मूल्य नहीं रखता ।

वे अल्लाह और ईमान वालों के साथ धोखेबाज़ी कर रहें हैं हालांकि वे स्वयं अपने आप को धोखा दे रहे हैं किन्तु उन्हें इस का एहसास नहीं है। ***(अल-क़ुर्आन)***

9. वे अल्लाह और ईमान वालों के साथ धोखे बाज़ी कर रहें हैं हालांकि वे स्वयं अपने आप को धोखा दे रहे हैं किन्तु उन्हें इस का एहसास नहीं है।

يُخَٰدِعُونَ ٱللَّهَ وَٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ وَمَا يَخْدَعُونَ إِلَّآ أَنفُسَهُمْ
وَمَا يَشْعُرُونَ ﴿٩﴾

10. इन के दिलो में रोग है।[18] जिसे अल्लाह ने और ज़्यादा कर दिया और जो झूठ वे बोलते हैं इस की वजह से उन के लिए दुखदाई यातना है ।

فِى قُلُوبِهِم مَّرَضٌ فَزَادَهُمُ ٱللَّهُ مَرَضًا ۖ وَلَهُمْ عَذَابٌ
أَلِيمٌۢ بِمَا كَانُوا۟ يَكْذِبُونَ ﴿١٠﴾

11. जब इन से कहा जाता है कि ज़मीन पर फ़साद[19] बरपा न करो तो कहते हैं कि हम तो सुधार करने वाले हैं ।

وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ لَا تُفْسِدُوا۟ فِى ٱلْأَرْضِ قَالُوٓا۟ إِنَّمَا نَحْنُ
مُصْلِحُونَ ﴿١١﴾

12. खबरदार यही लोग हैं जो फ़साद फ़ैलाने वाले हैं किन्तु इन्हें इस का एहसास नहीं ।

أَلَآ إِنَّهُمْ هُمُ ٱلْمُفْسِدُونَ وَلَٰكِن لَّا يَشْعُرُونَ ﴿١٢﴾

13. और जब इन से कहा जाता है कि जिस तरह दुसरे लोग ईमान लाए हैं [20] उसी तरह तुम भी ईमान लाओ तो कहते हैं क्या हम उस तरह ईमान लाऐं जिस तरह बेवक़ूफ ईमान लाए हैं ? ख़बरदार! बेवक़ूफ वास्तव में यही लोग हैं [21] किन्तु जानते नहीं हैं ।

وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ ءَامِنُوا۟ كَمَآ ءَامَنَ ٱلنَّاسُ قَالُوٓا۟ أَنُؤْمِنُ كَمَآ
ءَامَنَ ٱلسُّفَهَآءُ ۗ أَلَآ إِنَّهُمْ هُمُ ٱلسُّفَهَآءُ وَلَٰكِن
لَّا يَعْلَمُونَ ﴿١٣﴾

14. जब ये ईमान वालों से मिलते हैं तो कहतें हैं हम ईमान लाए हैं और जब एकान्त में अपने शैतानों से मिलते हैं [22] तो कहते हैं हम तुम्हारे साथ हैं ।इन लोगों से तो हम मज़ाक़ कर रहे हैं ।

وَإِذَا لَقُوا۟ ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ قَالُوٓا۟ ءَامَنَّا وَإِذَا خَلَوْا۟ إِلَىٰ
شَيَٰطِينِهِمْ قَالُوٓا۟ إِنَّا مَعَكُمْ إِنَّمَا نَحْنُ مُسْتَهْزِءُونَ ﴿١٤﴾

15. अल्लाह इन से मज़ाक़ कर रहा है । और इन को इन की सरकशी (उद्दंडता) में ढील दिये जा रहा है और हाल यह है कि वे अंधो की तरह भटकते फिर रहे हैं।

ٱللَّهُ يَسْتَهْزِئُ بِهِمْ وَيَمُدُّهُمْ فِى طُغْيَٰنِهِمْ يَعْمَهُونَ ﴿١٥﴾

16. यही लोग हैं जिन्हों ने हिदायत (सन्मार्ग) के बदले गुमराही मोल ली किन्तु न तो इन का सौदा लाभकारी हुआ और न वे हिदायत (सीधा रास्ता) ही पा सके।

أُو۟لَٰٓئِكَ ٱلَّذِينَ ٱشْتَرَوُا۟ ٱلضَّلَٰلَةَ بِٱلْهُدَىٰ
فَمَا رَبِحَت تِّجَٰرَتُهُمْ وَمَا كَانُوا۟ مُهْتَدِينَ ﴿١٦﴾

17. इन की मिसाल ऐसी है जैसे एक व्यक्ति ने आग जलाई और जब इस से माहौल रौशन हुआ तो अल्लाह ने इन की ज्योति छीन ली और इन को अंधकार में छोड़ दिया कि कुछ दिखाई नहीं देता ।[23]

مَثَلُهُمْ كَمَثَلِ ٱلَّذِى ٱسْتَوْقَدَ نَارًا
فَلَمَّآ أَضَآءَتْ مَا حَوْلَهُۥ ذَهَبَ ٱللَّهُ بِنُورِهِمْ وَتَرَكَهُمْ
فِى ظُلُمَٰتٍ لَّا يُبْصِرُونَ ﴿١٧﴾

18. रोग (मर्ज़) से अभिप्राय ईमान में झूठा होना अथवा ईमान में आस्था, निष्ठा और श्रद्धा का न होना है । इस रोग में अल्लाह की ओर से वृद्धि का मतलब यह है कि अल्लाह तआला ने ऐसे हालात पैदा कर दिये कि वे हक़ के तक़ाज़ों से मुँह चुराने के अपराध पर अपराध करते रहे और उन के कपट एवं दुरंगी नीति (Hypocrisy -निफ़ाक़) में वृद्धि होती रही।

19. क़ुर्आन की दअ्वत के विरोध को ''ज़मीन पर फसाद बरपा करना'' कहा गया है। इस का कारण यह है कि ज़मीन की शान्ति इस बात पर निर्भर है कि इस धरती पर इस के बनाने वाले मालिक का हुक्म और क़ानून लागू हो। इस से धरती के हर भाग में न्याय और शान्ति की व्यवस्था स्थापित हो सकती है और हर तरह की भलाई (Goodness) का प्रकट होना संभव हो सकता है । इस लिए ब्रह्माण्ड के सृष्टा (कायनात के ख़ालिक़) की दासता एवं आज्ञापालन की दअ्वत और इसी आधार पर एक सामाजिक व्यवस्था स्थापित करने का संघर्ष वास्तव में सुधार करने का संघर्ष होता है और इस के विरोध में जो भी क़दम उठाया जाए वह बिगाड़ और फ़साद के सिवा कुछ भी नहीं ।

बनाव और बिगाड़ की इस वास्तविकता से अनभिज्ञ होने ही के कारण अधिकतर लोग बनाव को बिगाड़ और बिगाड़ को बनाव समझने लगते हैं।

20. आर्थात इस तरह ईमान ले आओ जिस तरह नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथी ईमान लाए हैं । सच्चा और श्रद्धापूर्ण ईमान जिस के फलस्वरूप आदमी अल्लाह का पक्का वफादार बन्दा बन जाता है और उसी की राह में मुसीबतों और खतरों को झेलता है, यह स्वार्थ के पुजारियों की नज़र में मूर्खता एवं दीवानापन के सिवा कुछ नहीं । उन के विचार में बुद्धिमानी की बात यह है कि मनुष्य भौतिक लाभ को मुख्यता दे तथा ख़ुदा और उस के दीन से मात्र दिखावटी सम्बन्ध रखे।

21. यह मूर्खता नहीं तो और क्या है कि एक तरफ खुदा और उस की हिदायत को मानने का दावा किया जाए और दूसरी तरफ उस से श्रद्धापूर्ण सम्बन्ध को मूर्खता समझा जाए।

22. यहाँ शैतानों से मुराद फितना खड़ा करने और उन्हें बढ़ावा देने वाले लीडर और पेशवा हैं।

23. आग जलाने से अभिप्राय वह्य की रोशनी है। मिसाल का अर्थ यह है कि जब अल्लाह के बन्दे ने क़ुर्आन की रौशनी फैलाई तो जो लोग देखने की शक्ति रखते थे उन्हों ने सत्यमार्ग को देख लिया, समझ लिया, किन्तु जो लोग अक्ल के अन्धे थे वे इस से वन्चित रहे।

ज्योति छीन लेने का अर्थ नेत्र ज्योति है। अर्थात् जब ये सत्य से परिचित होने और उसे व्यवहार में लाने की इच्छा ही नहीं रखते तो अल्लाह ने इन को सत्य स्वीकार करने की तौफिक नहीं प्रदान की इस लिए ये क़ुर्आन की रौशनी से फायदा न उठा सके।

18. ये बहरे हैं,गूँगे हैं अन्धे हैं। अब ये न पलटेंगे।[24]

صُمٌّۢ بُكۡمٌ عُمۡيٌ فَهُمۡ لَا يَرۡجِعُونَ ﴿١٨﴾

19. या फिर इन की मिसाल यूँ समझो कि आसमान से ज़ोर की बारिश हो रही है जिस के साथ काली घटाऐं ,कड़क और बिजली भी है। ये बिजली के कड़ाके सुन कर मौत के डर से अपने कानों में उंगलियाँ ठूँस लेते हैं हालांकि अल्लाह इन झुठलाने वालों को अपने घेरे में लिये हुए हैं।

أَوۡ كَصَيِّبٖ مِّنَ ٱلسَّمَآءِ فِيهِ ظُلُمَٰتٞ وَرَعۡدٞ وَبَرۡقٞ يَجۡعَلُونَ
أَصَٰبِعَهُمۡ فِيٓ ءَاذَانِهِم مِّنَ ٱلصَّوَٰعِقِ حَذَرَ ٱلۡمَوۡتِۚ وَٱللَّهُ مُحِيطُۢ
بِٱلۡكَٰفِرِينَ ﴿١٩﴾

20. क़रीब है कि बिजली इन की दृष्टि उचक ले जाए। जब जब चमक जाती है, ये चल पड़ते हैं और जब इन पर अन्धेरा छा जाता है तो खड़े के खड़े रह जाते हैं।[25] अगर अल्लाह चाहता तो इन की सुनने की शक्ति और देखने की शक्ति बिलकुल ही छीन लेता ।[26] निस्संदेह अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर (समर्थ)है।

يَكَادُ ٱلۡبَرۡقُ يَخۡطَفُ أَبۡصَٰرَهُمۡۖ كُلَّمَآ أَضَآءَ لَهُم مَّشَوۡاْ فِيهِ
وَإِذَآ أَظۡلَمَ عَلَيۡهِمۡ قَامُواْۚ وَلَوۡ شَآءَ ٱللَّهُ لَذَهَبَ بِسَمۡعِهِمۡ
وَأَبۡصَٰرِهِمۡۚ إِنَّ ٱللَّهَ عَلَىٰ كُلِّ شَيۡءٖ قَدِيرٞ ﴿٢٠﴾

21. ऐ लोगो ! इबादत करो अपने रब की [27] जिस ने तुम को भी पैदा किया और उन लोगों को भी जो तुम से पहले गुज़रे हैं ।[28] ताकि (दोज़ख की आग से) बचो ।

يَٰٓأَيُّهَا ٱلنَّاسُ ٱعۡبُدُواْ رَبَّكُمُ ٱلَّذِي خَلَقَكُمۡ وَٱلَّذِينَ مِن
قَبۡلِكُمۡ لَعَلَّكُمۡ تَتَّقُونَ ﴿٢١﴾

22. वही है जिस ने तुम्हारे लिए ज़मीन को फर्श और आसमान को छत बनाया । आसमान से पानी बरसाया और इस से फ़ल पैदा कर के तुम्हारे रिज़्क (जीविका) का सामान किया। तो देखो यह जानते हुए दूसरों को अल्लाह का हमसर [29] (प्रतिद्वन्द्वी) न ठहराओ ।

ٱلَّذِي جَعَلَ لَكُمُ ٱلۡأَرۡضَ فِرَٰشٗا وَٱلسَّمَآءَ بِنَآءٗ وَأَنزَلَ
مِنَ ٱلسَّمَآءِ مَآءٗ فَأَخۡرَجَ بِهِۦ مِنَ ٱلثَّمَرَٰتِ رِزۡقٗا لَّكُمۡۖ
فَلَا تَجۡعَلُواْ لِلَّهِ أَندَادٗا وَأَنتُمۡ تَعۡلَمُونَ ﴿٢٢﴾

23. और अगर तुम्हें इस किताब के बारे में शक है जो हम ने अपने बन्दे पर नाज़िल की है तो इस जैसी एक सूरह ही ले आओ, और अल्लाह के सिवा जो तुम्हारे हिमायती हैं उन सब को बुला लो अगर तुम सच्चे हो ।[30](तो ऐसा कर के दिखाओ)

وَإِن كُنتُمۡ فِي رَيۡبٖ مِّمَّا نَزَّلۡنَا عَلَىٰ عَبۡدِنَا فَأۡتُواْ بِسُورَةٖ مِّن
مِّثۡلِهِۦ وَٱدۡعُواْ شُهَدَآءَكُم مِّن دُونِ ٱللَّهِ إِن كُنتُمۡ
صَٰدِقِينَ ﴿٢٣﴾

24. लेकिन अगर तुम ऐसा न कर सको, और हरगिज़ न कर सकोगे तो उस आग से बचो जिस का ईंधन बनेंगे आदमी और पत्थर [31] जो तैयार की गई हैं काफिरों के लिए ।

فَإِن لَّمۡ تَفۡعَلُواْ وَلَن تَفۡعَلُواْ فَٱتَّقُواْ ٱلنَّارَ ٱلَّتِي وَقُودُهَا
ٱلنَّاسُ وَٱلۡحِجَارَةُۖ أُعِدَّتۡ لِلۡكَٰفِرِينَ ﴿٢٤﴾

24. अर्थात हक़ बात सुनने बोलने और देखने की क्षमता से ये बिलकुल वंचित हो गए हैं इस लिए इन से यह उम्मिद नहीं की जा सकती कि ये हिदायत की राह (सन्मार्ग) पा सकेंगे जिस को क़ुर्आन ने रौशन किया है। यह मिसाल उन मुनाफ़िक़ो (कपटियों) की है जो अपने दिल में ईमान के विरूद्ध जज़्बात रखते एवं ईमान को झुठलाते थे और मात्र स्वार्थ के लिए अपने को मुसलमान कहलवाते थे ।

25. यह दूसरी मिसाल उन मुनाफ़िक़ो की है जो शक में मुब्तिला थे और ऐसी दिनदारी (धार्मिकता) के क़ायल न थे जिस की खातिर क़ुर्बानियाँ देनी पड़ती थीं । इस मिसाल में बारिश से अभिप्राय वह्य है जो अल्लाह की ओर से आसमान से नाज़िल हो रही थी और जो इन्सानियत के लिए सरासर रहमत बन कर आई। कड़क और बिजली से मुराद क़ुर्आन की चेतावनी है और अधंकार से तात्पर्य हक़ की राह की मुशकिलें हैं। बिजली चमकने पर इन के चल पड़ने और गायब हो जाने पर रुक जाने से इशारा इन लोगों की हैरानी एवं परेशानी की ओर है। क़ुर्आन की चमक इनकी निगाह को चकाचौंध कर देने वाली थी और वे हैरान थे कि क्या करें और क्या न करें।

यदि बिजली गिरना चाहती है तो क्या इस से बचाव का यह तरीक़ा उपयोगी हो सकता है कि आदमी अपनी उंगलियों को कानों में ठूँस ले?यह ऐसी ही बात है जैसे कोई शेर को हमलावर होता देख कर अपनी आँखें बंद कर ले। ज़ाहिर है कि इस तरह से शेर का हमला रुक नहीं सकता। यही दशा उन कपटियों (मुनाफ़िकों) की थी जो क़ुर्आन की चेतावनी को सुनना पसंद नहीं करते थे।

26. अर्थात कपटियों (मुनाफ़िकों) के इस दुसरे गिरोह के देखने की शक्ति एवं सुनने की शक्ति बिलकुल नहीं छीनी है इस लिए वे पहले गिरोह की तरह हक़ को क़ुबूल करने की शक्ति से बिलकुल वंचित नहीं हुए हैं ।

27. यह है क़ुर्आन की असल दअवत जिसका संबोधन तमाम इन्सानो से है। इस की दअवत यह है कि अपने रब की इबादत करो जो तुम सब का पैदा करने वाला, सब पर हर तरह से अपना अधिकार रखने वाला और निष्पक्ष रूप से सब का पोषण करने वाला है। अर्थात् पूजा भी उसी की करो झुको भी उसी के आगे, और उसी की दासता में रहो जिस की शिक्षा क़ुर्आन दे रहा है।

जो लोग अल्लाह की इबादत के तो क़ायल हैं किन्तु उस की इबादत में मन गढ़न्त ख़ुदाओं को साझीदार बनाते हैं अथवा सहायक मानते हैं, सत्य यह है कि उन की इबादत अल्लाह की इबादत नहीं है उन को चाहिए कि सिर्फ़ अल्लाह की इबादत करें और उस तरह से करें जिस की शिक्षा क़ुर्आन दे रहा है।

28. इशारा इस बात की तरफ है कि जिन लोगों ने अपने बुज़ुरगों (पूर्वजों) को अल्लाह का सहायक अथवा साझीदार मान रखा है उन का सृष्टा (पैदा करने वाला) अल्लाह तआला ही है इस लिए उन को सृष्टा की पंक्ति में खड़ा कर देना और उन के बुत बना कर पुजना सही नही है। पूजा के योग्य एवं अधिकारी मात्र अल्लाह है जो गुज़रे हुए पूर्वजों समेत सब का पैदा करने वाला है ।

29. अरब वाले स्वीकार करते थे कि ये सारे काम अल्लाह ही के हैं फिर भी वे अल्लाह का साझीदार एवं सहायक ठहराते थे इस लिए उन से कहा गया कि जब तुम यह स्वीकार करते हो कि पैदा करना और ईश्वरत्व तथा देख रेख करने के ये सारे काम अल्लाह ही के हैं तो फिर इन को अल्लाह का साझीदार अथवा सहायक क्यों ठहराते हो जिन का इन कामों में कोई हिस्सा नहीं। यह तौहीद (एकेश्वरवाद) की दअवत है जिस की दलीलें संक्षेप में यहाँ बयान की गई हैं।

30. अर्थात यदि तुम को क़ुर्आन के अल्लाह की ओर से अवतरित होने में कुछ संदेह है और तुम यह सोचते हो कि यह हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की रचना है तो तुम भी इस जैसी कोई एक सूरह ही लिख लाओ। क़ुर्आन के इस चैलेन्ज का जवाब न उस युग के विरोधी दे सके और न बाद के किसी युग के। क़ुर्आन की यह महानता कई पहलुओं से है। उच्च कोटी की सरसता एवं सुन्दरता, शब्दों का उचित्तम एवं उत्तम चुनाव, मोतियों की तरह पिरोई हुई तरतीब, दिल की गहराईयों में उतर जाने वाली बातें, शरीर और आत्मा की प्राकृतिक एवं स्वाभाविक इच्छाओं से संपूर्ण तालमेल,अन्तरआत्मा की पुकार एवं उस के शुद्धिकरण (तज़्किय:) का बेहतरीन नुस्खा, नैतिकता एवं सज्जनता की चरम सीमा को पहुँचा देने वाली शिक्षा, जीवन की स्मस्याओं का उत्तम हल,एवं जीवन के समस्त विभाग के लिए रहनुमाई का सामान,मानव जीवन के लिए पूर्ण रूप से संपूर्ण व्यवस्था, ब्रहमाण्ड के भेदों एवं अलौकिक (माबादुत्तबई) वास्तविकताओं का रहस्योद्घाटन, ब्रहमाण्ड के सृष्टा का बिलकुल सही अध्यात्म और उसकी मर्जी एवं प्रसन्नता किस में निहित है इस का वास्तविक ज्ञान,यह क़ुर्आन की महानता एवं विशालता के वे पहलू हैं जो इस के अल्लाह की ओर से अवतरित होने की खुली शहादत देते हैं । ऐसा कलाम जिस की ये विशेषताऐं हों उसे इन्सान पेश करने में अक्षम एवं असमर्थ है।और तमाम इन्सान मिल कर भी इस का उदाहरण नहीं प्रस्तुत कर सकते । इस आयत में क़ुर्आन और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नबी होने पर ईमान लाने की दअवत दी गई है।

31. उद्देश्य वे पत्थर हैं जिन को पूजा जाता रहा । जहन्नम का भोजन वे लोग होंगे जिन के अन्दर कुफ्र और शिर्क मौजूद होगा और वे बुत भी होंगे जो पूजे जाते रहें हैं ताकि उन के पूजने वालों को मालूम हो जाए कि जिन पर वे चढ़ावे चढ़ाते रहे हैं उन की क्या दुर्दशा बन गई है और वे किस तरह उन की बर्बादी का कारण बन गए।

25. और (ऐ पैग़म्बर !) जो लोग ईमान लाए और जिन्हों ने अच्छे कर्म किए उन को ख़ुशख़बरी दे दो कि उन के लिए ऐसे बाग़ हैं [32] जिनके तले नहरें प्रवाहित होंगी। जब जब उनके फल उन को खाने के लिए दिये जायेंगे वे कहेंगे कि ये वही फल हैं जो इस से पहले हमें दुनिया में मिले थे और उस से मिलते जुलते उनको प्रदान किए जाऐंगे।[33] एवं इन बागों में उन के लिए पाकीज़ा बीवियाँ होंगी और वे उन में हमेशा रहेंगे।

وَبَشِّرِ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ اَنَّ لَهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ
تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ؕ كُلَّمَا رُزِقُوْا مِنْهَا مِنْ ثَمَرَةٍ رِّزْقًا ۙ قَالُوْا هٰذَا
الَّذِيْ رُزِقْنَا مِنْ قَبْلُ ۙ وَاُتُوْا بِهٖ مُتَشَابِهًا ؕ وَلَهُمْ فِيْهَاۤ اَزْوَاجٌ
مُّطَهَّرَةٌ ۙۗ وَّهُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ﴿٢٥﴾

26. अल्लाह इस बात से नहीं शर्माता कि कोई मिसाल बयान करे चाहे वह मच्छर की हो या उस से कमतर किसी चीज़ की।[34] जो लोग ईमान लाए हैं वे जानते हैं कि यह हक़ (सत्य) है उन के रब की ओर से और जो इन्कार करने वाले हैं वे कहते हैं कि इस मिसाल से अल्लाह का क्या मतलब?(इस तरह) वह इस के द्वारा कितनों ही को गुमराह करता है और कितनों ही को हिदायत देता है और गुमराह उन्हीं को करता है जो फ़ासिक़ हैं।[35]

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَسْتَحْیٖۤ اَنْ يَّضْرِبَ مَثَلًا مَّا بَعُوْضَةً فَمَا فَوْقَهَا ؕ فَاَمَّا
الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا فَيَعْلَمُوْنَ اَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّهِمْ ۚ وَاَمَّا الَّذِيْنَ
كَفَرُوْا فَيَقُوْلُوْنَ مَاذَاۤ اَرَادَ اللّٰهُ بِهٰذَا مَثَلًا ۘ
يُضِلُّ بِهٖ كَثِيْرًا ۙ وَّيَهْدِيْ بِهٖ كَثِيْرًا ؕ وَمَا يُضِلُّ بِهٖۤ اِلَّا
الْفٰسِقِيْنَ ﴿٢٦﴾

27. जो अल्लाह के अहद (वचन अथवा प्रण) को मज़बूत बाँध लेने के बाद तोड़ देते हैं,जिन सम्बन्धो[36] को जोड़ने का हुक्म अल्लाह ने दिया है उन को तोड़ते हैं और ज़मीन में फ़साद बरपा करते हैं, यही लोग घाटे में रहने वाले हैं ।

الَّذِيْنَ يَنْقُضُوْنَ عَهْدَ اللّٰهِ مِنْۢ بَعْدِ مِيْثَاقِهٖ ۪ وَيَقْطَعُوْنَ
مَاۤ اَمَرَ اللّٰهُ بِهٖۤ اَنْ يُّوْصَلَ وَيُفْسِدُوْنَ فِى الْاَرْضِ ؕ اُولٰٓٮِٕكَ
هُمُ الْخٰسِرُوْنَ ﴿٢٧﴾

28. तुम किस तरह अल्लाह का इन्कार करते हो [37] हालाँकि तुम मुर्दा थे तो उसने तुम्हें जिन्दगी दी, फिर वही तुम को मौत देगा और इस के बाद तुम को ज़िन्दा करेगा [38] फिर उसी की तरफ तुम लौटाए जाओगे।

كَيْفَ تَكْفُرُوْنَ بِاللّٰهِ وَكُنْتُمْ اَمْوَاتًا فَاَحْيَاكُمْ ۚ ثُمَّ
يُمِيْتُكُمْ ثُمَّ يُحْيِيْكُمْ ثُمَّ اِلَيْهِ تُرْجَعُوْنَ ﴿٢٨﴾

29. वही है जिसने तुम्हारे लिए वह सब कुछ पैदा किया जो ज़मीन में है फिर आसमान की तरफ तवज्जोह फ़रमाई और सात आसमान [39] स्थापित किए, और वह हर चीज़ का ज्ञान रखने वाला है ।

هُوَ الَّذِيْ خَلَقَ لَكُمْ مَّا فِى الْاَرْضِ جَمِيْعًا ۗ ثُمَّ اسْتَوٰۤى اِلَى
السَّمَآءِ فَسَوّٰٮهُنَّ سَبْعَ سَمٰوٰتٍ ؕ وَهُوَ بِكُلِّ شَىْءٍ عَلِيْمٌ ﴿٢٩﴾

32. जन्नत के बाग जो आख़िरत में ईमान वालों को मिलेंगे।

33. जन्नत के फल शक्ल सूरत में दुनिया के फलो से मिलते जुलते होंगे किन्तु स्वाद में इन से बहुत बढ़ कर होंगे।

34. वास्तविकताओं को यदि उदाहरणस्वरूप (उपमा द्वारा) बयान किया जाए तो वे बहुत आसानी से समझ में आ जाती है इस लिए उपमा एक अच्छे साहित्य की विशेषता होती है। क़ुर्आन ने बुतों कि बेबसी की मिसाल (उपमा) देते हुए कहा है कि यदि मक्खी इन से कोई चीज़ छीन ले जाए तो ये बुत उस का कुछ बिगाड़ भी नहीं सकते। इन मिसालों की आड़ ले कर बहुदेववादी क़ुर्आन पर एतिराज़ किया करते थे। इसी का जवाब यहाँ दिया गया है।

35. फ़ासिक अर्थात नाफ़रमान। नाफ़रमानी के भी कई दर्जे हैं। यहाँ यह शब्द उन बड़ी बड़ी नाफ़रमानियों के लिए इस्तेमाल हुआ है जिसके साथ ईमान बाक़ी नहीं रह सकता।

36. अभिप्राय ख़ून के सम्बन्धों को काटना है। जो व्यक्ति इस सम्बन्ध को काटता है वह समाज के टुकड़े करने का दुष्कर्म करता है। इस लिए इस को बड़े गुनाह का काम और फ़साद का कारण ठहराया गया है।

37. अल्लाह के विशेष गुणों, जैसे उस के अकेले पूज्य होने, सर्वाधिकारी होने, न्यायी होने, हर चीज़ चाहे वह खुली हो या छिपी हो उस को जानने वाला एवं उसकी खबर रखने वाला और सब पर सामार्थ्य रखने वाला होने का इन्कार करना अल्लाह का इन्कार करने जैसा है। क़ुर्आन कहता है कि अल्लाह को मानना है तो उसे उस के विशेष गुणों के साथ जो कि बिलकुल वास्तविकता पर आधारित है मानो वर्ना उस को मानने का दावा कोई मूल्य नहीं रखता।

38. अर्थात ज़िन्दगी, मौत और दोबारा उठाया जाना किसी देवी देवता का काम नहीं बल्कि ये सब चीज़ें अल्लाह के ही अधिकार में हैं। फिर किस तरह उसकी नाशुकरी करते हो? इस आयत में आखिरत पर ईमान लाने की दअ्वत दी गई है।

39. कहने का उद्देश्य यह है कि ख़ुदा के जलवे नज़र आनेवाले सितारों तक सीमित नहीं है बल्कि सितारों से आगे जहाँ और भी हैं।

وَاِذْ قَالَ رَبُّكَ لِلْمَلٰٓئِكَةِ اِنِّیْ جَاعِلٌ فِی الْاَرْضِ خَلِیْفَةً ؕ قَالُوْٓا
اَتَجْعَلُ فِیْهَا مَنْ یُّفْسِدُ فِیْهَا وَیَسْفِكُ الدِّمَآءَ ۚ وَنَحْنُ نُسَبِّحُ
بِحَمْدِكَ وَنُقَدِّسُ لَكَ ؕ قَالَ اِنِّیْۤ اَعْلَمُ مَا لَا تَعْلَمُوْنَ ﴿۳۰﴾

30 और याद करो जब तुम्हारे रब ने फ़रिश्तों से कहा था [40] कि मैं ज़मीन में एक ख़लीफा बनाने वाला हूँ।[41] उन्हों ने निवेदन किया, क्या तू इस में ऐसी मख्लूक (रचना) बनाएगा जो बिगाड़ पैदा करेगी और खूनख़राबा करेगी? [42] हम तो तेरी हम्द (प्रशंसा) के साथ तेरी तसबीह और पाकी बयान करते हैं। फ़रमाया मैं जानता हूँ जो तुम नहीं जानते।[43]

وَعَلَّمَ اٰدَمَ الْاَسْمَآءَ كُلَّهَا ثُمَّ عَرَضَهُمْ عَلَى الْمَلٰٓئِكَةِ فَقَالَ
اَنْۢبِـُٔوْنِیْ بِاَسْمَآءِ هٰۤؤُلَآءِ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِیْنَ ﴿۳۱﴾

31. और उस ने आदम को सारे नाम सिखा दिये [44] फिर उन को फ़रिश्तों के सामने पेश कर के कहा।अगर तुम सच्चे हो तो [45] इन के नाम बताओ ।

قَالُوْا سُبْحٰنَكَ لَا عِلْمَ لَنَآ اِلَّا مَا عَلَّمْتَنَا ؕ اِنَّكَ اَنْتَ الْعَلِیْمُ
الْحَكِیْمُ ﴿۳۲﴾

32. उन्हों ने अर्ज़ किया पाक है तू जो इल्म तूने हमें दिया है उस के सिवा हमें कोई इल्म नहीं, निस्संदेह तू ही (सब कुछ) जानने वाला और हिकमतवाला है।

قَالَ یٰۤاٰدَمُ اَنْۢبِئْهُمْ بِاَسْمَآئِهِمْ ۚ فَلَمَّآ اَنْۢبَاَهُمْ بِاَسْمَآئِهِمْ ۙ قَالَ
اَلَمْ اَقُلْ لَّكُمْ اِنِّیْۤ اَعْلَمُ غَیْبَ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ۙ وَاَعْلَمُ
مَا تُبْدُوْنَ وَمَا كُنْتُمْ تَكْتُمُوْنَ ﴿۳۳﴾

33. फ़रमाया ऐ आदम इन को इन के नाम बताओ। जब उस ने उन को इन के नाम बताये [46] तो उस ने फ़रमाया मैं ने तुम से न कहा था कि आसमानों और ज़मीन के भेद को मैं ही जानता हूँ और जो कुछ तुम प्रकट करते हो उस को भी जानता हूँ और जो कुछ तुम छिपा रहे थे वह भी मेरे इल्म में है ।

وَاِذْ قُلْنَا لِلْمَلٰٓئِكَةِ اسْجُدُوْا لِاٰدَمَ فَسَجَدُوْۤا اِلَّاۤ اِبْلِیْسَ ؕ اَبٰى
وَاسْتَكْبَرَ ۗ وَكَانَ مِنَ الْكٰفِرِیْنَ ﴿۳۴﴾

34. और याद करो जब हम ने फ़रिश्तों से कहा आदम को सजदा करो तो उन्हों ने सजदा किया [47] मगर इब्लीस ने नहीं किया ।[48] उस ने इन्कार किया और घमण्ड किया और काफिरों में से हो गया ।[49]

وَقُلْنَا یٰۤاٰدَمُ اسْكُنْ اَنْتَ وَزَوْجُكَ الْجَنَّةَ وَكُلَا مِنْهَا
رَغَدًا حَیْثُ شِئْتُمَا ۪ وَلَا تَقْرَبَا هٰذِهِ الشَّجَرَةَ فَتَكُوْنَا
مِنَ الظّٰلِمِیْنَ ﴿۳۵﴾

35. हम ने कहा ऐ आदम ! तुम और तुम्हारी बीवी दोनों जन्नत में रहो [50] और इस में से जो चाहो जी भर कर खाओ। मगर इस वृक्ष के पास न फटकना [51] वर्ना ज़ालिमों में से हो जाओगे ।

فَاَزَلَّهُمَا الشَّیْطٰنُ عَنْهَا فَاَخْرَجَهُمَا مِمَّا كَانَا فِیْهِ ۪ وَقُلْنَا
اهْبِطُوْا بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ ۚ وَلَكُمْ فِی الْاَرْضِ مُسْتَقَرٌّ
وَّمَتَاعٌ اِلٰى حِیْنٍ ﴿۳۶﴾

36. लेकिन शैतान ने उन को फिसला दिया [52] और जिस ऐश में वे थे उस से उन को निकलवा छोड़ा । हम ने कहा, तुम सब यहाँ से उतर जाओ तुम एक दुसरे के दुश्मन हो [53] और तुम्हें एक विशेष समय तक ज़मीन में रहना और गुज़र बसर करना है ।

40. अरबी शब्द ''मलाइका'' इस्तेमाल हुआ है जो मलक का बहुवचन है और जिस का मतलब पैग़ाम पहुँचाने वाले के हैं। उर्दू में इसे फ़रिश्ता और अंग्रेज़ी में (Angel) कहते हैं। फ़रिश्ते अल्लाह की वह मख़्लूक़ (रचना) है जो बुद्धि और विवेक रखने के साथ ही साथ अत्यंत पवित्र एवं उच्च गुणों से सुसज्जित हैं।वे ब्रहमाण्ड में अल्लाह के हुक्म को लागू करते हैं, उस की आज्ञा का उल्लंघन नहीं करते और जो आदेश उन्हें दिया जाता है उसे तुरन्त पूरा करते हैं । वे अल्लाह की तरफ से उस के नबियों के पास वह्य लाते हैं, इन्सान के कर्मो का रिकार्ड रखते हैं, इसी तरह जान निकालने का काम भी वे अल्लाह की मर्ज़ी से अंजाम देते हैं।

41. ख़लीफ़ा (प्रतिनिधी) का शब्द यहाँ इख़्तियार रखने वाले के अर्थ में इस्तेमाल हुआ हैं । इंसान को ज़मीन पर ख़लीफ़ा नियुक्त करने का मतलब यह है कि अल्लाह तआला उसे इख़्तियारात प्रदान कर के आज़मायेगा और देखेगा कि वह इन को अपने रब की मर्ज़ी के अनुसार इस्तेमाल करता है या मनमानी कर के ख़ुदा बन बैठता है ।

इस आयत में गोया इस बुनियादी सवाल का जवाब दिया गया है कि इन्सान का इस दुनिया में वास्तविक स्थान (Position) क्या है। इस सवाल के सही जवाब ही पर उस के अच्छे कर्मों की प्रमाणिकता और उस के अच्छे अन्जाम का दारोमदार है। इस महत्वपूर्ण प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करने और इस का सही हल खोजने के बजाये लोग अपना यह स्थान (Position) निश्चित कर लेते हैं कि वे बिल्कुल स्वतंत्र और ख़ुदमुख़्तार है। न किसी हस्ती ने उन को इख़्तियारात प्रदान किये हैं और न इन इख़्तियारात के इस्तेमाल में वे किसी हस्ती की मर्जी के पाबन्द हैं और न ही उन्हें इस बारे में किसी के सामने जवाब देही करनी है । इस सिद्धान्त अथवा ऐसी विचारधारा के परिणामस्वरूप इंसान ख़िलाफत के मक़ाम को छोड़ कर स्वयं ख़ुदा बन बैठता है और अपने इस ग़लत फ़ैसले के नतीजे में ज़मीन को फ़साद से भर देता है क्योंकि धरती पर शान्ति एवं न्याय व्यवस्था इस बात पर आधारित है कि इस पर अल्लाह के आदेश और क़ानून लागू हों वर्ना मानव इच्छाओं की हुकूमत का नतीजा बिगाड़ और ज़ुल्म एवं ज़्यादती के सिवा और क्या हो सकता है?

42. फ़रिश्तों ने इस शंका का आभास किया कि इन्सान को इम्तिहान के लिए जो इख़्तियारात (अधिकार एवं सामर्थ्य) प्रदान किए जा रहे हैं उन को सही तौर से इस्तेमाल करना आसान नहीं। इन इख़्तियारात को पा कर इन्सान बहक सकता है जिस का स्वाभाविक परिणाम फ़साद और खून खराबा के रूप में सामने आएगा ।

43. फ़रिश्तों के मस्तिष्क में जो शंका उतपन्न हो गई थी उस के जवाब में अल्लाह तआला ने जो बात ईर्शाद फ़रमाई उस का अर्थ यह है कि इन्सान के ख़लीफ़ा (प्रतिनिधि) बनाये जाने से अल्लाह की जो स्कीम है उस का तुम्हें पूरी तरह ज्ञान नहीं है । तुम्हारे सामने उस स्कीम के कुछ ही पहलू या तस्वीर का एक रुख आ सका है किन्तु तसवीर का दुसरा रुख जो इस स्कीम का वास्ताविक उद्देश्य है तुम्हारी नज़रों से ओझल है। यह चीज़ तुम्हारे सामने आयेगी तो तुम्हें महसूस होगा कि इंसान के खलीफा बनाये जाने में कितनी महान नीति निहित है ।

44. नामों से मुराद आदम की संतानों के नाम हैं । विशेषरूप से उन लोगों के नाम जो दुनिया में इख़्तियारात (अधिकार) एवं सामर्थ्य का सही इस्तेमाल कर के खिलाफ़त का हक अदा करेंगे। अर्थात आदम को पहले ही उन की औलाद से परिचित कराया गया और खास तौर से यह सकारात्मक पक्ष सामने लाया गया कि तुम्हारी औलाद में ऐसे व्यक्तित्व अथवा ऐसी हस्तियाँ भी होंगी जो ज़मीन में सुधार और निर्माण की महानतम सेवा करेंगी और ये लोग अपने भव्यतम कारनामों की बदौलत धरती के सर्वश्रेष्ठ पुष्प या धरती के लाल कहलाऐंगे।

कलाम के भाव से स्पष्ट होता है कि आदम की औलादों में से महत्वपूर्ण व्यक्तियों अथवा महानुभावों को उन की रचना से पूर्व उन की छवि फ़रिश्तों के सामने पेश की गई थी या उन की रूहें पेश कर दी गई थी। ताकि उन पर एक साथ दोनों बातें स्पष्ट हो जाऐं । एक तो उन की सोच का यह भ्रम कि इन्सान ज़मीन में बिगाड़ ही के काम करेगा और दुसरे अल्लाह की योजना का सकारात्मक पक्ष कि आदम की औलाद में ऐसी ऐसी हस्तियाँ होंगी जो बनाव का काम सुचारू रूप से करेंगी और इंसानियत के विशुद्ध गुण छट कर सामने आयेगी। ऐसे ही लोग ख़ुदा की रहमत के हक़दार होंगे और इन्हीं को जन्नत में बसाया जाएगा ।

यद्यपि टीकाकारों (मुफ़स्सिरों) के एक गिरोह ने नामों से मुराद वस्तुओं के नाम लिए हैं किन्तु पहली बात तो यह व्याख्या अरबी व्याकरण (नह्व) के हिसाब से सही नहीं मालूम होती जैसा कि इब्ने ज़रीर तबरी ने अपनी तफ़्सीर में इशारा किया है, क्यों कि इस में (हुम) और (हाउलाइ) के जो सर्वनाम (Pronouns) इस्तेमाल हुए हैं वह वस्तुओं के बजाये ''रूह'' (Soul) रखने वालों के लिए मौज़ूँ हैं ।

दूसरे इस व्याख्या को मान लेने की सूरत में यह सवाल पैदा होता है कि फ़रिश्तों के ज़ेहन में जो भ्रम पैदा हो गया था वह इस बात से किस तरह दूर हुआ होगा कि आदम को तमाम वस्तुओं के नाम सिखा दिये गये। ज़ाहिर है उन का भ्रम इसी सूरत में दूर हो सकता था जब कि उन के सामने आदम की रचना के फलस्वरूप पैदा होने वाली उच्च गुणों वाली महान हस्तियों के

कुछ नमूने प्रस्तुत किये जाते। इसी लिए हम ने नामों से मुराद महान व्यक्तियों के नाम लिए हैं । अल्लामा इब्ने ज़रीर तबरी ने अपनी तफ़्सीर में टीकाकारों (मुफ़स्सिरों) का एक क़ौल (कथन) इस बात के समर्थन में नक़ल किया है कि नामों से मुराद आदम की औलादों के नाम हैं और इस को वरियता दी है। (देखिये तफ़सीर तबरी भाग १ पृष्ट १७१)

45. अर्थात यदि तुम्हारा यह विचार सही है कि इन्सान इख़्तियारात (अधिकार एवं सामर्थ्य) पा कर ज़मीन में फ़साद ही फ़साद बरपा करेगा तो ज़रा इन लोगों के भी नाम और आचरण एवं गुण बताओ ? क्या ये लोग भी फ़साद बरपा करने वाले हैं ।

46.अर्थात आदम अलैहिस्सलाम ने अल्लाह तआला के प्रदान किये हुए ज्ञान के आधार पर बतलाया कि मेरी संतानों में ये और ये लोग होंगे जो अल्लाह के सच्चे वफ़ादार बन्दे बनेंगे और न्याय एवं शांतिव्यवस्था की स्थापना में सर धड़ की बाज़ी लगाऐंगें ।

इन्सान के ख़लीफ़ा बनाने का यह वह पहलू है जो फ़रिश्तों की नज़रों से ओझल था। अल्लाह तआला ने इम्तिहान लेकर आदम ही की ज़बानी उन पर यह पक्ष स्पष्ट कर दिया । इस घटना से कुछ महत्वपूर्ण सच्चाईयों पर रौशनी पड़ती है।

1) इन्सान की रचना एक महान उद्देश्य के लिए हुई है भलाई और बुराई की इस रणभूमि से ऐसे व्यक्तियों को छाँटना है जो सदाचारी एवं सदगुणी हों ।

2) इन्सानो में से ऐसे निखरे हुए लोगों को छाँट कर अल्लाह तआला अपनी ऐसी कृपा एवं ऐसी नेमतों को भेंट करना चाहता है जो कभी ख़त्म होने वाली नहीं। इसी लिए आखिरत में उन का स्थान जन्नत होगा जो हमेशा के लिए है।

3) अल्लाह तआला की स्कीम के केवल कुछ ही पक्षों को अगर सामने रखा जाए तो आदमी ग़लत धारणा बना बैठेगा किन्तु यदि उस की पूरी स्कीम सामने रहे जो उसी के बताने से हमारी समझ में आ सकती है, तो स्कीम का वास्तविक उद्देश्य और नीति समझ में आ सकती है ।

4) जो लोग मानव रचना से सम्बन्धित अल्लाह तआला की स्कीम को समझने की कोशिश नहीं करते वे दुनिया में इन्सान की हैसियत (Position) और उस के जीवन लक्ष्य (Aim of Life) को ग़लत निर्धारित कर बैठते हैं ।

5) अल्लाह सब कुछ जानने वाला और हिकमत वाला है। इस लिए उस का कोई काम हिक्मत से खाली नहीं होता। अगर कोई काम हमें ऊपर से हिक्मत से खाली नज़र आए तो उस पर आपत्ति व्यक्त करने के बजाए अपनी जानकारी की कमी समझना चाहिए ।

6) फ़रिश्ते जो अल्लाह के बहुत क़रीब हैं, न समझ सकने और ग़लत समझने का कुसूर उन से भी हुआ जिस से स्पष्ट हुआ कि वह अपने अन्दर ईश्वरीय गुण नहीं रखते । हर तरह से पाक और बे ऐब हस्ती मात्र अल्लाह तआला ही की है।

7) ज़मीन का सही प्रबन्ध एवं पूर्ति और उस में भलाई एवं सुधार तथा न्याय और शान्ति की स्थापना इस बात पर आश्रित है कि इन्सान इख़्तियारात (अधिकार एवं सामर्थ्य को अल्लाह की अमानत समझते हुए उस की हिदायत एवं उस की मरज़ी के अनुसार इस्तेमाल करे।

47. आदम अलैहिस्सलाम को सजदा करने का हुक्म सम्मान स्वरूप था जिस में फरिश्तों का इम्तिहान था कि इस नूरी मख़्लूक़ (आलोकमय सृष्टि) को मिट्टी की सृष्टि के आगे झुकने का जो हुक्म दिया जा रहा है उस का पालन वह करती है या नहीं ! उन्हों ने परवरदिगार के इस आदेश का पालन किया और इम्तिहान में पूरे उतरे।

यह सजदा वास्तव में इस बात की स्वीकृति था कि अल्लाह तआला ने अपनी क़ुदरत से एक नई सृष्टि को अस्तित्व में लाया है जो अपने अन्दर धरती का प्रतिनिधित्व करने की पूरी क्षमता रखती है। इस लिए इस सजदे की हैसियत इबादत के सजदे से बिलकुल भिन्न थी। लेकिन चूँकि इस में आदम की प्रतिष्ठा का पहलू उजागर था इस लिए इब्लीस जो अपनी बड़ाई के घमंड में लीन था इस आदेश के पालन को तैयार न हो सका।

अगर इस सजदे में शिर्क का मामूली भी संदेह होता तो इब्लीस को यह तर्क प्रस्तुत करने का मौक़ा मिलता कि मैं आदम की इबादत किस तरह करूँ । किन्तु इब्लीस ने ऐसी कोई बात नहीं कही बल्कि अपने सजदा न करने का कारण यह बयान किया कि आदम को मिट्टी से पैदा किया गया है जब कि मुझे आग से । अर्थात आदम के मुक़ाबले में अपनी वर्चस्वता को प्रकट किया जो इस बात की दलील है कि आदम को सज़दा सम्मान के लिए था न कि इबादत के लिए ।

ध्यान रहे कि यह एक विशेष प्रकार का आदेश था जो फ़रिश्तों को और इब्लीस को दिया गया था वरना इस्लामी क़ानून में अल्लाह के सिवा किसी को भी सजदा करना हराम है चाहे वह सम्मान एवं प्रतिष्ठा के लिए ही क्यों न हो ।

इस से इस हक़ीकत पर भी रौशनी पड़ती है कि अल्लाह तआला ने आदम को फ़रिश्तों द्वारा सजदा करा कर इन्सान को ऊँचा दर्जा प्रदान किया है । इस के बाद इन्सान का ईंट पत्थर और दूसरी सृष्टि के आगे झुकना उस के दर्जे से बहुत ही गिरी हुई बात है ।

48. इब्लीस शैतान का नाम है जो जिन्नो में से था। अल्लाह तआला ने फ़रिश्तों के साथ इब्लीस को भी आदम

अलैहिस्सलाम के सामने झुक जाने का हुक्म दिया था मगर उस ने सजदा करने से इन्कार किया ।

49. इस से कुफ्र की यह हक़ीक़त स्पष्ट होती है कि घमंड में मुब्तेला हो कर अल्लाह के किसी भी हुक्म को मानने से इन्कार करना कुफ्र है । और शैतान इसी जुर्म का अपराधी हुआ था वरना शैतान अल्लाह का इन्कार करने वाला नहीं था।

50. यह अस्थाई (आरज़ी) जन्नत थी जिस में आदम और हौवा को आज़माइश के उद्देश्य से रखा गया था ताकि उन्हें ज़मीन पर भेजने से पहले यह बात अच्छी तरह महसूस कराई जाये कि तुम्हारी प्रतिष्ठा के अनुकूल स्थान जन्नत ही है किन्तु अगर तुम शैतान के बहकाने में आ गए तो अपने आप को जन्नत से वंचित कर लोगे ।

51. क़ुर्आन ने यह नहीं बतलाया कि यह वृक्ष किस चीज़ का था और उस की विशेषता क्या थी और न सही हदीस में इसे बयान किया गया है । इस लिए इस बहस में पड़ना व्यर्थ है। इस वृक्ष से मना करने का उद्देश्य आज़माइश था कि शैतान के प्रलोभन के मुक़ाबले में आदम और हौवा खुदा के हुक्म का किस हद तक पालन करते हैं । इस उद्देश्य के लिए किसी एक वृक्ष को चुन लेना काफ़ी था ।

52. क़ुर्आन स्पष्ट रूप से बयान कर रहा है कि भूल आदम और हौवा दोनों से हुई थी और यह शैतान के वर्ग़लाने के फल स्वरूप हुई थी। इस लिए यह सही नहीं कि आदम को हौवा ने बहकाया था।

53. अर्थात इन्सान का दुश्मन शैतान और शैतान का दुश्मन इन्सान ।

37 फिर आदम ने अपने रब से (तौबा के)कुछ शब्द सीख लिए तो उस के रब ने उस की तौबा [54] क़ुबूल की। निस्संदेह वही तौबा क़ुबूल करने वाला और रहम करने वाला है ।

فَتَلَقَّىٰ آدَمُ مِن رَّبِّهِ كَلِمَاتٍ فَتَابَ عَلَيْهِ ۚ إِنَّهُ هُوَ التَّوَّابُ
الرَّحِيمُ ﴿٣٧﴾

38. हम ने कहा तुम सब यहाँ से उतर जाओ ।[55] फिर जो मेरी तरफ़ से कोई हिदायत तुम्हारे पास आए [56] तो जो लोग मेरी हिदायत का अनुसरण एवं पालन करेंगे उन के लिए न कोई भय होगा और न वे दुखी होंगे।[57]

قُلْنَا اهْبِطُوا مِنْهَا جَمِيعًا ۖ فَإِمَّا يَأْتِيَنَّكُم مِّنِّي هُدًى فَمَن تَبِعَ
هُدَايَ فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٣٨﴾

39. किन्तु जो लोग कुफ़्र करेंगे और हमारी आयतों को झुठलाऐंगे [58] वे आग वाले हैं जिस में वे हमेशा रहेंगे ।

وَالَّذِينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِآيَاتِنَا أُولَٰئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ ۖ هُمْ
فِيهَا خَالِدُونَ ﴿٣٩﴾

40. ऐ बनी इस्राईल [59] !याद करो मेरी उस नेअमत को [60] जो मैं ने तुम पर की, और मेरे प्रण (अहद) [61] को पूरा करो, मैं तुम्हारे प्रण को पूरा करूँगा । और मुझ ही से डरो ।[62]

يَا بَنِي إِسْرَائِيلَ اذْكُرُوا نِعْمَتِيَ الَّتِي أَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَأَوْفُوا
بِعَهْدِي أُوفِ بِعَهْدِكُمْ وَإِيَّايَ فَارْهَبُونِ ﴿٤٠﴾

41. और मैं ने जो किताब उतारी है उस पर ईमान लाओ। यह पुष्टि (तस्दीक़) करती है [63] उस किताब की जो तुम्हारे पास मौजूद है। अतः तुम सब से पहले इन्कार करने वाले न बनो और मेरी आयतों को तुच्छ मुल्यों पर बेच न डालो [64] और मेरे ग़ज़ब (प्रकोप) से बचो ।

وَآمِنُوا بِمَا أَنزَلْتُ مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَكُمْ وَلَا تَكُونُوا أَوَّلَ
كَافِرٍ بِهِ ۖ وَلَا تَشْتَرُوا بِآيَاتِي ثَمَنًا قَلِيلًا وَإِيَّايَ فَاتَّقُونِ ﴿٤١﴾

42. हक़ (सत्य) को बातिल (असत्य) के साथ गड्ड मड्ड न करो और न जानते बुझते हक़ को छिपाओ।

وَلَا تَلْبِسُوا الْحَقَّ بِالْبَاطِلِ وَتَكْتُمُوا الْحَقَّ وَأَنتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٤٢﴾

43. नमाज़ क़ायम करो,[65] ज़कात दो और रुकू करने वालों के साथ रुकू करो ।[66]

وَأَقِيمُوا الصَّلَاةَ وَآتُوا الزَّكَاةَ وَارْكَعُوا مَعَ الرَّاكِعِينَ ﴿٤٣﴾

44. क्या लोगों को तुम नेकी का हुक्म करते हो और अपने आप को भूल जाते हो हालाँकि तुम आसमानी किताब का पाठ करते हो। फिर क्या तुम अक़्ल से काम नहीं लेते ।

أَتَأْمُرُونَ النَّاسَ بِالْبِرِّ وَتَنسَوْنَ أَنفُسَكُمْ وَأَنتُمْ تَتْلُونَ
الْكِتَابَ ۚ أَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿٤٤﴾

45. सब्र और नमाज़ से मदद लो। निस्संदेह यह कठिन है मगर उन लोगों के लिए नहीं जो ख़ुशूअ (विनम्रता)[67] अपनाने वाले हैं ।

وَاسْتَعِينُوا بِالصَّبْرِ وَالصَّلَاةِ ۚ وَإِنَّهَا لَكَبِيرَةٌ إِلَّا عَلَى الْخَاشِعِينَ ﴿٤٥﴾

54. आदम अलैहिस्सलाम को अपनी ग़लती का एहसास हुआ तो उन से तौबा के लिए शब्द नहीं बन पा रहे थे। अल्लाह ने उन पर दया की और तौबा के लिए ठीक ठीक शब्द उन पर औतारित कर दिये । शैतान अपनी नाफ़रमानी पर अड़ गया किन्तु आदम अपनी नाफ़रमानी पर पछताए। जब बन्दा कोई गुनाह कर बैठता है तथा उस के बाद अगर उस को पछतावा होता और वह अल्लाह से माफी चाहते हुए उस की तरफ पलटता है तो अल्लाह तआला उसे क्षमा कर देता है और उस की तौबा क़ुबूल कर के उसे अपनी रहमत के साये में ले लेता है।

55. ज़मीन पर उतारा जाना सज़ा के तौर पर न था क्यों कि हज़रत आदम अलैहिस्सलाम की तौबा अल्लाह तआला ने क़ुबूल फ़रमा ली थी। इस से इन्सान के पैदाइशी गुनहगार होने की धारणा एवं आस्था के ग़लत होने का पता चलता है । आदमी को चूँकि ज़मीन की ख़िलाफ़त (प्रतिनिधित्व) के लिए पैदा किया गया था इस लिए उसे ज़मीन पर उतारा गया।

56. आदम की भूल अथवा ग़लती से मानव स्वाभाव की कमज़ोरी ज़ाहिर हो गई जिस से यह बात साबित होती है कि इन्सान अल्लाह की हिदायत का मोहताज है ।

अल्लाह तआला ने अपनी इस हिदायत के लिए नुबुव्वत एवं रिसालत (Prophethood) को ज़रीआ बनाया । वह हर व्यक्ति को व्यक्तिगत रूप से हिदायत नहीं भेजता बल्कि नबियों और रसूलों को चुन कर के उन पर अपनी वह्य नाजिल करता है और ये नबी और रसूल जनसाधाण तक उस का पैग़ाम पहुँचाते हैं ।

इन्सान को दुनिया में भेज कर अल्लाह तआला उस का इम्तिहान लेना चाहता है कि कौन उस की हिदायत को क़ुबूल कर के ज़मीन में उस के प्रतिनिधि (ख़लीफ़ा) की हैसियत स्वीकार करता है और कौन उस की हिदायत को रद्द कर के अपनी मनमानी करता है और इस तरह स्वयं ख़ुदा होने के झुठे एवं ग़लत पद पर बिराजमान हो जाता है ।

57. अर्थात न गुज़रे समय का दुख और न आने वाले समय का भय । अभिप्राय इस से जन्नत है जहाँ न कोई दुख होगा और न किसी तरह का भय ।

58. 'आयात' का शब्द प्रयोग हुआ है जिसके अर्थ हैं चिन्ह एवं निशानियाँ । इस से मुराद अल्लाह के अकेले (यकता) एवं पालनहार होने की और उस की क़ुदरत एवं हिकमत की वे निशानियाँ जो ब्राहमाण्ड में और स्वयं आदमी के अन्दर मौजूद है। साथ ही यह शब्द उन मोअजिज़ो (चमत्कारों) के लिए भी प्रयोग हुआ है जो नबियों को दिये गये थे । इन के अलावा क़ुरआन की आयतों (Quranic Verses) के लिए भी यह शब्द प्रयोग हुआ है जो दलील और तर्क की हैसियत रखती है ।

59. इस्राईल हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम का उपनाम (लक़ब) है । वह हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के पोते थे और नबी भी थे। उन की नस्ल को बनी इस्राईल कहते हैं। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम जनसाधारण के नायक एवं पेशवा और अत्यंत प्रतिष्ठित नबी हैं जिन के वंश में अल्लाह तआला ने नुबुव्वत का सिलसिला चलाया। हज़रत इबराहीम अलैहिस्सलाम के दो बेटे थे। हज़रत इस्माईल और हज़रत इस्हाक़। हज़रत इस्माईल से जो वंश चला वह बनी इसमाईल कहलाया मक्का के अरब लोग बनी इस्माईल ही की शाख से थे और इसी शाख़ से सम्बन्धित क़ुरैश के क़बीले में हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पैदा हुए ।

दूसरी शाख हज़रत इस्हाक़ के बेटे हज़रत याक़ूब (इस्राईल) से चली और बनी इस्राइल कहलाई । उनका असली वतन फ़िलस्तीन था । बनी इस्राईल में हज़रत मूसा, हज़रत दाऊद, हज़रत सुलेमान और हज़रत ईसा जैसे प्रतिष्ठित पैग़म्बर पैदा हुए।

बनी इस्राईल को जो दीन हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम से विरासत में मिला था वह इस्लाम था। हज़रत मूसा ने भी जिन पर तौरात नाज़िल हुई थी, इस्लाम ही को पेश किया था किन्तु बाद में बनी इस्राईल ने उस में काट छाँट कर यहूदी धर्म का रूप धारण कर लिया। इस के बाद बनी इस्राईल यहूदी कहलाए, हालाँकि उन का वास्तविक धर्म इस्लाम था। यहाँ क़ुर्आन इन को सच्चाई की याद दिला रहा है और इन के अपराध गिना रहा है ताकि वे सावधान हो कर असल दीन अर्थात इस्लाम की तरफ पलट आऐं और क़ुरआन की दअ्वत को जो इस्लाम की हक़ीक़ी दअवत है क़ुबूल कर लें।

60. नेअमत से मुराद वह इनाम है जो अल्लाह तआला की तरफ से बनी इस्राईल को दुनिया के नेतृत्व एवं पेशवाई के रूप में प्रदान हुआ था ताकि वे दुनिया वालों के सामने इस्लाम का प्रतिनिधित्व करें।

61. अल्लाह के अहद (प्रण) से मुराद अल्लाह की शरीअत (संविधान) है जो वास्तव में अल्लाह और बन्दो के बीच एक अनुबन्ध (मुआहदा) की हैसियत रखती है किन्तु यहाँ विशेष रूप से उस अहद की तरफ इशारा है जो बनी इस्राईल से हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के बारे में हज़रत मूसा के ज़माने में ही लिया गया था। इस अहद (प्रण) का वर्णन तौरात में इस तरह मौजूद है ।

''सो मैं उन के लिए उन के भाईयों के बीच में से तेरे समान एक नबी को पैदा करूँगा; और अपना वचन उस के मुँह में डालूँगा । और जिस जिस बात की मैं उसे आज्ञा दूँगा वही वह उन को कह सुनाएगा और जो मनुष्य मेरे वह वचन जो वह मेरे

नाम से कहेगा ग्रहण न करेगा, तो मैं उस का हिसाब उस से लूँगा ।'' (बाइबल, व्यवस्था विवरण 18:18,19)

वह प्रण याद दिला कर क़ुर्आन उन से हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर ईमान लाने की माँग करता है।

62. इस बात की ओर संकेत है कि हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को पैग़म्बर स्वीकार करने और उन पर ईमान लाने में किसी का भय आड़े नहीं आना चाहिए। तमाम हितों, स्वार्थों और संदेहों के विरूद्ध अल्लाह की पवित्रता, महानता, विशालता, एवं उस के प्रताप का ख्याल हावी होना चाहिए ।

63. तौरात और इंजील के अल्लाह की ओर से अवतरित होने की क़ुर्आन पुष्टि करता है। वह असल तौरात और इन्जील का खण्डन नहीं करता बल्कि उस काट छाँट का खण्डन अवश्य करता है जो बाद में लोगों ने असल किताबों में कर दी थी।

यहाँ विशेष रूप से इस बात की ओर संकेत है कि तौरात में हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नबी की हैसियत से नियुक्ति से सम्बन्धित जो भविष्वाणियाँ मौजूद हैं उन को क़ुर्आन सच्चा साबित कर रहा है क्यों कि इन भविष्यवाणियों के अनुसार क़ुर्आन और उस के पैग़म्बर का प्रकट होना उन के हक़ (सत्य) होने की स्पष्ट दलील है। इस लिए बनी इस्राईल को सम्बोधित कर के कहा जा रहा है कि सब से पहले तुम्हें इस पर ईमान लाना चाहिए ।

64. अर्थात सांसारिक लाभों और स्वार्थों की ख़ातिर अल्लाह के आदेशों को भेंट न चढ़ाओ। दुनिया का लाभ चाहे कितना ही बड़ा हो आख़िरत के मुक़ाबले में अत्यंत तुच्छ है । अत: जो व्यक्ति सांसारिक लाभों को अल्लाह के आदेशों पर वरीयता देता है वह एक उच्चतम वस्तु के मुक़ाबले में तुच्छतम वस्तु स्वीकार करता है ।

65. नमाज़ और ज़कात इस्लाम के अत्यंत महत्वपूर्ण सतंभ हैं जो बनी इस्राईल की शरीअत (संविधान) में भी मौजूद थे किन्तु व्यवहारिक रूप से वे इन दोनों को छोड़ बैठे थे।

66. रुकू के अर्थ झुकने के हैं और नमाज़ में रुकू, घुटने पर हाथ रख कर झुकने की एक ख़ास शक्ल है, और रूकू करने वालों के साथ रूकू करने से इशारा बाजमाअत नमाज़ (सामूहिक नमाज़) की तरफ है। मस्जिद में जमाअत के साथ अर्थात सब के साथ मिल कर नमाज़ पढ़ने की सूरत में अमीर और ग़रीब, छोटे और बड़े सब एक दुसरे के अगल बगल खड़े हो जाते हैं जिस से बन्दगी (पूजा) की एक खास शान पैदा हो जाती है। इस के अलावा इन्सानी बराबरी और भाई चारे का एहसास भी पैदा हो जाता है।यहूदियों ने और विशेष रूप से उन के अमीर लोगों ने मस्जिदों में जाने को अपनी शान के ख़िलाफ समझ कर जमाअत से नमाज़ पढ़ना छोड़ दिया था। इस लिए यहाँ उन को संबोधित कर के विशेष रूप से यह आदेश दिया गया कि रूकू करने वालों के साथ रूकू करें।

67. अर्थात् जो व्यक्ति अल्लाह के सामने खड़े होने का डर अपने दिल में न रखता हो उस के लिए नमाज़ की पाबन्दी एक मुसीबत है। किन्तु जो लोग खुदा के दरबार में पेशी के खयाल से काँपते रहते हैं उन के लिए नमाज़ से अधिक लुभावनी कोई चीज़ नहीं।

आयत में सब्र और नमाज़ से मदद लेने की हिदायत की गई है। यह मदद अल्लाह के आज्ञापालन के प्रण को पूरा करने के लिए प्राप्त करना है। मतलब यह है कि अल्लाह से उस के आज्ञापालन का जो प्रण तुम ने किया है उस को पूरा करने और आज्ञापालन का जीवन व्यतीत करने के लिए जिस आन्तरिक शक्ति की आवश्यकता है वह सब्र (धैर्य) और नमाज़ से प्राप्त हो सकती है । सब्र का मतलब स्वयं को बुरी इच्छाओं से रोक लेना है। जब तक आदमी अपनी इच्छाओं को क़ाबू में नहीं रखता, तब तक वह आज्ञापालन एवं दासता का जीवन व्यतीत नहीं कर सकता। क्यों कि अल्लाह के आज्ञापालन के रास्ते में क़दम क़दम पर इच्छाऐं रूकावट बन कर खड़ी हो जाती हैं। दूसरी चीज़ जिस का आयोजन आवश्यक है वह है नमाज़। क्यों कि नमाज़ ख़ुदा से बन्दे के सम्बन्ध को मज़बूत बनाती है, नफ़्स (अन्तर् आत्मा) की बेहतरीन तरबियत करती है और रूह (आत्मा) को विकसित करती है । इस तरह नमाज़ से जो शक्ति प्राप्त होती है वह अल्लाह के आज्ञापालन एवं दासता के मार्ग में सहायक बन जाती है।

और उस दिन से डरो जब कोई नफ़्स (जीव) किसी नफ़्स (जीव) के कुछ काम न आएगा। उस की तरफ से कोई सिफ़ारिश क़ुबूल नहीं की जाएगी, न उस से फ़िदया (मुक्ति दण्ड) लिया जाएगा और न ही उन की मदद की जाएगी ।(अल-क़ुर्आन)

46\. जो समझते हैं कि उन्हें अपने रब से मिलना है और उसी की तरफ़ पलट कर जाना है ।

الَّذِيْنَ يَظُنُّوْنَ اَنَّهُمْ مُّلٰقُوْا رَبِّهِمْ وَاَنَّهُمْ اِلَيْهِ رٰجِعُوْنَ ﴿٤٦﴾

47\. ऐ बनी इस्राईल ! याद करो [68] मेरी इस नेअमत को जो मैं ने तुम्हें प्रदान की थी और इस बात को कि मैं ने तुम्हें जगत की सारी क़ौमों पर प्रधानता प्रदान की थी।[69]

يٰبَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ اذْكُرُوْا نِعْمَتِيَ الَّتِيْٓ اَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَاَنِّيْ
فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعٰلَمِيْنَ ﴿٤٧﴾

48\. और उस दिन से डरो जब कोई नफ़्स (जीव) किसी नफ़्स (जीव) के कुछ काम न आएगा । उस की तरफ़ से कोई सिफ़ारिश क़ुबूल नहीं की जाएगी, न उस से फ़िदया (मुक्ति दण्ड) लिया जाएगा और न ही उन की मदद की जाएगी ।

وَاتَّقُوْا يَوْمًا لَّا تَجْزِيْ نَفْسٌ عَنْ نَّفْسٍ شَيْـًٔا وَّلَا يُقْبَلُ
مِنْهَا شَفَاعَةٌ وَّلَا يُؤْخَذُ مِنْهَا عَدْلٌ وَّلَا هُمْ يُنْصَرُوْنَ ﴿٤٨﴾

49\. और याद करो जब हम ने तुम को आले-फ़िरऔन (फिरऔन वालों) से मुक्ति प्रदान की। उन्हों ने तुम को बुरे अज़ाब (यातना) में मुब्तेला कर रखा था।तुम्हारे बेटों का वध करते और तुम्हारी औरतों को ज़िन्दा रहने देते थे। इस में तुम्हारे रब की तरफ़ से बड़ी आज़माइश थी।

وَاِذْ نَجَّيْنٰكُمْ مِّنْ اٰلِ فِرْعَوْنَ يَسُوْمُوْنَكُمْ سُوْٓءَ الْعَذَابِ
يُذَبِّحُوْنَ اَبْنَآءَكُمْ وَيَسْتَحْيُوْنَ نِسَآءَكُمْ وَفِيْ ذٰلِكُمْ بَلَآءٌ مِّنْ
رَّبِّكُمْ عَظِيْمٌ ﴿٤٩﴾

50\. याद करो जब हम ने समुद्र फाड़ कर तुम्हें उस में से गुजार दिया और आले-फिरऔन (फिरऔनियों) को ग़र्क (जलमग्न) कर दिया और तुम देखते ही रह गए।

وَاِذْ فَرَقْنَا بِكُمُ الْبَحْرَ فَاَنْجَيْنٰكُمْ وَاَغْرَقْنَآ اٰلَ فِرْعَوْنَ
وَاَنْتُمْ تَنْظُرُوْنَ ﴿٥٠﴾

51\. याद करो जब हम ने मूसा से चालीस रातों का वादा मुकर्रर किया।[70] फिर मूसा के पीछे तुम बछड़े को माबूद (पूज्य) बना बैठे,[71] इस तरह तुम ज़ुल्म के अपराधी हुए।

وَاِذْ وٰعَدْنَا مُوْسٰٓى اَرْبَعِيْنَ لَيْلَةً ثُمَّ اتَّخَذْتُمُ الْعِجْلَ
مِنْۢ بَعْدِهٖ وَاَنْتُمْ ظٰلِمُوْنَ ﴿٥١﴾

52\. इस पर भी हम ने तुम से दरगुज़र किया ताकि तुम शुक्रगुज़ार बनो।

ثُمَّ عَفَوْنَا عَنْكُمْ مِّنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ﴿٥٢﴾

53\. याद करो हम ने मूसा को किताब और फ़ुरक़ान (कसौटी)प्रदान की [72] ताकि तुम हिदायत हासिल करो।

وَاِذْ اٰتَيْنَا مُوْسَى الْكِتٰبَ وَالْفُرْقَانَ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُوْنَ ﴿٥٣﴾

68. यहाँ बनी इस्राईल की ऐतिहासिक घटनाओं की ओर संकेत किए गए हैं। जिन्हें वे अच्छी तरह जानते थे। इस से यह बताना अभिप्रेत है कि एक तरफ अल्लाह तआला के कैसे बड़े बड़े एहसान हैं जो उस ने क़ौम पर किए और दुसरी तरफ इन के ये करतूत हैं जिसके फलस्वरूप ये धुत्कार दिये गए।

69.बनी इस्राईल को अल्लाह तआला ने किताब और हिदायत प्रदान कर के संसार की सारी जातियों और क़ौमों की रहनुमाई के पद पर बिराजमान किया था ताकि वह दुनिया वालों के सामने सत्य धर्म को प्रस्तुत करें और लोगों को उस की ओर बुलाऐं ।

70. सीना के रेगिस्तान में मूसा अलैहिस्सलाम को अल्लाह तआला ने तूर की पहाड़ी पर चालीस दिन (दिन और रात) के लिए बुलाया था ताकि उन्हें शरीअत और उस के आदेश प्रदान किये जाऐं।

71. मिस्र में गाय की पूजा का रिवाज था इस लिए यह रोग बनी इस्राईल में भी पैदा हो गया। बछड़े की पूजा की घटना तौरात में इस प्रकार है ।

'' और जिस मार्ग पर चलने की आज्ञा मैं ने उन को दी थी उस को झटपट छोड़ कर उन्हों ने एक बछड़ा ढाल कर बना लिया, फिर उस को दण्डवत् किया और उस के लिए बलिदान भी चढ़ाया और यह कहा, कि ऐ इस्राईलियों तुम्हारा परमेश्वर जो तुम्हे मिस्र देश से छुड़ा ले आया है वह यही है।'' (निर्गमन ३२:८)

72. फ़ुर्क़ान (कसौटी) तौरात की सिफ़त है। अर्थात् इस किताब की विशेषता यह थी कि वह सत्य और असत्य के बीच फ़र्क करती थी और उस की रौशनी में ईमान वाले तमाम मामलों एवं समस्याओं में भले और बुरे तथा सही और ग़लत का फ़र्क कर सकते थे ।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍ ❍

54. याद करो जब मूसा ने अपनी क़ौम से कहा कि ऐ मेरी क़ौम के लोगो ! तुमने बछड़े को माबूद बना कर अपने ऊपर ज़ुल्म किया है अतः अपने ख़ालिक़ (पैदा करने वाले) के आगे तौबा करो और अपने (मुजरिमों) को क़त्ल करो [73] यह तुम्हारे ख़ालिक़ (पैदा करनेवाले) के नज़दीक तुम्हारे हक़ में बेहतर है ।[74] अतः उस ने तुम्हारी तौबा क़ुबूल कर ली। निस्संदेह वही तौबा क़ुबूल करने वाला, रहम फरमाने वाला है।

وَإِذْ قَالَ مُوسَىٰ لِقَوْمِهِ يَا قَوْمِ إِنَّكُمْ ظَلَمْتُمْ أَنفُسَكُم
بِاتِّخَاذِكُمُ الْعِجْلَ فَتُوبُوا إِلَىٰ بَارِئِكُمْ فَاقْتُلُوا أَنفُسَكُمْ
ذَٰلِكُمْ خَيْرٌ لَّكُمْ عِندَ بَارِئِكُمْ فَتَابَ عَلَيْكُمْ ۚ إِنَّهُ
هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيمُ ﴿٥٤﴾

55. याद करो जब तुम ने कहा ऐ मूसा हम आप की बात मानने वाले नहीं हैं जब तक कि हम ख़ुदा को खुल्लम खुल्ला देख न लें। उस समय तुम को कड़क ने आ लिया और तुम देखते ही रह गये।[75]

وَإِذْ قُلْتُمْ يَا مُوسَىٰ لَن نُّؤْمِنَ لَكَ حَتَّىٰ نَرَى اللَّهَ جَهْرَةً
فَأَخَذَتْكُمُ الصَّاعِقَةُ وَأَنتُمْ تَنظُرُونَ ﴿٥٥﴾

56. फिर हमने तुम्हें मौत के बाद जिला उठाया ताकि तुम शुक्रगुज़ार बनो ।

ثُمَّ بَعَثْنَاكُم مِّن بَعْدِ مَوْتِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿٥٦﴾

57. हम ने तुम पर बादल का साया किया और मन्न एवं सलवा उतारा।[76] खाओ इन पाक चीज़ों को जो हम ने तुम्हें प्रदान की हैं। मगर उन्हों ने जो कुछ किया वह हम पर ज़ुल्म न था बल्कि वे अपनी ही जान पर ज़ुल्म कर रहे थे।

وَظَلَّلْنَا عَلَيْكُمُ الْغَمَامَ وَأَنزَلْنَا عَلَيْكُمُ الْمَنَّ
وَالسَّلْوَىٰ ۖ كُلُوا مِن طَيِّبَاتِ مَا رَزَقْنَاكُمْ ۖ وَمَا ظَلَمُونَا
وَلَٰكِن كَانُوا أَنفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿٥٧﴾

58. और याद करो जब हम ने कहा था इस बस्ती में दाखिल हो जाओ [77] और जहाँ से चाहो निश्चिन्त हो कर खाओ और दरवाज़े में सज्दा करते (झुकते) हुए दाखिल हो [78] और हित्ततुन [79](ऐ रब ! हमारे गुनाह माफ कर दे) कहो। हम तुम्हारे गुनाह माफ कर देंगे और भली भाँति आदेशपालन करने वालों को हम और भी अनुग्रह (फ़ज़्ल) प्रदान करेंगे।

وَإِذْ قُلْنَا ادْخُلُوا هَٰذِهِ الْقَرْيَةَ فَكُلُوا مِنْهَا حَيْثُ شِئْتُمْ
رَغَدًا وَادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا وَقُولُوا حِطَّةٌ نَّغْفِرْ لَكُمْ
خَطَايَاكُمْ ۚ وَسَنَزِيدُ الْمُحْسِنِينَ ﴿٥٨﴾

59. मगर जो बात कही गई थी उसे ज़ालिमों ने दुसरी बात से बदल दिया। आखिरकार हम ने ज़ुल्म करने वालों पर उन की नाफरमानियों के बदले में आसमान से अज़ाब नाज़िल किया।

فَبَدَّلَ الَّذِينَ ظَلَمُوا قَوْلًا غَيْرَ الَّذِي قِيلَ لَهُمْ فَأَنزَلْنَا
عَلَى الَّذِينَ ظَلَمُوا رِجْزًا مِّنَ السَّمَاءِ بِمَا كَانُوا
يَفْسُقُونَ ﴿٥٩﴾

73. यह गऊ पूजा की सज़ा थी जो उन्हें दी गयी। जो लोग इस शिर्क में नहीं फँसे थे उन्हें हुक्म दिया गया कि वह उन लोगों को अपने हाथों से क़त्ल करें जो गऊ पूजा स्वीकार कर के सत्य धर्म को त्यागने के अपराधी हुए थे । तौरात में है:-

'' और बनी लेवियों ने मूसा के कहने पर अमल किया, और उस दिन लगभग तीन हज़ार पुरुष मारे गये ।'' (निर्गमन 32:28)

इस से स्पष्ट है कि शिर्क इस्लाम की नज़र में एक अत्यन्त बड़ा और भीषण पाप है और इस की सज़ा भी इस्लाम में बड़ी कठोर है।

74. अर्थात यह भयावह एवं शिक्षाप्रद दंड समाज को तौहीद (एकेश्वरवाद) पर क़ायम रखने के लिए ज़रूरी है। वरना शिर्क (बहुदेववाद) के मामले में नम्रता अपनाने का यह परिणाम निकल सकता है कि पूरी क़ौम ग़लत धारणा और ग़लत आचरण में फँस कर रह जाए।

75. उन्हें इस बात पर विश्वास नहीं होता था कि अल्लाह तआला हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम से स्वयं कलाम (बात) करता है और उन्हें आदेश देता है। वे कहते हैं कि जब तक हम अल्लाह को आप से कलाम करता न देख लें आप की बात नहीं मानेंगे। यह इन्कार के लिए बहाना मात्र था वरना वे अल्लाह की खुली खुली निशानियाँ देख चुके थे जो मूसा अलैहिस्सलाम के हाथों प्रकट हो रही थीं। इसी लिए अल्लाह तआला ने उन के इस मुतालबे (माँग) पर उन्हें धिक्कारा और तिरस्कृत कर दिया। तौरात के अनुसार ये सत्तर लोग थे जिन्हें ले कर मूसा अलैहिस्सलाम तूर के पहाड़ पर गए थे।

76. बनी इस्राईल ने मिस्र से निकलने के बाद सीना के बियाबान के लिए पड़ाव किया था। वहाँ उन को धूप से बचाने के लिए अल्लाह तआला ने बादल का और भूख से बचाने के लिए मन्न और सलवा का प्रबन्ध किया था। ''मन्न'' गोंद के किस्म की एक चीज़ थी जो शबनम की तरह ज़मीन पर टपकती और जम जाती थी। यह धनिया की तरह गोलदाने के रूप में होती थी जिस को बनी इस्राईल जमा कर लेते थे और वह रोटी का काम देती थी।

''सलवा'' बटेर की किस्म के परिन्दे थे जिन के झुंड के झुंड शाम के समय आ जाते और वे उन का बहुत ही आसानी से शिकार कर लेते । तौरात में है।

''तब यहोवा ने मूसा से कहा, इस्राईलियों का बुड़बुड़ाना मैं ने सुना है, उन से कह दे, कि गोधूलि (शाम) के समय तुम मांस खाओगे और भोर को तुम रोटी से तृप्त हो जाओगे, और तुम यह जान लोगे कि मैं तुम्हारा परमेश्वर यहोवा हूँ। और ऐसा हुआ कि सांझ को बटेरें आ कर सारी छावनी पर बैठ गई, और भोर को छावनी के चारों ओर ओस पड़ी थी। (निर्गमन 16:11,12,13)

ये चीज़ें इतनी अधिक मात्रा में मिल जाया करती थीं कि पूरी क़ौम उन पर गुज़र बसर करती थी ।

77. बस्ती से अभिप्राया संभवता: फिलस्तीन का शहर 'एरिहा' (ERIHA) है। यह शहर सब से पहले बनी इस्राईल के कब्जे में आया ।

78. दरवाज़े से मुराद बस्ती का दरवाज़ा है। मतलब यह है कि जब शहर फतेह हो जाए तो उस में अहंकारियों एवं घमण्डियों के अन्दाज़ से दाखिल न होना बल्कि विनम्रता के साथ अल्लाह के सम्मुख सर झुकाए हुए और अपने गुनाहों की माफी माँगते हुए प्रवेश करना ।

दुनियादार लोग जब किसी मुल्क को फतेह कर लेते हैं तो उन का सर अहं से ऊँचा हो जाता है और वे ज़मीन को ज़ुल्म और अत्याचार से भर देते है। इस के विरूद्ध इस्लाम की शिक्षा यह है कि जब किसी मुल्क में विजेता की हैसियत से प्रवेश करो तो ज़ालिम और अहंकारियों का रवैय्या हरगिज़ न अपनाओ बल्कि अल्लाह के सम्मुख विनम्रता और अपने गुनाहों को स्वीकार करने का मार्ग अपनाओ । दिल की यह स्थिति तुम्हें हर तरह के जुल्म से बाज़ रखेगी ।

79. हित्तुन कहने का मतलब यह है कि खुदा से अपने गुनाहों की माफ़ी माँगते हुए प्रवेश करो ।

60. याद करो जब मूसा ने अपनी क़ौम के लिए दुआ की [80] तो हम ने कहा अपना असा (डंडा) पत्थर पर मारो, एवं उस से बारह स्रोत फूट निकले [81] और हर समूह ने अपना अपना घाट मालूम कर लिया। खाओ और पियो अल्लाह के रिज़्क (नेअमतों) में से और ज़मीन में फसाद फैलाते न फिरो।

وَاِذِ اسْتَسْقٰى مُوْسٰى لِقَوْمِهٖ فَقُلْنَا اضْرِبْ بِّعَصَاكَ الْحَجَرَ ؕ
فَانْفَجَرَتْ مِنْهُ اثْنَتَا عَشْرَةَ عَيْنًا ؕ قَدْ عَلِمَ كُلُّ اُنَاسٍ
مَّشْرَبَهُمْ ؕ كُلُوْا وَاشْرَبُوْا مِنْ رِّزْقِ اللّٰهِ وَلَا تَعْثَوْا فِى الْاَرْضِ
مُفْسِدِيْنَ ﴿۶۰﴾

61. याद करो जब तुम ने कहा था ऐ मूसा हम एक ही तरह के खाने पर हरगिज़ सब्र नहीं करेंगे। अपने रब से दुआ कीजिए कि वह हमारे लिए ज़मीन की वनस्पति (नबातात)जैसे सब्जियाँ,ककड़ियाँ, लहसुन, मसूर, प्याज़ इत्यादि पैदा करे। मूसा ने कहा तुम उत्तम वस्तु के बदले घटिया वस्तु प्राप्त करना चाहते हो ?[82] किसी शहर में उतर जाओ तुम्हें वहाँ इच्छुक वस्तुऐं मिलेंगी। और उन पर ज़िल्लत (अपमान) और पस्ती (गिरावट) थोप दी गई। और वे अल्लाह के प्रकोप के हक़दार हुए। यह इस कारण हुआ कि वे अल्लाह की आयतों का इन्कार करने लगे थे और नबियों को आकारण क़त्ल करते थे।[83] यह परिणाम था उन की अवज्ञा का और इस बात का कि वे हद से बढ़ने लगे थे ।[84]

وَاِذْ قُلْتُمْ يٰمُوْسٰى لَنْ نَّصْبِرَ عَلٰى طَعَامٍ وَّاحِدٍ فَادْعُ لَنَا
رَبَّكَ يُخْرِجْ لَنَا مِمَّا تُنْۢبِتُ الْاَرْضُ مِنْۢ بَقْلِهَا وَقِثَّآئِهَا
وَفُوْمِهَا وَعَدَسِهَا وَبَصَلِهَا ؕ قَالَ اَتَسْتَبْدِلُوْنَ الَّذِىْ
هُوَ اَدْنٰى بِالَّذِىْ هُوَ خَيْرٌ ؕ اِهْبِطُوْا مِصْرًا فَاِنَّ لَكُمْ مَّا
سَاَلْتُمْ ؕ وَضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ وَالْمَسْكَنَةُ وَبَآءُوْ بِغَضَبٍ
مِّنَ اللّٰهِ ؕ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَانُوْا يَكْفُرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ
وَيَقْتُلُوْنَ النَّبِيّٖنَ بِغَيْرِ الْحَقِّ ؕ ذٰلِكَ بِمَا عَصَوْا
وَّكَانُوْا يَعْتَدُوْنَ ﴿۶۱﴾

62. बेशक जो लोग ईमान लाए [85] और जो यहूदी हुए और ईसाई और साबी [86] जो भी अल्लाह और आखिरत के दिन पर ईमान लाया और उस ने नेक अमल किया तो ऐसे लोगों का अच्छा फल उन के रब के पास है । उन के लिए न खौफ होगा और न वे दुखी होंगे.[87]

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَالَّذِيْنَ هَادُوْا وَالنَّصٰرٰى وَالصّٰبِـِٕيْنَ
مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَهُمْ اَجْرُهُمْ
عِنْدَ رَبِّهِمْ ۚ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ﴿۶۲﴾

63. याद करो जब हम ने तूर को तुम्हारे ऊपर उठा कर तुम से पक्का अहद (प्रण)लिया था [88](और सचेत कर दिया था कि) जो किताब हम ने तुम्हें दी है उसे मजबूती से थाम लो और जो हिदायत (मार्गनिर्देश) इस में लिखी हैं उन्हें याद रखो ताकि अल्लाह के प्रकोप से बचो ।

وَاِذْ اَخَذْنَا مِيْثَاقَكُمْ وَرَفَعْنَا فَوْقَكُمُ الطُّوْرَ ؕ خُذُوْا مَآ
اٰتَيْنٰكُمْ بِقُوَّةٍ وَّاذْكُرُوْا مَا فِيْهِ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ﴿۶۳﴾

64. फिर इस प्रण प्रतिज्ञा (क़ौलो-क़रार) के बाद तुम अपने प्रण से फिर गए और अगर तुम पर अल्लाह की कृपा और उस की रहमत न होती तो तुम तबाह हो चुके होते।

ثُمَّ تَوَلَّيْتُمْ مِّنْۢ بَعْدِ ذٰلِكَ ۚ فَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ
وَرَحْمَتُهٗ لَكُنْتُمْ مِّنَ الْخٰسِرِيْنَ ﴿۶۴﴾

80. तौरात से मालूम होता है कि यह दुआ सीना के जंगल में की गई थी और चट्टान पर लाठी मारने से पानी के स्रोत फूट निकले थे (देखिए गिनती अध्याय २०)

81. बनी इस्राईल के बारह क़बीले थे और स्रोत भी अल्लाह तआला ने बारह जारी किए थे इस तरह हर क़बीले ने अपना अपना घाट नियुक्त कर लिया और पानी की समस्या पर झगड़ा होने की शंका बाक़ी न रही । बियाबान में पानी का यह प्रबंध अल्लाह तआला का बहुत बड़ा एहसान था।

82. मतलब यह है कि जिस महान उद्देश्य के लिए तुम्हें बियाबान में निवास करना पड़ रहा है उस के मुक़ाबले में तुम्हें खाने पीने की यह चीज़ें क्या इतनी प्रिय हैं कि कुछ समय के लिए इन के बग़ैर काम नहीं चल सकता । यह मन्न और सल्वा का भोजन तुम्हें इस हाल में मिल रहा है कि तुम फिरऔनियों की ग़ुलामी और कुफ्र एवं शिर्क की रुस्वाई एवं अपमान से बिलकुल आज़ाद हो। अब यह तुम्हारे अपने स्वाभाव एवं साहस की बात है कि सादा और साधारण भोजन को जो इज़्ज़त और आज़ादी के साथ मिल रहा है बेहतर समझो या उन नाना प्रकार के खानों को जिन के साथ ग़ुलामी की रुसवाई तथा कुफ्र और शिर्क की मुसीबतें लगी हुई हैं।

83. यहूदियों के हाथों जिन नबियों का क़त्ल हुआ उन में हज़रत ज़करिया अलैहिस्सलाम और हज़रत यहया अलैहिस्सलाम जैसी महानुभावी हस्तियाँ शामिल हैं । हज़रत यहया अलैहिस्सलाम को यहूदियों के शासक एवं नेता हिरो दिवेस की आज्ञा से क़त्ल किया गया और उन का सर बादशाह ने एक थाल में रख कर अपनी प्रेमिका को भेंट किया।

हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को भी सूली पर चढ़ाने की साज़िश की गई थी लेकिन अल्लाह तआला ने आप को उस षडयंत्र से बचा लिया।

84. अर्थात् अल्लाह के आदेशों की परवाह न करते हुए पूरी ढिटाई के साथ उन का उल्लंघन किया।

85. अभिप्राय मुसलमानों का समूह है।

86. साबी अहले किताब का एक संप्रदाय था जो ज़बूर को मानता था। अब इस संप्रदाय का वजूद नहीं रहा।

87. यह आयत जिस संदर्भ में आई है उस से इस का मंशा बिल्कुल स्पष्ट है । यहाँ यहूदियों कि इस ग़लतफहमी को दूर करना अभिप्रेत है कि यहूदी एक मोक्ष प्राप्त (निजात याफता) गिरोह है, इस आधार पर कि वे नबियों के खानदान से सम्बन्ध रखते हैं। क़ुर्आन इस का कड़ाई के साथ खंडन करते हुए स्पष्ट करता है की अल्लाह के दरबार में मुक्ति पाने का दारोमदार किसी खानदान या समूह या संप्रदाय (Community) से सम्बन्धित होने के कारण नहीं है बल्कि इस का दारोमदार औसाफ़ (Virtues) पर है। जो व्यक्ति ईमान और सुकर्म के गुणों से सुसज्जित होगा वह आखिरत में मुक्ति पायेगा अथवा सफल होगा किन्तु जो व्यक्ति इन गुणों से ख़ाली होगा वह आख़िरत की सफलता एवं मुक्ति से वंचित रहेगा। चाहे वह मुसलमान गिरोह का ही व्यक्ति क्यों न हो ।

यहाँ ईमान और सुकर्म की व्याख्या (Details) बयान करना अभिप्रेत नहीं है क्योंकि यह व्याख्या क़ुर्आन ने दूसरी जगहों पर स्पष्ट कर दी है। और इस के अनुसार हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नुबुव्वत पर और जो किताब आप ले कर आए हैं उस पर ईमान लाना ज़रूरी है । इस के बग़ैर अल्लाह के यहाँ ईमान स्वीकृत नहीं है। इसी तरह शरीअत (इस्लामी संविधान) की पैरवी सुकर्म के भावार्थ में शामिल है। इस लिए आयत का यह मतलब निकालने की कोई गुन्जाईश मौजूद नहीं है कि क़ुर्आन का मुतालबा (Demands) मात्र यह है कि ''अपने अपने धर्म पर जमे रहते हुए ख़ुदा और आखिरत को मानों और अच्छा अमल (कर्म) करो।'' इस वर्णित आयत से यह मतलब निकालना क़ुरआन में सरासर रद्दोबदल करना है क्योंकि इस सूरह का केन्द्रीय विषय ही क़ुर्आन का अल्लाह की किताब होने और हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की रिसालत पर ईमान लाने की दअवत देना है जिस के बग़ैर सारी दीनदारी अर्थहीन हो जाती है। इस के अलावा क़ुर्आन ने दुसरी जगहों पर यह बात स्पष्ट रुप से बयान कर दी है कि अल्लाह के नज़दीक स्वीकृत दीन सिर्फ इस्लाम है ।

اِنَّ الدِّينَ عِنْدَ اللّٰهِ الْاِسْلَامُ (آل عمران:١٩)

''अल्लाह के नज़दीक स्वीकृत दिन सिर्फ इस्लाम है।'' (आले इमरान-१९)

وَمَنْ يَّبْتَغِ غَيْرَ الْاِسْلَامِ دِيْناً فَلَنْ يُّقْبَلَ مِنْهُ وَهُوَ
فِى الْآخِرَةِ مِنَ الْخَاسِرِيْنَ ـ (آل عمران:٨٥)

'' जो व्यक्ति इस्लाम के सिवा किसी और दीन का इच्छुक होगा तो उसे हरगिज़ क़ुबूल नहीं किया जाएगा और आखिरत में वह घाटे में रहेगा ।'' (आले इमरान :८५)

88. मुराद तौरात की पाबन्दी का प्रण है जो बनी इस्राईल से तूर नामी पहाड़ के दामन में लिया गया था और उस समय एक सख्त ज़लज़ले ने पहाड़ को हिला दिया था और इस तरह उन के ऊपर खड़ा हो गया था कि गोया वह उनके ऊपर गिरा चाहता है । यह अल्लाह की क़ुदरत का प्रदर्शन (मोअजिज़ा) था ताकि बनी इस्राईल इस बात को याद रखें कि वह जिस हस्ती के साथ मुआहदा (अनुबंध) कर रहे हैं वह बहुत ही महान तथा अत्यन्त क्षमता रखने वाली हस्ती है और इस अनुबन्ध का उल्लंघन करने पर उस का ग़ज़ब भड़क सकता है।

65. और उन लोगों का किस्सा तो तुम्हें मालूम ही है जो सब्त [89] के मामले में ज़्यादती के अपराधी हुए थे।[90] और इस के बदले में हम ने उन से कह दिया कि ज़लील बन्दर बन जाओ।

وَلَقَدْ عَلِمْتُمُ الَّذِينَ اعْتَدَوْا مِنكُمْ فِي السَّبْتِ فَقُلْنَا لَهُمْ
كُونُوا قِرَدَةً خَاسِئِينَ ﴿٦٥﴾

66. इस तरह हम ने उस युग के लोगों और बाद के आने वालों के लिए उस को इबरत का नमूना (शिक्षा सामग्री) बनाया एवं परहेज़गारों के लिए नसीहत ।

فَجَعَلْنَاهَا نَكَالًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهَا وَمَا خَلْفَهَا وَمَوْعِظَةً
لِّلْمُتَّقِينَ ﴿٦٦﴾

67. और याद करो जब मूसा ने अपनी क़ौम से कहा कि अल्लाह तुम्हें एक गाय ज़बह करने का आदेश देता है।कहने लगे क्या आप हम से मज़ाक़ कर रहें हैं ? मूसा ने कहा मैं इस बात से अल्लाह की पनाह माँगता हूँ कि जाहिल बन जाऊँ।

وَإِذْ قَالَ مُوسَىٰ لِقَوْمِهِ إِنَّ اللَّهَ يَأْمُرُكُمْ أَن تَذْبَحُوا بَقَرَةً ۖ
قَالُوا أَتَتَّخِذُنَا هُزُوًا ۖ قَالَ أَعُوذُ بِاللَّهِ أَنْ أَكُونَ مِنَ
الْجَاهِلِينَ ﴿٦٧﴾

68. उन्हों ने कहा अपने रब से दुआ कीजिए, वह हमें स्पष्ट रूप से बताए कि गाय कैसी होनी चाहिए । मूसा ने कहा वह फ़रमाता है कि गाय न बूढ़ी हो और न बछिया,औसत आयु की हो ।अतः जो आदेश दिया जा रहा है उस का पालन करो।

قَالُوا ادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُبَيِّن لَّنَا مَا هِيَ ۚ قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ
إِنَّهَا بَقَرَةٌ لَّا فَارِضٌ وَلَا بِكْرٌ عَوَانٌ بَيْنَ ذَٰلِكَ ۖ
فَافْعَلُوا مَا تُؤْمَرُونَ ﴿٦٨﴾

69. कहने लगे अपने रब से दुआ किजिए वह यह स्पष्ट करे कि उस का रंग कैसा हो।मूसा ने कहा वह फ़रमाता है, गाय जर्द रंग की हो ऐसे शोख़ रंग की कि देखने वाले खुश हो जाऐं ।

قَالُوا ادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُبَيِّن لَّنَا مَا لَوْنُهَا ۚ قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ
إِنَّهَا بَقَرَةٌ صَفْرَاءُ فَاقِعٌ لَّوْنُهَا تَسُرُّ النَّاظِرِينَ ﴿٦٩﴾

70. बोले अपने रब से दुआ कीजिए ,वह अच्छी तरह खोल कर बताए कि वह गाय कैसी होनी चाहिए। गाय के निर्धारण में हमें संदेह हो गया है और इन्शाअल्लाह हम उस का पता पा लेंगे।

قَالُوا ادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُبَيِّن لَّنَا مَا هِيَ إِنَّ الْبَقَرَ تَشَابَهَ عَلَيْنَا
وَإِنَّا إِن شَاءَ اللَّهُ لَمُهْتَدُونَ ﴿٧٠﴾

71. मूसा ने कहा वह फ़रमाता है गाय ऐसी हो जिससे ख़िदमत न ली जाती हो, ज़मीन जोतने की और न पानी खींचने की।भली चंगी और बेदाग़ हो।[91]कहने लगे अब आप स्पष्ट बात लाए ।[92] फिर उन्हों ने उसे ज़बह किया हालाँकि वह ज़बह करने पर आमादा न थे।

قَالَ إِنَّهُ يَقُولُ إِنَّهَا بَقَرَةٌ لَّا ذَلُولٌ تُثِيرُ الْأَرْضَ وَلَا تَسْقِي
الْحَرْثَ مُسَلَّمَةٌ لَّا شِيَةَ فِيهَا ۚ قَالُوا الْآنَ جِئْتَ بِالْحَقِّ ۚ
فَذَبَحُوهَا وَمَا كَادُوا يَفْعَلُونَ ﴿٧١﴾

72. और याद करो जब तुम ने एक व्यक्ति को क़त्ल किया था, फिर उस के बारे में एक दुसरे पर इल्ज़ाम लगा रहे थे।और अल्लाह चाहता था कि जो बात तुम छिपा रहे हो उस को खोल कर के रख दे।

وَإِذْ قَتَلْتُمْ نَفْسًا فَادَّارَأْتُمْ فِيهَا ۖ وَاللَّهُ مُخْرِجٌ مَّا كُنتُمْ
تَكْتُمُونَ ﴿٧٢﴾

89. सब्त अर्थात सनीचर के दीन बनी इस्राईल के लिए इबादत की खातिर निश्चित कर दिया गया था । इस दिन शिकार इत्यादि करने की मनाही थी किन्तु उन्होंने हिल्ला बहाना कर के स्वयं को बहुत सी पाबन्दियों से आजाद कर लिया था।

90.यह मिसाल है इस बात की,कि बनी इस्राईल शरीअत के आदेशों का पालन करने में किस तरह मुँह फेरा करते थे और किस तरह बच निकलने की राहें ढूँढा करते थे ।

91. अल्लाह तआला ने एक गाय ज़बह करने का हुक्म दिया था, इस लिए वह एक औसत दर्जे की कोई सी गाय ज़बह करते तो काफ़ी हो जाता किन्तु उन्होंने सवाल पर सवाल कर के शरीअत का फैसला अपने लिए बहुत संकीर्ण कर लिया।

92. ऐसे गुणों की गाय उस युग में पूजा के लिए विशिष्ट की जाती थी । इस लिए निर्धारण के साथ ऐसी ही गाय ज़बह करने का आदेश दिया गया ताकि बनी इस्राईल को मिस्र में रहते हुए गऊ पूजा की जो छूत लग गई थी उस से वे पवित्र हो जाऐं। और अपने अमल से यह साबित कर दिखाऐं कि एक अकेले अल्लाह के सिवा किसी को वह पूजा योग्य नहीं समझते । मौजूदा तौरात में गाय को ज़बह करने का असल हुक्म मौजूद है अल्बत्ता उस की तफ़सील का वर्णन नहीं है

'' फिर यहोवा ने मूसा और हारून से कहा व्यवस्था की जिस विधि की आज्ञा यहोवा देता है वह यह है कि तू इस्राईलियों से कह, कि मेरे पास एक लाल निर्दोष बधिया ले आओ जिस में कोई भी दोष न हो और जिस पर जूआ कभी न रखा गया हो।तब उस एलिआज़र याज़क को दो और वह उसे छावनी से बाहर ले जाऐं और कोई उस को उसी के सामने बलिदान करे।'' (गिनती 19:1,से 3)

❖❖❖❖❖❖❖❖

73. अतः हम ने कहा उस (मक़्तूल की लाश) को उस (गाय) के एक हिस्से से चोट लगाओ।[93] इस तरह अल्लाह मुर्दों को जिन्दा करता है और तुम को अपनी निशानियाँ दिखाता है ताकि तुम अक़्ल से काम लो।[94]

فَقُلْنَا اضْرِبُوهُ بِبَعْضِهَا ۚ كَذَٰلِكَ يُحْيِي اللَّهُ الْمَوْتَىٰ وَيُرِيكُمْ
آيَاتِهِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ﴿٧٣﴾

74. इन निशानियों को देखने के बाद भी तुम्हारे दिल सख्त हो गए,पत्थरों की तरह सख्त बल्कि इस से भी ज़्यादा सख्त क्यों कि कुछ पत्थर ऐसे भी होते हैं जिन से नहरें फूट निकलती हैं और कुछ फट जाते हैं और उन से पानी जारी हो जाता है [95] और कुछ ऐसे भी होते हैं जो खुदा के खौफ़ से गिर पड़ते हैं। और अल्लाह तुम्हारे कर्मों से बेखबर नहीं है ।

ثُمَّ قَسَتْ قُلُوبُكُمْ مِنْ بَعْدِ ذَٰلِكَ فَهِيَ كَالْحِجَارَةِ
أَوْ أَشَدُّ قَسْوَةً ۚ وَإِنَّ مِنَ الْحِجَارَةِ لَمَا يَتَفَجَّرُ مِنْهُ الْأَنْهَارُ ۚ وَإِنَّ
مِنْهَا لَمَا يَشَّقَّقُ فَيَخْرُجُ مِنْهُ الْمَاءُ ۚ وَإِنَّ مِنْهَا لَمَا يَهْبِطُ
مِنْ خَشْيَةِ اللَّهِ ۗ وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٧٤﴾

75. क्या तुम यह आशा रखते हो कि ये लोग तुम्हारी बात मान लेंगे हालाँकि उन में से एक गिरोह अल्लाह का कलाम सुनता रहा है और इस को समझ चुकने के बाद जान बूझ कर इस में परिवर्तन करता रहा है।[96]

أَفَتَطْمَعُونَ أَنْ يُؤْمِنُوا لَكُمْ وَقَدْ كَانَ فَرِيقٌ مِنْهُمْ
يَسْمَعُونَ كَلَامَ اللَّهِ ثُمَّ يُحَرِّفُونَهُ مِنْ بَعْدِ مَا عَقَلُوهُ
وَهُمْ يَعْلَمُونَ ﴿٧٥﴾

76. जब यह ईमान वालों से मिलते हैं तो कहते हैं, हम ईमान लाए हैं और जब अकेले में एक दूसरे से मिलते हैं तो कहते हैं कि क्या तुम इन को वह बातें बताते हो जो अल्लाह ने तुम पर खोली हैं ताकि तुम्हारे रब के पास तुम्हारे खिलाफ हुज्जत करें ?[97]क्या तुम समझते नहीं ?

وَإِذَا لَقُوا الَّذِينَ آمَنُوا قَالُوا آمَنَّا وَإِذَا خَلَا بَعْضُهُمْ
إِلَىٰ بَعْضٍ قَالُوا أَتُحَدِّثُونَهُمْ بِمَا فَتَحَ اللَّهُ عَلَيْكُمْ
لِيُحَاجُّوكُمْ بِهِ عِنْدَ رَبِّكُمْ ۚ أَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿٧٦﴾

77. क्या इन्हें नहीं मालूम कि अल्लाह उन बातों को भी जानता है जिन को वे छिपाते हैं और उन बातों को भी जिन को वे ज़ाहिर करते हैं ।

أَوَلَا يَعْلَمُونَ أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا يُسِرُّونَ وَمَا يُعْلِنُونَ ﴿٧٧﴾

78. और इन में अनपढ़ लोग भी हैं [98] जो अल्लाह की किताब का इल्म (ज्ञान) नहीं रखते बल्कि आरज़ूओं (कामनाओं) को लिए बैठे हैं [99] और सिर्फ अटकल की बातें करते हैं ।

وَمِنْهُمْ أُمِّيُّونَ لَا يَعْلَمُونَ الْكِتَابَ إِلَّا أَمَانِيَّ وَإِنْ هُمْ إِلَّا
يَظُنُّونَ ﴿٧٨﴾

79. तो तबाही है उन लोगो के लिए जो अपने हाथ से किताब लिखते हैं [100] फिर कहते हैं कि यह अल्लाह की ओर से है ताकि इस के द्वारा थोड़ी सी क़ीमत वसूल कर लें।[101] तो उन के हाथ का यह लिखा भी उन के लिए तबाही का कारण है और उन की यह कमाई भी उन के लिए विनाश का कारण है।[102]

فَوَيْلٌ لِلَّذِينَ يَكْتُبُونَ الْكِتَابَ بِأَيْدِيهِمْ ثُمَّ يَقُولُونَ
هَٰذَا مِنْ عِنْدِ اللَّهِ لِيَشْتَرُوا بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا ۖ فَوَيْلٌ لَهُمْ مِمَّا
كَتَبَتْ أَيْدِيهِمْ وَوَيْلٌ لَهُمْ مِمَّا يَكْسِبُونَ ﴿٧٩﴾

93. यह क़सामा (क़सम ख़िलाने) की एक घटना की ओर इशारा है। एक मक़तूल की लाश मैदान में पड़ी हुई मिल गई थी और उस के क़ातिल का पता नही लग रहा था और ये एक दुसरे पर इल्ज़ाम लगा रहे थे। इस सिलसिले में शरअी तरीक़ा यह निश्चित किया गया कि क़रीब के लोगों से हलफिया (क़सम खिला कर) बयान लिए जायें कि हम ने क़त्ल नहीं किया है और न हम ने क़त्ल होते हुए देखा है। हलफिया बयान और अधिक दृढ़ करने के लिए गाय की क़ुर्बानी करने का हुक्म हुआ ताकि हलफिया बयान देने वाले उस के खून से अपने हाथ धोऐं। बनी इस्राईल को गाय ज़बह करने का जो हुक्म दिया था वह उसी मौक़े की बात है। गोया गाय को ज़बह करने का जहाँ यह उद्देश्य था कि गऊ पूजा के विचार में सुधार हो जाए वहाँ दूसरा महत्वपूर्ण उद्देश्य कसामा के तरीक़े को प्रचलित करना था।

94. जिस गाय को ज़बह किया गया था उस के एक हिस्से से मक़तूल की लाश पर चोट लगाने अथवा स्पर्श करने का हुक्म हुआ। इस तरह मक़तूल के अन्दर अल्लाह तआला ने जान डाल दी और उस ने क़ातिल का नाम बता दिया।

यह अल्लाह तआला की ओर से खास निशानी दिखाई गई थी एवं इस से यह भी स्पष्ट हुआ कि गाय को ज़बह करने से कोई आफ़त नाज़िल नहीं हुई बल्कि उस को ज़बह करना लाभदायक सिद्ध हुआ ।

95. मतलब यह कि पत्थर कठोर होने के बावजूद अपने अन्दर यह क्षमता रखता है कि पानी की धारें उस के अन्दर जारी हों लेकिन इन्सान का दिल ख़ुदा के ख़ौफ (भय) से ख़ाली हो जाने की सूरत में इतना कठोर हो गया है की उस के अन्दर बहने वाली तमाम धाराऐं सूख जाती हैं और फिर कोई नसीहत काम नहीं आती। इसी लिए जो लोग अल्लाह के ग़ज़ब की परवाह किये बग़ैर ग़ुनाह पर ग़ुनाह किए चले जाते हैं उन का सुधार किसी के बस में नहीं होता.

96. अहले-किताब (यहूदियों और ईसाईयों) ने अल्लाह की किताब में जो परिवर्तन किये थे उस की कई शक्लें थीं,एक सूरत यह थी कि वे कलाम में कुछ कमी कर देते थे या फिर कुछ बढ़ा देते थे। जैसे कि उन्होंने यह झूठ ख़ुदा से जोड़ दिया कि अल्लाह ने ६ दिन में ब्राहमाण्ड (कायनात) को पैदा किया और उस के बाद सातवें दिन आराम किया (निर्गमन 31:17) (अल्लाह की पनाह ऐसी बातों से) इसी प्रकार हज़रत हारून अलैहिस्सलाम पर यह इल्ज़ाम लगाया कि उन्होंने बछड़ा बनाया था (निर्गमन अध्याय 31,32) दुसरी सूरत यह थी कि वे मन मानी व्याख्या करते थे और तीसरी सूरत यह थी कि वाक्य को कुछ से कुछ बना देते थे जैसे मर्वा को जो मक्का की पहाड़ी का नाम है, मौरा या मर्या बना दिया ताकि उस को पहचाना न जा सके, वरना मक्का की श्रेष्ठता साबित होगी तथा चौथी सूरत यह थी कि शब्दों का ऐसा अनुवाद किया जाता जो कलाम के संदर्भ और मंशा के बिल्कुल विरुद्ध होता। मौजूदा तौरात इंजील इत्यादि में इस प्रकार के परिवर्तन किये गए हैं। ये किताबें अपने वास्तविक रुप में मौजूद नहीं है। उन्होंने अपनी तफ़सीर क़ौमी तारीख़ (National History) और मन गढ़न्त अन्दाजों एवं अटकल की बातों को अल्लाह के कलाम के साथ गड्ड मड्ड कर के ख़ुदा के कलाम (Word of God) की हैसियत से पेश कर दिया ।

97. यहूदी आपस में कहते थे कि जो भविष्यवाणी हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नुबुव्वत के बारे में तौरात में मौजूद है उन को मुसलमानों के सामने बयान न करो वरना मुसलमान ख़ुदा के दरबार में पेशी के दिन उन को हमारे ख़िलाफ हुज्जत के तौर पर प्रस्तुत करेंगे।

98. मुराद अहले-किताब (यहूदियों और ईसाईयों) की जनता हैं जो दीन के आदेशों और हिदायतों से अनभिज्ञ थी।

99. जब आदमी व्यर्थ जीवन व्यतीत करना चाहता है तो शरीअत की पाबन्दियाँ उसे बोझ मालूम होने लगती हैं। इस लिए वह अल्लाह के कलाम की मन मानी व्याख्या कर के अपनी व्यर्थता को जायज मानने और मनवाने लगता है। मनचले लोग इस तरह की ग़लत व्याख्या पेश कर के अवाम की गुमराही का सामान करते रहते हैं और लोग उनके चकमे में आकर दीन को बच्चो का खेल बना लेते हैं और समझने लगते हैं कि आखिरत की सफ़लता एवं मुक्ति के लिए धर्म में आस्था व्यक्त करना और कुछ बुज़ुर्गों, साधू संतो का दामन पकड़े रहना काफ़ी है।

जीवन चाहे जितना पापी हो किन्तु बुज़ुर्गों एवं साधू संतो की बदौलत हम को जन्नत अवश्य मिलेगी लेकिन क़ुर्आन ने इस तरह की झूठी दीनदारी की जड़ काट दी है और सफलता एवं मुक्ति के मामलें में झूठी आशाओं, कल्पनाओं तथा खाम ख्यालियों के लिए कोई गुन्जाइश बाक़ी नहीं रहने दी।

100. अहले किताब (यहूदियों और ईसाईयों) के विद्वान मुराद हैं ।

101. उन की इस दीन फ़रोशी (धर्म विक्रय) का उद्देश्य सांसारिक लाभ हासिल करना था। इस लिए अल्लाह तआला ने स्पष्ट किया कि दुनिया का बड़े से बड़ा लाभ जो दीन को बेच कर हासिल किया जाए अपने परिणाम के लिहाज़ से अत्यंत तुच्छ है।

102. ख़ुदा की किताब में मन गढ़न्त बातें शामिल कर के या धार्मिक पुस्तक स्वयं लिख कर के लोगों को यह बावर

कराना कि यह अल्लाह की ओर से नाज़िल हुई है, एक ऐसी भीषणतम एवं भयावह गुमराही है जिस का शिकार साधारण धार्मिक लोग ही रहे हैं। क़ुर्आन कहता है कि जो चीज़ वास्तव में ख़ुदा की नाज़िल (अवतरित) की हुई नहीं है उसे ख़ुदा से जोड़ देना, बहुत बड़ी गुमराही एवं दुष्टता है। और जो लोग इस तरह की जालसाज़ी करते हैं वे लोग सख़्त ज़ालिम हैं और उन्हें अत्यन्त बुरे अन्जाम से दोचार होना पड़ेगा। स्पष्ट है, मज़हब के नाम पर खोटे सिक्के चलाना और लोगों की आँखों में धूल झोंकना कोई मामूली जुर्म नहीं है इस लिए इस की सज़ा भी कठोर होनी चाहिए।

वे कहते हैं (दोज़ख की) आग हमें छुएगी नहीं, सिवाए इस के कि गिनती के कुछ दिनों के लिए आग में डालें जाऐं इन से पूछो क्या तुम ने अल्लाह से कोई अहद (प्रतिज्ञा) ले रखा है कि अल्लाह अपने अहद की खिलाफ़वर्ज़ी नहीं करेगा या तुम अल्लाह की ओर ऐसी बात मन्सूब करते (जोड़ते) हो जिस का तुम्हें इल्म (ज्ञान) नहीं। (अल-क़ुर्आन)

80. वे कहते हैं (दोज़ख की) आग हमें छुएगी नहीं,सिवाए इस के कि गिनती के कुछ दिनों के लिए आग में डालें जाऐं [103] इन से पूछो क्या तुम ने अल्लाह से कोई अहद (प्रतिज्ञा) ले रखा है कि अल्लाह अपने अहद की खिलाफ़वर्ज़ी नहीं करेगा या तुम अल्लाह की ओर ऐसी बात मन्सूब करते (जोड़ते) हो जिस का तुम्हें इल्म (ज्ञान) नहीं.

وَقَالُوْا لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ اِلَّآ اَيَّامًا مَّعْدُوْدَةً ؕ قُلْ اَتَّخَذْتُمْ
عِنْدَ اللّٰهِ عَهْدًا فَلَنْ يُّخْلِفَ اللّٰهُ عَهْدَهٗۤ اَمْ تَقُوْلُوْنَ عَلَى
اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُوْنَ ﴿۸۰﴾

81. क्यों नहीं जिसने भी बुराई कमाई और उस के गुनाहों ने उस को घेरे में ले लिया तो ऐसे ही लोग दोज़ख वाले हैं वे उस में सदैव रहेंगे।

بَلٰى مَنْ كَسَبَ سَيِّئَةً وَّاَحَاطَتْ بِهٖ خَطِيْٓــَٔتُهٗ فَاُولٰٓئِكَ
اَصْحٰبُ النَّارِ ۚ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ﴿۸۱﴾

82. और जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने नेक आमाल (सुकर्म) किए, वे जन्नत वाले हैं, वे उस में सदैव रहेंगे।

وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ اُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ
الْجَنَّةِ ۚ هُمْ فِيْهَا خٰلِدُوْنَ ﴿۸۲﴾

83. याद करो जब हम ने बनी इस्राईल से पक्का अहद (प्रण) लिया था कि अल्लाह के सिवा किसी की इबादत न करना,माता पिता [104] रिश्तेदारों यतीमों और मिस्कीनो के साथ नेक सुलूक करना, लोगों से अच्छी बात कहना [105] नमाज़ कायम करना और ज़कात देना,मगर थोड़े आदमियों के सिवा तुम सब इस से फिर गए और मुँह मोड़ना तुम्हारी निति ही है।

وَاِذْ اَخَذْنَا مِيْثَاقَ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ لَا تَعْبُدُوْنَ اِلَّا
اللّٰهَ وَبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا وَّذِى الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى
وَالْمَسٰكِيْنِ وَقُوْلُوْا لِلنَّاسِ حُسْنًا وَّاَقِيْمُوا
الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ ؕ ثُمَّ تَوَلَّيْتُمْ اِلَّا قَلِيْلًا
مِّنْكُمْ وَاَنْتُمْ مُّعْرِضُوْنَ ﴿۸۳﴾

84. और याद करो जब हम ने तुम से पक्का अहद (प्रण) लिया था कि एक दुसरे के खून न बहाओगे और न एक दुसरे को उन की बस्तियों से निकालोगे, फिर तुम ने इस का इक़रार किया और तुम इस पर गवाह हो।

وَاِذْ اَخَذْنَا مِيْثَاقَكُمْ لَا تَسْفِكُوْنَ دِمَآءَكُمْ وَلَا تُخْرِجُوْنَ
اَنْفُسَكُمْ مِّنْ دِيَارِكُمْ ثُمَّ اَقْرَرْتُمْ وَاَنْتُمْ تَشْهَدُوْنَ ﴿۸۴﴾

85. मगर यह तुम ही लोग हो कि अपनों को क़त्ल करते हो और अपने ही गिरोह का उन की बस्तियों से निकालते हो और गुनाह एवं ज़्यादती के साथ उन के दुश्मनों की मदद करते हो।अगर वे तुम्हारे पास क़ैद हो कर आते हैं तो फिदय: (प्राणमूल्य, प्रतिदान) दे कर उन्हें छुड़ा लेते हो ।[106] हालाँकि सिरे से उन को (उन के घरों से) निकालना ही तुम पर हराम था। फिर क्या तुम अल्लाह की किताब के एक हिस्से को मानते हो और दुसरे हिस्से से इन्कार करते हो? फिर तुम में से जो लोग इस के अपराधी हों उन की सज़ा [107] इस के सिवा और क्या है कि दुनिया की जिन्दगी में रुस्वा हों और क़ियामत के दिन भीषणतम अज़ाब की तरफ फेर दिए जाऐं। अल्लाह तुम्हारे करतूतों से बेख़बर नहीं है ।

ثُمَّ اَنْتُمْ هٰٓؤُلَآءِ تَقْتُلُوْنَ اَنْفُسَكُمْ وَتُخْرِجُوْنَ فَرِيْقًا مِّنْكُمْ
مِّنْ دِيَارِهِمْ ؗ تَظٰهَرُوْنَ عَلَيْهِمْ بِالْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ ؕ وَاِنْ
يَّاْتُوْكُمْ اُسٰرٰى تُفٰدُوْهُمْ وَهُوَ مُحَرَّمٌ عَلَيْكُمْ اِخْرَاجُهُمْ ؕ
اَفَتُؤْمِنُوْنَ بِبَعْضِ الْكِتٰبِ وَتَكْفُرُوْنَ بِبَعْضٍ ۚ فَمَا جَزَآءُ
مَنْ يَّفْعَلُ ذٰلِكَ مِنْكُمْ اِلَّا خِزْيٌ فِى الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۚ وَيَوْمَ
الْقِيٰمَةِ يُرَدُّوْنَ اِلٰٓى اَشَدِّ الْعَذَابِ ؕ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا
تَعْمَلُوْنَ ﴿۸۵﴾

103. यहूदियों की धारणा थी कि वे चूँकि एक चुनी हुई एवं सर्वश्रेष्ठ उम्मत है इस लिए उन की करनी चाहे कैसी ही हो किन्तु वे आग में डाले नहीं जायेंगे।और अगर डाले भी गए तो कुछ दिनों की सज़ा भुगत कर फिर जन्नत में दाख़िल कर दिये जायेंगे। इस ख़ाम ख़्याली ने उन को इस बात से बिलकुल बेपरवाह कर दिया था कि दीन की क्या माँग है और उन की कुछ न करने की, अथवा व्यर्थ में जीवन नष्ट करने की मनोवृत्ति बन गई थी। दीन के बारे में यह बहुत बड़ी ग़लतफ़हमी थी जो यहूदियों के अन्दर पैदा हो गई थी। और अफ़सोस कि मुसलमान भी इसी तरह की ग़लतफ़हमी का शिकार हो गए हैं ।

104. अल्लाह के नज़दीक इन्सान पर सबसे बड़ा हक़ माँ बाप का है किन्तु यह हक़ उन के साथ अच्छा व्यवहार करने का है न की उन की पूजा करने का। और जब अल्लाह तआला ने माँ बाप की पूजा करने की आज्ञा नहीं दी जब कि उन का हक़ सब से बड़ा है तो दुसरों की पूजा का सवाल पैदा ही कहाँ होता है, जब कि उन का हक़ माँ बाप के हक़ के बाद है।

105. यह आदेश सर्वसाधारण के लिए है, इस का मतलब यह है कि आदमी हर व्यक्ति से अच्छी बातें करे और सदभावना से मिलें। एक मुसलमान के लिए क़ुर्आन की शिक्षा यह नहीं है कि उस का सदभाव केवल मुसलमानों तक सीमित रहे बल्कि उस की शिक्षा यह है कि आदमी चाहे किसी क़ौम, किसी मुल्क और किसी धर्म से सम्बन्ध रखता हो, मुसलमान जब उस से बात करे तो अच्छी बात करे दिल तोड़ने और तकलीफ पहुँचाने वाली बातों से परहेज़ करे और सदभावना से पेश आए ।

106. इशारा है यहूदियों की उस बुरी हरकत की ओर कि वह अपने भाईयों के खिलाफ़ दुशमनों से साज़ बाज़ कर के उन को निर्वासन अर्थात देश से बाहर निकालते हैं और जब वे दुश्मनों कि हिरासत में आ जाते हैं तो क़ौम परस्ती का प्रदर्शन करते हैं और फिदय: (प्राणमूल्य, प्रतिदान) देकर उन को छुड़ाते हैं कि यह तौरात का हुक्म है, क्यों कि तौरात में जिस तरह फिदय: दे कर छुड़ाने का हुक्म है उसी तरह निर्वासन अर्थात देश निकाला देने की मनाही भी मौजूद है । फिर तौरात के एक हुक्म पर अमल करने और दुसरे हुक्म का उल्लंघन करने का क्या मतलब?

107. अर्थात अल्लाह की किताब की जो बात अपनी इच्छाओं के अनुकूल हों वह मान ली जायें और जो बात इच्छाओं के विरुद्ध हों उस से इन्कार किया जाऐं। इस प्रकार की दीनदारी (धार्मिकता) अल्लाह के दरबार में स्वीकृत नहीं है। जो लोग ऐसा रवैय्या अपनाते हैं वे दुनिया में भी रुस्वा होते हैं और आखिरत में भी भयंकर अज़ाब के भागीदार हैं। अल्लाह की किताब का सिर्फ पाठ करना और उस में अपनी आस्था व्यक्त करना काफी नहीं बल्कि व्यवहारिक रुप से उस का अनुसरण ज़रूरी है और उस के आदेशों में किसी तरह की काट छाँट अथवा कमी बेशी करना ईमान के विरूद्ध है। इस से स्पष्ट है कि जो लोग दीन की उन बातों को क़ुबूल करते हैं जो व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्धित हैं और उन बातों को रद् कर देते हैं जो सामाजिक अथवा सामूहिक जीवन से सम्बन्धित हैं, उन के दीन की कल्पना कितनी अपूर्ण एवं ग़लत है और उन का अपराध कितना भयंकर है।

❒ ❒ ❒ ❒ ❒ ❒

86. यह वह लोग हैं जिन्हों ने आखिरत के बदले संसारिक जीवन ख़रीद लिया[108] लिहाज़ा न तो इन के अज़ाब में कोई कमी होगी और न वे मदद पा सकेंगे.

أُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ اشْتَرَوُا الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا بِالْاٰخِرَةِ ۫ فَلَا يُخَفَّفُ
عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ يُنْصَرُوْنَ ۝٨٦

87. हम ने मूसा को किताब दी और उस के बाद लगातार रसूल भेजे और ईसा इब्ने मरयम को खुली निशानियाँ दी [109] और रूहुलक़ुदस (पाक रुह)[110] से उस की मदद की फिर तुम्हारा यह क्या ढंग है कि जब भी कोई रसूल तुम्हारी अपनी इच्छाओं के खिलाफ कोई बात ले कर आया तुम ने घमण्ड ही किया ? किसी को झुठलाया और किसी को क़त्ल कर डाला ।

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوْسَى الْكِتٰبَ وَقَفَّيْنَا مِنْۢ بَعْدِهٖ بِالرُّسُلِ ۫
وَاٰتَيْنَا عِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ الْبَيِّنٰتِ وَاَيَّدْنٰهُ بِرُوْحِ الْقُدُسِ ؕ
اَفَكُلَّمَا جَآءَكُمْ رَسُوْلٌۢ بِمَا لَا تَهْوٰٓى اَنْفُسُكُمُ اسْتَكْبَرْتُمْ ۚ
فَفَرِيْقًا كَذَّبْتُمْ ۫ وَفَرِيْقًا تَقْتُلُوْنَ ۝٨٧

88. वे कहते हैं हमारे दिल बन्द हैं।असल बात यह है कि अल्लाह ने इन के कुफ्र के कारण इन पर लानत कर दी है इस लिए वे कम ही ईमान लाते हैं ।

وَقَالُوْا قُلُوْبُنَا غُلْفٌ ؕ بَلْ لَّعَنَهُمُ اللّٰهُ بِكُفْرِهِمْ
فَقَلِيْلًا مَّا يُؤْمِنُوْنَ ۝٨٨

89. और जब इन के पास अल्लाह की तरफ से एक किताब आई पुष्टि (तस्दीक़) करती हुई उस की जो इन के पास पहले से मौजूद है और इस से पहले वे काफिरों के मुक़ाबले फ़तेह की दुआऐं माँगा करते थे लेकिन जब वह चीज़ उन के पास आ गई जिसे वे पहचान भी गये तो उन्हों ने उस का इन्कार कर दिया [111] । अल्लाह की लानत हो ऐसे इन्कार करने वालों पर।

وَلَمَّا جَآءَهُمْ كِتٰبٌ مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ مُصَدِّقٌ لِّمَا مَعَهُمْ ۙ
وَكَانُوْا مِنْ قَبْلُ يَسْتَفْتِحُوْنَ عَلَى الَّذِيْنَ كَفَرُوْا ۚ فَلَمَّا
جَآءَهُمْ مَّا عَرَفُوْا كَفَرُوْا بِهٖ ۫ فَلَعْنَةُ اللّٰهِ عَلَى الْكٰفِرِيْنَ ۝٨٩

90. क्या ही बुरी चीज़ है जिस के बदले उन्हों ने अपनी जानों का सौदा किया कि ज़िद में आकर वे अल्लाह की नाज़िल की हुई हिदायत का सिर्फ इस बिना पर इन्कार कर रहे हैं कि अल्लाह ने अपने फ़ज़्ल (कृपा) से अपने जिस बन्दे [112] को चाहा नवाज़ा (अनुग्रहीत किया)। लिहाज़ा ये ग़ज़ब दर ग़ज़ब के अधिकारी हुए और काफिरों के लिए अत्यन्त अपमान जनक अज़ाब है।

بِئْسَمَا اشْتَرَوْا بِهٖٓ اَنْفُسَهُمْ اَنْ يَّكْفُرُوْا بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ بَغْيًا
اَنْ يُّنَزِّلَ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ عَلٰى مَنْ يَّشَآءُ مِنْ عِبَادِهٖ ۚ
فَبَآءُوْ بِغَضَبٍ عَلٰى غَضَبٍ ؕ وَلِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابٌ
مُّهِيْنٌ ۝٩٠

91. जब इन से कहा जाता है कि जो कुछ अल्लाह ने नाज़िल किया है उस पर ईमान लाओ तो वे कहते हैं. हम उस चीज़ पर ईमान रखते हैं जो हम पर नाज़िल हुई है इस के अलावा जो कुछ नाज़िल हुआ है उस का वे इन्कार करते हैं हालाँकि वह हक़ (सत्य) है और जो कुछ उनके पास मौजूद है उस की वह तस्दीक (पुष्टि) करता है।[113] इन से कहो फिर तुम अल्लाह के पैगम्बरों को इस से पहले क्यों क़त्ल करते रहे अगर तुम मोमिन हो ?[114]

وَاِذَا قِيْلَ لَهُمْ اٰمِنُوْا بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ
قَالُوْا نُؤْمِنُ بِمَآ اُنْزِلَ عَلَيْنَا وَيَكْفُرُوْنَ بِمَا وَرَآءَهٗ ۗ
وَهُوَ الْحَقُّ مُصَدِّقًا لِّمَا مَعَهُمْ ؕ قُلْ فَلِمَ تَقْتُلُوْنَ
اَنْۢبِيَآءَ اللّٰهِ مِنْ قَبْلُ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۝٩١

108. अर्थात आख़िरत के मुक़ाबले में दुनिया की जिन्दगी को वरीयता दी।

109. मौज्ज़ात (चमत्कार) तात्पर्य हैं जो इतने स्पष्ट थे कि उन के अल्लाह की ओर से नाज़िल होने में किसी शक की गुन्जाईश नहीं थी और वे बिल्कुल साफ एवं खुले तौर पर हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की नुबुव्वत को प्रमाणित करते थे।

110. यहूदियों ने हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम पर यह इल्ज़ाम लगाया था कि वह शैतान की मदद से मौज्ज़े (चमत्कार) दिखाते हैं। इस का खंडन करते हुए क़ुर्आन कहता है कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को शैतान की नहीं बल्कि पाक रुह अर्थात जिब्रील (फ़रिश्ता) की मदद अल्लाह की तरफ से हासिल थी।

111. आख़िरी नबी के बारे में यहूदियों की आसमानी किताबों में भविष्यवाणियाँ (पेशीन गोइयाँ) मौजूद थीं इस लिए उन्हें बड़ी बेचैनी से आखिरी नबी की आमद का इन्तिज़ार था । वे समझते थे कि उन के आगमन पर उन को अपने दुश्मनों पर फ़तेह (विजय) होगी। इस विजय के लिए वे दुआ करते थे किन्तु जब हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नियुक्ति हुई और यहूदियों ने पहचान लिया कि यह वही नबी हैं जिन का इन्तिज़ार था, तो मात्र ज़िद और जलन के कारण उन की रिसालत का इन्कार किया।

112. यहूदियों को इस बात पर ग़ुस्सा था कि अल्लाह तआला ने आखिरी नबी इस्माईल वंश में से क्यों उठाया, बनी इस्राईल में से क्यों न उठाया। गोया ख़ुदा को इन बुद्धिजीवियों से मश्वरा कर के किसी को रिसालत के दायित्व को सौंपना चाहिए था ।

113. अर्थात यहूदी अपनी धार्मिक पुस्तक तौरात पर ईमान रखना काफी समझते हैं। हालाँकि क़ुर्आन का नुज़ूल (अवतरण) ठीक ठीक तौरात की भविष्यवाणियों (पेशीन गोइयों) के मुताबिक (अनूकूल) हुआ है । इस लिए क़ुर्आन को झुठलाना तौरात को झुठलाना है।

114. अर्थात उन का तौरात पर ईमान रखने का दावा ग़लत है। अगर वास्तव में वे तौरात पर ईमान रखने वाले होते तो नबियों को हरगिज़ क़त्ल न कर डालते।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀

92. तुम्हारे पास मूसा खुली खुली निशानियाँ ले कर आए थे फिर भी तुम ने उन के पीछे बछड़े को माबूद (पूज्य) बना लिया और तुम ज़ुल्म ढाने वाले बने।

وَلَقَدْ جَآءَكُمْ مُّوْسٰى بِالْبَيِّنٰتِ ثُمَّ اتَّخَذْتُمُ الْعِجْلَ
مِنْۢ بَعْدِهٖ وَاَنْتُمْ ظٰلِمُوْنَ ﴿٩٢﴾

93. और याद करो जब तूर को तुम्हारे ऊपर उठा कर तुम से पक्का अहद (प्रण) लिया था कि जो कुछ हम ने तुम को दिया है उस को मज़बूती के साथ पकड़ लो और सुनो।उन्होंने कहा हम ने सुना और नफ़रमानी की और उन के कुफ्र के कारण बछड़े की परस्तिश (उपासना) उन के दिलों में रच बस गई। इन से कहो अगर तुम मोमिन हो तो तुम्हारा ईमान तुम को कैसी बुरी हरकतों का हुक्म देता है ।

وَاِذْ اَخَذْنَا مِيْثَاقَكُمْ وَرَفَعْنَا فَوْقَكُمُ الطُّوْرَ ؕ
خُذُوْا مَآ اٰتَيْنٰكُمْ بِقُوَّةٍ وَّاسْمَعُوْا ؕ قَالُوْا سَمِعْنَا
وَعَصَيْنَا ۗ وَاُشْرِبُوْا فِىْ قُلُوْبِهِمُ الْعِجْلَ بِكُفْرِهِمْ ؕ
قُلْ بِئْسَمَا يَاْمُرُكُمْ بِهٖۤ اِيْمَانُكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿٩٣﴾

94. इन से कहो अगर आख़िरत का घर तमाम लोगों को छोड़ कर सिर्फ तुम्हारे लिए मख्सूस (विशिष्ट) है तो मौत की तमन्ना करो अगर तुम (अपने दावे में) सच्चे हो।

قُلْ اِنْ كَانَتْ لَكُمُ الدَّارُ الْاٰخِرَةُ عِنْدَ اللّٰهِ خَالِصَةً مِّنْ
دُوْنِ النَّاسِ فَتَمَنَّوُا الْمَوْتَ اِنْ كُنْتُمْ صٰدِقِيْنَ ﴿٩٤﴾

95. मगर उन्हों ने जो कुछ आगे भेजा है इस की वजह से वे इस की तमन्ना न करेंगे और अल्लाह ज़ालिमों को खूब जानता है ।

وَلَنْ يَّتَمَنَّوْهُ اَبَدًاۢ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْهِمْ ؕ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌۢ
بِالظّٰلِمِيْنَ ﴿٩٥﴾

96. तुम इन को जिन्दगी का सब से अधिक लोभी पाओगे यहाँ तक कि मुश्रिकों (बहुदेव वादियों)से भी अधिक।इन में से हर व्यक्ति यह चाहता है कि उसे हज़ार साल की आयु मिले, हालाँकि लम्बी आयु इन्हें अज़ाब से बचाने वाली नहीं और जो कुछ यह कर रहें हैं उसे अल्लाह देख रहा है।[115]

وَلَتَجِدَنَّهُمْ اَحْرَصَ النَّاسِ عَلٰى حَيٰوةٍ ۚ
وَمِنَ الَّذِيْنَ اَشْرَكُوْا ۚ يَوَدُّ اَحَدُهُمْ لَوْ يُعَمَّرُ اَلْفَ سَنَةٍ ۚ
وَمَا هُوَ بِمُزَحْزِحِهٖ مِنَ الْعَذَابِ اَنْ يُّعَمَّرَ ؕ وَاللّٰهُ
بَصِيْرٌۢ بِمَا يَعْمَلُوْنَ ﴿٩٦﴾

97. कहो जो जिब्रील का दुश्मन हो उसे मालूम होना चाहिए कि जिब्रील ने अल्लाह के इज़्न (आज्ञा) से यह क़ुर्आन (ऐ पैग़म्बर) तुम्हारे दिल पर नाज़िल किया है,[116]उन किताबों कि तस्दीक़ (पुष्टि) करता है जो पहले नाज़िल हो चुंकि हैं और हिदायत एवं ख़ुशख़बरी है ईमान लाने वालों के लिए।

قُلْ مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِّجِبْرِيْلَ فَاِنَّهٗ نَزَّلَهٗ عَلٰى قَلْبِكَ
بِاِذْنِ اللّٰهِ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ وَهُدًى وَّبُشْرٰى
لِلْمُؤْمِنِيْنَ ﴿٩٧﴾

98. जो व्यक्ति अल्लाह,उस के फ़रिश्तों उस के रसूलों और जिब्रील एवं मीकाईल का दुश्मन हो [117] तो अल्लाह ऐसे काफिरों का दुश्मन है।

مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِّلّٰهِ وَمَلٰٓئِكَتِهٖ وَرُسُلِهٖ وَجِبْرِيْلَ
وَمِيْكٰىلَ فَاِنَّ اللّٰهَ عَدُوٌّ لِّلْكٰفِرِيْنَ ﴿٩٨﴾

115. आख़िरत का इन्कार करने वाले तो दुनिया में ज़्यादा से ज़्यादा जीने के लोभी होते ही हैं क्यों कि वे समझते हैं कि यह ऐश हमें दोबारा नसीब नहीं होगा।

बाबर बा ऐश कोश के आलम दोबारा निस्त

किन्तु यहूदी जो आख़िरत को मानने का दावा करते थे वे उन से भी अधिक जीने के लोभी थे क्यों कि जन्नत को मात्र अपनी संपत्ति समझने के बावजूद वे अपनी करतूतों की बिना पर अपने दिल में यह दुविधा महसूस करते थे कि ख़ुदा के दरबार में उन से कहीं पूछताछ न हो जाए। असल बात यह है कि जो लोग दुनिया को इम्तिहान की जगह समझने के बजाए मौज उड़ाने की जगह समझते हैं वे ज़्यादा से ज़्यादा दुनिया के मज़े लूटना चाहते हैं । इस लिए वे लम्बी आयु की कामना करते हैं और जीवन के लोभी हो जाते हैं। हालाँकि इन्सान को असली चिन्ता इस बात की होनी चाहिए कि उम्र की जो मोहलत भी उसे मिली है उस से वह इस इम्तिहान में कामयाबी के लिए क्या सामान कर रहा है। और यह हक़ीक़त हमेशा उस की नज़रों के सामने रहनी चाहिए कि वह दुनिया में जो रोल निभा रहा है उसे अल्लाह देख रहा है, और जब अल्लाह सब कुछ देख रहा है तो वह किये हुए कामों का बदला कैसे नहीं देगा।

116. यहूदी ज़िद और जलन में मुब्तिला हो कर हज़रत जिब्रील अलैहिस्सलाम को अपना दुश्मन खयाल करते थे। उन को जिब्रील अलैहिस्सलाम पर इस लिए ग़ुस्सा था कि वह हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर वह्य ले कर आते थे। उन के ख़्याल में वह्य उन की क़ौम अथवा उन की जाति के किसी व्यक्ति पर अवतारित की जानी चाहिए थी। किन्तु उन का यह ख़्याल उच्चकोटि की मूर्खता थी क्योंकि हज़रत जिब्रील अलैहिस्सलाम फ़रिश्ते थे और अल्लाह ही के हुक्म से हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर वह्य लाते थे। दूसरे शब्दों में नुबुव्वत के लिए बनी इस्माईल में से हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नियुक्ति अल्लाह ही की तरफ से थी इस लिए हज़रत जिब्रील से दुश्मनी का मतलब अल्लाह से दुश्मनी है। ज़ाहिर है जिन को अल्लाह से दुश्मनी हो उन को अल्लाह अपना दोस्त क्यों बनाएगा ।

117. मीकाईल एक जलीलुलक़द्र (महानुभाव) फ़रिश्ते का नाम है ।

❖❖❖❖❖❖

99. हम ने तुम्हारी तरफ अत्यन्त स्पष्ट आयतें नाज़िल कि हैं और इन का इन्कार वही लोग करते हैं जो फ़ासिक (उल्लंघन कारी) हैं।[118]

وَلَقَدْ اَنْزَلْنَاۤ اِلَيْكَ اٰيٰتٍۭ بَيِّنٰتٍ ۚ وَمَا يَكْفُرُ بِهَاۤ اِلَّا
الْفٰسِقُوْنَ ﴿۹۹﴾

100. क्या इन की यह नीति नहीं रही है कि जब कभी इन्हों ने कोई अहद (प्रण) किया उन के एक न एक गिरोह ने उसे ज़रूर उठा कर फेंक दिया। हक़ीक़त यह है कि इन में से अधिकतर लोग ईमान ही नहीं रखते !

اَوَكُلَّمَا عٰهَدُوْا عَهْدًا نَّبَذَهٗ فَرِيْقٌ مِّنْهُمْ ؕ بَلْ اَكْثَرُهُمْ
لَا يُؤْمِنُوْنَ ﴿۱۰۰﴾

101. और जब उन के पास अल्लाह की तरफ से एक रसूल इस (किताब) की पुष्टि करता हुआ आया जो इन के पास मौजूद है तो इन अहले-किताब में से एक गिरोह ने अल्लाह की किताब को इस तरह पीठ पीछे डाल दिया कि गोया वे जानते ही नहीं ।

وَلَمَّا جَآءَهُمْ رَسُوْلٌ مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ مُصَدِّقٌ لِّمَا مَعَهُمْ
نَبَذَ فَرِيْقٌ مِّنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ ۙ كِتٰبَ اللّٰهِ وَرَآءَ
ظُهُوْرِهِمْ كَاَنَّهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ﴿۱۰۱﴾

102. और उन चीज़ो के पीछे पड़ गए जिन्हें शैतान सुलेमान की हुकूमत की ओर मन्सूब (सम्बन्धित) कर के पढ़ते पढ़ाते थे।[119] हालाँकि सुलेमान ने कुफ्र नहीं किया बल्कि शैतानों ने कुफ्र किया जो लोगों को जादू सिखाते थे [120] और बाबिल में दो फ़रिश्तों, हारुत और मारुत पर (जादू) नाज़िल नहीं किया गया था और वह किसी को सिखाते न थे।जब तक कि उस को सावधान न करते कि हम तो आज़माइश के लिए हैं लिहाज़ा तुम कुफ्र में नहीं पड़ना। फिर भी यह लोग उन से वह चीज़ सीखते जिस से मियाँ बीवी में जुदाई डाल दें।[121] हालाँकि वह अल्लाह के इज़्न (अनुज्ञा)के बग़ैर किसी को भी उस के द्वारा नुक़सान नहीं पहुँचा सकते थे।मगर वह ऐसी चीज़ सीखते थे जो खुद उन के पक्ष में लाभदायक नहीं थी बल्कि हानिकारक थी।और उन्हें मालूम था कि जिसने उसे खरीदा उस का आख़िरत में कोई हिस्सा नहीं। क्या ही बुरी है वह चीज़ जिस के बदले उन्हों ने अपनी जानों को बेच डाला। काश कि वे जान जाते।

وَاتَّبَعُوْا مَا تَتْلُوا الشَّيٰطِيْنُ عَلٰى مُلْكِ سُلَيْمٰنَ ۚ
وَمَا كَفَرَ سُلَيْمٰنُ وَلٰكِنَّ الشَّيٰطِيْنَ كَفَرُوْا يُعَلِّمُوْنَ
النَّاسَ السِّحْرَ ۗ وَمَاۤ اُنْزِلَ عَلَى الْمَلَكَيْنِ بِبَابِلَ
هَارُوْتَ وَمَارُوْتَ ؕ وَمَا يُعَلِّمٰنِ مِنْ اَحَدٍ حَتّٰى يَقُوْلَاۤ اِنَّمَا
نَحْنُ فِتْنَةٌ فَلَا تَكْفُرْ ؕ فَيَتَعَلَّمُوْنَ مِنْهُمَا مَا يُفَرِّقُوْنَ
بِهٖ بَيْنَ الْمَرْءِ وَزَوْجِهٖ ؕ وَمَا هُمْ بِضَآرِّيْنَ بِهٖ مِنْ
اَحَدٍ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ ؕ وَيَتَعَلَّمُوْنَ مَا يَضُرُّهُمْ
وَلَا يَنْفَعُهُمْ ؕ وَلَقَدْ عَلِمُوْا لَمَنِ اشْتَرٰىهُ مَا لَهٗ
فِى الْاٰخِرَةِ مِنْ خَلَاقٍ ۛ وَلَبِئْسَ مَا شَرَوْا بِهٖۤ
اَنْفُسَهُمْ ؕ لَوْ كَانُوْا يَعْلَمُوْنَ ﴿۱۰۲﴾

103. अगर वे ईमान लाते और तक़वा (परहेज़गारी एवं संयम) अपनाते तो अल्लाह के दरबार में उस का जो बदला मिलता वह कहीं बेहतर था काश उन्हें इल्म (ज्ञान)होता।

وَلَوْ اَنَّهُمْ اٰمَنُوْا وَاتَّقَوْا لَمَثُوْبَةٌ مِّنْ عِنْدِ اللّٰهِ خَيْرٌ ؕ
لَوْ كَانُوْا يَعْلَمُوْنَ ﴿۱۰۳﴾

118. क़ुर्आन की आयतें, उस के अल्लाह का कलाम होने और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ईश्वरदूत होने का खुला सबूत हैं लिहाज़ा इन का इन्कार वही व्यक्ति कर सकता है जो अल्लाह का नाफ़रमान और उस के अहद (प्रण) को तोड़ने वाला हो ।

119. यहाँ शैतान से अभिप्राय वह फ़सादी लोग हैं जो सिफली अमल जादू, टोने टोटके, तावीज़ गंडो के द्वारा लोगों को वहमों एवं खुराफात में मुब्तिला करते हैं और उन्हें सत्यप्रिय अथवा सच्चाइयों का सामना करने वाला नहीं बनने देते। इस के बाद न अल्लाह की किताब से दिलचस्पी बाकी रहती है और न हक़ के मक़सद से।

यहूदीयों में जब नैतिकता का आभाव हुआ या कह लिजिए कि अख़लाक़ी गिरावट आई तो उन्हों ने अल्लाह की किताब को पीठ पीछे डाल दिया और जादू जैसी चीज़ के पीछे पड़ गए । अतः बाबिल में जब यह घिर गए थे तो उस समय उन के यही करतूत रहे और बाद में भी उन का एक न एक गिरोह इस सिफली गतिविधियों में व्यस्त रहा यहाँ तक कि जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नियुक्ति हुई जो ठीक उन भविष्यवाणियों के अनुकूल थी जो तौरात में बयान हुई थी तो उन्होंने इसकी कोई परवाह नहीं की और अल्लाह की किताब से मुँह फेर कर के जादू जैसी चीज़ के पीछे पड़ गए जो अक़ीदा और अमल (धारणा और कर्मो) में फसाद पैदा करने वाली थी। उन को जादू से लगाव इस लिए हो गया कि वह हकीक़त की दुनिया में नहीं तिल्सिमों (जादू) की दुनिया में रहना चाहते थे।

जिन लोगों ने जादू को पेशा बनाया था वह जनता को यह कह कर भड़काते थे कि हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम ने जो अविस्मरणीय एवं असाधारण हुकूमत स्थापित की थी और जिस में उन्हों ने जिन्नों को भी वश में कर लिया था वह उन्हें जादू ही के बल पर हासिल हुई थी। कुछ मान्यवर लोगों ने ''अला मुल्के सुलेमाना'' के अर्थ ''सुलेमान के अहद (युग) में'' बताया है । किन्तु यह मतलब न डिकशनरी के लिहाज़ से सही है और न सत्यता के अनुकूल है। डिकशनरी में मुल्क का अर्थ है ''हुकूमत'' न कि अहद (युग) और 'अला' यहाँ मन्सूब करने के अर्थ में प्रयोग हुआ है। ठीक उसी तरह जिस तरह कि ''यफ़तरूना अलल्लाहील कज़िबा'' ''अल्लाह की तरफ झूठ मन्सूब करते हैं'' में शब्द अला मन्सूब करने के अर्थ में प्रयोग हुआ है। (देखिए तफ़्सीर राज़ी) और हज़रत सुलेमान ने तो जिन्नों को वश में कर लिया था और उन की हुकूमत एक नबी की स्थापित की हुई हुकूमत थी जिस में फ़सादियों एवं उपद्रवियों को यह आज़ादी कहाँ हासिल हो सकती थी कि वह लोगों में जादू फैला कर उन्हें गुमराह करें।

120. हजरत सुलेमान अलैहिस्सलाम नबी थे और उन का ज़माना दसवीं सदी ईसा पूर्व का है। उन की सल्तनत अत्यन्त भव्य थी । हवाऐं परिन्दे, और जिन्न इन के वशीभूत कर दिए गए थे। यह हुकूमत उन्हें अल्लाह तआला की विशेष अनुकंपा एवं खास फ़ज़्ल से मिली थी और उन्हों ने जो महाविराट् एवं महत्वशाली कारनामे अन्जाम दिये वह सिर्फ और सिर्फ दीनी उद्देश्यों के लिए थे। इन पवित्र उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए साधन भी पवित्र अपनाए किन्तु उन को जो असाधारण शक्ति एवं दबदबा प्राप्त हो गया था उस की व्याख्या दुष्ट फ़सादियों ने यह करना शुरू कर दिए कि यह सब कुछ उन्हें जादू और अमलियात की वजह से प्राप्त हो गया था। इस तरह लोगों को हक़ (सत्य) से फेरने और वहम एवं खुराफात में लिप्त करने के लिए 'नक्शे सुलेमानी' जैसी बिदअतें (गुमराही) ईजाद कर ली गई जो बाद में यहूदियों से प्रभावित मुसलमानों के एक वर्ग में भी प्रचलित हो गई। और कुछ वहमी लोग तो जिन्नो को वश में करने का स्वप्न भी देखते रहें हैं । क़ुर्आन इस पर कड़ाई से नोटिस लेता है क्योंकि अल्लाह तआला अपनी किताब रहनुमाई हासिल करने और अमल करने के लिए नाज़िल करता है। इस को पीठ पीछे डाल कर सिफली अमलियात के चक्कर में पड़ना उन ही लोगों का काम है जिन को न ख़ुदा से सरोकार हो और न आख़िरत से।

स्पष्ट रहे कि क़ुर्आन जादू को कुफ्र करार देता है और यहूदी हज़रत सुलेमान पर उन के जादूगर होने का जो इल्जाम लगाते हैं उस का जोरदार खण्डन करता है और हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम को कुफ्र से बरी करार देता है।

121. हारुत, मारुत दो फरिश्तों के नाम है जिन को बाबिल में अल्लाह तआला ने इन्सान के रुप में लोगों की आज़माइश के लिए भेजा था। यह उसी तरह का मामला है जिस तरह कि लूत की क़ौम की तरफ फ़रिश्ते खूबसूरत लड़को के रुप में उस क़ौम की आज़माइश के लिए भेजे गए थे (देखिए सूरह हिजर नोट नं.६२) किन्तु यह बात सही नहीं की इन फ़रिश्तों पर जादू जैसी कोई चीज़ उतारी गई थी। यहूदियों ने जादू को जायज़ ठहराने के लिए इसे हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम से सम्बन्धित किया था और हारुत और मारुत फरिश्तों से भी। मगर क़ुर्आन ने इन दोनों बातों का खंडन कर दिया ।

बाबिल में एक ज़माने में जादू का बहुत ज़ोर था। इस ज़ोर को तोड़ने के लिए अल्लाह तआला ने दो फ़रिश्तों को

इन्सानी रुप में उस क़ौम की ओर भेजा था और उन के सुपुर्द यह काम था कि वह लोगों को जादू की हक़ीक़त और उस की विनाशकारियों से अवगत करें ताकि लोग इस से बाज़ आ जाऐं। किन्तु जब उन्होंने जादू की हक़ीक़त बताना शुरू किया तो टेढ़ी बुद्धि के लोग इस से बेजा फ़ायदा उठाने लगे। अर्थात जादूगरी के तरीके को अपना कर मियाँ बीवी के बीच फूट डालने अथवा अलगाव पैदा करने का काम करने लगे। ज़ाहिर है ऐसे कामों से उन्हीं को लगाव हो सकता है जो दुष्ट स्वभाव के टेढ़ी बुद्धि के और राह से भटके हुए लोग हों। ऐसे लोगों में यह हौसला कहाँ हो सकता है कि अल्लाह तआला की किताब का दायित्व संभालें हारुत और मारुत फ़रिश्ते थे और फ़रिश्तों के बारे में यह बात मालूम है कि वे अत्यन्त पाकिज़ा और अल्लाह के आज्ञाकारी होते हैं। अत: वह व्यर्थ के किस्से जो कुछ रिवायतों में उन से जोड़ दिये गए हैं हरगिज़ विश्वासनीय नहीं हैं क्यों कि यह बातें फ़रिश्तों के गुणों एवं स्वभाव से सही मेल नहीं खाती बल्कि बिल्कुल उल्टी हैं। अफ़सोस कि ऐसी बेसिर पैर की रिवायतों ने जिन में जुह्रा (शुक्र ग्रह) का बेहूदा किस्सा बयान हुआ है तफसीरों में जगह पा गया ।

❐ ❐ ❐ ❐ ❐ ❐

नमाज़ कायम करो और ज़कात दो। जो नेकी भी तुम अपने आकिबत (पारलौकि जीवन) के लिए करोगे उसे अल्लाह के यहाँ मौजूद पाओगे। जो कुछ तुम कर रहे हो वह सब अल्लाह की निगाह में है।(अल-क़ुर्आन)

104. ऐ ईमान लाने वालों ''राअिना'' न कहा करो बल्कि '' उन्जुरना'' कहा करो [122] और ध्यान से सुना करो। रहे काफिर तो उन के लिए दर्दनाक अज़ाब (दुखदायी यातना) है।

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ لَا تَقُولُوا۟ رَٰعِنَا وَقُولُوا۟ ٱنظُرْنَا
وَٱسْمَعُوا۟ ۗ وَلِلْكَٰفِرِينَ عَذَابٌ أَلِيمٌ ١٠٤

105. जिन लोगों ने कुफ़्र किया चाहे वह अहले-किताब हों या मुश्रिक, नहीं चाहते कि हमारे रब की तरफ से तुम पर कोई ख़ैर (भलाई) नाज़िल हो लेकिन अल्लाह जिस को चाहता है अपनी रहमत के लिए ख़ास (विशिष्ट) करता है अल्लाह बड़े फ़ज़्ल वाला (उदार-दानकर्ता) है।

مَّا يَوَدُّ ٱلَّذِينَ كَفَرُوا۟ مِنْ أَهْلِ ٱلْكِتَٰبِ وَلَا ٱلْمُشْرِكِينَ
أَن يُنَزَّلَ عَلَيْكُم مِّنْ خَيْرٍ مِّن رَّبِّكُمْ ۗ وَٱللَّهُ يَخْتَصُّ
بِرَحْمَتِهِۦ مَن يَشَآءُ ۚ وَٱللَّهُ ذُو ٱلْفَضْلِ ٱلْعَظِيمِ ١٠٥

106. हम जिस हुक्म को मन्सूख (निरस्त) कर देते हैं या भुला देते हैं तो उस से बेहतर या उस जैसा दूसरा हुक्म ले आते हैं [123] क्या तुम्हें नहीं मालूम कि अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर (सामर्थ्य प्राप्त) है।

مَا نَنسَخْ مِنْ ءَايَةٍ أَوْ نُنسِهَا نَأْتِ بِخَيْرٍ مِّنْهَآ أَوْ مِثْلِهَآ ۗ أَلَمْ
تَعْلَمْ أَنَّ ٱللَّهَ عَلَىٰ كُلِّ شَىْءٍ قَدِيرٌ ١٠٦

107. क्या तुम नहीं जानते की ज़मीन और आसमानों का शासन अल्लाह ही के लिए है और उस के सिवा न तुम्हारा कोई दोस्त है न मददगार?

أَلَمْ تَعْلَمْ أَنَّ ٱللَّهَ لَهُۥ مُلْكُ ٱلسَّمَٰوَٰتِ وَٱلْأَرْضِ ۗ
وَمَا لَكُم مِّن دُونِ ٱللَّهِ مِن وَلِىٍّ وَلَا نَصِيرٍ ١٠٧

108. क्या तुम चाहते हो कि अपने रसूल से उस तरह के प्रश्न करो जिस तरह के प्रश्न इस से पहले मूसा से किये गये थे।[124] और जो व्यक्ति ईमान को कुफ़्र से बदल दे वह सीधे मार्ग से भटक गया।

أَمْ تُرِيدُونَ أَن تَسْـَٔلُوا۟ رَسُولَكُمْ كَمَا سُئِلَ مُوسَىٰ
مِن قَبْلُ ۗ وَمَن يَتَبَدَّلِ ٱلْكُفْرَ بِٱلْإِيمَٰنِ فَقَدْ ضَلَّ
سَوَآءَ ٱلسَّبِيلِ ١٠٨

109. बहुत से अहले-किताब यह चाहते हैं कि वे तुम्हारे ईमान लाने के बाद फिर तुम्हें कुफ़्र की ओर पलटा ले जाऐं , मात्र अपने जी की ईर्ष्या के कारण जब कि हक़ उन पर अच्छी तरह खुल चुका है, तो क्षमा और दरगुज़र से काम लो यहाँ तक कि अल्लाह अपना फैसला लागू कर दे। यक़ीन जानो कि अल्लाह को हर चीज़ पर सामर्थ्य प्राप्त है।

وَدَّ كَثِيرٌ مِّنْ أَهْلِ ٱلْكِتَٰبِ لَوْ يَرُدُّونَكُم مِّنۢ بَعْدِ
إِيمَٰنِكُمْ كُفَّارًا حَسَدًا مِّنْ عِندِ أَنفُسِهِم مِّنۢ بَعْدِ
مَا تَبَيَّنَ لَهُمُ ٱلْحَقُّ ۖ فَٱعْفُوا۟ وَٱصْفَحُوا۟ حَتَّىٰ يَأْتِىَ
ٱللَّهُ بِأَمْرِهِۦٓ ۗ إِنَّ ٱللَّهَ عَلَىٰ كُلِّ شَىْءٍ قَدِيرٌ ١٠٩

110. नमाज़ कायम करो और ज़कात दो। जो नेकी भी तुम अपने आकिबत (पारलौकि जीवन) के लिए करोगे उसे अल्लाह के यहाँ मौजूद पाओगे। जो कुछ तुम कर रहे हो वह सब अल्लाह की निगाह में है।

وَأَقِيمُوا۟ ٱلصَّلَوٰةَ وَءَاتُوا۟ ٱلزَّكَوٰةَ ۚ وَمَا تُقَدِّمُوا۟
لِأَنفُسِكُم مِّنْ خَيْرٍ تَجِدُوهُ عِندَ ٱللَّهِ ۗ إِنَّ ٱللَّهَ بِمَا تَعْمَلُونَ
بَصِيرٌ ١١٠

122.यह यहूदियों की शरारतों का वर्णन है जो क़ुर्आन और हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के खिलाफ़ वे कर रहे थे। कुछ कपटी (मुनाफिक) यहूदी नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की मजलिस में कपट के उद्देश्य से ही सम्मिलित होते थे और जब किसी बात पर ध्यान आकर्षण करने की ज़रूरत होती तो वे नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को सम्बोधित कर के ''राअिना''कहते जिसका मतलब है ''हमारा लिहाज़ फ़रमाइये'' जिस तरह अंग्रेज़ी में बोलते है (I beg your pardon) लेकिन वह इस शब्द को ज़रा खींच कर कहते जिस से यह शब्द ''राईना''बन जाता जिसका अर्थ है ''हमारे चरवाहे'' उन की इस शरारत को देखते हुए मुसलमानों को यह हिदायत की गई कि वे यह शब्द न प्रयोग करें बल्कि ''उन्ज़ुरना'' कहें जिस के माने हैं '' हमारी तरफ ध्यान दिजिये इस में व्यंग्य की कोई झलक नहीं थी। इस से नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की मजलिस के भले और बुरे लोगों के बीच फ़र्क मालूम हो गया।

123. यह यहूदियों की उस आपत्ति का उत्तर है कि जब क़ुर्आन तौरात को अल्लाह की किताब स्वीकार करता है तो फिर उस के एहकाम (आदेश) को निरस्त करने का क्या मतलब? क्या ख़ुदा अपनी शरीअत (संविधान) को बदलता है? क़ुर्आन ने इस का जवाब यह दिया कि तौरात का जो क़ानून निरस्त किया जाता है या जिसे यहूदियों ने फ़रामोश कर दिया (भुला दिया) है उस की जगह उस से बेहतर क़ानून लाया जाता है। इस तरह अल्लाह अपनी शरीअत के मामले में तुम्हें उन्नति की ओर ले जा रहा है। दूसरी बात यह की अल्लाह तआला ने बनी इस्राईल को जो शरीअत प्रदान की थी उस के साथ अल्लाह को किसी चीज़ ने बाँध नहीं रखा है कि वह अपनी शरीअत की जगह दूसरी शरीअत नाज़िल न करे। वह संपूर्ण ब्रहमाण्ड का शासक है और जब चाहे एक क़ानून की जगह दूसरा क़ानून दे सकता है । तुम्हें इस पर आपत्ति व्यक्त करने का कोई अधिकार नहीं है क्यों कि तुम उस के महकूम बन्दे (पराधीन दास) हो।

स्पष्ट रहे कि यह बात शरीअत से सम्बन्धित है और सच्चाई यह है कि दुनिया में अलग अलग युगों में और अलग अलग देशों में जो पैग़म्बर अल्लाह तआला की तरफ से नियुक्त हुए उन की शरीअतों में कुछ फर्क रहा है किन्तु असल दीन सब का एक ही रहा है अर्थात इस्लाम इसी लिए तौहिद रिसालत और आखिरत के बारे में तमाम ही पवित्र नबियों की शिक्षाओं में कोई फर्क नहीं है। बुनियादी बातों और बुनियादी हक़ीक़तों के सिलसिले में एक मत से सब की शिक्षा वही थी जिसे क़ुर्आन प्रस्तुत कर रहा है। नासमझ लोग शरीअतों के फर्क को दीन का फर्क समझ कर यह समझने लगते हैं कि अल्लाह की तरफ से कई अलग अलग दीन नाज़िल हुए थे। इस लिए जिस दीन को भी आदमी स्वीकार कर ले अल्लाह उस से राज़ी होगा लेकिन हक़ीक़त यह है कि अल्लाह की तरफ से आदम से ले कर मरते दम तक बल्कि क़ियामत तक सिर्फ एक ही दीन ''इस्लाम'' भेजा जाता रहा है। अलबत्ता शरीअतें वातावरण और क्षमता को देखते हुए भिन्न भिन्न भेजी जाती रही हैं और अब हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को आखिरी नबी बना कर भेजा गया। आप को जो शरीअत दी गई वह आख़िरी है और क़ियामत तक के लिए है।

स्पष्ट रहे कि पिछली शरीअतों में और इस आखिरी शरीअत में कितने ही एहकाम एक जैसे (Common) हैं फिर भी पिछली शरीअतों के कुछ एहकाम जो एक ख़ास हालत में और कुछ ख़ास मसलहत के तहत दिये थे, निरस्त कर दिए गए हैं। जैसे यहूदियों को शनिवार मनाने का हुक्म दे दिया गया था किन्तु अब उस की जगह जुमे की नमाज़ का हुक्म दिया गया है जो अधिक महत्वशाली एवं प्रमुख है। इसी तरह पहले बैतुलमुक़द्दस को क़िबला क़रार दिया गया था लेकिन अब क़ाबा शरीफ़ को किबला क़रार दिया गया है जो सब से अधिक प्रमुख एवं महत्वशाली है। लिहाज़ा अब वह शरिअत जिस को तन मन धन से मानना और उस की आज्ञापालन में लगे रहना आवश्यक है वह वही शरीअत है जो हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को अल्लाह तआला ने प्रदान की है यह शरीअत संपूर्ण है और शरीअतों के क्रम का अन्तिम संस्करण (Last Edition) है और सफलता एवं मुक्ति इसी की पैरवी पर निर्भर है ।

124. यह प्रश्न आपत्ति व्यक्त करने वाले हुआ करते थे।

111. वे कहते हैं जन्नत में प्रवेश नहीं करेंगे मगर वह जो यहूदी हैं या ईसाई। यह मात्र उनकी कामनाऐं हैं।[125] कहो इस बात पर दलील पेश करो अगर तुम सच्चे हो।

وَقَالُوْا لَنْ يَّدْخُلَ الْجَنَّةَ اِلَّا مَنْ كَانَ هُوْدًا
اَوْ نَصٰرٰى ؕ تِلْكَ اَمَانِيُّهُمْ ؕ قُلْ هَاتُوْا بُرْهَانَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ
صٰدِقِيْنَ ﴿۱۱۱﴾

112. क्यों नहीं जो भी अपने आप को अल्लाह के हवाले कर दे और नेकी की राह अपनाए उस के लिए उस के रब के पास उस का ईनाम है और ऐसे लोगों के लिए न कोई ख़ौफ (भय) होगा और न वे दुखी होंगे।[126]

بَلٰى ۚ مَنْ اَسْلَمَ وَجْهَهٗ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ فَلَهٗۤ اَجْرُهٗ عِنْدَ
رَبِّهٖ ۪ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ﴿۱۱۲﴾

113. यहूदी कहते हैं ईसाई कुछ नहीं और ईसाई कहते हैं यहूदी कुछ नहीं हालाँकि दोनों ही किताब का पाठ करते हैं। ऐसी ही बात वे लोग भी कहते हैं जिन को (किताब) का इल्म नहीं है।[127]तो अल्लाह क़ियामत के दिन उन के मतभेद का फैसला फरमाएगा।[128]

وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ لَيْسَتِ النَّصٰرٰى عَلٰى شَیْءٍ ۪ وَّقَالَتِ النَّصٰرٰى
لَيْسَتِ الْيَهُوْدُ عَلٰى شَیْءٍ ۙ وَّهُمْ يَتْلُوْنَ الْكِتٰبَ ؕ كَذٰلِكَ قَالَ
الَّذِيْنَ لَا يَعْلَمُوْنَ مِثْلَ قَوْلِهِمْ ۚ فَاللّٰهُ يَحْكُمُ بَيْنَهُمْ يَوْمَ
الْقِيٰمَةِ فِيْمَا كَانُوْا فِيْهِ يَخْتَلِفُوْنَ ﴿۱۱۳﴾

114. उस से बढ़ कर ज़ालिम कौन होगा जो अल्लाह की मस्जिदों में उस के नाम का ज़िक्र (चर्चा) करने से रोके [129]। और उन्हें विरान करने पर उतारु हो? ऐसे लोगों को इन (मस्जिदों) में दाखिल होने का हक़ नहीं है। सिवाय इस के कि डरते हुए दाखिल हों। इन के लिए दुनिया में रुस्वाई है और आख़िरत में भी बड़ा अज़ाब (यातना) है [130]।

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ مَّنَعَ مَسٰجِدَ اللّٰهِ اَنْ يُّذْكَرَ فِيْهَا اسْمُهٗ
وَسَعٰى فِیْ خَرَابِهَا ؕ اُولٰٓئِكَ مَا كَانَ لَهُمْ اَنْ يَّدْخُلُوْهَاۤ
اِلَّا خَآئِفِيْنَ ؕ لَهُمْ فِی الدُّنْيَا خِزْیٌ وَّلَهُمْ فِی الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ
عَظِيْمٌ ﴿۱۱۴﴾

115. और अल्लाह ही के लिए है पूरब और पश्चिम [131]।जिस तरफ भी तुम रुख करोगे उसी तरफ अल्लाह का रुख है।[132] अल्लाह सर्वव्यापी और सब कुछ जानने वाला है।[133]

وَلِلّٰهِ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ ۚ فَاَيْنَمَا تُوَلُّوْا فَثَمَّ وَجْهُ اللّٰهِ ؕ اِنَّ
اللّٰهَ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ﴿۱۱۵﴾

116. वे कहते हैं कि अल्लाह ने बेटा बना लिया है।अल्लाह इन बातों से पाक है बल्कि आसमानों और ज़मीन की सारी चीज़ें उसी की मिल्क (संपत्ति) हैं। सब उसी के आदेशों के आज्ञाकारी हैं।[134]

وَقَالُوا اتَّخَذَ اللّٰهُ وَلَدًا ۙ سُبْحٰنَهٗ ؕ بَلْ لَّهٗ مَا فِی السَّمٰوٰتِ
وَالْاَرْضِ ؕ كُلٌّ لَّهٗ قٰنِتُوْنَ ﴿۱۱۶﴾

117. वही आसमानों और ज़मीन का आविष्कारक है और वह जब किसी बात का फैसला कर लेता है तो बस उस के लिए आदेश करता है कि हो जा, और वह हो जाती है।

بَدِيْعُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ وَاِذَا قَضٰۤى اَمْرًا فَاِنَّمَا يَقُوْلُ
لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ ﴿۱۱۷﴾

125.अर्थात् ये उन की मन गढ़न्त बातें हैं । अल्लाह ने कही नहीं फ़रमाया है कि जो यहूदी या ईसाई होगा उस के लिए जन्नत है और दूसरों के लिए नहीं है। धार्मिक गुटबन्दी की ये बातें लोगों ने अपनी ओर से गढ़ी हैं और उन को अल्लाह से जोड़ कर दीन की हक़ीक़त पर पर्दा डाल दिया है और इसे लोगों की नज़रों में संदिग्ध बना कर रख दिया है।

126. अर्थात् सफलता एवं मुक्ति पाने और जन्नत का अधिकारी बनने के लिए आवश्यक है कि आदमी अपने आप को पूरी तरह अल्लाह के हवाले कर दे। यही अर्थ मुस्लिम होने के हैं । दूसरे यह कि उस की शरीअत के आदेश का पालन खुलूस एवं शुद्ध हृदयता के साथ करें । यह एक उसूली बात है और सारे नबियों की शिक्षाऐं एकमत से यही थीं।

127. अरब के मुश्रिकीन (बहुदेववादी) मुराद हैं जिन के पास किताब नहीं थी और जो अनपढ़ थे।

128. एक धर्म के अनुयायी दुसरे धर्म के अनुयायियों को ग़लत ठहराते हैं। इस बात ने धार्मिक लोगों के बीच बड़ी कशमकश बरपा कर रखी है। क़ुर्आन कहता है जहाँ तक दलीलों से किसी बात को सही साबित करने का प्रश्न है क़ुर्आन ने अपनी बात बहुत ही अच्छे ढंग से साबित कर दी है अब अगर कोई कसर बाक़ी रह जाती है तो वह यह है कि अल्लाह तआला अदालत बरपा करे और इस झगड़े का दो टूक फैसला करे और इन्सान अपनी आँखों से देख ले कि यह हक़ है और जो इस के खिलाफ है वह बातिल है। क़ुर्आन कहता है कि इस दो टूक फैसले के लिए क़ियामत का दिन तय कर रखा है। उस रोज़ इन्सान को न केवल यह मालूम होगा कि हक़ क्या है और बातिल क्या है बल्कि हर एक का अन्जाम भी सामने आएगा।

129. इशारा है यहूद की उस हरकत की तरफ कि उन्हों ने आपस के अलगाव एवं मतभेद के कारण मस्जिदों को विनाशकारी का निशाना बनाया और उन को वीरान कर के रख दिया साथ ही साथ इशारा है मक्का के काफिरों के उस ज़ुल्म की ओर कि उन्हों ने मुसलमानों को मस्जिदे-हराम (पवित्र मस्जिद काबा) में इबादत करने से रोक दिया है और मस्जिदों की प्रतिष्ठा एवं मर्यादा भी स्पष्ट कर दी कि मस्जिदें अल्लाह का घर हैं अत: उन में दाखिल होने का हक़ उपद्रवियों एवं विनाशकारियों को नहीं है यह अलग बात है कि वे विनाश की नियत से नहीं बल्कि ख़ुदा से डरते हुए मस्जिदों में दाखिल हों।

130. जो अल्लाह की इबादतगाहों का आदर नहीं करते और उस को वीरान करने पर उतारु होते हैं या उपद्रव एवं विनाशकारी द्वारा उन को तबाह और बर्बाद करते हैं या उन का निरादर एवं अपमान करते हैं क़ुर्आन उन को दुनिया में अपमान और आखिरत में बड़ी यातना की चेतावनी देता है। इस से स्पष्ट है कि जो लोग अल्लाह की इबादतगाहों का आदर नहीं करते वे खुद आदर किये जाने के योग्य नहीं हैं और उन के लिए तिरस्कार, अपमान एवं रुसवाई निश्चित है। गोया इस्लाम दुश्मनी या मुस्लिम दुश्मनी के कारण जो व्यक्ति यह नीच एवं घृणित हरकत करता है वह वास्तव में अपनी ही रुस्वाई और तबाही का सामान करता है। काश कि विनाशकारियों को इस का एहसास होता ।

131. यहूदियों और ईसाईयों का क़िबला (उपासना दिशा) बैतुलमुक़द्दस था (जो फिलस्तीन में है) चूँ कि इस के पुरबी ओर हज़रत मरयम अलैहिस्सलाम ने एतिकाफ़ (निश्चित समय के लिए एकान्त में ठहराव) किया था इस लिए ईसाईयों ने पूरब की दिशा को क़िबले के तौर पर अपना लिया था और संभवत: उन की जिद में आकर यहूदियों ने पश्चिम की दिशा को क़िबला बना लिया आयत का इशारा पूरब और पश्चिम से इसी विवाद की ओर है ।

132.अर्थात अल्लाह किसी दिशा या स्थान में बंधा हुआ नहीं है बल्कि वह हर जगह और हर दिशा में है। नमाज़ के लिए किसी दिशा को निश्चित कर देने का यह अर्थ नहीं है कि अल्लाह बस उस दिशा में है बल्कि दिशा किसी दीनी मसलहत (धार्मिक नीति) से सुनिश्चित की जाती है लिहाज़ा अगर अल्लाह ने इस से पहले किसी खास रुख (दिशा) की तरफ नमाज़ पढ़ने का हुक्म दिया था और अब वह किसी दूसरे रुख़ की तरफ नमाज़ पढ़ने का हुक्म दे रहा है तो इस में बहस करने की कोई बात नहीं है, असल चीज़ दिशा नहीं बल्कि अल्लाह का हुक्म है।

133. अर्थात वह असीमित सामर्थ्य वाला और असीमित दृष्टिवाला है। उस को अपने ऊपर ख़याल कर के किसी छोटे क्षेत्र में सीमित समझना या तंग नज़र ख़्याल करना मुर्खता के सिवा कुछ भी नहीं ।

134.अर्थात ज़मीन और आसमानों की सारी चीज़े अल्लाह की संपत्ति एवं उस की ग़ुलाम है। कोई उस पद पर नहीं है कि वह उस (अल्लाह) की ग़ुलामी और दासता से आज़ाद हो बल्कि सब उस के आदेश के आज्ञाकारी हैं इस लिए उस के बेटे बेटियाँ कैसे हो सकती हैं। वह इस शिर्क से पाक और उच्चतम एवं सर्वोपरि है ।

118. जो लोग इल्म नहीं रखते वे कहते हैं कि अल्लाह हम से कलाम (बात) क्यों नहीं करता या कोई निशानी हमारे पास क्यों नहीं आती[135]? इन से पहले के लोग भी ऐसी ही बातें करते थे। ये सब एक ही मनोवृत्ति के हैं। यक़ीन करने वालों के लिए हम ने निशानियाँ अच्छी तरह स्पष्ट कर दी हैं।

وَقَالَ الَّذِيْنَ لَا يَعْلَمُوْنَ لَوْلَا يُكَلِّمُنَا اللّٰهُ اَوْ تَاْتِيْنَآ
اٰيَةٌ ؕ كَذٰلِكَ قَالَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ مِّثْلَ
قَوْلِهِمْ ؕ تَشَابَهَتْ قُلُوْبُهُمْ ؕ قَدْ بَيَّنَّا الْاٰيٰتِ لِقَوْمٍ
يُّوْقِنُوْنَ ﴿۱۱۸﴾

119. (ऐ पैग़म्बर !) हम ने तुम्हें हक़ के साथ खुशखबरी देने वाला बना कर भेजा है और तुम से दोज़ख़ियों (नरक में जाने वालों) के बारे में पूछ ताछ नहीं होगी ।[136]

اِنَّآ اَرْسَلْنٰكَ بِالْحَقِّ بَشِيْرًا وَّنَذِيْرًا ۙ وَّلَا تُسْئَلُ عَنْ
اَصْحٰبِ الْجَحِيْمِ ﴿۱۱۹﴾

120. तुम से न यहूदी राज़ी होने वाले हैं और न ईसाई जब तक कि तुम उन ही के तरीक़े पर न चलो। इन से कहो अल्लाह की हिदायत ही असल हिदायत है, और तुम ने उस इल्म (ज्ञान) के बाद जो तुम्हारे पास आ चुका है उन की इच्छाओं की पैरवी की तो तुम्हारे लिए अल्लाह की पकड़ से बचाने वाला न कोई दोस्त होगा और न मददगार ।

وَلَنْ تَرْضٰى عَنْكَ الْيَهُوْدُ وَلَا النَّصٰرٰى حَتّٰى تَتَّبِعَ مِلَّتَهُمْ ؕ
قُلْ اِنَّ هُدَى اللّٰهِ هُوَ الْهُدٰى ؕ وَلَئِنِ اتَّبَعْتَ اَهْوَآءَهُمْ بَعْدَ
الَّذِىْ جَآءَكَ مِنَ الْعِلْمِ ۙ مَا لَكَ مِنَ اللّٰهِ مِنْ وَّلِىٍّ وَّلَا نَصِيْرٍ ﴿۱۲۰﴾

121. जिन लोगों को हम ने किताब प्रदान की है वे इसे इस तरह पढ़ते हैं जैसा कि पढ़ने का हक़ है। ऐसे लोग क़ुर्आन पर ईमान लाते हैं [137] और जो इस का इन्कार करेंगे वही घाटे में रहने वाले हैं ।

اَلَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ يَتْلُوْنَهٗ حَقَّ تِلَاوَتِهٖ ؕ اُولٰٓئِكَ يُؤْمِنُوْنَ
بِهٖ ؕ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِهٖ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْخٰسِرُوْنَ ﴿۱۲۱﴾

122. ऐ बनी इस्राईल ! याद करो मेरी उस नेअमत को जो मैं ने तुम्हें प्रदान की और यह कि मैं ने तुम्हें संसार की सारी क़ौमो पर श्रेष्ठता प्रदान की।

يٰبَنِىْٓ اِسْرَآءِيْلَ اذْكُرُوْا نِعْمَتِىَ الَّتِىْٓ اَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَاَنِّىْ
فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعٰلَمِيْنَ ﴿۱۲۲﴾

123. और उस दिन से डरो जब कोई नफ़्स (जान) किसी नफ़्स के काम न आएगा, न किसी से फिदय:(प्राणदण्ड) क़ुबूल किया जाएगा और न किसी को कोई सिफ़ारिश ही फ़ायदा पहुँचा सकेगी और न उन की मदद की जाएगी ।

وَاتَّقُوْا يَوْمًا لَّا تَجْزِىْ نَفْسٌ عَنْ نَّفْسٍ شَيْـًٔا وَّلَا يُقْبَلُ مِنْهَا
عَدْلٌ وَّلَا تَنْفَعُهَا شَفَاعَةٌ وَّلَا هُمْ يُنْصَرُوْنَ ﴿۱۲۳﴾

124. और याद करो जब इब्राहीम को उस के रब ने कुछ बातों में आज़माया तो उस ने उन को पूरा कर दिखाया [138]।अल्लाह ने फ़रमाया मैं तुम को लोगों का इमाम (पेशवा) बनाने वाला हूँ ।इब्राहीम ने अर्ज़ किया और मेरी औलाद में से? फ़रमाया मेरा यह अहद[139](वचन) उन लोगों के वास्ते नहीं है जो ज़ालिम होंगे।[140]

وَاِذِ ابْتَلٰٓى اِبْرٰهٖمَ رَبُّهٗ بِكَلِمٰتٍ فَاَتَمَّهُنَّ ؕ قَالَ اِنِّىْ جَاعِلُكَ
لِلنَّاسِ اِمَامًا ؕ قَالَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِىْ ؕ قَالَ لَا يَنَالُ عَهْدِى
الظّٰلِمِيْنَ ﴿۱۲۴﴾

135. उन के कहने का मतलब यह था कि अल्लाह हम से स्वयं बात करे या कोई निशानी अर्थात मोजज़ा (चम्तकार) हमें दिखाए जिससे हमें हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नबी होने का यक़ीन हो जाए । इस का जवाब यह दिया गया है कि यह माँग कोई नई नहीं है इस से पहले की गुमराह उम्मतें भी इसी तरह की माँग करती रही हैं। मोजज़े से परे हट कर जहाँ तक रिसालत पर तर्क प्रस्तुत करने वाली निशानियाँ दिखाने का सम्बन्ध है ऐसी निशानियाँ मौजूद ही हैं और सब से बड़ी निशानी खुद क़ुर्आन मजीद है जो हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पैग़म्बर होने की स्पष्ट दलील है। किन्तु जो लोग न मानने का फैसला कर चुके हों वह चाहे कोई निशानी देख लें हरगिज़ मानने वाले नहीं हैं ।

136. मतलब यह है कि पैग़म्बर की ज़िम्मेदारी अल्लाह का पैग़ाम पहुँचा देना, मानने वालों को खुशखबरी सुनाना और इन्कार करने वालों को बुरे अन्जाम से आगाह करना है। इस के बाद जो लोग जहन्नम की राह अपनाऐंगे उन के करतूतों की कोई जिम्मेदारी पैग़म्बर पर नहीं होगी और न उसे इस बारे में जवाबदेही करना होगी।

137. अहले किताब (यहूदियों और ईसाईयों) के अच्छे लोग अभिप्रेत हैं जो शुद्धहृदयता से तौरात और इंजील का पाठ किया करते थे और क़ुर्आन को उन की भविष्यवाणियों के अनुकूल पाकर उस पर ईमान ले आए! आयत से यह बात भी स्पष्ट हुई कि अल्लाह की किताब को पढ़ने का हक़ यह है कि उस की पैरवी की जाए ।

138. अल्लाह तआला ने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को कुछ ऐसे आदेश दिये जिनमें उन के साहस एवं दृढ़ता का कड़ा इम्तिहान था और उन्होंने उस का ठीक ठीक पालन किया। मिसाल के तौर पर उन्होंने एक ऐसे वातावरण में जहाँ चारो ओर बुत पूजे जा रहे हों वहाँ बुत परस्ती के खिलाफ़ आवाज़ बुलन्द की और जब इस ''जुर्म'' में आग में डाले गए तो उस में नि:संकोच कूद पड़े । दीन की खातिर घर बार और वतन छोड़ दिया। अल्लाह की ओर से संकेत मिलने पर अपने प्रिय बेटे की क़ुर्बानी के लिए तैयार हो गए । यह और इस तरह के दूसरे महान कारनामों और क़ुर्बानियों ने उन को एक उच्चकोटि का व्यक्तित्व बना दिया ।

139. इस अहद (वचन) के अनुसार अल्लाह तआला ने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के दोनो बेटों हज़रत इस्हाक़ और हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम से दो बड़ी क़ौमें पैदा की बनी इस्राईल और बनी इस्माईल के मूल पुरुष हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम थे। इन को यहूदी, ईसाई और मुसलमान सब अपना दीनी पेशवा मानते हैं और आज भी दुनिया के अधिकतर लोग इन को अपना पेशवा स्वीकार करते हैं।

140. ज़ालिमों से मुराद वे लोग हैं जो शिर्क और कुफ्र में लिप्त हो कर अपनी जानों पर ज़ुल्म ढाऐं।

125. और याद करो जब हम ने इस घर को लोगों के लिए केन्द्र और शान्ति स्थल बना दिया।[141] और हुक्म दिया कि मक़ामे-इब्राहीम (इब्राहीम के खड़े होने का स्थान) को जा-ए-नमाज़ (उपासना स्थल) बना लो और इब्राहीम और इस्माईल को ताकीद की थी कि मेरे घर को तवाफ़ करने वालों,[142] एतिकाफ करने वालों[143] और रुकू और सजदा करने वालों[144] के लिए पाक रखो[145]।

وَإِذْ جَعَلْنَا الْبَيْتَ مَثَابَةً لِّلنَّاسِ وَأَمْنًا وَاتَّخِذُوا مِن مَّقَامِ إِبْرَٰهِمَ
مُصَلًّى ۖ وَعَهِدْنَا إِلَىٰ إِبْرَٰهِمَ وَإِسْمَٰعِيلَ أَن طَهِّرَا بَيْتِيَ لِلطَّائِفِينَ
وَالْعَٰكِفِينَ وَالرُّكَّعِ السُّجُودِ ﴿١٢٥﴾

126. और जब इब्राहीम ने दुआ की ऐ मेरे रब इस शहर को अमन (शान्ति)का शहर बना दे और इस के बाशिन्दों में से जो अल्लाह और आख़िरत पर ईमान ले आऐं उन को फलों का रिज़्क़ (आजीविका) दे।[146] फ़रमाया, जो कुफ्र करेंगे उन्हें भी ज़िन्दगी के सामान से फ़ायदा उठाने का मौक़ा दूँगा। फिर उन्हें दोज़ख के अज़ाब (यातना) की तरफ घसीटूँगा और वह बहुत बुरा ठिकाना है।

وَإِذْ قَالَ إِبْرَٰهِمُ رَبِّ اجْعَلْ هَٰذَا بَلَدًا آمِنًا وَارْزُقْ
أَهْلَهُ مِنَ الثَّمَرَٰتِ مَنْ آمَنَ مِنْهُم بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ ۖ قَالَ وَمَن
كَفَرَ فَأُمَتِّعُهُ قَلِيلًا ثُمَّ أَضْطَرُّهُ إِلَىٰ عَذَابِ النَّارِ ۖ وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ﴿١٢٦﴾

127. और जब इब्राहीम और इस्माईल बैतुल्लाह (अल्लाह के घर) की दीवारें उठा रहे थे और दुआ कर रहे थे कि ऐ हमारे रब ! हम से क़ुबूल फरमा, तु खूब सुनने वाला और खूब जानने वाला है।

وَإِذْ يَرْفَعُ إِبْرَٰهِمُ الْقَوَاعِدَ مِنَ الْبَيْتِ وَإِسْمَٰعِيلُ رَبَّنَا تَقَبَّلْ مِنَّا ۖ
إِنَّكَ أَنتَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ﴿١٢٧﴾

128. ऐ हमारे रब ! हम दोनो को अपना मुस्लिम (आज्ञाकारी) बना[147] और हमारी नस्ल से एक ऐसी उम्मत बरपा कर जो तेरी मुस्लिम (आज्ञाकारी) हो[148] और हमें अपनी इबादत के तरीक़े बता और हमारी तौबा क़ुबूल फ़रमा। बेशक तू ही तौबा क़ुबूल करने वाला और रहम फ़रमाने वाला है।

رَبَّنَا وَاجْعَلْنَا مُسْلِمَيْنِ لَكَ وَمِن ذُرِّيَّتِنَا أُمَّةً مُّسْلِمَةً
لَّكَ وَأَرِنَا مَنَاسِكَنَا وَتُبْ عَلَيْنَا ۖ إِنَّكَ أَنتَ التَّوَّابُ
الرَّحِيمُ ﴿١٢٨﴾

129. ऐ हमारे रब ! उन में उन ही में से एक रसूल नियुक्त कर जो उन्हें तेरी आयतें सुनाऐं और उन को किताब और हिकमत की तालीम दे और उन का तज़्किय: करे[149] निस्संदेह तू ग़ालिब (प्रभुत्वशाली) और हिक्मत वाला (तत्वदर्शी) है।[150]

رَبَّنَا وَابْعَثْ فِيهِمْ رَسُولًا مِّنْهُمْ يَتْلُوا عَلَيْهِمْ آيَٰتِكَ
وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتَٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَيُزَكِّيهِمْ ۚ إِنَّكَ أَنتَ
الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿١٢٩﴾

130. और इब्राहीम के तरीक़े से उस व्यक्ति के सिवा कौन मुँह मोड़ सकता है जिसने स्वयं अपने आप को मुर्खता में मुब्तिला कर लिया हो ?[151] हम ने उस को (इब्राहीम को) दुनिया में भी चुन लिया था और आखिरत में भी स्वालिहीन (अच्छे लोगों) की पंक्ति में होगा।

وَمَن يَرْغَبُ عَن مِّلَّةِ إِبْرَٰهِمَ إِلَّا مَن سَفِهَ نَفْسَهُ ۚ وَلَقَدِ
اصْطَفَيْنَٰهُ فِي الدُّنْيَا ۖ وَإِنَّهُ فِي الْآخِرَةِ لَمِنَ
الصَّٰلِحِينَ ﴿١٣٠﴾

141. घर से मुराद ख़ान-ए-काबा है जो मक्का में निर्मित किया गया ताकि वह तौहीद (एकेश्वरवाद) का केन्द्र बने। इस का निर्माण हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम और हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम ने लगभग चार हज़ार साल पहले अल्लाह के हुक्म से किया था और इस के लिए मक्का की पवित्र धरती का चुनाव भी अल्लाह तआला ने ही किया था।यही वह घर है जिस के लिए हज्ज शरीअत में दाखिल किया गया। और हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के ज़माने से हज्ज का यह सिलसिला जारी है और मुसलमान इसी घर की तरफ रुख कर के नमाज़ पढ़ते हैं।

142. तवाफ ख़ान-ए-काबा के चारों ओर चक्कर लगाने को कहते हैं । यह एक प्रकार की नमाज़ है और इस से अल्लाह की मुहब्बत का जज़्बा उभरता है और बन्दे पर बन्दगी की मनोदशा छाने लगती है। स्पष्ट रहे कि तवाफ (परिक्रमा) सिर्फ ख़ाना-ए-काबा का ही शरीअत के लिए अनुकूल है इस के अलावा किसी चीज़ की परिक्रमा करना चाहे वह मस्जिद ही क्यों न हो जायज़ नहीं है।

143. एतिकाफ़ मस्जिद में इबादत के उद्देश्य से निश्चित समय के लिए ठहरने को कहते हैं। इस का मस्नून तरीक़ा (हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से प्रमाणित) हदीस में बयान हुआ है।

144. रुकू और सज्दा नमाज़ के महत्वपूर्ण स्तंभ हैं ये स्तंभ इब्राहीमी शरीअत में शामिल थे।

145. पाक रखने से तात्पर्य मात्र बाह्य गन्दगी ही से पाक साफ़ रखना नहीं है बल्कि खास तौर से शिर्क और बुतपरस्ती की गन्दगी से पाक रखना है।

146. फलों से तात्पर्य नाना प्रकार के मेवे ही नही बल्कि इस में गल्ले इत्यादि भी शामिल हैं । यह दुआ हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने इस लिए की थी कि मक्का एक ऐसे इलाक़े में स्थित था जहाँ खेती बाड़ी नहीं होती थी और वहाँ उस समय पशुओं को चराने और शिकार के अलावा कोई और कमाने का साधन नहीं था।

हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की यह दुआ क़ुबूल हुई और अल्लाह तआला ने उस बियाबान में बसने वालों को फ़लों की आजिविका प्रदान की जिसमें विशेष रुप से खजूरें शामिल हैं। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम की दुआओं की बरकतों का अनुभव आज भी किया जा सकता है जब कि मक्का में तरह तरह के फलों की भरमार है।

147. मुस्लिम अर्थात अल्लाह का पूर्ण आज्ञाकारी हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम और हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम मुस्लिम थे इस के बावजूद इन्होंने दुआ की के हे प्रभु हमे अपना मुस्लिम बना । इस से इस बात पर रौशनी पड़ती है कि वह फ़रमाँबरदारी और सुपुर्दगी के बुलन्द से बुलन्द दर्जे को पहुँचना चाहते थे।इस महान ऐतिहासिक अवसर पर उन की इस दुआ से यह बात भी स्पष्ट हो गई कि उन का दीन इस्लाम था, न कि यहूदियत या ईसाईयत या कोई और मज़हब ।

148. उन की यह दुआ क़ुबूल हुई अत: बनी इस्माईल में से हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नियुक्ति हुई और आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अनुयायियों ने उम्मते मुस्लिमा की हैसियत इख़्तियार की ।

149. यहाँ रसूल के चार कर्तव्य बयान किए गए हैं। एक अल्लाह की आयतों को सुनाना अर्थात क़ुर्आन की आयतें जो अल्लाह की निशानियाँ और प्रमाण हैं,पढ़ कर सुनाना ताकि ख़ुदा का संदेश पूरी दलील के साथ लोगों तक पहुँच जाए। और वे उन पर विचार कर के अल्लाह के कलाम पर ईमान ले आऐं। दूसरे किताब की तालीम। किताब से मुराद क़ुर्आन मजीद है और इस अवसर पर ख़ास तौर से शरीअत के आदेश मुराद हैं। जो लोग ईमान लाए हैं उन्हें यह पैग़म्बर अल्लाह के क़ानूनों और आदेशों को सिखाता है ताकि वे अल्लाह की शरीअत के अनुसार जीवन व्यतीत करें। तीसरे हिकमत की तालीम। हिकमत अर्थात समझदारी की बातें। यह गोया क़ानूनों और आदेशों की स्पिरिट, उन की रुह, उन की मसलहतें और उद्देश्य हैं जिन की सीख और समय पैग़म्बर अपने अनुयायियों में पैदा करता है । चौथे तज़्क़िय: (आत्मा का शुद्धिकरण) जो वास्तव में इन तमाम चीज़ो की हद है अथवा लक्ष्य है। तज़्क़िय: के अर्थ पाक करने और विकसित करने के हैं। पैग़म्बर इन्सान के अक़ीदों अख़लाक़, आमाल (धारणाओ, आचरणों, कर्मो) और उस के अन्दर बाहर को शैतानी विचारों से पाक करता है और उस के अख़लाक़ और आमाल को विकसित करता और परवान चढ़ाता है।

150. अल्लाह ग़लबे वाला (प्रभुत्वशाली) और हिकमत वाला (तत्वदर्शी) है इस से यहाँ इस बात की तरफ इशारा है कि कायनात की व्यवस्था अल्लाह तआला पूरे प्रभुत्व और राजसत्ता के साथ चला रहा है। और उस के ग़ालिब होने का मतलब यह नहीं है कि वह अन्धा धुन्ध तरीक़े पर जो चाहे कर डालता है बल्कि वह हिकमतवाला है इस लिए उस का कोई काम हिकमत, मसलहत, से ख़ाली नहीं होता और न ही बेमक़सद होता है।

151.अर्थात जिस हस्ती को अल्लाह तआला ने पेशवाई के लिए चुन लिया उस के तरीके से मुँह मोड़ना मूर्खता नहीं तो और क्या है।

اِذْ قَالَ لَهٗ رَبُّهٗۤ اَسْلِمْ ۙ قَالَ اَسْلَمْتُ لِرَبِّ الْعٰلَمِیْنَ ﴿١٣١﴾

131. जब उस के रब ने उस से कहा मुस्लिम हो जा तो उस ने कहा मैं सारे जगत के रब का मुस्लिम (आज्ञाकारी) हो गया।[152]

وَوَصّٰى بِهَاۤ اِبْرٰهٖمُ بَنِيْهِ وَيَعْقُوْبُ ؕ يٰبَنِىَّ اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰى
لَكُمُ الدِّيْنَ فَلَا تَمُوْتُنَّ اِلَّا وَاَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ ﴿١٣٢﴾

132. और इब्राहीम ने इसी तरीक़े पर चलने की वसीयत अपने बेटों को की और यही वसीयत याक़ूब अपने बेटों को कर गया।ऐ मेरे बेटों ! अल्लाह ने तुम्हारे लिए यही दीन (इस्लाम)[153] पसन्द किया है लिहाज़ा मरते दम तक तुम मुस्लिम ही रहना।[154]

اَمْ كُنْتُمْ شُهَدَآءَ اِذْ حَضَرَ يَعْقُوْبَ الْمَوْتُ ۙ اِذْ قَالَ
لِبَنِيْهِ مَا تَعْبُدُوْنَ مِنْۢ بَعْدِىْ ؕ قَالُوْا نَعْبُدُ اِلٰهَكَ وَاِلٰهَ
اٰبَآئِكَ اِبْرٰهٖمَ وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ اِلٰهًا وَّاحِدًا ۖۚ
وَّنَحْنُ لَهٗ مُسْلِمُوْنَ ﴿١٣٣﴾

133. क्या तुम उस समय मौजूद थे जब याक़ूब की मौत की घड़ी आई?उस ने अपने बेटों से पूछा मेरे बाद तुम किस की इबादत (उपासना) करोगे? उन्होने जवाब दिया, हम आप के माबूद (उपास्य) और आप के पुर्वजों इब्राहीम, इस्माईल और इस्हाक़ के माबूद की इबादत करेंगे जो एक ही माबूद है और हम उसी के मुस्लिम (आज्ञाकारी) हैं।

تِلْكَ اُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ ۚ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَّا كَسَبْتُمْ ۚ
وَلَا تُسْـَٔلُوْنَ عَمَّا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ﴿١٣٤﴾

134. यह एक गिरोह था जो गुजर गया। जो कुछ उस (गिरोह) ने कमाया वह उस के लिए है और जो कुछ तुम ने कमाया है वह तुम्हारे लिए है। वह जो कुछ करते रहें हैं उस के बारे में तुम से नहीं पूछा जाएगा ।[155]

وَقَالُوْا كُوْنُوْا هُوْدًا اَوْ نَصٰرٰى تَهْتَدُوْا ؕ قُلْ بَلْ مِلَّةَ اِبْرٰهٖمَ
حَنِيْفًا ؕ وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِيْنَ ﴿١٣٥﴾

135. वे कहते हैं, यहूदी या ईसाई हो जाओ तो हिदायत पाओगे। कहो, बल्कि इब्राहीम का तरीक़ा (हम ने अपनाया) जो यकसोई (एकाग्रता) के साथ अल्लाह का हो कर रहा था और मुश्रिकों (बहुदेववादियों) में से न था।

قُوْلُوْۤا اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَاۤ اُنْزِلَ اِلَيْنَا وَمَاۤ اُنْزِلَ اِلٰٓى اِبْرٰهٖمَ وَاِسْمٰعِيْلَ
وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ وَالْاَسْبَاطِ وَمَاۤ اُوْتِىَ مُوْسٰى وَعِيْسٰى وَمَاۤ
اُوْتِىَ النَّبِيُّوْنَ مِنْ رَّبِّهِمْ ۚ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ ۖ وَنَحْنُ
لَهٗ مُسْلِمُوْنَ ﴿١٣٦﴾

136. कहो हम ईमान लाए अल्लाह पर और उस हिदायत पर जो हमारी तरफ नाज़िल की गई है और जो इब्राहीम, इस्माईल, इस्हाक़,याक़ूब और अस्बात (याक़ूब की नस्ल) की तरफ नाज़िल की गई थी और जो मूसा और ईसा और तमाम नबियों को उन के रब की तरफ से मिली थी। हम इन में से किसी के दरम्यान भेद भाव नहीं करते [156] और हम अल्लाह ही के मुस्लिम (आज्ञाकारी) हैं।

152. इस्लाम का अर्थ है पूरी तरह खुद को अल्लाह के सुपुर्द कर देना। हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम का दीन इस्लाम था अर्थात् वह एक अल्लाह को माबूद (उपास्य) मानते थे और उन्हों ने संपूर्ण रुप से अपने आप को उस के हवाले कर दिया था । और उस की हिदायत की राह अपनायी थी। वह यहूदियत या ईसाईयत या किसी और मजहब से कोई सम्बन्ध नहीं रखते थे । यहूदियत या ईसाईयत का तो उन के ज़माने में कोई अस्तित्व ही न था। यह धर्म तो उन के बाद में पैदा हुए और यह वास्तव में इस्लाम की बिगड़ी हुई श्क्लें हैं जो हज़रत मूसा और ईसा अलैहिस्सलाम के बाद उन के अनुयायियों ने असल दीन (इस्लाम) में परिवर्तन कर के पैदा की।

153. अद्दीन----- से तात्पर्य वास्तविक दीन है अर्थात इस्लाम जो शुरू से अल्लाह का दीन रहा है। इसी पर जमे रहने और इसी पर जीने और मरने की वसीयत हज़रत इब्राहीम और हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम ने अपनी औलाद को की थी। किन्तु बाद में बनी इस्राईल ने दीन-इस्लाम में परिवर्तन कर दिया और उस के प्रारुप को बिगाड़ कर यहूदियत और ईसाईयत के नाम से धर्म का आविष्कार किया।

154. मुस्लिम वह है जो अल्लाह को अकेला वास्तविक माबूद, मालिक आक़ा और हाकिम मान कर अपने आप को पूरी तरह से उस के हवाले कर दे और उस की नाज़िल की हुई हिदायत के अनुसार जीवन व्यतीत करे । मरने तक मुस्लिम रहने का मतलब यह है कि जन्म से ले कर मौत तक इसी दीन पर जमे रहना, इस राह में जो आज़माइश भी आए उस का पूरी दृढ़ता और साहस से मुकाबला करना और किसी मरहले में भी इस्लाम का दामन हाथ से न जाने देना ।

155. अर्थात तुम्हारा अपने इन बुज़ुर्गो से श्रद्धा प्रकट करना और उन के कारनामों पर गर्व करना तुम्हारी अपनी कामयाबी एवं मुक्ति के लिए काफी नहीं हैं उन की नेकी उन के काम आएगी और तुम्हारी बदी का परिणाम तुम्हें भुगतना होगा। उन के कारनामों के बारे में तुम से पूछ ताछ नहीं होगी बल्कि तुम्हें अपने ही कर्मो के बारे में जवाबदेही करना होगी । लिहाज़ा कोई व्यक्ति इस भुलावे अथवा इस भ्रम में न रहे कि वह अपने बुज़ुर्गो से आस्था एवं श्रद्धा व्यक्त कर के सफल हो जाएगा अथवा मुक्ति पा जायेगा।

156. क़ुर्आन के नज़दीक किसी नबी को मानना और किसी को न मानना खुला कुफ्र है। ईमान उसी का पक्का है जो तमाम नबियों को माने और किसी का भी इन्कार न करे।

فَإِنْ آمَنُوا بِمِثْلِ مَا آمَنْتُمْ بِهِ فَقَدِ اهْتَدَوْا ۚ وَإِنْ تَوَلَّوْا
فَإِنَّمَا هُمْ فِي شِقَاقٍ ۚ فَسَيَكْفِيكَهُمُ اللَّهُ ۚ وَهُوَ السَّمِيعُ
الْعَلِيمُ ﴿١٣٧﴾

137. फिर अगर वे उस तरह ईमान लाऐं जिस तरह तुम लाए हो तो वे हिदायत पर होंगे और अगर वे मुँह फेरें तो (समझ लो कि) वे मुख़ालफत में पड़ गये हैं। अतः उन के मुक़ाबले में अल्लाह तुम्हारे लिए काफी होगा वह सब कुछ सुनने वाला और जानने वाला है।

صِبْغَةَ اللَّهِ ۚ وَمَنْ أَحْسَنُ مِنَ اللَّهِ صِبْغَةً ۖ وَنَحْنُ لَهُ
عَابِدُونَ ﴿١٣٨﴾

138. कहो हम ने अल्लाह का रंग अपनाया है और अल्लाह के रंग से बेहतर और किस का रंग होगा ?[157] और हम तो उसी की बन्दगी करने वाले हैं।

قُلْ أَتُحَاجُّونَنَا فِي اللَّهِ وَهُوَ رَبُّنَا وَرَبُّكُمْ وَلَنَا أَعْمَالُنَا
وَلَكُمْ أَعْمَالُكُمْ وَنَحْنُ لَهُ مُخْلِصُونَ ﴿١٣٩﴾

139. कहो क्या तुम अल्लाह के बारे में हम से हुज्जत करते हो हालाँकि वह हमारा रब भी है और तुम्हारा रब भी।हमारे लिए हमारे आमाल (कर्म) हैं तुम्हारे लिए तुम्हारे आमाल। और हम खालिस उसी के लिए हैं।

أَمْ تَقُولُونَ إِنَّ إِبْرَاهِيمَ وَإِسْمَاعِيلَ وَإِسْحَاقَ وَيَعْقُوبَ
وَالْأَسْبَاطَ كَانُوا هُودًا أَوْ نَصَارَىٰ ۗ قُلْ أَأَنْتُمْ أَعْلَمُ أَمِ
اللَّهُ ۗ وَمَنْ أَظْلَمُ مِمَّنْ كَتَمَ شَهَادَةً عِنْدَهُ مِنَ اللَّهِ ۗ
وَمَا اللَّهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿١٤٠﴾

140. क्या फिर तुम्हारा कहना यह है कि इब्राहीम, इस्माईल, इस्हाक़, याक़ूब की औलाद सब यहूदी या ईसाई थे ?[158] कहो तुम अधिक जानते हो या अल्लाह? और उस व्यक्ति से बढ़ कर ज़ालिम कौन होगा जिस के पास अल्लाह की तरफ से कोई शहादत हो और वह उस को छिपाए [159]। तुम जो कुछ कर रहे हो उस से अल्लाह गाफ़िल नहीं है।

تِلْكَ أُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ ۖ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَا كَسَبْتُمْ ۖ
وَلَا تُسْأَلُونَ عَمَّا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٤١﴾

141. यह एक गिरोह था जो गुज़र गया।[160]उन लोगों ने जो कुछ कमाया वह उन के लिए है और तुम ने जो कुछ कमाया [161] वह तुम्हारे लिए है उन के आमाल के बारे में तुम से नहीं पूछा जाएगा।

سَيَقُولُ السُّفَهَاءُ مِنَ النَّاسِ مَا وَلَّاهُمْ عَنْ قِبْلَتِهِمُ
الَّتِي كَانُوا عَلَيْهَا ۚ قُلْ لِلَّهِ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ ۚ يَهْدِي
مَنْ يَشَاءُ إِلَىٰ صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ ﴿١٤٢﴾

142. नादान लोग ज़रुर कहेंगे कि इन्हें (मुसलमानों को) इस किबले से जिस पर ये पहले थे [162] किस चीज़ ने फेर दिया ।[163] कहो पूरब और पश्चिम अल्लाह ही के लिए हैं। वह जिसे चाहता है सिधा रास्ता दिखा देता है।[164]

157. इस में संकेत है यहूदियों और ईसाईयों के बैप्टिज़्म (Baptism) की ओर कि यह मात्र रस्मी चीज़ है जिस की कोई हक़ीक़त नहीं। हक़ीक़ी रंग तो खुदा परस्ती का रंग है जो खुदा के दीन को क़ुबूल करने और उस के तमाम पैग़म्बरों पर ईमान लाने की सूरत में इन्सान पर चढ़ जाता है।

158.यहूदियत हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के काफ़ी समय बाद अस्तित्व में आई। और ईसाईत भी हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के बाद वजूद में आई।अब सवाल यह पैदा होता है कि इन गुट बंदियों से पहले हिदायत का प्रारुप क्या था। क़ुर्आन का जवाब यह है कि वह हिदायत की राह दीन-इस्लाम है जो हर पैग़म्बर का दीन था और जिस से हर ज़माने के लोग हिदायत पाते रहे हैं और क़ुर्आन इसी की दअवत पेश करता है।

159.अर्थात तौरात में इस बात की शहादत मौजूद है कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम और उन की औलाद का दीन क्या था। वे यहूदी और ईसाई थे या इस्लाम के सच्चे अनुयायी। फिर जो लोग अल्लाह की किताब की इन खुली और स्पष्ट शहादतों को छिपाते हैं उन से बढ़ कर ज़ालिम और कौन होगा? इस से स्पष्ट हुआ की अल्लाह की किताब की शहादत को छिपाना बड़ी ज़ालिमाना हरकत है क्यों कि हक़ को छिपाने के नतीजे में लोग बातिल को हक़ समझ कर गुमराही में पड़ते हैं। इस लिए किताब पाने वालों की यह बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी है कि वे हक़ को खोल कर लोगों के सामने पेश करें। आज पूरी मुस्लिम उम्मत पर भी यह बड़ी ज़िम्मेदारी है कि वह क़ुर्आन की शहादत को बयान करे और उसे छिपाए नहीं ताकि लोगों पर अल्लाह की हुज्जत कायम हो और वह अपनी ज़िम्मेदारी से बरी हो जाए ।

160. यह बहस का खुलासा है और चूँकि इस को अच्छी तरह ज़ेहनों में बिठाना अभिप्रेत है इस लिए इसे आयत नं.134 के बाद यहाँ दोहराया गया है।

161. हर कर्म (अमल) एक अच्छा व बुरा नतीजा रखता है जो कियामत के दिन सामने आएगा । यह नतीज़ा हर व्यक्ति की कमाई है इस लिए यहाँ आमाल (कर्मो) को कसब अर्थात कमाई से व्यक्त किया गया है।

162. क़िबला उस घर या स्थान को कहते हैं जिस की ओर मुँह कर के नमाज़ पढ़ी जाती है। इस्लाम ने कई मसलहतों के अधार पर नमाज़ के लिए क़िबला ज़रुरी ठहराया है। मिसाल के तौर पर यह कि अल्लाह की इबादत अल्लाह के बताए हुए तरीक़े पर की जाये। नमाज़ में अनुशासन पैदा हो और एक क़ायदे का आभास हो। सामूहिक रुप से नमाज़ अदा की जाए। ईमान वालों की पंक्ति में एकता पैदा हो और क़िबला उन के ध्यान का केन्द्र और लक्ष्य (GOAL) तय पाए।

163. नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हिज़रत के बाद मदीना में सोलह या सत्रह महीने तक बैतुलमुक़द्दस (JERUSALEM) की तरफ रुख कर के नमाज़ पढ़ते रहे। इस के बाद मस्जिदे हराम (काबा) की तरफ रुख कर के नमाज़ पढ़ने का हुक्म हुआ। क़िबला परिर्वतन के इस आदेश पर यहूदियों के संभावित एतिरीज़ का जवाब यहाँ दिया जा रहा है। यहूदियों के आपत्ति प्रकट करने का कारण यह था कि उन का क़िबला बैतुलमुक़द्दस था।

164.यह अहले किताब के एतिराज का जवाब है कि अल्लाह को पूरब या पश्चिम के साथ कोई विशेष लगाव नहीं क्यों कि सारी दिशाऐं अल्लाह ही की हैं। अलबत्ता जिस घर (मस्जिद) को वे विशिष्ट ठहरा कर क़िबला क़रार दे उसी को क़िबला बनाना सही है और उस के आदेश का पालन कर के ही तुम हिदायत पा सकते हो।

इस से स्पष्ट हुआ कि जो लोग धार्मिक विद्वेष के कारण अपना रुख मक्का मुकर्रमा की तरफ़ करने और काबा को अपना क़िबला क़रार देने के लिए आमादा न हों उन पर अल्लाह की हिदायत के दरवाज़े खुल नहीं सकेंगे। क्यों कि यह '' मज़हब परस्ती'' है न कि हक़ परस्ती।

जहाँ तक सच्चे ईमान वालों का मामला है, उन की नज़र में असल अहमियत दिशा की नहीं बल्कि अल्लाह के हुक्म की होती है। उस ने अगर पहले बैतुलमुक़द्दस को क़िबला तय कर दिया था और अब काबा को क़िबला बनाने का हुक्म दिया है तो इस नये हुक्म को क़ुबूल करने में कोई हिचकिचाहट नहीं होती। इसी लिए नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथियों (असहाब) को क़िबला परिवर्तन का आदेश स्वीकार करने में ज़रा भी देर न हुई और न कोई तरह की हिचकिचाहट हुई। और जब ईमान वालों की एक जमाअत (समूह) को नमाज़ की हालत में इस की सूचना मिली तो उन्होंने ठीक उसी नमाज़ पढ़ने की हालत में अपना रुख काबा की तरफ फेर लिया। मदीना की जिस मस्जिद में यह घटना घटी उसे मस्जिदे क़िब्लतैन (दो क़िबलों वाली मस्जिद) कहते हैं जो आज भी इसी नाम से मौजूद है।

ध्यान रहे कि यहूदियों और ईसाईयों दोनों का क़िबला बैतुलमुक़द्दस था । बाद में ईसाईयों ने शायद इस बिना पर कि हज़रत मरयम बैतुलमुक़द्दस के पूरब की ओर एतिकाफ़ में बैठी थीं, पूरब को क़िबला बना लिया और शायद उस की ज़िद में आकर यहूदियों ने पश्चिम को क़िबला बना लिया । किन्तु इस्लाम ने पूरब या पश्चिम को नहीं बल्कि काबा को क़िबला तय किया चाहे वह किसी भी दिशा में पड़े।

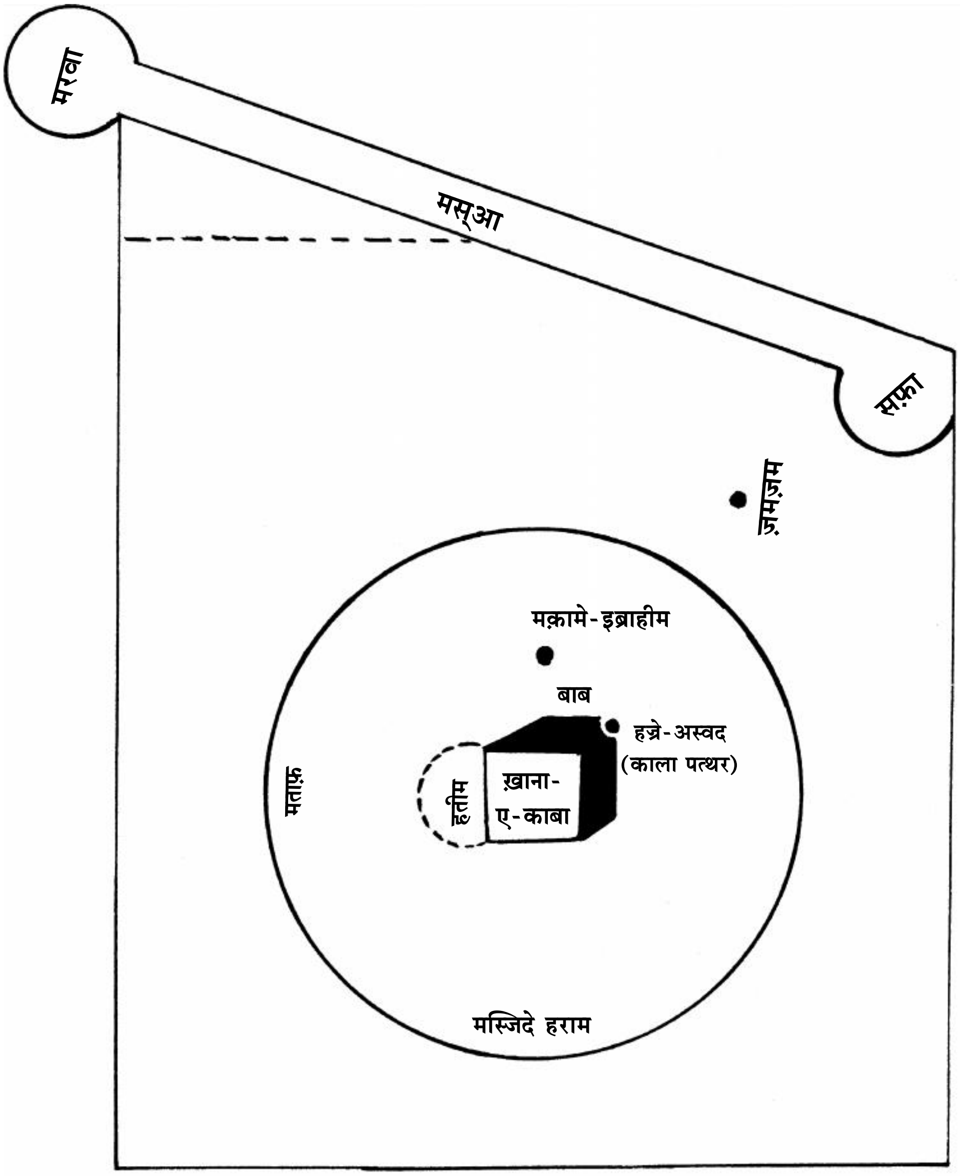

मस्जिदे हराम का नक़्शा

और इसी तरह हम ने तुम्हें ''उम्मते वस्त''(उत्तम समुदाय) बनाया ताकि तुम लोगों पर गवाह हो और रसूल तुम पर गवाह हो। तुम जिस क़िबले पर थे उस को तो हम ने सिर्फ़ यह देखने के लिए मुक़र्रर किया था कि कौन रसूल की पैरवी (अनुसरण) करता है और कौन उल्टे पाँव फिर जाता है। निस्संदेह यह बात भारी थी मगर उन लोगों पर नहीं जिन्हें अल्लाह ने हिदायत प्रदान की। अल्लाह तुम्हारे ईमान को अकारथ करने वाला नहीं। अल्लाह तो लोगों के हक़ में अत्यन्त स्नेह करने वाला और दया करने वाला है । (अल-क़ुर्आन)

143. और[165] इसी तरह हम ने तुम्हें ''उम्मते वस्त'' [166] (उत्तम समुदाय) बनाया ताकि तुम लोगों पर गवाह हो और रसूल तुम पर गवाह हो [167]।तुम जिस क़िबले पर थे उस को तो हम ने सिर्फ यह देखने के लिए मुक़र्रर किया था कि कौन रसूल की पैरवी (अनुसरण) करता है और कौन उल्टे पाँव फिर जाता है [168] निस्संदेह यह बात भारी थी मगर उन लोगों पर नहीं जिन्हें अल्लाह ने हिदायत प्रदान की [169] अल्लाह तुम्हारे ईमान को अकारथ करने वाला नहीं [170]अल्लाह तो लोगों के हक़ में अत्यन्त स्नेह करने वाला और दया करने वाला है।[171]

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنٰكُمْ اُمَّةً وَّسَطًا لِّتَكُوْنُوْا شُهَدَآءَ عَلَى النَّاسِ وَيَكُوْنَ
الرَّسُوْلُ عَلَيْكُمْ شَهِيْدًا ؕ وَمَا جَعَلْنَا الْقِبْلَةَ الَّتِىْ كُنْتَ عَلَيْهَآ
اِلَّا لِنَعْلَمَ مَنْ يَّتَّبِعُ الرَّسُوْلَ مِمَّنْ يَّنْقَلِبُ عَلٰى عَقِبَيْهِ ؕ
وَاِنْ كَانَتْ لَكَبِيْرَةً اِلَّا عَلَى الَّذِيْنَ هَدَى اللّٰهُ ؕ وَمَا كَانَ اللّٰهُ
لِيُضِيْعَ اِيْمَانَكُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ بِالنَّاسِ لَرَءُوْفٌ رَّحِيْمٌ ﴿١٤٣﴾

144. (हे पैग़म्बर !) हम तुम्हारे मुँह का आसमान की तरफ बार बार उठना देखते रहें हैं [172]। लिहाज़ा हम तुम्हें उसी क़िबले की तरफ फेर देते हैं जिस को तुम पसन्द करते हो।अब तुम अपना रुख मस्जिदे-हराम की तरफ फेर लो [173] और (मुसलमानों !) जहाँ कहीं भी तुम हो अपना रुख इसी तरफ़ किया करो।जिन लोगों को किताब दी गई थी वह अच्छी तरह जानते हैं कि यह बरहक़ (सत्य पर आधारित) है और उन के रब ही की तरफ से है।[174] यह जो कुछ कर रहे हैं अल्लाह उस से ग़ाफ़िल नहीं हैं।

قَدْ نَرٰى تَقَلُّبَ وَجْهِكَ فِى السَّمَآءِ ۚ فَلَنُوَلِّيَنَّكَ قِبْلَةً تَرْضٰٮهَا ۖ فَوَلِّ
وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ؕ وَحَيْثُ مَا كُنْتُمْ فَوَلُّوْا وُجُوْهَكُمْ
شَطْرَهٗ ؕ وَاِنَّ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ لَيَعْلَمُوْنَ اَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَّبِّهِمْ ؕ
وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا يَعْمَلُوْنَ ﴿١٤٤﴾

145. और अगर तुम अहले-किताब के सामने हर क़िसम की निशानियाँ पेश कर दो तब भी वे तुम्हारे क़िबले का अनुसरण नहीं करेंगे और न तुम उन के क़िबले का अनुसरण करने वाले हो, और न इन का एक समूह दूसरे समूह के क़िबले का अनुसरण करने वाला है [175]।और अगर तुम ने उस इल्म (ज्ञान) के बाद जो तुम्हारे पास आ चुका है [176] इन की इच्छाओं का अनुसरण किया तो निश्चय ही तुम ज़ालिमों में से हो जाओगे।

وَلَئِنْ اَتَيْتَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ بِكُلِّ اٰيَةٍ مَّا تَبِعُوْا قِبْلَتَكَ ۚ
وَمَآ اَنْتَ بِتَابِعٍ قِبْلَتَهُمْ ۚ وَمَا بَعْضُهُمْ بِتَابِعٍ قِبْلَةَ بَعْضٍ ؕ
وَلَئِنِ اتَّبَعْتَ اَهْوَآءَهُمْ مِّنْۢ بَعْدِ مَا جَآءَكَ مِنَ الْعِلْمِ ۙ اِنَّكَ
اِذًا لَّمِنَ الظّٰلِمِيْنَ ﴿١٤٥﴾

146. जिन को हम ने किताब दी है वे इसको इस तरह पहचानते हैं जिस तरह अपने बेटों को पहचानते हैं [177]। अलबत्ता इन में से एक गिरोह जानते बूझते हक़ (सत्य) को छिपा रहा है।

اَلَّذِيْنَ اٰتَيْنٰهُمُ الْكِتٰبَ يَعْرِفُوْنَهٗ كَمَا يَعْرِفُوْنَ
اَبْنَآءَهُمْ ؕ وَاِنَّ فَرِيْقًا مِّنْهُمْ لَيَكْتُمُوْنَ الْحَقَّ وَهُمْ يَعْلَمُوْنَ ﴿١٤٦﴾

147. यह हक़ (सत्य)है तुम्हारे रब की तरफ से अत:तुम हरगिज़ शक करने वालों में से न हो जाओ।[178]

اَلْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ فَلَا تَكُوْنَنَّ مِنَ الْمُمْتَرِيْنَ ﴿١٤٧﴾ ع

165. अर्थात जिस तरह हम ने क़िबला के मामले में तुम्हारी रहनुमाई की और तुम्हें इब्राहीमी क़िबला प्रदान किया उसी तरह इब्राहीमी दुआ को क़ुबूल करते हुऐ तुम्हें एतिदाल वाली उम्मत (Justly Balanced Nation या सन्तुलित समुदाय) बना कर उठाया ताकि तुम दीन इस्लाम की गवाही देने वाले बनो।

166."उम्मते वस्त"(उत्तम समुदाय) से अभिप्राय ऐसा समुदाय है जो बीच की राह पर क़ायम हो और अपने गुणों के कारण बेहतरीन गिरोह (उत्तम समुदाय) कहलाने का अधिकारी हो। मुस्लिम उम्मत को उम्मते-वस्त का लक़ब (उपनाम) इस लिए दिया गया है कि वह दीन की असली राह पर क़ायम है और ऐसी जीवन व्यवस्था रखती है जो न्याय पर आधारित और अत्यन्त संतुलित है और इस विशेष गुण के आधार पर तमाम उम्मतों में उत्तम उम्मत कहलाने की अधिकारी है। यह वास्तव में बनी इस्राईल को पेशवाई पद से हटाने और मुस्लिम उम्मत को इसी पेशवाई के पद पर आसीन किए जाने का एलान है जिस का क़िबला, इब्राहीमी क़िबला है और जो इस्लाम के राजमार्ग पर स्थापित है।

167. यह उम्मते-वस्त (उत्तम समुदाय) के उस कर्तव्यपूर्ण दायित्व का बयान है जिसे पूरा करने के लिए ही इन्हें उठाया गया है। इस से पहले अल्लाह तआला ने बनी इस्राईल को इस रहनुमाई के पद पर आसीन किया था किन्तु उन्हों ने शरीअत में परिवर्तन कर के और दीन से बच निकलने का मार्ग अपना कर के न्याय के संतुलित मार्ग को गुम कर दिया था । इस लिए मानवता जगत की यह सब से बड़ी ज़रुरत थी कि अल्लाह तआला एक ऐसी उम्मत (समुदाय) उठाए जो न्याय के संतुलित मार्ग पर जमी रहे शरीअत की दायित्व निभाये और दुनिया वालों के सामने सत्य धर्म (दीन-हक़) की गवाही दे।

हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जो आख़िरी नबी हैं मुस्लिम समुदाय तक अल्लाह का दीन अपने संपूर्ण प्रारुप में पहुँचा दिया। अब मुस्लिम समुदाय की यह ज़िम्मेदारी है कि वह हर दौर, हर मुल्क, और हर भाषा में लोगों के सामने अल्लाह के दीन की शहादत पेश करे। क़ियामत के दिन जब अल्लाह तआला की अदालत में लोग उपस्थित होंगे तो रसूल गवाही देगा कि अल्लाह के दीन को उस ने पूर्ण रुप से बिना कुछ काट छाँट के मुस्लिम समुदाय तक पहुँचा दिया और मुस्लिम समुदाय को यह गवाही देना होगी कि उस ने दीन को अल्लाह के बन्दों तक ठीक ठीक पहुँचाया था या नहीं।

168.अर्थात बैतुलमुक़द्दस की तरफ रुख कर के नमाज़ पढ़ने की जो इजाज़त तुम्हें दी गयी थी वह अस्थाई अथवा क्षणिक थी और इस से इम्तिहान लेना मकसद था कि कौन लोग रसूल के सच्चे अनुयायी हैं और कौन रुढ़िवादी । ध्यान रहे कि जब तक नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम मक्के में ठहरे रहे तब तक आप इस तरह नमाज़ पढ़ते रहे कि ख़ाना-ए-काबा आप के सामने होता किन्तु जब आप मदीना हिजरत फ़रमा गए तो सोलह सत्रह महीने तक बैतुलमुक़द्दस की तरफ रुख कर के नमाज़ पढ़ते रहे यहाँ तक कि मस्जिदे-हराम (काबा) की तरफ रुख करने का हुक्म नाज़िल हुआ। मदीना से बैतुल मुक़द्दस उत्तर की ओर और ख़ाना-ए-काबा दक्षिण की ओर पड़ता है।

169. क़िबला परिवर्तन का मामला एक कठिन इम्तिहान था। जब तक बैतुलमुक़द्दस क़िबला रहा अरब वासियों की आज़माइश होती रही क्योंकि यह उन की देश भक्ति पर करारी चोट थी और जब मस्जिदे-हराम को क़िबला बनाने का आदेश हुआ तो बनी इस्राईल आज़माइश में पड़ गये कि यह उन की नस्लपरस्ती बुज़ुर्गपरस्ती पर चोट थी। इस तरह रसूल के साथ सिर्फ वे लोग रह गए जो अल्लाह के सच्चे भक्त थे । ज़ाहिर है कि धार्मिक रस्मो रिवाज को छोड़ देना कोई आसान बात नहीं है। लेकिन जिन के अन्दर अल्लाह और उस के रसूल के लिए इख्लास (शुद्धहृदयता) होता है वे अल्लाह की तौफ़िक से हिदायत पाते हैं।

170.अर्थात इस इम्तिहान से अभिप्रेत लोगो का ईमान अकारथ करना नहीं है बल्कि दीन के सच्चे और झुटे अनुयायियों में फर्क करना है और जो अपने ईमान में सच्चे हैं उन की छिपी क्षमताओं को उभरने और उन के ईमान को विकसित होने का अवसर देना है। इस लिहाज़ से यह इम्तिहान अल्लाह के दयावान गुण का द्योतक है।

171. रऊफ और रहीम दो सिफतें (गुण) बयान हुई हैं। रऊफ में शर अर्थात फ़ितना का निवारण करने का पक्ष हावी है और रहीम में भलाई एवं पुण्य बढ़ाने का। यह इस बात की तरफ इशारा है कि अल्लाह अपने बन्दों को इस इम्तिहान के द्वारा कमज़ोरियों से पाक और अच्छे गुणों से सुसज्जित करना चाहता है।

172. मदीना हिज़रत कर जाने के बाद नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम यद्यपि बैतुल मुक़द्दस की तरफ रुख कर के नमाज़ पढ़ा करते थे किन्तु आप इब्राहीमी क़िबला के लिए अल्लाह के हुक्म की प्रतिक्षा कर रहे थे । इस लिए आप की निगाहें बार बार आसमान की तरफ उठ जाया करती थी कि कब अल्लाह का फ़रिश्ता (जिब्रील) क़िबला परिवर्तन का हुक्म ले कर नाज़िल होता है।

173. मस्जिदे हराम से मुराद मक्का की वह मस्जिद है जिस के बीच में खाना-ए-काबा स्थित है। खाना-ए-काबा का निर्माण हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने आज से लगभग चार हज़ार साल पहले किया था । मस्जिदे-हराम नबी सल्लल्लाहु

अलैहि वसल्लम के ज़माने में छाटी थी बाद में इस की क्षमता इतनी बढ़ा दी गई कि इस में पाँच लाख आदमी नमाज़ पढ़ सकते हैं। फिर भी वह हज्ज के दिनों में अपर्याप्त (नाकाफ़ी) सिद्ध होती हैं। इस मस्जिद के अन्दर खाना-ए-काबा की तरफ रुख कर के नमाज़ पढ़ी जाती है।

174. यहूदी अच्छी तरह जानते थे कि इब्राहीमी क़िबला अल्लाह का घर (बैतुल्लाह) है और वह तौरात की उस भविष्यवानी से भी भिज्ञ थे कि आख़िरी नबी हज़रत इस्माईल की सन्तान में से होगा और उस नबी के द्वारा एक मुस्लिम समुदाय बरपा किया जाएगा । एवं वे इस वास्तविकता से भी परिचित थे कि बनी इस्माईल का मर्कज़ (केन्द्र) और क़िबला ख़ाना-ए-काबा रहा है किन्तु वे मात्र विद्वेष और पक्षपात के कारण इन बातों को छिपाते थे । ध्यान रहे कि सब से पहले खाना-ए-काबा का निर्माण हुआ और बैतुलमुक़द्दस में हैकल सुलेमानी का निमार्ण इस से कई सौ साल बाद हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम ने किया था ।

175. यहूदियों और ईसाईयों की ओर संकेत है कि वे आपस में क़िबले के मामले में एकमत नहीं हैं। ईसाईयों ने पूरब को क़िबला बनाया है तो यहूदियों ने पश्चिम को। जब कि दोनों बैतुलमुक़द्दस के वास्तविक क़िबला होने के कायल हैं। फिर इन से क्या आशा की जा सकती है कि वे मस्जिदे-हराम को क़िबला स्वीकार कर लेंगे।

176.Text में शब्द ''अल-इल्म'' इस्तेमाल हुआ है जिस से मुराद यहाँ हक़ीक़ी इल्म (वास्तविक ज्ञान) है जो वह्य के द्वारा हासिल होता है। इस आयत में सावधान किया गया है कि क़ुर्आन की हिदायतों को छोड़ कर इच्छाओं के पीछे चलना चाहे वह किसी मामले में हो और चाहे वह रिवायतों (उल्लेख) के रुप में हो या बिदअतों (धर्म में शामिल ग़लत रिवाजो) के रुप में, अत्यन्त ज़ालिमाना हरकत है।

177. यह अरबी मुहावरा है जिसका मतलब यह है कि वह किसी शक एवं संदेश के बग़ैर अच्छी तरह जानते हैं कि आखिरी नबी का ख़ाना-ए-काबा को क़िबला क़रार देना बिल्कुल दुरुस्त है ।

178. यूँ तो सम्बोधन नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से है किन्तु तम्बीह का रुख आम लोगों की तरफ है।

हम तुम्हें ज़रुर आज़माऐंगे, किसी हद तक भय, भूख, जान, माल और फलों के नुकसान से ।और ख़ुशख़बरी दे दो सब्र करने वालो को।(अल-क़ुर्आन)

148. हर एक के लिए एक दिशा है जिस की तरफ़ वह रुख़ करता है तो तुम नेक कामों में पहल करो। जहाँ कहीं भी तुम होगे अल्लाह तुम सब को जमा करेगा। यक़ीन जानो अल्लाह को हर चीज़ पर सामर्थ्य प्राप्त है।

وَلِكُلٍّ وِّجْهَةٌ هُوَ مُوَلِّيْهَا فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرٰتِ ؕ اَيْنَ مَا تَكُوْنُوْا
يَاْتِ بِكُمُ اللّٰهُ جَمِيْعًا ؕ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ قَدِيْرٌ ﴿۱۴۸﴾

149. और जहाँ कहीं से भी तुम निकलो [179] अपना रुख मस्जिदे-हराम की तरफ कर लो, बेशक यह हक़ है तुम्हारे रब की ओर से और तुम जो कुछ करते हो अल्लाह उस से ग़ाफ़िल नहीं है।[180]

وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ؕ وَاِنَّهٗ
لَلْحَقُّ مِنْ رَّبِّكَ ؕ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُوْنَ ﴿۱۴۹﴾

150. और तुम जहाँ कहीं से भी निकलो अपना रुख मस्जिदे-हराम ही की तरफ कर लो, और जहाँ कहीं भी तुम हो अपना रुख़ उसी की तरफ कर लो ताकि लोगों को तुम्हारे खिलाफ हुज्जत पेश करने का मौक़ा न मिले, मगर जो इन में से ज़ालिम हैं तो उन से न डरो बल्कि मुझ से डरो। और ताकि मैं तुम पर अपनी नेमत तमाम (पूर्ण) कर दूँगा और ताकि तुम राह पाओ।[181]

وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ؕ وَحَيْثُ
مَا كُنْتُمْ فَوَلُّوْا وُجُوْهَكُمْ شَطْرَهٗ ۙ لِئَلَّا يَكُوْنَ لِلنَّاسِ عَلَيْكُمْ حُجَّةٌ ۙ
اِلَّا الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا مِنْهُمْ ۙ فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِىْ ۙ وَلِاُتِمَّ
نِعْمَتِىْ عَلَيْكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَهْتَدُوْنَ ﴿۱۵۰﴾

151. हम ने तुम्हारे बीच तुम ही में से एक रसूल भेजा जो तुम्हें हमारी आयतें सुनाता है, तुम्हारा तज़्किय:(शुद्धिकरण) करता है और तुम्हें किताब और हिकमत की तालीम देता (सिखाता)है और तुम्हें उन बातों की तालीम देता है जो तुम नहीं जानते थे।

كَمَآ اَرْسَلْنَا فِيْكُمْ رَسُوْلًا مِّنْكُمْ يَتْلُوْا عَلَيْكُمْ اٰيٰتِنَا
وَيُزَكِّيْكُمْ وَيُعَلِّمُكُمُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَيُعَلِّمُكُمْ مَّا
لَمْ تَكُوْنُوْا تَعْلَمُوْنَ ﴿۱۵۱﴾

152. अतः तुम मुझे याद रखो मैं तुम्हें याद रखूँगा।[182] और मेरा शुक्र अदा करो,नाशुक्री न करो।

فَاذْكُرُوْنِىْٓ اَذْكُرْكُمْ وَاشْكُرُوْا لِىْ وَلَا تَكْفُرُوْنِ ﴿۱۵۲﴾

153. ऐ ईमान वालों ! सब्र और नमाज़ से मदद लो[183]। निस्संदेह अल्लाह सब्र करने वालों के साथ है।[184]

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اسْتَعِيْنُوْا بِالصَّبْرِ وَالصَّلٰوةِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ مَعَ
الصّٰبِرِيْنَ ﴿۱۵۳﴾

154. और जो लोग अल्लाह की राह में मारे जाऐं उन को मुर्दा न कहो, बल्कि वे ज़िन्दा हैं, लेकिन तुम महसूस नहीं करते ।[185]

وَلَا تَقُوْلُوْا لِمَنْ يُّقْتَلُ فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَمْوَاتٌ ؕ بَلْ اَحْيَآءٌ وَّلٰكِنْ
لَّا تَشْعُرُوْنَ ﴿۱۵۴﴾

155. हम तुम्हें ज़रुर आज़माऐंगे, किसी हद तक भय, भूख, जान, माल और फलों के नुकसान से ।[186] और ख़ुशख़बरी दे दो सब्र करने वालो को।

وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ بِشَىْءٍ مِّنَ الْخَوْفِ وَالْجُوْعِ وَنَقْصٍ مِّنَ الْاَمْوَالِ
وَالْاَنْفُسِ وَالثَّمَرٰتِ ؕ وَبَشِّرِ الصّٰبِرِيْنَ ﴿۱۵۵﴾

179. निकलने से अभिप्राय नमाज़ के लिए निकलना है। यहाँ स्पष्ट किया गया है कि क़िबले का लिहाज़ सफ़र में भी ज़रुरी है । सफर में क़िबले की पहचान एक मुश्किल काम है किन्तु क़िबले के महत्व को देखते हुए ताक़िद की गई है कि सफ़र में भी नमाज़ पढ़ते समय अपना रुख मस्जिद-हराम ही की तरफ कर लो ताकि यह उम्मत अपने GOAL (तौहीद के केन्द्र) से हर हाल में जुड़ी रहे।

जहाँ तक मक्का मुकर्रमा के स्थल का सम्बन्ध है यह शहर (Long 39^{0}-50. E Lat 21^{0}-26N) पर स्थित है। मुम्बई से क़िबला पश्चिम की दिशा को दस डिग्री उत्तर (10^{0}N) की ओर पड़ता है।

क़ुर्आन के निर्देश के अनुसार सफर में भी क़िबले की दिशा की खोज और पाबन्दी जहाँ तक संभव हो ज़रुरी है। लेकिन अगर रेल हवाई जहाज़ इत्यादि में क़िबले की दिशा में नमाज़ पढ़ना संभव न हो तो ऐसी सूरत में जिस तरफ भी रुख करना संभव हो नमाज़ अदा की जा सकती है।

180. इशारा है इस बात की तरफ कि अगर तुम ने क़िबला का लिहाज़ करने में बेपरवाही से काम लिया तो इस पर पकड़ होगी।

181. यह हुक्म ऊपर गुज़र चुका है । यहाँ दोबारा कहना ताकीद के लिए है। एवं इस की हिकमतें बयान करना मक़सद है। अत:एक हिकमत तो यह बयान की गई है कि लोगों को तुम्हारे खिलाफ़ हुज्जत पेश करने का मौक़ा न मिले। अर्थात् यहूदियों को यह कहने का मौक़ा न मिले कि अगर हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम आखिरी नबी हैं तो तौरात की भविष्यवाणियों के अनुसार उन का क़िबला इब्राहीमी क़िबला (ख़ाना-ए-काबा) क्यों नहीं है? तुम हर जगह ख़ाना-ए-काबा को क़िबला बना कर यह साबित कर दो कि हमारा भविष्य ख़ाना-ए-काबा ही है। जो तौरात की भविष्यवाणियों के अनुकूल है। दूसरी हिकमत नेमतों को पूर्ण करना बयान की गयी है। अर्थात दीन को पूर्ण करने और सारे जगत वासियों की पेशवाई की नेमत और तीसरी हिकमत राह को पा लेने अर्थात यह क़िबला तौहिद का केन्द्र होने की हैसियत से हिदायत का मीनार है। इस लिए इस को हमेशा लक्ष्य (GOAL) के तौर पर निगाहों के सामने रखना चाहिए।

182. ख़ुदा को याद रखने के भावार्थ में शरीअत की पाबन्दी करना शामिल है और अल्लाह का यह वादा कि '' मैं तुम्हें याद रखूँगा'' का मतलब यह है कि जो वादे मैं ने तुम से किए हैं उन को पूरा करुँगा ।

183.मुस्लिम समुदाय को पेशवाई के पद पर आसीन करने के बाद दीन की राह में पेश आने वाले खतरों और मुश्किलों का मुक़ाबला करने की तदबीर बताई जा रही है कि सब्र और नमाज़ से मदद लो। नमाज़ अल्लाह से सम्बन्ध स्थापित करने का अतयन्त सुदृढ़ साधन है और अगर अल्लाह से सम्बन्ध सुदृढ़ हो तो हक़ के रास्ते की मुश्किलें स्वयं ही आसान हो जाती है। यहाँ नमाज़ का वर्णन जिस संदर्भ (Contex) में हुआ है उस से इस बात पर रौशनी पड़ती है कि नमाज़ ज़िक्र (अल्लाह की चर्चा) और शुक्र (अल्लाह की कृतज्ञता) दोनों का द्योतक है और सत्यमार्ग में शक्ति और साहस की प्राप्ति का साधन भी।

184. सब्र करने वालों अर्थात दीन की राह में जमे रहने वालों और मुश्किलों एवं मुसीबतों में साहस के साथ डटे रहने वालों का साथी अल्लाह तआला होता है। यह कोई मामूली बात नहीं है क्यों कि जिस किसी को कायनात के हाकिम का साथ और सहायता एवं सुरक्षा प्राप्त हो दुनिया की बड़ी से बड़ी ताक़त भी उस का कुछ बिगाड़ नहीं सकतीं । स्पष्ट रहे कि सब्र का वर्णन क़ुर्आन में सत्तर से अधिक बार हुआ है। इस से उस की आवश्यकता और महत्व का अन्दाज़ा किया जा सकता है।

185. जो लोग अल्लाह की राह में मारे जाते हैं ऊपर से यह महसूस होता है कि उन का जीवन समाप्त हो गया किन्तु क़ुर्आन इस वास्तविकता को मस्तिष्क में बिठाना चाहता है कि ऐसे लोगों के लिए वास्तविक जीवन की शुरुआत तो उन के मरने के बाद ही होता है। क्यों कि उन की रुहें आलमे-बर्जख में अत्यन्त उच्च स्थान पर होती हैं जहाँ उन्हें ऐसी नेमत प्रदान की जाती है जिन की कल्पना भी इस दुनिया में नहीं की जा सकती । हर्ष, आनन्द और उन्माद का जो जीवन उन्हें प्राप्त होता है उस के मुक़ाबले में संसार का यह जीवन कोई अर्थ नहीं रखता । ध्यान रहे कि क़ुर्आन के नज़्दीक मौत इन्सान की समाप्ति का नाम नहीं है बल्कि शरीर जो कि रुह का क़ैदखाना है उस से आज़ाद हो जाने का नाम है। हर इन्सान की रुह आलमे बर्ज़ख में जो एक रुहानी जगत है कियामत तक के लिए सुरक्षित रहती है चाहे वह ईमान लाने वाला बन्दा हो या इन्कार करने वाला (काफिर) बन्दा हो। अलबत्ता ईमान वालों की रुहें सुख और नेमतों में रहती हैं जब कि काफिरों (इन्कार करने वालों)की रुहें दुखों और यातनाओं में पीड़ित रहती हैं । जब कियामत बरपा होगी तो शरीर को दोबारा पैदा किया जाएगा और हर इन्सान की रुह उस के शरीर के साथ जोड़ दी जायेगी। इस तरह हर व्यक्ति अल्लाह तआला की अदालत में शरीर सहित उपस्थित होगा और वहाँ वह अकीदा और अमल के अनुसार इनाम या सज़ा का भुक्त भोगी होगा। इसे आलमे-आख़िरत (परलोक) कहते हैं। अर्थात

दुनिया (लोक) और आखिरत (परलोक) के बीच का जगत आलमे-बर्जख है ।

186. अर्थात सत्यमार्ग पर चलने वाले काफिले को विरोध के तूफान से जरुर गुज़रना होगा और तरह तरह की हानियों और क्षतियों से दोचार होना होगा । ये आज़माइश अल्लाह के नियमानुसार अतिआवश्यक है ताकि खरे और खोटे में फर्क हो, सत्य मार्ग पर चलने वालों की क्षमताऐं एवं प्रतिभाऐं विकसित हों और वे अल्लाह के इनामों के योग्य ठहरें। भय से इशारा भय एवं खतरे के उस वातावरण की तरफ है जो दुशमनों के हमलों इत्यादि के परिणाम स्वरुप पैदा होते हैं ।

भूख से आर्थिक दुविधा की ओर संकेत है,जान और माल की कमी से इशारा जिहाद की तरफ है। जिहाद में जान और माल दोनों तरह की क़ुर्बानियाँ देना पड़ती हैं,फलों की कमी का इशारा पैदावार के नुकसान की ओर है।

❖❖❖❖❖❖❖❖

निस्संदेह जिन लोगों ने कुफ्र (इन्कार) किया और कुफ्र ही की हालत में मर गए उन पर अल्लाह की, फरिश्तों की और तमाम इन्सानों की लानत है।(अल-क़ुर्आन)

156. जिन का हाल यह है कि जब कोई मुसीबत उन पर आ पड़ती है तो कहते हैं कि हम अल्लाह ही के लिए हैं और हमें अल्लाह ही की तरफ लौट कर जाना है।[187]

الَّذِينَ إِذَا أَصَابَتْهُم مُّصِيبَةٌ قَالُوا إِنَّا لِلَّهِ وَإِنَّا إِلَيْهِ
رَاجِعُونَ ﴿١٥٦﴾

157. यही लोग हैं जिन पर उन के रब की तरफ से कृपा और रहमतें होंगी और यही लोग राह (पाने) वाले हैं।[188]

أُولَٰئِكَ عَلَيْهِمْ صَلَوَاتٌ مِّن رَّبِّهِمْ وَرَحْمَةٌ وَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُهْتَدُونَ ﴿١٥٧﴾

158. निस्संदेह सफा और मरवह [189]अल्लाह के शआइर (निशानियों) में से हैं।[190] अतः जो व्यक्ति बैतुल्लाह (अल्लाह के घर) का हज्ज व उमरह[191] करे उस के लिए उन का तवाफ़ (सई) करने में गुनाह की कोई बात नहीं है। और जो व्यक्ति स्वेच्छा से कोई भलाई करेगा तो अल्लाह क़दर करने वाला (गुण ग्राहक) और जानने वाला है।

إِنَّ الصَّفَا وَالْمَرْوَةَ مِن شَعَائِرِ اللَّهِ فَمَنْ حَجَّ الْبَيْتَ أَوِ اعْتَمَرَ
فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِ أَن يَطَّوَّفَ بِهِمَا
وَمَن تَطَوَّعَ خَيْرًا فَإِنَّ اللَّهَ شَاكِرٌ عَلِيمٌ ﴿١٥٨﴾

159. जो लोग हमारी नाज़िल की हुई खुली निशानियों और हिदायत को छिपाते हैं [192] हालाँकि हम उन्हें किताब में लोगों के लिए बयान कर चुके हैं, यक़ीन जानों अल्लाह उन पर लानत करता है [193] और तमाम लानत करने वाले भी उन पर लानत भेजते हैं।

إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ مَا أَنزَلْنَا مِنَ الْبَيِّنَاتِ وَالْهُدَىٰ مِن بَعْدِ
مَا بَيَّنَّاهُ لِلنَّاسِ فِي الْكِتَابِ أُولَٰئِكَ يَلْعَنُهُمُ اللَّهُ
وَيَلْعَنُهُمُ اللَّاعِنُونَ ﴿١٥٩﴾

160. अलबत्ता जिन लोगों ने तौबा की और सुधार कर लिया और बयान कर दिया उन की तौबा मैं क़ुबूल करूँगा । मैं बड़ा तौबा क़ुबूल करने वाला और रहम करने वाला हूँ।

إِلَّا الَّذِينَ تَابُوا وَأَصْلَحُوا وَبَيَّنُوا فَأُولَٰئِكَ أَتُوبُ
عَلَيْهِمْ وَأَنَا التَّوَّابُ الرَّحِيمُ ﴿١٦٠﴾

161. निस्संदेह जिन लोगों ने कुफ्र (इन्कार) किया और कुफ्र ही की हालत में मर गए उन पर अल्लाह की, फरिश्तों की और तमाम इन्सानों की लानत है।

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَمَاتُوا وَهُمْ كُفَّارٌ أُولَٰئِكَ عَلَيْهِمْ
لَعْنَةُ اللَّهِ وَالْمَلَائِكَةِ وَالنَّاسِ أَجْمَعِينَ ﴿١٦١﴾

162. वे इस (लानत) में हमेशा रहेंगे। न उन के अज़ाब (दण्ड) में कमी होगी और न उन को मोहलत ही मिलेगी।

خَالِدِينَ فِيهَا لَا يُخَفَّفُ عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ يُنظَرُونَ ﴿١٦٢﴾

163. और तुम्हारा इलाह (पुज्य) एक ही इलाह है।[194] उस रहमान और रहीम (करुणामय और दयावान) के सिवा कोई इलाह (पुज्य) नहीं ।[195]

وَإِلَٰهُكُمْ إِلَٰهٌ وَاحِدٌ لَّا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الرَّحْمَٰنُ الرَّحِيمُ ﴿١٦٣﴾

187. अर्थात हर मुसीबत के अवसर पर ईमान वालों की ज़बान से ये मनमोहक शब्द निकलते हैं, जिस से उन की अल्लाह के समक्ष समर्पण, उस पर पूर्ण विश्वास, और उस के लिए जान लुटा देने की मनोदशा की अभिव्यक्ति होती है । यही वह स्पिरिट (SPIRIT) है जो उन्हें सत्य के मार्ग में पहाड़ से भी टक्कर लेने पर आमादा करती है।

188. बहस क़िबले से सम्बन्धित चली आ रही थी। बीच में क़िबला परिवर्तन के नतीजे में आने वाली आज़माइशों का वर्णन हुआ है अब फिर क़िबले से सम्बन्धित बातों पर रौशनी डाली जा रही है।

189. सफ़ा और मरवह दो पहाड़ीयों के नाम हैं जो मक्का में खाना-ए-काबा के पास स्थित हैं । इन दो पहाड़ियों के बीच हज्ज और उमरह के मौक़े पर सात चक्कर लगाए जाते हैं जिसे सई कहते हैं। मरवह वह यादगार पहाड़ी है जिस पर हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम की क़ुर्बानी की घटना घटी थी। मरवह का ज़िकर तौरात में मौजूद है किन्तु यहूदियों ने परिवर्तन कर के शब्द मरवह को मोरह कर दिया और इस स्थान को मक्का के बजाये फिलस्तीन में दिखाने की कोशिश की। ताकि उन चिन्हों एवं निशानियों पर पर्दा पड़ा रहे जिनसे इब्राहीमी क़िबला और हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आखिरी नबी होने का सबूत मिलता है अत: वर्तमान परिवर्तित तौरात में है।

“ उस देश के बीच से जाते हुए अब्राम शकेम में जहाँ मोरे का बांज वृक्ष है, पहुँचा, उस समय उस देश में कनआनी रहते थे। तब ख़ुदावन्द ने अब्राम को दिखाई दे कर कहा कि यह देश मैं तेरी नस्ल को दूँगा, और उस ने वहाँ यहोवा के लिए जिस ने उसे दर्शन दिया था, एक वेदी बनाई। फिर वहाँ से कूच कर के वह उस पहाड़ पर आया, जो बेतेल के पूर्व की ओर है, और उस ने अपना तम्बू उस स्थान में खड़ा किया जिस की पच्छिम की ओर तो बेतेल और पूर्व की ओर ऐ है; और वहाँ भी उस ने यहोवा से प्रार्थना की ”। (उत्पति 12-6,7,8)

190.Text (मूल अरबी) में शआइर का शब्द प्रयोग हुआ है जिस से मुराद शरीअत के वे चिन्ह (SYMBOLS) हैं जो ख़ुदा परस्ती की पहचान और निशान के तौर पर मुक़र्रर किए गए हैं । इन ‘शआइर’ का आदर और उन का लिहाज़ जरुरी है । लेकिन आदर और लिहाज़ की जो शकल शरीअत ने तय कर दी है उसी शक्ल में उन का आदर एवं लिहाज़ किया जाना चाहिए। अपनी तरफ से नई शकल पैदा करने का हमें कोई अधिकार नहीं हैं। वरना शिर्क और बिदअत की राहें खुल सकती हैं ।

यहाँ यह बात अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि क़ुर्आन में अल्लाह के शआइर का सिर्फ आदर और लिहाज़ करने का हुक्म दिया गया है। उन की पूजा एवं उपासना का हुक्म हरगिज़ नहीं दिया गया है। इस्लाम में पूजा और उपासना मात्र अल्लाह के लिए वैध है इस लिए अल्लाह के शआइर के बारे में कोई ग़लत फहमी नहीं होनी चाहिए। जाहिलिय्यत के ज़माने (हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नबी नियुक्त होने के पूर्व) में सफा और मरवह में दो बुत रखे गए थे। अल्लाह तआला ने यह इर्शाद फरमा कर कि सफ़ा और मरवह अल्लाह के शआइर (SYMBOLS OF ALLAH) में से हैं, इस ओर ध्यान आकर्षित किया कि इन्हें बुतों से पाक किया जाना चाहिए, ताकि वे शुद्ध रुप से ख़ुदा परस्ती के चिन्ह की हैसियत से प्रसिद्ध हों।

191. उमरह खाना-ए-काबा की ज़ियारत (दर्शन) को कहते हैं। जो व्यक्ति उमरह करना चाहता है उसे हरम की सीमा में दाख़िल होने से पहले एहराम बाँधना पड़ता है। उमरह में खाना-ए-काबा की परिक्रमा (तवाफ) और सफा, मरवह के बीच सई की जाती है अर्थात सात चक्कर लगाए जाते हैं । उमरह किसी भी समय किया जा सकता है जब कि हज्ज, हज्ज के दिनों में ही किया जा सकता है एवं हज्ज में अराफात की हाजिरी भी जरुरी है जो लोग हज्ज को जाते हैं वे आम तौर से उमरह अदा करते हैं और उस के बाद हज्ज करते हैं।

192. इशारा विशेष रुप से उन निशानियों की तरफ है जो तौरात में अल्लाह तआला ने इब्राहीमी क़िबला और आख़िरी नबी के सम्बन्ध में बयान फरमाई थीं किन्तु यहूदियों ने उन को छिपाने की कोशिश की। अत:ऊपर नोट नं.189 में इस की मिसाल गुज़र चुकी कि किस तरह उन्होंने मरवह का नाम बदल कर मोरे कर दिया ।

193. तौरात में है: “परन्तु यदि तू अपने परमेश्वर यहोवा की बात न सुने और उस की सारी आज्ञाओं और विधियों के पालने में जो मैं आज सुनाता हूँ, चौकसी नहीं करेगा तो ये सब शाप तुझ पर आ पड़ेगा।” (व्यवस्थाविवरण २८:१५)

194.इस आयत से बयान का एक नया क्रम शुरु हो रहा है जिस में शरअी आदेश दिए जा रहे हैं, खास तौर से उन बातों के सिलसिले में जिन की क़ुर्आन नाज़िल होने के समय के हालात माँग कर रहे थे। इस की शुरुआत तौहीद के बयान से हो रही है ।

195. इन्सान के शिर्क (बहुदेववाद) में मुब्तेला होने का एक बहुत बड़ा कारण खुदा के बारे में यह ग़लत धारणा है कि वह इन्सान को पैदा करने के बाद उस से बेतअल्लुक़ (संबंधवहीन) हो गया है। यहाँ इलाह के साथ रहमान और रहीम (करुणामय और दयावान) की सिफतें बयान की गई हैं जो इस धारणा का खण्डन करती है और यह स्पष्ट करती है कि वह इन्सान के लिए अत्यन्त दयावान एवं मेहरबान है। हर क्षण उस पर अपनी दया किए जा रहा है और इस हिदायत नामे (क़ुर्आन) का अवतरण भी सरासर उसकी दया की अभिव्यक्ति है।

164. निस्संदेह आसमानों और ज़मीन की संरचना [196], रात और दिन के एक दुसरे के बाद आने में, उन नौकाओं में जो लोगों के लिए समुद्र में लाभ के सामान ले कर चलती हैं, उस पानी में जो अल्लाह ने ऊपर से बरसाया और जिस से धरती को उस के मुर्दा होने के बाद जीवन प्रदान किया[197] और जिस के द्वारा इस में हर तरह के जीव धारी फैलाए ,और हवाओं की गर्दिश में और इन बादलों में जो आसमान और ज़मीन के बीच मुसख्खर (आज्ञा के वशीभूत) हैं [198] उन लोगों के लिए बहुत सी निशानियाँ हैं [199] जो बुद्धि से काम लेते हैं।

إِنَّ فِي خَلْقِ السَّمٰوٰتِ وَالْأَرْضِ وَاخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ
وَالْفُلْكِ الَّتِي تَجْرِي فِي الْبَحْرِ بِمَا يَنْفَعُ النَّاسَ وَمَآ أَنْزَلَ اللّٰهُ
مِنَ السَّمَآءِ مِنْ مَّآءٍ فَأَحْيَا بِهِ الْأَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا
وَبَثَّ فِيهَا مِنْ كُلِّ دَآبَّةٍ وَّتَصْرِيفِ الرِّيٰحِ وَالسَّحَابِ
الْمُسَخَّرِ بَيْنَ السَّمَآءِ وَالْأَرْضِ لَاٰيٰتٍ لِّقَوْمٍ يَّعْقِلُونَ ﴿١٦٤﴾

165. मगर लोगो में ऐसे भी हैं जो औरों को अल्लाह का हमसर (समकक्ष) ठहराते हैं और उन से ऐसी मुहब्बत करते हैं जैसी अल्लाह से करना चाहिए। हालाँकि ईमान वाले अल्लाह ही से सब से अधिक मुहब्बत रखते हैं,[200] और अगर ये ज़ालिम उस समय को देख सकते जब कि ये अज़ाब को देख लेंगे तो इन्हें अच्छी तरह मालूम हो जाता कि सारी शक्ति अल्लाह ही के हाथ में है और अल्लाह सख्त (कठोर दंड) देने वाला है।

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَّتَّخِذُ مِنْ دُونِ اللّٰهِ أَنْدَادًا يُّحِبُّونَهُمْ كَحُبِّ
اللّٰهِ ۖ وَالَّذِينَ اٰمَنُوٓا أَشَدُّ حُبًّا لِّلّٰهِ ۗ وَلَوْ يَرَى الَّذِينَ ظَلَمُوٓا إِذْ
يَرَوْنَ الْعَذَابَ ۙ أَنَّ الْقُوَّةَ لِلّٰهِ جَمِيعًا ۙ وَّأَنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعَذَابِ ﴿١٦٥﴾

166. उस समय वे (पेशवा और नेता) जिन की पैरवी (अनुपालन) की गई थी अपने अनुयायियों से विरक्ति व्यक्त करेंगे, [201] और अज़ाब को देख लेंगे और उन के आपसी सम्बन्ध टूट जाऐंगे।

إِذْ تَبَرَّأَ الَّذِينَ اتُّبِعُوا مِنَ الَّذِينَ اتَّبَعُوا وَرَأَوُا الْعَذَابَ
وَتَقَطَّعَتْ بِهِمُ الْأَسْبَابُ ﴿١٦٦﴾

167. और उन के अनुयायी कहेंगे कि काश हमें एक अवसर (दुनिया में जाने का) और दिया जाता तो हम भी उसी तरह उन से विरक्ति व्यक्त करते जिस तरह इन्होंने हम से विरक्ति व्यक्त की है। इस तरह अल्लाह उन के कर्मों को (मूवज्जिबे हसरत) पश्चाताप का कारण बना कर उन को दिखाएगा और वे जहन्नम की आग से हरगिज़ न निकल सकेंगे।

وَقَالَ الَّذِينَ اتَّبَعُوا لَوْ أَنَّ لَنَا كَرَّةً فَنَتَبَرَّأَ مِنْهُمْ كَمَا تَبَرَّءُوا
مِنَّا ۗ كَذٰلِكَ يُرِيهِمُ اللّٰهُ أَعْمَالَهُمْ حَسَرٰتٍ عَلَيْهِمْ ۖ
وَمَا هُمْ بِخٰرِجِينَ مِنَ النَّارِ ﴿١٦٧﴾

168. लोगो ! [202] ज़मीन में जो हलाल और पाक [203] चीजें हैं उन्हें खाओ और शैतान के बताए रास्तों पर मत चलो ।[204] वास्तव में वह तुम्हारा खुला दुश्मन है

يٰٓأَيُّهَا النَّاسُ كُلُوا مِمَّا فِي الْأَرْضِ حَلٰلًا طَيِّبًا ۖ وَّلَا تَتَّبِعُوا
خُطُوٰتِ الشَّيْطٰنِ ۚ إِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُّبِينٌ ﴿١٦٨﴾

196. आसमान और ज़मीन की संरचना इन के पैदा करने वाले की महान क़ुदरत (सामर्थ्य) पर, उस की बेमिसाल कारीगरी पर एवं उस की आश्चर्यजनक नीति (हिकमत) पर तर्क प्रस्तुत करती है। इन के लाभप्रद होने से उसकी रहमत की सिफ़त का एवं इन चीज़ो के उद्देश्य का प्रदर्शन होता है और यह विश्वास पैदा होता है कि संसार नामी यह कारखाना अकारण नहीं पैदा किया गया है बल्कि इस के पीछे एक बड़ा उद्देश्य निहित है जिस के प्रकट होने के लिए क़ियामत का दिन निश्चित है।

197. बारिश का पानी जो आसमान (ऊपर) से बरसात है और ज़मीन को नवजीवन प्रदान करता है इस बात का सबूत है कि आसमान और ज़मीन के बीच पूरी तरह ताल मेल है फिर लोग किस तरह मान लेते हैं कि ज़मीन का देवता अलग और आसमान का देवता अलग है?अगर एक ख़ुदा की जगह कई देवता होते तो आसमान और ज़मीन की यह व्यवस्था किस तरह पूरे ताल मेल और सुगम तरीक़े पर चल सकती थी ?

198. मुसख़्ख़र (वशीभूत) हैं अर्थात् अल्लाह तआला ने इन को अपनी आज्ञा का वशीभूत बना कर इन्सान की सेवा में लगा दिया है।

199. किसी चीज़ की निशानी उस का प्रमाण होती है। इस लिए इन चीज़ों के निशानी होने का मतलब यह है कि यह चीजें अल्लाह के वजूद, उस की तौहीद और उस के दया के गुण का प्रमाण हैं।

200. अर्थात तौहीद (एकेश्वरवाद) के इन स्पष्ट प्रमाणों के बावजूद ऐसे लोग भी हैं जो बुद्धि से काम नहीं लेते और ख़ुदा के साथ औरों को शरीक (Partner) ठहराने लगते हैं और उन से इस तरह मुहब्बत करने लगते हैं जिस तरह अल्लाह से मुहब्बत करने का हक़ है जिस तरह अल्लाह ही सृष्टा है और अकेले वही शासक और पुज्य हो तो फिर किसी और की मुहब्बत उस के बराबर या उस से अधिक कैसे हो सकती है? ज़रुरी है कि हर मुहब्बत अल्लाह की मुहब्बत के अधीन हो यही ईमान की रुह है और तौहीद का तक़ाज़ा भी।

201. अर्थात आज ये जिन से बेपनाह मुहब्बत कर रहे हैं वे क़ियामत के दिन उन से विरक्ति प्रकट करेंगे । यहाँ विशेष रूप से गुमराह करने वाले सरदार, लीडर और नेता मुराद हैं जिन से मुश्रिकीन (बहुदेववादी) बेपनाह मुहब्बत रखते थे और ख़ुदा की मुहब्बत पर उन की मुहब्बत को ऊपर रखते थे।

202. यहाँ से शरीअत के आदेश और क़ानून बयान किये गए हैं।

203. इस्लाम ने जिन चीज़ो को हलाल और जायज करार दिया है वे निश्चय ही पाकीज़ा और अच्छी हैं अर्थात् वह अनदरुनी और बाहरी दोनों तरह की गन्दगियों से पाक हैं और उन के खाने का कोई बुरा असर इन्सान के अखलाक़ पर नहीं पड़ता ।

204. अर्थात अपनी इच्छाओं या मुश्रिकाना वहम की बिना पर किसी चीज़ को हराम न ठहराओ । जिन लोगों ने शरअी प्रमाण के बग़ैर कितनी ही चीज़ो को हराम ठहराया है उन्हें यह राह शैतान ने दिखाई है। मिसाल के तौर पर पाक जानवरों की क़ुर्बानी अल्लाह तआला ने हलाल ठहराई है किन्तु अहिन्सा के फ़लसफे के तहत मांस खाने को बिलकुल हराम ठहराना ख़ुदा के अधिकारों में हस्तक्षेप है और यह शैतान के रास्ते का अनुसरण और खुला शिर्क है।

169. वह तो तुम्हें बुराई और बेहयाई ही का हुक्म देगा और इस बात का कि अल्लाह की तरफ ऐसी बातें मन्सूब करो जिनका तुम्हें इल्म नहीं।[205]

إِنَّمَا يَأْمُرُكُم بِالسُّوءِ وَالْفَحْشَاءِ وَأَن تَقُولُوا عَلَى اللَّهِ
مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿١٦٩﴾

170. इन से जब कहा जाता है कि उतारे हुए आदेशों का पालन करो तो कहते हैं हम उसी तरीक़े की पैरवी करेंगे जिस पर हम ने अपने बाप दादा को पाया है।क्या उस सूरत में भी ये उन की पैरवी करेंगे जब कि उन के बाप दादा न अक़्ल से काम लेते रहे हों और न उन्होंने हिदायत पाई हो ![206]

وَإِذَا قِيلَ لَهُمُ اتَّبِعُوا مَا أَنزَلَ اللَّهُ
قَالُوا بَلْ نَتَّبِعُ مَا أَلْفَيْنَا عَلَيْهِ آبَاءَنَا ۗ أَوَلَوْ كَانَ آبَاؤُهُمْ
لَا يَعْقِلُونَ شَيْئًا وَلَا يَهْتَدُونَ ﴿١٧٠﴾

171. इन इन्कार करने वालों की मिसाल ऐसी है जैसे कोई व्यक्ति जानवरों को पुकारे जो पुकार और आवाज़ के सिवा कुछ नहीं सुनते ।[207] ये बहरे, गूँगे और अन्धे हैं इस लिए कुछ नहीं समझ पाते।

وَمَثَلُ الَّذِينَ كَفَرُوا كَمَثَلِ الَّذِي يَنْعِقُ بِمَا لَا يَسْمَعُ إِلَّا
دُعَاءً وَنِدَاءً ۚ صُمٌّ بُكْمٌ عُمْيٌ فَهُمْ لَا يَعْقِلُونَ ﴿١٧١﴾

172. ऐ ईमान वालों ! जो पाकीज़ा चीजें हम ने तुम्हें प्रदान की हैं उन को खाओ और अल्लाह का शुक्र अदा करो अगर तुम उसी की बन्दगी करते हो ।[208]

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُلُوا مِن طَيِّبَاتِ مَا رَزَقْنَاكُمْ
وَاشْكُرُوا لِلَّهِ إِن كُنتُمْ إِيَّاهُ تَعْبُدُونَ ﴿١٧٢﴾

173. उस ने तुम पर हराम ठहराया है सिर्फ [209] मुर्दार,[210] ख़ून [211] सुअर का गोश्त [212] और वह (ज़बीहा या वधित) जिस पर अल्लाह के सिवा किसी का नाम पुकारा गया हो।[213] अल्बत्ता जो व्यक्ति मजबूर हो जाए और न तो इस की इच्छा रखता हो और न हद से बढ़ जाने वाला हो तो उस पर कोई गुनाह नहीं।[214] अल्लाह क्षमा कर देने वाला और रहम फ़रमाने वाला है।

إِنَّمَا حَرَّمَ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةَ وَالدَّمَ وَلَحْمَ الْخِنزِيرِ وَمَا أُهِلَّ بِهِ
لِغَيْرِ اللَّهِ ۖ فَمَنِ اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَلَا عَادٍ فَلَا إِثْمَ عَلَيْهِ ۚ إِنَّ اللَّهَ
غَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿١٧٣﴾

174. बेशक जो लोग उन बातो को छिपाते हैं जो अल्लाह ने अपनी किताब में नाज़िल की हैं [215]और इन के बदले थोड़ी सी क़ीमत वसूल करते हैं वे अपने पेट आग से भर रहे हैं।[216] अल्लाह क़ियामत के दिन न उन से बात करेगा और न उन्हें पाक करेगा।[217] उन के लिए दुखदायी यातना है।

إِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ مَا أَنزَلَ اللَّهُ مِنَ الْكِتَابِ وَيَشْتَرُونَ
بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا ۙ أُولَٰئِكَ مَا يَأْكُلُونَ فِي بُطُونِهِمْ إِلَّا النَّارَ
وَلَا يُكَلِّمُهُمُ اللَّهُ يَوْمَ الْقِيَامَةِ وَلَا يُزَكِّيهِمْ وَلَهُمْ
عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿١٧٤﴾

175. यही लोग हैं जिन्होंने हिदायत के बदले गुमराही और क्षमा के बदले यातना खरीदी। तो ये जहन्नम की आग (में जलने) के लिए कितने बड़े हौसले का सबूत दे रहे हैं।[218]

أُولَٰئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الضَّلَالَةَ بِالْهُدَىٰ
وَالْعَذَابَ بِالْمَغْفِرَةِ ۚ فَمَا أَصْبَرَهُمْ عَلَى النَّارِ ﴿١٧٥﴾

205.अर्थात बग़ैर किसी प्रमाण के ख़ुदा की तरफ कोई बात मन्सूब करना या खुदा से कोई बात जोड़ना जैसे यह कहना कि उस ने फलाँ चीज़ हराम ठहराई है हालाँकि इस का कोई सबूत मौजूद न हो।

206. अर्थात हलाल और हराम के मामले में अल्लाह की किताब पर विश्वास और भरोसा होना चाहिए न कि बाप दादा के अप्रमाणित तरीक़ों और उल्लेखों पर। यह कोई उचित बात नहीं है कि आदमी अपने पिछलों का आँख मूँद कर अनुकरण करे या प्राचीन संस्कृति के नाम पर लकीर का फ़कीर बना रहे। बल्कि सूझ बूझ से काम ले और अल्लाह की रहनुमाई को क़ुबूल करे।

इस आयत से यह उसूली हिदायत सामने आती है कि किसी बात का बाप दादा से चला आना या किसी उल्लेख का संस्कृति का रुप धार लेना उस के परमाणित होने की दलील नहीं हैं। इस लिए ऐसी बातों पर आँख मूँद कर विश्वास करने के बजाय खोजबीन से काम लेना चाहिए कि जिन बातों को धर्म का प्रारुप दिया गया है अथवा धर्म से जोड़ा गया है उन के लिए अल्लाह की शरीअत का कोई प्रमाण मौजूद है या नहीं?

207. यह उन लोगों की मिसाल है जो अक़्ल और विवेक से काम लेने के बजाय मात्र बाप दादा के अनुकरण पर जम गए हैं। इन की मिसाल भेड़ बकरियों के झुंड की तरह है जो सोचने समझने से बिलकुल कोरे होते हैं। वे चरवाहे की आवाज़ तो सुनते हैं किन्तु उस के आगे कुछ समझने में असमर्थ हैं। यही हाल उन लोगों का है कि दाई (आवाहक) की पुकार को सुनते हैं परन्तु वह क्या कह रहा है उस को समझने में असमर्थ हैं।

208. ईमान वालों को संबोधित कर के कहा जा रहा है की अगर लोगों ने खाने पीने के मामले में बेजा पाबन्दियाँ ओढ़ रखी हैं और वे भ्रमों एवं वहमों ही के चक्कर में रहना चाहते हैं तो तुम उन को उन के हाल पर छोड़ दो और जो पाकीज़ा चीज़ें अल्लाह ने तुम्हें प्रदान की हैं उन को बेझिझक खाओ। इस से स्पष्ट है कि लोगों ने गोश्त खाने से परहेज़ को धार्मिक प्रतिष्ठा का दर्जा दिया हो तो यह मात्र वहमीपन है और इस क़िस्म की पाबन्दियों को तोड़ना रब की बन्दगी का खुला तक़ाज़ा है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया है :

من صلّٰى صلوٰتنا واستقبل قبلتنا و اكل ذبيحتنا فذٰلك المسلم ۔

" जिस ने हमारी तरह नमाज़ पढ़ी हमारे क़िब्ले की तरफ रुख किया और हमारे ज़बीहे (क़ुर्बानी के जानवर) को खाया वह मुस्लिम है।"

अर्थात आदमी के मुस्लिम होने के लिए ज़रुरी है कि वह खाने पीने के मामले में तमाम अन्धविश्वासों एवं वहमों और उन तमाम अप्रमाणित पाबन्दियों से जो पादरियों,पंडितो और जोगियों इत्यादि ने लागू कर रखी है, आज़ाद हो कर सिर्फ अल्लाह के क़ानून का अनुयायी बन जाए।

209. सूरह माइदा आयत नं.1 में स्पष्ट किया गया है कि "तुम्हारे लिए मवेशी (चरने वाले) की किस्म के चौपाए हलाल किए गए हैं"। इस लिए जो जानवर मवेशी की किस्म के नहीं हैं जैसे दरिन्दे इत्यादि, उन का हराम होना बिलकुब साफ है । इस आयत में यह जो फरमाया गया कि तुम पर सिर्फ यह और यह चीज़ें हराम कर दी हैं तो इस का मतलब यह नहीं कि इस्लाम में इन चार चीज़ो के अलावा सिरे से कोई चीज़ हराम है हि नहीं, बल्कि यह तो उन लोगों को देखते हुए जिनसे कि संबोधन है और जो इब्राहीमी मिल्लत को स्वीकार करते थे बयान किया जा रहा है। मतलब यह है कि जिन चीज़ो के हलाल और हराम होने मे मतभेद हो गया है उस की वास्तविकता यह है कि अल्लाह तआला ने सिर्फ चार चीज़ें हराम ठहराई हैं। इस में जो संशोधन या वृद्धि लोगों ने कर ली है वह असल दीन में संशोधन की हैसियत रखते हैं।

210. मुर्दार से अभिप्राय वह जानवर या परिन्दा है जिसे शरअी (इस्लाम के संवैधानिक) तरीक़े पर ज़बह न किया गया हो बल्कि जो अपनी स्वाभाविक मौत मरा हो। उस के हराम होने की मसलहत बिलकुल स्पष्ट है। जो जानवर स्वयं अपनी मौत मरता है उस का गोश्त, खून के शरीर में रह जाने के कारण अपवित्र और गन्दा होता है। और अच्छा स्वाभाव मुर्दार का गोश्त खाने से घृणा करता है। इस के अलावा मुर्दार का गोश्त ख़ाने में नुक़सान का भी अनुमान है। संभव है उस की मौत बीमारी के कारण हुई हो। तौरात में भी मुर्दार को हराम क़रार दिया गया था।

"जो अपनी मृत्यु से मर जाए उसे तुम न खाना" (व्यवस्थाविवरण 14:21)

211. खून के हराम होने की भी मसलहत बिलकुल स्पष्ट है। अर्थात उस का नजिस (अपवित्र) होना। मानव स्वभाव उस से घृणा करती है और खून पीना दरिन्दो की विशेषता है। इन्सान जैसी श्रेष्ट सृष्टि की शान के खिलाफ है। इस से इन्सान में दरिन्दगी के गुण पैदा हो सकते हैं और उस में नैतिक हानि के अलावा दूसरी तरह की हानियों की भी संभावना है।

अज्ञानता के पुजारी ऊँट वग़ैरा के शरीर में कोई तेज़ चीज़ भोंक देते और खून निकल पड़ता उस को पी लेते। इस से जानवर को भी बड़ी तकलीफ होती। अल्लाह तआला ने खून को हराम क़रार दे कर जानवर पर भी रहम फरमाया। तौरात में भी ख़ून को हराम क़रार दिया गया था।

"परन्तु तुम उस का लहू न खाना, उसे जल की तरह भूमि पर उंडेल देना" (व्यवस्थाविवरण 12:16)

212. सुअर एक नजिस (अपवित्र) जानवर है जिस का

सर्वाधिक प्रिय भोजन गंदगी और कूड़ा करकट है। पाकीज़ा तबिअत इस से नफरत करती है। इस के अलावा इस का गोश्त हानी कारक भी है।

आधुनिक चिकित्सा शास्त्र (Modern Medicine) के हिसाब से इस (सूअर) का खाना हर भू भाग में और विशेष रुप से गर्म देशों में अत्यंत हानिकारक है और वैज्ञानिक प्रयोग ने सिद्ध किया है कि सुअर का गोश्त खाने से एक विशेष प्रकार के कीड़े पैदा हो जाते हैं जो बड़े खतरनाक और जान लेवा होते हैं और नहीं कहा जा सकता कि आने वाले समय में इस से सम्बन्धित और क्या नये भेद सामने आऐंगे। विशेषज्ञों का यह कहना है कि सुअर का गोश्त हमेशा खाते रहने से ग़ैरत कम हो जाती हैं।

(इस्लाम में हलाल और हराम, पृष्ठ ६३, लेखक यूसुफ करज़ावी)

तौरात में भी सुअर को हराम ठहराया गया है ।

''और सुअर तुम्हारे लिए इस वजह से आपावित्र है कि इस के खुर चिरे हुए हैं परन्तु पागुर नहीं करता इस कारण यह तुम्हारे लिए अशुद्ध है। तुम न तो इन का मांस खाना और न इन की लोथ छूना । (व्यवस्थाविवरण 14:8)

213. अर्थात जिस जानवर को अल्लाह के सिवा किसी और के नाम पर ज़बह किया गया हो चाहे वह बुत हो, जिन्न हो, फरिश्ता हो या कोई बुज़ुर्ग इन्सान (महापुरुष) उस जानवर का खाना हराम है। शिर्क सबसे बड़ी बौद्धिक और आन्तरिक अपवित्रता है। और अल्लाह के सिवा किसी के लिए जो ज़बीहा नामज़द किया गया हो उस के हराम होने का कारण यही आन्तरिक अपवित्रता है।

''बुत परस्त अपने ज़बीहे पर लात, उज़्ज़ा इत्यादि बुतों के नाम लिया करते थे । यह अल्लाह को छोड़ कर ग़ैरों के लिए पूजा एवं श्रद्धा थी। इस के हराम होने का कारण दीनी है और इस से अभिप्राय तौहीद की सुरक्षा, अक़ीदों की पवित्रता तथा शिर्क एवं बुत परस्ती के चिन्हों एवं द्योतकों की मुखालफ़त है।

''अल्लाह तआला ने इन्सान की संरचना की। उस के लिए ज़मीन की सारी चीज़ें वशीभूत कर दीं और जानवर को भी उस के अधीन कर दिया । साथ ही साथ इन्सान के लाभ के लिए उस की जान लेना भी (हलाल) वैध कर दिया इस शर्त के साथ की ज़बह करते समय अल्लाह का नाम लिया जाये। अर्थात अल्लाह का नाम लेना इस बात को प्रकट करना है कि जान्दार सृष्टि को ज़बह करने का काम वह अल्लाह ही की इजाज़त से कर रहा है। परन्तु अगर वह ज़बह करते समय अल्लाह के सिवा किसी और का नाम लेता है तो इस इजाज़त को व्यवहारिक रुप से व्यर्थ कर देता है। इस लिए वह इसी योग्य है कि इस ज़बीहे का लाभ उठाने से उसे वंचित कर दिया जाए।

(इस्लाम में हलाल और हराम पृष्ठ 64 लेखक यूसुफ क़रज़ावी)

बाइबल में भी ग़ैरों के नाम पर किए गए ज़बीहे को खाने की मनाही है ।

214. अर्थात जो व्यक्ति वास्तव में मजबूर हो। जैसे भूख या बीमारी के कारण उस की जान को खतरा हो वह जान बचाने के लिऐ हराम चीज़ खा सकता है इस शर्त के साथ कि वह हराम चीज़ खाने की इच्छा न रखता हो और जिस हद तक मजबूरी हो उसी हद तक खाए। ऐसी सूरत में उस पर कोई गुनाह नहीं है ।

215. इशारा अहले-किताब की तरफ़ है कि जिस तरह मुश्रिकीन (बहुदेववादियों) ने कुछ चीज़े हराम ठहराई थी उसी तरह अहले-किताब भी हलाल को हराम और हराम को हलाल ठहरा रहे हैं और तौरात के आदेशों को छिपा रहे हैं।

स्पष्ट रहे की अहले किताब पर वास्तव में वही चीज़ें हराम क़रार दी गई थीं जो इब्राहीमी मिल्लत में हराम थीं । अलबत्ता बाद में यहूदियों पर उन की सरकशी के कारण कुछ चीज़ें हराम कर दी गई थी और उन्हें बता दिया गया था कि जब अन्तिम नबी नियुक्त होगा तो वह इन पाबन्दियों को खत्म कर देगा तुम्हारे लिए पाकीज़ा चीज़ें हलाल क़रार देगा। किन्तु यहूदियों ने तौरात की इन बातों को छिपाया।

216. यह संकेत यहूदियों के उन विद्वानों और ज्ञानियों की ओर है जो अल्लाह की किताब का ज्ञान रखने के बावजूद शरीअत के आदेशों पर पर्दा डालते रहे और अपनी कार्य शैली द्वारा वहमों अन्धविश्वास और बेजा पाबन्दियों का समर्थन करते रहे।

यह लोग मात्र अपनी दुनिया बनाने की खातिर सत्य को गोपनीय रख रहे हैं। परन्तु वास्तविकता यह है कि दीन बेच कर जो दुनिया यह हासिल कर रहे हैं वह आग है जिस से यह अपना पेट भर रहे हैं।

217. इशारा है उन मज़हबी पेशवाओं की तरफ जो लोगों का धार्मिक शोषण (Religious Exploitation) करने के बावजूद अपने आप को बड़ा पाकीज़ा श्रद्धेय ठहराते थे। उन के इन झूटे दावों के खंडन में कहा जा रहा है कि कियामत के दिन जब हक़ (सत्य) की कसौटी पर उन्हें परखा जाएगा तो वह हरगिज़ पाकीज़ा और श्रद्धेय नहीं ठहराए जा सकेंगे।

218.अर्थात जिस ढिटाई के साथ हिदायत के मुक़ाबले में गुमराही को वरीयता दे रहे हैं वह निस्संदेह आश्चर्यजनक है। क्यों कि इस से अन्दाज़ा होता है कि वे आग में जलने के लिए बिल्कुल तैयार हैं। ऐसी सूरत में उन के हौसले की ज़रुर वाहवाही करनी चाहिए।

तुम पर फ़र्ज़ (अनिवार्य) कर दिया गया है कि जब तुम में से किसी की मौत का वक्त आ जाए और वह अपने पीछे माल छोड़ रहा हो तो माँ बाप और नज़दीक के रिश्तेदारों के लिए मारुफ़ तरीक़े पर (सामान्य नियमानुसार) वसीयत कर जाए । यह हक़ है मुत्तक़ियों (अल्लाह से डरने वालों) पर।(अल-क़ुर्आन)

176. यह इस लिए कि अल्लाह ने किताब हक़ (सत्य) के साथ नाज़िल फ़रमाई।परन्तु जिन लोगों ने किताब में विभेद किया वे मुखालफत में बहुत दूर निकल गए।[219]

ذٰلِكَ بِأَنَّ اللّٰهَ نَزَّلَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ ۗ وَإِنَّ الَّذِينَ
اخْتَلَفُوا فِي الْكِتٰبِ لَفِي شِقَاقٍ بَعِيدٍ ﴿١٧٦﴾

177. नेकी [220] यह नहीं है कि तुम अपना रुख पुरब या पश्चिम की ओर कर लो। बल्कि नेकी यह है कि आदमी अल्लाह, आख़िरत के दिन फरिश्तों [221]अल्लाह की किताबों और नबियों पर ईमान लाए।[222] और अपना माल उस की मुहब्बत में रिशतेदारों, यतीमों, मिस्कीनों, मुसाफिरों और माँगने वालों पर [223] एवं गर्दनें छुड़ाने में ख़र्च करे।[224] नमाज़ क़ायम करे और ज़कात दे।[225] जब अहद (क़रार) करे तो उसे पूरा करे और तंगी एवं तकलीफ में और जंग के मौक़े पर साबित क़दम रहे।[226] यही लोग हैं जो सच्चे साबित हुए और यही लोग वास्तव में मुत्तक़ी (परहेज़गार)हैं।

لَيْسَ الْبِرَّ أَنْ تُوَلُّوا وُجُوهَكُمْ قِبَلَ الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ
وَلٰكِنَّ الْبِرَّ مَنْ آمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَالْمَلٰٓئِكَةِ وَالْكِتٰبِ
وَالنَّبِيِّينَ ۚ وَآتَى الْمَالَ عَلٰى حُبِّهِ ذَوِي الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى
وَالْمَسٰكِينَ وَابْنَ السَّبِيلِ وَالسَّآئِلِينَ وَفِي الرِّقَابِ ۚ
وَأَقَامَ الصَّلٰوةَ وَآتَى الزَّكٰوةَ ۚ وَالْمُوفُونَ بِعَهْدِهِمْ إِذَا
عٰهَدُوا ۚ وَالصّٰبِرِينَ فِي الْبَأْسَآءِ وَالضَّرَّآءِ وَحِينَ
الْبَأْسِ ۗ أُولٰٓئِكَ الَّذِينَ صَدَقُوا ۖ وَأُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُتَّقُونَ ﴿١٧٧﴾

178. ऐ ईमान वालों !मक़्तूलों (जिन का क़त्ल किया गया) उन के बारे में तुम्हें क़िसास (ख़ून का बदला लेने में बराबरी)का हुक्म दिया गया है। [227] आज़ाद के बदले आज़ाद, ग़ुलाम के बदले ग़ुलाम और औरत के बदले औरत।[228] अल्बत्ता क़ातिल को उस के भाई की तरफ से कुछ रिआयत मिल जाए [229] तो सामान्य एवं भला तरीक़ा अपनाना चाहिए और ख़ूबी के साथ (ख़ून बहा अर्थात अर्थ-दण्ड) अदा करना चाहिए।[230] यह तुम्हारे रब की तरफ से छूट और रहमत है।इस के बाद भी जो ज़्यादती करे उस के लिए दर्दनाक अज़ाब (दुख़दायिनी यातना) है।

يٰٓأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِصَاصُ فِي الْقَتْلٰى ۖ الْحُرُّ
بِالْحُرِّ وَالْعَبْدُ بِالْعَبْدِ وَالْأُنْثٰى بِالْأُنْثٰى ۚ فَمَنْ عُفِيَ لَهُ مِنْ أَخِيهِ
شَيْءٌ فَاتِّبَاعٌ بِالْمَعْرُوفِ وَأَدَآءٌ إِلَيْهِ بِإِحْسٰنٍ ۗ ذٰلِكَ تَخْفِيفٌ مِنْ
رَبِّكُمْ وَرَحْمَةٌ ۗ فَمَنِ اعْتَدٰى بَعْدَ ذٰلِكَ فَلَهُ عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿١٧٨﴾

179. और ऐ अक़्ल वालो ! तुम्हारे लिए क़िसास (हत्यादण्ड) में ज़िन्दगी है [231](और इस लिए इस का हुक्म दिया गया है) ताकि तुम (अल्लाह की हद अथवा विधान के उल्लंगन से) बचो।

وَلَكُمْ فِي الْقِصَاصِ حَيٰوةٌ يٰٓأُولِي الْأَلْبٰبِ
لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ﴿١٧٩﴾

180. तुम पर फर्ज़ (अनिवार्य) कर दिया गया है कि जब तुम में से किसी की मौत का वक्त आ जाए और वह अपने पीछे माल छोड़ रहा हो तो माँ बाप और नज़दीक के रिश्तेदारों के लिए मारुफ़ तरीक़े [232] पर (सामान्य नियमानुसार) वसीयत कर जाए ।[233] यह हक़ है मुत्तक़ियों (अल्लाह से डरने वालों) पर।

كُتِبَ عَلَيْكُمْ إِذَا حَضَرَ أَحَدَكُمُ الْمَوْتُ إِنْ تَرَكَ خَيْرًا ۖ الْوَصِيَّةُ
لِلْوٰلِدَيْنِ وَالْأَقْرَبِينَ بِالْمَعْرُوفِ ۖ حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِينَ ﴿١٨٠﴾

219. मतलब यह कि अहले-किताब (यहूदियों और ईसाईयों) ने अल्लाह के दीन में तरह तरह के विभेद पैदा कर दिए थे जिस के कारण लोगों को यह मालूम करना अत्यन्त कठिन हो गया था कि हलाल क्या है और हराम क्या! अल्लाह तआला ने क़ुर्आन को हक़ (सत्य) के अर्थात् उन के मतभेदों का निर्णायक बना कर नाज़िल किया ताकि अल्लाह की शरीअत अपनी सही और संपूर्ण रुप में लोगों के सामने आए। इस के बाद भी जो लोग मतभेद अथवा विभेद कर रहे हैं वे मात्र मुख़ालफत के कारण ऐसा कर रहे हैं ।

220. यह यहूदियों और ईसाईयों के दिखावेपन पर सांकेतिक आलोचना है, जिनहोंने दीन की असल रुह खो दी थी और शरीअत को कुछ रस्मों तथा दिखावेपन का संग्रह बना कर रख दिया था। इसी लिए पूरब या पश्चिम की ओर मुँह करने ही को वे असल दीनदारी समझ बैठे थे। क़ुर्आन यहाँ दीन की वास्तविकता को बेनक़ाब कर रहा है कि खुलूस शुद्धहृदयता के साथ एक ख़ुदा की बन्दगी एवं अनुपालन तथा ऐसे आचरण एवं व्यवहार जिन से, हिम्मत, साहस एवं बुलन्दी टपके दीन में असल अहमियत रखने वाली चीज़ें हैं जिनको व्यवहार में लाए बग़ैर आदमी दीन की वास्तविकता को नहीं पा सकता। दीन के मामले में दिखावेपन का रवैय्या अल्लाह के यहाँ कोई वज़न नहीं रखता और ख़ुदा परस्ती का दावा बिलकुल अर्थहीन है, यदि उस के पीछे अल्लाह के साथ सच्ची वफादारी और उस की शरीअत की पूरे ख़ुलूस के साथ पैरवी का जज़्बा न हो। Text में ''बिर्र'' का शब्द प्रयोग हुआ है जिसका सही अर्थ हक़ (सत्य) से वफ़ादारी बरतने के हैं और इस के व्यापक भावार्थ (Broad Sence) में ख़ुदा और बन्दों के अधिकारों की अदायगी एवं हर प्रकार की नेकियाँ और भलाइयाँ शामिल हैं।

221. अल्लाह तआला अपने नबियों पर वह्य फरिशतों द्वारा भेजता है। फ़रिश्ते जो अतयन्त पवित्र हस्तियाँ हैं वह्य की अमानत बिना कमी बेशी के नबियों तक पहुँचाते हैं । यह काम स्वयं अल्लाह तआला की देख रेख में अन्जाम पाता है। इस लिए इस में उन की तरफ से किसी भूल चूक की संभावना नहीं है और न शैतान उन के इस काम में हस्तक्षेप कर सकते हैं। फ़रिश्ते अल्लाह की वह्य पहुँचाने का अत्यन्त विश्वास्नीय माध्यम हैं इस लिए उन पर ईमान लाना ज़रुरी है।

222. ईमान से मुराद वास्तविक ईमान है। क्योंकि वास्तविक ईमान ही के द्वारा आदमी अल्लाह का वफ़ादार बन्दा साबित हो सकता है।

223. अर्थात वे लोग जो सहायता के लिए सवाल करें।

224. गर्दनों से अभिप्रय ग़ुलामों की गर्दने हैं। उन को ग़ुलामी के बन्धन से आज़ाद करना बहुत बड़ी नेकी है। इस से स्पष्ट है कि इस्लाम के नज़्दीक आज़ाद को ग़ुलाम बनाना नेकी नहीं है। बल्कि जो लोग ग़ुलामी की ज़ंजीरों में जकड़े हुए हैं उन को आज़ाद करना नेकी है। अगर इस में कोई अपवाद की बात इस्लाम ने कही तो वह सिर्फ जंग की हद तक थी।

इस्लाम ग़ुलामी के रिवाज को समाप्त करना चाहता था और यह अच्छा ही हुआ कि अब इस का रिवाज बाकी नहीं रहा। मगर यह बात बेगुनाह क़ैदियों पर लागू की जा सकती है और ऐसे लोगों की रिहाई के लिए जुर्माना इत्यादि अदा किया जा सकता है कि यह गर्दन छुड़ाने जैसी ही नेकी है।

225. इन्फ़ाक़ (अल्लाह की राह में ख़र्च करना) और ज़कात दोनों का वर्णन एक ही आयत में हुआ है जिस में इस बात का प्रोत्साहन है कि मिस्कीनों वगैरा पर इन्फ़ाक़ करते रहना चाहिए यह सोचे बग़ैर कि उस पर ज़कात का फ़रीज़ा (अनिवार्यकर्तव्य) लागू होता है या नहीं और लागू होने की सूरत में उस की (ज़कात की) अदायगी के बावजूद इन्फ़ाक़ का सिलसिला जारी रखना चाहिए। ज़कात तो कम से कम डिमान्ड (Demand) है जो इस्लाम एक मुसलमान से करता है। इस के अलावा भी उसे ग़रीबों और ज़रुरतमंदो पर खर्च करते रहना चाहिए और इस उदारता के बग़ैर आदमी नेकी के मक़ाम को हासिल नहीं कर सकता।

226. यहाँ सब्र के तीन अवसर बयान किये गए हैं । एक तंगी में जिससे मुराद ग़रीबी की वह हालत है जिस में आदमी खाना भी नहीं हासिल कर पाता, दुसरे तकलीफ में जिससे बीमारी और शरीरिक पीड़ा तात्पर्य है,तीसरे जंग के समय। ये तीन अवसर मनुष्य का साहस और उस के जीवन शैली की परिक्षा के लिए बड़ा महत्व रखते हैं। जो व्यक्ति ऐसी दशाओं में सत्य पर जमा रहा वह नेकी के उच्च स्थान पर निश्चित पहुँचा।

227. क़िसास का मतलब यह है कि मुजरिम के साथ वही मामला किया जाये जिस का अपराधी वह हुआ है। हत्यारे के लिए क़िसास का असल क़ानून जान के बदले जान है परन्तु अल्लाह तआला ने इस में यह रिआयत रखी है कि अगर मक़्तूल के उत्तराधिकारी चाहे तो जान के बदले ख़ून बहा (अर्थदण्ड) भी ले सकते हैं।

क़िसास के हुक्म का संबोधन पूरे इस्लामी समाज से है इस लिए क़ातिल (हत्यारे) को सज़ा देने की ज़िम्मेदारी पूरे इस्लामी समाज पर लागू होती है। अलबत्ता चूँकि हुकूमत समाज का प्रतिनिधित्व करती है इस लिए इस क़ानून को लागू करने की ज़िम्मेदारी इस्लामी हुकूमत पर आती है और इस के लागू होने की शकल यह होगी कि हुकूमत मक़्तूल के उत्तराधिकारी को अधिकार देगी कि वे चाहे तो क़ातिल को क़त्ल की सज़ा दी जाए या चाहे तो उस से अर्थदण्ड (ख़ून बहा) स्वीकार कर लें।

मक़्तूल के उत्तराधिकारियों को यह जो अधिकार दिया गया है वह अत्यंत नीति पूर्ण (हाकीमाना) है। इस से उन के दिलों के ज़ख़्म भर सकते हैं एवं खून बहा के द्वारा उन की बड़ी मदद हो जाती है। ख़ून बहा (अर्थ-दंड) का मूल्य नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने एक सौ ऊँट निर्धारित की थी जिस की क़ीमत आज के हिसाब से तीन लाख रुपये से अधिक होती है।

228. अर्थात क़िसास में पूरी तरह से बराबरी का ख़्याल रखना चाहिए। अगर क़ातिल आज़ाद है, या ग़ुलाम है या औरत है तो उसी को क़त्ल कर दिया जाएगा और जाहिलिय्यत का वह तरीक़ा नहीं अपनाया जाएगा जो अरब वासियों में प्रचलित था कि अगर हत्यारा प्रतिष्ठित अथवा सम्मान जनक परिवार से सम्बन्ध रखता है तो उस के उत्तरधिकारी अपने एक आदमी का बदला क़ातिल के परिवार के कई आदमियों से लेते या अगर क़ातिल औरत होती तो उस के परिवार के किसी मर्द को क़त्ल करना चाहते या अगर क़ातिल ग़ुलाम होता तो आज़ाद को क़त्ल करने पर तुल जाते। इस्लाम ने इस असमानता को समाप्त कर दिया । यहूदियों ने भी अच्छे और बुरे तथा इस्राईली और ग़ैर इस्राईली के बीच फर्क क़ायम किय़ा था जिसे इस्लाम ने ग़लत ठहराया । इस्लाम ने समान्ता का यह विश्वव्यापी उसूल प्रस्तुत किया कि रंग, नस्ल और वंश के आधार पर क़िसास के मामले में फर्क नहीं बरतना चाहिए बल्कि मक़्तूल के बदले में क़ातिल और सिर्फ क़ातिल को मौत की सज़ा दी जानी चाहिए। अगर मुसलमान ने किसी ग़ैर मुस्लिम ज़िम्मी (इस्लामी राज्य के नागरिक) को क़त्ल किया है तो उन के बीच भी फर्क नहीं बरता जाएगा। बल्कि ग़ैरमुस्लिम जिम्मी के बदले उस मुसलमान क़ातिल को क़त्ल किया जाएगा । अत: अरबी की प्रमाणित टीका (तफ़्सीर) एहकामुल क़ुर्आन में अल्लामा जस्सास लिखते हैं :

‘‘ यह आयत इस बात पर दलालत करती है कि ग़ुलाम के बदले आज़ाद को (जो क़ातिल है) और जिम्मी (इस्लामी राज्य के ग़ैर मुस्लिम नागरिक) के बदले मुसलमान (क़ातिल) को और औरत के बदले मर्द (क़ातिल) को क़त्ल किया जाएगा।’’ (Vol.I Page. 156)

‘‘जैसा कि हम बयान कर चुके हैं आयत का जाहिरी भावार्थ ही यह है कि जिम्मी के बदले मुसलमान (क़ातिल) को क़त्ल करना अनिवार्य है क्यों कि आयत मुस्लिम और जिम्मी के बीच फर्क नहीं करती।’’ (Vol. I Page 163)

अल्लामा जस्सास ने अपनी तफ़्सीर में अब्दुर्रहमान बिन सलमानी से रिवायत नकल की है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने जिम्मी के बदले मुसलमान (क़ातिल) से क़िसास लिया। इसी लिए हज़रत अली का यह क़ौल (कथन) नकल किया है कि हमारा खून उन के खून की तरह है और हमारी दियत (अर्थदण्ड) उन की दियत (अर्थदण्ड) के बराबर है ।

(Vol. I Page 164-165)

229. भाई से मुराद इन्सानी भाई है। यह ऐसी सुन्दर एवं सूक्ष्म शैली है जिस में नर्मी बरतने के लिए इन्सानियत के जज़्बात से अपील की गई है।

230. अर्थात् यदि मक़्तूल के उत्तराधिकारी क़ातिल के साथ नर्मी बरतने और अर्थदण्ड लेने के लिए तैयार हो जाऐं तो क़ातिल का कर्तब्य है कि वह अर्थदण्ड (Blood Money) की अदायगी सामान्य एवं भले तरीक़े पर करे। और इस सिलसिले में अच्छे आचरण एवं व्यवहार का परिचय दे।

231. जो व्यक्ति किसी को नाहक़ (अकारण) क़त्ल करता है वह गोया इन्सानियत को क़त्ल करता है। इस लिए समाज की यह ज़िम्मेदारी है कि वह क़िसास (हत्यादण्ड) के द्वारा मानव जीवन की सुरक्षा का सामना करे। अगर बेजा नर्मी से काम ले कर क़िसास के क़ानून को निलम्बित किया गया तो मुजरिमों का साहस बढ़ेगा और समाज शान्त एवं सुरक्षित नहीं रह सकेगा।

मौजूदा ज़माने में भी यह बहस चल पड़ी है कि क़ातिल को मौत की सज़ा देना सही है या नही? और कई देशो ने इसे हटा भी दिया है। किन्तु ज़ाहिर है कि अगर यह सज़ा हटा दी जाये तो मुजरिमों के हौसले और बढ़ जाएंगे और अपराध में वृद्धि ही होगी। इस लिए जब तक मुजरिमों को इबरतनाक सजाऐं नहीं दी जातीं समाज में शान्ति व्यवस्था एवं सुधार और भलाई की सूरत पैदा नहीं हो सकती। अगर समाज के स्वास्थ को दुरुस्त रखने के लिए उस के विकृत अंग का आप्रेशन करना पड़े तो उसे नीति की माँग एवं अति आवश्यक समझना चाहिए।

232.Text में मारुफ़ का शब्द प्रयोग हुआ है जिस शब्दिक अर्थ जानी पहचानी बात या जाने पहचाने तरीक़े के हैं। अर्थात ऐसा तरीक़ा जो इन्साफ पर आधारित हो। जिसे बुद्धि सही स्वीकार करे और जो सोसाईटी के शरीफ़ लोगों में प्रचलित हो। इस्लाम ने बहुत सी क़ानूनी छोटी छोटी और मोटी मोटी बातों को मारुफ पर छोड़ दिया है। अत: मारुफ़ ऐसे तमाम मामलों में उचित और विश्वास्नीय है जिन के बारे में शरिअत ने कोई निश्चित नियम निर्धारित न किया हो ।

233. वसीयत (Will) उस सूरत में फ़र्ज (अनिवार्य) कर दी गई है जब की आदमी को अपनी मौत क़रीब नज़र आ रही हो और वह अपने पीछे माल छोड़ रहा हो। वसीयत का यह हुक्म विरासत (संपत्ति) के एहकाम नाज़िल होने से पहले दिया गाया था। इस के बाद अल्लाह तआला ने सूरह निसा में मीरास (INHERITENCE) के आदेश सविस्तार बयान फरमा दिये और उन्हें अपनी तरफ से ‘वसीयत’ कहा जैसा कि सूरह निसा

की आयत 11 में इर्शाद हुआ है يوصيكم الله فی اولادکم ۔ ''अल्लाह तुम्हारी औलाद के बारे में वसीयत करता है'' इस लिए अल्लाह की वसीयत (संपत्ति से संबन्धित आदेश) के बाद वसीयत के इस हुक्म की सीमा जो इस (वर्णित) आयत में दी गई है सीमित हो गई। अर्थात जिन के हिस्से अल्लाह तआला ने निश्चित कर दिए हैं उन उत्तराधिकारियों के हक़ में वसीयत का सवाल बाकी नहीं रहा। अत:हदीस में आता है,

اِنَّ اللّٰهَ قَدْ اَعْطٰى كُلَّ ذِىْ حَقٍّ حَقَّهٗ فَلَا وَصِيَّةَ لِوَارِثٍ ۔

'' अल्लाह तआला ने हर हक़दार को उस का हक़ दे दिया है अत:वारिस के पक्ष में वसीयत जायज़ नहीं।'' (इब्ने कसीर जिल्द १ पृष्ट २११)

अल्बत्ता उन रिश्तेदारों के पक्ष में जिन को हिस्सा न मिल सकता हो और वह ज़रुरतमन्द भी हों वसीयत करना ज़रुरी है। मिसाल के तौर पर यतीम पोते के हक़ में वसीयत करना। इसी तरह से अगर किसी के माँ बाप मुसलमान न हों और इसी कारण वह उत्तराधिकारी न हो सकते हों तो उन के लिए वसीयत करना। ध्यान रहे कि इस्लाम में वसीयत सिर्फ १/३ की हद तक जायज़ है।

181. फिर जो लोग वसीयत को सुनने के बाद बदल डालें तो इस का गुनाह बदल डालने वालों ही पर होगा। अल्लाह सब कुछ सुनने वाला और जानने वाला है।

فَمَنْۢ بَدَّلَهٗ بَعْدَ مَا سَمِعَهٗ فَاِنَّمَآ اِثْمُهٗ عَلَى الَّذِيْنَ
يُبَدِّلُوْنَهٗ ؕ اِنَّ اللّٰهَ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ؕ ﴿١٨١﴾

182. अल्बत्ता जिस को वसीयत करने वाले की तरफ से पक्षपात या गुनाह (हक़ मार लेने) की आशंका हो और वह उन के बीच मुसालहत करा दे तो उस पर कुछ गुनाह नहीं।[234] निस्संदेह अल्लाह क्षमाशील और दयावान है।

فَمَنْ خَافَ مِنْ مُّوْصٍ جَنَفًا اَوْ اِثْمًا فَاَصْلَحَ بَيْنَهُمْ
فَلَآ اِثْمَ عَلَيْهِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿١٨٢﴾

183. ऐ ईमान वालो ! तुम पर रोज़े फ़र्ज़ (अनिवार्य) किए गए [235] जिस तरह तुम से पहले के लोगों पर फ़र्ज़ (अनिवार्य) किए गए थे [236] ताकि तुम मुत्तक़ी (परहेज़गार) बनो।[237]

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ كَمَا كُتِبَ
عَلَى الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُوْنَ ﴿١٨٣﴾

184. गिनती के कुछ दिन हैं।[238]और जो व्यक्ति मरीज़ हो या सफ़र [239] में हो तो दुसरे दिनों में ये तादाद पूरी कर ले और जिन लोगों के लिए रोज़ा रखना दुश्वार हो वह एक मिस्कीन का खाना फ़िदयः (मुक्ति प्रतिदान) में दे दें [240]।फिर जो कोई अपनी खुशी से कुछ और भलाई करे तो यह उस के हक़ में बेहतर है।[241] और तुम्हारा रोज़ा रखना ही तुम्हारे लिए बेहतर है अगर तुम समझो।[242]

اَيَّامًا مَّعْدُوْدٰتٍ ؕ فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَّرِيْضًا اَوْ عَلٰى سَفَرٍ
فَعِدَّةٌ مِّنْ اَيَّامٍ اُخَرَ ؕ وَعَلَى الَّذِيْنَ يُطِيْقُوْنَهٗ فِدْيَةٌ
طَعَامُ مِسْكِيْنٍ ؕ فَمَنْ تَطَوَّعَ خَيْرًا فَهُوَ خَيْرٌ لَّهٗ ؕ وَاَنْ تَصُوْمُوْا
خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ﴿١٨٤﴾

185. रमज़ान का महीना [243] जिस में क़ुर्आन नाज़िल किया गया,वह इन्सानों के लिए हिदायत है [244] और ऐसे तर्कों पर आधारित है जो हिदायत की राह को स्पष्ट करने वाले और हक़ और बातिल का फ़र्क़ खोल कर रख देने वाले हैं। लिहाज़ा तुम में से जो कोई इस महीने को पाये वह इस के रोज़े रखे। और जो बीमार हो या सफर में हो वह दूसरे दिनो में तादाद पूरी कर ले। अल्लाह तुम्हारे लिए आसानी चाहता है, सख़्ती नहीं चाहता [245]। और ताकि तुम (रोज़ों की)तादाद पूरी कर लो और उस की बड़ाई बयान करो [246] इस बात पर कि उस ने तुम्हें हिदायत प्रदान की, और ताकि तुम शुक्रगुज़ार (कृतज्ञ) बनो।

شَهْرُ رَمَضَانَ الَّذِيْۤ اُنْزِلَ فِيْهِ الْقُرْاٰنُ هُدًى لِّلنَّاسِ
وَبَيِّنٰتٍ مِّنَ الْهُدٰى وَالْفُرْقَانِ ۚ فَمَنْ شَهِدَ مِنْكُمُ الشَّهْرَ
فَلْيَصُمْهُ ؕ وَمَنْ كَانَ مَرِيْضًا اَوْ عَلٰى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِّنْ اَيَّامٍ اُخَرَ ؕ
يُرِيْدُ اللّٰهُ بِكُمُ الْيُسْرَ وَلَا يُرِيْدُ بِكُمُ الْعُسْرَ ۫ وَلِتُكْمِلُوا الْعِدَّةَ
وَلِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ عَلٰى مَا هَدٰىكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ﴿١٨٥﴾

234. इस से पहले की आयत में वसीयत में परिवर्तन करने की सख़्त मनाही की गई थी। इस आयत में स्पष्ट किया गया है कि परिवर्तन की मनाही इस सूरत में नहीं है जब कि वसीयत करने वाले (TESTATOR) के बारे में महसूस हो कि उस ने पक्षपात से काम लिया है या वसीयत गुनाह और हक़ तल्फ़ी (हक़ मार लेने) पर आधारित है। ऐसी सूरत में अगर मौक़ा हो तो वसीयत करने वाले को समझाया जा सकता है वर्ना दुसरी सूरत में सुलह कराई जा सकती है।

स्पष्ट रहे कि अगर वसीयत किसी ऐसी चीज़ के लिए की गई हो जो गुनाह का काम है जैसे इस्लाम के विरुद्ध विचारों के प्रोपैगेन्डे के लिए की गई हो तो ऐसी वसीयत क्रियान्वित नहीं होगी अर्थात उस पर अमल नहीं किया जाएगा। अल्लामा क़रतबी कहते हैं, ''इस बारे में कोई मतभेद नहीं है कि अगर किसी ऐसी चीज़ की वसीयत की गई हो जो नाजायज़ (अवैध) है जैसे शराब, सुअर या किसी और गुनाह की चीज़ की तो उस को परिवर्तन करना जायज़ है।''(फ़त्हुलक़दीर - शोकानी (Vol 1 Page 178)

इस्लाम के इस उसूल का लिहाज़ मौजूदा मोहम्मडन लॉ (MOHAMMADAN LAW) में एक हद तक मौजूद है। देखिये (INVALID TO BENIFIT AN OBJECT OPPOSED TO ISLAM AS A RELIGION) (Tayabji on Muslim Law p. 759)

235. सौम (रोज़ा) शरीअत की परिभाषा में फ़जर (अरुणोदय) से सूरज डूबने तक खाने पीने और संभोग से रुक जाने का नाम है।रोज़ा कोई ब्रत नहीं है जिस में फल खाने या रस पीने की इजाज़त हो। बल्कि रोज़ा ऐसी इबादत है जिस में खाने पीने से पूरी तरह बचना ज़रुरी है। यहाँ तक कि अगर पानी का एक घूँट भी हलक़ में उतार दिया जाए तो रोज़ा बाक़ी नहीं रहता। इस के अलावा इस्लाम में रोज़ा उसी का माना जाएगा जो मोमिन (ईमान वाला) हो और सिर्फ अल्लाह के लिए रोज़ा रखे। यदि कोई व्यक्ति ईमान लाए बग़ैर रोज़ा रखे तो वह मान्य नहीं है। इसी तरह भूख हड़ताल भी रोज़ा नहीं है।

रोज़ा का यह हुक्म सन् 2 हिजरी में नाज़िल हुआ। यह हर मुसलमान मर्द और औरत पर फर्ज़ (अनिवार्य) है और इस्लाम के पाँच स्तंभों में से एक है।

236. मतलब यह है कि रोज़ा पिछली उम्मतों पर भी फर्ज़ (अनिवार्य) किया गया था। यह एक ऐसी इबादत है जो आसमानी शरीअतों का एक महत्पूर्ण अंग रहा है। अत: पिछली किताबों में इस का वर्णन मिलता है। यद्यपि यह किताबें और रोज़े के आदेश अपने असली रुप में मौजूद नहीं हैं। हज़रत मूसा जब कोहे तूर पर अल्लाह तआला से मुलाक़ात के लिए गए तो उन्हों ने चालीस दिन की पूरी मुद्दत रोज़े में गुज़ार दी थी। तौरात में है :-

''मूसा तो वहाँ यहोवा के संग चालीस दिन और रात रहा, और तब तक न तो उस ने रोटी खाई और न पानी पिया।''(निर्गमन 34:28)

रोज़े की वास्तविकता यशायाह नबी की किताब में इस तरह बयान हुई है:-

''सुनो तुम्हारे उपवास का फल यह होता है कि तुम आपस में लड़ते और झगड़ते और दुष्टता से घूँसे मारते हो। जैसा उपवास तुम आज कल रखते हो उस से तुम्हारी प्रार्थना ऊपर नहीं सुनाई देगी। जिस उपवास से मैं प्रसन्न होता हूँ अर्थात् जिस में मनुष्य स्वयं को लीन करे, क्या तुम इस प्रकार करते हो ?(यशायाह 58:4,5)

और हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम ने रोज़े में ख़ुलूस (शुद्धहृदयता) और रब से लौ लगाने पर ज़ोर दिया :-

''जब तुम उपवास करो, तो कपटियों की तरह तुम्हारे मुँह पर उदासी न छाई रहे। क्यों कि वे अपना मुँह बनाए रहते हैं ताकि लोग उन्हें उपवासी जाने,मैं तुम से सच कहता हुँ कि वे अपना प्रतिफल पा चुके।'' (मत्ती 6:16)

237.यह है रोज़े का वास्तविक उद्देश्य, शरीअत की बुनियाद तक़्वा अर्थात् ख़ुदा का ख़ौफ और परहेज़गारी है। और तक़्वा अपने हृदय एवं अपनी इच्छाओं पर क़ाबू पाने से पैदा होता है और हृदय और इच्छाओं पर क़ाबू पाने की तरबियत रोज़े के द्वारा होती है।

मनुष्य मात्र भौतिक अस्तित्व नहीं रखता बल्कि रुहानी अस्तित्व भी रखता है। और उस की रुहानी शक्ति एवं उन्नति के लिए रोज़ा बेहतरीन तदबीर है। रोज़े से इन्सान पर इच्छाऐं और काम वासना की चाह कमज़ोर हो जाती है। उस में अपने मन को क़ाबू में रखने की सिफत पैदा हो जाती है। इन्सान की असल ताक़त उस का दिल और नफ़्स (मन) है और रोज़ा मन को शुद्ध एवं पाक करता है और इन्सान को ख़ुदा का फरमांबरदार (आज्ञाकारी) बना कर जीवन के संघर्ष के लिए तैयार करता है। इस्लाम में रोज़ा मात्र भूखे प्यासे रहने का नाम नहीं बल्कि अल्लाह के क़ानून और उस की बाँधी हुई सीमाओं की पासदारी तथा आज्ञापालन एवं समर्पण का एहसास पैदा करने के सामान है ।

238. अर्थात रोज़े की ज़िम्मेदारी तुम पर अधिक दिनों के लिए नहीं डाली गई हैं बल्कि साल भर में सिर्फ गिनती के कुछ दिन निश्चित कर दिए गए हैं । बाद वाली आयत में रमज़ान के रोज़ो के फर्ज होने की बात कही गई है जिस से मालूम हुआ कि गिनती के कुछ से तात्पर्य रमज़ान का महीना है।

239. सफ़र के लिए दूरी की कोई हदबन्दी क़ुर्आन और हदीस में नहीं की गई है। इस लिए जिस भी दूरी के सफ़र पर आदमी अपने को सफ़र की हालत में महसूस करे, रोज़ा छोड़ सकता है। बीमारी और सफर की हालत में रोज़ा रखना न रखना ऐच्छिक अथवा वैकल्पिक (Optional) है। अलबत्ता अगर रोग के बढ़ जाने की शंका हो तो रोज़ा नहीं रखना चाहिए।

240. मुराद बड़े बूढ़े,स्थाई रोगी, और बेहद कमज़ोर लोग हैं जिन के लिए रोज़ा रखना कष्ट में पड़ जाने का कारण हो और आगे चल कर क़ज़ा रोज़े रखने की आशा वह न कर सकते हों, ऐसे विवश लोगों के लिए यह छूट है कि वे एक रोज़ा के बदले एक मिस्कीन को खाना खिलाऐं खाना अवसत दर्जे का और उतनी मात्रा में हो जो सामान्य रुप से एक आदमी एक दिन में खाता है।

241.अर्थात कोई व्यक्ति एक रोज़े के फिदय:(मुक्ति प्रतिदान) में एक से अधिक मिस्कीनों को खिलाऐं तो बेहतर है ।

242. मतलब यह है कि जहाँ तक हो सके रोज़ा ही रखे क्यों कि यही बेहतर है । फिदय: की इजाज़त से मजबूरी ही की सूरत में फायदा उठाया जाए ।

243. महीने से अभिप्राय क़मरी (चाँद का) महीना है जो इस्लाम में मान्य एवं स्वीकृत है । रमज़ान क़मरी साल (Lunar Year) का नौवाँ महीना है।

244. क़ुर्आन के नाज़िल होने की शुरुआत रमज़ान में हुई। पहली वह्य (First Verses) जो ग़ारे-हिरा में आई वह रमज़ान के महीने की एक रात में नाज़िल हुई थी। क़ुर्आन सब से बड़ी नेमत है इस लिए कि वह दुनिया वालों की हिदायत के लिए नाज़िल हुआ है। इस महानतम नेमत की शुक्रगुज़ारी (कृतज्ञता) का तक़ाज़ा यह है कि इस महीने को रोज़े के लिए खास कर दिया जाए ताकि बन्दे अपने नफ़्स और इच्छाओं से आज़ाद हो कर अपने रब से अधिक से अधिक निकट हो सकें और अपने अमल (कर्मो) से यह साबित कर सकें कि खुदा और उस के हुक्म से बढ़ कर दुनिया की कोई चीज़ हम को प्यारी नहीं है। रमज़ान का महीना गोया तक़वा (परहेज़गारी) को विकसित करने एवं परवान चढ़ाने के लिए बहार के मौसम की हैसियत रखता है।

245. इस्लाम मनुष्य के स्वाभाव से मेल खाने और न्याय पर आधारित होने के कारण अत्यंत सरल चीज़ है। इस से नफ़्स को पाक करने और व्यक्ति के सुधार एवं तरबियत की पूरी पूरी तैयारी एवं पूरा लिहाज़ किया गया है। परन्तु उन परिश्रमों और नफ़्स को मारने के उन तरीक़ो से बिल्कुल परहेज़ किया गया है जिन को सन्यास में आस्था जताने वाले जोगी और सूफी सुझाव देते हैं और जो सामान्य मनुष्य के बस में नहीं होते।

246. अर्थात अल्लाह की बड़ाई को मान लो। इस का एहसास रोज़े की हालत में भी होना चाहिए और रोज़ा ख़त्म हो जाने पर ईद के अवसर पर भी। अत: ईद में तक्बीरों (अल्लाह की बड़ाई बयान करने) का जो प्रबन्ध किया जाता है वह इस हिदायत (निर्देश) के बिल्कूल अनुकूल है।

और तुम आपस में एक दूसरे का माल अवैध रुप से न खाओ और न उस को हुक्काम (अधिकारी व्यक्तियों) के आगे इस ध्येय से प्रस्तुत करो कि जानते बूझते दूसरों के माल का कोई हिस्सा हक़ मार कर खाने का तुम्हें मौक़ा मिले।(अल-क़ुर्आन)

186. और जब मेरे बन्दे मेरे बारे में तुम से पूछें तो (उन्हें बता दो कि) मैं उन के क़रीब हूँ ।[247] पुकारने वाला जब मुझे पुकारता है तो मैं उस की पुकार का जवाब देता हूँ ।[248] लिहाज़ा उन्हें चाहिए कि मेरी दअवत (पुकार) पर लब्बैक (मैं उपस्थित हूँ) कहें और मुझ पर ईमान लाऐं ताकि सीधा मार्ग पाऐं।

وَإِذَا سَأَلَكَ عِبَادِي عَنِّي فَإِنِّي قَرِيبٌ ۖ أُجِيبُ دَعْوَةَ
الدَّاعِ إِذَا دَعَانِ ۖ فَلْيَسْتَجِيبُوا لِي وَلْيُؤْمِنُوا بِي لَعَلَّهُمْ
يَرْشُدُونَ ﴿١٨٦﴾

187. तुम्हारे लिए रोज़े की रातों में अपनी बीवीयों के पास जाना जायज़ कर दिया गया है।वह तुम्हारे लिए लिबास हैं और तुम उन के लिए लिबास हो [249]। अल्लाह को मालूम हो गया कि तुम अपने आप से खियानत (बेवफाई) कर रहे थे तो उस ने तुम पर इनायत (कृपा) की और तुम को क्षमा कर दिया। अब तुम उन से इख्तिलात (समागम) करो [250] और अल्लाह ने तुम्हारे लिए जो मुक़द्दर (निश्चित) कर रखा है उसे प्राप्त करो [251]।और खाओ और पिओ यहाँ तक कि तुम को फज्र (अरुणोदय) की सफेद धारी रात की स्याह धारी से स्पष्ट नज़र आने लगे। [252] फिर रात तक रोज़ा पूरा करो। और जब तुम मस्जिदों में एतिकाफ़ में हो [253] तो उन से समागम न करो ।यह अल्लाह की (निर्धारित की हुई) सीमाऐं हैं, इन के पास न फटको [254]। इस तरह अल्लाह अपनी आयतें लोगों के लिए स्पष्ट करता है ताकि वे तक़वा (परहेज़गारी) अपनाऐं।

أُحِلَّ لَكُمْ لَيْلَةَ الصِّيَامِ الرَّفَثُ إِلَىٰ نِسَائِكُمْ ۚ هُنَّ
لِبَاسٌ لَّكُمْ وَأَنتُمْ لِبَاسٌ لَّهُنَّ ۗ عَلِمَ اللَّهُ أَنَّكُمْ كُنتُمْ
تَخْتَانُونَ أَنفُسَكُمْ فَتَابَ عَلَيْكُمْ وَعَفَا عَنكُمْ ۖ فَالْآنَ
بَاشِرُوهُنَّ وَابْتَغُوا مَا كَتَبَ اللَّهُ لَكُمْ ۚ وَكُلُوا وَاشْرَبُوا حَتَّىٰ
يَتَبَيَّنَ لَكُمُ الْخَيْطُ الْأَبْيَضُ مِنَ الْخَيْطِ الْأَسْوَدِ مِنَ الْفَجْرِ ۖ
ثُمَّ أَتِمُّوا الصِّيَامَ إِلَى اللَّيْلِ ۚ وَلَا تُبَاشِرُوهُنَّ وَأَنتُمْ
عَاكِفُونَ فِي الْمَسَاجِدِ ۗ تِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ فَلَا تَقْرَبُوهَا ۗ
كَذَٰلِكَ يُبَيِّنُ اللَّهُ آيَاتِهِ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ ﴿١٨٧﴾

188. और तुम आपस में एक दूसरे का माल अवैध रुप से न खाओ [255] और न उस को हुक्काम (अधिकारी व्यक्तियों) के आगे इस ध्येय से प्रस्तुत करो [256] कि जानते बूझते [257] दूसरों के माल का कोई हिस्सा हक़ मार कर खाने का तुम्हें मौक़ा मिले।

وَلَا تَأْكُلُوا أَمْوَالَكُم بَيْنَكُم بِالْبَاطِلِ وَتُدْلُوا بِهَا
إِلَى الْحُكَّامِ لِتَأْكُلُوا فَرِيقًا مِّنْ أَمْوَالِ النَّاسِ
بِالْإِثْمِ وَأَنتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿١٨٨﴾

189. वे तुम से हिलाल (नया चाँद) के बारे में पूछते हैं, [258] कहो यह लोगों के लिए तारीखों का निर्धारण और (ख़ास तौर से) हज्ज की तारीखों के निर्धारण का माध्यम है।और यह कोई नेकी नहीं है कि घरों में पीछे की तरफ से दाखिल हो बल्कि नेकी यह है कि आदमी तक़वा अपनाए,[259] घरो में तुम उन के दरवाज़ों से दाखिल हुआ करो, और अल्लाह से डरते रहो ताकि तुम फ़लाह (सफलता एवं मुक्ति) पाओ।

يَسْأَلُونَكَ عَنِ الْأَهِلَّةِ ۖ قُلْ هِيَ مَوَاقِيتُ لِلنَّاسِ
وَالْحَجِّ ۗ وَلَيْسَ الْبِرُّ بِأَن تَأْتُوا الْبُيُوتَ مِن
ظُهُورِهَا وَلَٰكِنَّ الْبِرَّ مَنِ اتَّقَىٰ ۗ وَأْتُوا الْبُيُوتَ
مِنْ أَبْوَابِهَا ۚ وَاتَّقُوا اللَّهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿١٨٩﴾

247. अर्थात यद्यपि बन्दे अल्लाह को देख नहीं सकते लेकिन वह यह ख़्याल न करें कि वह उन से दूर है। बल्कि वह अपने हर बन्दे से इतना क़रीब है कि बन्दा जब चाहे उस को पुकार सकता है और वह उस की पुकार को सुन लेता है और उस पर अपना निर्णय भी उतारता है। उस तक अपनी बात पहुँचाने के लिए, किसी माध्यम, किसी वसीले और सिफारिश की ज़रुरत नहीं है बल्कि हर बन्दा हर समय सीधे उस तक अपनी बात पहुँचा सकता है लिहाज़ा ज़रुरतों को पूरा करने और फ़रियाद की सुनवाई के लिए किसी देवी देवता या बुज़ुर्ग को पुकारने, उस का माध्यम एवं वसीला तलाश करने या बुतों का सहारा लेने की ज़रुरत नहीं है बल्कि अल्लाह तआला को जिस के सिवा कोई इलाह (पूज्य) नहीं है सीधे उसी को पुकारना चाहिए और अपनी तमाम ज़रुरतें उसी के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए।

248. जवाब देने से तात्पर्य यह है कि अल्लाह तआला दुआ क़ुबूल फरमाता है। बन्दा जब अपने रब से कोई चीज़ माँगता है और उस तरीक़े से माँगता है जिस तरीक़े से माँगना चाहिए तो वह चीज़ उस को ज़रुर दी जाती है, किन्तु, यह ज़रुरी नहीं कि वह चीज़ उसी वक़्त दी जाए और उसी रुप में दी जाए। अल्लाह अपने बन्दों के अच्छे बुरे से भली भाँति परिचित है इस लिए यदि उसे माँगी हुई चीज़ फ़ौरन नहीं मिलती तो बाद के लिए या आख़िरत के लिए सुरक्षित कर दी जाती है और एक रुप में नहीं तो दुसरे रुप में उसे मिल जाती है।

रोज़ा का बयान चल रहा था। बीच में दुआ का ज़िक्र हुआ जो इशारा है इस बात की तरफ कि रोज़दार रोज़ा की हालत में अल्लाह से क़रीब होता है और उस की दुआ स्वीकृति की मन्ज़िल तक पहुँच जाती है। इसी लिए हदीस में इफ़्तार (रोज़ा खोलने) के समय की दुआ को दुआ-ए-मुस्तजाब (क़ुबूल की हुई दुआ अथवा स्वीकृत प्रार्थना) कहा गया है।

249. अर्थात पति पत्नी के बीच चोली दामन का सम्बन्ध है। दोनों के सम्बन्ध के लिए लिबास की यंजना (इस्तिआरा) अत्यन्त अर्थपूर्ण है। लिबास शरीर को ढाँपता है उसी तरह पति पत्नी एक दूसरे के लिए संतोष एवं तृप्ति का सामान कर के शरीरिक अथवा यौन सम्बन्धि इच्छाओं को छुपा लेते या ढाँप लेते हैं। और उन्हें नग्न होने नहीं देते। लिबास इन्सान की शोभा है उसी तरह पति पत्नी दोनों एक दूसरे के लिए शोभा का सामान हैं। अगर दोनों के परस्पर सम्बन्ध एवं सम्पर्क न हो तो मनुष्य के जीवन में बनाव, श्रंगार, तहज़ीब और सलीक़ा पैदा नहीं हो सकेगा। लिबास मौसम की प्रचण्डता (सख़्तियों) से मनुष्य को सुरक्षित रखता है उसी तरह पती पत्नी एक दूसरे के आचरण एवं चरित्र को शैतान के हमलों से सुरक्षित रखते हैं।

इन मसलहतों के कारण वैवाहिक जीवन इस्लाम में प्रिय एवं अभीष्ट (मतलूब) है। इस के विरूद्ध सन्यास एवं ब्रहमचर्य का जीवन अप्रिय एवं अवैध है।

250. रोज़े के आरम्भिक आदेशों में यह सपष्ट रुप से नहीं बताया गया था कि रोज़े की रातों में पत्नियों से संभोग की अनुमति है या नहीं। चूँकि अहले-किताब (यहूदियों और ईसाईयों) के यहाँ रात्रिलीला पर पाबन्दी थी इस लिए यह मामला मुसलमानों के नज़दीक संदिग्ध था और कुछ लोग इसे संदिग्ध समझते हुए रात्रिलीला करते थे जो अपनी आत्मा के साथ एक तरह का धोका एवं विश्वास्घात था क्यों कि शरीअत का तक़ाज़ा यह है कि संदिग्ध चीज़ो के मामले में सावधानी बरती जाए किन्तु अल्लाह तआला ने इस से दरगुज़र फ़रमाया और स्पष्ट रुप से अनुमति दे दी कि रोज़े की रातों में अपनी पत्नियों से संभोग कर सकते हो।

251. अर्थात औलाद के इच्छुक बनो जो वैवाहिक जीवन का महत्वपूर्ण उद्देश्य है। इस से क़ुर्आन का मन्शा भली भाँति स्पष्ट होता है कि औलाद ऐसी चीज़ है जो प्रिय एवं अभीष्ट हैं। और इस से अल्लाह की मंशा यह है कि इन्सानी नस्ल बढ़े। अत: जो लोग इन्सानी नस्ल को घटाने के लिए बर्थ कंट्रोल का मूवमेन्ट चलाते हैं उन का यह मूवमेन्ट अल्लाह के मन्शा के विरुद्ध है। औरत का स्वास्थ खराब होने की विवशता पर निश्चय ही लोगों के लिए कुछ गर्भ निरोधक तरीक़े अपनाने की गुन्जाइश है किन्तु नसबन्दी जैसे तरीक़े अपनाने का प्रोत्साहन देना या बच्चों की तादाद को सीमित करने पर अड़ जाना और इस के लिए "अभी नहीं" एवं "कभी नहीं" जैसे नारे देना उन ही लोगों का काम है जो न प्रकृति की रहनुमाई को स्वीकार करते हैं और न आसमानी हिदायत को। बल्कि अपनी साइन्टिफ़िक गुमराही पर संतुष्ट होते हैं।

252. अहले-किताब के यहाँ रोज़े की रात को सो कर उठने के बाद खाने पीने की इजाज़त नहीं थी लेकिन इस्लाम ने न केवल इस की इजाज़त दी बल्कि सहरी (अरुणोदय से पहले भोजन) करने की ताकिद की।

253. एतिकाफ का मतलब यह है कि आदमी अपने आप को तमाम कामों से मुक्त कर के अल्लाह के ज़िक्र (अल्लाह की चर्चा) और उस की इबादत के लिए एकाग्रचित (यकसू) हो जाए। एतिकाफ करने वाले के लिए आवश्यक है कि वह रमज़ान के आख़िरी दस रोज़ मस्जिद में गुज़ारे। इस बीच पति पत्नी का सम्बन्ध स्थापित करने की अनुमति नहीं हैं।

254. अर्थात जहाँ से गुनाह, नाफ़रमानी, और क़ानून तोड़ने की हद शुरु होती हैं उस के क़रीब जाना भी आदमी के लिए खतरनाक हैं कि कहीं क़दम हद के बाहर न चला जाए।

इस लिए सलामती इसी में है कि आदमी गुनाह की सरहद से दूर ही रहे।

255. रोज़े के आदेश के फौरन बाद अवैध रुप से माल न खाने की हिदायत रोज़े की रुह (Spirit) को उजागर कर रही है। रोज़ा जायज़ और नाजायज़ में फर्क करना और अल्लाह की बाँधी हुई सीमाओं की पासदारी करना सिखाता है। अत: लोगों का माल अवैध रुप से खाना किसी ऐसे व्यक्ति का काम नहीं हो सकता जिसने रोज़े का यह असर क़ुबूल किया हो कि हलाल रोज़ी से रोज़ा निश्चित दिनों के लिए हैं लेकिन हराम रोज़ी से रोज़ा ज़िन्दगी भर के लिए है।

256. अर्थात दूसरे का माल हड़प करने या दूसरों की चीज़ों पर नाजायज़ कब्ज़ा करने के लिए रिश्वत को साधन न बनाओ । रिश्वत लोगों के अधिकारों को हनन करने या उस से वंचित करने का सब से बड़ा साधन है । इस की चाट जब क़ानून के रक्षकों को लग जाती है तो फिर अधिकारों की ज़मानत बाक़ी नहीं रहती। उसे पैसे के बल पर कोई भी खरीद सकता है। इसी लिए यह प्रसिद्ध है कि जिस समाज में रिश्वत आम हो जाती हैं, वहाँ हुक्काम (अधिकारी गण) बेईमान बन जाते हैं और लोगों को उन के वास्तविक अधिकार भी बिना रिश्वत दिये नहीं मिलते। इस लिए इस्लाम ने रिश्वत देना भी वर्जित (हराम) किया है और लेना भी। रिश्वत निवारण के लिए हुक्काम (अधिकारी गण) को भेंट देने और उन के लिए उसे स्वीकार करने की भी मनाही कर दी है ।

257. अर्थात तुम अच्छी तरह जानते हो कि रिश्वत एक बुराई,एक अधिकार हनन और गुनाह का काम हैं। बुद्धि भी इसे गुनाह स्वीकार करती हैं और दीन एवं शरीअत भी इसे गुनाह ठहराते हैं। इस लिए इस का गुनाह होना बिल्कुल स्पष्ट एवं प्रमाणित हैं। ऐसी खुली बुराई से तुम्हें ज़रुर बचना चाहिए।

258. यह सवाल चाँद के हर माह हिलाल (crescent) के रुप में आसमान पर प्रकट होने से सम्बन्धित था। किन्तु यह प्रश्न विज्ञान अथवा खूगोल विज्ञान से सम्बन्ध नहीं था बल्कि हिलाल अथवा बालचन्द्र (crescent) के सिलसिले में फैले हुए भ्रम एवं अन्धविश्वास (Superstition) के कारण इसी की मसलहत (औचित्य) जानना मक़सद था। इस लिए जवाब में दीनी और दुनियावी दोनों तरह की मसलहतें (औचित्य) स्पष्ट कर दी गईं। दुनियावी मसलहत यह है कि तारीखों के निर्धारण का साधन अथवा माध्यम है। आसमान पर हिलाल (New Moon) का प्रकट होना इस बात का स्पष्ट चिन्ह है कि नये महीने की शुरुआत हो गई है। अत: क़मरी साल (Lunar Year) की बुनियाद इस क़ुदरती कैलेन्डर (Natural Calender) पर है । और दीनी मसलहत यह है कि हज्ज की तारीख़ो का निर्धारण क़मरी माह ही पर आधारित एवं आश्रित है । इसी तरह तमाम दूसरे दीनी मामलों में क़मरी माह ही विश्वस्नीय एवं स्वीकृत हैं ।

259. हज्ज चूँकि इब्राहीम अलैहिस्सलाम के ज़माने से चला आ रहा है इस लिए लोग जाहिलिय्यत के ज़माने अर्थात हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नबी नियुक्त होने के पूर्व में भी हज्ज करते थे। किन्तु हज्ज की असल रुह (Actual Spirit) गायब हो गई थी और उस को रस्मों एवं बिदअतों का संग्रह बना कर रख दिया गया था। इस सिलसिले की एक बिदअत यह थी कि हज्ज का एहराम (हज्ज का विशेष वस्त्र) बाँध लेने के बाद अगर किसी को अपने घर में दाख़िल होने की ज़रुरत पेश आती या वह जब हज्ज कर के वापस आ जाता तो मकान के पिछवाड़े से दीवार फाँद कर घर में दाखिल हो जाता। यह उन का मात्र अन्धविश्वास था। इस लिए क़ुर्आन ने इस वहम अथवा अन्धविश्वास एवं बिदअत को समाप्त करने का हुक्म दिया और हिदायत की कि घरों में उन के दरवाज़ो से दाख़िल हुआ करो । साथ ही साथ यह भी स्पष्ट किया कि नेकी भ्रमों अन्धविश्वासों और रस्मों के माध्यम से नहीं प्राप्त की जा सकती बल्कि नेकी वास्तव में ख़ुदा का खौफ़ रखने और अल्लाह की बाँधी हुई सीमा की पासदारी से प्राप्त होती है जिस का नाम ''तक़वा'' है।

और अल्लाह की राह में उन लोगों से लड़ो जो तुम से लड़ते हैं, मगर ज़्यादती न करो। अल्लाह ज़्यादती करने वालों को पसन्द नहीं करता।(अल-क़ुर्आन)

190. और अल्लाह की राह में उन लोगों से लड़ो जो तुम से लड़ते हैं,[260] मगर ज़्यादती न करो[261] ।अल्लाह ज़्यादती करने वालों को पसन्द नहीं करता ।

وَقَاتِلُوْا فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ الَّذِيْنَ
يُقَاتِلُوْنَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوْا ؕ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ
الْمُعْتَدِيْنَ ﴿۱۹۰﴾

191. और उन को जहाँ कहीं पाओ क़त्ल करो[262] और उन को वहाँ से निकालो जहाँ से उन्हों ने तुम को निकाला है (इसलिए)कि फ़ितना क़त्ल से भी बढ़ कर है।[263] और मस्जिदे-हराम के पास उन से न लड़ो[264] जब तक कि वे तुम से वहाँ न लड़ें, हाँ अगर वे तुम से लड़ें तो उन्हें क़त्ल करो कि ऐसे काफ़िरों की यही सज़ा है।

وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوْهُمْ وَاَخْرِجُوْهُمْ مِّنْ حَيْثُ
اَخْرَجُوْكُمْ وَالْفِتْنَةُ اَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ ۚ وَلَا تُقٰتِلُوْهُمْ
عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتّٰى يُقٰتِلُوْكُمْ فِيْهِ ۚ فَاِنْ
قٰتَلُوْكُمْ فَاقْتُلُوْهُمْ ؕ كَذٰلِكَ جَزَآءُ الْكٰفِرِيْنَ ﴿۱۹۱﴾

192. फिर यदि वे बाज़ आ जाऐं[265] तो अल्लाह क्षमा कर देने वाला रहम फरमाने वाला है ।

فَاِنِ انْتَهَوْا فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿۱۹۲﴾

193. और उन से लड़ो[266] यहाँ तक कि फ़ितना बाक़ी न रहे और दीन अल्लाह ही का हो जाये[267] और यदि वे बाज़ आ जाऐं तो ज़ालिमों के सिवा किसी के खिलाफ क़दम उठाना उचित नहीं।[268]

وَقٰتِلُوْهُمْ حَتّٰى لَا تَكُوْنَ فِتْنَةٌ وَّيَكُوْنَ الدِّيْنُ
لِلّٰهِ ؕ فَاِنِ انْتَهَوْا فَلَا عُدْوَانَ اِلَّا عَلَى الظّٰلِمِيْنَ ﴿۱۹۳﴾

194. हराम (प्रतिष्ठित) महीनों (में जंग की मनाही) इसी सूरत में है[269] जब कि वे भी हराम (प्रतिष्ठित) महीनों की प्रतिष्ठा का लिहाज़ रखें।[270] और प्रतिष्ठाओं (हुर्मतों) के मामले में बराबरी का लिहाज़ किया जाएगा[271] अतः जो तुम पर ज़्यादती करे तुम भी उस की ज़्यादती का जवाब उसी के बराबर दो। और अल्लाह से डरो और यह जान लो कि अल्लाह उन ही लोगों के साथ है जो उस से डरते रहते हैं।

اَلشَّهْرُ الْحَرَامُ بِالشَّهْرِ الْحَرَامِ وَالْحُرُمٰتُ قِصَاصٌ ؕ فَمَنِ
اعْتَدٰى عَلَيْكُمْ فَاعْتَدُوْا عَلَيْهِ بِمِثْلِ مَا اعْتَدٰى عَلَيْكُمْ ۪
وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِيْنَ ﴿۱۹۴﴾

195. और अल्लाह ही की राह में खर्च करो[272] और अपने हाथों अपने को तबाही में मत डालो[273] और (अल्लाह की राह में ख़र्च करने के)यह काम उत्तम ढंग से करो कि अल्लाह उत्तमता के साथ काम करने वालों को पसन्द करता है।

وَاَنْفِقُوْا فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَلَا تُلْقُوْا بِاَيْدِيْكُمْ اِلَى التَّهْلُكَةِ ۛ
وَاَحْسِنُوْا ۛ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ﴿۱۹۵﴾

260. इस आयत में ईमान वालों को अपनी रक्षा के लिए जंग करने की अनुमति दी गई है, इस की पृष्ठ भूमि को समझना ज़रुरी है। मक्का के मुश्रिकीन (बहुदेववादी) अक़ीदे की आज़ादी, ज़मीर की आज़ादी और तब्लीग (प्रचार) की आज़ादी के क़ायल नहीं थे। वहाँ क़बाइली व्यवस्था प्रचलित थी और क़बीले के किसी व्यक्ति को अपने क़बीले के धर्म को छोड़ कर इस्लाम में दाखिल होने की इजाज़त नहीं थी। जो लोग इस बंदिश को तोड़ कर इस्लाम स्वीकार कर रहे थे उन पर अत्याचार तोड़े जा रहे थे और उन से यह माँग की जा रही थी कि वे उस बहुदेववादी धर्म में लौट आऐं जो अरब समाज का धर्म है यहाँ तक कि उन को अपना घर बार छोड़ देने और अपने प्रिय देश मक्का से निकलने के लिए विवश कर दिया गया। और जब उन्होंने हिजरत कर के मदीने में पनाह ली तो उन के विरुद्ध आतंक फ़ैलाना शुरु कर दिया। ऐसी परिस्थिति में अल्लाह तआला ने ईमान वालों को अनुमति दी कि वे दुश्मनों की तलवार का जवाब तलवार से दें। युद्ध (क़िताल) का यह पहला हुक्म है जो ईमान वालों को उन के मदीना में संगठित हो जाने के बाद दिया गया। इस के बाद ही रमज़ान सन् २हिजरी में बद्र की जंग हुई।

261. जंग के मौक़े पर भी हद में रहने और ज़्यादती न करने का आदेश है। अत: हदीस में औरतों, बच्चों और बूढ़े लोगों को जो जंग में हिस्सा नहीं लेते, उन का वध करने की मनाही कर दी गई है। इसी तरह लाशों के कान और नाक काटने और जंग में बर्बरता अपनाने से भी मना कर दिया गया है।

262. यहाँ उन लोगों को क़त्ल करने का हुक्म दिया गया है जो मुसलमानों से जंग पर तुले हुए थे। जैसा कि ऊपर की आयत से स्पष्ट है। इस का यह मतलब लेना सही नहीं कि मुसलमान जहाँ कहीं किसी काफिर को पाऐं क़त्ल कर दें, चाहे वह संसार के किसी भूभाग में हो और चाहे शांतिपूर्ण वातावरण में हो या युद्ध के समय में हो।

263. यहाँ फितने से मुराद दबाव एवं अत्याचार के द्वारा लोगों को सत्यधर्म से फेरने की कोशिश करना और सत्यमार्ग का रोड़ा बनना है। यह युद्ध के औचित्य की दलील है। मतलब यह है कि युद्ध अथवा क़िताल एक संगीन बात है और फिर हरम (प्रतिष्ठित स्थान) की सीमा में और प्रतिष्ठित महीनों में तो इस की संगीनी में और भी वृद्धि हो जाती है किन्तु इस से भी अधिक संगीन बात यह है कि अल्लाह के बन्दों पर इस कारण अत्याचार तोड़ा जाए कि उन्होंने शिर्क और बुत परस्ती को छोड़ कर एकेश्वरवाद से परिपूर्ण इस्लाम को स्वीकार किया है और वे अल्लाह के प्रकाश की ओर लोगों को न्योता दे कर समाज का सुधार करना चाहते हैं। आयत का मंशा यह है कि जब कोई मानव समूह आतंक फैलाने एवं ताना शाही पर उतर आए और लोगों को सत्य स्वीकार करने से रोकने लगे, और अल्लाह की ओर बुलाने में रोड़ा बन जाए तो ऐसे समूह के विरुद्ध ताक़त का इस्तेमाल बिलकुल जायज़ है।

264. मस्जिदे- हराम (खाना-ए-काबा) के पास का क्षेत्र 'हरम' कहलाता है जिस के एहतिराम (प्रतिष्ठा) के सिलसिले में विशेष आदेश हैं। इस के हरम (प्रतिष्ठित) होने की यह हैसियत हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के ज़माने से चली आ रही है। अज्ञानता युग (हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नबी नियुक्त होने के पूर्व के युग) में भी इस क्षेत्र को सम्मानित समझा जाता रहा एवं इस क्षेत्र में युद्ध एवं खून खराबा करना वर्जित था इस लिए यह सवाल पैदा हो गया कि यदि मक्का के मुश्रिकीन (बहुदेववादी) हरम की सीमा में युद्ध छेड़ दें तो क्या किया जाए? इस का जवाब यह दिया गया कि मुसलमान हरम की सीमा में स्वयं युद्ध न छेड़ें बल्कि यदि काफिर युद्ध छेड़ दें तो फिर तुम भी उन्हें मुँह तोड़ जवाब दो, इस लिए कि ऐसी परिस्थिति में वे किसी रिआयत के योग्य नहीं हैं।

265. यहाँ बाज़ आने से मुराद न केवल विरोधी गतिविधियों से बाज़ आना है बल्कि कुफ्र एवं शिर्क से भी बाज़ आना है।

266. यहाँ उस कलह (निज़ाअ) को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए जो मुसलमानों और मक्का के काफ़िरों के बीच था। क़ुर्आन का दावा यह था कि खाना-ए-काबा जिसका निर्माण हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माईल अलैहिस्सलाम ने तौहीद के केन्द्र की हैसियत से किया था उस के प्रबन्ध के वास्तविक हक़दार ईमान वाले हैं न कि मुश्रिकीन जिन्होंने इस में बुत बिठा रखे हैं। हज़रत इब्राहीम की दुआ को क़ुबूल करते हुए अल्लाह तआला ने जिस रसूल को नियुक्त करने का वादा फ़रमाया था वह हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नबी नियुक्त होने से पूरा हो गया। इस नबी के द्वारा इस घर के वास्तविक उद्देश्य की पुनरावृत्ति (तजदीद) होती है। अत: ज़रूरी है कि इस घर को काफ़िरों और मुश्रिकों के क़ब्ज़े से आज़ाद और कुफ्र एवं शिर्क की गन्दगियों से पाक कर के उम्मते मुस्लिम: के क़ब्ज़े में दे दिया जाए कि वह इस्लाम का केन्द्र और ईमान वालों का क़िबला (उपासना दिशा) है। यह वास्तव में हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का वास्तविक लक्ष्य था और इस लक्ष्य की प्राप्ति की राह में यदि कोई ताक़त रोड़ा बनती है तो उस को हटाने के लिए बल प्रयोग बिलकुल अनिवार्य था।

267. अर्थात यह युद्ध उस समय तक जारी रहना चाहिए जब तक कि हरम की पावन धारती से फितने की हालत समाप्त नहीं हो जाती और सत्य धर्म का वर्चस्व एवं आधिपत्य नहीं होता। चूँकि बैतुल्लाह (अल्लाह के घर) की हैसियत तौहीद के केन्द्र की है इस लिए इस पवित्र धरती में किसी और धर्म एवं

सिद्धान्त के लिए कोई गुनजाइश नहीं है।

268. अगर यह बाज़ आ कर इस्लाम स्वीकार कर लेते हैं तो फिर इन के पिछले अपराधों के आधार पर इन के विरुद्ध कोई कारवाई नहीं की जायेगी बल्कि मात्र उनके विरुद्ध क़दम उठाया जाएगा जो अपने ज़ालिमाना रवैये पर अड़े रहेंगे।

269. ज़िल्क़ादा, ज़िलहिज्ज, मुहर्रम और रजब के महीने प्रतिष्ठित (मुहतरम) महीने कहलाते हैं। इन में शुरु के तीन महीने हज्ज के लिए ख़ास समझे जाते थे और आख़िर का एक महीना उमर: के लिए। इन चार महीनों में जंग करने की मनाही थी ताकि तीर्थ यात्री (ज़ायरीन) सुकून और शान्ति के साथ बैतुल्लाह का सफर कर सकें और अपने घर को वापस हो सकें। यह तरीक़ा हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के समय से चला आ रहा था और अरब वालों के यहाँ स्वीकृत था।

270.अर्थात जब काफिर हराम (प्रतिष्ठित) महीनों का लिहाज़ नहीं करते और उन की तलवारें इन महीनों में भी म्यान से बाहर निकल आती हैं तो तुम्हें भी यह अधिकार है कि इन को शान्ति एवं प्रतिष्ठा के हक़ से वंचित कर दो।

271. अर्थात जिस चीज के प्रतिष्ठा अधिकार से वे तुम्हें वंचित करें तुम भी उस के बदले उन्हें उन के प्रतिष्ठा अधिकार से वंचित कर सकते हो। अल्बत्ता तक़वा (ईश-भय) का लिहाज़ रखो। न अपनी ओर से पहल करो और न तुम्हारा कोई क़दम हद से बढ़ा हुआ हो।

272. यहाँ अल्लाह की राह में खर्च करने से मुराद दीन को ग़ालिब तथा अल्लाह के कलमें को बुलन्द करने के लिए ख़र्च करना है।

273. अर्थात जो लोग दीन को ग़ालिब करने के लिए ख़र्च करने से जी चुराते हैं वे अपने आप को तबाही में डालते हैं क्यों कि असल जिन्दगी तो खुदा की राह में जान और माल की क़ुर्बानी पेश करने में है न कि उन को बचाए रखने में।

''अपने हाथों अपने को तबाही में मत डालो'' से आत्महत्या का वर्जित होना भी स्पष्ट हो रहा है। चाहे आत्महत्या की कोई भी शकल अपनाई जाए।

❖❖❖❖❖❖❖❖

इस बात में कोई गुनाह नहीं कि तुम अपने रब का फ़ज़्ल (अनुग्रह) तलाश करो । फिर जब अरफ़ात से लौटो तो मश्अरे-हराम के पास अल्लाह का ज़िक्र (चर्चा) करो और इस तरह ज़िक्र करो जिस तरह कि उस ने तुम्हें हिदायत की है । और यह हक़ीक़त है कि इस से पहले तुम लोग भटके हुए थे।(अल-क़ुरआन)

196. हज्ज और उमरह [274] को अल्लाह के लिए पूरा करो [275] अगर तुम घिर जाओ तो जो हद्य:(क़ुर्बानी का जानवर) उपलब्ध हो उसे पेश कर दो [276] और अपना सर न मुंडाओ जब तक कि हद्य:(क़ुर्बानी का जानवर) अपने स्थान पर न पहुँच जाए [277]।(अलबत्ता जो व्यक्ति तुम में से बीमार हो या उस के सर में किसी प्रकार की कोई तकलीफ़ हो तो वह रोज़े,सदका या क़ुर्बानी की शक्ल में फ़िदय:(प्रतिदान) दे [278] फिर जब तुम अमन की हालत में हो तो जो कोई हज्ज तक उमरह से फायदा उठाए वह जो क़ुर्बानी मयस्सर हो, पेश करे [279] और जिस को क़ुर्बानी मयस्सर न आये वह तीन दिन के रोज़े हज्ज (के ज़माने) में रखे और सात दिन के रोज़े वापसी पर । यह पूरे दस दिन (के रोज़े) हुए [280]। यह हुक्म उस व्यक्ति के लिए है जिस के घर वाले मस्जिदे-हराम (खाना-ए-काबा) के पास न रहते हों [281]।और अल्लाह से डरते रहो [282] और जान लो कि अल्लाह सज़ा देने में बहुत सख्त है।

وَأَتِمُّوا الْحَجَّ وَالْعُمْرَةَ لِلَّهِ ۚ فَإِنْ أُحْصِرْتُمْ فَمَا اسْتَيْسَرَ
مِنَ الْهَدْيِ ۖ وَلَا تَحْلِقُوا رُءُوسَكُمْ حَتَّىٰ يَبْلُغَ الْهَدْيُ مَحِلَّهُ ۚ
فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيضًا أَوْ بِهِ أَذًى مِنْ رَأْسِهِ فَفِدْيَةٌ
مِنْ صِيَامٍ أَوْ صَدَقَةٍ أَوْ نُسُكٍ ۚ فَإِذَا أَمِنْتُمْ فَمَنْ تَمَتَّعَ
بِالْعُمْرَةِ إِلَى الْحَجِّ فَمَا اسْتَيْسَرَ مِنَ الْهَدْيِ ۚ فَمَنْ لَمْ يَجِدْ
فَصِيَامُ ثَلَاثَةِ أَيَّامٍ فِي الْحَجِّ وَسَبْعَةٍ إِذَا رَجَعْتُمْ ۗ تِلْكَ عَشَرَةٌ
كَامِلَةٌ ۗ ذَٰلِكَ لِمَنْ لَمْ يَكُنْ أَهْلُهُ حَاضِرِي الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۚ
وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ﴿١٩٦﴾

197. हज्ज के कुछ निश्चित महीने हैं [283]। जो व्यक्ति इन में हज्ज का निश्चय कर ले उसे चाहिए कि हज्ज के दौरान न काम-वासना की कोई बात करे, न फिस्क़ और फुजूर (पाप और सीमोल्लंघन) की, और न लड़ाई झगड़े की [284]। और जो नेक काम तुम करोगे अल्लाह उस को जान लेगा और जादे-राह (पाथेय) साथ ले लो कि बेहतरीन जादे-राह (पाथेय) तक़वा [285] (धर्मपरायणता) है और ऐ अक़्ल वालो ! मुझ से डरो।

الْحَجُّ أَشْهُرٌ مَعْلُومَاتٌ ۚ فَمَنْ فَرَضَ فِيهِنَّ الْحَجَّ فَلَا رَفَثَ
وَلَا فُسُوقَ وَلَا جِدَالَ فِي الْحَجِّ ۗ وَمَا تَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ
يَعْلَمْهُ اللَّهُ ۗ وَتَزَوَّدُوا فَإِنَّ خَيْرَ الزَّادِ التَّقْوَىٰ ۚ
وَاتَّقُونِ يَا أُولِي الْأَلْبَابِ ﴿١٩٧﴾

198. इस बात में कोई गुनाह नहीं कि तुम अपने रब का फ़ज़्ल (अनुग्रह) तलाश करो [286]। फिर जब अरफ़ात से लौटो [287] तो मश्अरे-हराम के पास अल्लाह का ज़िक्र (चर्चा) करो [288] और इस तरह ज़िक्र करो जिस तरह कि उस ने तुम्हें हिदायत की है [289]। और यह हक़ीक़त है कि इस से पहले तुम लोग भटके हुए थे।

لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ أَنْ تَبْتَغُوا فَضْلًا مِنْ رَبِّكُمْ ۚ
فَإِذَا أَفَضْتُمْ مِنْ عَرَفَاتٍ فَاذْكُرُوا اللَّهَ عِنْدَ
الْمَشْعَرِ الْحَرَامِ ۖ وَاذْكُرُوهُ كَمَا هَدَاكُمْ وَإِنْ
كُنْتُمْ مِنْ قَبْلِهِ لَمِنَ الضَّالِّينَ ﴿١٩٨﴾

274. ''उमरह'' बैतुल्लाह (अल्लाह के घर अर्थात काबा) की विशेष एवं निश्चित विधि के साथ ज़ियारत (दर्शन) करने को कहते हैं। एहराम की वेषभूषा में बैतुल्लाह का तवाफ़ करना,सफ़ा और मरवा के दरम्यान सई करना और अन्त में बाल मुंडाना या कतरवाना उमरह के महत्वपूर्ण स्तंभ (अरकान) हैं। उम्रह किसी समय भी किया जा सकता है जब कि हज्ज के लिए निश्चित तारीखें हैं। इस के अलावा हज्ज में मक्का से अरफ़ात भी जाना पड़ता है जब कि उम्रह मक्का में ही अदा किया जाता है।

275. हज्ज और उम्रह अज्ञानता युग (हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नबी नियुक्त होने से पूर्व के युग) में भी किया जाता था किन्तु वह शुद्ध रुप से अल्लाह के लिए नहीं होता था बल्कि उस में वे अपने अवैध पूज्यों को भी शरीक करते थे जिन के बुत उन्होंने ख़ाना-ए-काबा और सफ़ा वग़ैरा पर स्थापित कर रखे थे। वे उन की पूजा करते उन के आगे चढ़ावे चढ़ाते, मुरादें माँगते, और उन के लिए जानवर की क़ुर्बानी करते इस लिए अल्लाह तआला ने ईमान वालों को हिदायत फरमाई कि जब तुम हज्ज और उम्रह करो तो शुद्ध रुप से मात्र अल्लाह के लिए करो और हर तरह के शिर्क एवं बिद्अत से उसे पाक रखो।

इस हिदायत का एक पहलू यह भी है कि हज्ज को मात्र व्यापार का साधन बना कर न रखा जाए। जिस प्रकार अज्ञानता युग में इस को मात्र एक व्यापारी मेले का स्वरुप दे दिया गया था। एवं इस बात का ख़याल रखा जाये कि हज्ज और उम्रह की अदायगी (संपन्नता) में छल और नुमाइश की झलक भी न आने पाए और ये दोनों चीज़ें अर्थात् हज्ज और उम्रह इबादत समझ कर और अल्लाह की रज़ा (प्रसन्नता) को लक्ष्य बना कर अदा की जाएें ।

276. अर्थात, यदि तुम हज्ज या उम्रह के लिए निकलो और रास्ते में दुश्मन तुम्हें घेर लें तो ऊँट, गाय, बकरी में से जो जानवर भी मयस्सर (उपलब्ध) हो उस की क़ुर्बानी करो। सन 6 हिजरी में जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और सहाबा किराम ने उम्रह का इरादा किया तो मक्का के मुश्रिकों ने हुदैबिय: के स्थान पर जहाँ से हरम की सीमा शुरु होती है आप को और आप के साथियों को रोक दिया। आप ने वहीं क़ुर्बानी कर के एहराम खोल दिया।

277.एहराम की दशा में क़ुर्बानी से पहले बाल मूंडना या कतरवाना मना है और क़ुर्बानी के बाद बाल मूंडना या कतरवाना ज़रुरी है।

क़ुर्बानी के ठिकाने पहुँच जाने का मतलब क़ुर्बानी का ठिकाने लग जाना है। अर्थात क़ुर्बानी से फ़ुर्सत पा जाने के बाद हजामत करवाए।

क़ुर्बानी का ठिकाने लग जाना यह है कि घिर जाने की सूरत में आदमी जहाँ घिर जाए वहीं क़ुर्बानी करे और सामान्य परिस्थिति में खाना-ए-काबा के पास (मिना में) क़ुर्बानी करे।

278. अर्थात अगर किसी व्यक्ति को बीमारी या तकलीफ के कारण मजबूरन अपना सर क़ुर्बानी से पहले मुंडाना पड़े तो वह कफ़्फ़ार: (प्रायश्चित) दे । कफ़्फ़ारा की व्याख्या नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने यह फ़रमाई है कि या तो तीन दिन के रोज़े रखे या ६ मिस्कीनों को खाना खिलाए या कम से कम एक बक़री की क़ुर्बानी करे।

279. यह छूट उन लोगों के लिए है जो हरम की सीमाओं से बाहर रहते हों और एक ही सफ़र में हज्ज और उमरह अदा करना चाहें इसे ''तमत्तुअ''(लाभ प्राप्ति) कहते हैं। जिस की सूरत यह है कि आदमी पहले उम्रह कर के एहराम खोल दे फिर हज्ज की तारीखों में एहराम बाँध कर हज्ज अदा करे। तमत्तुअ की सूरत में क़ुर्बानी ज़रुरी है लेकिन अगर क़ुर्बानी मयस्सर (उपलब्ध) न हो तो दस दिन के रोज़े रखे। तीन दिन के रोज़े हज्ज के दिनों (Period) में और सात दिन के रोज़े हज्ज से लौटने के बाद।

280. अर्थात क़ुर्बानी के स्थान पर मात्र तीन रोज़े न होंगे। दस को कामिल (संपूर्ण) कहने से एक यह बात भी निकलती है कि दस की संख्या गिनती के लिहाज़ से कामिल है अत: हिसाबों में दस की विशेषता बिलकुल स्पष्ट है और दशमलव सिस्टम (Decimal System) की बुनियाद भी दस या दसवें हिस्से ही पर है।

281. अर्थात हरम की सीमाओं में रहने वालों के लिए ''तमत्तुअ'' की छूट नहीं है। वे हज्ज के महीनों में सिर्फ हज्ज कर सकते हैं जिस को ''इफ़्राद'' कहा जाता है।

282. इशारा है इस बात की तरफ़ कि इन आदेशों से तक़्वा (ईश भय और परहेज़गारी) की प्राप्ति ही लक्ष्य है। अगर तुम ने तक़्वा का लिहाज़ नहीं किया और मात्र रस्मी तौर पर हज्ज कर लिया तो ऐसा हज्ज रुह (Spirit) से खाली होगा।

283.हज्ज के महीने शव्वाल, ज़िलक़ादा और ज़िहहिज्ज: हैं अर्थात चाँद के महीने (क़मरी साल) का दसवाँ, ग्यारहवाँ और बारहवाँ महीना । 9 ज़िलहिज्ज: को अरफात के मैदान में जमा होना जरुरी है जिसे ''वक़ूफ़े-अरफात'' कहते हैं और यह हज्ज का महत्वपूर्ण स्तंभ (रुक्न) है। हज्ज का एहराम हज्ज के महीनों ही में बाँधा जा सकता है।

284. जब आदमी हज्ज का एहराम बाँधता है तो उस पर कुछ ख़ास क़िस्म की पाबन्दियाँ लागू हो जाती हैं जैसे

काम-वासना की बातों और हरकतों से परहेज़ अत: न केवल पत्नी से संभोग मना है बल्कि काम-वासना की ओर प्रेरित करने वाली एवं गन्दी बातें तथा गाली इत्यादि की भी कड़ी मनाही है। फिस्क़ एवं फ़ुजूर अर्थात पाप और अल्लाह की अवज्ञा तथा उससे बग़ावत की तमाम बातें स्वयं अवैध हैं किन्तु एहराम की हालत में इन का गुनाह बहुत सख़्त है। इसी तरह लड़ाई झगड़ा एक बुरी बात है किन्तु एहराम की हालत में इस की बुराई कठोरतम है।

इन चीज़ों की मनाही कर के यह एहसास दिलाना अभिप्रेत है कि हज्ज कोई मेला नहीं है कि लोग तफ़रीह या कारोबार के लिए जमा हो जाऐं और न वह कोई ''धार्मिक यात्रा'' है कि बेजान रस्मों को अदा कर देने से आदमी के पाप धुल जाते हों बल्कि यह अल्लाह के दरबार की हाज़िरी है अत: एहराम की हालत में जो बार बार लब्बैक कही जाती है इस के अर्थ यही हैं कि '' ऐ अल्लाह मैं तेरी ख़िदमत में हाज़िर हूँ।'' लिहाज़ा इस हाज़िरी के लिए गुनाहों से बचने की असाधारण तैयारी, और एक विशेष एवं निश्चित दशा में होने का एहसास जरूरी है ताकि इस हाज़री की गहरी छाप दिल और दिमाग पर पड़ सके और जब आदमी अल्लाह के दरबार से लौटे, तो वह तज़्किय: (हृदय से शुद्धिकरण) की नेमत से लाभान्वित हो कर और अपने साथ रुहानी दौलत ले कर लौटे।

285. जाहिलिय्यत के ज़माने (आज्ञानता युग) में हज्ज के लिए ज़ादे-राह (पाथेय) लेना उच्च कोटि की धार्मिकता के विरुद्ध समझा जाता था। इस आयत में उन के इस विचार का खंडन किया गया है और बताया गया कि फ़क़ीरी (साधुत्व) की नुमाइश करना कोई खूबी की बात नहीं है। खूबी की बात यह है कि आदमी सवाल करने अर्थात दूसरों के सामने हाथ फैलाने से बचे और तक़्वा एवं परहेज़गारी का जीवन अपनए। ''बेहतरीन ज़ादे-राह (पाथेय) तक़्वा है'' का संकेत इस ओर भी है कि आख़िरत (परलोक) की यात्रा के लिए तक़्वा बेहतरीन मार्ग व्यय अथवा पाथेय (ज़ादे-राह) है।

286. बन्दा जब अपने पूज्य परवरदिगार की बाँधी हुई सीमा के अन्दर रहते हुए आर्थिक (कमाने के लिए) संघर्ष करता है तो वास्तव में वह अपने रब का फ़ज़्ल (अनुग्रह) तलाश करता है। इस लिए हज्ज की यात्रा के दौरान व्यापारिक लाभ उठाने में कोई हरज नहीं है। अगर आदमी तक़्वा का लिहाज़ करता है जिस की हिदायत ऊपर गुज़र चुकि और जो हज्ज का वास्तविक उद्देश्य है तो उपलाभ के तौर पर आर्थिक लाभ उठा लेने से इस इबादत में कोई दोष न आएगा।

287.अरफ़ात एक मैदान का नाम है जो मक्का से पूरब की ओर लगभग बारह मील की दूरी पर स्थित है और तायफ़ के मार्ग पर पड़ता है। इस मैदान में ९ ज़िलहिज़्ज: को वक़ूफ़ करना हज्ज का महत्वपूर्ण अंग अथवा स्तंभ है। इस में एक पहाड़ी है जिसे ''जबलुर्रहम:'' कहते हैं । नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इस के दामन में दुआ माँगी थी। (अरफ़ात का चित्र पृष्ठ संख्या १०४ पर देखें)

288. अर्थात मुज़दलफा में जो अरफात और मिना के बीच स्थित है। अरफ़ात से जब लौटते हैं तो रात मुज़दल्फा में पड़ाव किया जाता है अर्थात ठहरा जाता है ।

289. अत: मुज़दलफा में मग़रिब और इशा की नमाज़ें मिला कर पढ़ी जाती हैं और फ़जर (अरुणोदय) शुरु होने पर फ़जर की नमाज़ अदा की जाती है। अल्लाह को याद करने में ये नमाज़ें भी शामील हैं और लब्बैक तथा तस्बीह इत्यादि भी।

❖❖❖❖❖❖❖❖

और तय शुदा दिनों में अल्लाह का ज़िक्र करो। फिर जो कोई दो दिन में जल्दी करे (और निकल जाए) उस पर कोई गुनाह नहीं और जो (निकलने में एक दिन का) विलम्ब करे उस पर भी कोई गुनाह नहीं ।यह उस के लिए है जो तक़्वा अपनाए। अल्लाह से डरते रहो और खूब जान लो कि उसी के दरबार में तुम्हें एकत्रित (जमा) होना है।(अल-क़ुर्आन)

199. और तुम भी उसी स्थान से पलटो जिस स्थान से सब लोग पलटते हैं ।[290] और अल्लाह से क्षमायाचना करो। निस्संदेह अल्लाह क्षमा करने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।

ثُمَّ اَفِيْضُوْا مِنْ حَيْثُ اَفَاضَ النَّاسُ وَاسْتَغْفِرُوا
اللّٰهَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝١٩٩

200. फिर जब तुम हज्ज के मनासिक (हज्ज सम्बन्धी परिपाटियाँ)अदा कर चुको तो अल्लाह का ज़िक्र करो जिस तरह अपने बाप दादा का ज़िक्र करते थे, बल्कि उस से भी बढ़ कर [291]। लोगों में ऐसे भी हैं, जिन की दुआ यह होती है कि ऐ हमारे रब ! हमें दुनिया ही में सब कुछ दे दे [292]। ऐसे लोगों का आखिरत में कोई हिस्सा नहीं ।

فَاِذَا قَضَيْتُمْ مَّنَاسِكَكُمْ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ
كَذِكْرِكُمْ اٰبَآءَكُمْ اَوْ اَشَدَّ ذِكْرًا ؕ فَمِنَ النَّاسِ
مَنْ يَّقُوْلُ رَبَّنَآ اٰتِنَا فِى الدُّنْيَا وَمَا
لَهٗ فِى الْاٰخِرَةِ مِنْ خَلَاقٍ ۝٢٠٠

201. और कुछ ऐसे भी हैं जिन की दुआ यह होती है कि ऐ हमारे रब ! हमें दुनिया में भी भलाई प्रदान कर और आख़िरत में भी और हमें आग के अज़ाब (यातना) से बचा ले।[293]

وَمِنْهُمْ مَّنْ يَّقُوْلُ رَبَّنَآ اٰتِنَا فِى الدُّنْيَا حَسَنَةً
وَّفِى الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَّقِنَا عَذَابَ النَّارِ ۝٢٠١

202. यही लोग हैं जिन को उन की कमाई की बदौलत हिस्सा मिलेगा और अल्लाह जल्द हिसाब चुकाने वाला है।

اُولٰٓئِكَ لَهُمْ نَصِيْبٌ مِّمَّا كَسَبُوْا ؕ وَاللّٰهُ سَرِيْعُ
الْحِسَابِ ۝٢٠٢

203. और तय शुदा दिनों में अल्लाह का ज़िक्र करो।[294] फिर जो कोई दो दिन में जल्दी करे (और निकल जाए) उस पर कोई गुनाह नहीं और जो (निकलने में एक दिन का) विलम्ब करे उस पर भी कोई गुनाह नहीं [295] । यह उस के लिए है जो तक़्वा अपनाए। अल्लाह से डरते रहो और खूब जान लो कि उसी के दरबार में तुम्हें एकत्रित (जमा) होना है।[296]

وَاذْكُرُوا اللّٰهَ فِىْٓ اَيَّامٍ مَّعْدُوْدٰتٍ ؕ فَمَنْ تَعَجَّلَ
فِىْ يَوْمَيْنِ فَلَآ اِثْمَ عَلَيْهِ ۚ وَمَنْ تَاَخَّرَ فَلَآ
اِثْمَ عَلَيْهِ ۙ لِمَنِ اتَّقٰى ؕ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوْٓا
اَنَّكُمْ اِلَيْهِ تُحْشَرُوْنَ ۝٢٠٣

204. कुछ लोग ऐसे हैं जिनकी बातें तुम्हें सांसारिक जीवन में बड़ी सुन्दर मालूम होती हैं और वे अपने दिल की बात (मनोभाव) पर अल्लाह को गवाह ठहराते हैं, हालाँकि हक़ीक़त में वे कट्टर विरोधी हैं ।[297]

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يُّعْجِبُكَ قَوْلُهٗ فِى الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَيُشْهِدُ
اللّٰهَ عَلٰى مَا فِىْ قَلْبِهٖ ۙ وَهُوَ اَلَدُّ الْخِصَامِ ۝٢٠٤

205. और जब वे पलटते हैं तो ज़मीन में उन की सारी दौड़ धूप इस लिए होती है कि फ़साद बरपा करें और खेती और नस्ल को तबाह करें।[298] मगर अल्लाह फसाद को हरगिज़ पसन्द नहीं करता।

وَاِذَا تَوَلّٰى سَعٰى فِى الْاَرْضِ لِيُفْسِدَ فِيْهَا وَيُهْلِكَ
الْحَرْثَ وَالنَّسْلَ ؕ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الْفَسَادَ ۝٢٠٥

290. क़ुरैश अपने आप को बैतुल्लाह (काबा) का मुजावर समझते थे इसी कारण उन्हों ने अपने लिए यह विशेष प्रमुखता स्वयं स्थापित कर ली थी कि हज्ज के अवसर पर अरफ़ात की हाज़िरी उन के लिए जरुरी नहीं है। इसी लिए वे मुज़दल्फा तक जा कर वहीं से वापस होते थे। क़ुर्आन ने उनकी इस प्रमुख्ता को समाप्त कर के सब को एक समान स्तर पर रखा और आदेश दिया कि जिस तरह दुसरे तमाम लोग अरफ़ात जाते हैं उसी तरह क़ुरैश के लोगो तुम भी अरफ़ात जाओ और वहाँ से लौटो। स्पष्ट रहे कि हज्ज के ये मनासिक (हज्ज सम्बन्धी परिपाटियाँ) जिन में अरफात की हाज़िरी भी शामिल है,हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के ज़माने से प्रचलित थे किन्तु अज्ञानता युग के लोगों ने उन में कुछ रद्दोबदल एवं काँट छाँट कर दिया था। क़ुर्आन ने उन को फिर वास्तविक इब्राहीमी सुन्नत (विधि) पर स्थापित कर दिया और हर प्रकार की ग़लत एवं व्यर्थ की प्रमुखता को समाप्त कर दिया!

291. अज्ञानता युग (हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नबी नियुक्त होने के पूर्व के युग) में मिना में पड़ाव के दौरान शेरो-शायरी की महफ़िलें आयोजित होतीं और कवि एवं वक्ता गण अपने क़बीलों और पूर्वजों के कारनामें गर्व के साथ बयान करते। क़ुर्आन ने इन वयर्थ के कार्यों को छोड़ने और अल्लाह का ज़िक्र अधिक करने की हिदायत की।

292. इशारा है उन लोगों की तरफ जो सन्सारिक लाभों के पुजारी होते हैं । यदि उन्हें हज्ज का अवसर प्राप्त होता है तो वहाँ भी केवल सन्सारिक लाभ ही की प्राप्ति के लिए दुआ करते हैं और आखिरत को बिलकुल नज़रअन्दाज़ कर देते हैं। उन्हें आख़िरत की कामयाबी की कोई चिन्ता नहीं होती। यह मनोवृत्ति (ज़ेहनियत) हज्ज जैसी महान इबादत को भी सन्सारिक लाभों के साँचे में ढाल लेती हैं और इस के फलसरुप इन्सान हज्ज के विशालतम लाभों से वन्चित हो जाता है।

293. यह इशारा उन लोगों की तरफ है जिनके विचार एवं दृष्टिकोण दुनिया के बारे में असंतुलित नहीं हैं। जो दुनिया और आख़िरत दोनों की भलाई की इच्छा करते हैं । दुनिया की किसी चीज़ का किसी के पक्ष में भला होना इस बात पर निर्भर है कि वह आखिरत की कामयाबी का साधन बन सके इस लिए ईमान वालों की दुआ एवं प्रार्थना यह होती है कि हमें वह चीज़ें प्रदान कर जो हमारे पक्ष में वास्तव में लाभप्रद और अच्छी हों। एवं ईमान वाले जहन्नम की यातना (अज़ाब) से बराबर पनाह माँगते रहते हैं कि असली चिन्ता इन्सान को आख़िरत की कामयाबी एवं मुक्ति ही की होनी चाहिए।

294. अभिप्राय मिना में ठहरने अथवा निवास करने के दिन हैं जिन्हें अयामे-तश्रीक---- कहा जाता है, अर्थात, ज़िलहिज़्ज: की 11, 12,13, तारीखें। मिना मक्का से तीन चार मील की दूरी पर है। यहाँ 10 ज़िलहिज्ज: को शैतान को कंकरियाँ मारी जाती हैं और क़ुर्बानी की जाती है। अय्यामे-तश्रीक भी मिना ही में गुज़ारे जाते हैं और रोज़ाना शैतान (जम्रात) को कंकरियाँ मारी जाती हैं। कंकरियाँ मारते समय अल्लाह का ज़िक्र (चर्चा) किया जाता है और शैतान पर लानत भेजी जाती है।

295.अर्थात इस बात की इजाज़त है कि 12 जिलहिज्ज: को कंकरियाँ मारने के बाद मिना से वापस हो जाओ या 13 ज़िलहिज्ज: तक मिना में कियाम (निवास) करो निवास की सूरत में 13 तारीख को भी कंकरियाँ मारना होंगी (मिना का चित्र पृष्ठ संख्या 104 पर देखें)

296. इशारा है इस बात की तरफ की हज्ज का यह इज्तिमाअ् (सम्मेलन अथवा जमाव) हश्र के दिन के इज्तिमाअ की याद्देहानी है जब कि सारे लोग अल्लाह के सम्मुख इकट्ठा किए जाऐंगे ।

297. इशारा है स्वार्थी लोगों की तरफ जो बातों के धनी बनते हैं और अपने कर्मों के दोषों पर परदा डालने के लिए वाक्पटूता (बोलने की चतुराई) से काम लेते हैं । सांसारिक जीवन की समस्याओं पर जब वे अपने विचार प्रकट करते हैं तो उन की बातें बड़ी लुभावनी प्रतीत होती हैं और वे खुदा को गवाह कर के कहते हैं कि ये बातें वे अपने स्वार्थ के लिए नहीं बल्कि लोगों की भलाई के लिए कह रहे हैं। और वे इस्लाम के दुश्मन कदापि नहीं हैं हालाँकि उन के दिल में इस्लाम के ख़िलाफ अत्यंत द्वेश एवं घृणा भरी होती है और वे सत्य के कट्टर दुश्मन होते हैं।

298. अर्थात तुम्हारे सामने तो बड़ी लुभावनी बातें करते हैं किन्तु जब तुम्हारे पास से चले जाते हैं तो उन की सारी दौड़ धूप जमीन पर फ़साद कराने के लिए होती है अत:वे अल्लाह की ओर बुलाने एवं आह्वान करने का विरोध करने लगते हैं हालांकि ज़मीन का सुधार और उस पर शान्ति एवं न्याय की स्थापना अल्लाह की दासता एवं अनुपालन पर ही निर्भर है क़ुर्आन के इस बयान की पुष्टि उन तबाहियों से होती है जो बड़ी बड़ी लड़ाइयों और विश्व युद्धों के परिणाम स्वरुप दुनिया पर आई। अल्लाह की हिदायत से मूँह मोड़ने वालों के हाथों में जब सत्ता आ जाती है तो वे दुनिया के लिए तबाही का सामान करते रहते हैं, यद्यपि वे अपनी हर संकल्पबद्ध योजना पर उस को सही साबित करने के लिए बड़ी सुन्दर बातें और सिद्धान्त पेश करते हैं।

हज्ज के स्थल

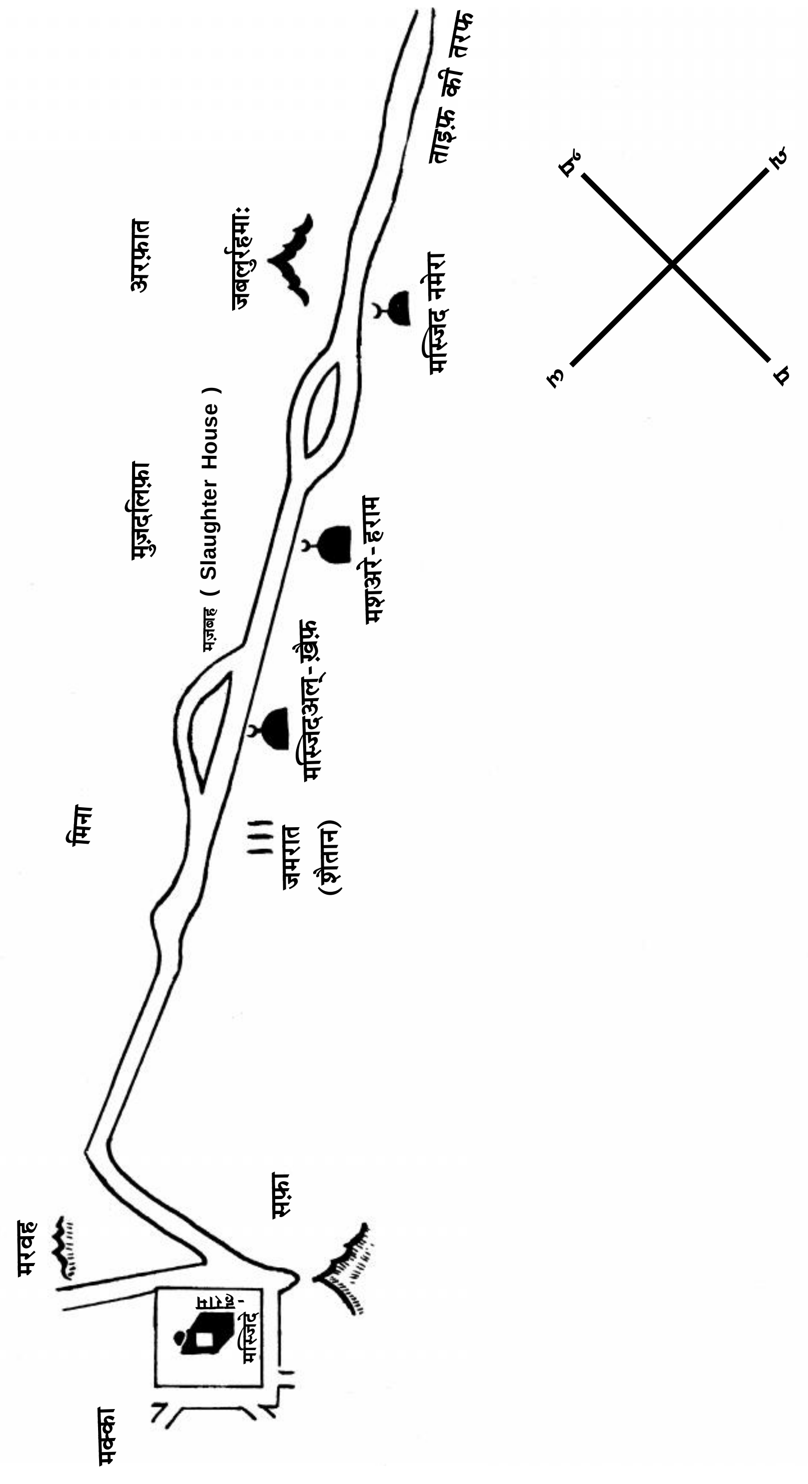
ताइफ़ की तरफ़
अरफ़ात
जबलुर्रहमः
मस्जिद नमेरा
मुज़्दलिफ़ा
मज़बह (Slaughter House)
मशअरे-हराम
मस्जिदअल्-ख़ैफ़
मिना
जमरात
(शैतान)
सफ़ा
मरवह
मस्जिदे-हराम
मक्का

ऐ ईमान लाने वालों ! इस्लाम में पूरे पूरे दाख़िल हो जाओ और शैतान के पद्चिन्हों का अनुपालन न करो वह तुम्हारा खुला दुश्मन है।(अल-क़ुर्आन)

206. और जब उन से कहा जाता है कि अल्लाह से डरो तो अहंकार उन्हें गुनाह पर आमादा करता है।ऐसे लोगों के लिए तो जहन्नम ही काफ़ी है। और वह बहुत बुरा ठिकाना है।

وَإِذَا قِيلَ لَهُ اتَّقِ اللَّهَ أَخَذَتْهُ الْعِزَّةُ بِالْإِثْمِ
فَحَسْبُهُ جَهَنَّمُ ۚ وَلَبِئْسَ الْمِهَادُ ﴿٢٠٦﴾

207. और लोगों में ऐसे भी हैं जो अल्लाह की प्रसन्नता की चाह में अपनी जानें खपा देते हैं । [299] और अल्लाह अपने बन्दो पर बेहद मेहरबान है।

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَشْرِي نَفْسَهُ ابْتِغَاءَ مَرْضَاتِ
اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ رَءُوفٌ بِالْعِبَادِ ﴿٢٠٧﴾

208. ऐ ईमान लाने वालों ! इस्लाम में पूरे पूरे दाख़िल हो जाओ [300] और शैतान के पद्चिन्हों का अनुपालन न करो [301] वह तुम्हारा खुला दुश्मन है।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا ادْخُلُوا فِي السِّلْمِ
كَافَّةً وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوَاتِ الشَّيْطَانِ ۚ إِنَّهُ
لَكُمْ عَدُوٌّ مُبِينٌ ﴿٢٠٨﴾

209. इन स्पष्ट हिदायतों (आदेशों) के आ जाने के बाद भी यदि तुम फिसल गए तो जान रखो कि अल्लाह ग़ालिब (प्रभुत्वशाली) और हिकमत वाला है । [302]

فَإِنْ زَلَلْتُمْ مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَتْكُمُ الْبَيِّنَاتُ
فَاعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٠٩﴾

210. क्या ये लोग इस बात का इन्तिज़ार कर रहे हैं कि अल्लाह और फ़रिश्तें बादलों के छत्रों में उन के सामने प्रकट हो जाएें और फैसला ही कर डाला जाए ?[303] आख़िकार सारे मामले पेश तो अल्लाह के समक्ष ही होंगे।

هَلْ يَنْظُرُونَ إِلَّا أَنْ يَأْتِيَهُمُ اللَّهُ
فِي ظُلَلٍ مِنَ الْغَمَامِ وَالْمَلَائِكَةُ وَقُضِيَ
الْأَمْرُ ۚ وَإِلَى اللَّهِ تُرْجَعُ الْأُمُورُ ﴿٢١٠﴾

211. बनी इस्राईल से पूछो, हम ने उन्हें कितनी खुली खुली निशानियाँ दीं ।[304] और जो कोई अल्लाह की नेमत [305] को उस के पा जाने के बाद बदल डाले तो यक़ीन जानों, अल्लाह सज़ा देने में सख्त है।

سَلْ بَنِي إِسْرَائِيلَ كَمْ آتَيْنَاهُمْ مِنْ آيَةٍ بَيِّنَةٍ ۗ
وَمَنْ يُبَدِّلْ نِعْمَةَ اللَّهِ مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَتْهُ
فَإِنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ﴿٢١١﴾

212. जिन लोगों ने कुफ्र किया उन के लिए दुनिया की ज़िन्दगी बड़ी प्रिय और लुभावनी बना दि गई हैं ।[306] वे ईमान वालों का मज़ाक उड़ाते हैं हालांकि जिन लोगों ने तक़वा अपनाया है वे क़ियामत के दिन उन पर श्रेष्ठता रखेंगे। और अल्लाह जिसे चाहता है बे हिसाब रिज़्क (आजीविका) प्रदान करता है।[307]

زُيِّنَ لِلَّذِينَ كَفَرُوا الْحَيَاةُ الدُّنْيَا وَيَسْخَرُونَ مِنَ الَّذِينَ
آمَنُوا ۘ وَالَّذِينَ اتَّقَوْا فَوْقَهُمْ يَوْمَ الْقِيَامَةِ ۗ وَاللَّهُ يَرْزُقُ
مَنْ يَشَاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٢١٢﴾

299. ऊपर स्वार्थियों का वर्णन हुआ था । उन्हीं के साथ साथ यह सच्चे ईमान वालों का वर्णन है जिन्हों ने जीवन लक्ष्य अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्ति को बना लिया है और उस की ख़ातिर अपना सब कुछ कुर्बान करते रहते हैं।

300. यहाँ मुसलमानों को हिदायत की जा रही है कि अगर तुम ख़ुदा के सच्चे भक्त बनना चाहते हो तो पूरी तरह से अल्लाह के समक्ष अपने आप को समर्पित करने और उसके अनुपालन में लगे रहने का मार्ग अपनाओं और किसी इस्तिसना (अपवाद) और तहफ़्फ़ुज़ (सुरक्षा) के बग़ैर अपनी पूरी जिन्दगी इस्लाम के तहत (अंतर्गत) ले आओ। दीन की सिर्फ उन बातों को स्वीकार करना जो अपने स्वार्थ के विरुद्ध नहीं पड़ती स्वार्थियों और कपटियों (मुनाफ़िक़ों) का तरीक़ा है। ख़ुदा के सच्चे भक्त तो पूर्ण दासता एवं अनुपालन का मार्ग अपनाते हैं और तमाम मामलों और समस्याओं में वे अपने को इस्लाम के अधीन समझते हैं अत: मानना है तो पूरे इस्लाम को मानो और उस की नि:स्वार्थ पैरवी करो वरना इस्लाम की कुछ बातें मानने और कुछ बातों का इन्कार करने से न तुम्हारी गिनती अल्लाह के वफ़ादार बन्दों में हो सकती है और न इस आधे इस्लाम को स्वीकार करने से दुनिया में मेल मिलाप, शान्ति और न्याय की व्यवस्था स्थापित हो सकती है। बल्कि यह तरीक़ा तो ज़मीन पर फ़साद बरपा करने का कारण होगा।

301. अर्थात जो लोग एक साथ कुफ्र और इस्लाम दोनो से सम्बन्ध रखते हैं और अपनी ज़िन्दगी को उन्होंने दोनों में बाँट रखा है वे शैतान के पदचिन्हों का अनुपालन कर रहे हैं।

302. इन स्पष्ट हिदायतों के बाद भी अगर तुम ने दीनदारी के परदे में स्वार्थपूर्ण रवैया अपनाया या कुफ्र के साथ साँठ गाँठ करते रहे तो यह याद रखो अल्लाह की पकड़ से हरगिज़ बच न सकोगे कि वह अत्यन्त प्रभुत्वशाली है। उस ने अपना दीन इस लिए नहीं भेजा है कि लोग खेल तमाशा बना लें। बल्कि इस लिए भेजा है कि उस की राह पर चलने वालों और उस से विमुख हो कर चलने वालों के बीच अन्जाम के लिहाज से फर्क किया जाए । उस के हकीम होने का यह खुला तक़ाज़ा है।

303.अर्थात अगर इन स्पष्ट हिदायतों के बाद लोग इस्लाम के राजमार्ग पर दृढ़ न हुए और शैतान ही के पीछे भटकते रहे तो यह न समझो कि अब उन्हें किसी और दलील का इन्तिज़ार है बल्कि वे इस बात के इन्तिज़ार में हैं कि अल्लाह और उस के फ़रिश्ते उन के सामने उपस्थित हो जाऐं। लेकिन वह घड़ी तो फैसले की घड़ी होगी। ईमान तो वही स्वीकृत है जो अल्लाह की निशानियों को देखने और सुनने समझने का नतीजा हो। अल्लाह तआला चाहता है कि इन्सान अपनी बुद्धि से काम ले और दलील की बिना पर सत्य को स्वीकार कर ले किन्तु जो लोग सत्य को अपनी आँखों से देख कर मानना चाहते हैं वे क़ियामत का इन्तिज़ार करें। लेकिन वह समय फैसले का होगा न कि इम्तिहान का ।

304. बनी इस्राईल (ईस्राईल के बेटों) को जो निशानियाँ दिखाई गई उन का वर्णन इस से पहले हो चुका है,जैसे समुद्र को फाड़ कर उन के लिए रास्ता बनाया गया, उन के लिए बियाबान में बारह चश्मे (स्रोत) जारी किए गए। बियाबान में उन के रिज़्क़ (आजीविका) का सामान मन्न और सलवा के द्वारा किया गया इत्यादि। इन खुली निशानियों को देखने के बाद भी उन्होंने अल्लाह की नेमतों का निरादार किया।

बनी इस्राईल की तारीख का हवाला यहाँ इस लिहाज़ से है कि जिन संसार की मोह रखने वालों के रवैया पर यहाँ आलोचना की जा रही है वे बनी इस्राईल के गिरोह से सम्बन्ध रखते थे।

305. यहाँ नेमत से इशारा अल्लाह की हिदायत और शरीअत की तरफ है और उस को बदलने से मुराद उस का निरादर एवं अवहेलना करना और इस के बजाय गुमराही मोल लेना है।

306. अर्थात जब यह लोग उन वास्तविकताओं को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हुए जिन को क़ुर्आन बेनिक़ाब कर रहा है और उन्हों ने संसार की भौतिक वस्तुओं पर ही अपनी निगाहों को केन्द्रित कर लिया तो उस के मोह में वे आ गए और अब यह सन्सारिक जीवन उन की नज़रों में ऐसा रच बस गया कि वे आख़िरत के बारे में विचार तक करने के लिए तैयार नहीं हैं। बल्कि जो लोग आख़िरत को अपना लक्ष्य बनाते हैं उन को ये लोग संकीर्ण विचार की श्रेणी में रख कर उन का मज़ाक़ उड़ाने लगते हैं।

307. बेहिसाब, मतलब यह कि आशाओं और अनुमानों से इतना अधिक कि आदमी उस की कल्पना भी न कर सके। इस से अभिप्राय आख़िरत की असीमित एवं अनंत नेमतें हैं।

كَانَ النَّاسُ اُمَّةً وَّاحِدَةً ۫ فَبَعَثَ اللّٰهُ النَّبِيّٖنَ
مُبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ ۪ وَاَنْزَلَ مَعَهُمُ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ
لِيَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ فِيْمَا اخْتَلَفُوْا فِيْهِ ؕ وَمَا
اخْتَلَفَ فِيْهِ اِلَّا الَّذِيْنَ اُوْتُوْهُ مِنْۢ بَعْدِ مَا جَآءَتْهُمُ
الْبَيِّنٰتُ بَغْيًۢا بَيْنَهُمْ ۚ فَهَدَى اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لِمَا اخْتَلَفُوْا
فِيْهِ مِنَ الْحَقِّ بِاِذْنِهٖ ؕ وَاللّٰهُ يَهْدِيْ مَنْ يَّشَآءُ اِلٰى صِرَاطٍ
مُّسْتَقِيْمٍ ﴿٢١٣﴾

213. (शुरु में)लोग एक ही उम्मत थे [308] (किन्तु जब उन्होंने विभेद पैदा किया) तो अल्लाह ने नबियों को भेजा जो ख़ुशख़बरी सुनाने वाले और ख़बरदार करने वाले थे। और उन के साथ किताबे-बरहक (सत्यानुकूल ग्रंथ) नाज़िल की ताकि जिस विषय में लोग विभेद (इख़्तिलाफ) कर रहे थे उन का फ़ैसला कर दे। और इस में विभेद उन्हीं लोगों ने किया जिन को किताब दी गई थी। और यह विभेद उन्होंने खुली हिदायतें आ जाने के बाद मात्र आपस की ज़िद (नफ़्सानियत अथवा स्वार्थपरता) के आधार पर किया।आख़िर कार अल्लाह ने अपने इज़्न (तौफ़ीक़) से ईमान वालों की उस हक़ (सत्य) के मामले में रहनुमाई फरमाई जिस में लोगों ने विभेद किया था। अल्लाह जिसे चाहता है सीधा मार्ग दिखा देता है [309]।

اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تَدْخُلُوا الْجَنَّةَ وَلَمَّا يَاْتِكُمْ مَّثَلُ الَّذِيْنَ
خَلَوْا مِنْ قَبْلِكُمْ ؕ مَسَّتْهُمُ الْبَاْسَآءُ وَالضَّرَّآءُ
وَزُلْزِلُوْا حَتّٰى يَقُوْلَ الرَّسُوْلُ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا
مَعَهٗ مَتٰى نَصْرُ اللّٰهِ ؕ اَلَآ اِنَّ نَصْرَ اللّٰهِ قَرِيْبٌ ﴿٢١٤﴾

214. क्या तुम ने यह समझ लिया है कि तुम जन्नत में दाखिल हो जाओगे हालांकि अभी तुम्हें उन लोगों के जैसे हालात से वास्ता नहीं पड़ा है जो तुम से पहले हो गुज़रे हैं। उन को तंगियों और मुसीबतों का सामना करना पड़ा और वे ऐसे झन्झोड़े गए कि रसूल और उस के ईमान वाले साथी पुकार उठे कि कब आएगी अल्लाह की मदद ? यक़ीन जानो ! अल्लाह की मदद क़रीब है ।[310]

يَسْـَٔلُوْنَكَ مَاذَا يُنْفِقُوْنَ ؕ قُلْ مَآ اَنْفَقْتُمْ مِّنْ خَيْرٍ
فَلِلْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنِ وَابْنِ
السَّبِيْلِ ؕ وَمَا تَفْعَلُوْا مِنْ خَيْرٍ فَاِنَّ اللّٰهَ بِهٖ عَلِيْمٌ ﴿٢١٥﴾

215. वे तुम से पुछते हैं कि क्या खर्च करें ? कहो जो माल भी तुम खर्च करो वह माँ बाप, रिश्तेदारों यतीमों, मिस्कीनों और मुसाफिरों के लिए है। और जो भलाई भी तुम करोगे अल्लाह उसे अच्छी तरह जानता है।

كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ وَهُوَ كُرْهٌ لَّكُمْ ۚ وَعَسٰٓى اَنْ تَكْرَهُوْا شَيْـًٔا
وَّهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَعَسٰٓى اَنْ تُحِبُّوْا شَيْـًٔا وَّهُوَ شَرٌّ لَّكُمْ ؕ وَاللّٰهُ
يَعْلَمُ وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُوْنَ ﴿٢١٦﴾ ع

216. जंग का तुम्हें हुक्म दिया गया है और वह तुम्हें नागवार (अप्रिय) है, मगर कुछ आश्चर्य नहीं कि एक चीज़ को तुम अप्रिय जानो और वह तुम्हारे हक़ (पक्ष) में अच्छी हो और कुछ आश्चर्य नहीं की एक चीज़ को तुम प्रिय जानों और वह तुम्हारे हक़ में बुरी हो । [311] अल्लाह जानता है तुम नहीं जानते । [312]

308. यहाँ उस महत्वपूर्ण पश्न का उत्तर दिया गया है जो धर्मों की भिन्नता को देख कर इन्सान के मन में पैदा होता है। अर्थात जब मानव जाति की उत्पत्ति एवं शुरुआत हुई तो उस का धर्म क्या था? और क्या इन्सान ने अपने इतिहास का आरंभ ही वर्गवाद एवं सम्प्रदायवाद से किया था या वर्ग एवं सम्प्रदायवाद बाद की पैदावार हैं ? क़ुर्आन इस सवाल का जवाब यह देता है कि मानव जाति अपने आरंभ काल में एक ही उम्मत थी अर्थात एक ही वास्तविकता एक ही आधार एवं एक ही केन्द्र पर सब सहमत एवं एकत्र थे और वह है एकेश्वरवाद का धर्म जिस का नाम इस्लाम है। मानवता ने एकेश्वरवाद (तौहीद) ही की रौशनी में आँख खोली थी और मानवता का क़ाफ़िला इस्लाम ही के राजमार्ग पर चल पड़ा था। इसी आधार पर मानवता के इतिहास का पहला अध्याय अत्यन्त उज्जवल अध्याय है।

क़ुर्आन के इस बयान का समर्थन आधुनिक खोजों एवं नई रिसर्चों द्वारा भी होता है कि प्राचीनतम काल में मानव जाति का धर्म तौहीद (एकेश्वरवाद) था न कि शिर्क (बहुदेववाद)।

"The evidence of Anthropology, says a leading archaeologist of the day, Sir Charles Marston, will be cited in those columns to prove that the original religion of the early races was actually Monotheism or something very like it."(The Bible is true P .25 vide commentary on ,Holy Quran by Moulana Abdul Majid Daryabadi Vol. I, p. 33 A)-

309. इस आयत में जिस वास्तविकता को बे निक़ाब किया गया है वह यह है कि मानव जाति अपने आरंभकाल में एक ही पलेटफार्म पर एकत्रित थी और वह था अल्लाह का दीन (इस्लाम)। अत: अल्लाह तआला ने पहले इन्सान को जो तमाम इन्सानों के बाप और जिन का नाम आदम है, हिदायत से नवाज़ा (सुसज्जित किया)। उन की नस्ल एक मुद्दत तक इसी हिदायत अर्थात सत्यधर्म पर जमी रही और एक ही उम्मत बनी रही बाद में लोगों ने वास्तविक धर्म में विभेद पैदा कर के भिन्न भिन्न राहें निकाल ली और मानवता का क़ाफ़िला जो सत्य मार्ग पर चल रहा था उस से भटक गया तथा वर्गों एवं संप्रदायों में बट गया। और हर वर्ग तथा समप्रदाय ने एक धर्म विशेष का रुप धार लिया इस परिस्थिति के सुधार के लिए अल्लाह तआला अपने नबियों को इन्सानों के विभिन्न समूहों की तरफ भेजता रहा। अत: इन नबियों ने लोगों को सत्य धर्म की ओर बुलाया, अल्लाह की हिदायत से मुँह मोड़ने और अलग अलग एवं तितर बितर होने के बुरे परिणाम से लोगों को आगाह किया और उन लोगों को कामयाबी की खुशखबरी सुनाई जो नबियों की दअवत को क़ुबूल कर के सच्चे दीन इस्लाम पर जम जाऐं। इन नबियों ने जो विभिन्न देशों तथा विभिन्न क़ौमों में आए किसी नये धर्म की बुनियाद नहीं डाली थी बल्कि वह इस्लाम ही था जिसे उन्हों ने पेश किया था। और इस सत्य धर्म के आधार पर उन्होंने लोगों को फिर से एक उम्मत बनाने की कोशिश की थी। उन के साथ जो किताबें नाज़िल की गई थीं वह वास्तव में एक ही किताब 'अल किताब' (The Book) के अंश थे जिन में विभिन्न धर्मों को नहीं बल्कि एक ही दीन को पेश किया गया था। इन किताबों ने लोगों के तमाम धार्मिक विवादों एवं विभेदों का फैसला कर के सत्य को नये सिरे से उजागर किया था। लेकिन जिन उम्मतों के पास यह हक़ (सत्य) आया उन्होंने बाद में मात्र आपस की जिद, तअस्सुब, पक्षपात, स्वार्थ, इच्छा भक्ति और परस्पर झगड़े एवं अत्याचार के कारण इस हक़ (सत्य) में विभेद किया। इस तरह अल्लाह तआला की तरफ से बार बार सत्य को स्पष्ट रुप से प्रस्तुत करने के बावजूद लोग उस में विभेद करते रहे यहाँ तक कि अल्लाह तआला ने क़ुर्आन नाज़िल फरमा कर लोगों पर हक़ को फिर स्पष्ट कर दिया और इस हक़ को अपने असल रुप में क़ियामत तक के लिए सुरक्षित रखने का सामान किया। इस के बाद कोई कारण नहीं कि लोग धर्मों के विभेद में पड़े रहें और सत्यधर्म के बारे में इख़्तिलाफ करें। किन्तु हक़ को स्वीकार करने की तौफ़ीक़ उन ही लोगों को नसीब होती है जो किसी तअस्सुब, पक्षपात और हठ्धर्मी में लिप्त नहीं होते। और जिन के अन्दर हक़ को स्वीकार करने के लिए आमादगी होती है ।

310. इस में उन लोगों की तसल्ली का सामान है जो हक़ को क़ुबूल करें और जिन्हें इस राह में मुखालफ़त और मुसीबतों से दो चार होना पड़े। ऐसे लोगों के सामने सत्य एवं असत्य की कशमकश का इतिहास पेश किया जा रहा है कि तुम से पहले जिन लोगों ने इस मार्ग पर चलने की ठानी उन को खुदा के विद्रोही बन्दों से कठिन मुक़ाबला पेश आया और अपनी जानों को जोखिम में डाल कर उन्हें सत्य का परचम उठाना पड़ा। पिछली उम्मतों को सत्य के मार्ग में कैसी कठिनाईयाँ सहन करनी पड़ी इस का अन्दाज़ा नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की इस हदीस से होगा जिस में आप फ़रमाते हैं :

قــد كـانَ مــــنْ قبـلكم يؤخَذُ الرجلُ فَيُحفرُلَهٗ فى الارضِ
فَيُـجعـلُ فِيهـا ثـم يُـؤتىٰ بالمنشارِ فَيوضعُ عَلىٰ رَاسهٖ فَيُجعَلُ
نِـصُفَيْـنِ وَ يُـمُشـط بِـامُشَـاطِ الحـديـدِ مـَادُوْنَ لَـحُـمِـهٖ
وَعـظـمـهٖ مَا يَصـُدُّهٗ ذَالِكَ عَـنْ دِيـْنِـهٖ (البخاری)

इस का अनुवाद इस तरह है "जो लोग तुम से पहले गुज़रे हैं उन के साथ ऐसे ऐसे मामले पेश आए हैं कि किसी को पकड़ कर ज़मीन में गढ़ा खोदा जाता और उस में उसे खड़ा कर दिया जाता और आरा उस के सर पर रख कर इस तरह चलाया जाता कि उस के दो टुकड़े हो जाते और लोहे के कंघे जिस्म पर चुभोए जाते जो गोश्त से होते हुए हड्डियों में पेवस्त हो जाते, इन कठिनाईयों एवं मुसीबतों को वह सहन करता किन्तु अपने दीन (इस्लाम) से न फिरता न मुँह मोड़ता।"

311. यह एक मौलिक वास्तविकता है जिसे यहाँ स्पष्ट किया गया है। इन्सान का मामला भी बड़ा अजीब है। जो चीज़ें उस के मन उस की इच्छाओं को अपनी ओर खींचती हैं वह सामान्यता: उस को नीचे ढकेलने वाली हैं। और जो चीज़ें उस को बुलन्द करने वाली हैं वह उस के मन एवं उसकी इच्छाओं को अप्रिय हैं या उस को भाती नहीं हैं। लिहाज़ा अगर भले और बुरे एवं सही और ग़लत का मामला इन्सान पर छोड़ दिया जाये तो इस की अधिक संभावनाऐं हैं कि वह ग़लत फैसले कर बैठेगा। वह ऐसी कितनी ही बातों को ग़लत ठहरायेगा जो उस के मन को भाती नहीं हैं। किन्तु वास्तव में वह उस के नैतिक उत्थान तथा मानव प्रतिष्ठा की प्राप्ति का साधन हैं, और वह उन बातों को जो वास्तव में उस के नैतिक पतन एवं मानव प्रतिष्ठा को कलंकित करने का कारण हैं मात्र इस लिए उस के मन को लुभाती हैं कि वह उन को पसन्द करता है और वे आसान भी हैं। इसी कारण जीवन से सम्बन्धित समस्याओं में रहनुमाई एवं मार्ग दर्शन की ज़िम्मेदारी अल्लाह तआला ने अपने ऊपर ली है।

जंग यूँ तो बड़ी हौलनाक चीज़ प्रतीत होती है किन्तु कभी कभी उच्च उद्देश्यों की प्रप्ति के लिए और मानवता को तबाही से बचाने के लिए अनिवार्य हो जाती है।

इस आयत में जिस जंग को फ़र्ज़ (ज़रुरी) ठहराया गया है वह अल्लाह की राह में की जाने वाली जंग है जो हालात के हिसाब से अनिवार्य हो। जैसा कि ख़ान-ए-काबा को मुश्रिकीन (बहुदेववादियों) के क़ब्ज़े से आज़ाद करने, दीन को ग़ालिब करने और ईमान वालों की सुरक्षा के लिए मदीने के मुसलमानों के लिए जंग बिल्कुल ज़रुरी हो गई थी।

312. अर्थात इन्सान ग़लत धारणा बना सकता है और ठोकर खा सकता है किन्तु अल्लाह तआला का इल्म (ज्ञान) चूँकि इतना विशाल है कि उस के ज्ञान की सीमा में वे चीज़े जो दिखाई देती हैं वे भी आती हैं और जो छिपी हैं वे भी आती हैं इस लिए उस की रहनुमाई सही रहनुमाई है। और इस में किसी प्रकार की ग़लती हो जाने की कोई संभावना नहीं है।

(ऐ पैग़म्बर !) लोग तुम से शराब (मदिरा) और जुआ के बारे में पूछते हैं। कहो इन में बड़ी खराबी है, और लोगों के लिए कुछ फायदे भी हैं लेकिन इन की खराबी इन के फ़ायदे से बहुत अधिक है ।और तुम से पूछते हैं कि क्या ख़र्च करें ?कहो जो फ़ाज़िल (अधिक अतिरिक्त) हो। इस तरह अल्लाह तुम्हारे लिए अपने अहकाम स्पष्ट करता है ताकि तुम सोचो।(अल-क़ुर्आन)

217. वे तुम से माह-हराम (प्रतिष्ठित महीनों) के बारे में पूछते हैं कि इस में जंग करना कैसा है ? कहो इस में जंग करना बड़ी संगीन बात है, मगर (लोगों को) अल्लाह के रास्ते से रोकना, उस से कुफ्र करना, मस्जिदे हराम (प्रतिष्ठित मस्जिद) से रोकना और उस के रहने वालों को वहाँ से निकाल देना अल्लाह के नज़दीक इस से भी बड़ा गुनाह है और फित्ना क़त्ल से भी बढ़ कर है।[313] और वे तुम से लड़ते ही रहेंगे यहाँ तक कि अगर उन का बस चले तो वे तुम को तुम्हारे दीन से फेर दें[314]। और तुम में से जो कोई अपने दीन से फिर जाएगा और कुफ्र (इन्कार) की हालत में मरेगा तो ऐसे लोगों के आमाल (कर्म) दुनिया और आख़िरत में अकारथ जायेंगे। वे दोज़ख़ी हैं और हमेशा उसी में रहेंगे।

يَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الشَّهْرِ الْحَرَامِ قِتَالٍ فِيْهِ ؕ قُلْ قِتَالٌ فِيْهِ
كَبِيْرٌ ؕ وَصَدٌّ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَكُفْرٌۢ بِهٖ وَالْمَسْجِدِ الْحَرَامِ ۗ
وَاِخْرَاجُ اَهْلِهٖ مِنْهُ اَكْبَرُ عِنْدَ اللّٰهِ ۚ وَالْفِتْنَةُ اَكْبَرُ مِنَ
الْقَتْلِ ؕ وَلَا يَزَالُوْنَ يُقَاتِلُوْنَكُمْ حَتّٰى يَرُدُّوْكُمْ عَنْ
دِيْنِكُمْ اِنِ اسْتَطَاعُوْا ؕ وَمَنْ يَّرْتَدِدْ مِنْكُمْ عَنْ دِيْنِهٖ
فَيَمُتْ وَهُوَ كَافِرٌ فَاُولٰٓئِكَ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ فِى
الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ۚ وَاُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ النَّارِ ۚ هُمْ فِيْهَا
خٰلِدُوْنَ ﴿٢١٧﴾

218. अल्बत्ता जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने हिजरत की[315] और अल्लाह की राह में जिहाद किया वे अल्लाह की रहमत (दया) के उम्मीदवार हैं और अल्लाह बड़ा ही माफ़ करने वाला और रहम फ़रमाने वाला है।

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَالَّذِيْنَ هَاجَرُوْا وَجٰهَدُوْا فِىْ سَبِيْلِ
اللّٰهِ ۙ اُولٰٓئِكَ يَرْجُوْنَ رَحْمَتَ اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٢١٨﴾

219. (ऐ पैग़म्बर !) लोग तुम से शराब[316] (मदिरा) और जुआ[317] के बारे में पूछते हैं।कहो इन में बड़ी खराबी है, और लोगों के लिए कुछ फायदे भी हैं लेकिन इन की खराबी इन के फ़ायदे से बहुत अधिक है[318]।और तुम से पूछते हैं कि क्या ख़र्च करें ?कहो जो फ़ाज़िल (अधिक, अतिरिक्त) हो।[319] इस तरह अल्लाह तुम्हारे लिए अपने अहकाम स्पष्ट करता है ताकि तुम सोचो।

يَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ ؕ قُلْ فِيْهِمَآ اِثْمٌ كَبِيْرٌ
وَّمَنَافِعُ لِلنَّاسِ ۡ وَاِثْمُهُمَآ اَكْبَرُ مِنْ نَّفْعِهِمَا ؕ
وَيَسْـَٔلُوْنَكَ مَاذَا يُنْفِقُوْنَ ۬ قُلِ الْعَفْوَ ؕ كَذٰلِكَ
يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيٰتِ لَعَلَّكُمْ تَتَفَكَّرُوْنَ ﴿٢١٩﴾

220. दुनिया और आख़िरत (दोनों के मामले) में । [320] और तुम से यतिमों के बारे में पूछते हैं। कहो जिस में उन की भलाई हो वही बेहतर है।और अगर तुम उन के साथ मिल जुल कर रहो तो वे तुम्हारे भाई ही हैं।अल्लाह जानता है कौन बिगाड़ चाहने वाला है और कौन भलाई चाहने वाला है।[321]अगर अल्लाह चाहता तो तुम को मशक्कत (कठिनाई) में डाल देता।निस्संदेह अल्लाह ग़ालिब (प्रभुत्वशाली) और हिकमत वाला (तत्वदर्शी) है ।[322]

فِى الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ؕ وَيَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الْيَتٰمٰى ؕ قُلْ اِصْلَاحٌ
لَّهُمْ خَيْرٌ ؕ وَاِنْ تُخَالِطُوْهُمْ فَاِخْوَانُكُمْ ؕ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ الْمُفْسِدَ
مِنَ الْمُصْلِحِ ؕ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَاَعْنَتَكُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ﴿٢٢٠﴾

313. इस की व्यख्या के लिए नोट न.२६३देखें ।

314. इस से यह अन्दाज़ा होता है कि फ़ितना कितनी ख़तरनाक चीज़ है जिस में उस वक़्त ईमान वाले मुब्तिला हो गए थे । अर्थात उन का दीन और ईमान बहुत ही खतरे में पड़ गया था । इसी करण उन्हें युद्ध करने की अनुमति दे दी गई थी।

315. नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हिजरत कर जाने के बाद आप की मदद और अपने दीन एवं ईमान की सुरक्षा के लिए मक्का से हिजरत का हुक्म दिया गया था। इस आयत का इशारा उसी तरफ है।

316. शराब एक मादक पदार्थ है जो नशा पैदा करता है । इस के कुप्रभाव बुद्धि और शरीर दोनों पर पड़ते हैं और यह मानव के आध्यात्मिक तथा नैतिक जीवन के लिए ख़तरनाक होने के अलावा खानदान, समाज और क़ौम के लिए भयानक तबाही लाती है। यद्यपि शराब से क्षणिक रुप से कुछ फ़ायदा भी पहुँचता है जैसे शरीर में इस के पहुँचने से आदमी अपनी कार्यक्षमता में वृद्धि का आभास करने लगता है और किसी काम को कर गुज़रना उस के लिए आसान सा प्रतीत होता है,किन्तु यह न केवल नैतिकता की दृष्टि से अत्यन्त हानिकारक है बल्कि भौतिकता की दृष्टि से भी यह बड़ी भयानक चीज़ है। नीचे हम इन्साइल्को पीडिया आफ़ रेलिजन एण्ड एथिक्स से कुछ उदाहरण प्रस्तुत करते हैं जिन से शराब की क्षतियों पर प्रकाश पड़ता है इस से अन्दाज़ा होगा कि क़ुर्आन ने शराब को हराम ठहरा कर इन्सान को किन किन हानियों, क्षतियों एवं गंदगियों से बचाना चाहा है ।

EXTRACTS FROM THE ENCYCLOPAEDIA OF RELIGION AND ETHICS, VOLUME I . ALCOHOL

"When enough alcohol is taken to produce intoxication, judgement, self control, perception and the other higher faculties are affected first, with greater facility in thought and speech. there is a certain disregard of the environment, a quiet person may become lively and witty, unwanted confidences are given and there may be assertiveness and quarrelsomeness, singing, shouting and other noisy demonstrations indicated the free play of the emotions...... Such persons may suffer from an insane or alcoholic heredity......An automatic dreamstate, in which complicated, it may be criminal, actions are performed quite unconsciously, is some times induced by acute alcoholism. (p. 300).

"Self respect becomes impaired and by selfishness, neglect of wife, children and other dependents, loosening of self control and want of truthfulness, the moral deterioration is signalized. (P. 300).

"It is estimated that in this country (U.K.) alcohol accounts for 100,000 to 120,000, deaths per annum" (P. 301).

Alcohol is a poison for protoplasm."

"Large number of psychometric experiments under conditions of the greatest accuracy prove that alcohol in small dietetic doses exercises a distinctly paralysing effect on the working of the brain". (P. 299)

"The amount of work is increased and more easily performed but after a brief period extending almost to 20 or 30 minutes, there comes a prolonged reaction, so that the total effect is distinctly disadvantageous". (P. 299).

"On the whole experiments show that alcohol does not strengthen the heart but rather the reverse" (P. 300).

"There is universal testimony as to the close relationship between excessive drinking and breaches of the moral law and the laws of the state. This is a direct consequence of the higher faculties, intellectual and moral, and the resulting free play given to the lower inclinations. Alcohol cannot only be a direct cause of crime, but it acts powerfully along with other conditions such as heriditary nervous weakness or instability of the brain" (P. 301).

317. जुआ नैतिक और आर्थिक हानियों एवं क्षतियों के आधार पर हराम ठहराया गया है। इस के नुक़्सान निम्न हैं।

1) जुआ इन्सान को भाग्य एवं संयोग तथा ख़ाली आरज़ुओं पर भरोसा करना सिखाता है। व्यवहारिक प्रयत्न, परिश्रम, एवं संघर्ष तथा उन साधनों पर भरोसा करना नहीं सिखाता जिन्हें अल्लाह ने उस के लिए ही पैदा फ़रमाया है। और उसे अपनाने का आदेश दिया है। इस्लाम चाहता है कि इन्सान फल को उचित

साधनों एवं प्रयत्नों द्वारा प्रप्त करे।

2) जुआ लोगों का माल अवैध तरीक़े से खाने जैसा है।

3) इस से जुआ खेलने वालों के बीच में विद्वेष एवं शत्रुता फैलती है। हारने वाला यद्यपि ख़ामोशी अपनाता है मगर उस की खामोशी रोष एवं क्रोध से भरी होती है।

4) जुअे का शौक़ व्यक्ति के लिए ही नहीं समाज के लिए भी बेहद ख़तरनाक है। जुआरी अपनी आत्मा और अपने परिवार की ज़िम्मेदारियों की तरफ़ से बे परवाह हो जाता है। ऐसे लोगों से कुछ भी संभव है। वे अपने दीन अपनी इज़्ज़त और अपने देश को भी अपने स्वार्थ के लिए बेच सकते हैं।

5) क़ुर्आन ने शराब और जुआ को एक हुक्म में रख कर इस वास्तविकता को दर्शाया है कि दोनों चीज़ें, व्यक्ति, परिवार, देश और नैतिकता (अख़लाक़) सब के लिए समान रुप से हानिकारक हैं। जुआरी का मामला शराबी से बहुत मिलता जुलता है । बल्कि बहुत कम ऐसा होता है कि एक का अस्तित्व दूसरे के बग़ैर पाया जाए।

(यूसुफ़ क़रज़ावई की पुस्तक इस्लाम में हलाल और हराम में का सारांश, पृष्ठ 384) जुअे की हानियों एवं क्षतियों के बारे में इन्साइल्कोपीडिया आफ रेलिजन ऐण्ड ऐथिक्स के कुछ उदाहरण देखें ।

EXTRACTS FROM THE ENCYCLOPAEDIA OF RELIGION AND ETHICS VOL.6 GAMBLING

"On the Aryan races gambling has a special hold, A famous hymn of the Rigveda (x 34) vividly sets forth the woe of the ruined gambler, and the length to which gambling was carried in India is well illustrated by the episode of Nala and Damayanti in the Mahabharata (iii 59-61) where the Prince loses all that he has.... Sanskrit Literature abounds in allusions to the evil of play" (P. 164).

"The vicious tendency of gambling has never been called in question. Lord Beaconsfield spoke of it as a vast engine of national demoralisation" (P. 166).

"The economic aspect needs no discussion. Gambling adds nothing to the wealth to the community". (P. 166).

"Though it is in society that the temptation comes, gambling itself is anti-social. It is as Herbert Spencer says, a kind of action by which pleasure is obtained at the cost of the pain to another. The happiness of the winner implies the misery of the loser. This kind of action, therefore is essentially anti-social, it scars the sympathies cultivates a hard egoism, and so produces a general deterioration of character, it is a habit intrinsically savage .... in an atmosphere of brotherhood no form of gambling could exist" (P. 166).

"There are only three ways in which property can be legitimately acquired ---- by gift, by labour and by exchange. Gambling stands outside all of these.

"Its motive is, however carefully disguised, covetousness. It is an attempt to get property without paying the price for it. It is a violation of the law of equivalents. It is a kind of robbery by mutual agreement; but it is still robbery , just as duelling which is murder by mutual agreement is still treated as murder. It is begotten of covetousness, it leads to idleness – it is moreover an appeal to chance – it concentrates attention upon luck, and thereby withdraws attention from worthier objects of life."

318. अज्ञानता युग (नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नबी नियुक्त होने के पूर्व के युग) में लोग शराब पी कर जुआ खेलते थे। और दस्तूर यह था कि इस अवसर पर ऊँट ज़बह करते और जो जीत जाता वह ग़रीबों में उस का गोश्त बाँटता। इस कारण शराब और जुआ को दयालुता का प्रेरक अथवा कारण समझा जाता था। जन सेवा के इस पक्ष को सामने रखते हुए लोगों के ज़ेहन में यह सवाल पैदा हुआ कि जब क़ुर्आन अल्लाह की राह में खर्च करने (इन्फाक़) पर ज़ोर दे रहा हो तो शराब और जुअे के इस लाभ का ध्यान करते हुए इन का क्या हुक्म है? क़ुर्आन ने इस का जवाब यह दिया कि शराब और जुअे में कुछ फायदे जरुर हैं किन्तु, इन की नैतिक हानियाँ एवं क्षतियाँ इन के लाभों से बढ़ कर हैं इस लिए इस ने इन दोनों चीज़ो को हराम ठहराया है। इस से यह मौलिक वास्तविकता स्पष्ट होती है कि जिन चीज़ो को शरीअत (इस्लामी संविधान) में हराम ठहराया गया है उन का हराम ठहराना इस कारण नहीं है कि इन के अन्दर भौतिक लाभ या जन सेवा का कोई पक्ष मौजूद नहीं है बल्कि ये चीज़ें इस कारण हराम ठहराई गई हैं कि

इन की नैतिक हानियाँ एवं क्षतियाँ इन के लाभ से बढ़ कर हैं। अत: जो चीज़ें ऊपर से मानव जाति के लिए लाभदायक प्रतीत होती हों किन्तु नैतिकता की दृष्टि से हानि का पक्ष प्रभावशाली हो तो ऐसी चीज़ों से परहेज़ करना ही चाहिए। इस मौलिक वास्तविकता को न समझने के कारण लोग एक ज़ायज़ एवं सही उद्देश्य के लिए नाजायज़ तरीकों को अपनाने में कोई आपत्ति अथवा दोष नहीं महसूस करते। जैसे शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिए नाच गाने के प्रोग्राम आयोजित करना या दीन दुखियों कि सहायता के लिए फ़िल्म स्टारों के प्रदर्शन या फिल्मी शो के प्रोग्राम को लाभदायक एवं जनसेवा का काम समझा जाता है । हालाँकि उन के अन्दर गुनाह की परवरिश और आचरण एवं चरित्र को बिगाड़ने का पूरा सामान मौजूद होता है। और नुक़्सान उस के फ़ायदे से कहीं बढ़ कर होता है। इस लिए इस्लाम अच्छे उद्देश्यों के लिए बुरे साधनों को इस्तेमाल करने की अनुमति नहीं देता।

319. इस इन्फ़ाक़ (अल्लाह की राह में खर्च) का सम्बन्ध जिहाद से है। कभी कभी ऐसे हालात आ जाते हैं कि दीन एवं मिल्लत की सुरक्षा के लिए आदमी को अपना सब कुछ लुटाना पड़ता है। उस समय चूँकि ख़ाना-ए-काबा को बहुदेववादियों के चंगुल से आज़ाद कराना एक अत्यन्त महान काम था और इस पवित्र जेहाद में असाधारण बलिदान की आवश्यकता थी इस लिए हुक्म दिया गया कि अपनी बुनियादी एवं अनिवार्य ज़रुरतों तथा जरुरतमन्दों पर खर्च करने के बाद जो कुछ अधिक अथवा अतिरिक्त बच रहे वह सब अल्लाह की राह में क़ुर्बान कर दो।

320. अर्थात दुनिया और आख़िरत दोनो के लाभों एवं मसलहतों पर विचार करो और अपनी धारणा संतुलित बनाओ। साधारण तौर पर लोग या तो इस छोर पर होते हैं या उस छोर पर। या तो शराब और जुअे को भी जायज़ ठहरा देते हैं या जायज़ चीज़ों को भी हराम ठहरा कर दीन को सन्यास का रुप प्रदान करते हैं। क़ुर्आन मानव विचार की इस प्रकार तरबियत करता है कि उस में संतुलन पैदा हो जाए। और वह दुनिया एवं आख़िरत दोनों की मसलहतों को समझ सके।

321. यतिमों के माल की सुरक्षा से सम्बन्धित क़ुर्आन ने जो आदेश दिये हैं वे बड़े सख़्त हैं। इन आदेशों के कारण लोग इस हद तक सावधानी बरतने लगे थे कि जिस घर में कोई यतीम बच्चा होता,उस के खाने पीने का प्रबन्ध बिलकुल अलग कर दिया जाता । यहाँ तक कि अगर यतीम के खाने में कुछ बच जाता तो उस के भी खाने से परहेज़ करते कि कहीं यह यतीम का माल ख़ाने के अन्तर्गत न आजाए । इस असाधारण सावधानी के कारण लोग परेशानी महसूस करने लगे थे और यह सवाल पैदा हो गया था कि अगर यतीमों का माल अपने माल में शामिल कर के ख़ाना पीना समान रखा जाए तो क्या यह जायज़ होगा? इसी सवाल का जवाब इस आयत में दिया गया है कि जो तरीक़ा यतीमों की भलाई की ख़ातिर अपनाना बेहतर हो वह अपनाये जाऐं। अगर अपने साथ शामिल कर लेना उन के हक़ (पक्ष) में लाभदायक मालूम पड़े तो उसे अपनाया जा सकता है साथ ही तंबीह भी कर दी कि अल्लाह अच्छी तरह जानता है कि कौन इस अनुमति से ग़लत फ़ायदा उठा कर यतीमों का माल हड़प करना चाहता है और कौन वास्तव में उस की सुरक्षा के लिए चिन्तित है। अत: इस मामले में अल्लाह से डरो।

322. इस लिए उस का यह हुक्म भी मसलहत और हिकमत (तत्वदर्शिता) पर आधारित हैं।

221. और मुश्रिक (बहुदेववादी) औरतों से निकाह न करना [323] जब तक कि वे ईमान न ले आऐं।एक ईमान वाली दासी एक मुश्रिक औरत से कहीं बेहतर है यद्यपि वह तुम्हें पसन्द आए। और मुश्रीकों (बहुदेववादियों) को अपनी औरतें निकाह में न दो [324] जब तक कि वे ईमान न ले आऐं। एक ईमान वाला दास एक मुश्रिक से कहीं बेहतर है यद्यपि वह तुम्हें पसन्द आए। ये लोग आग की तरफ बुलाते हैं और अल्लाह अपने हुक्म से जन्नत और क्षमा कृपा की ओर बुलाता है और अपनी आयतें (आदेश) लोगों के लिए साफ साफ बयान करता है। ताकि वे याद दाहानी (शिक्षा) हासिल करें।

وَلَا تَنْكِحُوا الْمُشْرِكٰتِ حَتّٰى يُؤْمِنَّ ۚ وَلَاَمَةٌ مُّؤْمِنَةٌ خَيْرٌ مِّنْ
مُّشْرِكَةٍ وَّلَوْ اَعْجَبَتْكُمْ ۚ وَلَا تُنْكِحُوا الْمُشْرِكِيْنَ حَتّٰى يُؤْمِنُوْا ۚ
وَلَعَبْدٌ مُّؤْمِنٌ خَيْرٌ مِّنْ مُّشْرِكٍ وَّلَوْ اَعْجَبَكُمْ ۚ اُولٰٓئِكَ
يَدْعُوْنَ اِلَى النَّارِ ۚۖ وَاللّٰهُ يَدْعُوْٓا اِلَى الْجَنَّةِ وَالْمَغْفِرَةِ
بِاِذْنِهٖ ۚ وَيُبَيِّنُ اٰيٰتِهٖ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُوْنَ ﴿٢٢١﴾

222. वे तुम से हैज़ (मासिक धर्म) के बारे में पूछते हैं। कहो वह नापाकी है अतः उन दिनों में औरतों से अलग रहो [325] और उन से क़ुर्बत (संभोग)न करो जब तक कि वे पाक न हो जाऐं। फिर जब वे अच्छी तरह पाक हो जाऐं तो उन के पास जाओ [326] उस तरह जैसा कि अल्लाह ने तुम को हुक्म दिया है।[327] अल्लाह तौबा करने वालों को पसन्द करता है और उन लोगों को पसन्द करता है जो खूब पाकीज़गी (पवित्रता) अपनाते हैं।

وَيَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الْمَحِيْضِ ۗ قُلْ هُوَ اَذًى ۙ فَاعْتَزِلُوا النِّسَآءَ فِى
الْمَحِيْضِ ۙ وَلَا تَقْرَبُوْهُنَّ حَتّٰى يَطْهُرْنَ ۚ فَاِذَا تَطَهَّرْنَ فَاْتُوْهُنَّ
مِنْ حَيْثُ اَمَرَكُمُ اللّٰهُ ۗ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ التَّوَّابِيْنَ وَيُحِبُّ
الْمُتَطَهِّرِيْنَ ﴿٢٢٢﴾

223. तुम्हारी औरतें तुम्हारे लिए खेतियाँ हैं, तो अपनी खेती में जिस तरह चाहो आओ [328]। और अपने भविष्य का सामान करो [329] एवं अल्लाह से डरते रहो।खूब जान लो कि एक दिन तुम्हें उस से मिलना है और (ऐ नबी !) ईमान वालों को खुशख़बरी दे दो।

نِسَآؤُكُمْ حَرْثٌ لَّكُمْ ۠ فَاْتُوْا حَرْثَكُمْ اَنّٰى شِئْتُمْ ۫ وَقَدِّمُوْا
لِاَنْفُسِكُمْ ۗ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّكُمْ مُّلٰقُوْهُ ۗ وَبَشِّرِ
الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿٢٢٣﴾

224. किसी के साथ भलाई करने, तक़्वा (धर्म परायणता) अपनाने और लोगों में सुधार का काम करने के खिलाफ़ अल्लाह को अपनी क़समों का निशाना न बनाओ [330]। अल्लाह सब कुछ सुनने वाला और सब कुछ जानने वाला है [331]।

وَلَا تَجْعَلُوا اللّٰهَ عُرْضَةً لِّاَيْمَانِكُمْ اَنْ تَبَرُّوْا وَتَتَّقُوْا
وَتُصْلِحُوْا بَيْنَ النَّاسِ ۗ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ﴿٢٢٤﴾

225. अल्लाह तुम्हारी व्यर्थ की (बे इरादा) क़समों पर तुम से पूछ ताछ नहीं करेगा। लेकिन उन क़समों पर ज़रुर पकड़ करेगा जो तुम ने दिल के इरादे के साथ खाई हो [332]। और अल्लाह बहुत क्षमा करने वाला और सहनशील है।

لَا يُؤَاخِذُكُمُ اللّٰهُ بِاللَّغْوِ فِىْٓ اَيْمَانِكُمْ وَلٰكِنْ يُّؤَاخِذُكُمْ
بِمَا كَسَبَتْ قُلُوْبُكُمْ ۗ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ حَلِيْمٌ ﴿٢٢٥﴾

323. यतीमों के अधिकारों की रक्षा की सूरत यह थी कि उन की माताओ से निकाह कर लिया जाए, क़ुर्आन ने इस मसलहत को महत्वपूर्ण ठहरा कर इस की अनुमति दे दी किन्तु शर्त यह रखी कि वे ईमान वाली हों। मुश्रिक (बहुदेववादी) औरतों से निकाह की किसी हाल में अनुमति नहीं हैं क्यों की विवाहिक जीवन के प्रभाव बड़े गहरे होते हैं। पत्नी के बहुदेववादी विचारों एवं आचारणों का प्रभाव पति औलाद और पूरे परिवार पर पड़ सकता है। पत्नी घर में बुत रखे तो बच्चों का बुतपरस्ती से सुरक्षित रहना मुश्किल है। इस लिए कि जब वे अपनी माँ को बुत की पूजा करते देखेंगे तो खुद भी करने लगेंगे।

इसी तरह एक मुसलमान औरत का मुश्रिक मर्द से निकाह औरत के लिए ज़बरदस्त फ़ित्ने का कारण है। क़ुर्आन ने इस रिश्ते को हराम ठहराने की वजह भी साफ बयान कर दी कि ये लोग आग की तरफ बुलाते हैं इस लिए ऐसे रिश्ते से ईमान वालों को निश्चित रुप से परहेज़ करना चाहिए।

इस हुक्म में, बुत परस्त, अनेकेश्वरवादी अथवा बहुदेववादी, क़ाफ़िर और मुलहिद (ख़ुदा का इन्कार करने वाले) भी शामिल हैं। अलबत्ता अहले-किताब (यहूदियों और ईसाईयों) की औरतों से निकाह करने की अनुमति इस से अलग है जिस का वर्णन सूरह ''माइदह''आयत नं.५ में दिया गया है।

क़ुर्आन के इस निश्चित एवं स्पष्ट आदेश को दृष्टि में रखते हुए बैनुल-मज़ाहिबी (अन्तधार्मिक अथवा Inter-Religious) शादियों को मुसलमानों के अन्दर प्रचलित करने की कतई गुन्जाइश नहीं है और न राजनीतिक हितों के कारण हराम को हलाल ठहराया जा सकता है।

324. तौरात में भी मुश्रिकों से शादी ब्याह न करने का आदेश मौजूद है जिस से स्पष्ट होता है कि यह सूरत हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की शरीअत में भी हराम थी।

''और न उन से ब्याह शादी करना, न तो अपनी बेटी उन के बेटे को ब्याह देना, और न उन की बेटी को अपने बेटे के लिए ब्याह लेना। क्योंकि वे तेरे बेटे को मेरे पीछे चलने से बहकाऐंगी, और दुसरे देवताओं की उपासना करवाऐंगी,और इस कारण यहोवा का कोप तुम पर भड़क उठेगा और वह तुझ को शीघ्र सत्यानाश कर डालेगा।''(व्यवस्थाविवरण 7:3,4)

325. मासिक धर्म के दिनों में औरतों से अलग रहने का जो हुक्म दिया गया है उस का यह मतलब नहीं कि औरत को अछूत बना कर रख दिया जाए बल्कि इस का मतलब यह है कि केवल संभोग से परहेज़ किया जाए जैसा कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की हदीसों से स्पष्ट होता है। अहले किताब के यहाँ हाइज़ा (त्रृतुमती) को छूना भी आदमी को नापाक बना देता था (देखिये लैव्यव्यवस्था 15: 19,20) लेकिन इस्लाम ने इन बोझल आदेशों को समाप्त कर के केवल संभोग की हद तक अलग रहने का हुक्म दिया है जो उचित भी है और चिकित्सा शास्त्र (Medical Science) के अनुसार सही भी ।

326. अर्थात जब मासिक धर्म (हैज़) समाप्त हो जाए तो संभोग की पाबन्दी नहीं रहती लेकिन बेहतर यह है कि जब औरत नहा धो कर अच्छी तरह पाक साफ़ हो जाए तो उस से क़ुर्बत (संभोग) किया जाए।

327. यहाँ हुक्म से अभिप्राय प्रकृतिक आदेश है जिसे इन्सान के स्वभाव में समावेश कर दिया गया है। इस से यह मौलिक एवं सिद्धान्तिक वास्तविकता स्पष्ट होती है कि प्रकृति के आदेश अल्लाह के आदेश हैं चाहे शब्दों द्वारा ये आदेश दिये गए हों अथवा न दिये गए हो जैसा पाँव से चलना प्रकृति का आदेश है किन्तु यदि कोई व्यक्ति हाथ से या सर के बल चलना चाहे तो यह प्रकृति के आदेश की अवहेलना होगी। उसी तरह संभोग की विधि हर व्यक्ति स्वभावत: जानता है। लेकिन यदि कोई व्यक्ति संभोग की ऐसी विधि अपनाए जो प्रकृति के विरुद्ध है तो वह न केवल ख़ुदा के आदेशों का उल्लंघन करता है बल्कि अपने को जानवर से बदतर साबित करता है क्यों कि जानवर भी अपने स्वभाव एवं प्रकृति के विरुद्ध तरीक़ा नहीं अपनाते।

328. औरत को खेती की उपमा इस कारण से दी गई है कि आदमी अपनी खेती में जाने के लिए आज़ाद होता है कि जिस तरह चाहे जाए मगर उस का जाना बीज बोने और फ़सल हासिल करने के लिए होता है। बीवी का मामला भी ऐसा ही है। शरीअत ने उस को इस बात की आज़ादी दी है कि वह संभोग का जो तरीक़ा ठीक समझे अपनाए लेकिन लक्ष्य सन्तान की प्राप्ति हो । शरीअत की तरफ से संभोग के तरीक़ों के सम्बन्ध में सिर्फ इस बात की पाबन्दी है कि प्रकृति के विरुद्ध तरीक़ा न अपनाया जाए । जिस की व्याख्या ऊपर के नोट में गुज़र चुकी है ।

329. अर्थात जिस तरह आदमी खेती द्वारा अपने आर्थिक भविष्य का प्रबन्ध करता है उसी तरह अपनी औरतों से संभोग के द्वारा मानव वंश के भविष्य का सामान करो और अपनी सन्तान की सही तरबियत कर के अपनी आख़िरत की संपत्ति में वृद्धि करो।

इस से यह बात अच्छी तरह स्पष्ट हो जाती है कि क़ुर्आन का मंशा यह है कि मानव वंश फले फूले। इस लिए इस पर कोई पाबन्दी लगाना क़ुर्आन के मंशा के ख़िलाफ़ होगा।

330. अर्थात अल्लाह के पवित्र नाम को ग़लत कामों के

लिए प्रयोग न करो। भलाई, तक़्वा (धर्म परायण्यता) और लोगों में सुधार का काम करने के विरुद्ध क़समें खा बैठना इस्लाम में जायज़ नहीं है। यदि कोई व्यक्ति ऐसी क़सम खा बैठे तो उसे तोड़ देना चाहिए और उस का कफ़्फ़ार: (प्रायश्चित) अदा करना चाहिए। आगे ''ईला-----'' (पत्नी से सम्बन्ध न रखने की क़सम खा बैठना) का हुक्म बयान किया जा रहा है इस लिए इस से पहले अल्लाह के नाम की क़सम खाने की अहमियत स्पष्ट कर दी और ग़लत उद्देश्यों के लिए उस के नाम को इस्तेमाल करने से मना फ़रमाया।

331. इशारा है इस बात की तरफ़ कि अगर तुम ने अल्लाह के महान एवं पवित्र नाम को निशाना बनाया तो यह न भूलो कि अल्लाह सब कुछ सुनने वाला और जानने वाला है।

332. अर्थात जो क़समें तुम ने बिना इरादा तकिया कलाम के तौर पर खा ली हों तो उन पर पकड़ नहीं होगी अल्बत्ता जो क़समें दिल के इरादे के साथ खाई गई हों इन में अगर अल्लाह के नाम को ग़लत तौर से इस्तेमाल किया गया हो तो ऐसी क़समों पर ज़रुर पकड़ होगी।

जो लोग अपनी पत्नियों से न मिलने की क़सम खा बैठें उन के लिए चार महीने की मोहलत है । फिर अगर वे पलट आऐं तो अल्लाह माफ़ करने वाला, रहम फ़रमाने वाला है। (अल-क़ुर्आन)

226. जो लोग अपनी पत्नियों से न मिलने की क़सम खा बैठें उन के लिए चार महीने की मोहलत है [333]। फिर अगर वे पलट आऐं तो अल्लाह माफ़ करने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।

لِلَّذِينَ يُؤْلُونَ مِن نِّسَآئِهِمْ تَرَبُّصُ أَرْبَعَةِ أَشْهُرٍ فَإِنْ
فَآءُو فَإِنَّ ٱللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿٢٢٦﴾

227. और अगर वे तलाक़ का फैसला कर लें तो (वे अच्छी तरह जान लें कि) अल्लाह सब कुछ सुनने वाला और सब कुछ जानने वाला है।[334]

وَإِنْ عَزَمُوا۟ ٱلطَّلَٰقَ فَإِنَّ ٱللَّهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٢٧﴾

228. और जिन औरतों को तलाक़ दे दी गई हो तो वे तीन हैज़ (मासिक धर्म) तक अपने आप को रोके रखें [335]।अगर वे अल्लाह और आख़िरत के दिन पर ईमान रखती हैं तो उन के लिए यह जायज़ नहीं है कि अल्लाह ने उन के गर्भ में जो कुछ पैदा किया हो उस को छिपाऐं। और इस (इद्दत के) दौरान उन के पती उन को वापस लेने के ज़्यादा हक़दार हैं शर्त यह है कि वे सम्बन्धों को ठीक रखना चाहें।और मारुफ (सामान्य नियम) के अनुसार औरतों के भी उसी तरह अधिकार हैं [336] जिस तरह उन पर ज़िम्मेदारियाँ हैं ,अलबत्ता मर्दों को उन पर एक दर्जा हासिल है।[337] और अल्लाह सब पर ग़ालिब (प्रभावकारी) और बड़ी हिकमत वाला है [338]।

وَٱلْمُطَلَّقَٰتُ يَتَرَبَّصْنَ بِأَنفُسِهِنَّ ثَلَٰثَةَ قُرُوٓءٍ وَلَا يَحِلُّ
لَهُنَّ أَن يَكْتُمْنَ مَا خَلَقَ ٱللَّهُ فِىٓ أَرْحَامِهِنَّ إِن كُنَّ
يُؤْمِنَّ بِٱللَّهِ وَٱلْيَوْمِ ٱلْءَاخِرِ وَبُعُولَتُهُنَّ أَحَقُّ بِرَدِّهِنَّ
فِى ذَٰلِكَ إِنْ أَرَادُوٓا۟ إِصْلَٰحًا وَلَهُنَّ مِثْلُ ٱلَّذِى
عَلَيْهِنَّ بِٱلْمَعْرُوفِ وَلِلرِّجَالِ عَلَيْهِنَّ دَرَجَةٌ
وَٱللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٢٨﴾

229. तलाक़ [339] दो बार है [340] फिर या तो मारुफ (भले) तरीक़े पर औरत को रोक लिया जाए [341] या खूबसूरती के साथ बिदा कर दिया जाए [342]। और तुम्हारे लिए जायज़ नहीं कि जो कुछ तुम उन्हें दे चुके हो उस में से कुछ वापस ले लो [343]।अल्बत्ता यह अलग बात है कि दोनों को आशंका हो कि वे अल्लाह की बाँधी हुई हद को क़ायम न रख सकेंगे तो इस में उन के लिए कोई गुनाह नहीं कि औरत फिदयः (मुक्ति प्रतिदान) दे कर छुटकारा (ख़ुलअ) हासिल कर ले [344]। ये अल्लाह की बाँधी हुई हद हैं इन से आगे न बढ़ो, और जो अल्लाह की हद से आगे बढ़ेगा तो ऐसे ही लोग ज़ालिम हैं [345]।

ٱلطَّلَٰقُ مَرَّتَانِ فَإِمْسَاكٌۢ بِمَعْرُوفٍ أَوْ تَسْرِيحٌۢ
بِإِحْسَٰنٍ وَلَا يَحِلُّ لَكُمْ أَن تَأْخُذُوا۟ مِمَّآ
ءَاتَيْتُمُوهُنَّ شَيْـًٔا إِلَّآ أَن يَخَافَآ أَلَّا يُقِيمَا حُدُودَ ٱللَّهِ
فَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا يُقِيمَا حُدُودَ ٱللَّهِ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا
فِيمَا ٱفْتَدَتْ بِهِۦ تِلْكَ حُدُودُ ٱللَّهِ فَلَا تَعْتَدُوهَا
وَمَن يَتَعَدَّ حُدُودَ ٱللَّهِ فَأُو۟لَٰٓئِكَ هُمُ ٱلظَّٰلِمُونَ ﴿٢٢٩﴾

333. इस आयत में ''ईला ----'' का हुक्म बयान किया गया है । ईला शरीअत की एक परिभाषा (Term) है जिस का अर्थ विवाहिक संबन्ध न रखने की क़सम खा लेना है। यह तरीक़ा अज्ञानता युग (जाहिलिय्यत के ज़माने) में प्रचलित था जिस के चलते औरत का जीवन अधर में रह जाता था। इस्लाम ने इस में सुधार किया। अत: ईला करने वालों के लिए चार माह की मुद्दत निश्चित की । इस मुद्दत के अन्दर या तो वे संबन्ध सुधार लें अर्थात पुन: स्थापित कर ले या फिर तलाक़ दे दें। अगर चार माह की इस मुद्दत में पति ने संबन्ध पुन: स्थापित नहीं किया तो मुद्दत ग़ुज़र जाने पर एक तलाक़ आप से आप पड़ जाएगी और वह बाइन (Irrevocable अथवा अपरिवर्तनीय) होगी। अर्थात इद्दत के अन्दर रुजूअ अथवा स्वीकार करने का हक़ न होगा। अलबत्ता अगर पति पत्नी दोनों चाहें तो दोबारा निकाह कर सकते हैं।

334. यह तंबीह का अन्दाज़ है जिस का मतलब यह है कि अगर तुम ने पत्नी को बिना किसी बात के छोड़ दिया है तो याद रखो अल्लाह इस से बेख़बर नहीं है।

335. इस अन्तराल (Gap) अर्थात दूसरी शादी से निश्चित दिनों तक रुक जाने का नाम शरीअत की परिभाषा (Term) में इद्दत है। इद्दत का यह हुक्म कई मसलहतों पर आधारित है। जैसे गर्भशय की पवित्रता, ताकि औलाद के बारे में संदेह न हो, पति के अधिकारों का लिहाज़ और विवाह का आदर इत्यादी । तलाक़ पाने वाली महीला की इद्दत तीन हैज़ (मासिक धर्म) निश्चित कि गई है जिस की एक महत्वपूर्ण मसलहत यह है कि पति को अपने फैसले पर दोबारा विचार करने का अवसर मिल जाये। अगर उस ने तलाक पहली या दूसरी बार दी हो और वह इद्दत के दौरान उसे फिर से स्वीकार करना चाहता है तो कर सकता है अलबत्ता अब उसे तभी पलटना चाहिए जब कि वह सुलह एवं सुधार का इरादा रखता हो। औरत को तंग करना उद्देश्य न हो वरना इस अधिकार का यह ज़ालिमाना इस्तेमाल होगा।

336. अर्थात मर्द यह न समझे कि अधिकार सब उन ही के हैं और पत्नियों का उन पर कोई अधिकार नहीं है बल्कि जिस तरह पत्नि पर पति के अधिकार हैं उसी तरह पति पर पत्नि के भी अधिकार हैं। ये अधिकार दोनों के स्वभाव के अनुकूल और बिल्कुल संतुलित हैं और इन का लिहाज़ करने ही पर विवाहिक जीवन की मधुरता एवं सफलता अश्रित है।

337. यह दर्जा क़व्वाम और ज़िम्मेदार होने का है। इस्लाम ने परिवार का सरबराह मर्द को बनाया है क्योंकि स्वभाविक रुप से मर्द ही इस के लिए उचित है न कि औरत। यही बात पश्चिम के समानतावाद सिद्धान्त की जिस के हिसाब से स्त्री और पुरुष में सम्पूर्ण समानता होनी चाहिए तो यह पश्चिमी संस्कृति (Western Culture) का तक़ाज़ा ज़रुर है किन्तु मानव बुद्धि और स्वभाव का तक़ाज़ा नहीं है। जब क़ुदरती तौर पर दोनों की शारीरिक बनावट, प्राकृतिक क्षमताओं एवं प्रतिभाओं में फ़र्क़ मौजूद है तो उन के तक़ाज़े भी भिन्न होंगे। इसी कारण मर्द का एक दर्जा बढ़ जाना बुद्धि एवं स्वभाव के अनुकूल है। इस मामूली फर्क़ के साथ इस्लाम औरतों के अधिकारों का न सिर्फ क़ायल है बल्कि शरअी आदेशों और संविधान के द्वारा उन की सुरक्षा का पूरा पूरा प्रबन्ध करता है। इस्लाम के विवाह संबन्धि क़ानून इसी बुनियाद पर तैयार हुए हैं अत: अगर इस बुनियाद को ढा दिया जाए तो इस्लाम की पूरी विवैहिक व्यवस्था छिन्न भिन्न हो कर रह जाएगी ।

338. वह प्रभुत्वशाली (ग़ालिब) है लिहाज़ा उस के आदेशों की अवहेलना अथवा उल्लंघन से डरो वरना उस के अज़ाब (प्रकोप) से बच न सकोगे। और वह तत्वदर्शी (हकीम) है इस लिए उस के आदेश को ग़लत और अपने विचारों एवं सिद्धान्तों को सही समझना मूर्खता के सिवा कुछ नहीं।

339. तलाक़ एक शरअी परिभाषा (Term) है जिस का अर्थ पत्नी को निकाह की बंदिश से मुक्त कर देने के हैं । इस्लाम ने विवाहिक सम्बन्ध को मज़बूत और सुदृढ़ बनाने के लिए अत्यन्त स्पष्ट आदेश दिए हैं किन्तु इस वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए कि कुछ परिस्थितियाँ ऐसी होती हैं जिन में इस संबन्ध का बना रहना फ़साद पैदा होने अथवा उस के बढ़ने का कारण बन जाता है, तलाक़ की अनुमति दे दी है ताकि पति और पत्नी को कटुता एवं वैमनस्यता से परिपूर्ण जीवन व्यतीत करने पर विवश न होना पड़े। इस्लाम ने अपने विवाहिक जीवन से सम्बन्धित क़ानून में जहाँ तलाक़ की गुन्जाइश रखी है वहाँ उसे एक अप्रिय चीज़ भी बताया है।

अत: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का इर्शाद है:

ابغض الحلال الى الله الطلاق (ابوداؤد)

'' अल्लाह के नज़्दीक हलाल चीज़ों में सब से अधिक नापसन्दीदा चीज़ तलाक़ है।''

गोया शरीअत का मंशा यह है कि पति तलाक़ देने के इस अधिकार को उसी समय इस्तेमाल करे जबकि वह अत्यन्त आवश्यक या अनिवार्य समझे। शरीअत ने तलाक़ का जो सही प्रारुप निर्धारित किया है उस को भी समझना जरुरी है। इस सिलसिले के कुछ आदेश आगे आ रहे हैं।

यह भी स्पष्ट रहे कि इस्लाम ने जहाँ मर्द को तलाक़ का अधिकार दिया है वहाँ औरत के लिए भी मर्द से छुटकारा पाने की कुछ सूरतें बताई हैं जिस में एक सूरत 'ख़ुलअ' की है, जिस का हुक्म इसी आयत में मौजूद है।

तलाक़ का हुक्म मूसा अलैहिस्सलाम की शरीअत में मौजूद था लेकिन अहले किताब ने इस में बड़े अन्याय से काम लिया। यहूदियों ने इसे अत्यन्त सरल बना दिया और ईसाईयों ने अत्यन्त कठिन। अत: वर्तमान तौरात में है:

''यदि कोई पुरुष किसी स्त्री को ब्याह ले और उस के बाद उस में कुछ लज्जा की बात पा कर उस से अप्रसन्न हो तो वह उस के लिए त्याग पत्र लिख कर और उस के हाथ में दे कर उसे अपने घर से निकाल दे और जब वह उस के घर से निकल जाए तब दूसरे पुरुष की हो सकती है।'' (व्यवस्था विवरण 24:1,2) यहूदियों के यहाँ यह कायदा भी था कि तलाक़ देने के बाद पति उसे फिर पत्नी नहीं बना सकता था। दूसरी तरफ वर्तमान इंजील में है।

'' इस लिए जिसे परमेश्वर ने जोड़ा है उसे मनुष्य अलग न करे । और घर में चेलों ने इस के विषय में उस से फिर पूछा। उस ने उन से कहा, जो कोई अपनी पत्नी को त्याग कर दूसरी से ब्याह करे तो वह उस पहली के विरोध में व्यभिचार करता है । यदि पत्नी अपने पति को छोड़ कर दूसरे से ब्याह करे तो वह व्यभिचार करती है।'' (मरकुस 10:9,से,12)

इस आधार पर ईसाईयों ने तलाक़ को बिल्कुल से हराम ठहरा दिया और सिर्फ इस सूरत में जायज़ रखा जब कि पत्नी व्यभिचार में लिप्त हो । किन्तु यदि सही दृष्टिकोण से इस पर निगाह डाली जाये तो व्यभिचार के अलावा और भी कारण हैं जो तलाक़ के लिए उचित ठहराए जा सकते हैं। अत: इन्साइल्कोपीडिया आफ़ रेलिजन ऐण्ड एथिक्स का संकलनकर्ता लिखता है ।

" Although it is evident that adultery affects the marriage relation more closely than any other offence, yet it may fairly be said that there are other things which may make married life so intolerable and the perfect ideal union so impossible that if divorce or separation be allowed at all, the grounds for such separation ought not in reason to be confined to the one offence of adultery... there are offences which make life so intolerable that there can be no restoration of affection that where the tie of affection has been absolutely destroyed, the real vinculum has been ruptured and that therefore such offences may rightly be put in the same category as conjugal infidelity in the strict sense of the word." (Encyclopedia of Religion and Ethics Vol. VIII P. 438)

इस्लाम का दृष्टिकोण दोनों किनारों के बीच समता और न्याय का है। अत: उस ने एक तरफ़ तलाक़ को अप्रिय क़रार दिया तो दूसरी तरफ़ तलाक़ के अधिकार को इस्तेमाल करने के सिलसिले में हद और शर्तें भी निश्चित कर दी।

340. ''तलाक़ दो बार है'' का मतलब यह है कि रजई तलाक़ (Revocable Divorce) का मौक़ा दो बार है।दूसरे शब्दों में तलाक़ इस्लाम में कोई ऐसी चीज़ नहीं है कि आदमी एक ही झटके में निकाह के रिश्ते को खत्म कर के रख दे। बल्कि अपने फैसले पर दोबारा विचार करने का उस को दो बार मौक़ा दिया गया है। वह न केवल पहली बार तलाक़ देने के बाद पलट (स्वीकार कर) सकता है बल्कि दूसरी बार तलाक़ देने पर भी पलटने अथवा स्वीकार करने का मौक़ा बाक़ी रहता है। अलबत्ता उस ने अगर तीसरी बार तलाक़ देने का फ़ैसला किया और तलाक़ दे दी तो पलटने अथवा स्वीकार करने का अधिकार बाक़ी नहीं रहता जिस का हुक्म आगे आ रहा है।

जाहिलिय्यत के ज़माने (अज्ञानता युग) में मर्द बार बार तलाक़ देता और फिर अपना लेता रहता । जिस से औरत की ज़िन्दगी अजीरन हो जाती । क़ुर्आन ने इस अत्याचार को समाप्त किया और रजई तलाक़ों (Revocable Divorces) को दो तक सीमित कर दिया अगर किसी ने अपनी पत्नी को तीसरी बार तलाक़ दे दी तो फिर उसे पुन: स्वीकार का अधिकार नहीं होगा । इस्लाम में तलाक़ देने का सही तरीक़ा यह है कि जब औरत पवित्रता की दशा में हो जिस में उस से संभोग न किया गया हो, तब एक तलाक़ दे दी जाए । इस के बाद औरत को इद्दत गुज़ारना होगी (जो तीन मासिक धर्म तक या गर्भवती होने की सूरत में प्रसव अर्थात बच्चा पैदा होने तक है) इस इद्दत के दौरान पति को पुन:स्वीकार करने का अधिकार होगा किन्तु यदि पति पुन: स्वीकार करना नहीं चाहता तो इद्दत गुज़रने दे। इद्दत गुज़र जाने पर औरत बंदिश से मुक्त हो जाएगी लेकिन दोनों के आपसी सहमति से दोबारा निकाह करने का मौक़ा बाक़ी रहेगा। पुन: स्वीकार करने या दोबारा निकाह करने के बाद अगर पति ने दूसरे बार तलाक़ दे दी तो उसे फिर इद्दत के दौरान पुन: स्वीकार करने का अवसर मिलेगा और इद्दत गुज़र जाने के बाद आपसी सहमति से निकाह करने का अवसर भी प्राप्त रहेगा किन्तु, यदि दूसरी बार स्वीकार करने या निकाह करने के बाद पति ने तीसरी बार तलाक़ दे दी तो यह मुग़ल्लिज़ तलाक़ (Absolute Divorce) होगी जिस के बाद न स्वीकार करने का अधिकार रहता है और न आपसी सहमति से फिर निकाह किया जा सकता है सिवाय उस के कि वह औरत किसी दूसरे से निकाह कर ले और वह उसे अपनी मर्ज़ी से तलाक़ दे दे ।

सूरह तलाक़ में जो कि बाद में नाज़िल हुई यह हुक्म स्पष्ट

रुप से मौजूद है कि तलाक़ इद्दत के लिए दी जाए।

اِذَا طَلَّقْتُمُ النِّسَآءَ فَطَلِّقُوْهُنَّ لِعِدَّتِهِنَّ۔ (الطلاق۔۱)

'' जब तुम औरतों को तलाक़ दो तो उन की इद्दत के लिए तलाक़ दो।''

इस से क़ुर्आन का यह मन्शा अच्छी तरह से स्पष्ट होता है कि कोई तलाक़ बिना इद्दत (विराम Gap) के नहीं होनी चाहिए । दूसरे शब्दों में दो बार तलाक़ों के बीच इद्दत के दो विराम (Gaps) ज़रुरी हैं।

रहा एक साथ तीन तलाक़ें देने का तरीक़ा तो यह शरई नहीं है बल्कि शरीअत और सुन्नत के विरुद्ध है। लोग शरीअत के अहकाम से अनभिज्ञ होने के कारण या गुस्से और जज़्बात की हालत में तलाक़, तलाक़, तलाक़ या तीन तलाक़ के शब्द एक ही समय में कह देते हैं। ऐसी तलाक़ पर तीन तलाक़ अर्थात मुग़ल्लिज़ तलाक़ (Absolute Divorce) का आदेश लागू करना न क़ुर्आन का मन्शा है और न यह कोई बुद्धिसंगत तथा न्यायसंगत बात है इस लिए अनुमानत: दुरुस्त यही है कि इकट्ठी तीन तलाक़ो को एक शरअी तलाक़ (Revocable Divorce) के हुक्म में रखा जाए तकि मर्द को अपने फैसले पर पुन: विचार करने और पलटने का पूरा अवसर मिले जिसे एक महत्वपूर्ण विधि की हैसियत से क़ुर्आन ने अपने तलाक़ सम्बन्धि नियम में शामिल किया है।

341. अर्थात दो तलाक़ों की हद तक पति चाहे तो इद्दत के दौरान स्वीकार कर सकता है अलबत्ता यह स्वीकृति भले और शरीफ़ाना तरीक़े पर पत्नी बनाए रखने के उद्देश्य से होना चाहिए न कि सताने और परेशान करने के उद्देश्य से।

342. अर्थात् अगर बिदा करना हो तो सुन्दर तरीक़े से बिदा करो। जिस पत्नी के साथ प्रेम का संबन्ध रह चुका है और जो अपना एक कोमल अस्तित्व भी रखती है उस को कुछ दे दिला कर एहसान के साथ बिदा करना ही मर्द को शोभा देता है।

343. तलाक़ की सूरत में मर्द को न महर (निकाह की अनुबन्धित रक़म जो पति पत्नी को देता है) वापस मांगना चाहिए और न वह उपहार और दूसरी वस्तुऐं जो उस ने पत्नी को दे दिए हों । क्यों कि दी हुई चीज़ को वापस लेना जब कि स्वयं मर्द हो कर औरत को छोड़ रहा हो नैतिक दृष्टि से उचित नहीं है और महर तो औरत का हक़ ही है इस लिए इस को वापस लेने का सवाल पैदा ही नहीं होता, अलबत्ता ख़ुलअ (औरत का छुटकारा हासिल करने) की सूरत इस से अलग है जिसका बयान ठीक इस के बाद हुआ है।

344. अर्थात विवाहिक संबन्ध को बनाए रखने के लिए जिन सीमाओं का लिहाज़ ज़रुरी है अगर उन का लिहाज़ पति और पत्नी नहीं रख सकते तो पत्नी फिदय: (मुक्ति प्रतिदान) के तौर पर पति को कुछ दे कर या महर वापस कर के छुटकारा हासिल कर सकती है जिसे शरीअत में ''ख़ुलअ'' कहते हैं। ''अगर तुम्हें संदेह'' का संबोधन मुस्लिम समाज से है। और मुस्लिम समाज अपनी यह ज़िम्मेदारी अदालत के माध्यम से पूरी कर सकता है। इस लिए अगर औरत खुलअ चाहती हो और मर्द इस के लिए आमादा न हो तो औरत को यह हक़ है कि मामला इस्लामी अदालत में ले जाए । और अदालत यह इत्मीनान कर लेने के बाद कि दोनों का निर्वाह नहीं हो सकता ख़ुलअ का फैसला करेगी और हालात के लिहाज़ से फ़िदय: की रक़म भी निर्धारित करेगी । इस से स्पष्ट है कि इस्लाम ने जहाँ मर्द को तलाक़ का अधिकार दिया है वहीं औरत को भी ख़ुलअ का अधिकार दिया है जो इस बात का सबूत है कि इस्लाम के विवाहिक जीवन संबन्धी क़ानून उच्च कोटि के न्याय और सन्तुलन पर आधारित हैं। ख़ुलअ की सूरत में निकाह खत्म हो जाएगा या एक बाइन तलाक़ (वह तलाक़ जिस में अपनी तलाक़ शुदा पत्नी को पुन: स्वीकार करने के लिए निकाह आवश्यक हो) लागू होगी अर्थात पति को बिना निकाह पत्नी को अपनाने का हक़ नहीं होगा। अलबत्ता अगर पति और पत्नी चाहें तो दुबारा निकाह कर सकते हैं।

345. यह तंबीह (चेतावनी) है उन लोगों के लिए जो अल्लाह के एहकाम और क़ानून का लिहाज़ नहीं करते और उन को तोड़ते हैं । इस से अन्दाज़ा किया जा सकता है कि इस्लाम के विवाह संबन्धि क़ानून में काँट छाँट करना या उन को रद्द करना क़ुर्आन की नज़र में कितना बड़ा गुनाह है।

❒ ❒ ❒ ❒ ❒ ❒

230. फिर उस ने अगर (दो बार के बाद) तलाक़ दे दी [346] तो अब यह औरत उस के लिए हलाल नहीं जब तक की वह दूसरे व्यक्ति से निकाह न कर ले [347]। फिर अगर वह भी उस को तलाक़ दे दे तो इन दोनों (औरत और पहला पति) पर (एक दूसरे की ओर) पलटने (फिर से निकाह करने) में कोई गुनाह नहीं।बशर्ते कि वे यह ख़्याल करते हों कि अल्लाह की बाँधी हुई हदों को क़ायम रख सकेंगे।ये अल्लाह की हद बन्दियाँ हैं जिन्हें वह उन लोगों के लिए बयान फ़रमाता है जो इल्म रखने वाले हैं।

فَاِنۡ طَلَّقَهَا فَلَا تَحِلُّ لَهٗ مِنۡۢ بَعۡدُ حَتّٰى تَنۡكِحَ
زَوۡجًا غَيۡرَهٗ ؕ فَاِنۡ طَلَّقَهَا فَلَا جُنَاحَ عَلَيۡهِمَاۤ اَنۡ
يَّتَرَاجَعَاۤ اِنۡ ظَنَّاۤ اَنۡ يُّقِيۡمَا حُدُوۡدَ اللّٰهِ ؕ وَتِلۡكَ
حُدُوۡدُ اللّٰهِ يُبَيِّنُهَا لِقَوۡمٍ يَّعۡلَمُوۡنَ ﴿۲۳۰﴾

231. और जब तुम औरतों को तलाक़ दे दो और वह अपनी इद्दत को पहुँच जाऐं [348] तो उन्हें भले तरीक़े से रोक लो या भले तरीक़े से बिदा करो। उन्हें सताने के उद्देश्य से रोके न रखो कि इस तरह ज़्यादती करने वाले बनो। और जो ऐसा करेगा वह अपने ही ऊपर ज़ुल्म करेगा। अल्लाह की आयतों को [349] मज़ाक न बनाओ । अल्लाह के एहसान को और इस बात को याद रखो कि उस ने तुम पर किताब और हिकमत (तत्वदर्शिता) नाज़िल फ़रमाई जिस के द्वारा वह तुम्हें नसीहत फ़रमाता है, और अल्लाह से डरो और जान लो कि अल्लाह हर चीज़ का जानने वाला है।[350]

وَاِذَا طَلَّقۡتُمُ النِّسَآءَ فَبَلَغۡنَ اَجَلَهُنَّ
فَاَمۡسِكُوۡهُنَّ بِمَعۡرُوۡفٍ اَوۡ سَرِّحُوۡهُنَّ بِمَعۡرُوۡفٍ ۚ
وَلَا تُمۡسِكُوۡهُنَّ ضِرَارًا لِّتَعۡتَدُوۡا ۚ وَمَنۡ يَّفۡعَلۡ
ذٰلِكَ فَقَدۡ ظَلَمَ نَفۡسَهٗ ؕ وَلَا تَتَّخِذُوۡۤا اٰيٰتِ اللّٰهِ
هُزُوًا ۚ وَّاذۡكُرُوۡا نِعۡمَتَ اللّٰهِ عَلَيۡكُمۡ وَمَاۤ اَنۡزَلَ
عَلَيۡكُمۡ مِّنَ الۡكِتٰبِ وَالۡحِكۡمَةِ يَعِظُكُمۡ بِهٖ ؕ وَاتَّقُوا
اللّٰهَ وَاعۡلَمُوۡۤا اَنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَىۡءٍ عَلِيۡمٌ ﴿۲۳۱﴾

232. और जब तुम औरतों को तलाक़ दे दो और वह अपनी इद्दत पूरी कर लें तो फिर उन्हें अपने पतियों से निकाह से न रोको जब कि वह मारुफ तरीक़े (सामान्य रीति) पर आपसी सहमति से मामला तय करें [351]।यह नसीहत तुम में से हर उस व्यक्ति को की जाती है जो अल्लाह और आखिरत के दिन पर ईमान रखता है। यह तुम्हारे लिए ज़्यादा पाकीज़ा और सुथरा तरीक़ा है [352] अल्लाह जानता है तुम नहीं जानते।[353]

وَاِذَا طَلَّقۡتُمُ النِّسَآءَ فَبَلَغۡنَ اَجَلَهُنَّ
فَلَا تَعۡضُلُوۡهُنَّ اَنۡ يَّنۡكِحۡنَ اَزۡوَاجَهُنَّ اِذَا تَرَاضَوۡا
بَيۡنَهُمۡ بِالۡمَعۡرُوۡفِ ؕ
ذٰلِكَ يُوۡعَظُ بِهٖ مَنۡ كَانَ مِنۡكُمۡ يُؤۡمِنُ بِاللّٰهِ
وَالۡيَوۡمِ الۡاٰخِرِ ؕ ذٰلِكُمۡ اَزۡكٰى لَكُمۡ وَاَطۡهَرُ ؕ وَاللّٰهُ
يَعۡلَمُ وَاَنۡتُمۡ لَا تَعۡلَمُوۡنَ ﴿۲۳۲﴾

346. अभिप्राय तीसरी बार की तलाक़ है। ऊपर गुज़र चुका है कि पति दो बार तलाक़ दे कर इद्दत के अन्दर पलट सकता है अर्थात पत्नी को पुन:स्वीकार कर सकता है । यहाँ तीसरी बार दी जाने वाली तलाक़ का हुक्म बयान किया जा रहा है।

347. अर्थात् अगर पति ने तीसरी बार तलाक़ दे दी तो फिर वह औरत उस पति के लिए हलाल न होगी, जब तक की वह औरत किसी दूसरे व्यक्ति से निकाह न कर ले और फिर वह (पति भी) उस को तलाक न दे। अगर इस दूसरे पति ने तलाक़ दी या उस की मृत्यु हो गई तो वह औरत अपने पहले पति से पुन: निकाह कर सकती है। इस हुक्म की मसलहत यह है कि लोग तलाक़ को खेल बना कर औरत को तंग न किया करें बल्कि सोच समझ कर तलाक़ का फैसला किया करें। यह हुक्म तीसरी बार अर्थात तीसरे अवसर पर दी जाने वाली तलाक़ का है न कि एक साथ तलाक़ तलाक़ तलाक़ या तीन तलाक़ के शब्द के कह देने का जिस का विस्तृत विवरण नोट नं. 340 में गुज़र चुका है।

ध्यान रहे कि तीसरी बार तलाक़ देने की सूरत में पति के लिए उस पत्नी के हलाल होने की जो शर्त बयान की गई हैं उस का यह मतलब नहीं कि दिखावे अर्थात पाखण्ड के तौर पर किसी से इस शर्त पर उस का निकाह कराए कि वह निकाह के बाद उसे तलाक़ दे देगा।

इस हुक्म का मंशा यह है कि अगर यह औरत अपनी मर्जी से किसी दूसरे व्यक्ति के साथ निकाह कर लेती है, ऐसा निकाह जो सामान्यत: होता है और जिस में तलाक़ की शर्त नहीं होती। लेकिन उस निकाह के बाद अगर वह तलाक़ दे देता है तो फिर यह औरत अपने पहले पति से दोबारा निकाह कर सकती है।

तीसरी बार की इस तलाक़ को शरीअत की परिभाषा (Term) में ''तलाक़ मुगल्लिज़: बाइन: (Irrevocable and absolute divorce) कहा जाता है।

348. अर्थात इद्दत ख़त्म होने से पहले पलट (पुन: स्वीकार) सकते हो।

349. यहाँ ''अल्लाह की आयतों'' से मुराद उस के एहकाम और क़ानून हैं।

350. इन्सान के दिल में अल्लाह का जितना डर होगा और उस के अलीम होने (हर चीज़ जानने या His Omniscience) का जितना यक़ीन होगा उतना ही वह अल्लाह की नाफ़रमानी से बच सकेगा ।

351. अर्थात जब तलाक़ पाई हुई औरतें अपनी इद्दत पूरी कर लें तो वह मारुफ तरीक़े (सामान्य रीति) पर अपनी पसन्द का विवाह करने के मामले में आज़ाद हैं । अगर वह तलाक़ पाई हुई महिला अपने पिछले पति से पुन:विवाह करना चाहती है तो उस के परिवार वालों को उस में रुकावट नहीं पैदा करना चाहिए। और अगर वह किसी दूसरे व्यक्ति से विवाह करना चाहती हो तो पहले पति को ऐसा कोई प्रयत्न अथवा षडयंत्र नहीं करना चाहिए कि जिस को उस ने छोड़ा है उस से कोई निकाह न करे।

इस आयत से निकाह के सिलसिले में शरीअत के इस महत्वपूर्ण नियम का पता चलता है कि तलाक़ पाई हुई औरत अपने निकाह के मामले में वली (सरपरस्त अथवा संरक्षक) की इजाज़त की पाबन्द नहीं है बल्कि सामान्य रीति से वह अपनी इच्छानुसार जहाँ चाहे निकाह कर सकती है।

352. अर्थात बाहरी और अन्दरुनी पाकीज़गी इसी तरीक़े में है कि तलाक़ पाई हुई औरत को उस की इच्छानुसार निकाह करने दिया जाए । अगर व्यर्थ की रीतियों इत्यादि के कारण दूसरी शादी में अड़चनें पैदा की गई तो औरत के ग़लत राह पर पड़ने और उस से अशुभ एवं अनैतिक हरकतें हो जाने की आशंका है।

353. अर्थात तुम्हारा ज्ञान अत्यंत सीमित है। जीवन के वास्तविक उद्देश्यों, हितों का ज्ञान अल्लाह ही को है इस लिए वह जो भी आदेश तुम्हें दे रहा हो उस पर अमल करो। मनुष्य का ज्ञान इतना सर्वव्यापी और उस की दृष्टि इतनी व्यापक नहीं होती कि वह मानव जीवन के वास्तविक उद्देश्यों एवं हितों की घेरा बन्दी कर सके इस लिए मनुष्य के स्वयं गढ़े हुए विवाहिक क़ानून (Family Laws) उस के लिए लाभदायक सिद्ध नहीं होते । इस के विरुद्ध क़ुर्आन के विवाहिक क़ानून सब कुछ जानने वाले और तत्वदर्शी ख़ुदा की तरफ से हैं इस लिए वह जीवन के वास्तविक उद्देश्यों एवं हितों पर आधारित हैं और इन के लाभदायक होने में कोई शंका ही नहीं ।

❖❖❖❖❖❖❖❖

233. और माताऐं अपने बच्चों को पूरे दो साल दूध पिलाऐं।[354] यह हुक्म उस व्यक्ति के लिए है जो पूरी मुद्दत तक दूध पिलवाना चाहे [355]।और जिस व्यक्ति का बच्चा है उस को मारुफ तरीक़े (सामान्य रीति) से उन को खाना और कपड़ा देना होगा [356]। किसी पर उस की कमाई से अधिक बोझ न डाला जाए। न किसी माँ को उस के बच्चे की वजह से तकलीफ़ दी जाए और न बाप को उस के बच्चे की वजह से ।और इसी तरह की ज़िम्मेदारी वारिस पर भी [357] है। लेकिन अगर दोनों आपसी सहमति मश्वरे से दूध छुड़ाना चाहें तो उन पर कोई गुनाह नहीं और अगर तुम अपने बच्चों को किसी और से दूध पिलवाना चाहो तो इस में भी कोई गुनाह नहीं। बस शर्त यह है कि तुम ने जो कुछ तय किया है मारुफ तरीक़े (सामान्य रीति) पर अदा करो। अल्लाह से डरो और जान रखो कि जो कुछ तुम करते हो अल्लाह उस को देख रहा है।

وَالْوَالِدٰتُ يُرْضِعْنَ اَوْلَادَهُنَّ حَوْلَيْنِ كَامِلَيْنِ لِمَنْ اَرَادَ اَنْ
يُّتِمَّ الرَّضَاعَةَ ؕ وَعَلَى الْمَوْلُوْدِ لَهٗ رِزْقُهُنَّ وَكِسْوَتُهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ ؕ
لَا تُكَلَّفُ نَفْسٌ اِلَّا وُسْعَهَا ۚ لَا تُضَآرَّ وَالِدَةٌ ۢ بِوَلَدِهَا وَلَا مَوْلُوْدٌ
لَّهٗ بِوَلَدِهٖ ۗ وَعَلَى الْوَارِثِ مِثْلُ ذٰلِكَ ۚ فَاِنْ اَرَادَا فِصَالًا عَنْ
تَرَاضٍ مِّنْهُمَا وَتَشَاوُرٍ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا ؕ وَاِنْ اَرَدْتُّمْ اَنْ
تَسْتَرْضِعُوْۤا اَوْلَادَكُمْ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِذَا سَلَّمْتُمْ مَّاۤ اٰتَيْتُمْ
بِالْمَعْرُوْفِ ؕ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوْۤا اَنَّ اللّٰهَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ﴿۲۳۳﴾

234. और तुम में से जो लोग मर जाऐं और अपने पीछे पत्नियाँ छोड़ जाऐं तो उन (पत्नियों) को चाहिए कि चार माह दस दिन तक ठहरी रहें [358]। फिर जब वे अपनी इद्दत पूरी कर लें तो मारुफ तरीक़े (सामान्य रीति) पर वे जो कुछ अपने लिए करें उस का तुम पर कोई गुनाह नहीं और जो कुछ तुम करते हो उस की अल्लाह को ख़बर है।

وَالَّذِيْنَ يُتَوَفَّوْنَ مِنْكُمْ وَيَذَرُوْنَ اَزْوَاجًا يَّتَرَبَّصْنَ بِاَنْفُسِهِنَّ
اَرْبَعَةَ اَشْهُرٍ وَّعَشْرًا ۚ فَاِذَا بَلَغْنَ اَجَلَهُنَّ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ
فِيْمَا فَعَلْنَ فِىْۤ اَنْفُسِهِنَّ بِالْمَعْرُوْفِ ؕ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرٌ ﴿۲۳۴﴾

235. और इस बात में भी तुम पर कोई गुनाह नहीं कि उन औरतों को निकाह का पैग़ाम संकेत रुप में दे दो या उसे अपने दिल में छिपाये रखो। अल्लाह जानता है कि तुम उन को याद करोगे, मगर उन से (निकाह का) गुप्त अनुबंध न करो। हाँ मारुफ तरीक़े (सामान्य रीति) पर कोई बात कह सकते हो और निकाह करने का फ़ैसला उस समय तक न करो जब तक कि इद्दत [359] पूरी न हो जाए। जान रखो कि अल्लाह को तुम्हारे दिलो का हाल मालूम है, अतः उस से डरो और यह भी जान रखो कि अल्लाह क्षमा करने वाला और सहनशील है।[360]

وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيْمَا عَرَّضْتُمْ بِهٖ مِنْ خِطْبَةِ النِّسَآءِ اَوْ اَكْنَنْتُمْ
فِىْۤ اَنْفُسِكُمْ ؕ عَلِمَ اللّٰهُ اَنَّكُمْ سَتَذْكُرُوْنَهُنَّ وَلٰكِنْ لَّا تُوَاعِدُوْهُنَّ
سِرًّا اِلَّاۤ اَنْ تَقُوْلُوْا قَوْلًا مَّعْرُوْفًا ؕ وَلَا تَعْزِمُوْا عُقْدَةَ النِّكَاحِ
حَتّٰى يَبْلُغَ الْكِتٰبُ اَجَلَهٗ ؕ وَاعْلَمُوْۤا اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا فِىْۤ
اَنْفُسِكُمْ فَاحْذَرُوْهُ ۚ وَاعْلَمُوْۤا اَنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ حَلِيْمٌ ﴿۲۳۵﴾

354. इस आयत में रज़ाअत (बच्चों को दूध पिलाने) के एहकाम बयान किए गए हैं । तलाक़ की सूरत में अगर औरत की गोद में दूध पीता बच्चा हो तो एक बड़ी समस्या पैदा हो जाती है। और उस ज़माने में तो पावडर के दूध इत्यादि की भी सहूलतें उपलब्ध नहीं थी बल्कि बच्चे के आहार का दारोमदार माँ या दाई के दूध पर होता था एवं बच्चे के लिए माँ का दूध ही प्रकृतिक तथा उत्तम आहार है। इस लिए तलाक़ की सूरत में बच्चे की हक़ तल्फी (अधिकार हनन) न हो इस की हिदायत इस आयत में की गई है ।

355. दूध पिलाने (रज़ाअत) की मुद्दत दो साल है अत: तलाक़ पाने वाली औरत पर यह ज़िम्मेदारी है कि वह पूरे दो साल अपने बच्चे को दूध पिलाए बर्शते कि बच्चे का बाप पूरी मुद्दत तक दूध पिलवाना चाहे।

356. अर्थात दूध पिलाने की मुद्दत में बच्चे के बाप पर तलाक़ पाई हुई औरत के खाने कपड़े की ज़िम्मेदारी है। यह नुफ़्का (भरणपोषण) सामन्य रुप से अदा करना होगा। अर्थात् बच्चे के बाप की हैसियत और हालत को ध्यान में रखते हुए जिसे उचित और न्याय संगत कहा जा सके।

357. अर्थात अगर बच्चे के बाप की मृत्यु हो गई है तो नुफ़्के की यह ज़िम्मेदारी उस के वारिस पर होगी।

358. पति की मृत्यु हो जाने की सूरत में औरत की इद्दत चार माह दस दिन है और अगर गर्भवती हो तो प्रसव (Delivery) तक है । (देखिए सूरह तलाक़ आयत नं.४)

तलाक़ पाई हुई औरत (Divorced Women) के मुक़ाबले में विधवा की इद्दत अधिक निर्धारित करने में पति के सोग इत्यादि की मसलहतें शामिल हैं। औरत को पति की मृत्यु से जो दुख एवं क्षति पहुँचती है उस का तक़ाज़ा है कि उसे फौरन पति का घर छोड़ने के लिए विवश न किया जाए और इस मुद्दत में उस से सहानुभूति एवं हमदर्दी व्यक्त की जाए।

इद्दत के गुज़र जाने पर वह सामान्य रीति से जो क़दम उचित समझे उठा सकती है। इस मामले में ग़ैर शरअी रस्मों एवं रीतियों को रोड़ा नहीं बनने देना चाहिए। अगर वह निकाह करना चाहती है तो उसे ताने देकर अथवा व्यंग्य कर के रोकना नहीं चाहिए ।

कुछ समाज ऐसे हैं जहाँ विधवा के विवाह को अनुचित अथवा पाप समझा जाता रहा है और किसी समाज में तो पति के शव के साथ आग में जल कर सती होना प्रचलित एवं प्रिय रहा है किन्तु इस्लाम ने इन कुरीतियों के विपरीत विधवा को इद्दत गुजारने के बाद अपनी मार्जी से दूसरा विवाह करने की आज़ादी दी और इसे प्रिय ठहराया।

359. इद्दत के दौरान न निकाह करना जायज़ है और न निकाह का खुले तौर पर पैग़ाम देना जायज़ है।

360. अर्थात छोटी छोटी बातों पर वह पकड़ नहीं करता। अगर तुम्हारी नियत दुरुस्त है तो उम्मीद रखो कि वह तुम्हारे क़ुसूर को माफ़ कर देगा। २१

❒ ❒ ❒ ❒ ❒ ❒

236. अगर तुम औरतों को हाथ लगाने या उन का महर निश्चित करने से पहले तलाक़ दो तो तुम पर कोई गुनाह नहीं अलबत्ता उन्हें कुछ दो।कमाई वाला व्यक्ति अपनी सामार्थ्य के अनुसार और ग़रीब अपनी सामार्थ्य के अनुसार मारुफ़ तरीक़े (सामान्य रीति) से दे [361]।यह हक है नेक लोगों पर [362]।

لَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ إِنْ طَلَّقْتُمُ النِّسَاءَ مَا لَمْ تَمَسُّوهُنَّ أَوْ
تَفْرِضُوا لَهُنَّ فَرِيضَةً ۚ وَمَتِّعُوهُنَّ عَلَى الْمُوسِعِ قَدَرُهُ وَ
عَلَى الْمُقْتِرِ قَدَرُهُ مَتَاعًا بِالْمَعْرُوفِ ۖ حَقًّا عَلَى الْمُحْسِنِينَ ﴿٢٣٦﴾

237. और अगर तुम ने हाथ लगाने से पहले तलाक़ दी हो और महर निश्चित कर चुके हो तो निश्चित किए हुए महर का आधा देना होगा [363]।यह और बात है कि वह रिआयत कर दे या वह मर्द जिस के हाथ में उक्दा-ए-निकाह (विवाह का अनुबंधन) है,[364] रिआयत कर दे। और तुम (मर्द) रिआयत करो तो यह तक़वा (धर्मपरायणता) से बहुत क़रीब है।आपस में एहसान (उदारता एवं दानशीलता) करना न भूलो [365] तुम जो कुछ करते हो अल्लाह उसे देख रहा है।

وَإِنْ طَلَّقْتُمُوهُنَّ مِنْ قَبْلِ أَنْ تَمَسُّوهُنَّ وَقَدْ فَرَضْتُمْ
لَهُنَّ فَرِيضَةً فَنِصْفُ مَا فَرَضْتُمْ إِلَّا أَنْ يَعْفُونَ أَوْ يَعْفُوَا
الَّذِي بِيَدِهِ عُقْدَةُ النِّكَاحِ ۚ وَأَنْ تَعْفُوا أَقْرَبُ لِلتَّقْوَىٰ ۚ وَ
لَا تَنْسَوُا الْفَضْلَ بَيْنَكُمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ﴿٢٣٧﴾

238. नमाज़ों [366] की मुहाफ़ज़त (रखवाली) करो [367] विशेष रुप से सलाते-वुस्ता (दरम्यान वाली नमाज़) की, [368] और अल्लाह के सम्मुख खड़े हो विनय भक्ति में डूबे हुए [369]।

حَافِظُوا عَلَى الصَّلَوَاتِ وَالصَّلَاةِ الْوُسْطَىٰ وَقُومُوا لِلَّهِ
قَانِتِينَ ﴿٢٣٨﴾

239. अगर तुम भय की स्थिति में हो तो पैदल या सवार जिस तरह बन सके नमाज़ अदा करो [370]। फिर जब अमन मयस्सर आ जाए तो अल्लाह को उस तरीक़े पर याद करो [371] जो उस ने तुम्हें सिखलाया है [372] जिस को तुम नहीं जानते थे।

فَإِنْ خِفْتُمْ فَرِجَالًا أَوْ رُكْبَانًا ۖ فَإِذَا أَمِنْتُمْ فَاذْكُرُوا اللَّهَ كَمَا
عَلَّمَكُمْ مَا لَمْ تَكُونُوا تَعْلَمُونَ ﴿٢٣٩﴾

240. और तुम में से जो लोग मर जाऐं [373]और अपने पीछे पत्नियाँ छोड़ रहे हों वे अपनी पत्नियों के हक़ में वसीयत कर जाऐं कि एक साल तक उन्हें नान नुफ़्क़ा (खाना कपड़ा अथवा भरणपोषण) दिया जाए और वे घर से निकाली न जाऐं। फिर अगर वे खुद से निकल जाऐं तो वे मारुफ़ तरीक़े (सामान्य रीति) पर जो कुछ अपने लिए करें उस का तुम पर कोई गुनाह नहीं [374] अल्लाह ग़ालिब (प्रभुत्वशाली) है, हिकमत वाला [375](तत्वदर्शी)।

وَالَّذِينَ يُتَوَفَّوْنَ مِنْكُمْ وَيَذَرُونَ أَزْوَاجًا وَصِيَّةً
لِأَزْوَاجِهِمْ مَتَاعًا إِلَى الْحَوْلِ غَيْرَ إِخْرَاجٍ ۚ فَإِنْ خَرَجْنَ
فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِي مَا فَعَلْنَ فِي أَنْفُسِهِنَّ مِنْ مَعْرُوفٍ ۗ
وَاللَّهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٤٠﴾

241. और तलाक़ शुदा औरतों को मारुफ़ तरीक़े पर मताअ् दिया जाए [376]। यह हक़ [377] है मुत्तकियों (अल्लाह से डरने वालों) पर।

وَلِلْمُطَلَّقَاتِ مَتَاعٌ بِالْمَعْرُوفِ ۖ حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِينَ ﴿٢٤١﴾

361. अर्थात किसी व्यक्ति ने विवाह कर लिया किन्तु पति पत्नी का सम्बन्ध स्थापित करने से पहले औरत को तलाक़ दे दी और उस का महर भी निश्चित नहीं किया था तो ऐसी सूरत में पति को चाहिए कि अपने सामार्थ्य के अनुसार सामान्य तरीक़े पर कुछ दे कर उसे बिदा करें । क्योंकि रिश्ता टूटने से औरत को कुछ न कुछ क्षति पहुँच ही जाती है जिस की पूर्ति बहुत ही मुश्किल है। फिर भी उपहार देने की सूरत में नैतिक एवं मनोवैज्ञानिक रुप से अच्छे प्रभाव पड़ेंगे।

362. अर्थात अगर नेकी एवं भलाई अपनाना चाहते हो तो इस हक़ को हक़ समझ कर अदा करो।

363. अगर किसी ने पति पत्नी का सम्बन्ध स्थापित करने से पहले तलाक़ दे दी किन्तु महर निश्चित कर चुका हो तो ऐसी स्थिति में उसे निश्चित किए हुए महर का आधा अदा करना होगा। यह और बात है कि औरत नर्मी से काम ले कर अपने महर में कमी कर दे या पति नर्मी से काम ले कर पूरा महर अदा कर दे। और क़ुर्आन ने पुरुष को प्रेरित किया है कि वे अपने पद का लिहाज़ कर के इस मामले में दयालु, एवं दान शीलता का परिचय दे।

364. मूल अरबी (Text) के अल्फ़ाज़ '' अल्लज़ी बियदिही उक़्दतुन्निकाह'' اَلَّذِىْ بِيَدِهٖ عُقْدَةُ النِّكَاحِ (मर्द जिस के हाथ में विवाह अनुबन्धन है) इस बात पर दलालत (तर्क) करते हैं कि निकाह के बन्धन का खोलना (तलाक़) पुरुष के हाथ में है। शरीअत ने यह अधिकार पुरुष को दिया है इस लिए पुरुष के हाथ से यह अधिकार छीन कर अदालत को देने का मौजूदा रुझान ग़लत और शरीअत के विरुद्ध है।

365. अर्थात समाजिक जीवन में खुशगवारी मात्र क़ानूनी अधिकारों की अदायगी से नहीं बल्कि उदारता एवं दानशीलता के बर्ताव से पैदा होती है।

366. शरअी आदेशों एवं क़ानून के बयान का जो सिलसिला आयत १६८ से चल रहा था वह यहाँ समाप्त हो रहा है इस लिए इस की समाप्ति पर नमाज़ो की हिफ़ाज़त की ताकिद कर दी गई है। इस से स्पष्ट हुआ कि शरीअत को क़ायम करना नमाज़ को क़ायम करने पर आश्रित है। जो व्यक्ति नमाज़ की पाबन्दी करता है उस के अन्दर ईशभक्ति और दायित्व पूर्ण जीवन व्यतीत करने का जज़्बा पैदा होता है और अल्लाह के आदेशों पर अमल करने की राह उस के लिए आसान हो जाती हैं। किन्तु जो व्यक्ति नमाज़ की पाबन्दी नहीं करता उस के लिए यह राह मुश्किल होती है। इस लिए कि उस पर आमादा करने के लिए जो एहसास और जज़्बा दरकार है वह उस के अन्दर पैदा नहीं होता।

367. नमाज़ की रखवाली या हिफ़ाज़त का मतलब यह है कि पाबन्दी के साथ समय पर नमाज़ अदा की जाए और इस बात का पूरा ख़्याल रखा जाए कि कोई नमाज़ छूटने न पाए यहाँ तक मुश्किल एवं भय के माहौल में भी नमाज़ अदा की जाए।

368.मूल अरबी (Text) में ''वस्सलातिलवुस्ता'' के अल्फ़ाज़ इस्तेमाल हुए जिस का अर्थ ''बीच की नमाज़'' के हैं। इस से मुराद अस्र की नमाज़ है जैसा कि हदीस में आता है ''ख़न्दक की जंग'' के अवसर पर नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया: شَغَلُوْنَا عَنِ الصَّلٰوةِ الْوُسْطٰى صَلَاةِ الْعَصْرِ

'' दुश्मनों ने हमें बीच की नमाज़ अस्र की नमाज़ से बाज़ रखा'' (सहीह मुस्लिम)

और तिर्मिज़ी में अब्दुल्लाह बिन मसऊद रजि. से रिवायत है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया ''सलातिल वुस्ता सलातिल अस्र है '' صَلٰوةِ الْوُسْطٰى صَلٰوةِ الْعَصْرِ (तिर्मिज़ी, अबवाबुस्सलात)

इस्लाम ने दिन भर में पाँच वक़्त की नमाज़ें फ़र्ज (अनिवार्य) कर दी हैं जिन की शुरुआत फ़जर की नमाज़ से होती है और समाप्ति इशा की नमाज़ पर। इस लिहाज़ से असर की नमाज़ बीच की नमाज़ हुई। असर का वक्त दिन के आख़िरी मरहले (अन्तिम चरण) की हैसियत रखता है जिस में सामान्य रुप से व्यपारिक गतिविधियाँ एवं व्यस्तता अधिक होती हैं । इन गतिविधियों की व्यस्तता के दौरान असर की नमाज़ की अदायगी एक मुश्किल काम है। अगर इस का ख़याल न रखा जाए तो इस के छूट जाने (फ़ौत हो जाने) की संभावना है । इस लिए इस नमाज़ की देख रेख (रखवाली) करने की खास तौर से ताकीद की गई है।

369. यह नमाज़ के पोशीदा गुणों की ओर इशारा है अर्थात जहाँ नमाज़ के उन आदाब का जो कि प्रकट हैं जैसे समय की पाबन्दी इत्यादि का खयाल रखना ज़रुरी है वहीं नमाज़ के उन आदाब का जो कि अप्रकट हैं उन का भी लिहाज़ रखना चाहिए । नमाज़ की असल रुह (Spirit) अल्लाह के सम्मुख विनय एवं भक्ति और भय एवं विनम्रता (ख़ुशू एवं ख़ुज़ू) है इस लिए जब नमाज़ के लिए खड़े हों तो इसी मनोदशा के साथ उस की ओर ध्यान करें।

370. अर्थात अगर दुश्मन ने खतरे एवं भय की हालत पैदा की हो तो सवारी पर रहो या पैदल जिस हाल में रहो उसी हाल में नमाज़ अदा करो । अगर क़िबला रुख़ नहीं तो जो रुख़ भी हो और अगर सजदा नहीं कर सकते तो जिस हद तक सर को झुका सको, हर सूरत में समय पर नमाज़ की अदायगी ज़रुरी है और भय की हालत में नमाज़ की हिफाज़त यही है कि जिस तरह संभव हो नमाज़ अदा की जाए । ऐन लड़ाई में सिपाहियों को नमाज़ अदा करने की ताक़िद इस बात का अन्दाज़ा करने

के लिए काफ़ी है कि इस्लाम में युद्ध की कल्पना कितनी पाकीज़ा है और वह मुजाहिदों को कितनी उच्च कोटी की तरबियत देना चाहता है। इस ताकीदी आदेश से यह बात स्पष्ट हुई कि जब युद्ध के मौक़े पर नमाज़ क़ज़ा नहीं की जा सकती यह अलग बात है कि इशारे से भी नमाज़ पढ़ने का मौक़ा न हो, तो फिर इस कम दर्जे के उज़्र (बहाने) जैसे सफर वगैरह में नमाज़ कज़ा करने की गुन्जाइश कहाँ हो सकती है? समय पर नमाज़ ज़रुर अदा करना चाहिए और इसी मक़सद से शरीअत ने छूट और सहूलतें दी हैं वरना अगर नमाज़ कज़ा करना जायज़ होता तो ये छूट एवं रिआयतें न दी जातीं।

371.यहाँ नमाज़ को अल्लाह के ज़िक्र (याद) से संज्ञा दी है जिस से यह वास्तविकता स्पष्ट होती है कि नमाज़ सरासर अल्लाह का ज़िक्र है।

372.अर्थात अल्लाह तआला के बतलाए हुए तरीक़े के अनुसार नमाज़ अदा करो। अल्लाह तआला ने नमाज़ का तरीक़ा क़ुर्आन और नबी की सुन्नत दोनो माध्यमों से सिखाया है। क़ुर्आन में नमाज़ से सम्बन्धित बुनियादी एहकाम दिए गए हैं और उस की तफ़सील नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत में मौजूद हैं। इस लिए नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया ''सल्लू कमा राअयतमूनी उसल्ली'' صَلُّو كَمَا رأيتَمُونِى اُصَلِّى (مشكوٰة)

''इस तरह नमाज़ पढ़ो जिस तरह तुम मुझे नमाज़ पढ़ते हुए देखते हो'' (मिश्कात) इस से स्पष्ट हुआ कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की तालीम अल्लाह ही की तालीम है और क़ुर्आन के साथ सुन्नत एक दुसरे से जुड़े हुए हैं।

373. कलाम का सिलसिला नमाज़ पर ख़त्म हो गया था इस के बाद दो आयतों में ज़मीमे (परिशिष्ट) के तौर पर विधवा एवं तलाक़ शुदा औरतों से सम्बन्धित कुछ और हिदायतें बयान की गई जो बाद में वज़ाहत के तौर पर नाज़िल हुई थी।

374.आयत 234 में विधवा औरतों की इद्दत बयान हो चुकी है उन ही से सम्बन्धित वज़ाहत के तौर पर यह हिदायत नाज़िल हुई कि मर्दों को चाहिए कि वह अपनी मृत्यु के समय अपनी पत्नियों के हक़ में एक साल के लिए अपने माल में से नान नुफ़्क़ा (खाना कपड़ा) और अपने घर में ठहरने की वसीयत कर जाऐं ताकि मृत्यु के बाद उन्हें खाने पीने और रहने सहने की कठिनाइयों का तुरन्त सामना न करना पड़े। इस वसीयत के बाद इद्दत गुज़र जाने पर वह खुद अपनी मर्ज़ी से पति का घर छोड़ दें तो उन्हें अपने निवास एवं दूसरे विवाह इत्यादि के बारे में उचित रुप से फैसला करने का हक़ है। ऐसी सूरत में मय्यत के वारिसों को चाहिए कि वे उसे पति के घर में रहने के लिए विवश न करें।

375. अल्लाह ग़ालिब (प्रभुत्वशाली) है इस लिए शरअी आदेश देना उसी का हक़ है और वह हक़ीम (तत्वदर्शी) है इस लिए उस के एहकाम हिकमत पर आधारित हैं।

376. मूल अरबी (Text) में मताअ का लफ़्ज़ इस्तेमाल हुआ है जिस का अर्थ ''लाभ की चीज़'' के हैं इस का अर्थ नुफ़्क़ा (Maintenance) पर भी लागू होता है यहाँ जैसा कि ऊपर आयत 240 में हुआ है। अर्थात् उन लोगों को जो मौत के क़रीब हों यह हिदायत की गई है कि वे अपनी पत्नियों के हक़ में यह वसीयत कर जाऐं कि उन्हें एक साल तक मताअ (नुफ़्क़ा/खर्च) दिया जाये और तलाक़ के मौक़े पर दिए जाने वाले बिदाई उपहारों पर भी जिस को मुतअतुत्तलाक़ कहा जाता है आयत 236 में ''मुत्तिअहुन्न''(इन्हें मताअ दो/लाभ पहुँचाओ) से बिदाई उपहार ही मुराद है।

अब सवाल यह है कि इस आयत में मताअ से क्या मुराद है? इस सिलसिले में इमाम राज़ी ने अपनी तफ़्सीर में दोनों क़ौल (कथन) नक़ल किए हैं और नुफ़्क़ा के अर्थ को वरीयता दी है (देखिए अत्तफ़्सीरुलकबीर Vol.VI.P.161) लेकिन नुफ़्क़ा मुराद लेने की सूरत में इद्दत तक का नुफ़्क़ा ही मुराद लिया जा सकता है क्यों कि सुरह तलाक़ में तलाक़ दी हुई औरतों पर उन की इद्दत पूरी होने तक खर्च करने का हुक्म दिया गया है। इस लिए जिन टिकाकारों (मुफ़स्सिरों) ने मताअ से नुफ़्क़ा मुराद लिया है उन्हों ने यह बात इद्दत तक के नुफ़्क़े को मअहूद (Understood) अर्थात जिस का अहद अथवा निर्धारण किया गया हो, मान कर कही है वरना किसी टीकाकार (मुफ़स्सिर) ने भी यह नहीं कहा है कि इस आयत के हिसाब से तलाक़ शुदा औरत के लिए दूसरे विवाह तक का अथवा जीवन भर का नुफ़्क़ा वाजिब (जरुरी) है।

तफ़्सीरकारों (मुफ़स्सिरों) ने सामान्यत: इस आयत में मुताअ से मुत्तअ तलाक़ अर्थात बिदाई उपहार मुराद लिया है और यही बात सही मालूम होती है क्योंकि क़ुर्आन में दूसरी जगहों पर भी हिदायत की गई है कि तलाक़ की सूरत में औरतों को कुछ न कुछ फ़ायदा पहुँचाओ और उन्हें भले तरीक़े से रुख़्सत करो। यह बिदाई उपहार औरत के दिल रखने का साधन और उस चोट पर मरहम रखने जैसा है जो तलाक़ मिलने पर उस को पहुँचती है।

यह मताअ (उपभोग एवं पूँजी) हर तलाक़ शुदा औरत के लिए वाजिब है। क्यों कि आयत में सामान्यत: तलाक़ शुदा औरत को मताअ देने की हिदायत की गई है। एवं यह हुक्म तलाक़ के आदेश बयान करने के बाद अन्त में दिया गया है जिस की हैसियत अन्तिम हिदायत की है। इस लिए इस हुक्म में हर तरह की तलाक़ शुदा औरतें शामिल हैं। और जिस ताकीद के साथ यह हुक्म दिया गया है उस से भी इस की ताईद

(समर्थन) होती है।

रईसुलमुफ़स्सिरीन इब्ने जरीर तबरी लिखते हैं:

“मेरे नज़दीक इस मसले में अधिक उचित उस व्यक्ति का क़ौल (कथन) है जो हर तरह की तलाक़ शुदा औरतों के लिए मताअ का कायल है क्योंकि----- अल्लाह तआला ने यह हक़ हर तलाक़ शुदा औरत के लिए निर्धारित किया है और इन में से किसी महिला विशेष का निर्धारण नहीं किया।

(जामिउल बयान Vol. II. P.331)

रही बात मताअ की मात्रा की तो क़ुर्आन ने कोई मात्रा निश्चित नहीं की है बल्कि मारुफ़ तरीक़े (सामान्य रीति) पर अदा करने का हुक्म दिया है जिस का मतलब यह है कि मर्द अपनी हैसियत के अनुसार ऐसा तोहफ़ा दे जो उचित और दयालुता के स्वभाव का द्योतक हो । माज़ी (भूतकाल या प्राचीन काल) में अगर मर्द अपनी तलाक़ दी हुई औरत के लिए ग़ुलाम का प्रबन्ध अथवा उस की व्यवस्था करता रहा है तो मौजूदा ज़माने में जब कि तलाक़ शुदा औरत के नुफ़्क़े (खाना कपड़ा) का मसला समय का एक अहम मसला बन गया है, कोई ऐसी चीज़ दान कर देना जो तलाक़ शुदा औरत के लिए आमदनी का साधन बने या इद्दत के बाद मर्द का खुश दिली एवं स्वेच्छा के साथ तलाक़ शुदा औरत के नुफ़्क़े का प्रबन्ध करना एक भली और नेक बात होगी।

377. ये अल्फ़ाज़ स्पष्ट रुप से अनिवार्य होने पर तर्क करते हैं अर्थात हर तरह की तलाक़ शुदा औरतों को मताअ (बिदाई उपहार) देना हर उस व्यक्ति पर जो अल्लाह का ख़ौफ़ अपने दिल में रखता है अनिवार्य है।यही ताकीदी हुक्म है इस लिए फ़ुक़हा (धर्मशास्त्रियों) ने इस को मात्र भलाई एवं नेकी के अर्थ में लिया है उन से इत्तिफ़ाक़ (सहमति) नहीं किया जा सकता और जहाँ तक तफ़्सीरों का सम्बन्ध है सब से पुरानी तफ़्सीर इब्ने जरीर तबरी (मृत्यु सन् ३१०हिजरी) की है। वह हर तलाक़ शुदा औरत के लिए मुतअतुत्तलाक़ (बिदाई उपहार) की अनिवार्यता के क़ायल हैं।

(देखिये जामिउल बयान फ़ी तफ़्सीरुल क़ुर्आन Vol. II. P.331)

अफ़्सोस है कि इस ताकीदी हुक्म को मुसलमान इस तरह भुला बैठे हैं कि गोया पत्नियों को अपने से जुदा करने के लिए तलाक़ का लफ़्ज़ ज़बान से निकालना काफ़ी है। और उन को सुन्दर ढंग से बिदा करने की कोई नैतिक और संवैधानिक (शरअी) ज़िम्मेदारी उन पर लागु नहीं होती । इस ग़लत विचारधारा ने बहुत सी सामाजिक समस्याऐं खड़ी कर दी हैं। काश वे क़ुर्आन की हिदायतों पर कान धरते ।

❐ ❐ ❐ ❐ ❐ ❐

242. इस तरह अल्लाह अपने अहकाम वाज़ेह (स्पष्ट) फरमाता है ताकि तुम समझो ।

كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُوْنَ ﴿٢٤٢﴾

243. क्या तुम ने उन लोगों के हाल पर ग़ौर नहीं किया[378] जो हज़ारों की संख्या में होने के बावजूद मौत के डर से अपने घरों से निकल गये थे ? अल्लाह ने उन से फ़रमाया कि मर जाओ फिर उस ने उन्हें ज़िन्दा किया[379] निस्संदेह अल्लाह लोगों पर बड़ा मेहरबान है लेकिन अधिकतर लोग शुक्र अदा नहीं करते।

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِيْنَ خَرَجُوْا مِنْ دِيَارِهِمْ وَهُمْ اُلُوْفٌ حَذَرَ الْمَوْتِ
فَقَالَ لَهُمُ اللّٰهُ مُوْتُوْا ثُمَّ اَحْيَاهُمْ اِنَّ اللّٰهَ لَذُوْ فَضْلٍ عَلَى
النَّاسِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَشْكُرُوْنَ ﴿٢٤٣﴾

244. और अल्लाह की राह में जंग करो और यह जान रखो कि अल्लाह सब कुछ सुनने वाला और जानने वाला है [380]।

وَقَاتِلُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَاعْلَمُوْا اَنَّ اللّٰهَ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ﴿٢٤٤﴾

245. और कौन है जो अल्लाह को अच्छा कर्ज़ दे कि अल्लाह उस को कई गुना बढ़ा कर वापस कर दे [381]।अल्लाह तंगी (निर्धनता) भी देता है और कुशादगी (संपन्नता) भी [382] और उसी की तरफ़ तुम लौटाए जाओगे [383]।

مَنْ ذَا الَّذِيْ يُقْرِضُ اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا فَيُضٰعِفَهٗ لَهٗٓ اَضْعَافًا
كَثِيْرَةً وَاللّٰهُ يَقْبِضُ وَيَبْصُطُ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُوْنَ ﴿٢٤٥﴾

246. क्या तुम ने बनी इस्राईल के सरदारों के मामले पर ग़ौर नहीं किया [384] जो मूसा के बाद पेश आया था? [385]जब कि उन्हों ने अपने नबी से कहा [386] कि हमारे लिए एक बादशाह नियुक्त कर दीजिए ताकि हम अल्लाह की राह में जंग करें [387] उस ने कहा ऐसा न हो कि तुम को जंग करने का हुक्म दिया जाए और फिर तुम जंग न करो, कहने लगे हम अल्लाह की राह में कैसे नहीं लड़ेंगे जब कि हमें अपने घरों से निकाल दिया गया और बाल बच्चों से जुदा कर दिया गया है ?मगर जब उन को जंग का हुक्म दिया गया तो एक छोटी तादाद के सिवा सब फिर गए और अल्लाह ज़ालिमों को खूब जानता है।

اَلَمْ تَرَ اِلَى الْمَلَاِ مِنْ بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ مِنْ بَعْدِ مُوْسٰى اِذْ
قَالُوْا لِنَبِيٍّ لَّهُمُ ابْعَثْ لَنَا مَلِكًا نُّقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ قَالَ
هَلْ عَسَيْتُمْ اِنْ كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ اَلَّا تُقَاتِلُوْا قَالُوْا
وَمَا لَنَآ اَلَّا نُقَاتِلَ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَقَدْ اُخْرِجْنَا مِنْ
دِيَارِنَا وَاَبْنَآئِنَا فَلَمَّا كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقِتَالُ تَوَلَّوْا اِلَّا قَلِيْلًا
مِّنْهُمْ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ بِالظّٰلِمِيْنَ ﴿٢٤٦﴾

247. उन के नबी ने उन से कहा, अल्लाह ने तुम्हारे लिए तालूत [388] को बादशाह नियुक्त किया है,[389] बोले उस को हम पर बादशाही का क्या हक़? उस से अधिक बादशाही के हक़दार एवं योग्य तो हम हैं और उसे धन की संपन्नता भी प्राप्त नहीं है। नबी ने कहा अल्लाह ने तुम पर शासन के लिए उसी को चुना है और उस को इल्म और जिस्म (की क्षमताओं एवं योग्यताओं) में निपुणता प्रदान की है [390]। अल्लाह जिसे चाहे सत्ता प्रदान करे, अल्लाह बड़ी समाई वाला और इल्मवाला है।[391]

وَقَالَ لَهُمْ نَبِيُّهُمْ اِنَّ اللّٰهَ قَدْ بَعَثَ لَكُمْ طَالُوْتَ مَلِكًا
قَالُوْٓا اَنّٰى يَكُوْنُ لَهُ الْمُلْكُ عَلَيْنَا وَنَحْنُ اَحَقُّ بِالْمُلْكِ
مِنْهُ وَلَمْ يُؤْتَ سَعَةً مِّنَ الْمَالِ قَالَ اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰىهُ
عَلَيْكُمْ وَزَادَهٗ بَسْطَةً فِي الْعِلْمِ وَالْجِسْمِ
وَاللّٰهُ يُؤْتِيْ مُلْكَهٗ مَنْ يَّشَآءُ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ﴿٢٤٧﴾

378. यहाँ से फिर बयान का सिलसिला जिहाद एवं इन्फ़ाक़ (अल्लाह की राह में खर्च करने) की तरफ़ मुड़ रहा है। जिस की शुरुआत खाना-ए-काबा को मुश्रिकों के चंगुल से आज़ाद कराने के सम्बन्ध से हुई थी। बीच में वे मसाइल बयान कर दिये जो उस समय परिस्थिति की माँग के तौर पर उभर रहे थे।

जेहाद के सिलसिले में यहाँ बनी इस्राईल की एक घटना से इबरत दिलाई गई है।

379. यहाँ बनी इस्राईल की एक ऐतिहासिक घटना की ओर इशारा किया गया है जिस का ज़िक्र मौजूदा तौरात में ''शमूएल की पहली पुस्तक'' में मौजूद है। शमूएल नबी के ज़माने (ग्यारहवीं सदी ईसा पूर्व) में बनी इस्राईल की धार्मिक, नैतिक एवं राजनीतिक दशा अत्यन्त दयनीय थी। उन पर दुश्मनों का आक्रमण चारों ओर से था। और वे अपने दुश्मानों के मुक़ाबले की हिम्मत नहीं कर पा रहे थे। फिलस्तीनियों ने उन को भयभीत कर रखा था और उन से वह संदूक भी छीन ले गए थे जो उन के यहाँ पवित्र एवं शुभ समझा जाता था। और बनी इस्राईल अपने कई शहर खाली कर के भाग खड़े हुए थे। यह नैतिक मौत उन पर बीस साल तक छाई रही लेकिन शमूएल नबी के सुधारात्मक प्रयासों द्वारा उन के अन्दर धार्मिक, नैतिक एवं राजनीतिक जागृति पैदा हुई और वह इस क़ाबिल हो गए कि अपने जिन शहरों को खाली कर के भाग खड़े हुए थे उन को वापस ले लें। बाइबल की निम्न पंक्तियाँ देखें।

''तब पलिश्ती लड़ाई के मैदान में टूट पड़े, और इस्राइली हार कर अपने डेरे को भागने लगे और ऐसा अत्यन्त संहार हुआ कि तीस हज़ार इस्राईल पैदल खेत आए। और परमेश्वर का संदूक छीन लिया गया।'' (शमूएल की पहली पुस्तक 4:10,11)

''तब शमूएल ने इस्राईल के सारे घराने से कहा यदि तुम अपने पूर्ण मन से यहोवा की ओर फिरे हो, तो पराए देवताओं और अश्तोरेत देवियों को अपने बीच में से दूर करो और यहोवा की ओर अपना मन लगा कर केवल उसी की उपासना करो तब वह तुम्हें पलिश्तियों के हाथ से छुड़ाएगा। तब इस्राईलियों ने अजनबी देवताओं और अश्तोरेत देवियों को दूर किया और केवल यहोवा ही की उपासना करने लगे।''(शमूएल की पहली पुस्तक 7:3,4)''तब पलिश्ती दब गये और इस्राईलियों के देश में फिर न आए, और शमूअल के जीवन भर यहोवा का हाथ पलिश्तियों के विरुद्ध बना रहा। और एक्रोन और जात तक जितने नगर पलिश्तियों ने इस्राईलियों के हाथ से छीन लिए थे वे फिर इस्राईलियों के वश में आ गये।'' (शमूएल की पहली पुस्तक 7:13,14)।

आयत में बनी इस्राईल के इसी उत्थान और पतन की ओर इशारा मालूम होता है। उन की धार्मिक, नैतिक और राजनीतिक गिरावट को मौत से और हौसले दृढ़ संकल्प के साथ ईमान तथा जेहाद से परिपूर्ण जीवन को अपनाने को 'जीवन' की संज्ञा दी गई है। इस घटना का यहाँ वर्णन करने से अभिप्रेत ईमान वालों को जेहाद पर उभारना है। बनी इस्राईल की घटना फ़िलस्तीन की पावन धर्ती से संबन्धित थी और यहाँ ईमान वालों को जिस जंग के लिए उभारा जा रहा है उस का सम्बन्ध मक्का की पवित्र धरती से है। इस तरह मुसलमानों को एहसास दिलाया जा रहा है कि अगर वे मौत से डर गए तो यह उन की धार्मिक (दीनी) नैतिक एवं राजनीतिक मौत होगी। और उन्होंने अगर मौत से निडर हो कर जेहाद किया तो वे जीवन की हक़ीक़ी नेमत से सरफ़राज़ (प्रतिष्ठित) होंगे और उन्हें सम्मान तथा सरबुलन्दी नसीब होगी।

380. अत: वह तुम्हारी फ़रयाद सुनेगा और तुम्हारी मदद फ़रमाएगा साथ ही तुम्हारी क़ुर्बानियों का तुम्हें भरपूर सिला भी देगा।

381. अल्लाह की राह में जो माल खर्च किया जाए उसे अल्लाह तआला को क़र्ज़ देने से ताबीर किया गया है। यह अत्यंत भावपूर्ण अन्दाज़-बयान है जिस से यह स्पष्ट करना अभिप्रेत है कि तुम जो कुछ अल्लाह के रास्ते में खर्च करोगे वह अल्लाह तआला के यहाँ सुरक्षित रहेगा और जज़ा (बदले) के दिन वह उसे कई गुना बढ़ा चढ़ा कर तुम्हें वापस करेगा इस लिए यह सौदा घाटे का नहीं बल्कि भरपूर मुनाफ़े का है। ''अच्छा कर्ज़'' से मुराद ऐसा क़र्ज़ है जो ख़ुलूस और दिल की उदारता एवँ विशालता के साथ मात्र अल्लाह को प्रसन्न करने के लिए दिया जाए और अपनी प्रिय और पवित्र कमाई में से दिया जाए।

382. अर्थात् रिज़्क़ में कमी एवं बेशी पैदा करना अल्लाह ही के अधिकार में है अत:तंगी (निर्धनता) के भय से अल्लाह की राह में खर्च न करना सही तदबीर नहीं है।

383. अत: वास्तविक चिन्ता आख़िरत की करनी चाहिए जहाँ सब को जवाबदेही करना होगी।

384. यहाँ बनी इस्राईल के इतिहास की एक दूसरी घटना बयान की जा रही है। जिस से अभिप्रेत मुसलमानों को उन के राजनैतिक एवं सामाजिक जीवन के बारे में अत्यन्त महत्वपूर्ण सबक देना है।

385. अर्थात् लगभग ग्यारह सौ साल ईसा पूर्व में।

386. मुराद शमूएल नबी हैं जो फ़िलस्तीन के पहाड़ी इलाक़े अफ्राइम में रहते थे। उन का ज़माना 1100 ईसा पूर्व का है।

387. उस समय बनी इस्राईल के कई नगर उन के दुश्मानों के क़ब्ज़े में थे इस लिए बनी इस्राईल चाहते थे कि जंग के द्वारा अपने नगरों को वापस हासिल कर लें। उस समय हज़रत शमूएल

काफ़ी बूढ़े हो चुके थे। इस लिए उन्होंने उन से यह विनती की वह एक बादशाह (शासक) नियुक्त कर दे जिस के नेतृत्व में जंग की जा सके।

388. बाइबिल में तालूत का नाम शाऊल आया है (देखिए शमूएल की पहली पुस्तक अध्याय 1) वह बनी इस्राईल के एक छोटे क़बीले क़बीला बिन्यामीन का तीस वर्षीय नौजवान था और ऐसा लम्बा था कि लोग उस के कान्धे तक आते थे ।

389. मूल अरबी (Text) में मलिक-----का लफ़्ज़ इस्तेमाल हुआ है जिस का अर्थ सत्ताधारी के हैं। यहाँ इस से अभिप्राय निरंकुश शासक (Absolute Monarch) नहीं बल्कि ऐसे सत्ताधारी शासक के हैं जो अल्लाह की सर्वोच्च सत्ता को मान कर शरअी सीमाओं के अन्दर अपने अधिकारों का प्रयोग करे ।

तालूत को अल्लाह तआला ने बादशाह (शासक) नियुक्त किय था जिस का एलान अल्लाह के पैग़म्बर हज़रत शमूएल ने किया था और उन को बादशाह नियुक्त करने का असल उद्देश्य यह था कि बनी इस्राईल उन के नेतृत्व में जिहाद करें और अपने वे क्षेत्र वापस लें जिन पर अमालेकियों ने क़ब्ज़ा कर रखा था। इस से स्पष्ट है कि तालूत कि नियुक्ती मात्र शासन करने के लिए नहीं बल्कि दीनी ज़िम्मेदारियों को अन्जाम देने के लिए हुई थी। इस लिए इस को मलूकिय्यत (साम्राज्य वाद) के अर्थ में लेना सही नहीं ।

390. बनी इस्राईल को तालूत के बादशाह नियुक्त किये जाने पर इस कारण आपत्ति थी कि वह एक छोटे क़बीले से सम्बन्ध रखते थे जो अपना प्रभाव और पहुँच (Source) नहीं रखते थे। और मालदार भी नहीं थे। इस का जवाब शमूएल नबी ने यह दिया कि यह अल्लाह का चुनाव है वह नेतृत्व की क्षमता एवं योग्यता के लिए धन,प्रभाव और पहुँच को नहीं बल्कि इल्म और अमल की शक्ति को देखता है और इस लिहाज़ से तालूत अत्यन्त उचित व्यक्ति है। उस समय जंग का मरहला दरपेश था इस लिए ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता थी जो फ़ौज को कमाण्ड कर सके और उत्तम जंगी तदबीरें अमल में ला सके। तालूत के नेतृत्व संभालने के बाद जो कामयाबियाँ हुई उस ने सिद्ध कर दिया कि उन का चुनाव बिलकुल सही था।

391. अर्थात तुम्हारी दृष्टि और तुम्हारा ज्ञान सीमित है किन्तु अल्लाह की दृष्टि विशालतम अर्थात् चारों ओर फैली हुई तथा उस का ज्ञान (इल्म) असीमित है। इस लिए उस के फ़ैसलों को तुम अपने फ़ैसलों जैसा न समझो ।

और जब वह जालूत और उस के लशकरों के मुक़ाबले में आए तो उन्हों ने दुआ की, ऐ हमारे रब! हम को सब्र प्रदान कर, हमारे क़दम जमा दे और क़ाफिर क़ौम पर हमें ग़लबा (विजय) प्रदान कर। (अल-क़ुर्आन)

248. और उन के नबी ने उन से कहा कि उस के बादशाह नियुक्त किए जाने की पहचान यह है कि तुम्हारे पास वह संदूक आ जायेगा जिस में तुम्हारे रब की तरफ से सामाने-तस्कीन (हृदय शान्ति की सामग्री)और आले-मूसा और आले-हारुन (मूसा और हारुन के लोगों)की छोड़ी हुई यादगारें हैं। उस संदूक को फ़रिश्ते उठाए हुए होंगे।[392] उस में तुम्हारे लिए बड़ी निशानी है अगर तुम मोमिन हो ।

وَقَالَ لَهُمْ نَبِيُّهُمْ إِنَّ آيَةَ مُلْكِهِ أَن يَأْتِيَكُمُ التَّابُوتُ فِيهِ
سَكِينَةٌ مِّن رَّبِّكُمْ وَبَقِيَّةٌ مِّمَّا تَرَكَ آلُ مُوسَىٰ وَآلُ هَارُونَ
تَحْمِلُهُ الْمَلَائِكَةُ ۚ إِنَّ فِي ذَٰلِكَ لَآيَةً لَّكُمْ إِن كُنتُم مُّؤْمِنِينَ ﴿٢٤٨﴾

249. फिर जब तालूत लश्कर को ले कर [393] चला तो उस ने कहा अल्लाह एक दरया के द्वारा तुम्हारी आज़माइश करने वाला है [394] तो जो उसका पानी पी लेगा वह मेरा साथी नहीं और जो उस को नहीं चखेगा वही मेरा साथी है।यह और बात है कि कोई व्यक्ति अपने हाथ से चुल्लू भर पानी ले ले। मगर थोड़े लोगों के सिवा सब ने उस में से पानी पी लिया [395]। फिर जब तालूत और उस के ईमान वाले साथी दरया पार कर गए तो कहने लगे आज हम में जालूत [396] और उस के लश्करों का मुक़ाबला करने की ताक़त नहीं है।[397] लेकिन जो लोग समझते थे कि उन्हें अल्लाह से मिलना है उन्हों ने कहा कितने ही छोटे गिरोह अल्लाह के इज़्न (अनुज्ञा) से बड़े गिरोह पर ग़ालिब आ (छा) गये हैं और अल्लाह साबित क़दम (धैर्यवान) रहने वालों के साथ है [398]।

فَلَمَّا فَصَلَ طَالُوتُ بِالْجُنُودِ قَالَ إِنَّ اللَّهَ مُبْتَلِيكُم بِنَهَرٍ
فَمَن شَرِبَ مِنْهُ فَلَيْسَ مِنِّي وَمَن لَّمْ يَطْعَمْهُ فَإِنَّهُ مِنِّي إِلَّا مَنِ
اغْتَرَفَ غُرْفَةً بِيَدِهِ ۚ فَشَرِبُوا مِنْهُ إِلَّا قَلِيلًا مِّنْهُمْ ۚ فَلَمَّا جَاوَزَهُ
هُوَ وَالَّذِينَ آمَنُوا مَعَهُ قَالُوا لَا طَاقَةَ لَنَا الْيَوْمَ بِجَالُوتَ وَجُنُودِهِ ۚ
قَالَ الَّذِينَ يَظُنُّونَ أَنَّهُم مُّلَاقُو اللَّهِ كَم مِّن فِئَةٍ قَلِيلَةٍ
غَلَبَتْ فِئَةً كَثِيرَةً بِإِذْنِ اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ مَعَ الصَّابِرِينَ ﴿٢٤٩﴾

250. और जब वह जालूत और उस के लशकरों के मुक़ाबले में आए तो उन्हों ने दुआ की, ऐ हमारे रब! हम को सब्र प्रदान कर,हमारे क़दम जमा दे और क़ाफिर क़ौम पर हमें ग़लबा (विजय) प्रदान कर।

وَلَمَّا بَرَزُوا لِجَالُوتَ وَجُنُودِهِ قَالُوا رَبَّنَا أَفْرِغْ عَلَيْنَا صَبْرًا
وَثَبِّتْ أَقْدَامَنَا وَانصُرْنَا عَلَى الْقَوْمِ الْكَافِرِينَ ﴿٢٥٠﴾

251. आखिरकार अल्लाह के हुक्म से उन्हों ने उन को पराजय दी [399]और दाऊद ने जालूत को क़त्ल कर दिया और अल्लाह ने उस को सत्ता और तत्वदर्शिता (हिकमत) प्रदान कीया और जिन जिन चीज़ों का चाहा उस को इल्म (ज्ञान) दिया।[400] अगर अल्लाह एक गिरोह को दूसरे गिरोह द्वारा हटाता न रहता तो ज़मीन फ़साद से भर जाती लेकिन अल्लाह दुनिया वालों पर बड़ा मेहरबान है।[401]

فَهَزَمُوهُم بِإِذْنِ اللَّهِ وَقَتَلَ دَاوُودُ جَالُوتَ وَآتَاهُ اللَّهُ الْمُلْكَ
وَالْحِكْمَةَ وَعَلَّمَهُ مِمَّا يَشَاءُ ۗ وَلَوْلَا دَفْعُ اللَّهِ النَّاسَ
بَعْضَهُم بِبَعْضٍ لَّفَسَدَتِ الْأَرْضُ وَلَٰكِنَّ اللَّهَ
ذُو فَضْلٍ عَلَى الْعَالَمِينَ ﴿٢٥١﴾

252. ये अल्लाह की आयतें हैं जो हम तुम्हें ठीक ठीक सुना रहे हैं और तुम निश्चय ही पैग़म्बरों में से हो [402]।

تِلْكَ آيَاتُ اللَّهِ نَتْلُوهَا عَلَيْكَ بِالْحَقِّ ۚ وَإِنَّكَ لَمِنَ
الْمُرْسَلِينَ ﴿٢٥٢﴾

392. इस संदूक का नाम बाइबिल में ''यहोवा का संदूक''अथवा ''अल्लाह का संदूक'' आया है और इस संदूक का बनी इस्राईल के यहाँ बड़ा महत्व था क्यों कि इस में हज़रत मूसा और हज़रत हारुन की यादगारें जैसे वे तख्तियाँ जिन पर एहकामे-अशर: (दसआदेश) अंकित थे। तौरात की असल प्रति और हज़रत मूसा का असा (डंडा) जैसी चीज़ें थी। ये चीज़ें सत्य (हक़) की विजय एवं उस के पक्ष वा समर्थन की निशानियाँ थीं इस लिए उन को देख कर हौसले बुलन्द होते थे।

फ़िलस्तीनियों ने एक जंग के अवसर पर बनी इस्राईल से यह संदूक छीन लिया था जिस के कारण उन के हौसले टूट गये थे। हज़रत शमूएल ने तालूत के अल्लाह की ओर से बादशाह नियुक्त किये जाने की पहचान यह बताई कि वह संदूक उन के शासन काल में वापस आ जायेगा। अतएवं यह भविष्यवाणी पूरी हुई और घटना यह घटित हुई कि जो लोग संदूक छीन कर ले गये थे उन के क्षेत्र में महामारियाँ फूट पड़ी उन्होंने इस को देखते हुए और शायद जंग के संभावित खतरे से बचने के लिए भी खैरियत इसी में समझी कि इस संदूक को वापस कर दें अत: उन्होंने दो गायों की एक गाड़ी पर संदूक रख कर बिना गाड़ीबान के उस को बनी इस्राईल के क्षेत्र की ओर हाँक दिया जिस का वर्णन बाइबिल में इस तरह हुआ है।

''उन मनुष्यों ने वैसा ही किया,अर्थात् दो दुधार गायें ले कर उस गाड़ी में जोती और उन के बच्चों को घर में बन्द कर दिया। और यहुआ का संदूक और दूसरा संदूक और सोने के चहयों और अपनी गिलटियों की मूरतों को गाड़ी पर रख दिया, जब गायों ने बेतशेमेश का सीधा मार्ग लिया, वे सड़क ही सड़क बम्बाती हुई चली गईं और न दाहिने मुड़ी और न बाऐं, और पलिश्तियों के सरदार उन के पीछे पीछे बेतशेमेश के सिवाने तक गए और बेतशेमेश के लोग तराई में गेहूँ काट रहे थे और जब उन्होंने आँखें उठा कर संदूक को देखा तब उस के देखने से आनन्दित हुए।'' (शमूएल की पहली पुस्तक 6:10,11,12,13)

बिना गाड़ीबान के गायों का बनी इस्राईल के क्षेत्र में ठीक ठीक पहुँच जाना फ़रिश्तों की रहनुमाई के बग़ैर नहीं हो सकता था इस लिए इस को ''ताहमलहुल मलाइक:''(फ़रिश्ते उस को उठाए हुए होंगे) से ताबीर किया गया है।

393. मुक़ाबला फ़िलस्तीनी मुश्रिकों से था जिन्होंने बनी इस्राईल के क्षेत्रों पर अवैध कबज़ा कर रखा था।

394. अनुमात: दरया-ए-उर्दन (Jorden) मुराद है।

395.यह आदेश फ़ौज के अनुशासन और नैतिक दृढ़ता की परीक्षा लेने के उद्देश्य से दिया गया था। इस परिक्षा में संपूर्ण सफलता के लिए शर्त यह थी कि दरया का पानी चखा भी न जाए, फिर चुल्लु भर पानी को क्षमायोग्य ठहराया गया था। इस परिक्षा में बहुत थोड़े लोग पूरे उतरे।

396.जालूत एक पलिश्ती पहलवान था जो लम्बा तड़ंगा होने के अलावा बड़ा युद्ध विशेषज्ञ था और पलिश्ती फौज का कमाण्डर इन चीफ था। बाइबल में इस का नाम जाती जोलियत (Goliath) आया है।

397. यह उन लोगों का कथन है जिन्हों ने खूब पानी पिया था और परीक्षा में असफल सिद्ध हुए थे।

398.अर्थात हौसले और हिम्मत से काम लो । क्योंकि इस से अल्लाह की ताईद (समर्थन) हासिल होती है और जंग में कामयाबी का दारोमदार अल्लाह के समर्थन और सहायता पर है न कि अल्प संख्या एवं बहु संख्य होने पर। इतिहास में ऐसी अनगिनत मिसालें मिलेंगी कि अल्पसंख्यक समूह ने बहुसंख्यक समूह पर विजय प्राप्त की है।

399. दाऊद जिन को अल्लाह तआला ने बाद में नुबुव्वत और हुकूमत से नवाज़ा, उस समय नवजवान थे । उन्हों ने जालूत के चैलेन्ज को क़ुबूल किया और ऐसा हमला किया कि वह ढेर हो गया । उस के क़त्ल के बाद पलिश्ती फ़ौज में भगदड़ मच गई और वह बुरी तरह पराजित हुए। बाइबिल में है:-

'' दाऊद ने पलिश्ती से कहा तू तो तलवार और भाला और सांग लिए हुए मेरे पास आता है, परन्तु मैं सेनाओं के यहोवा के नाम से तेरे पास आता हूँ, जो इस्राईली सेना का परमेश्वर है, और उसी को तू ने ललकारा है। आज के दिन यहोवा तुझ को मेरे हाथ में कर देगा और मैं तुझ को मारुँगा और तेरा सिर तेरे धड़ से अलग करुँगा, और मैं आज के दिन पलिश्ती सेना की लोथें आकाश के पंक्षियों और पृथ्वी के जीव जन्तुओं को दे दूँगा, तब समस्त पृथ्वी के लोग जान लेंगे कि इस्राईल में एक परमेश्वर है। और यह समस्त मण्डली जान लेगी कि यहोवा तलवार वा भाले के द्वारा से नहीं बचाता, इस लिए संग्राम तो यहोवा का है, और वही तुम्हें हमारे हाथ में कर देगा। जब पलिश्ती उठ कर दाऊद का सामना करने के लिए निकट आया तब दाऊद सेना की ओर पलिश्ती का सामना करने के लिए फुर्ती से दौड़ा। फिर दाऊद ने अपनी थैली में हाथ डाल कर उस में से एक पत्थर निकाला और उसे गोफन में रख कर पलिश्ती के माथे पर ऐसा मारा कि पत्थर उस के माथे के भीतर घुस गया और वह भूमि पर मुँह के बल गिर पड़ा यूँ दाऊद ने पलिश्ती पर गोफन और एक ही पत्थर के द्वारा प्रबल हो कर उसे मार डाला, परन्तु दाऊद के हाथ में

तलवार न थी। तब दाऊद दौड़ कर पलिश्ती के ऊपर खड़ा हुआ और उस की तलवार पकड़ कर मियान से खींची और उस को घात किया और उस का सिर उसी तलवार से काट डाला। यह देख कर कि हमारा वीर मर गया, पलश्ती भाग गये। (शमूएल की प्रथम पुस्तक 17: 45, 46, 47, 48,49, 50, 51) दाऊद की जीवनी का आरम्भ उन के इसी कारनामे से होता है।

400. मुराद वे ईनाम हैं जो हज़रत दाऊद पर हुए। अल्लाह तआला ने उन्हें हुकूमत (सत्ता) भी प्रदान की और हिकमत (तत्वदर्शिता) भी। हुकूमत के साथ अगर हिकमत न हो तो वह चंगेज़ी बन जाती है और अगर हिकमत हो तो न्याय पूर्ण एवं समान्ता पूर्ण सत्ता बन जाती है और अल्लाह के आदेश और उस के क़ानून को लागू कर के खिलाफत का मकाम हासिल कर लेती है। हज़रत दाऊद की हुकूमत इस्लामी ख़िलाफ़त थी।

401. अर्थात् अल्लाह तआला का विधान यह है कि जब कोई गिरोह सत्ता प्राप्त करने के बाद हद से बढ़ने लगता है तो उस का जोर तोड़ने के लिए किसी दूसरे गिरोह को उठा खड़ा करता है। इस से जंग की ज़रुरत स्पष्ट होती है। अगर जंग बिल्कुल जायज़ न होती तो ज़मीन फ़साद से भर जाती। इस से धर्म के सन्यासी एवं जोगी विचारधारा एवं कल्पना का खण्डन होता है जिस के कारण जंग को धर्म के विरुद्ध समझा जाता है। नबी और नेक लोग जो जंग करते हैं वे अल्लाह के कलमें को बुलन्द करने तथा न्याय एवं समानता को स्थापित करने और फितने तथा फ़साद को मिटाने के उद्देश्य से करते हैं इस लिए वह इन्सानियत के पक्ष में लाभदायक और भली होती है।

402. इशारा इस बात की तरफ है कि बनी इस्राईल ने तालूत की महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटना को अर्थहीन बना कर रख दिया था। अत: बाइबिल के अध्यन से अन्दाज़ा होता है कि उन्होंने शमूएल की पुस्तक को उचित अनुचित, खट्टे मीठे, आर्दशूष्क का संग्रह बना कर रख दिया है। लेकिन अल्लाह तआला ने क़ुर्आन में इस घटना को ठीक ठीक बयान फ़रमा दिया जिससे ईमान और हिकमत से भरी हुई बातें सामने आ गई। इस शुद्धता एवं सत्याता के साथ डेढ़ हज़ार साल पहले की इस घटना को बयान करना जब कि उस के जानने का कोई स्रोत उपलब्ध नहीं है, हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ख़ुदा का दूत होने की स्पष्ट दलील है। हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पैग़म्बरों में से हैं और पैग़म्बर (Prophet Messenger) हैं। उस के अन्दर न ईश्वरीय गुण होते हैं और न वह ख़ुदा का अवतार (Incarnation) होता है। क़ुर्आन रिसालत (ईशदौत्य) की जो विचार धारा प्रवाहित करता है वह उन बेजा भ्रमों एवं अन्धविश्वासों से बिल्कुल पवित्र है।

ऐ ईमान वालो ! जो कुछ हम ने तुम को प्रदान किया है उस में से ख़र्च करो उस दिन के आने से पहले जिस में न तो ख़रीदो-फ़रोख़्त (क्रय विक्रय) होगी और न दोस्ती काम आएगी, और न ही सिफ़ारिश चलेगी ।और कुफ़्र करने वाले ही असल ज़ालिम हैं।(अल-क़ुर्आन)

تِلْكَ الرُّسُلُ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلَىٰ بَعْضٍ ۘ مِّنْهُم
مَّن كَلَّمَ اللَّهُ ۖ وَرَفَعَ بَعْضَهُمْ دَرَجَاتٍ ۚ وَآتَيْنَا عِيسَى ابْنَ
مَرْيَمَ الْبَيِّنَاتِ وَأَيَّدْنَاهُ بِرُوحِ الْقُدُسِ ۗ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ مَا اقْتَتَلَ
الَّذِينَ مِن بَعْدِهِم مِّن بَعْدِ مَا جَاءَتْهُمُ الْبَيِّنَاتُ وَلَٰكِنِ اخْتَلَفُوا
فَمِنْهُم مَّنْ آمَنَ وَمِنْهُم مَّن كَفَرَ ۚ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ مَا اقْتَتَلُوا
وَلَٰكِنَّ اللَّهَ يَفْعَلُ مَا يُرِيدُ ﴿٢٥٣﴾

253. ये रसूल हैं [403] जिन्हें हम ने एक दूसरे पर फ़ज़ीलत (श्रेष्ठता) प्रदान की [404] उन में कोई ऐसा था जिस से अल्लाह ने स्वयं बातें कीं और किसी के दर्जे बुलंद किए और हम ने ईसा इब्ने मरयम को खुली निशानियाँ प्रदान कीं और रुहुल क़ुदुस [405] से उस की ताईद की,अगर अल्लाह चाहता तो जो लोग इन रसूलों के बाद हुए वे इन खुली निशानियों के आ जाने के बाद आपस में न लड़ते लेकिन उन्हों ने इख़्तिलाफ़ (विभेद) किया फिर कोई ईमान लाया और किसी ने क़ुफ्र किया।अगर अल्लाह चाहता तो संभव न था कि वे परस्पर लड़ते मगर अल्लाह जो चाहता है करता है [406]।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا أَنفِقُوا مِمَّا رَزَقْنَاكُم مِّن قَبْلِ أَن
يَأْتِيَ يَوْمٌ لَّا بَيْعٌ فِيهِ وَلَا خُلَّةٌ وَلَا شَفَاعَةٌ ۗ وَالْكَافِرُونَ
هُمُ الظَّالِمُونَ ﴿٢٥٤﴾

254. ऐ ईमान वालो ! जो कुछ हम ने तुम को प्रदान किया है उस में से ख़र्च करो उस दिन के आने से पहले जिस में न तो खरीदो-फरोख्त (क्रय विक्रय) होगी और न दोस्ती काम आएगी, और न ही सिफ़ारिश चलेगी [407]। और कुफ़्र करने वाले ही असल ज़ालिम हैं।

اللَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّومُ ۚ
لَا تَأْخُذُهُ سِنَةٌ وَلَا نَوْمٌ ۚ لَّهُ مَا فِي السَّمَاوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ ۗ
مَن ذَا الَّذِي يَشْفَعُ عِندَهُ إِلَّا بِإِذْنِهِ ۚ يَعْلَمُ مَا بَيْنَ أَيْدِيهِمْ
وَمَا خَلْفَهُمْ ۖ وَلَا يُحِيطُونَ بِشَيْءٍ مِّنْ عِلْمِهِ إِلَّا بِمَا شَاءَ ۚ
وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضَ ۖ وَلَا يَئُودُهُ حِفْظُهُمَا ۚ وَهُوَ
الْعَلِيُّ الْعَظِيمُ ﴿٢٥٥﴾

255. अल्लाह जिस के सिवा कोई इलाह (पूज्य) नहीं [408] वह ज़िन्दा हस्ती है [409] जो क़ायम (स्थापित) है और सब को संभाले हुए है [410] उसे न ओंग लगती है और न नींद । [411] जो कुछ आसमानों और ज़मीन में है सब उसी का है, कौन है जो उस के यहाँ उस की इजाज़त के बग़ैर सिफ़ारिश कर सके?[412] वह जानता है जो कुछ उन के आगे है और जो कुछ उन के पीछे है और वह उस के इल्म (ज्ञान) में से किसी चीज़ की इदद्राक (ज्ञान हासिल) नहीं कर सकते, सिवाय उस के जो वह चाहे। [413] उस की कुर्सी आसमानों और ज़मीन पर छाई हुई है,[414] और उन की हिफ़ाज़त उस पर कुछ भी भारी नहीं, [415] और वह अत्यन्त बुलन्द और अज़मत (महानता एवं महिमा) वाला है।[416]

لَا إِكْرَاهَ فِي الدِّينِ ۖ قَد تَّبَيَّنَ الرُّشْدُ مِنَ الْغَيِّ ۚ فَمَن يَكْفُرْ
بِالطَّاغُوتِ وَيُؤْمِن بِاللَّهِ فَقَدِ اسْتَمْسَكَ بِالْعُرْوَةِ
الْوُثْقَىٰ لَا انفِصَامَ لَهَا ۗ وَاللَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٥٦﴾

256. दीन के बारे में कोई जब्र (बलात्) नहीं, [417] हिदायत गुमराही से बिलकुल छट कर सामने आ गई है तो जिस व्यक्ति ने तागूत (सरकशों)का इन्कार किया [418] और अल्लाह पर ईमान लाया उस ने ऐसा मज़बूत सहारा थाम लिया जो कभी टूटने वाला नहीं, और अल्लाह सब कुछ सुनने वाला और जानने वाला है

403. इशारा है रसूलों की पूरी जमाअत की तरफ़ जिस का ज़िक्र इस से पहले की आयत में हुआ है।

404. अर्थात अल्लाह तआला ने हर रसूल को किसी न किसी पक्ष से श्रेष्ठता प्रदान की । जैसे मूसा अलैहिस्सलाम को स्वयं बात करने की श्रेष्ठता प्रदान की। ईसा अलैहिस्सलाम को खुले खुले चमत्कार प्रदान किए इसी तरह दूसरे रसूलों को खास खास दर्जे और सम्मान प्रदान किए। इस लिए किसी रसूल की श्रेष्ठता को स्वीकार करना और दूसरे की श्रेष्ठता से इन्कार करना सही नहीं । लेकिन इन रसूलों की उम्मतों (माननेवालों) ने धार्मिक एवं साम्प्रदायिक विद्वेष पक्षपात का शिकार हो कर अजीब रवैया अपनाया। एवं वे अपनी उम्मत के रसूल के लिए हर तरह की श्रेष्ठता एवं प्रधानता की दावेदार हुई और दूसरे किसी रसूल की श्रेष्ठता को स्वीकार करने को तैयार नहीं हुई। नतीजा यह हुआ कि वे दूसरे रसूलों से लाभ उठाने से वंचित रह गई। अगर वे विद्वेष एवं पक्षपात से काम न लेती तो उन के लिए बिना किसी भेद भाव के तमाम रसूलों को मानना कुछ मुश्किल न था और इस सूरत में वे उस हिदायत से भी लाभान्वित होतीं जो क़ुर्आन मजीद की शक्ल में अल्लाह की तरफ से उस के आखिरी रसूल हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर नाज़िल हुई है। क़ुर्आन की यह शिक्षा कितनी वास्तविक, उचित एवं सत्य प्रिय है कि जिस जिस पैग़म्बर की जो जो विशेषताऐं रही हैं, उन सब को स्वीकार किया जाये और उन के बीच भेद भाव न करते हुए उस आसमानी हिदायत को स्वीकार किया जाए जो सर्वमान्य रही हैं।

405. रुहुलक़ुदुस से मुराद फ़रिश्तों के सरदार जिब्रील अलैहिस्सलाम हैं जिन के द्वारा अल्लाह तआला ने ईसा अलैहिस्सलाम का समर्थन एवं सहायता की थी लेकिन ईसाईयों ने उन्हें खुदा बना कर मन गढ़न्त अक़ीदे त्रीश्वरवाद (Trinity) में शामिल कर लिया।

406. इशारा है अल्लाह तआला की उस सुन्नत (तरीक़े) की तरफ़ कि उस ने हिदायत के मामले में जब्र (बलात्) का तरीक़ा नहीं अपनाया । अगर वह अपने बन्दों पर जब्र करना चाहता अथवा उन्हें विवश करना चाहता तो कोई व्यक्ति भी कुफ्र की राह पर नहीं चल सकता था लेकिन उस ने बन्दों को इरादा एवं इख्तियार (संकल्प एवं स्वत्व) की आज़ादी प्रदान की कि वे चाहें तो कुफ्र करें और चाहें तो ईमान लाऐं और हर एक अपना अन्जाम देख लें।

अल्लाह का यह चाहना कि बन्दों पर जब्र न किया जाये और अगर वे धर्म के नाम पर लड़ते झगड़ते हैं तो उन्हें ऐसा करने की आज़ादी हासिल रहे, अपने अन्दर बहुत बड़ी हिकमत और मसलहत रखता है। क्यों कि अल्लाह का कोई काम हिकमत और मसलहत से खाली नहीं होता। ध्यान रहे कि ऊपर से बयान खाना-ए-काबा को मुशरिकों के हाथों से आज़ाद करने के सम्बन्ध से अल्लाह की राह में जेहाद करने एवं खर्च करने का चला आ रहा है । इसी के अन्तर्गत यहाँ यह स्पष्ट किया जा रहा है कि अहले किताब (यहूदियों और ईसाईयों) ने ईमान वालों के विरुद्ध जो सैन्य रचना कर रखी है उस की वजह वास्तव में उन का यह अंधा पक्षपात एवं विद्वेष है कि वे अपने गिरोह को रसूल के सिवा किसी और रसूल को न माने और उस के लिए कोई श्रेष्ठता स्वीकार न करें। आज भी दुनिया की विभिन्न क़ौमें पक्षपात एवं विद्वेष की इस महामारी में लिप्त हैं और वह केवल इस कारण हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को रसूल मानने और आप के लिए कोई श्रेष्ठता स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होती कि आप एक दूसरे देश और एक दूसरी क़ौम में पैदा हुए थे। जब कि वे अपनी आँखों से देखते और अनुभव करते रहते हैं कि सूरज की रौशनी किसी मुल्क या क़ौम की परिधि में बन्द हो कर नहीं रहती बल्कि उस का लाभ तो जगत की सारी क़ौमों और पूरी दुनिया के लिए समान होती है दूसरे शब्दों में सर्वसाधारण के लिए होती है। फिर वे अल्लाह की हिदायत को क्यों भौगोलिक एवं जातीय परिधि में बंद देखना चाहते हैं?

407. यहाँ मस्तिष्क में यह बिठाना अभिप्रेत है कि खुदा के यहाँ काम आने वाली चीज़ जान और माल का बलिदान है जो उस की राह में दिया जाए । न कि वे झूठे सहारे जिन के बारे में लोग इस व्यर्थ के विश्वास में लिप्त हैं कि वे अल्लाह के दरबार में हमारी सिफ़ारिश करेंगे और हम जिनकी दोस्ती का दम भरते रहें हैं वे हमें मूक्ति का परवाना दिलवा कर रहेंगे।

408. इस आयत का नाम हदीस में ''आयतुलकुर्सी'' आया है और इसे क़ुर्आन की भव्यतम आयत क़रार दिया गया है। इस में अत्यन्त व्यापक रुप से तथा अत्यन्त प्रभावपूर्ण शैली में अल्लाह तआला का ज्ञान एवं उस का परिचय दिया गया है और तौहीद (एकेश्वरवाद) की वास्तविकता स्पष्ट करते हुए शिर्क (बहुदेववाद) का और विशेष रुप से सिफारिश की ग़लत विचार धाराओं का खण्डन किया गया है ताकि लोग विचार धारणाओं, आस्थाओं तथा अपने कर्मों में सच्ची खुदा परस्ती की राह अपनाऐं।

409. मुश्रिकीन (बहुदेववादी) देवताओं के बारे में यह धारणा रखते हैं कि वे एक विशेष प्रकार की शराब (Nectar या अमृत) अथवा एक विशेष प्रकार की पेय ''सोमा'' पी कर जीवित रहते हैं लेकिन अल्लाह वह जीवंत एवं अमर हस्ती है जो जीवित रहने के लिए किसी चीज़ की मोहताज नहीं।

410. मूल अरबी (Text) में लफ़्ज़ ''अलक़य्यूम'' इस्तेमाल हुआ है जिस के अर्थ हैं वह हस्ती जो स्वयं स्थापित हो और जिस पर दूसरों का जीवन और उस की पायदारी निर्भर हो । अल्लाह सिर्फ अपने बल पर क़ायम है और पूरी कायनात को वह तन्हा

संभाले हुए है।

411. अर्थात अल्लाह तो हर समय जागृत है। औंघ और नींद की दशा तो अल्लाह की पैदा की हुई है जो सृष्टि के लिए है सृष्टा पर उस के छा जाने का क्या सवाल ?

412. यह शफ़ाअत (अनुशंसा) की उस ग़लत धारणा का खण्डन है कि कुछ हस्तियों को खुदा के यहाँ ऐसा दर्जा हासिल है कि वे किसी के लिए ख़ुदा के यहाँ सिफ़ारिश कर सकते हैं और ख़ुदा को उन की सिफ़ारिश क़ुबूल करनी पड़ेगी। अत: कहा गया कि खुदा के यहाँ कोई भी उस कोटि का नहीं कि उस की इजाज़त के बग़ैर वह ज़बान खोल सके तो यह तो बहुत ही दूर की बात है कि वह सिफ़ारिश मनवा कर रहे। अलबत्ता यह सूरत अलग है कि अल्लाह अपने खास बन्दों में से जिस को चाहेगा और जिस के पक्ष में चाहेगा सिफ़ारिश करने की इजाज़त देगा। यह एक सम्मान है जो अल्लाह तआला अपने बन्दों में से जिन को चाहेगा प्रदान करेगा। फिर भी यह बात स्पष्ट है कि काफिरों के पक्ष में कोई भी सिफ़ारिश न कर सकेगा इस लिए कि उन के पक्ष में सिफ़ारिश की कोई गुन्जाइश अल्लाह तआला ने रखी ही नहीं है।

413. अर्थात अल्लाह का इल्म (ज्ञान) ज़मान और मकान (Time & Space) सब पर है लेकिन बन्दों का इल्म सिर्फ इस हद तक है जिस हद तक कि उस ने उन को प्रदान करना चाहा ।

414. अरबी (Text) में लफ़्ज़ ''कुर्सी'' इस्तेमाल हुआ है जिस के अर्थ बैठने की चीज़ तख्त इत्यादि के हैं। बादशाह की कुर्सी (तख्त) उस की सत्ता की निशानी होती है इस लिए यह लफ़्ज़ सत्ता के अर्थ में भी इस्तेमाल होता है। अल्लाह तआला की कुर्सी की परिस्थिति हम नहीं जानते क्यों कि ये ग़ैब की वास्तविकताओं में से है अलबत्ता इस का प्रथम भावार्थ बिलकुल स्पष्ट है कि अल्लाह की सत्ता आसमानों और ज़मीन पर पूरी तरह छाई हुई है। कायनात का कोई कोना ऐसा नहीं जो उस की सत्ता की परिधि से बाहर हो ।

415. अर्थात कायनात की देख रेख, उस की हिफ़ाज़त और उस का इन्तिज़ाम उस पर नहीं है कि वह किसी की सहायता का मोहताज हो। इस से यह विचार धारा ग़लत सिद्ध होती है कि ख़ुदा ने ख़ुदाई के काम देवी और देवताओं में बाँट रखे हैं, कोई हवाऐं चलाता है तो कोई बारिश बरसाता है, कोई ज़मीन का प्रबंध संभाले हुए है तो कोई आसमान का। कोई जीविका पहुँचाने का काम करता है तो कोई मौत। और कोई दौलत की देवी है तो कोई बीमारीयों की।

416. अर्थात् जो निम्न स्तर की बातें उस से जोड़ी जाती है और जो घटिया कल्पनाऐं एवं विचार बनाए जाते हैं उन के मुक़ाबले में उस की शान बहुत ही बुलन्द है।

417. इस से यह अच्छी तरह स्पष्ट है कि इस्लाम इस बात की इजाज़त नहीं देता कि किसी को इस्लाम स्वीकार करने पर विवश किया जाए । बल्कि विचार धारा एवं आस्था बनाने की फिर उस के अनुसार अमल करने की पूरी आज़ादी देता है क्यों कि दीन का असल उद्देश्य अल्लाह की प्रसन्नता (रज़ा) की प्राप्ती है जिस के योग्य अधिकारी वही हो सकते हैं जो वास्तव में उस को लक्ष्य बनाऐं । जब्र (बलात) एवं विवशता की सूरत में ज़ाहिर है यह मक़सद ख़त्म हो जाता है क्यों कि ज़बरदस्ती किसी से धार्मिक कृतियों को तो कराया जा सकता है लेकिन उस की नियतों को बदलना और उस के दिल में अल्लाह की प्रसन्नता की प्राप्ति के लिए शुद्ध हृदयता पैदा करना किसी के लिए मुमकिन नहीं है। लिहाज़ा किसी का दिल की आमादगी के बिना इस्लाम स्वीकार करना कोई अर्थ नहीं रखता। अत: क़ुर्आन करीम में दूसरी जगह फ़रमाया गया है।

وَلَوْ شَاءَ رَبُّكَ لَآمَنَ مَنْ فِي الْأَرْضِ كُلُّهُمْ جَمِيعًا
أَفَأَنْتَ تُكْرِهُ النَّاسَ حَتَّىٰ يَكُونُوا مُؤْمِنِينَ ۔ (يونس۔٩٩)

''अगर तुम्हारा रब चाहता तो धरती पर जितने भी लोग हैं सब के सब ईमान ले आते,फिर क्या तुम लोगों को मजबूर करोगे कि वे ईमान वाले हो जाऐं ।'' (सूरह यूनुस आयत - ९९)

इस वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए इस्लाम जिस बात पर ज़ोर देता है वह यह है कि प्रचार का गम्भीर एवं बुद्धि को अपील करने वाला तरीक़ा अपनाया जाए ताकि सत्य बिल्कुल खुल कर स्पष्ट हो जाए । इस के बाद भी यदि कोई व्यक्ति कुफ्र की राह पर जमा रहता है तो उस को उस के हाल पर छोड़ दिया जाए।

रही बात जिहाद की तो वह वास्तव में ज़मीन से फितना एवं फ़साद को मिटाने और इसलामी जीवन व्यवस्था स्थापित करने के लिए शरीअत में स्थान पा सकता है। और इस व्यवस्था में इस बात की पूरी गुन्जाइश है कि दूसरे धर्म के अनुयायी इस में रह सकते हैं। रहे अरब के बहुदेववादी और वे लोग जो मुरतद हो जाऐं अर्थात इस्लाम से विमुख हो जाऐं तो उन को क़त्ल करने का हुक्म बतौर सज़ा के है।

418. मूल अरबी (Text) में लफ़्ज़ ताग़ूत इस्तेमाल हुआ है जिस के अर्थ '' सीमोल्लंघन करने और कुफ्र में हद से गुज़र जाने के हैं।'' (लिसानुल अरब Vol. 15P.7)

इस से मुराद हर वह बन्दा है जो बन्दगी की सीमाओं से निकल जाये और सरकशी एवं बग़ावत पर उतर आए। यह भावार्थ शैतान पर भी लागू होता है और बागी एवं सरकश इन्सानों पर भी। विशेष रुप से उन पेश्वाओं और शासकों पर भी जो अल्लाह के एहकाम और क़ानून की जगह अपने आदेश एवं संविधान चलाते हैं। (अधिक व्याख्या के लिए देखें सूरह निसा नोट नं.116,128,129, तथा सूरह अलमाइदह नोट नं.180

अल्लाह ईमान वालों का कारसाज़ (सहायक एवं अभिभावक) है वह उन को अन्धकारों से निकाल कर नूर (रौशनी) में लाता है और जिन लोगों ने कुफ़्र किया उन के कारसाज़ (सहायक एवं अभिभावक) ताग़ूत हैं वे उन को रौशनी से अन्धकारों की तरफ़ ले जाते हैं। ये लोग आग में जाने वाले हैं जहाँ वे हमेशा रहेंगे।(अल-क़ुर्आन)

257. अल्लाह ईमान वालों का कारसाज़ (सहायक एवं अभिभावक) है वह उन को अन्धकारों से निकाल कर नूर (रौशनी) में लाता है [419] और जिन लोगों ने कुफ़्र किया उन के कारसाज़ (सहायक एवं अभिभावक) ताग़ूत हैं वे उन को रौशनी से अन्धकारों की तरफ़ ले जाते हैं। ये लोग आग में जाने वाले हैं जहाँ वे हमेशा रहेंगे।

اَللّٰهُ وَلِیُّ الَّذِیْنَ اٰمَنُوْا یُخْرِجُهُمْ مِّنَ الظُّلُمٰتِ اِلَی النُّوْرِ۬ؕ
وَالَّذِیْنَ كَفَرُوْۤا اَوْلِیٰٓـُٔهُمُ الطَّاغُوْتُ یُخْرِجُوْنَهُمْ مِّنَ النُّوْرِ
اِلَی الظُّلُمٰتِؕ اُولٰٓىِٕكَ اَصْحٰبُ النَّارِۚ هُمْ فِیْهَا خٰلِدُوْنَ ۝٢٥٧

258. क्या तुम ने [420] उस व्यक्ति को नहीं देखा [421] जिसने इब्राहीम से उस के रब के बारे में इस वजह से झगड़ा किया कि अल्लाह ने उस को सत्ता प्रदान की थी।[422] जब इब्राहीम ने कहा कि मेरा रब तो वह है जो जिलाता और मारता है। उस ने कहा मैं भी जिलाता और मारता हूँ। इब्राहीम ने कहा अच्छा तो अल्लाह सूरज को पूरब से निकालता है तू उसे पश्चिम से निकाल ला [423]। यह सुन कर वह काफ़िर भौंचक्का रह गया और अल्लाह ऐसे ज़ालिमों को हिदायत नहीं करता [424]।

اَلَمْ تَرَ اِلَی الَّذِیْ حَآجَّ اِبْرٰهٖمَ فِیْ رَبِّهٖۤ اَنْ اٰتٰىهُ اللّٰهُ
الْمُلْكَ ۘ اِذْ قَالَ اِبْرٰهٖمُ رَبِّیَ الَّذِیْ یُحْیٖ وَیُمِیْتُ ۙ قَالَ اَنَا
اُحْیٖ وَاُمِیْتُ ؕ قَالَ اِبْرٰهٖمُ فَاِنَّ اللّٰهَ یَاْتِیْ بِالشَّمْسِ مِنَ
الْمَشْرِقِ فَاْتِ بِهَا مِنَ الْمَغْرِبِ
فَبُهِتَ الَّذِیْ كَفَرَ ؕ وَاللّٰهُ لَا یَهْدِی الْقَوْمَ الظّٰلِمِیْنَ ۝٢٥٨

259. या फिर उस व्यक्ति की मिसाल (विचार योग्य) है जिस का गुज़र एक ऐसी बस्ती पर हुआ जो अपनी छतों पर गिरी पड़ी थी [425]। उस ने कहा अल्लाह इस को इस के मर चुकने के बाद किस तरह ज़िन्दा करेगा [426]। इस पर अल्लाह ने उसे मौत दी और सौ साल तक इसी हालत में रखा फिर उसे जिला उठाया [427] और पूछा कितनी मुद्दत इस हाल में रहे? उस ने जवाब दिया एक दिन या एक दिन का कुछ हिस्सा। फरमाया, नहीं बल्कि तुम एक सौ साल इस हालत में गुज़ार चुके हो [428]। अब अपने खाने पीने की चीज़ो को देखो कि उस में कोई परिवर्तन नहीं आया और अपने गधे को भी देखो। (कि बोसीदा अर्थात् जीर्ण होने के बावजूद हम उस को किस तरह ज़िन्दा करते हैं) और ताकि हम तुम्हें लोगों के लिए एक निशानी बना दें [429]।और हड्डियों की तरफ देखो कि किस तरह इस का ढाँचा खड़ा करते हैं फिर उन पर गोश्त पोस्त चढ़ाते हैं [430]। इस तरह जब उस पर वास्तविकता प्रकट हो गई तो पुकार उठा: मैं यक़ीन रखता हूँ कि अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।

اَوْ كَالَّذِیْ مَرَّ عَلٰی قَرْیَةٍ وَّهِیَ خَاوِیَةٌ عَلٰی عُرُوْشِهَا ۚ
قَالَ اَنّٰی یُحْیٖ هٰذِهِ اللّٰهُ بَعْدَ مَوْتِهَا ۚ فَاَمَاتَهُ اللّٰهُ
مِائَةَ عَامٍ ثُمَّ بَعَثَهٗ ؕ قَالَ كَمْ لَبِثْتَ ؕ قَالَ لَبِثْتُ یَوْمًا
اَوْ بَعْضَ یَوْمٍ ؕ قَالَ بَلْ لَّبِثْتَ مِائَةَ عَامٍ فَانْظُرْ اِلٰی
طَعَامِكَ وَشَرَابِكَ لَمْ یَتَسَنَّهْ ۚ وَانْظُرْ اِلٰی حِمَارِكَ
وَلِنَجْعَلَكَ اٰیَةً لِّلنَّاسِ وَانْظُرْ اِلَی الْعِظَامِ
كَیْفَ نُنْشِزُهَا ثُمَّ نَكْسُوْهَا لَحْمًا ؕ فَلَمَّا تَبَیَّنَ لَهٗ ۙ
قَالَ اَعْلَمُ اَنَّ اللّٰهَ عَلٰی كُلِّ شَیْءٍ قَدِیْرٌ ۝٢٥٩

419. नूर से मुराद हिदायत का नूर अथवा हिदायत की रौशनी है जिस से ईमान वालों का हृदय एवं मस्तिष्क तथा स्वभाव, व्यवहार, आचरण एवं उस की नैतिकता को रौशनी मिलती है और ज़ुलमात से मुराद गुमराही के अन्धकार हैं जो कुफ्र करने वालों के हृदय एवं मस्तिष्क तथा स्वभाव, व्यवहार, आचरण एवं उस की नैतिकता पर छा जाती हैं। नूर का लफ़्ज़ एक वचन में इस्तेमाल हुआ है जबकि ज़ुलमात का शब्द बहुवचन में । यह इस वास्तविकता की ओर संकेत है कि ख़ुदा की हिदायत की सच्ची राह एक ही है और वह है इस्लाम जब कि गुमराही के रास्ते और उस की शक्लें कई और विभिन्न हैं।

420. हिदायत एवं ज़लालत (पथ प्रदर्शन एवं पथ भ्रष्टता) से संबंधित जो उसूली बात ऊपर बयान की गई है उस को ज़ेहन में बिठाने के लिए तीन सच्ची घटनाओं को उदाहरण स्वरुप प्रस्तुत किया जा रहा है जिन में से पहली घटना से यह स्पष्ट होता है कि किस तरह के लोगों को सत्य से परिचित होने के बाद भी गुमराही से निकलना नसीब नहीं होता और बाद की दो घटनाओं से यह स्पष्ट होता है कि जिन्होंने अल्लाह का सहारा पकड़ लिया था उन को अल्लाह ने किस तरह विश्वास और संतोष प्रदान किया तथा ग़ैब की (अदृश्य) वास्तविकताओं तक का उन्हें अनुभव करा दिया।

421. मुराद नमरुद है जो इराक का बादशाह और हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम का समकालीन था।

422. प्राचीन काल में बादशाह देवताओं के अवतार समझे जाते रहे हैं। नमरुद की क़ौम सितारों की भक्त थी और सूरज को सब से बड़े देवता का दर्जा प्राप्त था। इस लिए नमरुद के बारे में यह धारणा रही होगी कि वह सूरज देवता का अवतार है,ऐसी सूरत में वह इब्राहीम अलैहिस्सलाम की इस दअवत को कैसे सहन कर सकता था कि वास्तविक रब अर्थात पालनहार और पूज्य सिर्फ अल्लाह ही है। इस लिए उस ने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को बुला कर वाद विवाद किया कि तुम यह किस रब की दअवत दे रहे हो। रब तो मैं हूँ क्यों कि सत्ता मुझे प्राप्त है। गोया उस के भ्रम में उस का सत्ताधारी होना यह अर्थ रखता था कि वह फलाँ और फलाँ देवता का अवतार है और इसी कारण इस बात का योग्य अधिकारी है कि पूजा अर्चना और उस की सारी रस्में सादर पूरी उसी को की जाऐं हालाँकि यह सत्ता अल्लाह की प्रदान की हुई थी। और अल्लाह तआला जिस किसी को सत्ता प्रदान करता है उस की परीक्षा लेता है कि वह सत्ता की नेअमत पा कर अल्लाह का कृतज्ञ (शुक्रगुज़ार) और आज्ञाकारी बनता है या अहं में लिप्त हो कर ख़ुदा के बन्दों पर अपने ख़ुदा होने का सिक्का बिठाने की कोशिश करता है।

423. हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम का यह तर्क अत्यन्त स्पष्ट, उचित और भारी था कि ज़िन्दगी और मौत पूर्ण रुप से अल्लाह ही के वश और उस के अधिकार में है अत:वही इस बात का वास्तविक अधिकारी है कि उसे रब माना जाए । किन्तु नमरुद ने इस पर यह मूर्खतापूर्ण प्रतिवाद किया कि ज़िन्दगी और मौत तो मेरे वश में भी है मैं जिस को चाहूँ क़त्ल कर दूँ और जिस को चाहूँ माफ कर दूँ। नमरुद के इस प्रतिवाद में कोई वज़न न था बल्कि मात्र कटहुज्जती की बात थी क्यों कि वह जानता था कि वह अपनी मौत को भी टाल नहीं सकता था इस लिए हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने इस में उलझने के बजाय दूसरी हुज्जत ऐसी पेश कर दी कि नमरुद से कोई जवाब न बन पड़ा और वह यह कि मेरा रब सूरज को पूरब से निकालता है तू इसे पश्चिम से निकाल कर दिखा। इस तर्क में यह कटाक्ष भी निहित था कि सूरज देवता नहीं है जिस के अवतार होने का नमरुद दावेदार है बल्कि वह अल्लाह के हुक्म का अधीन है और उसी के क़ानून के तहत निकलता और डूबता है।

424. अर्थात हिदायत की राह स्पष्ट हो जाने के बाद भी उन लोगों पर नहीं खुलती जो अल्लाह की नेअमत को पा लेने के बाद उस के शुक्रगुज़ार नहीं बनते बल्कि अहं और घमण्ड में लिप्त हो जाते हैं और अपने लिए बन्दगी अर्थात दासता का नहीं बल्कि ख़ुदा का स्थान सुनिश्चित करने लगते हैं। ऐसे लोगों पर जब हक़ खुल जाता है तो भी वे उसे स्वीकार करने के लिए आमादा नहीं होते बल्कि चकित हो कर रह जाते हैं।

425. बस्ती से मुराद अनुमानत:येरुश्लम (Jerusalem) है जो सन 586 ई. पू. नबूकदनज़र (Nebuchadnezzer) के हाथों तबाह हो गया था।

426. यह प्रश्न इन्कार के तौर पर नहीं बल्कि अचंभे के तौर पर था।

427. मौत के बाद मिलने वाले जीवन का यह अनुभव जिस व्यक्ति को कराया गया वह ज़रुर कोई नबी होगा क्यों कि नबियों ही को आसमानों की सैर कराई जाती है। अनुमानत: यह घटना हिज़केल नबी के साथ घटित हुई थी क्योंकि हेज़केल नामक पुस्तक में इस से मिलती जुलती एक घटना का वर्णन मिलता है। (देखिए हेज़केल 37: 1-14)

428. यह घटना इस वास्तविकता का द्योतक है कि क़ियामत के दिन जब आदमी क़ब्र से उठेगा तो आलमे बर्ज़ख में जो समय उस ने गुज़ारा होगा उस का एहसास उस को न होगा बल्कि वह यह महसूस करेगा कि अभी अभी सोया और अभी अभी जाग उठा है।

429. निशानी इस बात की कि अल्लाह मुर्दों को ज़िन्दा करने पर क़ादिर (सक्षम) है और निशानी इस बात की कि वह उजड़ी हुई बस्ती को दोबारा आबाद कर सकता है और बनी इस्राईल को महकूमी (पराधीनता) के अपमान से निकाल कर नव जीवन प्रदान कर सकता है।

430. स्पष्ट हुआ कि अगर अल्लाह चाहे तो किसी चीज़ को उस के सड़गल जाने के बाद जीवित कर सकता है और अगर वह चाहे तो किसी चीज़ को साधारण विधान अथवा भौतिक नियम से ऊपर भी रख सकता है कि वह सड़े गले ही नहीं।

जो लोग अपने माल अल्लाह की राह में ख़र्च करते हैं उन के ख़र्च की मिसाल उस दाने की सी है जिस से सात बालें उग आऐं और हर बाल में सौ दाने हों इस तरह अल्लाह जिसे चाहता बढ़ोत्तरी प्रदान करता है। अल्लाह बड़ी समाई वाला और सब कुछ जानने वाला है।(अल-क़ुर्आन)

260. और (वह घटना भी वर्णन योग्य है) जब इब्राहीम ने कहा: मेरे रब ! मुझे दिखा दे तू मुर्दों को किस तरह ज़िन्दा करेगा। फ़रमाया क्या तुम ईमान नहीं रखते ? निवेदन किया, ईमान तो रखता हूँ लेकिन चाहता हूँ कि दिल संतुष्ट हो जाए । फ़रमाया तो चार परिन्दे ले कर और उन को आपस में हिला लो फिर उन का एक एक भाग एक एक पहाड़ी पर रख दो फिर उन को पुकारो, वे तुम्हारे पास दौड़ते हुए आऐंगे [431]।और ख़ूब जान लो कि अल्लाह ग़ालिब और हकीम (प्रभुत्वशाली एवं तत्वदर्शी) है [432]।

وَاِذْ قَالَ اِبْرٰهٖمُ رَبِّ اَرِنِيْ كَيْفَ تُحْيِ الْمَوْتٰى ۭ قَالَ اَوَلَمْ
تُؤْمِنْ ۭ قَالَ بَلٰي وَلٰكِنْ لِّيَطْمَىِٕنَّ قَلْبِيْ ۭ قَالَ فَخُذْ اَرْبَعَةً
مِّنَ الطَّيْرِ فَصُرْھُنَّ اِلَيْكَ ثُمَّ اجْعَلْ عَلٰي كُلِّ جَبَلٍ مِّنْهُنَّ
جُزْءًا ثُمَّ ادْعُهُنَّ يَاْتِيْنَكَ سَعْيًا ۭ
وَاعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ﴿٢٦٠﴾

261. जो लोग [433] अपने माल अल्लाह की राह में ख़र्च करते हैं [434] उन के ख़र्च की मिसाल उस दाने की सी है जिस से सात बालें उग आऐं और हर बाल में सौ दाने हों [435] इस तरह अल्लाह जिसे चाहता बढ़ोत्तरी प्रदान करता है। अल्लाह बड़ी समाई वाला [436] और सब कुछ जानने वाला है।[437]

مَثَلُ الَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَھُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ كَمَثَلِ
حَبَّةٍ اَنْۢبَتَتْ سَبْعَ سَـنَابِلَ فِيْ كُلِّ سُنْۢبُلَةٍ مِّائَةُ حَبَّةٍ ۭ
وَاللّٰهُ يُضٰعِفُ لِمَنْ يَّشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ﴿٢٦١﴾

262. जो लोग अपने माल अल्लाह की राह में ख़र्च करते हैं फिर उस के बाद न एहसान जताते हैं और न दिल दुखाते हैं उन का अज्र (प्रतिफल) उन के रब के पास है [438]। उन के लिए न कोई भय होगा और न वे ग़मगीन (शोकाकुल) होंगे।

اَلَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَھُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ثُمَّ لَا يُتْبِعُوْنَ
مَآ اَنْفَقُوْا مَنًّا وَّلَآ اَذًى ۙ لَّھُمْ اَجْرُھُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ ۚ
وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا ھُمْ يَحْزَنُوْنَ ﴿٢٦٢﴾

263. भली बात कहना और दरगुज़र से काम लेना उस सदक़े (दान) से बेहतर है जिस के पीछे दिलदुखाना हो ।[439] और अल्लाह बेनियाज़ (निष्काम) और सहनशील है।[440]

قَوْلٌ مَّعْرُوْفٌ وَّمَغْفِرَةٌ خَيْرٌ مِّنْ صَدَقَةٍ يَّتْبَعُهَآ اَذًى ۭ
وَاللّٰهُ غَنِىٌّ حَلِيْمٌ ﴿٢٦٣﴾

264. ऐ ईमान वालों ! एहसान जता कर और दिलदुखा कर अपने सदकों (दान) को उस व्यक्ति की तरह बरबाद न करो जो अपना माल लोगों को दिखावे के लिए खर्च करता है और अल्लाह और आखिरत के दिन पर ईमान नहीं रखता। उस की मिसाल ऐसी है जैसे एक चट्टान जिस पर कुछ मिट्टी (जमी हुई) थी। उस पर जब ज़ोर का बादल बरसा तो वह साफ चट्टान की चट्टान रह गई [441]। ऐसे लोगों की कमाई कुछ भी उन के हाथ लगने वाली नहीं। और अल्लाह काफ़िरों को सीधा रास्ता नहीं दिखाता ।[442]

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُبْطِلُوْا صَدَقٰتِكُمْ بِالْمَنِّ وَالْاَذٰى ۙ
كَالَّذِيْ يُنْفِقُ مَالَهٗ رِئَاۗءَ النَّاسِ وَلَا يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ
وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۭ فَمَثَلُهٗ كَمَثَلِ صَفْوَانٍ عَلَيْهِ تُرَابٌ فَاَصَابَهٗ
وَابِلٌ فَتَرَكَهٗ صَلْدًا ۭ لَا يَقْدِرُوْنَ عَلٰي شَيْءٍ مِّمَّا كَسَبُوْا ۭ وَاللّٰهُ
لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكٰفِرِيْنَ ﴿٢٦٤﴾

431. अर्थात चार परिन्दे ले कर उन को पहले अपने से हिला मिला लो फिर उन को टुकड़े कर के उन के अलग अलग भागों को अगल बग़ल की पहाड़ीयों पर रख दो फिर उन को बुलाओ तो वे ज़िन्दा हो कर तुम्हारे पास दौड़ते हुए आऐंगे। इस तरह इब्राहीम अलैहिस्सलाम को मरने के बाद मिलने वाले जीवन का अनुभव कराया गया।

परिन्दों को अपने से परचाने की हिदायत इस लिए दी गई कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को यक़ीन हो जाये कि वही परिन्दे दोबारा जिन्दा हो गए जिन को उन्होंने टुकड़े टुकड़े कर के पहाड़ो पर बिखेर दिया था। इस तरह स्पष्ट हुआ कि क़ियामत के दिन परवरदिगार की पुकार पर मुर्दे हर दिशा से उस की तरफ दौड़ पड़ेंगे।

परचे हुए परिन्दों के दोबारा जीवित होने पर अपने मालिक की आवाज़ को पहचान लेना इस वास्तविकता की ओर इशारा करता है कि इन्सान जब दोबारा उठाये जाऐंगे तो उन की दुनिया की ज़िन्दगी के बारे में सारी याददाश्तें ताज़ा हो जाऐंगी।

432. यहाँ अल्लाह तआला की इन सिफ़तों का ज़िक्र इस वास्तविकता की ओर संकेत करता है कि इन्सानो का दोबारा उठाया जाना बिलकुल सही और सत्य पर आधारित है इस लिए अल्लाह को इस का सामर्थ्य प्राप्त है अथवा अल्लाह इस पर क़ादिर (सक्षम) है एवं ऐसा करना उस की हिकमत (तत्वदर्शिता) का तक़ाज़ा भी है।

433. यहाँ से बयान का रुख़ फिर असल कलाम के सिलसिले की तरफ़ मुड़ रहा है।

434. फी सबीलिल्लाह (अल्लाह की राह में) से मुराद वह खर्च है जिस का मक़सद अल्लाह की प्रसन्नता की प्राप्ति हो और जो अल्लाह की हिदायत के अनुसार खर्च किया जाए।

435. यह ख़ुदा की राह में खर्च किए हुए माल के अज्र और सवाब में बढ़ोतरी की मिसाल है। जिस तरह एक दाने से सात बालें निकलें और हर बाल में सौ दाने हों उसी तरह एक नेकी का अज्र (प्रतिफल) सात सौ गुना तक मिलेगा। अल्लाह तआला के यहाँ खर्च की सिर्फ मात्रा नहीं देखी जाएगी बल्कि यह भी देखा जाएगा कि किस ने किस जज़्बे से और किन हालात में खर्च किया है। जिस व्यक्ति ने शुद्ध हृदयता और गहरे ईमानी जज़्बो के साथ कठिन परिस्थितियों में खर्च किया होगा वह उस व्यक्ति के मुक़ाबले में अज्र (प्रतिफल) का अधिक योग्य अधिकारी होगा जिस ने खुशहाल होते हुए भी बेदिली अथवा कमदिली के साथ खर्च किया होगा।

436. अर्थात अल्लाह अत्यन्त विशाल साधनों और असीमित खज़ानों का मालिक है और बदला चुकाने में अत्यन्त उदार है।

437. अल्लाह सब कुछ जानने वाला है अत: जो भी नेक काम तुम करोगे उस को उस की खबर होगी और वह तुम्हें बराबर उस का अज्र (प्रतिफल) देगा।

438. ओछे लोग अथवा छोटी भावनाओं वाले लोग जब किसी पर खर्च करते हैं तो चाहते हैं कि वह उन के एहसान तले हमेशा दबे रहें और जब उन्हें इस में कामयाबी नहीं होती तो कटाक्ष एवं अपशब्दों द्वारा उन्हें अपमानित करने की कुचेष्टा करते हैं। अत: यहाँ कहा गया कि जिस अज्र (इनाम का वादा किया जा रहा है वह ऐसे लोगों के लिए नहीं है बल्कि उन लोगों के लिए है जिनका चरित्र इस तरह के दोषों से पाक हो और जो अपने दान में नि:स्वार्थ हो।

439. पूँजी पति सामान्यत: ग़रीबों को घृणा एवं तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं और माँगने वालों को झिड़क देते हैं। क़ुर्आन मात्र दान करने की प्रेरणा नहीं देता बल्कि मालदारों का वैचारिक एवं नैतिक सुधार भी करना चाहता है। इस लिए उस ने इस तरह की ख़राबियों के सुधार की ओर विशेष रुप से ध्यान दिया है और इस बात की ताकीद की है कि माँगने वाला अगर अनुचित रवैया अपनाए तो दर गुज़र और क्षमा से काम लेना चाहिए।

440. अल्लाह सम्पन्न, तृप्त, और निष्काम होने के साथ साथ सहनशील भी है। अत: बन्दों की कमज़ोरियों और कोताहियों के बावजूद उन पर अपनी दया दृष्टि उंडेलता ही रहता है। इन गुनों का असर बन्दों को यह क़ुबूल करना चाहिए कि अल्लाह ने उसे सम्पन्न किया है तो वह अपने अन्दर सहनशीलता के गुण पैदा करे और अगर ग़रीबों तथा माँगने वालों का रवैया खराब हो तो दर गुज़र और क्षमा से काम ले।

441. यह ऐसे व्यक्ति की मिसाल है जो किसी कठोर और चिकनी चट्टान पर जिस पर मिट्टी की तह जमी हुई हो खेती करे जब उस पर ज़ोर की बारिश हो तो फसल समेत सारी मिट्टी बह जाए और साफ चट्टान की चट्टान रह जाये (Land slip) की इस घटना के फलस्वरुप जिस पर खेती करने वाले की मेहनत अकारथ जाती है उसी तरह जो लोग अपने नाम और ख्याति के लिए दान करते हैं वे अपने दान को बरबाद करते हैं। जिस दान की बुनियाद शुद्धहृदयता एवं ईश भय पर न हो और जिसके पीछे ख़ुदा के बन्दों की सच्ची हमदर्दी का जज़्बा न हो उस का कोई अज्र और सवाब आख़िरत में प्रकट नहीं होगा।

442. अर्थात् जो लोग दौलत की नेअमत पा कर अल्लाह के शुक्रगुज़ार (कृतज्ञ) नहीं बनते उन्हें ईश भय एवं शुद्धहृदयता के साथ दान करने की तौफ़ीक़ नहीं मिलती और वह एक नेकी का काम भी नेकी की भावना के साथ नहीं कर पाते।

265. और उन लोगों की मिसाल जो अपने माल अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए हृदय की स्थिरता के साथ खर्च करते हैं, उस बाग़ की तरह हो जो बुलंदी पर स्थित हो उस पर बारिश हो जाए तो दोगुना फल लाए और अगर बारिश न हो तो फुहार ही काफी हो जाए । तुम जो कुछ करते हो अल्लाह उस को देख रहा है।

وَمَثَلُ الَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمُ ابْتِغَآءَ مَرْضَاتِ اللّٰهِ
وَ تَثْبِيْتًا مِّنْ اَنْفُسِهِمْ كَمَثَلِ جَنَّةٍۭ بِرَبْوَةٍ اَصَابَهَا وَابِلٌ
فَاٰتَتْ اُكُلَهَا ضِعْفَيْنِ ۚ فَاِنْ لَّمْ يُصِبْهَا وَابِلٌ فَطَلٌّ ؕ وَاللّٰهُ
بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ﴿۲۶۵﴾

266. क्या तुम में से कोई भी यह पसन्द करेगा कि उस के पास खजूरों और अंगूरों का एक बाग़ हो जिस के नीचे नहरें बह रही हों और इस के लिए उस में हर प्रकार के फल मौजूद हों [443] और वह बुढ़ापे की हालत में पहुँच गया हो और उस के बच्चे अभी शक्तिहीन हों और उस बाग़ पर आग (विषैली हवा) का बगूला चले [444] जिस से वह झूलस कर रह जाए। इस तरह अल्लाह तुम्हारे लिए आयतें वाज़ेह (स्पष्ट) फरमाता है ताकि तुम सोचविचार करो।[445]

اَيَوَدُّ اَحَدُكُمْ اَنْ تَكُوْنَ لَهٗ جَنَّةٌ مِّنْ نَّخِيْلٍ وَّ اَعْنَابٍ
تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ ۙ لَهٗ فِيْهَا مِنْ كُلِّ الثَّمَرٰتِ ۙ
وَاَصَابَهُ الْكِبَرُ وَلَهٗ ذُرِّيَّةٌ ضُعَفَآءُ ۚ ۖ فَاَصَابَهَآ
اِعْصَارٌ فِيْهِ نَارٌ فَاحْتَرَقَتْ ؕ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ
لَكُمُ الْاٰيٰتِ لَعَلَّكُمْ تَتَفَكَّرُوْنَ ﴿۲۶۶﴾

267. ऐ ईमान वालो ! अपनी कमाई में से अच्छी और पाकीज़ा चीज़ें ख़र्च करो [446] और उन चीज़ों में से खर्च करो जो ज़मीन से हम ने तुम्हारे लिए निकाली हैं [447]। और बुरी और नापाक चीज़ें खर्च करने का हरगिज़ इरादा न करो कि अगर वही चीज़ें तुम्हें दी जाऐं तो तुम कभी न लोगे यह और बात है कि तुम देखी अनदेखी कर जाओ, और अच्छी तरह जान लो कि अल्लाह बेनियाज़ (निष्काम) और तारिफ़ का मुस्तहिक़ है।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْۤا اَنْفِقُوْا مِنْ طَيِّبٰتِ مَا كَسَبْتُمْ وَمِمَّآ
اَخْرَجْنَا لَكُمْ مِّنَ الْاَرْضِ ۪ وَلَا تَيَمَّمُوا الْخَبِيْثَ مِنْهُ
تُنْفِقُوْنَ وَلَسْتُمْ بِاٰخِذِيْهِ اِلَّاۤ اَنْ تُغْمِضُوْا
فِيْهِ ؕ وَاعْلَمُوْۤا اَنَّ اللّٰهَ غَنِيٌّ حَمِيْدٌ ﴿۲۶۷﴾

268. शैतान तुम्हें मुफ्लिसी (निर्धनता) से डराता है और बेहयाई के कामों की प्रेरणा देता है [448] मगर अल्लाह अपनी तरफ़ से क्षमा और फ़ज़्ल (और बढ़ा कर देने) का वादा करता है। अल्लाह बड़ी समाई वाला और बड़े इल्म (ज्ञान) वाला है।

اَلشَّيْطٰنُ يَعِدُكُمُ الْفَقْرَ وَيَاْمُرُكُمْ بِالْفَحْشَآءِ ۚ وَاللّٰهُ
يَعِدُكُمْ مَّغْفِرَةً مِّنْهُ وَفَضْلًا ؕ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ﴿۲۶۸﴾

269. वह जिसे चाहता है हिकमत से नवाज़ता है।[449] और जिसे हिकमत मिली उसे बड़ी दौलत मिल गई। मगर नसीहत वही लोग क़ुबूल करते हैं जो अक़्लमन्द हैं।

يُّؤْتِي الْحِكْمَةَ مَنْ يَّشَآءُ ۚ وَمَنْ يُّؤْتَ الْحِكْمَةَ فَقَدْ
اُوْتِيَ خَيْرًا كَثِيْرًا ؕ وَمَا يَذَّكَّرُ اِلَّاۤ اُولُوا الْاَلْبَابِ ﴿۲۶۹﴾

443. अरबों के यहाँ खजूर के बृक्षों (Date Palm Trees) को विशेष महत्व प्राप्त था। उस का फल उन के लिए आहार का काम देता था और उस की गिनती धन के महत्वपूर्ण साधनों में होती थी। अरब वासी अपने बाग़ों को खजूर के वृक्षों से घेर लेते थे ताकि गर्मी और तेज़ हवाओं से बाग़ सुरक्षित रह सके। बीच में अंगूर इत्यादि के वृक्ष लगाते थे और कुछ टुकड़ों में फसलों की खेती करते थे।

444. आग के बगूले से यहाँ मुराद विषैली हवा और लू का बगूला है जिस से बाग़ झुलस कर रह जाऐं।

445. इस मिसाल से जो बात ज़ेहन में बिठानी अभिप्रेत है वह यह है कि क्या तुम इस बात को पसन्द करोगे की अपनी दुनिया आबाद करने के बाद जब तुम यहाँ से बिदा हो और परलोक (आख़िरत) में क़दम रखो तो एक बड़ी घटना से दोचार हो जाओ और तुम्हें पता चले कि तुम्हारा सब किया कराया बरबाद हो गया और अब कोई मौक़ा नहीं कि नये सिरे से कमाई कर सको और न कहीं से कोई मदद पा सको। अगर इस हादसे से दोचार नहीं होना चाहते तो दुनिया परस्ती अथवा लक्ष्मी पूजा की इस ग़लत विचार धारा को छोड़ो और अल्लाह की प्रसन्नता प्रप्ति को लक्ष्य बना कर ख़ुदा की राह में खर्च करो।

446. अल्लाह तआला वही सदक़ा (दान) स्वीकार करता है जो पाक और हलाल कमाई में से किया गया हो। नापाक और हराम कमाई में से जो दान किया जाएगा वह अल्लाह के यहाँ हरगिज़ स्वीकार नहीं होगा। जैसे सूद, जुआ, शराब और दूसरी हराम चीज़ों की बिक्री, बेहयाई के काम और उस का प्रचार एवं प्रसार तथा चोरी, गबन, इत्यादी के द्वारा आदमी जो हराम माल कमाए उस में से कितनी ही बड़ी मात्रा में और किसी भी नेक काम में धन खर्च करे, अल्लाह तआला के यहाँ उसे स्वीकार नहीं किया जाएगा बल्कि ठुकरा दिया जाएगा ।

447. अल्लाह की राह में खर्च करने की यह हिदायत यद्यपि ज़कात और नफ़्ल सदके दोनों के लिए हैं किन्तु ज़मीन की पैदावार से खास तौर पर इशारा पैदावार की ज़कात की तरफ है और अपनी कमाई से इशारा व्यापारिक मालों इत्यादि की ज़कात की तरफ।

448. अर्थात् शैतान नहीं चाहता कि तुम नेक कामों में खर्च करो, अत:गरीब एवं निर्धन हो जाने का भय दिल में बिठाता है और अय्याशी एवं गन्दे कामों में रुपया उड़ाने पर आमादा करता है। आज बेहयाई की नित नई शक्लें जैसे नग्न चित्रों वाली पत्रिकाऐं, गन्दी नाविलें, कामुक गाने, नाच रंग की महफिलें, निर्लज्जता को बढ़ावा देने वाले कल्ब और चरित्र को बरबाद करने वाली फ़िल्में इन्सान से बेतहाशा खर्च करने की माँग करती है और दूसरों के अधिकारों को अदा करने तथा नेक कामों में खर्च करने से रोकती है।

449. मूल अरबी (Text) में लफ़्ज़ हिकमत इस्तेमाल हुआ है जिस से मुराद, विवेक, बुद्धि तथा अन्तरदृष्टि है। दुनिया की असल दौलत माल नहीं बल्कि वह समझ और सीख है जो इन्सान में अन्तरदृष्टि अथवा दूरंदेशी पैदा करे और उन कामों की ओर उसे प्रेरित एवं उस की रहनुमाई करे जिन में उस का वास्तविक लाभ निहित है। यह समझ और सीख अल्लाह तआला की तौफ़ीक़ पर निर्भर है और अल्लाह तआला इस नेअमत से उसे नवाज़ता है जिसे वह चाहता है लेकिन अल्लाह तआला का यह चाहना भी हिकमत और मसलहत से खाली नहीं होता। वह उन लोगों के दामन हिकमत के मोतियों से भर देता है जो दुनिया परस्ती, अय्याशी की राह अपनाने के बजाय अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्ति को लक्ष्य बना कर उस के लिए क़ुर्बानियाँ देते हैं और उस की राह में बेरोक टोक खर्च करते हैं।

270. तुम ने जो कुछ भी खर्च किया हो और जो नज़र (मन्नत) भी मानी हो [450] अल्लाह उस को जानता है और ज़ालिमों का कोई मददगार न होगा [451]।

وَمَآ أَنفَقْتُم مِّن نَّفَقَةٍ أَوْ نَذَرْتُم مِّن نَّذْرٍ
فَإِنَّ ٱللَّهَ يَعْلَمُهُۥ ۗ وَمَا لِلظَّٰلِمِينَ مِنْ أَنصَارٍ ﴿٢٧٠﴾

271. अगर तुम अपने सदक़े ज़ाहिर कर के दो तो यह भी अच्छा है लेकिन अगर छिपा कर मोहताजों को दो तो यह तुम्हारे लिए ज़्यादा बेहतर है [452]। अल्लाह तुम्हारी कितनी ही बुराइयों को दूर कर देगा और अल्लाह तुम्हारे आमाल (कर्मों) से अवगत है।

إِن تُبْدُوا۟ ٱلصَّدَقَٰتِ فَنِعِمَّا هِىَ ۖ وَإِن تُخْفُوهَا
وَتُؤْتُوهَا ٱلْفُقَرَآءَ فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَيُكَفِّرُ عَنكُم
مِّن سَيِّـَٔاتِكُمْ ۗ وَٱللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ ﴿٢٧١﴾

272. इन को हिदायत देने की ज़िम्मेदारी तुम पर नहीं है [453]। बल्कि अल्लाह जिस को चाहता है हिदायत देता है।और तुम जो माल भी खर्च करोगे उस का लाभ तुम ही को पहुँचेगा।और तुम अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्ती ही के लिए खर्च करते हो तो जो माल भी तुम खर्च करोगे उस का अज्र (प्रतिफल) तुम्हें पूरा पूरा दिया जाएगा।और तुम्हारा हक़ कदापि न मारा जाएगा।

لَّيْسَ عَلَيْكَ هُدَىٰهُمْ وَلَٰكِنَّ ٱللَّهَ يَهْدِى مَن يَشَآءُ ۗ
وَمَا تُنفِقُوا۟ مِنْ خَيْرٍ فَلِأَنفُسِكُمْ ۚ وَمَا تُنفِقُونَ إِلَّا
ٱبْتِغَآءَ وَجْهِ ٱللَّهِ ۚ وَمَا تُنفِقُوا۟ مِنْ خَيْرٍ يُوَفَّ إِلَيْكُمْ
وَأَنتُمْ لَا تُظْلَمُونَ ﴿٢٧٢﴾

273. सहायता के असल हक़दार वे जरुरतमन्द हैं जो अल्लाह की राह में ऐसे घिर गए कि ज़मीन में दौड़ धूप नहीं कर सकते [454] बेख़बर आदमी उन की खुद्दारी को देख कर उन को सम्पन्न समझता है।तुम उन को उन के चेहरों से पहचान सकते हो, वे लोगों से लिपट कर नहीं माँगते।और जो माल भी तुम ख़र्च करोगे अल्लाह उस को जानता है।

لِلْفُقَرَآءِ ٱلَّذِينَ أُحْصِرُوا۟ فِى سَبِيلِ ٱللَّهِ
لَا يَسْتَطِيعُونَ ضَرْبًا فِى ٱلْأَرْضِ يَحْسَبُهُمُ ٱلْجَاهِلُ
أَغْنِيَآءَ مِنَ ٱلتَّعَفُّفِ تَعْرِفُهُم بِسِيمَٰهُمْ لَا يَسْـَٔلُونَ
ٱلنَّاسَ إِلْحَافًا ۗ وَمَا تُنفِقُوا۟ مِنْ خَيْرٍ فَإِنَّ ٱللَّهَ
بِهِۦ عَلِيمٌ ﴿٢٧٣﴾

274. जो लोग अपने माल रात और दिन खुले और छिपे खर्च करते हैं उन का अज्र (प्रतिफल) उन के रब के पास है। उन को न किसी प्रकार का ख़ौफ़ होगा और न ग़म।

ٱلَّذِينَ يُنفِقُونَ أَمْوَٰلَهُم بِٱلَّيْلِ وَٱلنَّهَارِ سِرًّا
وَعَلَانِيَةً فَلَهُمْ أَجْرُهُمْ عِندَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ
عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٢٧٤﴾

275. जो लोग [455] सूद (ब्याज़) खाते हैं [456] वे उस व्यक्ति की तरह उठेंगे [457] जिसे शैतान ने अपनी छूत से ख़ब्ती (बावला) बना दिया हो [458]।यह इस लिए कि वे कहते हैं व्यापार भी तो सूद की तरह है।[459] हालाँकि अल्लाह ने व्यापार को हलाल ठहराया है और सूद को हराम [460]। अब जिस व्यक्ति को उस के रब की तरफ़ से यह नसीहत पहुँचे और वह बाज़ आ जाए तो जो कुछ वह पहले ले चुका वह उस का हुआ और उस का मामला अल्लाह के हवाले है और अगर फिर इसकी पुनारवृत्ति (इआदा) करे तो ऐसे लोग दोज़खी हैं, वे उस में हमेशा रहेंगे [461]।

ٱلَّذِينَ يَأْكُلُونَ ٱلرِّبَوٰا۟ لَا يَقُومُونَ إِلَّا كَمَا يَقُومُ ٱلَّذِى
يَتَخَبَّطُهُ ٱلشَّيْطَٰنُ مِنَ ٱلْمَسِّ ۚ ذَٰلِكَ بِأَنَّهُمْ قَالُوٓا۟ إِنَّمَا ٱلْبَيْعُ
مِثْلُ ٱلرِّبَوٰا۟ ۗ وَأَحَلَّ ٱللَّهُ ٱلْبَيْعَ وَحَرَّمَ ٱلرِّبَوٰا۟ ۚ فَمَن جَآءَهُۥ
مَوْعِظَةٌ مِّن رَّبِّهِۦ فَٱنتَهَىٰ فَلَهُۥ مَا سَلَفَ وَأَمْرُهُۥٓ إِلَى ٱللَّهِ ۖ
وَمَنْ عَادَ فَأُو۟لَٰٓئِكَ أَصْحَٰبُ ٱلنَّارِ ۖ هُمْ فِيهَا خَٰلِدُونَ ﴿٢٧٥﴾

450. मूल अरबी (Text) शब्द में ''नज़र'' इस्तेमाल हुआ है जिस के अर्थ मन्नत मानने के हैं। अर्थात आदमी यह प्रण करे कि यदि मेरी फ़्लाँ और फ़्लाँ मुराद पूरी हो गई तो मैं यह और यह इबादत करुँगा या इतना और इतना दान करुँगा। इस्लाम में नज़र सिर्फ अल्लाह के लिए जायज़ है। अल्लाह के सिवा किसी के नाम की नज़र अथवा मन्नत शिर्क और हराम है क्योंकि मन्नत भी इबादत की एक शक्ल है जो नेअमतों के मिलने की स्वीकृत और उस के शुक्र के तौर पर आदमी अन्जाम देता है। और जब वास्तविकता यह है कि जो नेअमत भी आदमी को मिलती है उसे प्रदान करने वाला अल्लाह तआला ही है तो फिर उस की प्रदान की हुई नेअमत के हासिल हो जाने पर अल्लाह के सिवा औरों का शुक्र अदा करने का क्या अर्थ ?

इस्लाम ने नज़र अथवा मन्नत मानने को प्रेरित नहीं किया है। किन्तु यदि कोई व्यक्ति नज़र माने और उस की मुराद पूरी हो जाए तो उस का पूरा करना ज़रुरी है। क्यों कि यह अल्लाह के साथ किया गया प्रण है जिस में काहिली बरतना बड़ी नैतिक कमज़ोरी है।

451. यहाँ ज़ालिम से मुराद वे लोग हैं जो दुनिया की दौलत को सब कुछ समझ बैठे और अल्लाह की राह में खर्च करने से जी चुराऐं या खर्च करें तो मात्र दिखावे अथवा अपनी ख्याति के लिए।

452. दान एवं खैरात कुछ मौक़ों पर ज़ाहिर कर के देना मुफ़ीद होता है जैसे दूसरों को दान अथवा अल्लाह की राह में खर्च करने के लिए प्रेरित करने और किसी सामाजिक उद्देश्य के लिए प्रोत्साहित करने के मक़सद से लेकिन अगर ऐसी कोई ज़रुरत न हो तो गुप्त रुप से दान करना ही बैहतर होता है। क्यों कि इस सूरत में आदमी दिखावे से बचता है और ज़रुरतमंदों की ख़ुद्दारी को भी ठेस नहीं पहुँचती। इस लिए हदीस में आता है कि क़ियामत के दिन अल्लाह तआला उस व्यक्ति को अपनी दया एवं कृपा की छाया में जगह देगा जिस ने गुप्त रुप से दान किया होगा यहाँ तक कि उस के बाऐं हाथ को ख़बर नहीं कि उस के दाहिने हाथ ने क्या ख़र्च किया।

453. इशारा है इस बात की तरफ कि ज़रुरतमन्दों की मदद करना चाहिए चाहे वह मुस्लिम हो या ग़ैर मुस्लिम। किसी को हिदायत देने की ज़िम्मेदारी तुम पर नहीं है अत: किसी ग़ैर मुस्लिम ज़रुरतमंद की मदद करने में, यह सोच विचार मत करो कि उस ने हिदायत क़ुबूल नहीं की है। बल्कि अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए जिस जरुरतमंद इन्सान की भी तुम मदद करोगे अल्लाह तआला तुम्हें इस का पूरा पूरा अज्र (प्रतिफल) देगा।

454. अर्थात दीन की सेवा करने में ऐसे व्यस्त हो गए हैं कि अपनी कमाई के लिए दौड़ धूप नहीं कर सकते और ख़ुद्दारी की वजह से वे अपनी हाजत और आवश्यकताओं को प्रकट नहीं करते। उन को उन के चेहरे और उन के हुलिये से पहचाना जा सकता कि वे वास्तव में ज़रुरतमंद हैं। ऐसे लोग सहायता के असल हक़दार हैं। इस के अनुकूल उस ज़माने में असहाबे-सुफ़्फ़ा थे जो दीन का इल्म हासिल करने, दूसरों को उस की शिक्षा देने और अल्लाह के कलमें को बुलन्द करने की जद्दोजहद में तन मन से व्यस्त थे और अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आर्थिक साधनों से वंचित थे।

455. इन्फ़ाक़ अर्थात् अल्लाह की राह में खर्च करने पर ज़ोर देने के बाद अब सूद का हराम होना बयान किया जा रहा है जो दान (ख़ैरात) के बिलकुल विरुद्ध है। दान और ख़ैरात से इन्सान के अन्दर, हमदर्दी, उदारता, त्याग, दया और ख़ुदा से मुहब्बत की भावनाऐं परवरिश पाती हैं किन्तु सूद इन्सान के अन्दर, स्वार्थ, कन्जूसी, क्रूरता, लालच एवं धन की ग़ुलामी जैसी नीचता पैदा करता है इस लिए क़ुर्आन ने जहाँ अल्लाह की राह में खर्च करने का निर्देश दिया वहीं सूद ख़ोरी से बचने का भी आदेश दिया है।

456. मूल अरबी (Text) में लफ़्ज़ ''रिबा--'' इस्तेमाल हुआ है जिस का शाब्दिक अर्थ ज़्यादती और वृद्धि के हैं। इस से मुराद वह वृद्धि है जो किसी क़र्ज़ पर मोहलत के बदले वसूल किया जाता है जिसे हम ''सूद और ब्याज़'' कहते हैं। सूद, बैअ (क्रय-विक्रय अथवा व्यापार) से बिलकुल भिन्न है और इस्लाम ने इस (सूद) को कदापि हराम ठहराया है इस लिए साहूकारी सूद हो या बैंक का सूद, किसी ग़रीब से लिया जाए या मालदार से तथा क़र्ज़ व्यापार के लिए दिया गया हो या जन हित की किसी योजना को अमल में लाने के लिए,सूद सूद ही रहेगा और उस के हराम होने में काई फ़र्क़ न आएगा । ध्यान रहे कि सूद की मनाही पहले से आसमानी किताबों में चली आ रही है। अत: तौरात में है:-

''यदि तू मेरी प्रजा में से किसी दीन (मोहताज) को जो तेरे पास रहता हो रुपये का ऋण दे, तो उस से महाजन की तरह सुलूक न करना और न उस से ब्याज़ लेना''। (निर्गमन २३:१९) '' तू अपने किसी भाई को ब्याज़ पर ऋण न देना चाहे रुपया हो चाहे भोजन वस्तु हो चाहे कोई ऐसी वस्तु हो जो ब्याज़ पर दी जाती है''। (व्यवस्थाविवरण २३:१९)

भजन संहिता अर्थात ज़बूर में है:

''जो अपना रुपया ब्याज़ पर नहीं देता और निर्दोष की हानि करने के लिए घूस नहीं लेता जो कोई ऐसी चाल चलता है वह कभी न डगमगाएगा (भजन संहित १५:५)

यहेज़केल में है:

" न ब्याज़ पर रुपया दिया हो, न रुपये की बढ़त ली हो–---- ऐसा मनुष्य धर्मी है-----ब्याज़ और बढ़ती न ली हो।" (यहेजकेल १८:८,९,१७)

अल्बत्ता बनी इस्राईल ने तौरात के असल हुक्म में परिवर्तन कर के सूद लेना जायज़ कर लिया था। व्यरस्थाविवरण में है:

"तू परदेशी को ब्याज़ पर ऋण तो दे परन्तु अपने किसी भाई से ऐसे न करना।"(व्यरस्थाविवरण २३:२०) उन की इसी हरकत पर क़ुर्आन ने दो शब्द सांकेतिक रुप से कहे हैं

قَالُوْا لَيْسَ عَلَيْنَا فِى الْاُمِّيّٖنَ سَبِيْل

" वे कहते हैं कि उम्मियों के मामले में हम पर कोई पकड़. नहीं "। (आले इमरान :७५)

क़ुर्आन की शिक्षा यह है कि लेन देन में, व्यापार में, बुरा मामला करना अर्थात कुव्यवहार किसी के साथ भी जायज़ नहीं चाहे वह मुस्लिम हो या ग़ैर मुस्लिम। और सूदखोरी सब से बड़ा कुव्यावहार है। इसी लिए काफ़िरों का माल भी सूद की राह से हड़प कर जाने का कोई औचित्य नहीं है। जो लोग वर्तमान अर्थ व्यवस्था एवं आर्थिक नीति से प्रभावित हैं वे क़ुर्आन के रिबा (सूद का स्पष्टीकरण इस तरह करते हैं कि इस से मुराद सिर्फ वह सूद है जो ग़रीबों और मोहताजों को अपनी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दिए जाने वाले क़र्जो पर लिया जाए। रही बात व्यापारिक क़र्ज़ पर सूद न लेने की तो न इस का चलन प्राचीन काल में था और न क़ुर्आन ने इस की मनाही की है लेकिन वास्तविकता यह है कि यह दोनों बातें ग़लत हैं। कारोबारी क़र्ज़ों का रिवाज प्राचीन काल से चला आ रहा है उदाहरणार्थ प्राचीन बाबिल में हमराबी के समय में यह प्रचलित था। (देखिए इन्साइल्को पीडिया आफ़ रेलिजन्स एण्ड एथिक्स Vol 12 Page 555)

रही क़ुर्आन से इस की मनाही तो क़ुर्आन ने बिना किसी रियाअत के सर्वसाधारण के लिए रिबा (ब्याज़) को हराम ठहराया है जिस में हर तरह का सूद शामिल है चाहे वह मोहताजों से लिया जाए या बड़े बड़े व्यापारियों से। चाहे उस की प्रतिशत दरें मामूली हो या भारी और चाहे वह (Interest) की परिभाषा में आता हो या (Usury) की।

457. उठने से अभिप्राय क़ियामत के दिन उठना है।

458. शैतान की छूत से मुराद शैतान के वे प्रभाव हैं जो सूद खोर के हृदय और मस्तिष्क पर पड़ते हैं और जिस के नतीजे में उस पर लक्ष्मी पूजा अथवा धन की गुलामी का भूत ऐसा सवार हो जाता है कि उस की हालत बावलों अथवा पागलों की सी हो कर रह जाती है। वह धन बटोरने की चिन्ता में दीवाना हो जाता है और इस बात का उसे एहसास नहीं होता की वह सूद के माध्यम से ग़रीबों का खून चूस रहा है और नैतिकता एवं सहानुभूति की भावनाओं को कुचल रहा है साथ ही साथ समाज की आर्थिक एवं वित्तीय दशा को तबाह एवं बरबाद कर देने वाले कुप्रभाव डाल रहा है। जो लोग हाय माल के जुनून में लिप्त हो जाते हैं वे क़ियामत के दिन जब उठेंगे तो जो खून वे चूसते रहे हैं वह उन के मस्तिष्क को पीड़ित किए होगा और यह देख कर कि सूद पर सूद का जो चक्कर वे दुनिया में चलाते रहे वह इस लोक में घाटे पर घाटे का कारण बन गया है उन का हाल दीवानों और पागालों का सा होगा।

459. सूद को बैअ (व्यवसाय) जैसा समझने वाले और उस के हराम होने पर एतिराज़ करने वाले वर्तमान दौर के अर्थ शास्त्री (Economists) ही नहीं बल्कि ऐसे "बुद्धिजीवी" क़ुर्आन के नुज़ूल (अवतरित) के ज़माने में भी मौजूद थे हालांकि सूद और बैअ (व्यापार) दोनों की दशा एक दूसरे से बिलकुल भिन्न है और इन के बीच बहुत बड़ा और ख़ुला फ़र्क़ है। यही कारण है कि सूद को समाज के लिए लानत क़रार देने वाले प्राचीन युग में भी मौजूद रहे हैं और अब भी मौजूद हैं। अत: अरस्तू ने सूद की कड़ी निन्दा करते हुए कहा था :

"Money does not Breed" (Ency.of social Sciences vol VIII P.131)

अर्थात " रुपया रुपये को जन्म नहीं देता"और वर्तमान युग के सोशलिस्ट सूद को ग़रीब और मज़दूर वर्ग के हक़ में अन्याय और अत्याचार बताते है:-

"By interest then the socialist claims the rich are made richer and the poor, poorer and the stability of the social organism is disturbed – the evil that Melamchthon had feared."

(Ency. of R.E. Vol. 12 – p. 554)

" सोशलिस्टों का दावा है कि सूद अमीर को और अमीर तथा ग़रीब को और ग़रीब बनाता है और इस का असर सामाजिक व्यवस्था की दृढ़ता एवं स्थिरता पर पड़ता है। यह वह ख़राबी है जिस की आशंका मेलेमच्थन ने अनुभव की थी।"

"Usury has come to mean exhorbitant interest but the legitimacy of interest is still debated. The early attacks on usury were motivated by the church's sympathy with the oppressed poor – the latest attack finds its strength in the plea that interest is an un-just tax on the labouring classes." (Do -P. 554).

यूज़री (usury) का मतलब हुआ भारी सूद लेकिन सूद की

वैधता अब भी बहस का विषय बना हुआ है। पहले इस पर एतिराज़ का कारण चर्च द्वारा मज़लूम ग़रीब के साथ हमदर्दी था और अब ताज़ा एतिराज़ इस बुनियाद पर किया जा रहा है कि सूद (Interest) मज़दूर वर्ग पर एक अन्याय पूर्ण टैक्स है।''

"Interest is the unpaid wage of the labourer." (do -p. 554)

''सूद मज़दूर की अभुक्त मज़दूरी है।''

460. सूद के हराम ठहराए जाने के कारण संक्षेप में निम्न हैं ।

(A) सूद वह लाभांश है जो क़र्ज़ देने वाला पूँजी पति पूँजी के इस्तेमाल पर क़र्ज़दार से वसूल करता है।

"Interest in its primary meaning is the payment for the use of money. (Ency. of S.S. Vol. VIII P. 131).

इस से बिल्कुल स्पष्ट है कि सूदी व्यवहार कोई बैअ या व्यापार (Trade) नहीं है क्यों कि उस में न कोई चीज़ खरीदी जाती है और न बेची जाती है। बल्कि पूँजी मात्र इस्तेमाल करने के लिए दी जाती है।यह किराया भी नहीं है क्यों कि जो चीज़ किराये (Rent) पर ली जाती है वह वास्तव में बाक़ी रहती है और इस्तेमाल करने के बाद ठीक वही चीज़ लौटा दी जाती है।किन्तु सूदी लेन देन में क़र्ज़दार पूँजी को खर्च कर चुका होता है और जब वापस करता है तो मालिक की दी हुई ठीक वही पूँजी वापस नहीं करता बल्कि दूसरी रक़म वापस करता है अत: इस को किराया कहना भी सही नहीं।इस से सूदी लेन देन की यह हक़ीक़त बेनक़ाब हो जाती है कि सूद सामान्य एवं साधारण अर्थों में न क्रय विक्रय का मामला है और न किराये का बल्कि इस से बिल्कुल भिन्न है और जब वह न लेन देन का मामला है और न किराये का तो मुनाफ़ा किस चीज़ का लिया जाता है?यहीं से इस का ग़लत होना स्पष्ट है।

(B) व्यापार में लाभ की भी संभावनाऐं होती है और हानि की भी इस लिए इस में आदमी को खतरा (Risk) मोल लेना पड़ता है। किन्तु सूद खोर को कोई खतरा (Risk) मोल लेना नहीं पड़ता क्योंकि मूलधन के साथ लाभांश की प्राप्ति उस के लिए निश्चित होती है।

(C) व्यापार में आदमी को अपनी मानसिक और शरीरिक शक्ति को ख़र्च करना पड़ता है । सूदी कारोबार में उसे कुछ किए बग़ैर निर्धारित और निश्चित रुप से लाभ प्राप्त होता है इस लिए इन्सान मेहनत से जी चुराने और सूद पर रुपया लगाने एवं चलाने की आसान राह अपनाने लगता है। यह सूरत नैतिक और आर्थिक दोनो दृष्टि से ग़लत और हानिकारक है।

इस के अलावा यह एक हक़ीक़त है कि सूद खोर के बारे में क़र्ज़दार का विचार अच्छा नहीं होता। वह सूद को अपने ऊपर ज़्यादती ही समझता है जो इस बात का द्योतक है कि मानव स्वभाव एवं प्रकृति सूद से घृणा करती है और इसे बुरा समझती है जब कि एक व्यापारी अथवा व्यवसायी के बारे में जो उचित लाभांश पर चीज़ों को बेचता है। किसी ग़रीब से ग़रीब आदमी का भी यह विचार नहीं बनता। कुल मिला कर सूद, ग़रीब का खून चूस लेने (Blood Sucking) और पूँजीपति वर्ग का निर्धन वर्ग से अवैध लाभ उठाने अर्थात शोषण करने (Exploitation) का नाम है। व्यापार की उन्नति के लिए जो सूदी क़र्ज़ दिए जाते हैं उस का बोझ भी निश्चित रुप से ग़रीबों पर ही पड़ता है इस लिए कि एक व्यापारी और एक कारखानेदार वस्तुओं का मूल्य निर्धारित करते समय जो सूद अदा करता है उस सूद का हिसाब लगा कर मूल्य निर्धारित करता है।

स्पष्ट है कि वस्तुओं का मूल्य सूद की दर के हिसाब से उसे अधिक निर्धारित करना पड़ता है। और इस से अधिक मूल्य का बोझ अधिकतर ग़रीब वर्ग पर ही पड़ता है।

461. सूद खोर के लिए आग की कभी न खत्म होने वाली सज़ा का एलान इस बात का परिचायक है कि सूद का हराम होना दूसरे गुनाहों के मुक़ाबले में कठोरतम है और इतनी स्पष्ट चेतावनी के बाद भी जो लोग ख़ुदा का हुक्म मानने के लिए तैयार न हों और सूद ख़ोरी पर अड़ जाऐं उन का यह रवैया उन के नाफ़रमान और सरकश होने का खुला प्रमाण होगा। क्यों कि यह रवैया किसी तरह ईमान के साथ मेल नहीं खाता।

276. अल्लाह सूद (ब्याज) को नेस्तो-नाबूद (नष्ट) करता है और सदक़ात (दान) को बढ़ावा देता है [462]। अल्लाह किसी नाशुकरी करने वाले और हक़ मारने वाले को पसन्द नहीं करता [463]।

يَمْحَقُ اللّٰهُ الرِّبٰوا وَيُرْبِي الصَّدَقٰتِ ۗ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ كُلَّ
كَفَّارٍ اَثِيْمٍ ﴿٢٧٦﴾

277. बेशक जो लोग ईमान लाए और जिन्होंने नेक काम किए और नमाज़ क़ायम की और ज़कात अदा की उन का अज्र (प्रतिफल) उन के रब के पास है। उन को न कीसी प्रकार का भय होगा और न ग़म।

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ
وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ لَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ ۚ وَلَا خَوْفٌ
عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُوْنَ ﴿٢٧٧﴾

278. ऐ ईमान वालो ! अल्लाह से डरो और जो सूद बाक़ी रह गया है उसे छोड़ दो, अगर वास्तव में तुम मोमिन हो।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَذَرُوْا مَا بَقِيَ مِنَ الرِّبٰوٓا
اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿٢٧٨﴾

279. अगर तुम ने ऐसा नहीं किया तो आगाह हो जाओ कि अल्लाह और उस के रसूल की तरफ़ से एलाने-जंग है।[464] और अगर तौबा कर लो तो तुम को अपना असल माल लेने का हक़ है। न तुम किसी पर ज़ुल्म करो न तुम पर ज़ुल्म किया जाए।

فَاِنْ لَّمْ تَفْعَلُوْا فَاْذَنُوْا بِحَرْبٍ
مِّنَ اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ۚ وَاِنْ تُبْتُمْ فَلَكُمْ رُءُوْسُ اَمْوَالِكُمْ ۚ
لَا تَظْلِمُوْنَ وَلَا تُظْلَمُوْنَ ﴿٢٧٩﴾

280. अगर क़र्ज़दार का हाथ तंग हो तो कुशादगी (हाथ खुलने) तक उसे मोहलत दो।[465] और माफ़ कर दो तो यह तुम्हारे लिए बेहतर है अगर तुम समझो।

وَاِنْ كَانَ ذُوْ عُسْرَةٍ فَنَظِرَةٌ اِلٰى مَيْسَرَةٍ ۚ وَاَنْ تَصَدَّقُوْا
خَيْرٌ لَّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ﴿٢٨٠﴾

281. उस दिन से डरो जब तुम अल्लाह की तरफ लौटाए जाओगे। फिर हर व्यक्ति को उस की कमाई का पूरा पूरा बदला मिल जाएगा और किसी के साथ अन्याय न होगा।

وَاتَّقُوْا يَوْمًا تُرْجَعُوْنَ فِيْهِ اِلَى اللّٰهِ ۗ ثُمَّ تُوَفّٰى كُلُّ نَفْسٍ
مَّا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُوْنَ ﴿٢٨١﴾ ع

462. यूँ तो ऊपर से सूद के द्वारा पूँजी बढ़ती और दान से घटती प्रतीत होती है। किन्तु वास्तव में सूद से पूँजी घटती और दान और ख़ैरात से बढ़ती है। यह घटना और बढ़ना दरअसल आखिरत के अन्जाम के लिहाज़ से है। अत: क़ियामत के दिन सूद खोर देख लेगा कि दुनिया में जिस पूँजी को वह सूद के द्वारा बढ़ाता रहा है और बैंक में लाखों रुपया जमा करता रहा है, आख़िरत के बैंक ने उस का बक़ाया (Balance) शुन्य निकलेगा और उस के हिस्से में सिवाय हसरत, अफ़सोस और पछतावे के कुछ नहीं आएगा ।

इस के विरुद्ध जो लोग ग़ैर सूदी (Without Interest) क़र्ज़ देते रहे वे अपने इस अच्छे काम का फ़ल ज़रुर पाऐंगे खास तौर पर जो लोग अपना माल अल्लाह की राह में खर्च करते रहे हैं वे आख़िरत के बैंक में अपनी पूँजी सुरक्षित पाऐंगे बल्कि उस से कई गुना अधिक उन्हें मिलेगा । यह तो हुई बात आख़िरत के अन्जाम के लिहाज से। रहा दुनिया में नतिजा तो सूद दुनिया में भी खैर और बरकत को मिटाता है और सोसाइटी के आर्थिक ढाँचे पर भी कुप्रभाव डालता है। इस के विरुद्ध दान और ख़ैरात से भलाई भी परवान चढ़ती है और सोसाइटी की आर्थिक व्यवस्था पर भी सुप्रभाव पड़ते हैं।

463. सूद खोर नाशुक्रा है क्यों कि अल्लाह की दी हुई दौलत को उस की मर्ज़ी के ख़िलाफ इस्तेमाल करता है और हक़ मारने वाला है क्योंकि बन्दों के अधिकारों के मामले में ज़ुल्म और ज़्यादती करता है।

464. इन आयतों के द्वारा जो मदीने के आख़िरी दौर की आयतों में से हैं सूद पर क़ानूनी बन्दिश लागू कर दी गई और सूद खोरों को अल्टीमेटम देते हुए आगाह किया गया कि इस्लामी व्यवस्था में सूदी कारोबार करने वालों की हैसियत बाग़ियों और फ़सादियों की है और हुकूमत सूद खोरी से बाज़ न आने वालों को क़त्ल की सज़ा तक दे सकती है। इस्लामी जीवन व्यवस्था की यह विशेषता कि इस में सूदी कारोबार के लिए कोई गुन्जाइश नहीं है, उसे पूँजीवादी व्यवस्था से बिल्कुल अलग करती है।

सूद के हराम होने और क़ानूनी तौर से निषेध ठहराने के सम्बन्ध में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपने अन्तिम हज्ज के अवसर पर बहुत ही सख्त अल्फाज़ में वाज़ेह फ़रमाया:

وَرِبَا الْجَاهِلِيَّةِ مَوْضوع وَاَوَّلُ رِباً اَضَعُ ربَانَا رِبَا

عباسِ بن عبدِالمطلب فاِنَّهٗ مَوضُوعٌ كُلُّهٗ

''जाहिलीय्यत का सूद निरस्त है। सब से पहला सूद जो मैं निरस्त करता हूँ वह हमारे खानदान के व्यक्ति अब्बास बिन अब्दुलमुत्तलिब का सूद है, कि वह पूरी तरह समाप्त कर दिया गया।''(मुस्लिम, किताबुलहज्ज)

465. प्राचीन काल में अगर क़र्ज़दार क़र्ज़ अदा करने के क़ाबिल न होता तो उसे अपनी आज़ादी तक से वंचित हो जाना पड़ता था। अत: अदायगी न कर सकने के कारण उस को या उस के बाल बच्चों को ग़ुलाम या लौंडी बना लिया जाता था लेकिन क़ुर्आन ने ऐसी कठोर सज़ाओं का यह कह कर ख़ात्मा कर दिया कि:-

'' अगर क़र्ज़दार का हाथ तंग हो तो कुशादगी (हाथ खुलने) तक मोहलत दो।'' इस आज्ञा के अनुसार जो लोग क़र्ज़ की अदायगी से मजबूर हों उन्हें मोहलत देना ज़रुरी है। न उन को ग़ुलाम बनाया जा सकता है और न उन के जीवन की आवश्यक वस्तुओं जैसे रहने का मकान, खाने के बरतन, और पहनने के कपड़े इत्यादि को ज़ब्त किया जा सकता है।

282. ऐ ईमान वालों ! जब तुम किसी निश्चित मुद्दत के लिए क़र्ज़ का लेन देन करो [466]तो उसे लिख लिया करो [467]। और कोई लिखने वाला तुम्हारे बीच इन्साफ के साथ लिखे।लिखने वाले को जैसा कि अल्लाह ने उस को सिखाया है (दस्तावेज़) लिखने से इन्कार नहीं करना चाहिए बल्कि लिख देना चाहिए [468]। और यह दस्तावेज़ वह व्यक्ति लिखवाए जिस के ज़िम्मे हक़ है [469]।और वह अल्लाह से डरे जो उस का रब है और उस में कोई कमी न करे लेकिन अगर वह व्यक्ति जिस पर हक़ आता है नादान या ज़ईफ़ (कमज़ोर) हो या दस्तावेज़ लिखवा न सकता हो तो उस का वली (सरपरस्त) इन्साफ के साथ लिखवाए। और उस पर अपने मर्दों में से दो को गवाह ठहरा लो। [470]अगर दो मर्द न हों तो एक मर्द और दो औरतें हों ।यह गवाह ऐसे लोगों में से हों जिन्हें तुम (गवाही के लिए)पसन्द करते हो [471]। दो औरतें इस लिए कि अगर एक ग़लती करे तो दूसरी उसे याद दिलाए [472]। और जब गवाहों को बुलाया जाए तो उन्हें इन्कार नहीं करना चाहिए। क़र्ज़ का मामला छोटा हो या बड़ा मुद्दत की निश्चितता के साथ उस को लिखने में आलस्य न बरतो। यह तरीक़ा अल्लाह के नज़दीक बेहद न्याय के निकट है,गवाही को अधिक दुरुस्त रखने का कारण और इस लिहाज़ से अत्यन्त उचित है कि तुम संदेह में न पड़ो। हाँ अगर मामला हाथ के हाथ लेन देन का हो तो उस के न लिखने में कोई हर्ज नहीं।और क्रय-विक्रय का मामला करो तो गवाह कर लिया करो। लिखने वाले और गवाह को सताया न जाए। ऐसा करोगे तो यह बड़ा अन्याय होगा। और अल्लाह से डरो [473]। अल्लाह तुम्हें शिक्षा देता है और अल्लाह को हर चीज़ का ज्ञान है।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا تَدَايَنْتُمْ بِدَيْنٍ اِلٰٓى اَجَلٍ مُّسَمًّى
فَاكْتُبُوْهُ ۭ وَلْيَكْتُبْ بَّيْنَكُمْ كَاتِبٌۢ بِالْعَدْلِ ۠ وَلَا يَاْبَ كَاتِبٌ اَنْ
يَّكْتُبَ كَمَا عَلَّمَهُ اللّٰهُ فَلْيَكْتُبْ ۚ وَلْيُمْلِلِ الَّذِيْ عَلَيْهِ الْحَقُّ
وَلْيَتَّقِ اللّٰهَ رَبَّهٗ وَلَا يَبْخَسْ مِنْهُ شَـيْـــًٔـا ۭ فَاِنْ كَانَ الَّذِيْ عَلَيْهِ
الْحَقُّ سَفِيْهًا اَوْ ضَعِيْفًا اَوْ لَا يَسْتَطِيْعُ اَنْ يُّمِلَّ ھُوَ فَلْيُمْلِلْ
وَلِيُّهٗ بِالْعَدْلِ ۭ وَاسْتَشْهِدُوْا شَهِيْدَيْنِ مِنْ رِّجَالِكُمْ ۚ فَاِنْ
لَّمْ يَكُوْنَا رَجُلَيْنِ فَرَجُلٌ وَّامْرَاَتٰنِ مِمَّنْ تَرْضَوْنَ مِنَ
الشُّهَدَاۗءِ اَنْ تَضِلَّ اِحْدٰىهُمَا فَتُذَكِّرَ اِحْدٰىهُمَا الْاُخْرٰى ۭ
وَلَا يَاْبَ الشُّهَدَاۗءُ اِذَا مَا دُعُوْا ۭ وَلَا تَسْــَٔـــمُوْٓا اَنْ تَكْتُبُوْهُ
صَغِيْرًا اَوْ كَبِيْرًا اِلٰٓى اَجَلِهٖ ۭ ذٰلِكُمْ اَقْسَطُ عِنْدَ اللّٰهِ وَاَقْوَمُ
لِلشَّهَادَةِ وَاَدْنٰٓى اَلَّا تَرْتَابُوْٓا اِلَّآ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً حَاضِرَةً
تُدِيْرُوْنَهَا بَيْنَكُمْ فَلَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَلَّا
تَكْتُبُوْھَا ۭ وَاَشْهِدُوْٓا اِذَا تَبَايَعْتُمْ ۠ وَلَا يُضَاۗرَّ كَاتِبٌ
وَّلَا شَهِيْدٌ ڛ وَاِنْ تَفْعَلُوْا فَاِنَّهٗ فُسُوْقٌۢ بِكُمْ ۭ
وَاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ وَيُعَلِّمُكُمُ اللّٰهُ ۭ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ۝٢٨٢

283. और अगर तुम सफ़र नें हो और लिखने वाला न मिल सके तो रहन [474] क़ब्ज़े में दे कर मामला कर सकते हो। फिर अगर तुम में से कोई व्यक्ति दूसरे पर विश्वास करता है तो जिस के पास अमानत रखी गई है उसे चाहिए कि उस की अमानत अदा करे।और अल्लाह से, जो उस का रब है, डरे। और गवाही को न छिपाओ। जो व्यक्ति गवाही को छिपाता है वह वास्तव में अपने दिल को गुनाह में लथेड़ता है और तुम जो कुछ करते हो अल्लाह उसे खूब अच्छी तरह जानता है।

وَاِنْ كُنْتُمْ عَلٰي سَفَرٍ وَّلَمْ تَجِدُوْا كَاتِبًا فَرِھٰنٌ مَّقْبُوْضَةٌ ۭ فَاِنْ
اَمِنَ بَعْضُكُمْ بَعْضًا فَلْيُؤَدِّ الَّذِي اؤْتُمِنَ اَمَانَتَهٗ وَلْيَتَّقِ اللّٰهَ
رَبَّهٗ ۭ وَلَا تَكْتُمُوا الشَّهَادَةَ ۭ وَمَنْ يَّكْتُمْهَا فَاِنَّهٗٓ اٰثِمٌ قَلْبُهٗ ۭ
وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ عَلِيْمٌ ۝٢٨٣

466. इस आयत में मामले (व्यवहार) को साफ़ और स्वच्छ रखने से संबन्धित हिदायतें दी गई हैं क्यों कि व्यवहार का मानव चरित्र पर गहरा प्रभाव पड़ता है। यदि चरित्र की पवित्रता और सफाई चाहते हो तो कारोबारी व्यवहार तथा लेन देन में ज़िम्मेदारी और सावधानी का रवैया अपनाना होगा। इस सिलसिले में जो हिदायतें दी गई हैं उन पर अगर ठीक तरह, अमल किया जाए तो कारोबारी कलह और झगड़े खड़े न हों।

467. अर्थात क़र्ज़ की दस्तावेज़ लिख ली जाए और इस मामले में आलस्य न बरता जाये। यह हिदायत उधार लेन देन के बारे में भी है।

468. लिखने की योग्यता अल्लाह तआला की बख़्शिश है और इस बख़्शिश का तक़ाज़ा है कि आदमी ज़रुरत पड़ने पर ख़ुदा के बन्दों के काम आए। इस हिदायत की ज़रुरत और अहमियत को समझने के लिए उस समय के माहौल को सामने रखना चाहिए जिस में पढ़े लिखे लोगों की बड़ी कमी थी यहाँ तक कि जिस क़ौम में क़ुर्आन नाज़िल हुआ वह उम्मी (अनपढ़) के नाम से जानी जाती थी। आयत के मज़मून से इस बात पर भी रौशनी पड़ती है कि क़ुर्आन ने लिखने पढ़ने की तालीम को अत्यन्त महत्वपूर्ण और आवश्यक ठहराया और इसे अल्लाह की नेअमत की संज्ञा दी।

469. अर्थात् क़र्ज़ लेने वाला ।

470. अर्थात् क़र्ज़ की दस्तावेज़ पर दो मुसलमान मर्दों की गवाही का ठप्पा लगना चाहिए। ध्यान रहे कि यह हिदायत मुसलमानों को दी जा रही है।

471. अर्थात् ऐसे मर्दों और औरतों को गवाह बनाया जाए जो अपने कर्मों और आचरण के लिहाज़ से सर्वप्रिय और विश्वास पात्र हों ।

472. एक मर्द के मुक़ाबले में दो औरतों की गवाही ज़रुरी क़रार देने में औरतों के अपमान का कोई पहलू नहीं है बल्कि इस का कारण क़ुर्आन के ब्यान के अनुसार यह है कि गवाही के मामले में औरतों से ग़लती हो जाने की संभावना है और सच्चाई यह है कि औरतें व्यापारिक और कारोबारी दुनिया से कम और घरेलू मामलों से अधिक सम्बन्ध रखती हैं। इस लिए मामलों में कठिन परिश्रम करने की क्षमता उन में कम होती है और इस कारण उन के दुविधा (Confusion) में पड़ने की अधिक संभावना होती है। इस के अलावा औरतों में भावनाओं का बहाव उन की मामले को समझने की शक्ति को प्रभावित करता रहता है। आधुनिक मनोविज्ञान से भी इस की ताईद और उस का अनुमोदन होता हो। इस सिलसिले में मौलाना अब्दुलमाजिद दरियाबादी ने अपनी अंग्रेज़ी तफ़सीर में मनोविज्ञान के विद्वानों की किताबों के जो उदाहरण (Quotation) पेश किए हैं उन में से कुछ एक निम्न लिखित हैं।

"In women deception is almost psychological." (Havelock Ellis: Man and Woman P. 196)

''औरतों का दुविधा (धोखे) में पड़ना क़रीब क़रीब मनोवैज्ञानिक है।''

"We are again forced to admit that a woman is not in a position to judge objectively being influenced by her emotion." (Baver, opcit, i.p. 289).

औरतों की इस मानसिकता को ध्यान में रखते हुए इस्लाम ने अपने शहादत (गवाही) के क़ानून में यह सावधानी से परिपूर्ण तरीक़ा स्वीकार किया है कि अगर मर्दों में से दो गवाह न मिलें तो एक मर्द और दो औरतों को गवाह बना लिया जाए ताकि अगर एक औरत मामले को ठीक से न समझ सकी हो या घटित मामले को ठीक तौर से बयान न कर पा रही हो तो दूसरी औरत उसे दुरुस्त कर दे।

473. अल्लाह का डर कारोबारी और अदालती दोनों मामलों में होना चाहिए।

474. रहन उस चीज़ को कहते हैं जो कर्ज़ की ज़मानत के तौर पर क़र्ज़ देने वाले के क़ब्ज़े में दी जाती है। या गिरवी रखी हुई चीज़ क़र्ज़ देने वाले के पास अमानत के तौर पर होती है जिस से किसी प्रकार का फ़ायदा उठाना उस के लिए जायज़ नहीं। जैसे अगर मकान गिरवी रखा गया हो तो उस का किराया खाने का हक़ उस को नहीं पहुँचता । रहन का मामला सफ़र के साथ ही हो यह शर्त नहीं है। सफ़र का ज़िक्र इस लिए किया गया है कि सामान्यत: सफ़र की हालत में इस की ज़रुरत पेश आती है साथ ही साथ यह बात नैतिक रुप से अप्रिय है कि किसी उचित कारण के बिना किसी की ज़रुरत की चीज़ें रोक कर उसे क़र्ज़ दिया जाए। लेकिन अगर कोई व्यक्ति रहन क़ब्ज़े में ले कर ही क़र्ज़ देता है तो ऐसा करना सफ़र और स्थिर दोनों हालतों में जायज़ है बशर्ते कि न उस पर सूद ले और न उस से किसी प्रकार का फ़ायदा उठाए क्योंकि क़र्ज़ दे कर जो फ़ायदा भी हासिल किया जाएगा वह सूद ही होगा।

284. जो कुछ असमानों में है [475] और जो कुछ ज़मीन में है सब अल्लाह ही का है [476]।तुम अपने दिल की बातें ज़ाहिर करो या छिपाओ, अल्लाह उन का हिसाब तुम से लेगा [477]।फिर जिस को चाहेगा माफ़ करेगा और जिस को चाहेगा सज़ा देगा अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है [478]।

لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَاِنْ تُبْدُوْا مَا فِيْٓ
اَنْفُسِكُمْ اَوْ تُخْفُوْهُ يُحَاسِبْكُمْ بِهِ اللّٰهُ ۭ فَيَغْفِرُ لِمَنْ
يَّشَاۗءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ وَاللّٰهُ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ٢٨٤

285. रसूल ईमान लाया उस चीज़ पर जो उस के रब की तरफ से उस पर नाज़िल हुई है और ईमान वाले भी [479]। ये सब ईमान लाए अल्लाह पर, उस के फ़रिश्तों पर, उस की किताबों पर, उस के रसूलों पर, हम उस के रसूलों में से किसी के बीच फ़र्क़ नहीं करते [480] और कहते हैं कि हम ने सुना [481] और पालन किया। ऐ हमारे रब हम तुझ से क्षमा के इच्छुक हैं और तेरी ही तरफ़ लौट कर जाना है।

اٰمَنَ الرَّسُوْلُ بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِ مِنْ رَّبِّهٖ
وَالْمُؤْمِنُوْنَ ۭ كُلٌّ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَمَلٰۗىِٕكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ ۣ
لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْ رُّسُلِهٖ ۣ وَقَالُوْا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا
غُفْرَانَكَ رَبَّنَا وَاِلَيْكَ الْمَصِيْرُ ٢٨٥

286. अल्लाह किसी प्राणी पर उस की ताक़त से ज़्यादा ज़िम्मेदारी का बोझ नहीं डालता [482]। उस ने जो नेकी कमाई वह उसी के लिए है और जो बदी समेटी उसका वबाल भी उसी पर है [483]।ऐ हमारे रब ![484] अगर हम से भूल या ग़लती हो जाए तो उस पर पकड़ न फरमा [485]। ऐ हमारे रब ! हम पर ऐसा बोझ न डाल जैसा तूने हम से पहले लोगों पर डाला था [486]। ऐ हमारे रब ! [487] हम पर कोई ऐसा भार न डाल जिस को उठाने की हम में ताक़त नहीं [488] हम से दरगुज़र फ़रमा,[489] हमें बख़्श दे [490] और हम पर रहम फ़रमा, तू हमारा मौला है [491], अतः तू हमें काफ़िरों पर ग़लबा (विजय) अता फ़रमा [492]।

لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا ۭ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَعَلَيْهَا مَا
اكْتَسَبَتْ ۭ رَبَّنَا لَا تُؤَاخِذْنَآ اِنْ نَّسِيْنَآ اَوْ اَخْطَاْنَا ۚ رَبَّنَا
وَلَا تَحْمِلْ عَلَيْنَآ اِصْرًا كَمَا حَمَلْتَهٗ عَلَي الَّذِيْنَ مِنْ
قَبْلِنَا ۚ رَبَّنَا وَلَا تُحَمِّلْنَا مَا لَا طَاقَةَ لَنَا بِهٖ ۚ وَاعْفُ عَنَّا ۪
وَاغْفِرْ لَنَا ۪ وَارْحَمْنَا ۪ اَنْتَ مَوْلٰىنَا فَانْصُرْنَا عَلَي الْقَوْمِ
الْكٰفِرِيْنَ ٢٨٦

475. ये आख़िरी तीन आयतें ख़ात्मा-ए-कलाम (उपसंहार) की हैसियत रखती हैं।

476.“जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है” इस फैले हुए विशालतम ब्रहमाण्ड (Universe) के उल्लेख के लिए क़ुर्आन की अपनी शैली है और अल्लाह के लिए सब कुछ होने का मतलब यह है कि एक दुनिया हो या हज़ार दुनिया, जहाँ कहीं जो कुछ भी है अल्लाह ही की संपत्ती है । सब चीज़ें उसी के वश में हैं। सब पर उसी की सचत्ता है, सब पर उसी का हुक्म चलता है और सब को उसी की तरफ़ पलट कर जाना भी है। यह है इस ब्रहमाण्ड की असल हक़ीक़त। और यह है खालिस तौहीद (शुद्ध एकेश्वरवाद) जो इस्लाम के अक़ीदा और ईमान की बुनियाद है और इसी को सही तरीक़े से समझ लेना या यह कह लिजिए कि इस की सही सीख ही इन्सान को अल्लाह की शरीअत की दायित्वपूर्ण ज़िम्मेदारी उठाने के योग्य बनाती है।

477. अर्थात दिल के इरादों और नीयतों का भी हिसाब किताब होगा।

478. इस का मतलब यह नहीं कि अल्लाह तआला के यहाँ ईनाम और सज़ा का मामला न्याय और तत्वदर्शिता के साथ अन्जाम नहीं पाएगा बल्कि मतलब यह है कि ईनाम और सज़ा के मामले में कोई ताक़त ऐसी नहीं है जो अल्लाह की मशिय्यत (निश्चय) में दखलंदाज़ी कर सके। वह मुख़्तारे-कुल (सर्वाधिकारी) है और उसे सज़ा देने और माफ़ करने का पूरा पूरा इख्तियार (सामार्थ्य और अधिकार) है।

479. सूरह की शुरुआत इस बात से हुई थी कि अल्लाह की हिदायत को क़ुबूल करने और उस पर ईमान लाने वाले कौन लोग होंगे यहाँ उपसंहार के तौर पर स्पष्ट किया जा रहा है कि रसूल को ऐसे साथी मिल गए हैं जो ईमान की दौलत से संतुष्ट हैं। वे चूँकि किसी प्रकार की बुराई एवं पक्षपात में लिप्त नहीं थे इस लिए उन्हों ने ईमान की नेमत पाई, इस तरह रसूल की रहनुमाई में वह उम्मत बरपा हो गई जिसे खुदा का सही ज्ञान और उस का अध्यात्म (मारिफ़त) प्राप्त है और जिसे अल्लाह की शरीअत का भारवाहक और इस्लामी व्यवस्था का परचम उठाने वाला बनाया गया है।

480. यह ईमान वालों का कथन है। गोया पूरी उम्मत एक ज़बान हो कर एलान कर रही है कि हम दूसरी उम्मतों की तरह अल्लाह की हिदायत के मामले में क़ौमी, गिरोह, जातीय या नस्ली पक्षपात एवं घृणा में लिप्त नहीं हैं कि किसी पैग़म्बर को मानें और किसी को न मानें। बल्कि हम बिना किसी पक्षपात एवं फ़र्क के तमाम आदरणीय नबियों को मानते हैं चाहे वे किसी क़ौम, किसी मुल्क और किसी नस्ल से संबन्धित हों।

481. यहाँ सुनना मानने और क़ुबूल करने के अर्थ में है।

482. यह अल्लाह तआला की ओर से उस उसूली विधान की अभिव्यक्ति है कि शरीअत की ज़िम्मेदारी यद्यपि एक भारी ज़िम्मेदारी है किन्तु हर व्यक्ति अपने सामर्थ्य के लिहाज़ से ज़िम्मेदार है। जो व्यक्ति किसी वास्तविक मजबूरी के कारण किसी आज्ञा का अनुपालन पूरी तरह न कर सकता हो तो जिस हद तक उस के लिए अमल करना संभव हो उसी हद तक वह उस का जवाबदेह करार पाएगा इस उसूल का शरीअत के आदेशों में लिहाज़ किया गया है और मजबूरियों की सूरत में छूट अथवा रिआयतें भी दी गई हैं। जैसे जो व्यक्ति खड़े हो कर नमाज़ नहीं पढ़ सकता उसे बैठ कर नमाज़ पढ़ने की रिआयत है। वुज़ू के लिए पानी न मिल सके या उसे इस्तेमाल करना हानिकारक हो तो तयम्मुम करने की छूट इत्यादि। इसी तरह इस्लाम सामूहिक अथवा समाजिक आदेशों पर जिस हद तक अमल किया जा सकता हो या उन को अमल में लाने के लिए जिस हद तक संघर्ष हो उसी हद तक बन्दा उस का ज़िम्मेदार क़रार पाएगा और जो काम उस के बस में न हो उस के बारे में उस, से पूछ ताछ न होगी।

483. अर्थात् हर व्यक्ति अपने किये का ज़िम्मेदार है और क़ियामत के दिन इस का स्वाभाविक एवं अनिवार्य परिणाम उस के सामने आना है। उस रोज़ हर कोई वही काटेगा जो उस ने इस दुनिया में बोया होगा । हर अमल चाहे नेक हो या बद अपना एक स्वभाविक एवं अनिवार्य परिणाम एवं प्रभाव रखता है। और अल्लाह के प्रतिदान का क़ानून बिलकुल बेलाग और अत्यन्त न्यायोचित सिद्ध हुआ है इस लिए यह संभव नहीं कि एक व्यक्ति बदी समेटे और वह दूसरे के सर थोप दी जाए और न यह संभव है कि X ग़लती करे और Y के खाते में उसे जमा कर लिया जाए । कर्मों का प्रतिफल कोई स्थानांतरित (Transferable) वस्तु नहीं है। जिस काम में इन्सान की नीयत और उस की कोशिश को दख़ल न हो उस का इनाम या सज़ा उसे क्यों मिलने लगे? इनाम और सज़ा के बारे में क़ुर्आन का बयान किया हुआ यह उसूल एक सिद्धान्तिक विधान की हैसियत रखता है जिस से ईसाईयों के प्रायश्चित की धारणा का खण्डन होता है, साथ ही सवाब (पुण्य) के बारे में मुसलमानों में प्रचलित ग़लत रस्मों का भी।

484. सूरह का ख़ात्मा दुआ पर हो रहा है। यह सामूहिक दुआ है जो मुस्लिम उम्मत की ज़बान से अदा हो रही है। जिस का एक एक लफ़्ज़ दीन की भारी एवं दायित्वपूर्ण ज़िम्मेदारियों के एहसास को बयान कर रहा है।

485. ईमान वालों की यह दुआ अल्लाह तआला ने क़ुबूल फ़रमा ली है। अत: हदीस में आता है:-

رفع عن امتی الخطاء والنسیان و ما استکرھو
علیه(ابن ماجہ۔کتاب الطلاق)

''मेरी उम्मत की ग़लती, भूल एवं जिस काम के लिए उस के लोगों को मज़बूर किया जाए वह माफ़ है'' (इब्ने माजा, किताबुत्तलाक़) (इस से मुराद वह क़ुसूर और भूल है जिसमें बेपरवाही का दखल न हो)।

इस के बावजूद माफ़ी की दुआ करते रहना इस लिए ज़रुरी है कि उस से अपने क़ुसूरवार होने का एहसास और अल्लाह के समक्ष उस का भय रखते हुए विनम्रता की अभिव्यक्ति है और यही बात एक शुक्रगुज़ार (कृतज्ञ) बन्दे को शोभा देती है और यही बात उस के लिए उचित भी है।

486. इशारा है उस बोझ की तरफ जो यहूदियों पर डाला गया था। उन की सरकशी के कारण उन्हे ''सब्त'' मनाने जैसे कठिन आदेश दिए गए थे। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथियों की यह दुआ थी कि हमारी शरीअत को बोझल न बना और हम पर ऐसी ज़िम्मेदारियाँ न डाल जिन को उठाना हमारे लिए दुश्वार हो। ईमान वालों की यह दुआ भी मक़बूल (स्वीकृत) हुई। अत:हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहुअलैहि वसल्लम की उम्मत को जो शरीअत दी गई वह बोझल एहकाम से पाक है और इस की खास विशेषता ही यह है कि वह अत्यन्त सरल और रियायतों वाली शरीअत है। हदीस में आता है कि आप सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

بعثت بالحنیفیة السمحة(احمد ج۵ص۲۶۶)

''मुझे ऐसे दीन के साथ भेजा गया है जो सीधा और सरल है'' (अहमद जिल्द ५ पृष्ठ २६६)

दुआ के क़ुबूल होने के बावजूद उस का ईमान वालों की ज़बान पर जारी रहना उस समय की याद ताज़ा करता है जब कि शरीअत का अवतरण हो रहा था और इस उम्मत को इस का भारवाहक बनाया जा रहा था एवं इन कलिमात (दुआ) के द्वारा उम्मत अल्लाह तआला के सम्मुख अपनी कमज़ोरी, तुच्छता और विनम्रता को प्रकट कर रही है ताकि और भी कृपा की पात्र बन जाए।

487. दुआ में ''ऐ हमारे रब!'' की पुनरावृत्ति (Repetition) दुआ करने वाले की अपने रब के साथ बेहद मुहब्बत और गहरे सम्बन्ध की अभिव्यक्ति है। दुआ की इस शैली में दुआ माँगने के आदाब की शिक्षा भी निहित है।

488. अर्थात शरअी ज़िम्मेदारीयों को पूरा करने में हमें ऐसी आज़माइशों से गुज़रना न पड़े जिन में हम पूरे उतर न सकें। और ऐसी कठिनाईयों से दो चार न होना पड़े जो हमारी सहन शक्ति से बाहर हों।

489. अर्थात् दीनी ज़िम्मेदारियों को अदा करने और शरीअत के आदेशों के पालन में जो कठिनाईयाँ हम से हो जाए उन को क्षमा कर दे।

490. या 'हमारी मग़फ़िरत फ़रमा'' मग़फ़िरत का अर्थ ''ढाँक देने'' के हैं मुराद गुनाहों को ढाँकना है।

491. मौला अर्थात सहायक और मददगार। गोया उम्मत अपने इस एहसास को प्रकट कर रही है कि हिदायत की राह पर जमे रहना और मुखालफ़तों के तूफ़ान से सलामती के साथ गुज़रना तेरी सहायता और मदद के बग़ैर संभव नहीं।

492.यह इस्लाम के दुश्मनों के मुक़ाबले में सहायता और प्रभुत्व अथवा विजय की दुआ है। शरीअत के आदेशों को सविस्तार बयान करने और उन पर जमे रहने कि हिदायत के बाद उम्मत की ज़बान से इस्लाम के दुश्मनों के मुक़ाबले में सहायता और विजय की यह दुआ इस बात का तक़ाज़ा करती है कि इस उम्मत को शरीअत को लागू करने और उस के अनुसार जीवन व्यतीत करने की आज़ादी होनी चाहिए। और समाजिक जीवन में शरीअत की व्यवस्था को लागू करने के लिए उसे शक्ति भी उपलब्ध होनी चाहिए साथ ही साथ इस राह में इस्लाम के विरोधियों की ओर से जो रुकावटें खड़ी कर दी गई हों उन को उखाड़ फेकने और शरीअत के संविधान को जारी करने तथा लागू करने के मार्ग को प्रशस्त करने तथा हमवार करने के लिए प्रभुत्व एवं सत्ता अनिवार्य है।

३. आले -इमरान

नाम : इस सूरह की आयत ३३ में आले-इमरान अर्थात् इमरान की संतान का ज़िक्र हुआ है। इमरान हज़रत मरयम के पिता का नाम था और ईसा अलैहिस्सलाम उन के नवासे (नाती) थे। इसी मुनासिबत से चिन्ह के तौर पर इस सूरह का नाम ''आले-इमरान' रखा गया है।

नाज़िल होने का समय: यह सूरह मदनी है अर्थात् हिजरत के बाद नाज़िल हुई है और इस के विषयों से अन्दाज़ा होता है कि उहद की जंग सन् ३ हिजरी के बाद नाज़िल हुई होगी।

केन्द्रीय विषय: इस सूरह का केन्द्रीय विषय भी हिदायत ही है और इस बिना पर यह सूरह पिछली सूरह के साथ गहरा सम्बन्ध रखती है बल्कि यह उस का परिशिष्ट अथवा पूरक है। हिदायत की ज्योति होने के लिहाज़ से सूरह बक़र: की हैसियत यदि सूर्य की है तो इस की हैसियत चन्द्रमा की। अत:हदीस शरीफ़ में इस को ज़हरावैन (दो उज्जवलतम सूरतों) से ताबीर किया गया है। सूरह बकर: में अगर यहूदियों को संबोधित किया गया था तो सूरह आले-इमरान में ईसाईयों को संबोधित किया गया है। पिछली सूरह में ''अलमग़ज़ूबि अलैहिम्----(कोपग्रस्तों के समूह से अलग रखने) की व्याख्या की गई थी तो इस सूरह में ज़ाल्लीन-----(गुमराह लोगों के समूह से अलग रखने) की व्याख्या की गई है। इस तरह से पहले की सूरह में हिदायत के जो भेद संक्षिप्त रूप से बयान किये गए थे, इस सूरह में उसे खोल कर सविस्तार बयान कर दिया गया है और साफ़ साफ़ यह एलान कर दिय गया है कि दीन जो वास्तव में अल्लाह की हिदायत का नाम है, सिर्फ इस्लाम है। लिहाज़ा जो व्यक्ति भी इस्लाम के सिवा कोई दूसरा दीन अपनाएगा वह अल्लाह के यहाँ कतई स्वीकार नहीं किया जाएगा और ऐसे लोग आखिरत में बिल्कुल तबाह होंगे। इस तरह यह हक़ीक़त दिन के उजाले की तरह स्पष्ट हो गई कि अल्लाह की हिदायत का मार्ग सिर्फ इस्लाम है न कि विभिन्न धर्म। और आख़िरत (परलोक) की सफ़लता एवं मुक्ति इस्लाम को स्वीकार किए बग़ैर संभव नहीं।

कलाम की तरतीब : १ से ९ तक की आयतें भूमिका की हैसियत रखती हैं जिन में तौहीद (एकेश्वरवाद) को मौलिक वास्तविकता के तौर पर पेश करते हुए स्पष्ट किया गया है कि क़ुर्आन अल्लाह का फ़रमान (आदेशपात्र) है और इसी लिए तमाम धार्मिक मतभेदों एवं विवादों के मामले में निर्णायक का दर्जा रखता है।

आयत १० से ३२ में अहले-किताब (यहूदी और ईसाई) और ग़ैर अहले-किताब सब को सावधान कर दिया गया है कि अगर उन्हों ने इस क़ुर्आनी हिदायत को जिस का नाम इस्लाम है क़ुबूल नहीं किया तो यह अल्लाह से कुफ्र होगा जिस की सज़ा हमेशा हमेश की जहन्नम है और जिस ''दीनदारी'' और धार्मिकता'' का रूप उन्होंने धार रखा है उस की वास्तविकता क़ियामत के दिन उजागर होगी जब कि वे बिलकुल बेनक़ाब हो कर अपने असली रूप में सब के सामने होंगे।

आयत ३३ से ६३ में हज़रत मरयम और हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम से सम्बन्धित घटनाऐं और वे सच्चाइयाँ पेश की गई हैं जो उन ग़लत एवं व्यर्थ की धारणाओं एवं आस्थाओं का खण्डन करती हैं जिन को ईसाईयों ने दीन में दाख़िल कर लिया था। इसी के अन्तर्गत हज़रत ज़करिया और हज़रत यह्या अलैहिमुस्सलाम का भी ज़िक्र हुआ है।

आयत ६४ से १०१ में अहले किताब को और विशेष रुप से ईसाईयों की गुमराहियों और नैतिकता, आचरण एवं धार्मिकता के गिरते स्तर पर पकड़ करते हुए ईमान वालों को उन से बचने की हिदायत की गई है। आयत १०२ से १२०में ईमान वालों को सम्बोधित कर के इस्लाम पर दृढ़तापूर्वक जम जाने, अल्लाह की किताब को थाम लेने, उस को अपने समाज की बुनियाद बनाने और अपने अन्दर से एक ऐसे समूह को उभारने की दअवत दी गई है जो इस्लाम का आहवान करने अथवा इस्लाम की ओर बुलाने तथा समाज में फैली बुराइयों एवं कुरीतियों को दूर करने अथवा सुधार का काम करने के लिए निश्चित हो ताकि वह मिल्लते-इस्लामिया को हर तरह की अवज्ञाओं तथा नित नये फ़ितनों से बचा सके और अल्लाह का पैग़ाम ख़ुदा के बन्दों तक पहुँचाए। साथ ही अहले-किताब की उपद्रवी नीतियों एवं साजिशों से होशियार रहने की ताकीद की गई है।

आयत १२१ से १८९ में ग़ज़्वा-ए-उहद (उहद के युद्ध) के हालात एवं घटनाओं पर समीक्षा प्रस्तुत की गई है। और उन कमज़ोरियों की ओर निशानदेही की गई जो उस समय स्पष्ट हुईं।

आयत १९० से २०० की हैसियत उपसंहार की है जिस में स्पष्ट किया गया है कि ईमान कोई अंधी धारणा एवं अंधी आस्था नहीं बल्कि बुद्धि, विवेक एवं प्रकृति की आवाज़ है। इस आवाज़ के साथ जब इन्सान अपनी आवाज़ मिला देता है अथवा इस पुकार पर जब मनुष्य अपने आप को समर्पित कर देता है तो उस का सम्बन्ध अपने रब से सही अर्थों में जुड़ जाता है और उस के दिल से खुद बखुद यह दुआ निकलती है कि उस का अन्जाम अच्छा हो। इस अवसर पर उस का रब उसे अच्छे परिणाम की खुशख़बरी सुनाता है और इत्मीनान दिलाता है कि जो क़ुर्बानियाँ उस ने सत्य मार्ग पर चलते हुए दी है उन का भरपूर इनाम वह उसे प्रदान करेगा । अन्त में सत्य मार्ग के लिए लड़ने वाले मोमिनों का हौसला बढ़ाया गया है और उन्हें सत्य एवं असत्य के संग्राम में दृढ़तापूर्वक जमे रहने की हिदायत की गई है।

३-सूरह आले-इमरान

سُوْرَةُ اٰلِ عِمْرٰنَ

आयतें : २००

अल्लाह रहमान और रहीम के नाम से

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ

1. अलिफ़, लाम, मीम ।[1]

الٓمّٓ ﴿١﴾

2. अल्लाह जिस के सिवा कोई इलाह (ख़ुदा) नहीं,[2] वह जीवंत अस्तित्व है जो क़ायम है और सब को संभाले हुए है ।[3]

اللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْحَیُّ الْقَیُّوْمُ ﴿٢﴾

3. उस ने तुम पर सत्य (पर आधारित) ग्रंथ नाज़िल किया [4] जो पिछले ग्रंथो की पुष्टि करता है, और वह तौरात [5] और इंजील [6] नाज़िल कर चुका है।

نَزَّلَ عَلَیْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَیْنَ یَدَیْهِ
وَاَنْزَلَ التَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِیْلَ ﴿٣﴾

4. इस से पहले लोगों की हिदायत (मार्गदर्शन) के लिए एवं उस ने फ़ुरक़ान (कसौटी)उतारा।[7] निश्चित जानो जो लोग अल्लाह की आयतों का इन्कार करेंगे उन को कठोर दंड मिलेगा। अल्लाह ग़ालिब (प्रभुत्वशाली) है और (गुनाहों के बदले में) दंड देने वाला है [8]।

مِنْ قَبْلُ هُدًى لِّلنَّاسِ
وَاَنْزَلَ الْفُرْقَانَ ؕ اِنَّ الَّذِیْنَ كَفَرُوْا بِاٰیٰتِ اللّٰهِ لَهُمْ عَذَابٌ
شَدِیْدٌ ؕ وَاللّٰهُ عَزِیْزٌ ذُو انْتِقَامٍ ﴿٤﴾

5. अल्लाह से कोई चीज़ छिपी नहीं, न ज़मीन में, न आसमान में।[9]

اِنَّ اللّٰهَ لَا یَخْفٰى عَلَیْهِ شَیْءٌ فِی الْاَرْضِ وَلَا فِی السَّمَآءِ ﴿٥﴾

6. वही है जो गर्भाशियों के अन्दर जिस तरह चाहता है सूरतगरी (रूपकारी) करता है,[10] उस ग़ालिब (प्रभुत्वशाली) और हिकमत वाले के सिवा कोई ख़ुदा नहीं।

هُوَ الَّذِیْ یُصَوِّرُكُمْ فِی الْاَرْحَامِ كَیْفَ یَشَآءُ ؕ لَآ اِلٰهَ اِلَّا
هُوَ الْعَزِیْزُ الْحَكِیْمُ ﴿٦﴾

7. वही है जिस ने तुम पर किताब उतारी जिस में ''मुहकम''(अटल)[11]आयतें हैं जो किताब की असल बुनियाद हैं [12] और दूसरी ऐसी हैं जो मुतशाबे: (उपलक्षित)हैं।[13] तो जिन के दिलों में टेढ़ है वे मुतशाबिहात (उपलक्षित आयतों) के पीछे पड़ते हैं [14] ताकि फ़ितना बरपा करें और उन की असल हक़ीक़त मालूम करें हालाँकि उन की असल हक़ीक़त अल्लाह के सिवा कोई नहीं जानता।और जो लोग ज्ञान में पक्के हैं वे कहते हैं हम इन पर ईमान लाए। ये सब हमारे रब ही की तरफ़ से हैं। और याददेहानी (शिक्षा) तो बुद्धिमान ही प्राप्त करते हैं।

هُوَ الَّذِیْۤ اَنْزَلَ عَلَیْكَ الْكِتٰبَ مِنْهُ اٰیٰتٌ مُّحْكَمٰتٌ
هُنَّ اُمُّ الْكِتٰبِ وَاُخَرُ مُتَشٰبِهٰتٌ ؕ فَاَمَّا الَّذِیْنَ فِیْ قُلُوْبِهِمْ
زَیْغٌ فَیَتَّبِعُوْنَ مَا تَشَابَهَ مِنْهُ ابْتِغَآءَ الْفِتْنَةِ
وَابْتِغَآءَ تَاْوِیْلِهٖ ۚ وَمَا یَعْلَمُ تَاْوِیْلَهٗۤ اِلَّا اللّٰهُ ۘ وَالرّٰسِخُوْنَ
فِی الْعِلْمِ یَقُوْلُوْنَ اٰمَنَّا بِهٖ ۙ كُلٌّ مِّنْ عِنْدِ رَبِّنَا ۚ وَمَا یَذَّكَّرُ
اِلَّاۤ اُولُوا الْاَلْبَابِ ﴿٧﴾

1. ये हुरूफ़े-मुक़त्तआत (विभक्त अक्षर) हैं जिनकी व्याख्या सूरह बक़र: के शुरू में हम कर चुके हैं। वहाँ जबूर के हवाले से यह स्पष्ट किया जा चुका है कि ये अक्षर सूरह के विशिष्ट विषय अथवा विशिष्ट शब्दों की ओर संकेत करते हैं। इस सूरह के विषयों से प्रतीत होता है कि ये अक्षर इन से खास सम्बन्ध रखते हैं। तवालत से बचते हुए हम कहेंगे कि अलिफ (अ) का इशारा ''अल्लाह'' की तरफ है जिस की सही पहचान और उसे समझने तथा उस तक पहुँचने का द्वार इस सूरह में बताया गया है। एवं इसका इशारा ''आयातुल्लाह'' अर्थात अल्लाह की निशानियाँ एवं अल्लाह के आदेश की तरफ़ भी है जिस का वर्णन इस सूरह में अधिकता के साथ हुआ है। और विशेष रूप से आयत ७ में क़ुर्आन की आयतों की दो क़िस्में बयान की गई हैं, मुहकमात (अटल) और मुताशाबिहात (उपलक्षित)।

इसी तरह लाम (ल) का इशारा लाइलाह इल्लल्लाह (अल्लाह के सिवा कोई इलाह (ख़ुदा) नाहीं) की तरफ़ है जिस को अत्यन्त भव्य तरीक़े से इस सूरह में प्रस्तुत किया गया है। (आयत२,६,१८)।

अब रह गया मीम (म) तो वह भी इस सूरह का एक महत्वपूर्ण अंश है क्यों की इस सूरह से अल्लाह की इस सिफ़त को कि वह मालिकुलमुल्क है, अत्यंत प्रभावपूर्ण अन्दाज़ में प्रस्तुत किया गया है (आयत नं २६)एवं इस में मलाइक: (फ़रिश्तों) का वर्णन कई जगहों पर हुआ है और तौहीद के सिलसिले में उन की गवाही भी पेश की गई है (आयत १८) इस के अलावा इस में मोमिनों और मुत्तक़ियों (परहेज़गारों) को कामयाबी की खुशखबरी भी सुनाई गई है।

गोया इन विभक्त अक्षरों की हैसियत मार्ग चिन्हों की है जो मंज़िल की तरफ रहनुमाई करते हैं।

2. यह नहीं कहा गया कि अल्लाह ख़ुदाओं में सब से बड़ा है अर्थात् महादेव या (Chief God) है बल्कि यह कहा गया कि अल्लाह के सिवा कोई इलाह (ख़ुदा) नहीं अर्थात उस के सिवा किसी ख़ुदा अथवा पूज्य का सिरे से वजूद ही नहीं है अत: अल्लाह के सिवा जिन को भी ख़ुदा के नाम से पुकारा जाता है वे फ़र्ज़ी ख़ुदा अथवा गढ़े हुए देवता हैं। वास्तव में इन में से कोई भी उलूहिय्यत की सिफ़त (ख़ुदा होने का गुण) नहीं रखता।

3. देखिए सूरह बक़र: नोट नं. ४०९,४१० यहाँ इशारा है इस बात की तरफ़ कि क़य्यूमियत अर्थात क़ायम रहना और सब को संभाले रहना यह अल्लाह ही के गुण हैं। इस लिए वह उचित रुप से इबादत के लायक़ एवं इस का वास्तविक अधिकारी है। किन्तु जो लोग ईसा मसीह या किसी और हस्ती को ख़ुदा समझतें हैं वे बताऐं कि क्या ये हस्तियाँ भी अपने अन्दर क़य्यूमियत की सिफ़त अर्थात ख़ुद क़ायम तथा सब को संभाल रखने का गुण रखती हैं। अगर नहीं, और सच्चाई यही है कि ऐसा हरगिज़ नहीं है, तो फिर इन को इलाह (ख़ुदा एवं पूज्य) ठहराना किस तरह सही हो सकता है।

4. नज़्ज़ल (नाज़िल किया) में अल्फ़ाज़ के साथ उतारने का अर्थ सम्मिलित है । अर्थात इस संदेह को पालने के लिए कोई गुन्जाइश नहीं है कि अल्लाह की वह्य को शब्दों का प्रारूप हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने प्रदान किया होगा । नहीं बल्कि क़ुर्आन के शब्द शब्द और पंक्ति पंक्ति (Text) अल्लाह ही का नाज़िल किया हुआ है। इस के अल्फाज़ और परिभाषाओं और इन की तैयारी में किसी का यहाँ तक कि पैग़म्बर का भी कोई दख़ल कोई हिस्सा एवं कोई सहयोग नहीं।

5. तौरात का अर्थ इबरानी भाषा में क़ानून (Law) के हैं। यह उस किताब का नाम है जो अल्लाह तआला की तरफ से हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम पर नाज़िल हुई थी। क़ुर्आन इसी की पुष्टि करता है किन्तु इस से यह ग़लत फ़हमी न हो की तौरात मौजूदा बाइबल (Old Testament) का नाम है और इस के सारे अध्याय और सारी पंक्तियाँ क़ुर्आन की पुष्टि कर रही हैं। क्यों कि मौजूदा बाइबिल धार्मिक पुस्तक की हैसियत रखती है और इस में असल तौरात के अगं अवश्य मौजूद हैं परन्तु वह ऐतिहासिक घटनाओं, जीवनियों विद्वानों की व्याख्याओं और धर्म शास्त्रियों के विचारों का ऐसा संग्रह है कि न इस पूरे संग्रह को अल्लाह की किताब कहा जा सकता है और न असल तौरात के हिस्सों को कोई व्यक्ति इस मिश्रण से अलग कर सकता है जब कि वह अत्यंत दूर दृष्टिता से काम न ले। मौजूदा बाइबल खुद यह दावा भी नहीं करती कि वह जूँ कि तूँ अल्लाह का नाज़िल किया हुआ ग्रन्थ है एवं इस के लेख इस बात का खुला सबूत हैं कि यह संग्रह इन्सानों द्वारा संकलित किया हुआ है। बल्कि असल ईश्वरीय ग्रंथ में लोगों ने जो परिर्वतन किए उसे भी बाइबल स्वीकार करती है अत:बाइबिल की किताब यिर्मयाह में है।

''क्यों कि हमारा परमेश्वर सेनाओं का यहोवा जो जीवित परमेश्वर है, तुम लोगों ने उस के वचन बिगाड़ दिए है।'' (यिर्मयाह २३:२६) इस स्वीकरण पर भी ध्यान दिजिए कि यह संग्रह भी इस्राईल की बाबिल से वापसी के बाद संकलित किया गया है। अत: Peake's Commentary on the Bible में The Authority of the Bible के अंतर्गत उस का टीकाकार लिखता है।

"It was after the return of Israel from the Babylonian exile that the collection of the Books of the Law into the present corpus was made."(page 2).

6. इंजील उस किताब का नाम है जो अल्लाह तआला ने हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम पर नाज़िल फ़रमाई थी। क़ुर्आन उसी

की पुष्टि करता है जहाँ तक मौजूदा बाइबिल के नये नियम (New Testsment) का सम्बन्ध है उस में असल इंजील के कुछ अंश अवश्य पाये जाते हैं जो क़ुर्आन से बिल्कुल मेल खाते हैं किन्तु यह संग्रह भी अपने वर्तमान रुप में ईश्वरीय ग्रंथ अथवा ईश्वरीय वचन की हैसियत नहीं रखता। बल्कि इस में इश्वरीय वचन के बिखरे अंश के साथ ऐतिहासिक घटनाऐं, धार्मिक कथाऐं और व्याख्या एवं वयंजना इत्यादि घूल मिल गई है। लूक़ा की इंजील में तो शरू में ही यह पुष्टि मौजूद है कि इस के संकलन कर्ता ने घटनाओं को खुद ही संकलित किया है।

इस लिए बहुतों ने उन बातों का जो हमारे बीच में बीती है, इतिहास लिखने में हाथ लगाया है। जैसा कि उन्होंने जो पहले ही से इन बातों के देखने वाले और वचन के सेवक थे हम तक पहुँचाया। इस लिए हे श्रीमान थियुफ़िलुस मुझे भी यह उचित मालूम हुआ कि उन सब बातों का सम्पूर्ण हाल आरम्भ से ठीक ठीक जाँच कर के उन्हें तेरे लिए क्रमानुसार लिखूँ। कि तू यह जान ले कि वे बातें जिनकी तूने शिक्षा पाई है कैसी अटल हैं।'' (लूक़ा १:१,से ४)

और बाइबिल का टीकाकार इस को इस तरह स्वीकार करता है:-

"The motive and method of the writing of a gospel are described in the Prologue of the Gospel of Luke: without any claim to inspiration, the writer set out to get the best information that he could and to use the previous attempts, which had been made. The narrative was not designed to be sacred scripture. It was a record of the events; where in the sacred scriptures were fulfilled." -(Peake's commentary on the Bible, page 4).

7. फ़ुर्क़ान (कसौटी) क़ुर्आन की सिफ़त (विशेषण) है जिस का अर्थ है हक़ (सत्य) और बातिल (असत्य) में फ़र्क़ करने वाली किताब। यहाँ इस सिफ़त का ज़िक्र करने से अभिप्रेत यह स्पष्ट करना है कि तौरात और इंजील में जब अहले-किताब (यहूदियों और ईसाईयों) ने परिवर्तन कर दिया और लोगों के लिए सत्य और असत्य में फ़र्क़ करना मुश्किल हो गया तो अल्लाह तआला ने क़ुर्आन को कसौटी (फ़ुर्क़ान) बना कर उतारा ताकि लोगों पर सत्य एवं मुक्ति अथवा हिदायत की राह स्पष्ट हो जाए।

8. अर्थात क़ुर्आन के रूप में अल्लाह की तरफ़ से खुली हिदायत आ जाने की बाद भी जो लोग धार्मिक मतभेदों के चक्कर में पड़े रहेंगे और इस हिदायत को क़ुबूल नहीं करेंगे उन को अल्लाह कठोरतम दंड देगा।

9. इशारा है इस बात की तरफ़ कि लोगों ने अल्लाह की किताब में काट छाँट अथवा परिवर्तन करने का जो दुस्साहस किया और अल्लाह के नाम से जो विभिन्न प्रकार के धर्म ईजाद (आविष्कार) कर लिये उसे देख कर कोई यह न ख़याल करे कि यह सब बातें अल्लाह से छिपि हैं या उस के यहाँ अंधेर नगरी है,नहीं, बल्कि वह लोगों की सारी हरकतों को अच्छी तरह जानता है लेकिन चूँकि इस दुनिया में इन्सान का इम्तिहान लेना उद्देश्य है इस लिए उस की नीति इस बात की माँग करती है कि लोगों को अपना कर्म करने की मोहलत दी जाए और फ़ैसला क़ियामत के दिन के लिए उठा रखा जाए।

10. अर्थात स्त्री के गर्भाशय में भ्रूण की रचना अल्लाह ही करता है न कि कोई देवता। बहुदेवादी धर्मों में इस तरह के विचार पाए जाते हैं कि एक विशिष्ट देवी (Tvashtri) भ्रूण की रचना करती है। यह आयत इस तरह के विचारों को ग़लत बताती है। एवं संदर्भ की दृष्टि से आयत का इशारा इस तरफ है कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की रचना हज़रत मरयम अलैहिस्सलाम के गर्भ में हुई थी फिर वह ख़ुदा किस तरह हो सकते हैं?

11. मुहकम अर्थात पुख़्ता, अटल, और सुद्ध। मुहकम आयतों से मुराद क़ुर्आन की वे आयतें हैं जो अपने भाव एवं सार की दृष्टि से बिल्कुल साफ़ और स्पष्ट हैं जैसे वे आयतें जिन में इस्लाम की दअवत, उसकी शिक्षाऐं, उस के आदेश एवं एहकाम, क़ानून, फराइज़, इबादत, उपदेश और इसी तरह की दूसरी बातें बयान हुई हैं ।

12. मुहकम आयतों (अटल आयतों) की हैसियत उम्मुल किताब की है अर्थात वे किताब की असल बुनियाद हैं। अत: क़ुर्आन की किसी आयत का ऐसा मतलब लेना सही न होगा जो मुहकम आयतों के विरूद्ध हो। बल्कि जहाँ भी भावर्थ सुनिश्चित करने में संदेह उतपन्न हो वहाँ मुहकम आयतों की ओर पलटना चाहिए।

13.''मुताशाबिहात'' अर्थात मिलती जुलती, उपलक्षित।

मुतशाबिहात से मुराद वे आयतें है जिन में हक़ीक़तों एवं वास्तविकताओं को पेश करने के लिए तश्बीह (उपमा) का अन्दाज़ अपनाया गया है। वे वास्तविकताऐं जो मनुष्य के अनुभव की सीमा से परे हैं जैसे अल्लाह का अर्श (आकाश के सिंहासन) पर बिराजमान होना, आसमान की वास्तविकताऐं, कर्म का तौला जाना, जन्नत की नेमतें, जहन्नम की सज़ाए, आखिरत की परिस्थितियाँ, इत्यादि। इस तरह की बातों को ऐसे शब्दों एवं शैली में बयान किया गया है जो असल वास्तविकता के अनुरूप हो तथा अनुभव कर लेने वाली वस्तुओं के लिए मनुष्य की भाषा में उपलब्ध हों। इस के अदभुत एवं अलौकिक

वास्तविकताओं का ज्ञान इन्सान को इस हद तक प्राप्त हो जाता जिस हद तक कि उस की हिदायत के लिए आवश्यक है। इस से आगे बढ़ कर यदि आदमी उन की वास्तविकताओं की असलियत अथवा बुनियाद मालूम करने के पीछे पड़े तो वहाँ तक उस की पहुँच असंभव तो है ही उल्टे वह शब्दों और वाक्यों की बहसों में उलझ कर रह जाएगा जो किसी बुद्धिमान का काम नहीं।

अल्फ़ाज़ के पेचों में उलझते नहीं दाना
ग़व्वास को मतलब है सदफ़ से कि गुहर से

14. मुताशाबिहात के पीछे पड़ने की एक मिसाल हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की पैदाइश का मामला है। चूँकि आप की पैदाइश बिना बाप के असाधारण विधि पर हुई थी इस लिए आप को कलिमतिम्मिन्हु -------- (कलिम: अल्लाह की ओर से) ताबीर फ़रमाया अर्थात् वे अल्लाह के एक फ़रमान (आदेश) की हैसियत रखते हैं। क्यों कि उन की पैदाइश अल्लाह के हुक्म ''कुन-------'' अर्थात ''हो जा'' से हुई थी किन्तु ईसाईयों ने इस में उलझाव पैदा करने वाले फ़लसफ़े बघारे और हज़रत मसीह अलैहिस्सलाम के ईश्वरत्व के क़ायल हो गए । इस तरह से खुद भी गुमराह हुए और दुसरों के लिए भी फ़ितने का सामान किया। अफ़सोस है कि क़ुर्आन की इस ख़ुली और रौशन हिदायत के बावजूद मुसलमानों के कुछ गिरोहों ने पिछले युगों में अल्लाह की सिफतों उस के गुणों एवं विशेषताओं इत्यादि के बारे में अनावश्यक तथा व्यर्थ की बहसें छेड़ी जिस के फलस्वरूप इल्में-कलाम (वितण्डावाद अथवा Scholastic Theology) वजूद में आया जिस के कारण व्यर्थ की बहसें शुरू हो गई और इस्लाम के सीधे सादे अक़ीदे भी मुअम्मा बन गए।

8. ऐ हमारे रब ! जब तूने हमें हिदायत प्रदान की है तो इस के बाद हमारे दिलों में टेढ़ पैदा न कर और हम पर अपनी रहमत उंडेल। निश्चय ही तू बड़ा दानशील है।[15]

رَبَّنَا لَا تُزِغْ قُلُوْبَنَا بَعْدَ اِذْ هَدَيْتَنَا وَهَبْ لَنَا مِنْ لَّدُنْكَ
رَحْمَةً ۚ اِنَّكَ اَنْتَ الْوَهَّابُ ۝٨

9. ऐ हमारे परवरदिगार ! तू ज़रूर सब लोगों को एक दिन जमा करने वाला है जिस के आने में कोई संदेह नहीं। बेशक अल्लाह वादा ख़िलाफ़ी नहीं करता।

رَبَّنَآ اِنَّكَ جَامِعُ النَّاسِ لِيَوْمٍ لَّا رَيْبَ فِيْهِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُخْلِفُ
الْمِيْعَادَ ۝٩

10. जिन लोगों ने कुफ्र किया,[16] न उन के धन अल्लाह के यहाँ कुछ काम आऐंगे और न उन की औलाद [17]। ऐसे ही लोग (जहन्नम की) आग का ईंधन बनेंगे।

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَنْ تُغْنِيَ عَنْھُمْ اَمْوَالُھُمْ وَلَآ اَوْلَادُھُمْ
مِّنَ اللّٰهِ شَـيْـــًٔا ۭ وَاُولٰۗىِٕكَ ھُمْ وَقُوْدُ النَّارِ ۝١٠

11. ये भी उसी डगर पर हैं जिस डगर पर आले-फ़िरऔन और उन के पूर्वज थे। उन्हों ने हमारी आयतों का इन्कार किया तो अल्लाह ने उन को गुनाहों पर पकड़ लिया। अल्लाह कठोर दण्ड देने वाला है।

كَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ ۙ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۭ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَا ۚ
فَاَخَذَھُمُ اللّٰهُ بِذُنُوْبِهِمْ ۭ وَاللّٰهُ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝١١

12. जिन लोगों ने कुफ्र किया है उन से कह दो कि बहुत जल्द तुम मग़लूब (प्रभुत्वहीन) होंगे और जहन्नम की ओर हाँके जाओगे और वह बहुत बुरा ठिकाना है।

قُلْ لِّلَّذِيْنَ كَفَرُوْا سَتُغْلَبُوْنَ وَتُحْشَرُوْنَ اِلٰى جَهَنَّمَ ۭ
وَبِئْسَ الْمِهَادُ ۝١٢

13. जिन दो गिरोहों में मुठभेड़ हुई उन में तुम्हारे लिए बड़ी निशानी है। एक गिरोह अल्लाह की राह में लड़ रहा था और दूसरा काफिर था। ये उन को अपनी आँखों से अपने से दोगुनी तादाद (संख्या) में देख रहे थे। और अल्लाह अपनी सहायता से जिस को चाहता है बल बहुँचाता है। इस (घटना)में उन लोगों के लिए बड़ी इबरत (शिक्षा) है जो नेत्रवान हैं।[18]

قَدْ كَانَ لَكُمْ اٰيَةٌ فِيْ فِئَتَيْنِ الْتَقَتَا ۭ
فِئَةٌ تُقَاتِلُ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَاُخْرٰى كَافِرَةٌ يَّرَوْنَھُمْ مِّثْلَيْهِمْ
رَاْيَ الْعَيْنِ ۭ وَاللّٰهُ يُؤَيِّدُ بِنَصْرِهٖ مَنْ يَّشَاۗءُ ۭ اِنَّ فِيْ ذٰلِكَ
لَعِبْرَةً لِّاُولِي الْاَبْصَارِ ۝١٣

14. लोगों के लिए मनमोहक चीज़ें, औरतें, औलाद, सोने चाँदी के ढेर, उत्तम घोड़े, मवेशी और खेतियाँ बड़ी लुभावनी बना दी गई हैं।ये सब दुनियावी ज़िन्दगी के समान हैं और बेहतर ठिकाना तो अल्लाह ही के पास है।[19]

زُيِّنَ لِلنَّاسِ حُبُّ الشَّهَوٰتِ مِنَ النِّسَاۗءِ وَالْبَنِيْنَ
وَالْقَنَاطِيْرِ الْمُقَنْطَرَةِ مِنَ الذَّھَبِ وَالْفِضَّةِ وَالْخَيْلِ
الْمُسَوَّمَةِ وَالْاَنْعَامِ وَالْحَرْثِ ۭ ذٰلِكَ مَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۚ
وَاللّٰهُ عِنْدَهٗ حُسْنُ الْمَاٰبِ ۝١٤

15. यह दुआ जो इल्म में परिपक्कता (पुख़्तगी) रखने वालों की ज़बान से अदा हुई है जो उन के ईमानी जज़्बात के परिचायक हैं। वे मुतशाबिहात की तावीलात अर्थात उन को अपना अर्थ पहनाने के फ़ित्नों से बचने की फ़िक्र करते हैं और दीन में फित्ना फैलाने वालों से होशियार रहते हैं और अपने ईमान की सलामती के लिए अल्लाह तआला से दुआ करते हैं।

16. मुराद वे लोग हैं जो क़ुर्आन को अल्लाह की किताब मानने से इन्कार करते हैं।

17. धन और औलाद के वर्णन का औचित्य यह है कि अधिकतर इन से लगाव, सत्य स्वीकार करने की राह में रूकावट बनती है।

18. यह बद्र की जंग की और इशारा है जो सन २ हिजरी में ईमान वालों और मक्के के मुश्रिकों के बीच बद्र के मक़ाम पर हुई। यह पहली जंग थी जो क़ुर्आन को मानने वालों ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के नेतृत्व में लड़ी। इस जंग में काफिरों की तादाद एक हज़ार के क़रीब थी और ईमान वाले मात्र तीन सौ तेरह थे। किन्तु जब जंग शुरू हो गई तो काफ़िरों को ईमान वाले दोगुनी तादाद में दिखाई देने लगे जिस से वे प्रभावित हो गए । कारण यह था कि अल्लाह का समर्थन और सहायता ईमान वालों के साथ थी जिस के फलस्वरूप ईमान वाले कम तादाद में होने के बावजूद विजयी हुए और काफ़िरो को अधिक संख्या में होने के बावजूद पराजय देखनी पड़ी।

यहाँ इस घटना का हवाला देने से यह स्पष्ट करना अभिप्रेत है कि इस में सत्य को स्वीकार करने वालों के उज्जवल भविष्य की झलक देखी जा सकती है।

क्यों कि सत्य और असत्य की इस कशमकश में अल्लाह का समर्थन और उस की सहायता क़ुर्आन को मानने वालों के पक्ष में प्रकट हुई है।

19. जिन चीज़ों का इस आयत में ज़िक्र हुआ है वे इन्सान को स्वभावत: मोह लेने वाली हैं। इस लिहाज़ से इन की ओर आकर्षित होना आपत्तिजनक नहीं है किन्तु इन चीज़ों का आखों में इस तरह खुब जाना कि इन्सान का इन के साथ लगाव अपनी संतुलित सीमा पार कर जाए और इन चीज़ों को वह परीक्षा का साधन समझने के बजाए जीवन का लक्ष्य समझने लगे तो ये चीज़ें इन्सान को बुरे अन्जाम की तरफ ले जाती हैं। आयत का मंशा इसी असंतुलित रवैये से इन्सान को बचाना है। जिस संदर्भ में यह बयान हुई है उस से यह इशारा भी निकलता है कि क़ुर्आन की दअवत को स्वीकार करने में लोगों के लिए जो चीज़ रुकावट बन रही है वह उन का भौतिक साधनों अथवा वस्तुओं पर रीझ जाना है। क्यों कि क़ुर्आन की दअवत इस बात को बिल्कुल ग़लत ठहराती है की आदमी भौतिक साधनों एवं वस्तुओं पर रीझे और ग़ैर ज़िम्मेदाराना तथा ऐश्वर्यपूर्ण जीवन व्यतीत करे। उस के नज़दीक दुनिया के माल और अस्बाब चन्द रोज़ की ज़िन्दगी का सामान हैं जो आज़माइश के लिए इन्सान को दिए गए हैं इसी लिए इस में कशिश रखी गई है। रही भविष्य और हमेशा हमेशा रहने वाला इनाम तो वह आखिरत में मिलेगा बशर्ते कि इन्सान ने स्वयं को इस का योग्य तथा हक़दार बनाया हो।

15. कहो क्या मैं तुम्हें बताऊँ इन से बेहतर चीज़ क्या है? जो लोग तक़वा (परहेज़गारी) अपनाऐं [20]उन के लिए उन के रब के पास बाग़ हैं जिन के तले नहरें प्रवाहित होंगी। वे उन में हमेशा रहेंगे और उन के लिए पाकिज़ा बीवियाँ होंगी और अल्लाह की खुश्नुदी (प्रसन्नता) उन्हें हासिल होगी।[21] अल्लाह अपने बन्दों पर नज़र रखता है।[22]

قُلْ أَؤُنَبِّئُكُم بِخَيْرٍ مِّن ذَٰلِكُمْ ۚ لِلَّذِينَ اتَّقَوْا عِندَ رَبِّهِمْ
جَنَّاتٌ تَجْرِي مِن تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا وَأَزْوَاجٌ
مُّطَهَّرَةٌ وَرِضْوَانٌ مِّنَ اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ بَصِيرٌ بِالْعِبَادِ ﴿١٥﴾

16. ये वे लोग हैं जो दुआ करते हैं कि ऐ हमारे रब हम ईमान लाए अतः तू हमारे गुनाहों को क्षमा कर और हमें (जहन्नम की) आग के अज़ाब से बचा।

الَّذِينَ يَقُولُونَ رَبَّنَا إِنَّنَا آمَنَّا فَاغْفِرْ لَنَا ذُنُوبَنَا وَقِنَا
عَذَابَ النَّارِ ﴿١٦﴾

17. ये लोग सब्र करने वाले हैं, ठीक बोलने वाले हैं, अत्यंत आज्ञाकारी हैं, इन्फ़ाक़ (अल्लाह की राह में खर्च) करने वाले हैं और सहर [23](अरूणोदय) के समय गुनाहों की माफ़ी माँगते रहते हैं।[24]

الصَّابِرِينَ وَالصَّادِقِينَ وَالْقَانِتِينَ وَالْمُنفِقِينَ
وَالْمُسْتَغْفِرِينَ بِالْأَسْحَارِ ﴿١٧﴾

18. अल्लाह ने इस बात की शहादत दी कि उस के सिवा कोई इलाह (ख़ुदा) नहीं और फ़रिश्ते और इल्म (ज्ञान) रखने वाले भी इस बात की गवाही देते हैं कि न्याय और समता के साथ तदबीर और इन्तिज़ाम करने वाली उस हस्ती के सिवा कोई इलाह नहीं। वह प्रभुत्वशाली और हिकमत वाला है।[25]

شَهِدَ اللَّهُ أَنَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ وَالْمَلَائِكَةُ وَأُولُو الْعِلْمِ
قَائِمًا بِالْقِسْطِ ۚ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿١٨﴾

19. अल्लाह के नज़दीक असल दीन सिर्फ इस्लाम है [26] और अहले-किताब ने जो इख्तिलाफ़ (मतभेद) किया वह इल्म आ जाने के बाद मात्र पारस्परिक शत्रुता के कारणवश किया [27] और जो कोई अल्लाह के आदेशों का इन्कार करेगा तो (उसे मालूम होना चाहिए कि) अल्लाह बहुत जल्द हिसाब चुकाने वाला है।[28]

إِنَّ الدِّينَ عِندَ اللَّهِ الْإِسْلَامُ ۗ وَمَا اخْتَلَفَ الَّذِينَ
أُوتُوا الْكِتَابَ إِلَّا مِن بَعْدِ مَا جَاءَهُمُ الْعِلْمُ بَغْيًا
بَيْنَهُمْ ۗ وَمَن يَكْفُرْ بِآيَاتِ اللَّهِ فَإِنَّ اللَّهَ سَرِيعُ
الْحِسَابِ ﴿١٩﴾

20. इस के बाद भी अगर ये लोग तुम से झगड़ा करते हैं तो इन से कहो मैं ने और मेरे अनुयायियों ने तो स्वयं को अल्लाह के हवाले कर दिया और अहले-किताब और उम्मियों से पूछो [29] कि क्या तुम ने भी इस्लाम क़ुबूल किया? अगर उन्होंने भी इस्लाम क़ुबूल किया तो वे सीधा मार्ग पा गए और अगर मुँह मोड़ा तो तुम पर केवल पैग़ाम पहुँचा देने की ज़िम्मेदारी है। अल्लाह अपने बन्दों के हाल पर नज़र रखता है।

فَإِنْ حَاجُّوكَ فَقُلْ أَسْلَمْتُ وَجْهِيَ لِلَّهِ وَمَنِ اتَّبَعَنِ ۗ
وَقُل لِّلَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ وَالْأُمِّيِّينَ أَأَسْلَمْتُمْ ۚ فَإِنْ
أَسْلَمُوا فَقَدِ اهْتَدَوا ۖ وَّإِن تَوَلَّوْا فَإِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلَاغُ ۗ
وَاللَّهُ بَصِيرٌ بِالْعِبَادِ ﴿٢٠﴾

20. तक़्वा एक व्यापक परिभाषा है और यहाँ इस का यह पक्ष बिल्कुल स्पष्ट हो रहा है कि मन को लुभाने वाली चीज़ो के सिलसिले में उचित और संतुलित रवैया अपनाना और आख़िरत की नेमतों को लक्ष्य बनाना ही तक़्वा है।

21.अल्लाह की खुश्नूदी (प्रसन्नता!) तमाम नेमतों से उच्चतर है। अल्लाह जब अपने बन्दे से खुश हुआ तो वह कौन सी ख़ुशी और कौन सा सौभाग्य है जो उसे मिलना बाक़ी रह गया? जन्नत में इन्सान को केवल दिखाई पड़ने वाली नेमतें ही नहीं मिलेंगी बल्कि वे अपने रब की ख़ुश्नूदी (प्रसन्नता) जैसी रूहानी दौलत से भी माला माल होगा।

22. अर्थात् अल्लाह अपने बन्दों के हाल पर नज़र रखे हुए है अत: जो सही रवैया अपनाएगा उस के लिए चिन्ता की कोई बात नहीं है। वह अल्लाह की ख़ुश्नूदी से ज़रूर नवाज़ा जाएगा ।

23.सह्र (अरूणोदय) का समय अल्लाह से लौ लगाने एवं उस से प्रार्थना करने के लिए अत्यंत शुभ एवं अनूकूल है तथा क्षमायाचना (इस्तिग़्फार) की स्वीकृति के लिए अत्याधिक उचित । उस समय जब कि दुनिया सो रही होती है और मन आराम करने का इच्छुक होता है, उठ कर अल्लाह के सम्मुख क्षमायाचना करना एक कठिनतम परिश्रम से परिपूर्ण कर्म है जो दिखावे एवं पाखंड की गंदगी से सुरक्षित होता है।

24. ये गुण मनुष्य की महानता एवं बुलंदी की ज़मानतदार (प्रतिभूति) है। जिन लोगों के चरित्र की ये विशेषताऐं होती हैं वे सांसारिक धन दौलत, उस के ऐश्वर्य एवं आकर्षण पर नहीं रीझते बल्कि आखिरत की कामयाबी को अपना लक्ष्य बनाते हैं।

25. इस आयत में अल्लाह तआला ने अपनी वहदानियत (एकमात्रता) और अपने इंसाफ के साथ क़ायम होने पर अपनी, अपने फ़रिश्तों की और इल्म रखने वालों (विद्वानों) की शहादत पेश की है। अल्लाह की गवाही तो कायनात (ब्रह्माण्ड) की एक एक चीज़ दे रही है। कोई चीज़ ऐसी नहीं जो उस के अकेले ख़ुदा होने अथवा एकमात्रता (वहदानियत) पर तर्क न प्रस्तुत करती हो। और जो संतुलन इस ब्रह्माण्ड की व्यवस्था के अन्दर पाया जाता है वह इस बात पर तर्क प्रस्तुत करता है कि इस का रचयिता ठीक ठीक न्याय करने वाला है।

तौहीद (एकेश्वरवाद) मनुष्य की अंतरात्मा की पुकार है यह भी अल्लाह की गवाही ही है जो मनुष्य के ह्रदय को समर्पित की गई है। अल्लाह की गवाही का इज़हार वह्य के द्वारा भी हुआ है,क़ुर्आन इस का खुला प्रमाण है।

फ़रिश्तों की गवाही घटित घटना की प्रस्तुति है। फ़रिश्ते अल्लाह के आदेश को ब्रह्माण्ड में लागू करते हैं और पैग़म्बरों पर वह्य लेकर आते हैं इस लिए उन की गवाही वास्तविकता का द्योतक है। शिर्क करने वाले उन को ख़ुदा का साझीदार ठहराते हैं किन्तु वे खुद हर प्रकार के शिर्क का खंडन करते हैं और अल्लाह तआला के अकेले इलाह होने की गवाही देते हैं । ये जब कभी नबियों के लिए पैग़ाम ले कर नाज़िल हुए तो वह अल्लाह की तरफ़ से तौहीद (एकेश्वरवाद) का ही पैग़ाम ले कर नाज़िल हुए।

इल्म रखने वालों (विद्वानों) की गवाही से मुराद उन लोगों की गवाही है जो ख़ुदा और कायनात के बारे में सही ज्ञान रखते हैं। यह ज्ञान नबियों द्वारा इन्सानों को मिला है और इल्म रखने वालों का यह वास्तविकता से परिचित गिरोह हर युग में यह गवाही देता रहा है।

कि है ज़ाते वाहिद इबादत के लायक़
ज़बान और दिल की शहादत के लायक़

और यह गवाही उस ने महानतम बलिदान दे कर क़ायम की है। भावार्थ से इल्म रखने वालों की महानता भी स्पष्ट हो रही है क्यों कि इल्म रखने वालों का ज़िक्र फ़रिश्तों के साथ किया गया है।

26. मतन (Text) में ''अद्दीन'' الدين का शब्द इस्तेमाल हुआ है जिस से मुराद असल और वास्तविक दीन है । अर्थात वह दीन जो वास्तव में अल्लाह का नाज़िल (अवतारित) किया हुआ है।

27. इल्म (ज्ञान) से मुराद सत्य और वास्तविकता का इल्म अथवा ज्ञान है और खास तौर से दीन की बुनियादी बातों का ज्ञान जिस के बाद किसी मतभेद की गुनजाइश बाक़ी नहीं रहती।

28. मतलब यह है कि अल्लाह तआला ने इन्सान की हिदायत और रहनुमाई के लिए जो दीन नाज़िल फ़रमाया वह इस्लाम है। यही दीन अल्लाह का दीन है और तमाम नबियों पर वह इसी दीन को नाज़िल फ़रमाता रहा है । उस ने कभी किसी देश और किसी युग में किसी भी नबी या रसूल पर इस्लाम के सिवा कोई और दीन नाज़िल नहीं फ़रमाया लेकिन पैग़म्बरों की उम्मतों ने उस असल और वास्तविक दीन में बिगाड़ और मतभेद उत्पन्न कर के अलग अलग धर्म ईजाद कर लिए। यह यहूदियत और ईसाईयत इसी प्रकार की उत्पत्ति में से है। इन उम्मतों ने यह बिगाड़ एवं मतभेद इस लिए नहीं किया था कि उन्हें सत्य धर्म का ज्ञान नहीं था बल्कि सत्य से भली भाँति परिचित होने के बावजूद उन्होंने मात्र अपनी इच्छा एवं स्वार्थ के लिए तथा पारस्परिक शत्रुता एवं संकीर्ण मानसिकता के वशीभूत ऐसा किया। किन्तु अल्लाह चूँ कि

न्याय, समानता एवं संतुलन को क़ायम करने वाला है इस लिए उस ने इस्लाम को फिर नये सिरे से नाज़िल फ़रमाया है ताकि लोगों पर सत्यमार्ग स्पष्ट हो । इस के बाद भी अगर इन्हों ने कुफ्र का रवैया अपनाया और अल्लाह की इन खुली एवं स्पष्ट आयतों को नहीं माना तो अल्लाह इन का हिसाब बहुत जल्द चुकाएगा।

29. उम्मी----- का शाब्दिक अर्थ है ऐसा व्यक्ति जो लिखना पढ़ना न जानता हो लेकिन परिभाषिक रूप में यह शब्द बनी इस्माईल के लिए उपनाम के तौर पर प्रयुक्त हुआ है। क्यों कि उन के पास न अल्लाह की किताब थी और न उन में प्रारम्भिक शिक्षा ही प्रचलित थी इस के विपरीत बनी इस्राईल ग्रंथवाहक (हामिले-किताब) थे उस में शिक्षा का भी प्रचलन था।

जो लोग अल्लाह की हिदायत का इन्कार करते हैं और उस के नबियों को नाहक़ क़त्ल करते हैं और उन लोगों को क़त्ल करते हैं जो समता और न्याय का न्योता देते हैं उन्हे दुखदायी यातना की शुभ सूचना दे दो।(अल-क़ुर्आन)

21. जो लोग अल्लाह की हिदायत का इन्कार करते हैं और उस के नबियों को नाहक़ क़त्ल करते हैं [30] और उन लोगों को क़त्ल करते हैं जो समता और न्याय का न्योता देते हैं उन्हे दुखदायी यातना की शुभ सूचना दे दो।

إِنَّ الَّذِينَ يَكْفُرُونَ بِآيَاتِ اللَّهِ وَيَقْتُلُونَ النَّبِيِّينَ
بِغَيْرِ حَقٍّ وَيَقْتُلُونَ الَّذِينَ يَأْمُرُونَ بِالْقِسْطِ مِنَ
النَّاسِ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ أَلِيمٍ ﴿٢١﴾

22. यही लोग हैं जिन के आमाल दुनिया और आख़िरत दोनों में अकारथ गए [31] और उन का कोई मददगार न होगा।

أُولَٰئِكَ الَّذِينَ حَبِطَتْ أَعْمَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا
وَالْآخِرَةِ وَمَا لَهُمْ مِنْ نَاصِرِينَ ﴿٢٢﴾

23. तुम ने उन लोगों के हाल पर ग़ौर नहीं किया जिन्हें अल्लाह की किताब का एक हिस्सा दिया गया [32] उन को जब अल्लाह की किताब की ओर बुलाया जाता है [33] ताकि वह उन के बीच फ़ैसला कर दे [34], तो इन में का एक गिरोह मुँह फेरता है और मुँह फेरना तो इन लोगों की नीति ही है [35]।

أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ أُوتُوا نَصِيبًا مِنَ الْكِتَابِ
يُدْعَوْنَ إِلَىٰ كِتَابِ اللَّهِ لِيَحْكُمَ بَيْنَهُمْ ثُمَّ يَتَوَلَّىٰ فَرِيقٌ
مِنْهُمْ وَهُمْ مُعْرِضُونَ ﴿٢٣﴾

24. यह इस लिए कि वे लोग कहते हैं दोज़ख़ की आग हमें छुएगी नहीं सिवाय इस के कि कुछ रोज़ के लिए सज़ा मिल जाए। उन की इन मन गढ़ंत बातों ने उन के दीन के बारे में उन को धोखे में डाल रखा है।[36]

ذَٰلِكَ بِأَنَّهُمْ قَالُوا لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ إِلَّا أَيَّامًا مَعْدُودَاتٍ وَغَرَّهُمْ
فِي دِينِهِمْ مَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿٢٤﴾

25. मगर उस दिन उन का क्या हाल होगा जब कि हम सब को जमा कर लेंगे और जिसके आने में कोई संदेह नहीं। उस रोज़ हर व्यक्ति को उस की कमाई का पूरा पूरा बदला दिया जाएगा। किसी पर भी ज़ुल्म न होगा।

فَكَيْفَ إِذَا جَمَعْنَاهُمْ لِيَوْمٍ لَا رَيْبَ فِيهِ وَوُفِّيَتْ كُلُّ نَفْسٍ
مَا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿٢٥﴾

26. कहो ऐ अल्लाह ! सत्ता के मालिक [37] तू जिसे चाहे सत्ता प्रदान करे और जिस से चाहे छीन ले, जिस को चाहे इज़्ज़त दे, जिस को चाहे ज़िल्लत दे, भलाई तेरे ही हाथ में है [38]।बेशक तू हर चीज़ पर क़ादिर (सामार्थ्य प्राप्त) है।

قُلِ اللَّهُمَّ مَالِكَ الْمُلْكِ تُؤْتِي الْمُلْكَ مَنْ تَشَاءُ وَتَنْزِعُ الْمُلْكَ
مِمَّنْ تَشَاءُ وَتُعِزُّ مَنْ تَشَاءُ وَتُذِلُّ مَنْ تَشَاءُ بِيَدِكَ الْخَيْرُ
إِنَّكَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿٢٦﴾

27. तू रात को दिन में दाख़िल (प्रविष्ट) करता है और दिन को रात में,[39] ज़िन्दा को मुर्दा से निकालता है और मुर्दा को ज़िन्दा से।[40] और तू जिस को चाहता है बेहिसाब बख़्शिशों से नवाज़ता है।

تُولِجُ اللَّيْلَ فِي النَّهَارِ وَتُولِجُ النَّهَارَ فِي اللَّيْلِ وَتُخْرِجُ الْحَيَّ
مِنَ الْمَيِّتِ وَتُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْحَيِّ وَتَرْزُقُ مَنْ تَشَاءُ
بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٢٧﴾

30. अकारण हत्या, वह भी किसी नबी की, जुर्म की संगीनी को बताने के लिए काफ़ी है। नबियों की हत्या का वर्णन बाइबिल में भी है।

''परन्तु वे तुझ से फिर कर बलवा करने वाले बन गए और तेरी व्यवस्था को त्याग दिया और तेरे जो नबी तेरी ओर उन्हें फेरने के लिए उन्हें चिताते रहे उन को उन्हों ने घात किया और तेरा बहुत तिरस्कार किया (नहेमायाह९:२६)

''हे यरूशलेम, हे यरूशलेम तू जो भविष्यद्वक्ताओं (नबियों) को मार डालता है, और जो तेरे पास भेजे गए उन्हें पत्थर वाह करता है''। (मत्ती:२३,३७)

31. अर्थात जो लोग दीनदारी के परदे में अल्लाह की हिदायत को मानने से इन्कार करें, नबियों की हत्या जैसे घृणित एवं संगीन जुर्म के अपराधी हों और उन नेक लोगों को कष्ट पहुँचाने एवं परेशान करने पर अड़ जाऐं जो सुधार का प्रयास करें और सत्य एवं न्याय की दअवत ले कर उठें। उन की यह दीनदारी अल्लाह की नज़र में कोई महत्व नहीं रखती और इन के सारे प्रयास और इन के सारे धार्मिक कृत्य बिल्कुल अकारथ जाने वाले हैं। आख़िरत में अकारथ जाना तो बिलकुल स्पष्ट है। रहा दुनिया में अकारथ जाना तो दुनिया ने देख लिया कि क़ुर्आन और उस को लाने वाले पैग़म्बर के विरोधियों का क्या अन्त हुआ।

32. किताब के एक हिस्से से मुराद तौरात, इंजील आदि आसमानी ग्रंथ हैं।

33. अल्लाह की किताब से मुराद क़ुर्आन है, तौरात आदि आसमानी ग्रंथों और क़ुर्आन में यही मेल है जैसे एक, अतिरिक्त भाग अथवा अंश हो और एक अपने आप में संपूर्ण हो।

34.फैसला उन मतभेदों एवं बिगाड़ का जो अहले-किताब ने अल्लाह के दीन के सिलसिले में पैदा किए।

35. अर्थात हक़ (सत्य) से मुँह मोड़ना कोई नई बात नहीं बल्कि यह उन के राष्ट्रीय स्वभाव की विशेषता है जिस का प्रमाण इन के इतिहास से मिलता है।

36.यह यहूदियों की मन गढ़ंत बातों की ओर इशारा है कि वे अल्लाह की किताब को आज्ञादाता मानने एवं उस को संवैधानिक हैसियत देने के लिए इस कारण तैयार नहीं हैं कि वे आख़िरत की सज़ा की तरफ से निश्चिन्त हो गए हैं और किए गए कर्मो के प्रतिफल के बारे में सही विचार उन की बुद्धि में नहीं है। यद्यपि पिछली किताबों में भी कर्मों के प्रतिफल (बदला) मिलने की वही सही तस्वीर पेश की गई थी जो क़ुर्आन पेश करता है। अर्थात इन्सान की जैसी कमाई होगी वैसा उसे बदला मिलेगा। किन्तु दीन में टीकाकारी द्वारा मनचाही बातों को सम्मिलित कर के उन्हों ने अपने को इस बात पर संतुष्ट कर लिया कि चूँकि वे विशेष धार्मिक समूह (Religious Community) से संबंध रखते हैं इस लिए आखिरत में उन का बेड़ापार है। इस निश्चिन्तिता एवं संतुष्टि ने उन को बुरी तरह कर्म हीन बना कर रख दिया है।

इस आईने में आज के मुसलमान भी अपना चेहरा देख सकते हैं। उन की भी एक बड़ी संख्या इसी भ्रम में लिप्त है कि आखिरत की सफलता एवं मुक्ति की इस ग़लत विचार धारा ने उन्हें वास्तविक ईमान और अच्छे कर्मों से ग़ाफिल कर दिया है। और गुमराही के रास्ते पर चल कर दीन में नई नई बातों को शामिल एवं दूसरे बुरे कर्मों में ऐसे डूब गए हैं कि दीनी बातों में क़ुर्आन को निर्णायक हैसियत देने को व्यवहारिक रूप से तैयार नहीं हैं।

37. यह है सत्ता की हैसियत जिस को यहाँ दुआ के अन्दाज़ में पेश किया गया है। हर तरह के इख़्तियारात, हर तरह के शासनधिकार तथा हर तरह की सत्ता का मालिक अकेला अल्लाह है। इस में उस का कोई शरीक और साझीदार नहीं। दुनिया में जिस को भी हुकूमत मिलती है उसी के प्रदान करने से मिलती है और जिस के शासन की समाप्ति होती है उसी के छीन लेने से होती है। वह अपनी नीति (हिकमत) के अनुसार व्यक्तियों एवं समूहों को सत्ता प्रदान करता और उस से वंचित करता रहता है। अत: जिस के पास सत्ता के ख़ज़ाने हैं और जिन के हाथ में इज़्ज़त, मान सम्मान एवं प्रतिष्ठा है उसी को सर्वशक्तिमान, प्रभुत्वशाली एवं सर्वोच्च सत्ताधिकारी मानना चाहिए और उसी से लौ लगाना चाहिए।

अल्लाह के मालिकुल मुल्क------(राज्य एवं सत्ता के मालिक) होने से यह बात अनिवार्य ठहरती है कि इन्सान हर तरह की सांसारिक शक्ति एवं सत्ता को चाहे वह बादशाहत (Kingdomism) के रूप में हो या जम्हूरियत (Democracy) के रूप में या किसी और रूप में, अल्लाह की बख्शी हुई अमानत समझे और इस को उस के बताए हुए नियमानुसार इस्तेमाल करे। सत्ता का यह क़ुर्आनी सिद्धान्त बादशाह परस्ती (Kingworship) को भी, अवैध ठहराता है और बादशाह के ईश्वरीय अधिकार (Divine right) को भी। साथ ही जम्हुरियत के उस दावे की भी, कि उस का शासन स्वतन्त्र एवं निरंकुश है और ख़ुदा से उसे सरोकार नहीं।

38. इस का एक मतलब यह है कि भलाई सिर्फ अल्लाह के हाथ में है और दूसरा मतलब यह है कि अल्लाह के हाथ में भलाई ही भलाई है और वह भलाई एवं सम्पन्नता का स्रोत है।

39. अर्थात रात और दिन का निरंतर आना जाना और उन के समय में कमी बेशी अल्लाह तआला ही का कारनामा है और इस में किसी का रत्ती बराबर दख़ल नहीं। इस से रात और दिन के अलग अलग ख़ुदा होने ----(Night Diety or Day Diety) की बहुदेववादी धारणा का खण्डन होता है।

40. जैसे इन्सान को बेजान पदार्थ (मिट्टी) से पैदा किया और फिर यही इन्सान मर कर मिट्टी (बेजान पदार्थ) हो जाता है। इसी तरह वह बेजान पदार्थों में से जानदार को पैदा करता है और जानदार शरीर से बेजान पदार्थों को निष्कासित (ख़ारिज) करता है।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀

ईमान वाले, मोमिनों को छोड़ कर काफ़िरों (विधर्मियों) को अपना दोस्त न बनालें ।जो ऐसा करेगा उस का अल्लाह से कोई सम्बन्ध नहीं सिवाय इस के कि तुम किसी अन्देशे (आशंका) के तहत उन से बचने की कोई सूरत अपना लो। मगर अल्लाह तुम्हें अपने अस्तित्व से डराता है और उस की तरफ़ तुम्हें लौट कर जाना है।(अल-क़ुर्आन)

28. ईमान वाले, मोमिनों को छोड़ कर काफ़िरों (विधर्मियों) को अपना दोस्त न बनालें [41]।जो ऐसा करेगा उस का अल्लाह से कोई सम्बन्ध नहीं सिवाय इस के कि तुम किसी अन्देशे (आशंका) के तहत उन से बचने की कोई सूरत अपना लो [42]। मगर अल्लाह तुम्हें अपने अस्तित्व से डराता है और उस की तरफ़ तुम्हें लौट कर जाना है।

لَا يَتَّخِذِ الْمُؤْمِنُوْنَ الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَآءَ
مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ۚ وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ فَلَيْسَ مِنَ
اللّٰهِ فِيْ شَيْءٍ اِلَّآ اَنْ تَتَّقُوْا مِنْهُمْ تُقٰىةً ۗ وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ
نَفْسَهٗ ۗ وَاِلَى اللّٰهِ الْمَصِيْرُ ﴿٢٨﴾

29. कहो ! जो कुछ तुम्हारे दिलों में है उस को छिपाओ या जाहिर करो अल्लाह उस को जानता ही है। और वह जानता है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है। अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर (सामर्थ्य प्राप्त) है।

قُلْ اِنْ تُخْفُوْا مَا فِيْ صُدُوْرِكُمْ اَوْ تُبْدُوْهُ يَعْلَمْهُ اللّٰهُ ۗ
وَيَعْلَمُ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۗ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ
شَيْءٍ قَدِيْرٌ ﴿٢٩﴾

30 जिस दिन हर व्यक्ति अपने अच्छे और बुरे कर्मों को अपने सामने मौजूद पाएगा उस समय वह यह तमन्ना (कामना) करेगा कि काश उस के और इस दिन के बीच लम्बी मुद्दत की आड़ होती। अल्लाह तुम्हें अपने अस्तित्व से डराता है और अल्लाह अपने बन्दों के हक़ में बेहद शफ़ीक़ (मेरहबान) है ।[43]

يَوْمَ تَجِدُ كُلُّ نَفْسٍ مَّا عَمِلَتْ مِنْ خَيْرٍ مُّحْضَرًا ۛ وَّمَا عَمِلَتْ مِنْ
سُوْٓءٍ ۛ تَوَدُّ لَوْ اَنَّ بَيْنَهَا وَبَيْنَهٗٓ اَمَدًۢا بَعِيْدًا ۗ وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ
نَفْسَهٗ ۗ وَاللّٰهُ رَءُوْفٌۢ بِالْعِبَادِ ﴿٣٠﴾

31. कहो अगर तुम अल्लाह से मुहब्बत रखते हो तो मेरी पैरवी करो [44]। अल्लाह तुम से मुहब्बत करेगा और तुम्हारे गुनाहों को क्षमा कर देगा। अल्लाह अत्यन्त क्षमाशील और दयावान है।

قُلْ اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّوْنَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُوْنِيْ يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ وَيَغْفِرْ لَكُمْ
ذُنُوْبَكُمْ ۗ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٣١﴾

32. कहो !अल्लाह और रसूल का आज्ञापालन करो, अगर वे नहीं मानते तो जान लें कि अल्लाह काफिरों से मुहब्बत नहीं करता।

قُلْ اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ ۚ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّ اللّٰهَ
لَا يُحِبُّ الْكٰفِرِيْنَ ﴿٣٢﴾

33. अल्लाह ने [45] आदम, नूह, आले-इब्राहीम,और आले इमरान (इमरान के कुटुम्ब) को तमाम दुनिया वालों पर प्रधानता दे कर चुन लिया था।[46]

اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰىٓ اٰدَمَ وَنُوْحًا وَّاٰلَ اِبْرٰهِيْمَ وَاٰلَ عِمْرٰنَ عَلَى
الْعٰلَمِيْنَ ﴿٣٣﴾

34. यह एक दूसरे की नस्ल से थे और अल्लाह सब कुछ सुनता और जानता है।[47]

ذُرِّيَّةًۢ بَعْضُهَا مِنْۢ بَعْضٍ ۗ وَاللّٰهُ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ﴿٣٤﴾

35. और (वह घटना भी उल्लेखनीय है) जब कि इमरान की बीवी ने दुआ की ‘‘ऐ मेरे रब ! मैं इस बच्चे को जो मेरे पेट में है तेरे लिए भेंट अर्पण करती हूँ कि वह तेरी इबादत के लिए समर्पित होगा [48]। इसे मेरी ओर से स्वीकार कर। निस्संदेह तू सुनने वाला और जानने वाला है।

اِذْ قَالَتِ امْرَاَتُ عِمْرٰنَ رَبِّ اِنِّيْ نَذَرْتُ لَكَ مَا فِيْ بَطْنِيْ
مُحَرَّرًا فَتَقَبَّلْ مِنِّيْ ۚ اِنَّكَ اَنْتَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ﴿٣٥﴾

41. ईमान के सम्बन्ध को सारे सम्बन्धो पर वरीयता प्राप्त है अत: ईमान वालों का यह काम नहीं कि ख़ुदा के दुशमनों को अपना दोस्त बनाऐं बल्कि वे अपना दोस्त उन ही लोगों को बना सकते हैं जो अल्लाह को अपना दोस्त रखते हों । स्पष्ट रहे कि इस हिदायत का मंशा मनुष्यों के साधारण सम्बन्धों को नकारना नहीं है और न क़ुर्आन ग़ैर हरबी काफिरों के अर्थात इस्लाम और मुसलमानों के विरूद्ध युद्ध ठान रखने वाले काफिरों के मानवधिकार स्वीकार करने और अदा करने तथा उन के साथ न्याय और समानता का व्यवहार करने से रोकता है। यह बातें क़ुर्आन में दूसरी जगहों पर स्पष्ट रूप से बयान हुई हैं मिसाल के तौर पर निम्न आयतें देखिए:

وَقُولُوا لِلنَّاسِ حُسْناً (البقرة:٨٣)

'' लोगों से भली बातें कहो''(अलबक़र:८३)

وَلاَ يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰى اَلاَّ

تَعْدِلُوْا اِعْدِلُوْا هُوَ اَقْرَبُ لِلتَّقْوٰى ـ(مائدہ۔٨)

''किसी गिरोह की दुशमनी तुम्हें इस बात पर आमादा न करे कि उस के साथ इन्साफ़ न करो, इन्साफ़ करो कि यह तक़वा (ईश भय) से ज़्यादा क़रीब है।''(माइदा :८)

وَصَاحِبْهُمَا فِى الدُّنْيَا مَعْرُوْفًا (لقمان۔١٥)

''(माता पिता यदि मुश्रिक अर्थात बहुदेववादी भी हों तो) दुनिया में तुम उन के साथ अच्छा व्यवहार करो।'' (लुक़्मान:१५)

وَالْجَارِ ذِى الْقُرْبٰى وَالْجَارِ الْجُنُبِ

وَالصَّاحِبِ بِالْجَنْبِ وَ ابْنِ السَّبِيْلِ ـ(نساء۔٣٦)

''और सम्बन्धी पड़ोसियों, अजनबी पड़ोसियों, साथ रहने वाले दोस्त और मुसाफ़िर के साथ अच्छा बर्ताव करो''।(निसा:३६)

لاَ يَنْهٰكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذِيْنَ لَمْ يُقَاتِلُوْكُمْ فِى الدِّيْنِ وَلَمْ

يُخْرِجُوْكُمْ مِنْ دِيَارِكُمْ اَنْ تَبَرُّوْهُمْ وَتُقْسِطُوْا اِلَيْهِمْ ـ(الممتحنہ۔٨)

''अल्लाह तुम्हें उन लोगों के साथ अच्छा बर्ताव करने और ईन्साफ़ का बर्ताव करने से नहीं रोकता। जिन्हों ने दीन के मामले में तुम से जंग नहीं की और तुम्हें तुम्हारे घरों से नहीं निकाला ''।(अल-मुम्तहिन:८)

42.अर्थात अगर कहीं ईमान वाले काफ़िरों के घेरे में फँस जाऐं और वे अपनी सुरक्षा की कोई ऐसी सूरत अपनाऐं जिस से काफिरों के साथ दोसती प्रकट होती हो तो इस में कोई हर्ज नहीं लेकिन ताकीद की गई है कि इस हाल में भी अल्लाह से डरना चाहिए और अपनी ज़ात को बचाने की ख़ातिर कोई ऐसा काम नहीं करना चाहिए जो दीन एवं मिल्लत को हानि पहुँचाने वाला हो या जुल्म और ज़्यादती पर आधारित हो, जैसे राज़ की बातों से दुश्मन को आगाह करना। इस्लाम और मुसलमानों के ख़िलाफ साज़िश करना, नाहक़ मरना, मारना इत्यादि।

43. शफ़ीक़ (मेहरबान) में क्षति एवं हानि से सुरक्षित रखने का पक्ष हावी है। अल्लाह मेहरबान है इस लिए उस ने अपने बन्दों को अज़ाब (प्रकोप एवं यात्ना) की तरफ़ ले जाने वाली बातों से आगाह कर दिया है ताकि वे उस बदतरीन अज़ाब से बचें।

44. इस आयत से स्पष्ट होता है कि अल्लाह की मुहब्बत का ज़बानी दावा, निजात (सफलता एवं मुक्ति) के लिए काफी नहीं बल्कि उस की मुहब्बत का सबूत अपने कर्म से देना चाहिए जिस को इस तरह से प्रमाणित किया जा सकता है कि उस के रसूल हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की पैरवी इख़्तियार की जाए। इस आयत के द्वारा सभी धर्म के अनुयायियों और तमाम इन्सानों को आख़िरी नबी की पैरवी इख़्तियार करने की दअ्वत दी गई है और साफ़ साफ़ एलान कर दिया गया है कि इस के बग़ैर अल्लाह से मुहब्बत का संबंध स्थापित नहीं हो सकता।

इस आयत में उन मुसलमानों के लिए भी सबक़ है जो अल्लाह की मुहब्बत का दम भरते हैं किन्तु व्यवहार से रसूल की पैरवी से कन्नी काटते हैं।

45.यहाँ से जो विषय आरंभ होता है वह आयत नं.६३ तक चलता है। इस का केन्द्र बिन्दु ईसा अलैहिस्सलाम के व्यक्तित्व को असली रूप रेखा के साथ प्रस्तुत करना और यह स्पष्ट करना है कि ईसाईयों ने उन के बारे में ईश्वरत्व (उलूहियत) की जो आस्था एवं धारणा बना और अपना रखी है वह सरासर ग़लत और बिल्कुल व्यर्थ है।

इस सिलसिले में भूमिका के तौर पर हज़रत आदम, हज़रत नूह, आले-इब्राहीम और आले इमरान का वर्णन हुआ है जिन को अल्लाह तआला ने उत्कृष्ट एवं श्रेष्ठता के आधार पर चुन लिया था। ये सब इन्सान थे। इन में से कोई भी न खुदा था और न उस का बेटा। हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम इन उत्कृष्ट, श्रेष्ठ एवं चुने हुए बन्दों की तरह अल्लाह के चुनिन्दा (Selected) बन्दे थे फिर उन को ख़ुदा का दर्जा देने का क्या मतलब?

46. इमरान बीन मातान हज़रत मरयम के पिता का नाम था जो हज़रत ईसा अलैहिस्सालाम के नाना हैं।यह हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम की नस्ल से थे। इस से यहाँ यह स्पष्ट करना अभिप्रत है कि हज़रत मरयम और हज़रत ईसा

अलैहिस्सलाम अत्याधिक प्रसिद्ध और शरीफ़ ख़ानदान से सम्बन्धित हैं। ये दोनो इन्सान ही थे जिन्हें अल्लाह तआला ने श्रेष्ठता प्रदान की और उन का चयन किया अत: जिस तरह उनकी पाकिज़गी पर शक करना सही नहीं उसी तरह उन को ख़ुदा की श्रेणी में रखना भी सही नहीं।

47. यह इस बात की तरफ इशारा है कि अगर तुम कोई अभद्र एवं अनुचित बात ऐसे उत्कृष्ट सज्जनों के व्यक्तित्व से जोड़ते हो तो अच्छी तरह समझ लो कि अल्लाह इन बातों को सुन रहा है और तुम्हारे झूठ गढ़ने को भी जानता है।

48. इमरान की बीवी (हन्ना) जब गर्भवती हुईं तो इमरान का इन्तिक़ाल (देहान्त) हो गया। हन्ना ने यह मन्नत मानी कि जो बच्चा पैदा होगा वह अल्लाह के लिए समर्पित होगा अर्थात वह उपासना (इबादत) के लिए विशिष्ट होगा और इस का नियम बनी इस्राईल के यहाँ यह था कि वह हैकल से संलग्न मेहराब (हुजरे) में मुअ्तकिफ़ (Assiduous in Prayer या परिश्रम मे लीन) हो जाए।

इस मौक़े पर ज़करिया ने अपने रब को पुकारा, प्रार्थना की कि ऐ मेरे परवरदिगार ! मुझे खास अपने पास से अच्छी औलाद प्रदान कर। बेशक तू दुआ सुनने वाला है।(अल-क़ुर्आन)

36. फिर जब उस के यहाँ लड़की पैदा हुई तो कहने लगी, मेरे रब ! मेरे यहाँ तो लड़की पैदा हो गई है, और जो कुछ उस ने जना था वह अल्लाह को अच्छी तरह मालूम था [49]। और लड़का लड़की की तरह तो नहीं होता [50]। और मैं ने उस का नाम मरयम रखा है और मैं उस को और उसकी औलाद को शैतान-रजीम (तिरस्कृत एवं मरदूद) से तेरी पनाह में देती हूँ।

فَلَمَّا وَضَعَتْهَا قَالَتْ رَبِّ إِنِّي وَضَعْتُهَا أُنثَىٰ وَاللَّهُ أَعْلَمُ
بِمَا وَضَعَتْ وَلَيْسَ الذَّكَرُ كَالْأُنثَىٰ وَإِنِّي سَمَّيْتُهَا مَرْيَمَ
وَإِنِّي أُعِيذُهَا بِكَ وَذُرِّيَّتَهَا مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ ﴿٣٦﴾

37. तो उस के रब ने उसे सहर्ष स्वीकार कर लिया, उम्दा तरीक़े पर उस को परवान चढ़ाया और ज़करिया को उस का कफ़ील (पोषक) बनाया [51]।जब कभी ज़करिया उस के पास मेहराब (इबादत के हुजरे) में जाता [52] तो उस के पास रिज़्क (जीविका) पाता। पूछा ऐ मरयम यह तुम्हारे पास कहाँ से आता है ? उस ने जवाब दिया,यह अल्लाह के पास से है [53]।अल्लाह जिसे चाहता है बेहिसाब देता है।

فَتَقَبَّلَهَا رَبُّهَا بِقَبُولٍ حَسَنٍ وَأَنبَتَهَا نَبَاتًا حَسَنًا وَكَفَّلَهَا
زَكَرِيَّا كُلَّمَا دَخَلَ عَلَيْهَا زَكَرِيَّا الْمِحْرَابَ وَجَدَ عِندَهَا
رِزْقًا قَالَ يَا مَرْيَمُ أَنَّىٰ لَكِ هَٰذَا قَالَتْ هُوَ مِنْ عِندِ اللَّهِ
إِنَّ اللَّهَ يَرْزُقُ مَن يَشَاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٣٧﴾

38. इस मौक़े पर ज़करिया ने अपने रब को पुकारा,[54] प्रार्थना की कि ऐ मेरे परवरदिगार! मुझे खास अपने पास से अच्छी औलाद प्रदान कर। बेशक तू दुआ सुनने वाला है।

هُنَالِكَ دَعَا زَكَرِيَّا رَبَّهُ قَالَ رَبِّ هَبْ لِي مِن لَّدُنكَ ذُرِّيَّةً
طَيِّبَةً إِنَّكَ سَمِيعُ الدُّعَاءِ ﴿٣٨﴾

39. फरिशतों ने उसे पुकारा जब कि वह मेहराब में खड़ा नमाज़ पढ़ रहा था,''अल्लाह तुझे यह्या की ख़ुशखबरी देता है [55] जो अल्लाह के एक कलिमा की [56] पुष्टि करने वाला होगा [57] सरदार होगा।[58] ज़ब्ते नफ़्स (आत्म संयम) से बेपनाह काम लेने वाला होगा। और नबी होगा। सदाचारी (स्वलिहीन) लोगों के समूह में से।

فَنَادَتْهُ الْمَلَائِكَةُ وَهُوَ قَائِمٌ يُصَلِّي فِي الْمِحْرَابِ
أَنَّ اللَّهَ يُبَشِّرُكَ بِيَحْيَىٰ مُصَدِّقًا بِكَلِمَةٍ مِّنَ اللَّهِ وَسَيِّدًا
وَحَصُورًا وَنَبِيًّا مِّنَ الصَّالِحِينَ ﴿٣٩﴾

40. उस ने कहा ऐ मेरे रब मेरे यहाँ लड़का किस तरह होगा जब कि मैं बूढ़ा हो चुका हुँ और मेरी बीवी बाँझ है ?[59] फ़रमाया इसी तरह अल्लाह जो चाहता है करता है [60]।

قَالَ رَبِّ أَنَّىٰ يَكُونُ لِي غُلَامٌ وَقَدْ بَلَغَنِيَ الْكِبَرُ وَامْرَأَتِي
عَاقِرٌ قَالَ كَذَٰلِكَ اللَّهُ يَفْعَلُ مَا يَشَاءُ ﴿٤٠﴾

41. अर्ज़ किया, मेरे रब मेरे लिए कोई निशानी मुक़र्रर कर। फ़र्माया तुम्हारे लिए निशानी यह है कि तुम तीन दिन तक लोंगों से इशारे के सिवा बात न कर सकोगे और अपने रब को खूब याद करो और सुबह एवं शाम उस की तसबीह करते रहो।[61]

قَالَ رَبِّ اجْعَل لِّي آيَةً قَالَ آيَتُكَ أَلَّا تُكَلِّمَ النَّاسَ
ثَلَاثَةَ أَيَّامٍ إِلَّا رَمْزًا وَاذْكُر رَّبَّكَ كَثِيرًا وَسَبِّحْ
بِالْعَشِيِّ وَالْإِبْكَارِ ﴿٤١﴾

49.यह व्यवहित वाक्य (जुमला-ए-मुअतरिज़ा) है। हज़रत मरयम के बयान को काटते हुए यह बात अल्लाह तआला ने फ़रमाई जिस का मतलब यह है कि अल्लाह तआला तो इस बात को भली भाँति जानता था कि लड़की किस शान की पैदा हुई है और इमरान के घर कैसी महान हस्ती ने जन्म लिया है।

50. हन्ना समझे बैठी थी कि लड़का पैदा होगा लेकिन जब लड़की पैदा हुई तो वह दुविधा में पड़ गई कि जिस मक़सद के लिए उन्होंने नज़्र मानी है उस के लिए लड़की किस तरह उचित ठहरेगी? अलबत्ता अगर इसे अल्लाह तआला स्वीकार कर ले तो उस का बड़ा एहसान होगा।

हज़रत हन्ना ने "और लड़का लड़की की तरह तो नहीं होता"कहा, यह नहीं कहा कि "और लड़की लड़के की तरह नहीं होती"जब कि पैदा लड़की हुई थी इस लिए इस ढंग से कहने में नाशुक्री का पहलू निकल सकता था जो दुआ के आदाब के ख़िलाफ़ है, अत: उन्होंने अल्लाह की दी हुई नेमत का पूरा सम्मान करते हुए सिर्फ अपने संकोच एवं दुविधा को जाहिर किया।

51. हज़रत मरयम यतीम थीं और उन्हें इबादतगाह में मुअ्तकिफ़ भी होना था इस लिए उन के भरण पोषण की समस्या उत्पन्न हो गई थी। अल्लाह ने हज़रत ज़करिया अलैहिस्सलाम को जो पैग़म्बर हैं और हज़रत मरयम के ख़ालू (मौसा) होते हैं उन का संरक्षक बनाया।

52. मेहराब से मुराद वह हुजरा अथवा कोठरी है जिस में हज़रत मरयम इबादत में लीन अर्थात मुअ्तकिफ़ थीं।

बैतुलमुक़द्दस में इस तरह के हुजरे इबादत में लीन रहने वालों के लिए बने हुए थे।

53.हज़रत मरयम अल्लाह की विशिष्ट चुनिन्दा बन्दी थी उन के लिए अल्लाह तआला ने रिज़्क (जीविका) का असाधारण प्रबन्ध किया था। और इस प्रकार का असाधारण प्रबन्ध करना अल्लाह तआला की सामर्थ्य शक्ति के लिए अत्यन्त साधारण सी बात है।

54. हज़रत ज़करिया हज़रत मरयम के संरक्षक एवं पोषक थे इस लिए उन की देख भाल के लिए उन के पास जाया करते थे। वह हज़रत मरयम अलैहिस्सलाम की कमसिनी में इबादत गुज़ारी और उन की सदाचारिता एवं सुचरित्रता से अत्याधिक प्रभावित थे और अल्लाह तआला उन्हें असाधारण तरीक़े से जो जीविका (रिज़्क) प्रदान कर रहा था उसे देख कर उन के दिल में नेक औलाद की तमन्ना पैदा हो गई।

55.बाइबिल में यह्या का नाम यूहन्ना आया है इन का जन्म हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम से ६ माह पूर्व हुआ था।

56. कलिमतिम्मिनल्लाह كَلِمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ अल्लाह का एक कलिमा (A word from Allah) से मुराद हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम हैं। इन का जन्म चूँकि बग़ैर बाप के अल्लाह तआला के कलिमा "कुन كُنْ "(हो जा) से हुआ था इस लिए उन को "अल्लाह का कलिमा" के लक़ब (उपनाम) से नवाज़ा गया। एक कलिमे से यह बात भी स्पष्ट हो जाती है कि अल्लाह तआला के अनगिनत कलिमों में से हज़रत ईसा भी एक कलिमा हैं और जिस तरह से अनगिनत मख़्लूक़ अल्लाह के कलिमा 'कुन' से अस्तित्व में आई हैं उसी तरह हज़रत ईसा की भी उत्पत्ति हुई। इस से ईसाईयों द्वारा हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को ख़ुदा समझने की धारणा का खण्डन होता है।

57. हज़रत यह्या अलैहिस्सलाम का हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की पुष्टि करने का वर्णन इंजील में भी मौजूद है:-

"यूहन्ना ने उस के विषय में गवाही दी और पुकार कर कहा कि यह वही है जिस का मैं ने वर्णन किया कि जो मेरे बाद आ रहा है वह मुझ से बढ़ कर है क्यों कि वह मुझ से पहिले था।" (यूहन्ना १:१५)।

58. अर्थात हज़रत यह्या अलैहिस्सलाम में सरदारी और नेतृत्व की शान होगी। वह संयासी नहीं होंगे बल्कि मार्गदर्शक (रहनुमा) और नेतृत्व करने वाले होंगे।

59. यह सवाल इन्कार करने के लिए नहीं बल्कि जिज्ञासा दर्शाने के लिए था कि इस की शक्ल क्या होगी।

60. अर्थात तुम्हारे बूढ़े होने और तुम्हारी बीवी के बाँझ होने के बावजूद बच्चा पैदा होगा क्यों कि असल चीज़ अल्लाह का निश्चय है। वह जब किसी चीज़ का इरादा कर ले तो कोई चीज़ और कोई कारण रोड़ा नहीं बन सकते क्यों कि हर वस्तु पर उसी का राज स्थापित है।

हज़रत यह्या के जन्म की यह घटना यहाँ हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के जन्म की घटना की भूमिका के तौर पर बयान हुई है जिस से यह स्पष्ट करना अभिप्रेत है कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की पैदाइश बग़ैर बाप के हई थी तो हज़रत यह्या की पैदाइश भी बाप के बूढ़े और माँ के बाँझ होने के बावजूद हुई। अगर इस असाधारण घटना ने हज़रत यह्या को ख़ुदा होने का दर्जा नहीं दिया तो हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के असाधारण रूप से जन्मे जाने के अधार पर इन्हें क्यों ख़ुदा होने का दर्जा दिया जाए? वास्तविकता यह है कि अल्लाह तआला अपने संपूर्ण सामर्थ्य को दर्शाने के लिए संसार (जहाँ कोई काम बेतुक का नहीं होता) में अपने जलवे दिखाता रहता है तथा असाधारण और अविश्वसनीय एवं क़ुदरती क़ायदों से भिन्न घटनाओं को प्रकट करता रहता है। इस से एकेश्वरवाद की धारणा उभरती है किन्तु भटके हुए

लोग इस को भी शिर्क का साधन बना लेते हैं।

61. अर्थात तीन दिन और तीन रात बात नहीं कर सकोगे। अलबत्ता अल्लाह का ज़िक्र और उस की तस्बीह (चर्चा और गुणगान) कर सकोगे ज़बान का लोगों से बात करने के लिए न खुलना और अल्लाह के ज़ीक्र और उस की तस्बीह के लिए खुल जाना तौहीद (एकेश्वरवाद) की खुली निशानी और किसी असाधारण घटना के घटित होने का स्पष्ट चिन्ह था।

इसे ग़ूँगेपन की उपमा नहीं दी जा सकती क्योंकि गूंगेपन में जबान नहीं खुलती जब कि हज़रत ज़करिया की ज़बान अल्लाह के कलिमे को पढ़ने और उस का गुणगान करने के लिए खुल रही थी।

और जब फ़रिश्तों ने कहा ऐ मरयम! अल्लाह ने तुझे चुन लिया, तुझे पाकिज़गी प्रदान की और तुझे दुनिया की औरतों के मुक़ाबलें में चुना।(अल-क़ुर्आन)

42. और जब फ़रिश्तों ने कहा ऐ मरयम ! अल्लाह ने तुझे चुन लिया, तुझे पाकिज़गी प्रदान की और तुझे दुनिया की औरतों के मुक़ाबलें में चुना [62]।

وَإِذْ قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ يٰمَرْيَمُ إِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰكِ
وَطَهَّرَكِ وَاصْطَفٰكِ عَلٰى نِسَآءِ الْعٰلَمِيْنَ ﴿٤٢﴾

43. ऐ मरयम ! अपने रब की आज्ञा का पालन सच्चे दिल से कर (उस के लिए) सजदा किया कर, और रूकू करने (झुक जाने) वालों के साथ रूकू करती रह [63]।

يٰمَرْيَمُ اقْنُتِيْ لِرَبِّكِ وَاسْجُدِيْ وَارْكَعِيْ مَعَ الرّٰكِعِيْنَ ﴿٤٣﴾

44. ये ग़ैब (परोक्ष) की ख़बरें हैं जिन की वह्य हम तुम पर कर रहें हैं।[64] वर्ना तुम उन के पास उस समय मौजूद नहीं थे जब कि वह यह बात तय करने के लिए कि मरयम का कफ़ील (पोषक) कौन हो, अपने अपने क़लम फ़ेंक कर चिट्ठी डाल (क़ुरा अन्दाज़ी कर) रहे थे [65] और न तुम उस समय उन के पास मौजूद थे जब वे आपस में झगड़ रहे थे।

ذٰلِكَ مِنْ أَنْۢبَآءِ الْغَيْبِ نُوْحِيْهِ إِلَيْكَ ۚ وَمَا كُنْتَ لَدَيْهِمْ
إِذْ يُلْقُوْنَ أَقْلَامَهُمْ أَيُّهُمْ يَكْفُلُ مَرْيَمَ ۠ وَمَا كُنْتَ
لَدَيْهِمْ إِذْ يَخْتَصِمُوْنَ ﴿٤٤﴾

45. और जब फ़रिश्तों ने कहा ऐ मरयम अल्लाह तुम्हें अपनी तरफ़ से एक कलिमे की ख़ुशख़बरी देता है जिस का नाम मसीह ईसा बिन मरयम होगा [66]। वह दुनिया और आख़िरत दोनों में प्रतिष्ठित होगा [67] और अल्लाह के मुक़र्रबीन (निकटवर्तियों) में से होगा।

إِذْ قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ يٰمَرْيَمُ إِنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكِ بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ ۖ اسْمُهُ
الْمَسِيْحُ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ وَجِيْهًا فِي الدُّنْيَا
وَالْاٰخِرَةِ وَمِنَ الْمُقَرَّبِيْنَ ﴿٤٥﴾

46. वह लोगों से पालने में भी बात करेगा [68] और बड़ी उम्र में भी । [69] और स्वालिहीन (नेक लोगों) में से होगा।[70]

وَيُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَكَهْلًا وَّمِنَ الصّٰلِحِيْنَ ﴿٤٦﴾

47. बोली !ऐ मेरे परवादिगार मेरे किस तरह लड़का हो गा जब कि किसी मर्द ने मुझे हाथ तक नहीं लगाया ? फ़रमाया ! इसी तरह अल्लाह जो चाहता है पैदा करता है। वह जब किसी काम के करने का फैसला कर लेता है तो फ़रमाता है हो जा, और वह हो जाता है।

قَالَتْ رَبِّ أَنّٰى يَكُوْنُ لِيْ وَلَدٌ وَّلَمْ يَمْسَسْنِيْ بَشَرٌ ۭ قَالَ
كَذٰلِكِ اللّٰهُ يَخْلُقُ مَا يَشَآءُ ۭ إِذَا قَضٰٓى أَمْرًا فَإِنَّمَا يَقُوْلُ
لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ ﴿٤٧﴾

48. और अल्लाह उस को किताब और हिकमत की तालीम देगा [71] और उसे तौरात और इंजील सिखाएगा।

وَيُعَلِّمُهُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَالتَّوْرٰىةَ وَالْإِنْجِيْلَ ﴿٤٨﴾

62. हज़रत मरयम को अल्लाह तआला ने अपनी एक महानतम निशानी को दर्शाने के लिए चुन लिया था और इस निर्वाचन में उन्हें दुनिया की तमाम औरतों पर प्रधानता दी थी। यह बहुत बड़ा गौरव है जो हज़रत मरयम को प्राप्त हुआ।

63. इशारा है जमाअत के साथ नमाज़ अदा करने की तरफ़। हज़रत मरयम चूँ कि हैकल में मुअ्तकिफ़ (Assiduous in Prayer) थीं इस लिए उन्हें जमाअत की नमाज़ों का सौभाग्य प्राप्त करने की भी हिदायत दी गई।

64. संबोधन नबी सल्लल्लाहुअलैहि वसल्लम से है। ऊपर जो सच्ची बातें बयान की गईं उन के बारे में फ़रमाया ये ग़ैब की ख़बरें हैं। इस लिए कि जिस समय ये घटनाऐं घटी हैं नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम उस मौक़े पर मौजूद नहीं थे और न ये घटनाऐं इस विस्तार के साथ तौरात और इंजील ही में मौजूद हैं । ऐसी सूरत में इन घटनाओं को ऐसे सत्य एवं प्रमाणित तथ्यों समेत प्रस्तुत करना इस बात की खुली दलील है कि तुम ख़ुदा के पैग़म्बर हो।

65. समान अधिकार होने की सूरत में समस्या एवं झगड़े के समाधान के लिए क़ुर्आ अंदाज़ी (चिट्ठी डालने) का तरीक़ा अपनाना जायज़ है। उस समय क़ुर्आ अंदाज़ी का तरीक़ा यह था कि अपने अपने क़लम दरया में फ़ेंक दिए जाते और जिस का क़लम दरया के बहाव के ख़िलाफ़ वापस आ जाता उस के नाम का क़ुर्आ निकल आता।

66. मसीह हज़रत ईसा का लक़ब है और ईसा बिन मरयम के नाम की पुष्टि इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करती है कि ईसा बिन बाप के पैदा हुए थे । इस लिए उन को उन की माता हज़रत मरयम से संबंधित किया गया। वर्ना साधारण क़ायदा यही है कि औलाद को बाप के नाम से सम्बन्धित किया जाता है। क़ुर्आन में जिन नबियों का भी ज़िक्र हुआ है उन के नाम के साथ उन की वल्दियत नहीं बयान की गई है लेकिन हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के नाम के साथ आम तौर पर इब्ने मरयम (पुत्र मरयम) का उल्लेख कर दिया गया है। इस से जहाँ हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के बग़ैर बाप के पैदा होने का सबूत मिलता है वहीं इस से उन के ख़ुदा के बेटे न होने का भी प्रमाण मिलता है। नाम की तरकीब स्पष्ट करती है कि वह हज़रत मरयम के बेटे थे न कि ख़ुदा के।

67. अर्थात यद्यपि हज़रत मसीह बग़ैर बाप के पैदा होंगे किन्तु उन की इज़्ज़त पर आँच नहीं आ सकेगी। वह दुनिया और आख़िरत दोनों जगह प्रतिष्ठित और सम्मानित होंगे।

68. हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का पालने में बात करना अल्लाह तआला की तरफ़ से एक महानतम निशानी का दर्शाना था ताकि हज़रत मरयम की पवित्रता और हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के प्रतिष्ठित होने और साथ ही असाधारण विशेषताओं से सम्मानित होने का प्रदर्शन हो ।

69. अधेड़ उम्र में बात करने का ज़िक्र इस लिहाज़ से किया गया है कि हज़रत मरयम के लिए खुशखबरी हो कि बच्चा बड़ी उम्र को पहुँचने वाला है।

70. अर्थात वह इन तमाम विशेषताओं के बावजूद ख़ुदा नहीं होगा बल्कि ख़ुदा के नेक बन्दों में से होगा।

71. किताब से ख़ास तौर पर शरीअत और हिकमत से दीन की रूह मुराद है। शरीअत तौरात की विशेषता है और हिकमत इंजील की। हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम की शरीअत के अनुयायी थे। वह कोई नई शरीअत ले कर नहीं आये थे अलबत्ता उन्हों ने दीन की रूह को बड़े प्रभावपूर्ण ढंग से पेश किया जब कि बनी इस्राईल ने इसे मात्र रीति रिवाजों का एक संग्रह बना कर रख दिया था।

49. और उस को बनी इस्राईल की तरफ़ रसूल बना कर भेजेगा [72]।और जब वह उन के पास आया तो उस ने कहा कि मैं तुम्हारे रब की तरफ़ से तुम्हारे पास निशानी ले कर आया हूँ। मैं तुम्हारे सामने मिट्टी से परिन्दे की सी सूरत बनाता हूँ फिर उस में फूँक मारता हूँ तो वह अल्लाह के हुक्म से वास्तविक परिन्दा बन जाती है। मैं अल्लाह के हुक्म से पैदाइशी अन्धे और कोढ़ी को अच्छा कर देता हूँ और मुर्दों को ज़िन्दा करता हूँ। और मैं तुम्हें बताता हूँ जो कुछ कि तुम खाते हो और जो अपने घरों में जमा कर के रखते हो। इस में निश्चय ही तुम्हारे लिए निशानी है अगर तुम ईमान रखते हो।[73]

وَرَسُولًا إِلَىٰ بَنِي إِسْرَاءِيلَ أَنِّي قَدْ جِئْتُكُم بِآيَةٍ مِّن رَّبِّكُمْ
أَنِّي أَخْلُقُ لَكُم مِّنَ الطِّينِ كَهَيْئَةِ الطَّيْرِ فَأَنفُخُ فِيهِ
فَيَكُونُ طَيْرًا بِإِذْنِ اللَّهِ ۖ وَأُبْرِئُ الْأَكْمَهَ وَالْأَبْرَصَ
وَأُحْيِي الْمَوْتَىٰ بِإِذْنِ اللَّهِ ۖ وَأُنَبِّئُكُم بِمَا تَأْكُلُونَ
وَمَا تَدَّخِرُونَ فِي بُيُوتِكُمْ ۚ إِنَّ فِي ذَٰلِكَ لَآيَةً لَّكُمْ
إِن كُنتُم مُّؤْمِنِينَ ﴿٤٩﴾

50. और तौरात का जो हिस्सा मेरे सामने मौजूद है उस की मैं पुष्टि करने वाला बन कर आया हूँ [74] और इस लिए आया हूँ कि कुछ उन चीज़ों को तुम्हारे लिए हलाल कर दूँ जो तुम पर हराम कर दी गई हैं [75] ।और मैं तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ से निशानी ले कर आया हूँ। लिहाज़ा अल्लाह से डरो और मेरी इताअत (आज्ञा पालन) करो ।

وَمُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيَّ مِنَ التَّوْرَاةِ وَلِأُحِلَّ لَكُم بَعْضَ
الَّذِي حُرِّمَ عَلَيْكُمْ ۚ وَجِئْتُكُم بِآيَةٍ مِّن رَّبِّكُمْ فَاتَّقُوا
اللَّهَ وَأَطِيعُونِ ﴿٥٠﴾

51. निस्संदेह अल्लाह मेरा रब भी है और तुम्हारा रब भी।लिहाज़ा उसी की इबादत करो, यही सीधा रास्ता है [76]।

إِنَّ اللَّهَ رَبِّي وَرَبُّكُمْ فَاعْبُدُوهُ ۗ هَٰذَا صِرَاطٌ مُّسْتَقِيمٌ ﴿٥١﴾

52. फिर जब ईसा ने उन की तरफ से कुफ्र महसूस किया तो कहा कौन है अल्लाह की राह में मेरा मददगार? हवारियों (साथियों) ने जवाब दिया [77] हम हैं अल्लाह के मददगार [78]। हम अल्लाह पर ईमान लाए और आप गवाह रहिए कि हम मुस्लिम हैं [79]।

فَلَمَّا أَحَسَّ عِيسَىٰ مِنْهُمُ الْكُفْرَ قَالَ مَنْ أَنصَارِي إِلَى اللَّهِ ۖ
قَالَ الْحَوَارِيُّونَ نَحْنُ أَنصَارُ اللَّهِ آمَنَّا بِاللَّهِ وَاشْهَدْ
بِأَنَّا مُسْلِمُونَ ﴿٥٢﴾

53. ऐ हमारे परवरदिगार जो हिदायत तू ने नाज़िल की है उस पर हम ईमान लाए और हम ने रसूल की आज्ञापालन को स्वीकार किया। हमारा नाम गवाही देने वालों में लिख ले [80]।

رَبَّنَا آمَنَّا بِمَا أَنزَلْتَ وَاتَّبَعْنَا الرَّسُولَ فَاكْتُبْنَا
مَعَ الشَّاهِدِينَ ﴿٥٣﴾

54. और उन्हों ने (बनी इस्राईल ने मसीह के ख़िलाफ) साज़िशें कीं तो अल्लाह ने भी इस का तोड़ किया और अल्लाह बेहतरीन तोड़ करने वाला है [81]।

وَمَكَرُوا وَمَكَرَ اللَّهُ ۖ وَاللَّهُ خَيْرُ الْمَاكِرِينَ ﴿٥٤﴾

72. बनी इस्राईल के लिए रसूल बना कर भेजने का मतलब यह नहीं है कि उन की दअवत ग़ैर इस्राईलियों के लिए नहीं थी क्यों कि पैग़म्बरों की दअवत नस्ल, क़ौम और वतन इत्यादि की बुनियाद पर इन्सान और इन्सान के बीच भेद भाव नहीं उतपन्न करती और न ही इन्सान को इन्सान का शत्रु बनाती है। अलबत्ता उस युग के अपने वातावरण के लिहाज़ से उन का कार्य क्षेत्र सीमित था और विशेष रूप से बनी इस्राईल के बढ़ते हुए बिगाड़ को देखते हुए उन पर हुज्जत पूरी करना अभिप्रेत था। इस लिए उन की दअवत के विशेष संबोधी (Adressee) बनी इस्राईल क़रार पाए।

73. यह मोअजज़े (चमत्कारी निशनियाँ) थे जो अल्लाह तआला ने हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को प्रदान किये थे ताकि उन के पैग़म्बर होने की निशानी क़रार पाएं। मोजज़ा एक असाधारण और क़ुदरती नियमों के विरूद्ध वस्तु होती है जिसे अल्लाह तआला अपने पैग़म्बर के माध्यम से सामने लाता है। ताकि एक असाधारण घटना के घटित होने अथवा असाधारण बात के प्रकट होने से लोग चौंक जाऐं और इसे इस बात की निशानी समझ लें कि यह पैग़म्बर अल्लाह की ओर से नियुक्त किए गए हैं। मोअजज़े को पैग़म्बर अपनी तरफ़ से नहीं दिखाते बल्कि ख़ुदा की मर्ज़ी और उस की क़ुदरत से दिखाते हैं और उस को ख़ुदा ही से मंसूब करते हैं।

74. हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम नया दीन ले कर नहीं आये थे बल्कि इस्लाम ही को ले कर आए थे। उन्हों ने तौरात को निरस्त (Reject) नहीं किया बल्कि उस की पुष्टी की और उस को क़ायम किया। इंजील में आप का बयान है कि:-

''यह न समझो कि मैं व्यवस्था भविष्यद्वक्ताओं की पुस्तकों को लोप करने आया हूँ। लोप करने नहीं, परन्तु पूरा करने आया हूँ ।'' (मत्ती ५:१७,१८)

75. मुराद उन चीजों को हलाल क़रार देना है जिन को यहूदियों के धर्मशास्त्रियों ने दीन में उग्रता एवं सीमोल्लंघन का मार्ग अपना कर हराम ठहरा दिया था और जो बनी इस्राईल के गले का काँटा बन गए थे । तौरात की असल शरीअत पर यहूदियों के धर्मशास्त्रियों ने यह जो अपनी टिप्पणियाँ की थीं, हज़रत मसीह ने उन पर नि:संकोच कैंची चलाई और इस सिलसिले में जब उन पर यहूदी विद्वानों एवं धर्माधिकारियों ने बेदीनी (अधर्मी का इल्ज़ाम लगाया तो उन्हों ने इस की बिलकुल परवाह नहीं की बल्कि उन की झूठी दीनदारी को बेनिक़ाब किया।

76. वर्तमान इंजीलों में हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की तरफ यह बात मंसूब (संबन्धित) की गई है कि वह ख़ुदा को ''मेरा बाप और तुम्हारा बाप '' कहते रहे किन्तु क़ुर्आन इस का खण्डन करता है और कहता है कि उन्होंने अल्लाह को ''मेरा रब और तुम्हारा रब'' कहा था और स्पष्ट शब्दों में मात्र अल्लाह की इबादत करने का हुक्म दिया था। और ख़ुदा तक पहुँचने की सीधी राह अल्लाह की बन्दगी को ही क़रार दिया था। इस से स्पष्ट है कि मौजूदा इंजीलों में ख़ुदा के लिए बाप और मसीह के लिए बेटे के जो शब्द मिलते हैं वह असल इंजील के शब्दों का ग़लत अनुवाद और खुला रद्दो बदल अथवा परिवर्तन है जो हज़रत मसीह अलैहिस्सलाम के अल्लाह के गुण होने अथवा अल्लाह की रूह होने के अक़ीदे (धारणा) को साबित करने के लिए किया गया है। इन परिवर्तनों एवं रद्दो बदल के बावजूद मौजूदा इंजीलों से यह बात साबित होती है कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम अल्लाह तआला ही को अपना और सब का ख़ुदा मानते थे। जैसे यूहन्ना की इंजील में है कि:-

'' अपने परमेश्वर और तुम्हारे परमेश्वर के पास ऊपर जाता हूँ । (युहन्ना २०:१७)

'' तू प्रभू अपने परमेश्वर को प्रणाम कर और केवल उसी की उपासना कर।'' (मत्ती ४:१०)

77. हवारिय्यीन (साथियों) से मुराद हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के सच्चे साथी और मददगार हैं। मौजूदा इंजील में इन के लिए शागिर्द का शब्द प्रयोग हुआ है क्यों कि वह दिन रात ईसा अलैहिस्सलाम की संगत में रहते थे।

78. अल्लाह की मदद से मुराद अल्लाह के दीन और उस के रसूल का समर्थन एवं हिमायत है।

79. यहाँ यह बात विचारणीय है कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के हवारियों ने अपने आप को ''मुस्लिम'' कहा ''नसरानी'' या ''ईसाई'' नहीं कहा क्यों कि उन का दीन भी इस्लाम ही था न कि नसरानियत अथवा ईसाईयत।

80. गवाही इस बात की कि हम ने हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को पैग़म्बर तस्लीम कर लिया और इस्लाम ही को दीन (जीवन प्रणाली) की हैसियत से अपना लिया।

81. उस ज़माने में मुल्क पर रोमियों की हुकूमत थी। यहूदी विद्वानों ने हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम पर इल्ज़ाम लगा कर के कि यह व्यक्ति क़ैसर (शासक) को ख़िराज (Tax या कर) देने से रोकता है और इस्राईल का बादशाह बनना चाहता है, उस समय की हुकूमत को इन के ख़िलाफ़ भड़काने की कोशिश की और आप को गिरफ़्तार कराने के उपाय किए। इस के मुक़ाबले में अल्लाह तआला ने जो गुप्त उपाय किए उन का ज़िक्र आगे की आयत में आ रहा है।

55. जब अल्लाह ने कहा ऐ ईसा मैं तुम्हें क़ब्ज़े में लेने वाला (तुम्हारा समय पूरा करने वाला) हूँ [82] और अपनी तरफ उठाने वाला हूँ और जिन लोगों ने कुफ्र किया है उन से तुम्हें पाक करने वाला हूँ [83]। एवं तुम्हारी पैरवी (अनुसरण) करने वालों को क़ियामत तक तुम्हारे मुन्किरीन (इन्कार करने वालों) पर ग़ालिब रखने वाला हूँ ।[84] फिर तुम सब को मेरी तरफ़ पलटना है। उस समय मैं तुम्हारे मध्य उन बातों का फैसला करूँगा जिन के बारे में तुम इख़्तिलाफ़ (मतभेद) करते रहे हो।

إِذْ قَالَ اللَّهُ يَا عِيسَىٰ إِنِّي مُتَوَفِّيكَ وَرَافِعُكَ إِلَيَّ
وَمُطَهِّرُكَ مِنَ الَّذِينَ كَفَرُوا وَجَاعِلُ الَّذِينَ اتَّبَعُوكَ
فَوْقَ الَّذِينَ كَفَرُوا إِلَىٰ يَوْمِ الْقِيَامَةِ ۖ ثُمَّ إِلَيَّ مَرْجِعُكُمْ
فَأَحْكُمُ بَيْنَكُمْ فِيمَا كُنتُمْ فِيهِ تَخْتَلِفُونَ ﴿٥٥﴾

56. जिन लोगों ने कुफ्र (इन्कार) किया उन को दुनिया एवं आखिरत में सख़्त सज़ा दूँगा और उन का कोई मददगार न होगा।

فَأَمَّا الَّذِينَ كَفَرُوا فَأُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا شَدِيدًا فِي
الدُّنْيَا وَالْآخِرَةِ وَمَا لَهُم مِّن نَّاصِرِينَ ﴿٥٦﴾

57. और जो लोग ईमान लाए और जिन्हों ने नेक अमल किए उन्हें वह उन का अज्र (परिश्रमिक) पूरा पूरा देगा। अल्लाह ज़ालिमों को हरगिज़ पसन्द नहीं करता।

وَأَمَّا الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فَيُوَفِّيهِمْ
أُجُورَهُمْ ۗ وَاللَّهُ لَا يُحِبُّ الظَّالِمِينَ ﴿٥٧﴾

58. ये हमारी आयतें और हिकमत भरा ज़िक्र है जो हम तुम्हें सुना रहे हैं।[85]

ذَٰلِكَ نَتْلُوهُ عَلَيْكَ مِنَ الْآيَاتِ وَالذِّكْرِ الْحَكِيمِ ﴿٥٨﴾

59. ईसा की मिसाल अल्लाह के नज़दीक आदम की सी है कि उसे मिट्टी से बनाया और फ़रमाया हो जा, और वह हो गया ।[86]

إِنَّ مَثَلَ عِيسَىٰ عِندَ اللَّهِ كَمَثَلِ آدَمَ ۖ خَلَقَهُ
مِن تُرَابٍ ثُمَّ قَالَ لَهُ كُن فَيَكُونُ ﴿٥٩﴾

60. यही हक़ (सत्य) है तुम्हारे रब की तरफ से अतः तुम शक करने वालों में से न बनों ।

الْحَقُّ مِن رَّبِّكَ فَلَا تَكُن مِّنَ الْمُمْتَرِينَ ﴿٦٠﴾

61. इस इल्म (ज्ञान) के आ जाने के बाद जो कोई इस मामले में तुम से हुज्जत (विवाद) करे तो उन से कहो कि आओ, हम अपने बेटों को बुलाऐं तुम भी अपने बेटों को बुलाओ। हम अपनी औरतों को बुलाऐं तुम भी अपनी औरतों को बुलाओ, हम खूद भी आऐं और तुम खुद भी आओ फिर हम मिल कर दुआ करें कि अल्लाह की लानत हो झूठों पर [87]।

فَمَنْ حَاجَّكَ فِيهِ مِن بَعْدِ مَا جَاءَكَ مِنَ الْعِلْمِ فَقُلْ
تَعَالَوْا نَدْعُ أَبْنَاءَنَا وَأَبْنَاءَكُمْ
وَنِسَاءَنَا وَنِسَاءَكُمْ وَأَنفُسَنَا وَأَنفُسَكُمْ ثُمَّ نَبْتَهِلْ
فَنَجْعَل لَّعْنَتَ اللَّهِ عَلَى الْكَاذِبِينَ ﴿٦١﴾

82. मतन (Text) में लफ़्ज़ ''मुतवफ़्फ़ीका'' ''مُتَوَفِّيكَ'' इस्तेमाल हुआ है जो ''तवफ़्फ़ा'' ''تَوَفِّی'' से फ़ाइल (कर्ता) का सीग़ा है। तवफ़्फ़ा का सही अर्थ पूरा पूरा लेने और क़ब्ज करने के हैं। मौत के अर्थ में यह लफ़्ज़ इस्तेमाल होता है किन्तु इस का अर्थ अनिवार्य रूप से मौत हो ऐसा नहीं है। अत: क़ुर्आन में इस लफ़्ज़ को जिस तरह इस्तेमाल किया गया है उस से इस का अनुमोदन होता है। जैसे

وَهُوَ الَّذِیْ یَتَوَفّٰکُمْ بِالَّیْلِ وَیَعْلَمُ
مَاجَرَحْتُمْ بِالنَّهَارِ۔ (الانعام۔٦٠)

''वही है जो तुम को रात में अपने क़ब्जे में ले लेता है और जानता है जो कुछ तुम दिन में कमाते हो।''

इस हालत में नींद की हालत पर तवफ़्फ़ा का इतलाक़ (Set) किया गया है।

حَتّٰىٓ اِذَا جَآءَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ
تَوَفَّتْهُ رُسُلُنَا ط (الانعام۔٦١)

यहाँ तक कि जब तुम में से किसी को मौत आ जाती है तो हमारे फ़रिश्ते उसे क़ब्ज़ कर लेते हैं।''

इस आयत में फ़रिश्तों की तरफ़ तवफ़्फ़ा को संबध्द किया गयो है न कि मौत की तरफ, इस लिए कि मौत देना अल्लाह का काम है और फ़रिश्तों का काम क़ब्ज़े में ले लेना है।

فَأَمْسِكُوهُنَّ فِی الْبُيُوتِ حَتّٰى
يَتَوَفّٰهُنَّ الْمَوْتُ۔ (النساء۔١٥)

'' उन्हें घरों में रोके रखो यहाँ तक कि मौत उन को आ ले।''

इस आयत में तवफ़्फ़ा का फ़ाइल (कर्ता) मौत को बनाया गया है। ज़ाहिर है कि फ़ेअल और फ़ाइल (किया और कर्ता) दोनों यकसाँ नहीं हो सकते अत: भाव से स्पष्ट है कि यहाँ तवफ़्फ़ा का लफ़्ज़ मौत के अर्थ में नहीं बल्कि शरीर सहित क़ब्ज़ करने के अर्थ में हुआ है। और आयत के संदर्भ (Contex) संबन्धित आयतों, हदीसों एवं तमाम प्रसंगों से इस बात का समर्थन एवं अनुमोदन होता है कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को अल्लाह तआला ने ज़िन्दा आसमान पर उठा लिया और दुश्मनों की साज़िशों से उन्हें सुरक्षित रखा।

83. अर्थात काफ़िरों के गन्दे माहौल से निकाल कर फ़रिश्तो के रुहानी माहौल में दाख़िल करूँगा।

84. और यह एक ऐतिहासिक वास्तविकता है कि नसारा (ईसाई) क़ौम होने की हैसियत से हमेशा यहूदियों पर ग़ालिब रहे ।

85. अर्थात् यह कोई किस्सा कहानी नहीं है और न नसारा (ईसाईयों) की तरह लीपा पोती की गई है बल्कि यह वास्तव में सत्य है जिसे आयतों की शक्ल में नाज़िल किया गया है। यह बातें सरासर नसीहत और हिकमत से परिपूर्ण हैं।

86. यह एक सर्वमान्य एवं स्वीकृत वास्तविकता है कि हज़रत आदम की पैदाइश माँ और बाप दोनों के बग़ैर हुई थी किन्तु इस विशिष्टता के बावजूद वह खुदा नहीं हैं और न उन के ख़ुदा होने का कोई कायल है फिर हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम मात्र बाप के बग़ैर पैदा हो जाने के आधार पर ख़ुदा कैसे हो सकते हैं?

87. हुज्जत पूरी करने के बाद या यूँ कह लीजिए कि हर तरह से क़ायल कर देने के बाद यह अल्लाह की तरफ से नसारा (ईसाईयों) को चेलेंज था कि अगर वे इस संतुष्टि (Satisfaction) के बाद भी हज़रत मसीह के बारे में अपनी सोच एवं अपनी धारणा को सही और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के विचारों को ग़लत समझते हैं तो मुबाहला (लानत की दुआ) के चैलेन्ज को क़ुबूल करें लेकिन उन्होंने इस की जुर्अत नहीं की।

रिवातों (उल्लेखों) से मालूम होता है कि नज्रान (यमन) के नसारा (ईसाईयों) का एक गुरुप नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ख़िदमत में हाजिर हुआ था। इस मौक़े पर आप ने उन्हें मुबाहले का निमंत्रण दिया किन्तु वे उसे क़ुबूल करने की जुर्अत न कर सके और इस के बग़ैर ही सुलह कर के वापस लौट गए। जिस से स्पष्ट हो गया कि उन को अपनी धारणा और अपने विचारों पर संदेह था,विश्वास नहीं था । इस के विपरीत नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अपने बाल बच्चो को ले कर मुबाहला के लिए निकल खड़े हुए जिस से साबित हुआ कि आप को अपने मत और अपने विचार की सत्यता पर अडिग विश्वास था।

إِنَّ هَٰذَا لَهُوَ الْقَصَصُ الْحَقُّ ۚ وَمَا مِنْ إِلَٰهٍ إِلَّا اللَّهُ ۚ
وَإِنَّ اللَّهَ لَهُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿٦٢﴾

62. निस्संदेह यह सच्ची घटनाऐं हैं, और वास्तव में अल्लाह के सिवा कोई मअबूद (उपास्य) नहीं और अल्लाह ही ग़लबे वाला (प्रभुत्वशाली) और हिकमत वाला (तत्वदर्शी)है।

فَإِنْ تَوَلَّوْا فَإِنَّ اللَّهَ عَلِيمٌ بِالْمُفْسِدِينَ ﴿٦٣﴾

63. फिर अगर यह लोग मुँह मोड़ें तो अल्लाह फ़सादियों को ख़ूब जानता है।[88]

قُلْ يَا أَهْلَ الْكِتَابِ تَعَالَوْا إِلَىٰ كَلِمَةٍ سَوَاءٍ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ
أَلَّا نَعْبُدَ إِلَّا اللَّهَ وَلَا نُشْرِكَ بِهِ شَيْئًا وَلَا يَتَّخِذَ بَعْضُنَا
بَعْضًا أَرْبَابًا مِنْ دُونِ اللَّهِ ۚ فَإِنْ تَوَلَّوْا فَقُولُوا
اشْهَدُوا بِأَنَّا مُسْلِمُونَ ﴿٦٤﴾

64. कहो ऐ अहले-किताब आओ एक ऐसी बात की तरफ़ जो हमारे और तुम्हारे बीच एक है,[89] यह कि हम अल्लाह के सिवा किसी की इबादत न करें और न उस के साथ किसी को शरीक ठहराऐं और न हम में से कोई अल्लाह के सिवा किसी को अपना रब बनाए [90]।अगर वे इस से मुँह मोड़ें तो कह दो, गवाह रहो हम तो मुस्लिम हैं।

يَا أَهْلَ الْكِتَابِ لِمَ تُحَاجُّونَ فِي إِبْرَاهِيمَ وَمَا أُنْزِلَتِ التَّوْرَاةُ
وَالْإِنْجِيلُ إِلَّا مِنْ بَعْدِهِ ۚ أَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿٦٥﴾

65. ऐ अहले-किताब तुम इब्राहीम के बारे में क्यों झगड़ते हो हालांकि तौरात और इंजील इन के बाद नाज़िल की गई क्या तुम इतनी बात भी नहीं समझते [91]।

هَا أَنْتُمْ هَٰؤُلَاءِ حَاجَجْتُمْ فِيمَا لَكُمْ بِهِ
عِلْمٌ فَلِمَ تُحَاجُّونَ فِيمَا لَيْسَ لَكُمْ بِهِ عِلْمٌ ۚ
وَاللَّهُ يَعْلَمُ وَأَنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ﴿٦٦﴾

66. देखो जिस चीज का तुम्हें इल्म (ज्ञान) था उस के बारे में तुम बहस कर चुके। अब तुम ऐसी बातों के बारे में क्यों बहस करते हो जिस का तुम्हें इल्म (ज्ञान) नहीं अल्लाह जानता है तुम नहीं जानते।

مَا كَانَ إِبْرَاهِيمُ يَهُودِيًّا وَلَا نَصْرَانِيًّا وَلَٰكِنْ كَانَ
حَنِيفًا مُسْلِمًا وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ﴿٦٧﴾

67. इब्राहीम न यहूदी थे और न नसरानी बल्कि रास्त रौ (सत्यनिष्ठ) मुस्लिम थे और वह हरगिज़ मुश्रिकों में से न थे।

إِنَّ أَوْلَى النَّاسِ بِإِبْرَاهِيمَ لَلَّذِينَ اتَّبَعُوهُ وَهَٰذَا
النَّبِيُّ وَالَّذِينَ آمَنُوا ۗ وَاللَّهُ وَلِيُّ الْمُؤْمِنِينَ ﴿٦٨﴾

68. इब्राहीम से सम्बन्ध जोड़ने के सब से ज़्यादा हक़दार वे लोग हैं जिन्होंने उन की पैरवी की, और यह नबी और ईमान वाले।और अल्लाह तआला मोमिनों का रफीक़ (साथी) है।

وَدَّتْ طَائِفَةٌ مِنْ أَهْلِ الْكِتَابِ لَوْ يُضِلُّونَكُمْ
وَمَا يُضِلُّونَ إِلَّا أَنْفُسَهُمْ وَمَا يَشْعُرُونَ ﴿٦٩﴾

69. अहले किताब का एक गिरोह इस बात का अभिलाषी है कि काश वे तुम्हें गुमराह करने में कामयाब हो जाऐं हालाँकि ये लोग अपने ही को गुमराह कर रहे हैं मगर इन्हें इस का शऊर (समझ) नहीं।

88. संदर्भ से प्रमाणित होता है कि जो लोग अल्लाह को वाहिद इलाह (अकेला उपास्य) मानने से इन्कार करें और शिर्क अर्थात् बहुदेववाद पर जमें रहें वे फ़सादी हैं क्यों कि शिर्क न्याय और समानता की व्यवस्था के लिए तबाही का कारण है।

89. अर्थात् एकेश्वरवाद (तौहीद) मुसलमानों, ईसाईयों और यहूदियों के मध्य समान (Common) है किन्तु अहले-किताब (ईसाई एवं यहूदी) ने अल्लाह के आदेशों के ग़लत अर्थ सुनिश्चित कर के शिर्क और बिदअतों को अपने दीन में शामिल कर लिया जिस के फलस्वरूप एक ख़ुदा के साथ तीन ख़ुदाओं की विचारधारा के लिए भी गुंजाइश पैदा हो गई। लेकिन इन के रद्दो-बदल के बावजूद मौजूदा तौरात और इंजील में बुनियादी तौर से तौहीद (एकेश्वरवाद) की तालीम मौजूद है। जैसे तौरात में है:

'' मुझे छोड़ दूसरों को परमेश्वर कर के न मानना । तू अपने लिए कोई मूर्ति खोद कर न बनाना, न किसी की प्रतिमा बनाना जो आकाश में, वा पृथ्वी पर, वा पृथ्वी के नीचे जल में है। तू उन को दण्डवत् न करना और न उन की उपासना करना क्यों कि मैं तेरा परमेश्वर यहोवा स्वाभिमानी (ग़यूर) रखने वाला ईश्वर हूँ ।'' (व्यवस्था विवरण ५:७,८,९)

और इंजील में है:-

''तू प्रभु अपने परमेश्वर को प्रणाम कर और केवल उसी की उपासना कर।'' (लूका ४:८)

''यीशु ने उसे उत्तर दिया,सब अज्ञाओं में से यह मुख्य है, हे इस्राईल सुन, प्रभु हमारा परमेश्वर एक ही प्रभू है। और तू प्रभू अपने परमेश्वर से, अपने सारे मन से, और अपने सारे प्राण से, और अपनी सारी बुध्दी से और अपनी सारी शक्ति से प्रेम रखना। इस से बड़ी और कोई आज्ञा नहीं ।''

(मरक़ुस १२:२९,३०,३१)

90. अल्लाह के सिवा किसी को रब बनाने का मतलब सिर्फ यह नहीं है कि वह किसी व्यक्ति को रब के नाम से पुकारे बल्कि बग़ैर किसी शरअई (संवैधानिक) दलील के किसी के ठहराए हुए हलाल को हलाल और उस के ठहराए हुए हराम को हराम क़रार देना भी उस को रब बना लेना है । क्यों कि हलाल और हराम सुनिश्चित करने का इख़्तियार सिर्फ अल्लाह को है। और उस के इस इख़्तियार में किसी को शरीक (साझी) ठहराना खुला हुआ शिर्क है जिस को मिटाने और इन्सानों को इस ग़ुलामी से आज़ाद कराने के लिए इस्लाम आया है। विभिन्न धर्मों के मानने वालों की यह गुमराही रही है कि वे अपने विद्वानों, धर्मगुरूओं, सन्यासियों,सूफियों, साधू सन्तो, पंडितों और जोगियों को अल्लाह की शरीअत में हस्तक्षेप तथा हलाल और हराम सुनिश्चित करने का अधिकार देते रहे हैं। इस्लाम इस तरह की हरकतों एवं कार्यों को शिर्क और रब बना लेने के समानार्थ ठहराता है। अत: कुछ अहले किताब के इस एतिराज़ पर कि हम अपने विद्वानों धर्मगुरूओं एवं सन्यासियों को रब तो नहीं मानते। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि क्या जिस चीज़ को वे हराम ठहराते हैं उस को तुम हराम और जिस चीज़ को वे हलाल ठहराते हैं उस को हलाल नहीं ठहराते?उन्हों ने स्वीकार किया कि ऐसा तो है। आप (सल्लल्लाह अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया यही उन को रब बना लेना है (इब्ने कसीर भाग २ पृष्ट ३४८ तिर्मिज़ी के हवाले से)

इस से स्पष्ट हुआ कि हराम और हलाल सुनिश्चित करने का अधिकार किसी के लिए भी मान लेना उस को रब बना लेना है चाहे आदमी साधारणतया उस की परस्तिश करता हो या न करता हो।

91. हज़रत इब्राहीम बनी इस्राईल और बनी इस्माईल दोनों के प्रमुख पितामह हैं। यहूदी, ईसाई और मक्का के मुश्रिकीन सब ही इन को अपना धार्मिक पेशवा मानते थे और अपने धर्म को उन से ही सम्बन्धित करते थे। उन का दावा यह था कि असल इब्राहीमी दीन हमारा दीन है और क़ुर्आन जिस दीन की दअवत देता है वह एक नया दीन है। उन के इस दावे और इल्जाम का खण्डन करते हुए क़ुर्आन कहता है कि यहूदियत और नसरानियत (ईसाईयत) तो हज़रत इब्राहीम के सदियों बाद की चीज़ है। फिर इब्राहीम यहूदी या नसरानी कैसे हो सकते हैं? ज़ाहिर है यह सरासर जिहालत की बात है। इसी तरह मक्का वालों के मुश्रिकाना धर्म भी हज़रत इब्राहीम के बाद के दौर का बनाया हुआ धर्म है। हज़रत इब्राहीम हरगिज़ मुश्रिक न थे बल्कि वह ख़ालिस तौहीद के अलमबरदार और मुस्लिम थे।

70. ऐ अहले-किताब ! अल्लाह की आयतों का क्यों इन्कार करते हो जब कि तुम खुद इस पर गवाह हो?

يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تَكْفُرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ وَاَنْتُمْ
تَشْهَدُوْنَ ۝٧٠

71. ऐ अहले- किताब क्यों हक़ को बातिल (असत्य) के साथ गड्डमड्ड करते हो और क्यों जानते बूझते हक़ को छिपाते हो।

يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تَلْبِسُوْنَ الْحَقَّ بِالْبَاطِلِ وَتَكْتُمُوْنَ الْحَقَّ
وَاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝٧١

72. अहले- किताब में से एक गिरोह कहता है कि ईमान वालों पर जो कुछ नाज़िल हुआ है उस पर सुबह को ईमान लाओ और शाम को इन्कार करो ताकि वे भी फिर जाऐं ।[92]

وَقَالَتْ طَّآئِفَةٌ مِّنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اٰمِنُوْا بِالَّذِيْۤ اُنْزِلَ عَلَى الَّذِيْنَ
اٰمَنُوْا وَجْهَ النَّهَارِ وَاكْفُرُوْۤا اٰخِرَهٗ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُوْنَ ۝٧٢

73. (एवं वे कहते हैं) अपने मज़हब वालों के सिवा किसी की बात न मानो ।--- कहो असल हिदायत तो अल्लाह की हिदायत है।[93] कहीं ऐसा न हो कि जो चीज़ तुम्हें दी गई है वैसी चीज़ किसी और को मिल जाए। या वे तुम्हारे ख़िलाफ़ तुम्हारे रब के सम्मुख हुज्जत पेश कर सकें।[94] उन से कहो फ़ज़्ल (कृपा) तो अल्लाह के हाथ में है वह जिसे चाहता है प्रदान करता है।[95] अल्लाह बड़ी वुसअत (व्यापक दृष्टि) वाला, जानने वाला है।[96]

وَلَا تُؤْمِنُوْۤا اِلَّا لِمَنْ تَبِعَ دِيْنَكُمْ ؕ قُلْ اِنَّ الْهُدٰى هُدَى اللّٰهِ ۙ
اَنْ يُّؤْتٰۤى اَحَدٌ مِّثْلَ مَاۤ اُوْتِيْتُمْ اَوْ يُحَآجُّوْكُمْ عِنْدَ
رَبِّكُمْ ؕ قُلْ اِنَّ الْفَضْلَ بِيَدِ اللّٰهِ ۚ يُؤْتِيْهِ مَنْ يَّشَآءُ ؕ
وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ۝٧٣

74. वह जिसे चाहता है अपनी रहमत के लिए ख़ास कर लेता है और अल्लाह बड़े फ़ज़्ल वाला (उदार एवं दयावान) है।

يَّخْتَصُّ بِرَحْمَتِهٖ مَنْ يَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ
الْعَظِيْمِ ۝٧٤

75. अहले-किताब में ऐसे लोग भी हैं कि अगर तुम उन के पास माल का एक ढेर अमानत रख दो तो वे तुम्हें अदा करेंगे और उन में ऐसे भी हैं कि अगर तुम एक दीनार भी अमानत रख दो तो वे तुम्हें अदा करने वालें नहीं जब तक कि तुम उन के सर पर खड़े न हो जाओ । यह इस लिए कि वे कहते हैं, उम्मियों [97] के मामले में हम पर कोई पकड़ नहीं।[98] ये लोग जान बूझ कर झूठ गढ़ कर उस का सम्बन्ध अल्लाह से जोड़ देते हैं।

وَمِنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ مَنْ اِنْ تَاْمَنْهُ بِقِنْطَارٍ يُّؤَدِّهٖۤ اِلَيْكَ ۚ
وَمِنْهُمْ مَّنْ اِنْ تَاْمَنْهُ بِدِيْنَارٍ لَّا يُؤَدِّهٖۤ اِلَيْكَ
اِلَّا مَا دُمْتَ عَلَيْهِ قَآئِمًا ؕ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوْا لَيْسَ
عَلَيْنَا فِى الْاُمِّيّٖنَ سَبِيْلٌ ۚ وَيَقُوْلُوْنَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ
وَهُمْ يَعْلَمُوْنَ ۝٧٥

76. हाँ जो लोग अपने अहद (प्रतिज्ञा) को पूरा करेंगे और तक़वा (परहेज़गारी) इख़्तियार करेंगे तो अल्लाह मुत्तक़ियों (परहेज़गारों)को पसन्द करता है।

بَلٰى مَنْ اَوْفٰى بِعَهْدِهٖ وَاتَّقٰى فَاِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِيْنَ ۝٧٦

92. यह यहूदियों के एक गिरोह की साज़िश थी कि इस्लाम में दाखिल हो और फिर उस से मुँह मोड़ कर अलग हो जाऐं फिर उस के विरुद्ध प्रचार (Propaganda) करें ताकि लोगों का इस्लाम पर से विश्वास उठ जाए ।

93. यह व्यवहित वाक्य (जुमला-ए-मुअ्तरिज़ा) है जो यहूदियों की बातों का खण्डन करने के लिए अल्लाह तआला ने इर्शाद फरमाया है। इस का मतलब यह है कि यहूदी मज़हब परस्ती की बात कहते हैं लेकिन यह हिदायत की राह नहीं है। हिदायत की राह यह है कि जहाँ भी अल्लाह तआला की हिदायत वास्तव में मौजूद हो आदमी उस को स्वीकार करने के लिए तैयार हो जाए। और यह बिल्कुल सच्ची बात है कि अल्लाह तआला की हिदायत क़ुर्आन के रुप में हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर नाज़िल हो गई है। इस को मात्र इस कारण स्वीकार न करना कि इस पर हमारे मज़हब की छाप लगी हुई नहीं है या हमारे धार्मिक सम्प्रदायों के लोगों ने इस को स्वीकार नहीं किया है, अपने को रौशनी से वंचित कर देना है। इस के बाद मज़हब परस्ती ही हिस्से में आती है अल्लाह तआला की हिदायत नहीं आती।

94. यह यहूदियों का कथन है। वे आपस में कहते थे कि इस नबी की बात न मानो वरना इस की नुबुव्वत को भी मानना पड़ेगा । और इस सूरत में बनी इस्राईल की यह प्रमुखता कि नबी उसी के अन्दर आते रहे हैं, समाप्त हो जाएगी। और अगर नुबुव्वत को स्वीकार किए बग़ैर नबी की उन बातों का अनुमोदन एवं समर्थन किया जो आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की नुबुव्वत का प्रमाण प्रस्तुत करती हैं तो क़ियामत के दिन मुसलमानों को तुम्हारे ख़िलाफ हुज्जत (उक्ति) पेश करने का मौक़ा मिल जाएगा ।

(देखिए सूरह बक़र:नोट ९७)

95. अर्थात नुबुव्वत अल्लाह तआला का फ़ज़्ल (कृपा) है और वह जिसे चाहता है, नवाज़ता है।

96. अर्थात अल्लाह न तो सीमित दृष्टि वाला है और न उस का ज्ञान (इल्म) सीमित है कि नुबुव्वत प्रदान करने के सिलसिले में ग़लत फ़ैसला कर बैठे।

97. उम्मियों से मुराद बनी इस्माईल (इस्माईल के कुटुम्ब) हैं।

98. यहूदियों का यह कथन उन की मानसिकता का परिचायक है। उन्होंने ख़यानत (कपट) और सूदखोरी इत्यादि की मनाही को अपनी क़ौम के साथ ख़ास कर रखा था। दूसरी कौमों के साथ उन के निकट विश्वाषघात एवं कपट बिल्कुल जायज़ था। उन के धर्माधिकारियों (मुफ़्तियों) ने यह मन गढ़न्त निर्णय (फत्वे) तौरात में शामिल कर लिए थे जिस के परिणामस्वरुप उन के अन्दर ऐसी क़ौमी साम्प्रदायिकता पैदा हो गई थी कि वे आचरण एवं व्यवहार के दायरे में भी अपने और ग़ैर के बीच भेद भाव करने लगे थे और इन मन गढ़न्त निर्णयों (फत्वों) के आधार पर दूसरी क़ौम के लोगों का माल हड़प कर जाने में कोई आपत्ति नहीं महसूस करते थे। अत: बाईबिल में है :

'' तू परदेशी को ब्याज़ पर ऋण तो दे परन्तु अपने किसी भाई से ऐसा न करना।'' (व्यवस्थाविवरण २३:२०) क़ुर्आन ऐसी कपटी मानसिकता पर सख्ती से पकड़ करता है और व्यवहार में विश्वासघात एवं कपट को किसी के साथ भी जायज़ नहीं ठहराता चाहे वह मुस्लिम हो या ग़ैर मुस्लिम, मोमिन हो या काफ़िर, अपने सम्प्रादाय का व्यक्ति हो या किसी अन्य सम्प्रादाय का । मुसलमानों में भी ऐसे लोग मौजूद हैं जो ग़ैर मुस्लिमों के सिलसिले में ग़लत फ़त्वों का सहारा ले कर सूद जैसी चीज़ को जायज़ करार देते हैं लेकिन क़ुर्आन की यह आयत इस तरह के फ़त्वो को बातिल (ग़लत) करार देने के लिए काफ़ी हैं।

77. जो लोग अल्लाह के अहद (प्रतिज्ञा) और अपनी क़समों को थोड़ी क़ीमत पर बेचते हैं [99] उन के लिए आखिरत में कोई हिस्सा नहीं। अल्लाह क़ियामत के दिन न उन से बात करेगा, न उन की तरफ देखेगा [100] और न उन्हें पाक करेगा उन के लिए दर्दनाक सज़ा है।

إِنَّ الَّذِينَ يَشْتَرُونَ بِعَهْدِ اللَّهِ وَأَيْمَانِهِمْ ثَمَنًا قَلِيلًا
أُولَٰئِكَ لَا خَلَاقَ لَهُمْ فِي الْآخِرَةِ وَلَا يُكَلِّمُهُمُ اللَّهُ وَلَا يَنْظُرُ
إِلَيْهِمْ يَوْمَ الْقِيَامَةِ وَلَا يُزَكِّيهِمْ وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿٧٧﴾

78. और इन में कुछ लोग ऐसे हैं जो अपनी ज़बान को इस तरह मरोड़ कर किताब पढ़ते हैं कि तुम समझो यह किताब ही की इबारत (शब्द) है हालाँकि वह किताब की इबारत नहीं होती।[101] और वे कहते हैं कि यह अल्लाह की तरफ से है हालाँकि वह अल्लाह की तरफ से नहीं होता। वे जान बूझ कर झूठ बात अल्लाह से जोड़ते हैं।

وَإِنَّ مِنْهُمْ لَفَرِيقًا يَلْوُونَ أَلْسِنَتَهُمْ بِالْكِتَابِ لِتَحْسَبُوهُ
مِنَ الْكِتَابِ وَمَا هُوَ مِنَ الْكِتَابِ وَيَقُولُونَ هُوَ مِنْ عِنْدِ
اللَّهِ وَمَا هُوَ مِنْ عِنْدِ اللَّهِ وَيَقُولُونَ عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ
وَهُمْ يَعْلَمُونَ ﴿٧٨﴾

79. किसी इन्सान का यह काम नहीं कि अल्लाह उसे किताब, हुक्म और नुबुव्वत प्रदान करे और वह लोगों से कहे कि अल्लाह के बजाय मेरे परस्तार (उपासक) बन जाओ [102] बल्कि वह तो यही कहेगा कि रब्बानी (अल्लाह वाले) बनो जैसा कि अल्लाह की किताब का तक़ाज़ा है, जिस की तुम दूसरों को भी तालीम देते हो और खुद भी पढ़ते हो।

مَا كَانَ لِبَشَرٍ أَنْ يُؤْتِيَهُ اللَّهُ الْكِتَابَ وَالْحُكْمَ وَالنُّبُوَّةَ
ثُمَّ يَقُولَ لِلنَّاسِ كُونُوا عِبَادًا لِي مِنْ دُونِ اللَّهِ وَلَٰكِنْ
كُونُوا رَبَّانِيِّينَ بِمَا كُنْتُمْ تُعَلِّمُونَ الْكِتَابَ وَبِمَا كُنْتُمْ
تَدْرُسُونَ ﴿٧٩﴾

80. वह तुम्हें हरगिज़ यह हुक्म नहीं देगा कि फ़रिश्तों और पैग़म्बरों को अपना रब बनाओ। क्या वह तुम्हें कुफ्र का हुक्म देगा इस के बावजूद कि तुम मुस्लिम हो ?

وَلَا يَأْمُرَكُمْ أَنْ تَتَّخِذُوا الْمَلَائِكَةَ وَالنَّبِيِّينَ
أَرْبَابًا ۗ أَيَأْمُرُكُمْ بِالْكُفْرِ بَعْدَ إِذْ أَنْتُمْ مُسْلِمُونَ ﴿٨٠﴾

81. याद करो जब अल्लाह ने (तुम से) नबियों के बारे में अहद (वचन) लिया था कि मैं ने तुम्हें किताब और हिकमत से नवाज़ा है, इस के बाद कोई रसूल उस किताब की जो तुम्हारे पास पहले से मौजूद है, पुष्टि करता हुआ आएगा तो तुम ज़रुर उस पर ईमान लाओगे और अवश्य ही उस की मदद करोगे ।[103] पूछा क्या तुम इस का इक़रार करते हो और मेरी तरफ़ से इस भारी ज़िम्मेदारी को स्वीकार करते हो? उन्हों ने कहा, हम ने इक़रार किया। फ़रमाया तुम गवाह रहो मैं भी तुम्हारे साथ गवाह हूँ।

وَإِذْ أَخَذَ اللَّهُ مِيثَاقَ النَّبِيِّينَ لَمَا آتَيْتُكُمْ مِنْ كِتَابٍ
وَحِكْمَةٍ ثُمَّ جَاءَكُمْ رَسُولٌ مُصَدِّقٌ لِمَا مَعَكُمْ
لَتُؤْمِنُنَّ بِهِ وَلَتَنْصُرُنَّهُ ۚ قَالَ أَأَقْرَرْتُمْ وَأَخَذْتُمْ
عَلَىٰ ذَٰلِكُمْ إِصْرِي ۖ قَالُوا أَقْرَرْنَا ۚ قَالَ فَاشْهَدُوا
وَأَنَا مَعَكُمْ مِنَ الشَّاهِدِينَ ﴿٨١﴾

99. अल्लाह के अहद (प्रतिज्ञा अथवा प्रण) से मुराद अल्लाह की बंदगी और आज्ञापालन का अहद है। और कसमों से विशेष रुप से वे क़समें मुराद हैं जो लोगों से मामला करते समय खाई जाऐं और थोड़ी कीमत पर बेचने से मुराद आख़िरत के कभी न ख़त्म होने वाले फ़ायदे के मुक़ाबले में दुनिया के तुच्छ लाभों को वरीयता देना है।

100. अर्थात उन की ओर कृपा दृष्टि न डालेगा।

101. इशारा है यहूदियों की उस हरकत की ओर कि हक़ को छिपाने के लिए अल्लाह की किताब के कुछ शब्दों को इस तरह अदा करते हैं कि उस का अर्थ कुछ से कुछ हो जाता है। इस की मिसाल क़ुर्आन को मानने वालों में भी मौजूद है। अत: कुछ ऐसे बिद्अत में लिप्त लोग जो कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को बशर (इन्सान) मानने से इन्कार करते हैं वे क़ुर्आन की आयत : قُلْ اِنَّمَا اَنَا بَشَرٌ مِّثْلُكُمْ

''कहो बेशक मैं तुम्हारी ही तरह बशर हूँ ''

को قُلْ اِنَّ مَا اَنَا بَشَرٌ مِّثْلُكُمْ (कहो बेशक मैं नहीं हूँ तुम जैसा बशर) पढ़ते हैं । अर्थात इन्नमा को इन्न मा पढ़ते हैं जिस से मतलब बिलकुल उलट जाता है ।

102. इस से उन तमाम बहुदेववादी (मुश्रिकाना) धारणाओं का खण्डन होता है जिन को धार्मिक लोगों ने अपने धार्मिक ग्रन्थों में दाखिल कर के पैग़म्बरों की तरफ़ मन्सूब कर दिया है। क़ुर्आन कहता है किसी पैग़म्बर की यह तालीम हो ही नहीं सकती कि वह अल्लाह के सिवा किसी और की इबादत का हुक्म दे या फ़रिश्तों और पैग़म्बरो को ख़ुदा का दर्जा दे। ऐसी अगर कोई तालीम किसी मज़हबी किताब में मिलती है तो वह हरगिज़ किसी पैग़म्बर की तालीम नहीं है बल्कि यह मन गढ़ंत बातें हैं जिन का सम्बन्ध ख़ुदा और पैग़म्बरों से जोड़ दिया गया है। यह सही मेयार (कसौटी) है जिस पर पैग़म्बरों से सम्बन्धित बताई जाने वाली शिक्षाओं को परखना चाहिए।

103.संदर्भ पर ग़ौर करने से मालूम होता है कि यह अहद (वचन) बनी इस्राईल से हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की रिसालत (Prophethood) के बारे में लिया गया था । अत: तौरात और इंजील में आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की रिसालत के सिलसिले में खुली पेशीन गोइयाँ (स्पष्ट भविष्यवाणियाँ) मौजूद थीं, जिन की तरफ़ क़ुर्आन ने कई जगह इशारे किए हैं और मौजूदा बाइबिल में भी अनुवाद की त्रुटियाँ और स्पष्ट रद्दोबदल के बावजूद इन भविष्यवाणियों के आसार अब भी मौजूद हैं।

82. इस के बाद जो लोग (इस अहद से) फिर जाऐं वही फ़ासिक़ हैं ।[104]

فَمَنْ تَوَلّٰى بَعْدَ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ﴿٨٢﴾

83. क्या यह अल्लाह के दीन के सिवा किसी और दीन को चाहते हैं [105] हालाँकि आसमानों और ज़मीन की सारी मख़लूक चारो-नाचार (स्वेच्छा पूर्वक या विवशतापूर्वक) उसी की फ़रमाँबरदार है [106] और सब उसी की तरफ़ लौटाए जाऐंगे।[107]

اَفَغَيْرَ دِيْنِ اللّٰهِ يَبْغُوْنَ وَلَهٗٓ اَسْلَمَ مَنْ فِى السَّمٰوٰتِ
وَالْاَرْضِ طَوْعًا وَّكَرْهًا وَّاِلَيْهِ يُرْجَعُوْنَ ﴿٨٣﴾

84. कहो हम ईमान लाए अल्लाह पर और उस चीज़ पर जो नाज़िल की गई है हम पर और जो इब्राहीम, इस्माईल, इस्हाक़, याक़ूब और याक़ूब की औलाद पर नाज़िल हुई थी उस पर भी हम ईमान रखते हैं। एवं हमारा ईमान उस चीज़ पर भी है जो मूसा, ईसा और दूसरे पैग़म्बरों को उन के रब की ओर से दी गई हम उन के बीच भेद भाव नहीं करते और हम उस के फ़रमाँबरदार (मुस्लिम) हैं ।

قُلْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَآ اُنْزِلَ عَلَيْنَا وَمَآ اُنْزِلَ عَلٰٓى اِبْرٰهِيْمَ
وَاِسْمٰعِيْلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ وَالْاَسْبَاطِ وَمَآ اُوْتِىَ مُوْسٰى
وَعِيْسٰى وَالنَّبِيُّوْنَ مِنْ رَّبِّهِمْ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِّنْهُمْ
وَنَحْنُ لَهٗ مُسْلِمُوْنَ ﴿٨٤﴾

85. और जो व्यक्ति इस्लाम के सिवा किसी और दीन को अपनाएगा तो वह उस से हरगिज़ क़ुबूल नहीं किया जाएगा और आखिरत में वह नामुराद होगा [108]।

وَمَنْ يَّبْتَغِ غَيْرَ الْاِسْلَامِ دِيْنًا فَلَنْ يُّقْبَلَ مِنْهُ
وَهُوَ فِى الْاٰخِرَةِ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ﴿٨٥﴾

86. अल्लाह उन लोगों को किस तरह हिदायत देगा जिन्होंने ईमान के बाद कुफ्र किया [109] हालांकि वह इस बात की गवाही दे चुके हैं कि रसूल बरहक (सत्य पर आधारित) है और उन के पास स्पष्ट निशानियाँ भी आ चुकी हैं। अल्लाह ज़ालिमों को हिदायत नहीं दिया करता [110]।

كَيْفَ يَهْدِى اللّٰهُ قَوْمًا كَفَرُوْا بَعْدَ اِيْمَانِهِمْ وَشَهِدُوْٓا
اَنَّ الرَّسُوْلَ حَقٌّ وَّجَآءَهُمُ الْبَيِّنٰتُ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِى
الْقَوْمَ الظّٰلِمِيْنَ ﴿٨٦﴾

87. ऐसे लोगों का बदला यह है कि उन पर अल्लाह, फ़रिश्तों और तमाम इन्सानों की लानत होगी।

اُولٰٓئِكَ جَزَآؤُهُمْ اَنَّ عَلَيْهِمْ لَعْنَةَ اللّٰهِ وَالْمَلٰٓئِكَةِ
وَالنَّاسِ اَجْمَعِيْنَ ﴿٨٧﴾

88. वे उस में हमेशा रहेंगे, न उन के अज़ाब (यातना) में कटौती होगी और न उन को मुहलत ही मिलेगी।

خٰلِدِيْنَ فِيْهَا لَا يُخَفَّفُ عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ يُنْظَرُوْنَ ﴿٨٨﴾

89. अल्बत्ता जिन लोगों ने इस के बाद तौबा की और अपने आचार व्यवहार को दुरुस्त कर लिया तो अल्लाह बख्शने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।

اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ وَاَصْلَحُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ
غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٨٩﴾

104. अर्थात इस दृढ़ प्रतिज्ञा के बाद भी जो हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की रिसालत के सम्बन्ध में ली गई थी जो लोग उस से मुँह मोड़ लें, उन का यह दुस्साहस उन के नाफ़रमान होने का खुला सबूत है चाहे उन्होंने नेकी और फ़रमाबरदारी की ओढ़नी ओढ़ रखी हो और चाहे उन की गिनती अत्यन्त धार्मिक वयक्तियों में होती हो।

105. इस आयत में इस्लाम को ''अल्लाह का दीन'' कहा गया है जिस से यह बात अच्छी तरह खुल कर सामने आती है कि दुनिया में जो नाना प्रकार के धर्म पाए जाते हैं,एवं जो इस से पहले पाए जाते थे यद्यपि इन सब का सम्बन्ध अल्लाह से ही जोड़ा जाता है किन्तु वास्तव में इस्लाम ही एक ऐसा धर्म है जो अल्लाह का दीन कहलाने का योग्य अधिकारी है।

106. यह एक मात्र इस्लाम के सत्यधर्म होने का प्रमाण है। जब इन्सान समेत सारी सृष्टि सारी रचनाऐं विवशतापूर्वक अल्लाह के आगे सर झुकाने पर बाध्य हैं यहाँ तक कि (अल्लाह का इन्कार करने वाला) काफ़िर भी प्राकृतिक रुप से अल्लाह के क़ानून के आगे झुकने पर मजबूर है। अत: आप देखें कि कट्टर से कट्टर काफ़िर भी पाँव ही से चलता है आखों ही से देखता है और नाक ही से साँस लेता एवं सूँघता है। यह सब अल्लाह के निर्धारित किए हुए क़ानून हैं जिस का इन्कार करना और जिन से फिर जाना किसी व्यक्ति के लिए संभव नहीं। तो अपने जीवन के उस क्षेत्र में जिस में उसे कुछ अधिकार प्राप्त हैं यह किस तरह वैध हुआ कि वह अपने को अल्लाह के हवाले न करे और उस के क़ानून का उल्लंघन कर के उस की आज्ञाभंग कर के उस की दासता से मुक्त हो कर अपने लिए कोई सा धर्म या जीवन की कोई सी व्यवस्था इख़्तियार कर ले? इस आयत से यह सत्य भी उजागर होता है कि इस्लाम किसी एक नस्ल या एक गिरोह का दीन नहीं बल्कि वास्तव में वह पूरे जगत और सारी कायनात का दीन है। और जो व्यक्ति इस्लाम को दीन (जीवन प्रणाली) की हैसियत से अपनाता है वह कायनात में विद्यमान व्यवस्था के साथ चलता है और जो इस्लाम के सिवा किसी और दीन अथवा प्रणाली को अपनाता है वह कायनात में विद्यमान व्यवस्था के साथ नहीं चलता बल्कि बुनियादी हक़ीक़त से मुँह मोड़ कर कायनात में विद्यमान एवं प्रचलित व्यवस्था से टकराता है।

107. जब सब को अल्लाह ही के दरबार की ओर लौटना है तो जो लोग ऐसे धर्म को अपनाते हैं जिसे अल्लाह ने मान्यता नहीं दी है, या फिर ख़ुदा से बेपरवाह हो कर ही जीवन व्यतीत करने की नीति अपनाते हैं वे अपने विद्रोहपूर्ण एवं उद्दंडतापूर्ण रवैया का क्या औचित्य ख़ुदा के सामने प्रस्तुत कर सकेंगे ?

108. यह अल्लाह तआला की तरफ़ से इस बात का ख़ुला एलान है कि ख़ुदा के यहाँ सिर्फ सरकारी सिक्का चलेगा और वह है इस्लाम। इस के अलावा जो सिक्के भी होंगे वे सब ग़लत ठहरेंगे और रद्द कर दिए जाऐंगे चाहे वह किसी भी धर्म के नाम का सिक्का हो या सिरे से उस पर किसी धर्म का लेबल ही न लगा हो। दूसरे शब्दों में यह कह लीजिए कि ख़ुदा से तअल्लुक का वह तरीक़ा जिसे मान्यता न मिली हो या ख़ुदा से बेपरवाह हो कर जीवन व्यतीत करने की नीति अपनाई गई हो। इन में से कोई तरीक़ा भी अल्लाह के यहाँ सवीकृत न होगा । बल्कि आख़िरत की अदालत में ऐसे लोगों पर जाली सिक्का चलाने के जुर्म में मुक़दमा चलाया जाएगा और उन्हें अपनी जालसाजी के लिए सख़्त सज़ा भुगतनी पड़ेगी।

109. इशारा यहूदियों और ईसाईयों की तरफ़ है जिन को ईमान की दौलत नसीब हुई थी लेकिन इस के बावजूद उन्होंने कुफ़्र का रवैया अपनाया।

110. अर्थात जब तक आदमी ज़ुल्म के रवैया को त्याग़ने के लिए आमादा न हो जाए तब तक हिदायत की राह उस पर ख़ुलती नहीं।

90. जिन लोगों ने ईमान लाने के बाद कुफ्र किया और अपने कुफ्र में बढ़ते गए उन की तौबा हरगिज़ क़ुबूल न होगी [111] ऐसे लोग पक्के गुमराह हैं।

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا بَعْدَ إِيمَانِهِمْ ثُمَّ ازْدَادُوا كُفْرًا لَّن
تُقْبَلَ تَوْبَتُهُمْ وَأُولَٰئِكَ هُمُ الضَّالُّونَ ﴿٩٠﴾

91. निश्चय ही जिन लोगों ने कुफ्र किया और कुफ्र ही की हालत में मर गए अगर उन में से कोई (मुक्ति प्राप्त करने के लिए) जमीन भर सोना भी फिदय: (मुक्ति प्रतिदान) में दे तो उसे क़ुबूल नहीं किया जाएगा । [112] ऐसे लोगों के लिए दुख़दायी यातना है और उन का कोई मददगार न होगा।

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَمَاتُوا وَهُمْ كُفَّارٌ فَلَن يُقْبَلَ
مِنْ أَحَدِهِم مِّلْءُ الْأَرْضِ ذَهَبًا وَلَوِ افْتَدَىٰ بِهِ
أُولَٰئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ وَمَا لَهُم مِّن نَّاصِرِينَ ﴿٩١﴾

92. तुम नेकी के मक़ाम को हरगिज़ नहीं पा सकते जब तक कि उन चीज़ो में से खर्च न करो जो तुम को प्रिय हैं।[113] और जो कुछ तुम खर्च करोगे अल्लाह उस को जानता है।

لَن تَنَالُوا الْبِرَّ حَتَّىٰ تُنفِقُوا مِمَّا تُحِبُّونَ ۚ وَمَا تُنفِقُوا
مِن شَيْءٍ فَإِنَّ اللَّهَ بِهِ عَلِيمٌ ﴿٩٢﴾

93. खाने की ये सारी चीज़ें बनी इस्राईल के लिए हलाल थीं [114] सिवाय उन चीज़ों के जिन को इस्राईल ने तौरात नाज़िल होने से पहले अपने ऊपर हराम ठहराया था ।[115] कहो तौरात लाओ और उस को पढ़ो अगर तुम सच्चे हो।[116]

كُلُّ الطَّعَامِ كَانَ حِلًّا لِّبَنِي إِسْرَائِيلَ إِلَّا مَا حَرَّمَ
إِسْرَائِيلُ عَلَىٰ نَفْسِهِ مِن قَبْلِ أَن تُنَزَّلَ التَّوْرَاةُ ۗ قُلْ
فَأْتُوا بِالتَّوْرَاةِ فَاتْلُوهَا إِن كُنتُمْ صَادِقِينَ ﴿٩٣﴾

94. इस के बाद भी जो लोग झूठी बातों का सम्बन्ध अल्लाह से जोड़ें वही ज़ालिम हैं ।

فَمَنِ افْتَرَىٰ عَلَى اللَّهِ الْكَذِبَ مِن بَعْدِ ذَٰلِكَ فَأُولَٰئِكَ
هُمُ الظَّالِمُونَ ﴿٩٤﴾

95. कहो अल्लाह ने सच फ़रमाया है तो इब्राहीम के रास्ते की पैरवी करो जो रास्त रौ (सत्यनिष्ठ) था और शिर्क करने वालों में हरगिज़ न था।

قُلْ صَدَقَ اللَّهُ ۗ فَاتَّبِعُوا مِلَّةَ إِبْرَاهِيمَ حَنِيفًا وَمَا كَانَ
مِنَ الْمُشْرِكِينَ ﴿٩٥﴾

96. नि:संदेह पहला घर [117] जो लोगों के लिए बनाया गया [117] वही है जो ''बक्का'' में है।[118] दुनिया वालों के लिए बरकत का कारण [119] और हिदायत का जरीया।[120]

إِنَّ أَوَّلَ بَيْتٍ وُضِعَ لِلنَّاسِ لَلَّذِي بِبَكَّةَ مُبَارَكًا وَهُدًى
لِّلْعَالَمِينَ ﴿٩٦﴾

97. इस में स्पष्ट निशानियाँ हैं।[121] मक़ामे-इब्राहीम है।[122] और जो कोई उस में दाखिल हुआ अमन पा गया।जो लोग इस घर तक पहुँचने का सामर्थ्य रखते हैं उन पर अल्लाह के लिए उस घर का हज्ज फ़र्ज़ है और जो कुफ्र करे तो अल्लाह दुनिया वालों से बेनियाज़ है।[123]

فِيهِ آيَاتٌ بَيِّنَاتٌ مَّقَامُ إِبْرَاهِيمَ ۖ وَمَن دَخَلَهُ
كَانَ آمِنًا ۗ وَلِلَّهِ عَلَى النَّاسِ حِجُّ الْبَيْتِ مَنِ اسْتَطَاعَ إِلَيْهِ
سَبِيلًا ۚ وَمَن كَفَرَ فَإِنَّ اللَّهَ غَنِيٌّ عَنِ الْعَالَمِينَ ﴿٩٧﴾

111. अर्थात् जो जीवन भर कुफ्र करते रहे और जब मौत की घड़ी आ प्रकट हुई तो तौबा करने लगे ऐसे लोगों की तौबा में कोई ख़ुलूस नहीं इस लिए वह हरगिज़ क़ुबूल नहीं की जाएगी तौबा वही क़ुबूल की जाती है जो सच्चे दिल से की जाए और जिस के पीछे सुधार करने की भावना हो।

112. काफिरों की बेबसी को स्पष्ट करना अभिप्राय है कि अल्लाह तआला की अदालत से जब काफिरों के कभी न खत्म होने वाले अज़ाब (यात्ना) का फैसला हो जाएगा तो फिर उन के लिए निजात (मुक्ति) की कोई सूरत संभव न होगी। अगर (मान लो) किसी काफिर के पास ज़मीन भर सोना हो तो वह मुक्ति पाने के वास्ते उसे प्रतिदान (फिदय:) में देने के लिए बड़ी ख़ुशी से आमादा हो जाएगा लेकिन न तो उस रोज़ किसी के पास देने के लिए कुछ होगा और न किसी से कोई फिदय:(प्रतिदान) क़ुबूल ही किया जाएगा।

दुनिया में जो लोग आखिरत की निजात से बेपरवाह हो कर सिर्फ दुनिया हासिल करने की फिक्र में लगे रहते हैं उन्हें अपनी इस मूर्खता का सही अन्दाज़ा क़ियामत के ही दिन हो सकेगा।

113. किसी नेक काम को करना और बात है और नेकी के मक़ाम को पा लेना और। जहाँ कहने भर की दिनदारी होगी वहाँ कुछ न कुछ नेकी भलाई के काम ज़रुर दिखाई देंगे लेकिन अपनी प्रिय वस्तु दौलत में से अल्लाह के लिए खर्च करने और उस की राह में क़ुर्बानियाँ देने की भावना लुप्त होगी इस के विपरीत जहाँ वास्तविक दीनदारी होगी वहाँ आदमी अपने प्रिय धन को अल्लाह के लिए खर्च करने और उस की राह में क़ुर्बानियाँ देने के लिए बड़ी ख़ुशी से आमादा हो जाएगा। यह एक कसौटी है जिस पर अल्लाह की मुहब्बत और उस की वफ़ादारी के दावे को परखा जा सकता है । यहूदी अल्लाह की राह में खर्च करने के मामले में बड़े ही ख़सीस सिद्ध हुए थे। इस लिए इस कसौटी ने इन की दीनदारी की हक़ीक़त को बिलकुल बेनिक़ाब कर दिया।

अपनी बेहतरीन चीज़ों को अल्लाह की राह में खर्च करने की बेहतरीन मिसाल वह है जो हज़रत अबू तल्हा ने पेश फ़रमाई---''मदीना में ''बैरहा'' उन का प्रिय बाग़ था। उस बाग़ में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम तशरीफ़ ले जाया करते और उस का पानी बड़े चाव से पीते । जब यह आयत नाज़िल हुई तो अबू तल्हा ने अर्ज किया '' या रसूलुल्लाह यह बाग़ अल्लाह के लिए सदक़ा है । इस को आप जिस तरह उचित समझें उपयोग में लाऐं। आप ने फ़रमाया यह माल बहुत खूब है और मैं मुनासिब समझता हूँ कि इसे तुम्हारे रिश्तादारों में तक़सीम कर दिया जाए । उन्होंने कहा आप ऐसा ही किजिए अत: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इस बाग़ को उन के रिश्तेदारों में तक़सीम कर दिया (तफ़्सीर इब्ने-कसीर Vol. 1 Page 381)

114. मुराद वे जानवर हैं जिन का खाना हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की शरीअत में हलाल है।

115. इस्राईल हज़रत याक़ूब अलैहिस्सलाम का लक़ब (उपनाम)है। वह पैग़म्बर थे। और पैग़म्बर किसी चीज़ को अल्लाह की मर्जी के बग़ैर हराम नहीं ठहराते, इस लिए इस संदेह के लिए कोई गुन्जाइश नहीं है कि उन्हों ने जो चीज़ें अपने उपर हराम ठहराई थीं वह मात्र अपनी मर्ज़ी का फ़ल थीं ।

116. यहूदियों का असल एतिराज़ यह था कि क़ुर्आन कुछ उन चीज़ो को हलाल क़रार दे रहा है जो इब्राहीम की मिल्लत में हराम थीं ख़ास तौर से उन का इशारा उँट की तरफ था जिस को क़ुर्आन ने हलाल क़रार दिया है। लेकिन यहूदी उस के हराम होने के क़ायल थे। अत: तौरात में है :

'' परन्तु पागुर करने वाले व फटे खुरवालों में से इन पशुओं को न खाना, अर्थात् ऊँट जो पागुर तो करता है परन्तु चिरे खुर का नहीं होता इस लिए वह तुम्हारे लिए अशुद्ध ठहरा है।'' (लैव्यव्यवस्था ११:४)

इस का जवाब क़ुर्आन ने यह दिया कि जिन चीज़ो को क़ुर्आन हलाल क़रार दे रहा है वह इब्राहीमी मिल्लत में भी हलाल थीं जिन में ऊँट भी शामिल है और यह बात तौरात के नाज़िल होने से पहले की है। इस लिए बाद में जो चीज़ें चाहे वह हज़रत याक़ूब के द्वारा हराम ठहरा दी गई हों या तौरात के द्वारा, इस की परिस्थिति बिलकुल दूसरी है अर्थात वह कुछ खास कारणों से विशेष रुप से बनी इस्राईल ही के लिए हराम ठहरा दी गई थी अत: उन के बारे में यह दावा कि वे असल इब्राहीमी मिल्लत में हराम थीं, सहीं नहीं है। यहूदियों के इस ग़लत दावे का खण्डन खुद तौरात से होता है इस लिए कि तौरात से इस की पुष्टि कहीं से नहीं होती कि ये चीज़ें पहले दिन से हराम चली आ रही थीं। जहाँ तक वर्तमान परिवर्तित तौरात की बात है उस में भी ऐसी बातें मौजूद हैं जो इस दावे को ग़लत ठहराती हैं। जैसे नूह अलैहिस्सलाम के किस्से में है।

'' सब चलने वाले जन्तु तुम्हारा आहार होंगे, जैसा तुम को हरे हरे छोटे पेड़ दिए थे वैसा ही अब सब कुछ देता हूँ। पर माँस को प्राण समेत अर्थात् लहू समेत तुम न खाना।''(उत्पति : 9,3,4)

117. पहले घर से मुराद अल्लाह की इबादत के लिए बनाया जाने वाला पहला घर या पहली इबादतगाह (उपासना

स्थल) है। इस आयत में बताया गया है कि वह घर ख़ाना-ए-काबा है जो मक्का में स्थित है। क़ुर्आन ने और दूसरी जगहों पर इस के निर्माण के सम्बन्ध में स्पष्ट किया है कि इस के बनाने वाले (निर्माता) हज़रत इब्राहीम और हज़रत इस्माईल हैं। इस से निम्नलिखित बातों पर रौशनी पड़ती है।

(A) हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम से पहले अल्लाह की इबादत के लिए किसी स्थाई (Permanent) इबादतगाह का वजूद नहीं था।

(B) जिन रिवायतों (उल्लेखों) में यह बयान किया गया है कि ख़ाना-ए-काबा को सब से पहले हज़रत आदम अलैहिस्सलाम ने बनाया और हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने इस निर्माण की पुनरावृत्ति की उन का खण्डन क़ुर्आन के इस बयान से हो जाता है । अगर उन रिवायतों में बयान की गई बातें सत्य होतीं तो क़ुर्आन इस का वर्णन ज़रुर करता क्यों कि पहले निर्माता का वर्णन न करना और सिर्फ उस की पुनरावृत्ति (तजदीद) करने वाले का वर्णन करना क़ुर्आन से मेल खाने वाली बात नहीं है। इस के अलावा ये रिवायतें सही हदीस का दर्जा नहीं रखतीं। इब्ने कसीर ने बैहक़ी की एक रिवायत जिस में हज़रत आदम के काबा को तामीर करने (बनाने) का ज़िक्र है, नक़ल कर के लिखा है कि यह इब्ने लहीआ के मुफ़र्रदात (रिवायतों) में से है जो कमज़ोर (ज़ईफ) है और अनुमानत: अबदुल्लाह बिन अम्र पर मौक़ूफ़ (निर्भर) है (अर्थात नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का इर्शाद नहीं है।) (इब्ने कसीर Vol. 1, Page 383) और तारीख़ इब्ने कसीर में है ।

ěhÐāĘGĀ¶¬´ Ï Ä¤Ï ì°«ĖĔH

(الجامع اللطیف ص ٦٩ بحوالہ تاریخ ابن کثیر۔)

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से कोई सही हदीस इस सिलसिले में वारिद नहीं हुई है।

(अलजामिउल्लतीफ़ Page 69 तारीख़ इब्ने कसीर के हवाले से)

(C) बैतुल मुक़द्दस का निर्माण ख़ाना-ए-काबा के निर्माण के बाद हुआ । अत: बाइबिल से इस की पुष्टि होती है कि इस का निर्माण हज़रत सुलेमान अलैहिस्सलाम के हाथों हुआ। ''और इस्राएलिओं के मिस्र देश से निकलने के चार सौ अस्सीवें वर्ष के बाद जो सुलैमान के इस्राएल पर राज्य करने का चौथा वर्ष था उस के ज़ीव नाम के दूसरे महीने में वह यहोवा का भवन बनाने लगा।'' (राजाओंका वृत्तांत प्रथम) इस लिए यहूदियों का यह दावा ऐतिहासिक रुप से ग़लत है कि बैतुल मुक़द्दस को प्राथमिकता प्राप्त है।

(D) तौहीद की विचारधारा उतनी ही प्राचीन है जितना कि स्वयं मनुष्य। इस के ऐतिहासिक तथ्यों में से ख़ाना-ए-काबा है जिस की आधारशिला उस व्यक्ति ने रखी थी जिस को विश्व की तीनों मिल्लतें यानी यहूदी, ईसाई और मुसलमान (अर्थात् विश्व के बहुसंख्यक) अपना इमाम स्वीकार करती हैं।

118. बक्का मक्का का पूराना नाम है जिस का अर्थ है 'शहर'। ज़बूर (भजन संहिता) में इस का ज़िक्र आया है लेकिन यहूदियों ने रद्दोबदल कर के बक्का की वादी को बुका की वादी बना दिया जिस का अर्थ है रोने की वादी।

'' वे रोने की तराई में जाते हुए उस को स्त्रोतों का स्थान बनाते हैं फिर बरसात की अगली वृष्टि उस में आशीष ही आशीष उपजाती है। वे बल पर बल पाते हैं। (भजन संहिता 84:6,7) अलबत्ता अंग्रेज़ी बाइबिल में इस का अनुवाद Valley of Baca मिलता है। इस प्रकार के रद्दोबदल के द्वारा उन्हों ने हक़ीक़त पर परदा डालने की कोशिश की है ताकि बैतुल्लाह (अल्लाह के घर) और आख़िरी नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को लोग पहचान न सकें। क़ुर्आन ने मक्का के इस प्राचीन नाम का वर्णन कर के असल हक़ीक़त को बेनिक़ाब किया है।

119. अर्थात् रुहानी लाभों का स्त्रोत ।

120. अर्थात इस से तौहीद की राह रौशन होती है और इन्सानों की रहनुमाई (मार्गदर्शन) खुदा परस्ती की तरफ़ होती है।

121. निशानियाँ तौहीद की, निशानियाँ इस घर की मान्यता एवं लोकप्रियता की। निशानियाँ इस्लाम के सत्यधर्म होने की और निशानियाँ इस बात की कि इस घर की छत्र छाया में महान व्यक्तियों ने परवरिश पाई और इस ने मुजाहिदाना ज़िन्दगी (संघर्षशील जीवन) की रुह उन के अन्दर इस तरह फूँकी कि दुनिया की कोई ताक़त इन्हें पराजित न कर सकी।

122. मक़ामे-इब्राहीम का मतलब है इब्राहीम के खड़े होने की जगह। अभिप्राय वह जगह है जहाँ इब्राहीम अलैहिस्सलाम इबादत के लिए खड़े हो जाते थे। यह जगह मस्जिदे-हराम है और यहाँ इस का ज़िक्र करने का उद्देश्य ख़ास तौर पर यहूदियों को स्पष्ट रुप से यह बताना है कि इब्राहीम की असल इबादतगाह जहाँ वह खुद इबादत करते रहे यही मस्जिदे-हराम है न कि बैतुल मक़दिस। यहूदियों ने इस हक़ीक़त पर परदा डालने की कोशिश की और इस मक़सद के लिए तौरात में

जगह जगह रद्दोबदल किया फिर भी मौजूदा बाइबिल में ऐसे बयान मौजूद हैं जिन से इस का अनुमोदन होता है। अत: बाइबिल की किताब उत्पत्ति में है:-

"फिर वहाँ से कूच कर के वह उस पहाड़ पर आया जो बेत-एल के पूर्व की ओर है, और अपना तम्बू उस स्थान में खड़ा किया जिसका पच्छिम की ओर तो बेत-एल और पूर्व में ऐ है, और वहाँ भी उस ने यहोवा के लिए एक वेदी बनाई और यहोवा से प्रार्थना की । और अब्राम कूच कर के दक्षिण देश की ओर चला गया।" (उत्पती 12:8,9) इस में बेत-एल से अभिप्राय बैतुल्लाह (अल्लाह का घर) है क्यों कि एल को इब्रानी में ख़ुदा कहते हैं इस लिए बेते एल के शाब्दिक अर्थ हुए ख़ान-ए-ख़ुदा। ख़ान-ए-काबा के पूरब में सफ़ा मरवा की पहाड़िया हैं। सफ़ा पहाड़ पर इब्राहीम का ठिकाना था और मरवा पर हज़रत इस्माईल की क़ुर्बानी की घटना घटी। दक्षिण की तरफ़ हज़रत इब्राहीम के बढ़ने का जो ज़िक्र है तो उस से मुराद अरफ़ात का सफर है क्योंकि अरफ़ात बैतुल्लाह के दक्षिण पूरब में स्थित है।

मक़ामे इब्राहीम का यह मतलब अपने असल और व्यापक अर्थ के लिहाज़ से है। वैसे मक़ामे-इब्राहीम उस पत्थर को भी कहते हैं जिस पर खड़े होकर हज़रत इब्राहीम ने खाना-ए-काबा की तामीर (निर्माण) किया था। इस पत्थर पर असाधारण रुप से हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम के क़दम का निशान पड़ गया था और आज भी यह पत्थर मुबारक क़दमों के निशान के साथ मौजूद है जो ख़ाना-ए-काबा के पास 'मुताफ़' में रखा हुआ है। गोया इतिहास ने इब्राहीम अलैहिस्सलाम के क़दमों के निशान को भी सुरक्षित रखा है ताकि अल्लाह के घर (बैतुल्लाह) के निर्माणकर्ता के बारे में किसी संदेह की गुन्जाइश न रहे।

123. अर्थात् इन स्पष्ट निशानियों के बाद जो लोग तौहीद (ऐकेश्वरवाद) को क़ुबूल करने और बैतुल्लाह (अल्लाह के घर) को तौहीद के केन्द्र की हैसियत से स्वीकार करने के लिए तैयार न हों वे काफ़िर हैं और अल्लाह को अपनी निशानियाँ स्पष्ट कर देने के बाद इस बात की परवाह नहीं कि कौन कुफ्र की राह अपनाता है और कौन ईमान की।

हज्ज इस्लाम का एक अनिवार्य एवं पाँचवा स्तंभ है। सामर्थ्य के बावजूद जो हज्ज न करे अल्लाह को उस की परवाह नहीं की यहूदी हो कर मरता है या ईसाई हो कर।

98. कहो ऐ अहले-किताब तुम अल्लाह की आयतों का क्यों इन्कार करते हो ? तुम जो कुछ कर रहे हो अल्लाह उसे देख रहा है।

قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تَكْفُرُوْنَ بِاٰيٰتِ اللّٰهِ ۖ وَاللّٰهُ
شَهِيْدٌ عَلٰى مَا تَعْمَلُوْنَ ﴿٩٨﴾

99. कहो ऐ अहले किताब तुम ईमान लाने वालों को अल्लाह की राह से क्यों रोकते हो ?[124] तुम इस में टेढ़पन पैदा करना चाहते हो।[125] जब कि तुम गवाह हो ।[126] अल्लाह तुम्हारी हरकतों से बेख़बर नहीं है।

قُلْ يٰٓاَهْلَ الْكِتٰبِ لِمَ تَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ مَنْ اٰمَنَ
تَبْغُوْنَهَا عِوَجًا وَّاَنْتُمْ شُهَدَآءُ ۗ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ
عَمَّا تَعْمَلُوْنَ ﴿٩٩﴾

100. ऐ ईमान वालों ! अगर तुम अहले-किताब के किसी गिरोह की बात मान लोगे तो वे तुम्हें ईमान लाने के बाद काफिर बना देंगे।[127]

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنْ تُطِيْعُوْا فَرِيْقًا مِّنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا
الْكِتٰبَ يَرُدُّوْكُمْ بَعْدَ اِيْمَانِكُمْ كٰفِرِيْنَ ﴿١٠٠﴾

101. और तुम किस तरह कुफ्र करोगे जब कि तुम्हें अल्लाह की आयतें सुनाई जा रही हैं और उस का रसूल तुम्हारे बीच मौजूद है।[128] और जिस ने अल्लाह को मज़बूत पकड़ लिया [129] उसे सीधे रास्ते की हिदायत मिल गई।

وَكَيْفَ تَكْفُرُوْنَ وَاَنْتُمْ تُتْلٰى عَلَيْكُمْ اٰيٰتُ اللّٰهِ وَفِيْكُمْ رَسُوْلُهٗ ۗ
وَمَنْ يَّعْتَصِمْ بِاللّٰهِ فَقَدْ هُدِيَ اِلٰى صِرَاطٍ مُّسْتَقِيْمٍ ﴿١٠١﴾

102. ऐ ईमान वालों ! अल्लाह से डरो जैसा कि उस से डरने का हक़ है [130] और तुम्हें मौत न आए मगर इस हाल में कि तुम मुस्लिम हो।[131]

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ حَقَّ تُقٰتِهٖ وَلَا تَمُوْتُنَّ
اِلَّا وَاَنْتُمْ مُّسْلِمُوْنَ ﴿١٠٢﴾

103. और अल्लाह की रस्सी को [132] सब मिल कर मज़्बूत पकड़ लो [133] और तफ़रिके (विभेद) में न पड़ो।[134] और अल्लाह के इस फज़्ल (कृपा) को याद करो कि तुम एक दुसरे के दुश्मन थे[135] तो उस ने तुम्हारे दिल को जोड़ दिया और उस के फ़ज़्ल से तुम भाई भाई बन गए।तुम आग के एक गढ़े के किनारे खड़े थे तो उस ने तुम्हें बचा लिया। इस तरह अल्लाह अपनी आयतें (हिदायत) स्पष्ट करता है ताकि तुम राह पा जाओ।[136]

وَاعْتَصِمُوْا بِحَبْلِ اللّٰهِ جَمِيْعًا وَّلَا تَفَرَّقُوْا ۖ وَاذْكُرُوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ
عَلَيْكُمْ اِذْ كُنْتُمْ اَعْدَآءً فَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوْبِكُمْ فَاَصْبَحْتُمْ
بِنِعْمَتِهٖٓ اِخْوَانًا ۚ
وَكُنْتُمْ عَلٰى شَفَا حُفْرَةٍ مِّنَ النَّارِ فَاَنْقَذَكُمْ مِّنْهَا ۗ كَذٰلِكَ
يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيٰتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُوْنَ ﴿١٠٣﴾

104. तुम में एक गिरोह ज़रुर ऐसा होना चाहिए जो ख़ैर (इस्लाम) की तरफ़ बुलाए , मारुफ़ (नेकी) का हुक्म करे और मुन्कर (बुराई) से रोके ।[137] ऐसे ही लोग फ़लाह (सफ़लता) पाने वाले हैं।

وَلْتَكُنْ مِّنْكُمْ اُمَّةٌ يَّدْعُوْنَ اِلَى الْخَيْرِ وَيَاْمُرُوْنَ بِالْمَعْرُوْفِ
وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ ۗ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُوْنَ ﴿١٠٤﴾

124. इशारा है उन संदेहों की ओर जो अहले-किताब, इब्राहीमी मिल्लत, बैतुल्लाह और आखिरी पैग़म्बर के सम्बन्ध में लोगों के दिलों में पैदा करने की कोशिश करते थे।

125. अल्लाह की राह में टेढ़ पैदा करने का मतलब उस के असल और वास्तविक दीन में रद्दोबदल करना और उस में बिद्अतें अर्थात नई नई बातें इत्यादि पैदा करना है।

126. अर्थात तुम्हें सत्यधर्म (दीने-हक़) का गवाह बना कर खड़ा किया गया था मगर तुम हक़ के गवाह बनने की जगह धन दौलत के गवाह बने और तुम ने हक़ को छिपाना अपनी नीति बना ली।

127. यह विशेष रुप से अहले-किताब (यहूदियों और ईसाईयों) के उस गिरोह की ओर संकेत है जिस के आरोपों एवं विरोधों का ऊपर वर्णन हुआ।

128. अर्थात ऐसी हालत में जब कि तुम्हें अल्लाह की आयतें सुनाई जा रही हैं और उस का रसूल भी तुम्हारे बीच मौजूद है अगर तुम ने कुफ्र की राह अपनाई तो यह बेहद संगीन और अत्यन्त दुर्भाग्य की बात होगी।

129. अल्लाह को मज़बूत पकड़ने का मतलब उस के साथ गहरा सम्बन्ध और लगाव पैदा करना है।

130. यह है वंछित आदर्श कि आदमी अल्लाह से इस तरह डरे जिस तरह कि उस से डरने का हक़ है। रही तक़्वा और परहेज़गारी की फ़िक़्ही और क़ानूनी हद तो उस के बारे में दूसरी जगह फ़रमाया है :

فاتقو اللّٰہ ما استطعتم

"अल्लाह से डरो जिस हद तक हुम्हारे बस में है"

(अत्तग़ाबुन :१६)

131. मतलब यह है कि जीवन भर इस्लाम पर दृढ़ रहो और जब इस दुनिया से कूच करो तो मुसलमान की हैसियत से कूच करो।

132. हब्ल (रस्सी) से मुराद अल्लाह की किताब (क़ुर्आन) है जो बन्दों को ख़ुदा से जोड़ती है और जिस की हैसियत प्रण प्रतिज्ञा की है, इस लिए इस को थामना ख़ुदा को थाम लेने के समानार्थ है। हदीस में आता है रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:-

كتاب اللّٰہ هو حبل اللّٰہ الممدود من السماء الى الارض

" अल्लाह की किताब ही अल्लाह की रस्सी है जो आसमान से ज़मीन तक तनी हुई है।" (इब्ने कसीर Vol. 1 Page 389 तबरी के हवाले से)

133. अर्थात् मुसलमान केवल व्यक्तिगत रुप से ही नहीं बल्कि सामूहिक रुप से भी क़ुर्आन को मज़बूती के साथ थाम लें और उम्मत के अन्दर इसी किताब को प्रधानता प्राप्त हो और वे इस के साथ गहरा लगाव रखें ।

134. तफ़रिक़े या विभेद या फूट उस सूरत में पड़ जाती है जब कि अल्लाह की किताब के साथ लगाव कमज़ोर पड़ जाता है और व्यवहारिक रुप से इस किताब को प्रधानता, कसौटी, एकमात्र समाधान तथा आदर्श नहीं ठहराया जाता यद्यपि उस में अपनी आस्था व्यक्त करने एवं उस का आदर करने का क्रम जारी रहता है। अल्लाह की किताब को ध्यान का आकर्षण केन्द्र समझने के बजाय बुज़ुर्गों के क़ौल (वचनों) और उन की किताबों को ज़रूरत से ज़्यादा महत्व दिया जाता है और फिर विवेक शुन्य अनुयायियों के जो समूह (अस्तित्व में आते हैं वे अपने अपने "इमाम" अपने अपने बुज़ुर्ग, अपने नेता (क़ायद) और अपने अपने विद्वानों (अल्लामा) की रस्सी को इतना मज़बूत पकड़ लेते हैं कि अल्लाह की रस्सी "क़ुर्आन" के हाथ से छूट जाने का ज़रा भी एहसास नहीं होता। परिणाम यह होता है कि बड़े बड़े मतभेद और गिरोह बन्दी उम्मत के अन्दर उभरने लगती है और मिल्लत में ऐसी फूट पड़ती है कि पूरी व्यवस्था ही तितर बितर हो जाती है।

अफ़सोस कि इस चेतावनी के बावजूद मुसलमानों में गिरोह बन्दी हुई। ये गिरोह बन्दी इसी सूरत में समाप्त हो सकती है जब कि मुसलमान अपने फ़िरक़े अपने गिरोह और अपने मसलक (विचार धारा) का लिहाज़ किए बिना अल्लाह की किताब को वही हैसियत और वही दर्जा दे जिस की वह अधिकारी है और उस के साथ गहरा लगाव रखें।

135. इशारा है अरब वासियों की आपसी दुश्मनी की तरफ़ जिस के फलस्वरुप एक क़बीला दूसरे क़बीले से जंग पर तुल जाता था।

136. अर्थात उस दीन की क़द्र करो जिस ने तुम्हारे अन्दर भाईचारा एवं उच्चस्तर की एकता पैदा कर दी। मालूम हुआ कि इस्लाम की वह बुनियाद है जिस को सही तौर से अपनाने की सूरत में मानव समाज में सही अर्थ में भाईचारगी, एकता, और भावनात्मक लगाव पैदा होता है।

137. " अम्र बिलमारुफ़ और नही अनिलमुनकर"अर्थात नेकी का हुक्म करना और बुराई से रोकना, हर मुसलमान का अनिवार्य गुण है जैसा कि क़ुर्आन के व्याख्यान से स्पष्ट है किन्तु दीन की ओर बुलाने का काम तैयारी भी चाहता है और क्षमता एवं योग्यता भी तथा इस के लिए समय निकालने और संघर्ष करने की भी ज़रूरत होती है अत: इस कार्य के लिए एक गिरोह का विशेष रुप से सुनिश्चित होना अनिवार्य है ताकि नेकी का हुक्म करने एवं बुराई से रोकने का महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य काम अच्छे तरीक़े से अन्जाम पा सके। मुस्लिम उम्मत का महानतम कर्तव्य है कि वह अपने अन्दर से ज्ञान रखने वालों एवं योग्य

व्यक्तियों पर आधारित हक़ की ओर आहवान करने वाला एक गिरोह उभारे और इस काम के लिए उस को आवश्यक साधन एवं सामाग्री पहुँचाए। अगर उम्मत इस मामले में आलस्य दिखाए तो वह अपने उस अनिवार्य कर्तव्य को पूरा करने में फिसड्डी एवं निकम्मी साबित होगी जिसे करने के लिए ही उसे बरपा किया गया है। क्यों कि इस उम्मत को उम्मते-वस्त (बीच की उम्मत) इसी आधार पर कहा गया है कि इसे लोगों पर गवाह होने का अनिवार्य कर्तव्य अंजाम देना है।

आयत में ख़ैर से मुराद दीन इस्लाम है जो दुनिया और आख़िरत की भलाईयाँ अपने अन्दर समेटे हुए है और मारुफ़ से मुराद जानी पहचानी भलाईयाँ हैं जैसे ख़ुदा का डर,माता पिता के साथ अच्छा सुलूक, रिश्तेदारों से अच्छा बर्ताव, पड़ोसियों के साथ अच्छा व्यवहार, मुहताज़ों की मदद, सच्चाई एवं अमानतदारी, न्याय एवं समानता, मज़लूमों की मदद इत्यादि और मुन्कर से मुराद वे बुराईयाँ हैं जिन का बुराई होना बिल्कुल स्पष्ट है जैसे ख़ुदा का इन्कार, नाहक़ क़त्ल, ज़ुल्म, झूट, विश्वासघात, फरेब, कपट, यतीमों का माल हड़प करना, कंजूसी, व्यभिचार (ज़िना), बेहयाई, नंगापन,इत्यादि। ये वे मारुफ़ और मुन्कर हैं जिन पर मानव स्वभाव भले होने और बुरे होने का हुक्म लगाता है। इस लिए इन्सान इन के भलाई होने या बुराई होने को जानता है। और इस लिहाज़ से हर व्यक्ति अपने किए का ज़िम्मेदार और ख़ुदा के सामने जवाब देह है। इस्लाम ने भलाईयों और बुराईयों की जो तफ़सील पेश की है उस में सब से ऊपर यही भलाई (मारुफ़) और बुराई (मुन्कर) हैं जिन को मानव स्वभाव पहचानता है। मारुफ़ पर लोगों को कहने और मुन्कर से उन्हें बाज़ रखने के लिए उपदेश देने और याद दिलाते रहने की ज़रुरत है और कुछ परिस्थितियों में ताक़त के इस्तेमाल की भी। इस लिए एक ऐसे गिरोह को उभारने की हिदायत की गई है जो विशेष रुप से इस काम में लगे हों और जहाँ मुसलमानों को सत्ता प्राप्त हो वहाँ सत्ता का इस्तेमाल भलाईयों की परवरीश करने का सामान करने और बुराईयों को घटाने के लिए अवश्य होना चाहिए।

उस दिन कितने ही चेहरे रौशन होंगे और कितने ही काले। तो जिन के चेहरे काले होंगे उन से कहा जाएगा क्या तुम ने ईमान लाने के बाद कुफ्र किया? लो अब अपने कुफ्र के बदले में अज़ाब (यातना) का मज़ा चखो।(अल-क़ुर्आन)

105. और उन लोगों की तरह न हो जाना जो तफ़रिके (फूट) में पड़ गए और जिन्होंने स्पष्ट हिदायत पाने के बाद इख़्तिलाफ़ (मतभेद) किया।[137 A] ऐसे लोगों के लिए सख़्त अज़ाब (यातना) है।

وَلَا تَكُونُوا كَالَّذِينَ تَفَرَّقُوا وَاخْتَلَفُوا مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَهُمُ
الْبَيِّنَاتُ ۚ وَأُولَٰئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿١٠٥﴾

106. उस दिन कितने ही चेहरे रौशन होंगे और कितने ही काले। तो जिन के चेहरे काले होंगे उन से कहा जाएगा क्या तुम ने ईमान लाने के बाद कुफ़्र किया? लो अब अपने कुफ़्र के बदले में अज़ाब (यातना) का मज़ा चखो।

يَوْمَ تَبْيَضُّ وُجُوهٌ وَتَسْوَدُّ وُجُوهٌ ۚ فَأَمَّا الَّذِينَ اسْوَدَّتْ
وُجُوهُهُمْ أَكَفَرْتُمْ بَعْدَ إِيمَانِكُمْ فَذُوقُوا الْعَذَابَ
بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُونَ ﴿١٠٦﴾

107. अलबत्ता वे लोग जिन के चेहरे रौशन होंगे वे अल्लाह की रहमत में होंगे। उस में वे हमेशा रहेंगे।

وَأَمَّا الَّذِينَ ابْيَضَّتْ وُجُوهُهُمْ فَفِي رَحْمَةِ اللَّهِ ۖ هُمْ فِيهَا
خَالِدُونَ ﴿١٠٧﴾

108. ये अल्लाह की आयतें हैं जो हम तुम्हें ठीक ठीक सुना रहे हैं । और अल्लाह दुनिया वालों पर ज़ुल्म करना नहीं चाहता।

تِلْكَ آيَاتُ اللَّهِ نَتْلُوهَا عَلَيْكَ بِالْحَقِّ ۗ وَمَا اللَّهُ
يُرِيدُ ظُلْمًا لِلْعَالَمِينَ ﴿١٠٨﴾

109. जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है सब अल्लाह ही के लिए है और सारे मामले आख़िरकार उसी के समक्ष प्रस्तुत होंगे।

وَلِلَّهِ مَا فِي السَّمَاوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ ۚ وَإِلَى اللَّهِ تُرْجَعُ
الْأُمُورُ ﴿١٠٩﴾

110. तुम ख़ैर उम्मत (बेहतरीन गिरोह) हो [138] जिसे इन्सानों (के सुधार एवं मार्गदर्शन) के लिए बरपा किया गया है । तुम मारुफ़ (भलाई) का हुक्म करते हो और मुन्कर (बुराई) से रोकते हो और अल्लाह पर ईमान रखते हो ।अगर अहले-किताब ईमान लाते तो उन के हक़ में बेहतर होता।[139] इन में कुछ लोग तो मोमिन हैं लेकिन अधिकतर लोग फ़ासिक़ (अवज्ञाकारी) हैं।

كُنْتُمْ خَيْرَ أُمَّةٍ أُخْرِجَتْ لِلنَّاسِ تَأْمُرُونَ
بِالْمَعْرُوفِ وَتَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَتُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ ۗ
وَلَوْ آمَنَ أَهْلُ الْكِتَابِ لَكَانَ خَيْرًا لَهُمْ ۚ مِنْهُمُ الْمُؤْمِنُونَ
وَأَكْثَرُهُمُ الْفَاسِقُونَ ﴿١١٠﴾

111. वे तुम्हारा कुछ बिगाड़ नहीं सकते सिवाय थोड़ी सी तकलीफ़ पहुँचाने के।और अगर वे तुम से जंग करेंगे तो पीठ दिखाऐंगे।[140] फ़िर उन को कहीं से मदद नहीं मिल सकेगी।

لَنْ يَضُرُّوكُمْ إِلَّا أَذًى ۖ وَإِنْ يُقَاتِلُوكُمْ يُوَلُّوكُمُ
الْأَدْبَارَ ثُمَّ لَا يُنْصَرُونَ ﴿١١١﴾

137. (A) ''जो तफ़रीके (फूट) में पड़ गए और जिन्होंने स्पष्ट हिदायतें पाने के बाद मतभेद किया'' से इशारा यहूदियों और ईसाईयों की तरफ़ है जिन्हें तौरात और इन्जील के द्वारा दीन की स्पष्ट संरचना दी गई थी और जिन पर तौहीद (एकेश्वरवाद) का भाव (मफ़हूम) अच्छी तरह खोल दिया था एवं दीन की शिक्षाऐं खोल कर साफ़ तरीक़े से बयान की गई थी किन्तु उन्होंने, कलाम में कटहुज्जती, और धर्म में नुक़ताचीनी कर हज़ारों समस्याऐं पैदा कर लीं जिस का नतीजा यह निकला कि वे फ़िरक़े (गिरोहों) में बट गए और विभेद एवं बिखराव का शिकार हो गए।

यहाँ यहूदियों और ईसाईयों के ख़राब रवैये का हवाला देने से अभिप्रेत मुसलमानों को सावधान करना है कि क़ुर्आन के द्वारा जो हक़ (सत्य) उन पर स्पष्ट हुआ है और जो उज्जवल शिक्षाऐं उन्हें मिली हैं उस की वह क़द्र करें और गुमराह उम्मतों (समुदायों) के रवैये को न अपनाऐं।

अफ़सोस कि इस चेतावनी के बावजूद मुसलमानों ने क़ुर्आन की पेश की हुई शिक्षाओं में यहाँ तक कि अक़ायद (मौलिक धारणाओं) में भी नित नई बातें पैदा कर दीं जिस से दीन का स्वरुप बिगड़ गया और वे भी विभेद (इख़्तिलाफ़) एवं बिख़राव का शिकार हो गए। और फिर इख़्तिलाफ़ की शिद्दत ने फ़िरक़ों एवं गिराहों को जन्म दिया और अब स्थिति यह है। इस ख़राब स्थिति का वास्तविक एवं प्रभावी इलाज़ यह है कि क़ुर्आन की हिदायत के अनुसार एक ऐसा गिरोह उठ ख़ड़ा हो जो हर तरह की गिरोही और मसलकी (मतों के) पक्षपात से ऊपर उठ कर सीधे और बेलाग तरीक़े से उस दीन की तरफ़ दअवत दे जिसे क़ुर्आन ने 'ख़ैर' कह कर सम्बोधित किया है।

138. ख़ैर-उम्मत (बेहतरीन गिरोह) इस आधार पर कि यही उम्मत सत्य धर्म पर चल रही है। अहले किताब ने इस सत्य मार्ग से मुँह मोड़ कर असल दीन (सत्य धर्म) को गुम कर दिया। अब इन्सानियत का सुधार और उस को राह दिखाने के लिए मुस्लिम उम्मत को बरपा किया है। इस उम्मत की विशेषता एवं इस का गुण यह है कि वे ईमान के गुणों से युक्त हो कर भलाई का हुक्म करने तथा बुराई से रोकने का अनिवार्य कर्तव्य निभाते हैं। इसी कारण इस उम्मत को ख़ैर-उम्मत या बेहतरीन गिरोह का लक़ब (उपनाम) दिया है। ना कि वंश और जाति के आधार पर जैसा कि अहले-किताब अपने बारे में ख़याल करते रहें हैं।

ख़ैर-उम्मत कहलाए जाने के हर तरह याग्य अधिकारी सहाबा किराम (हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के प्यारे साथी) थे और उन के बाद वे लोग जिन के अन्दर ये गुण पाए गए, रहे वे मुसलमान जिन को ईमान से कोई दिलचस्पी नहीं और जिन की सारी दौड़ धूप बुराईयों को क़ायम करने और भलाई को मिटाने के लिए होती है तो वे अपने को ख़ैर-उम्मत ग़लत कहलाते हैं। ऐसे लोग वास्तव में ख़ैर-उम्मत (बेहतरीन गिरोह) कहलाने के योग्य नहीं ।

(देखिए सूरह बक़र: नोट ११६)

139. अर्थात ये यहूदी और ईसाई अगर क़ुर्आन और उस के लाने वाले पैग़म्बर पर ईमान लाते और ख़ैर-उम्मत में शामिल हो जाते तो उन के हक़ में बेहतर होता। लेकिन उन में ईमान लाने वाले थोड़े हैं और दुराचारियों एवं अवज्ञाकारियों की संख्या अधिक है।

140. यह उस समय के अहले-किताब का हाल बयान हुआ है कि वे अत्यंत साहस हीन हैं इस लिए सिर्फ़ तकलीफ़ देने ही की बातें कर सकते हैं वरना सच्चे ईमान वालों के मुक़ाबले में वे टिक नहीं सकते। बाद की घटनाओं ने क़ुर्आन के इस बयान की पुष्टि कर दी। अत: अहले-किताब को बड़ी पराजय का सामना करना पड़ा।

112. वे जहाँ कहीं पाए गए उन पर ज़िल्लत की मार पड़ी यह अलग बात है कि अल्लाह के अहद या इन्सानों के अहद के तहत इन को (सामयिक रुप से) पनाह मिल गई हो।[141] वे अल्लाह के प्रकोप के अधिकारी हुए और उन पर पराजय एवं मोहताजी मुसल्लत कर दी गई।[142] यह इस कारण हुआ कि वे अल्लाह की आयतों का इन्कार करने लगे थे और नबियों को नाहक क़त्ल करते थे और ये है नतीजा उन की नाफ़रमानियों का और इस बात का कि वे हद से बढ़ने लगे थे।[143]

ضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ أَيْنَ مَا ثُقِفُوٓا إِلَّا بِحَبْلٍ مِّنَ اللَّهِ
وَحَبْلٍ مِّنَ النَّاسِ وَبَآءُو بِغَضَبٍ مِّنَ اللَّهِ وَضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ
الْمَسْكَنَةُ ذَٰلِكَ بِأَنَّهُمْ كَانُوا يَكْفُرُونَ بِآيَاتِ اللَّهِ
وَيَقْتُلُونَ الْأَنبِيَآءَ بِغَيْرِ حَقٍّ ذَٰلِكَ بِمَا عَصَوا
وَّكَانُوا يَعْتَدُونَ ﴿١١٢﴾

113. वे सब एक जैसे नहीं हैं। इन अहले-किताब में एक गिरोह ऐसा भी है जो (अहद पर) क़ायम है। ये लोग रात की घड़ियों में अल्लाह की आयतें पढ़ते हैं और उस के आगे सजदे में झुकते हैं ।

لَيْسُوا سَوَآءً مِّنْ أَهْلِ الْكِتَابِ أُمَّةٌ قَآئِمَةٌ يَتْلُونَ
آيَاتِ اللَّهِ آنَآءَ اللَّيْلِ وَهُمْ يَسْجُدُونَ ﴿١١٣﴾

114. ये अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान रख़ते हैं, मारुफ़ (भलाई) का हुक्म देते हैं, मुन्कर (बुराई) से रोकते हैं और भलाई के कामों में सक्रिय हैं। ये लोग स्वालिहीन (नेक लोगों) में से हैं ।[144]

يُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَيَأْمُرُونَ
بِالْمَعْرُوفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنكَرِ وَيُسَارِعُونَ
فِي الْخَيْرَاتِ وَأُولَٰٓئِكَ مِنَ الصَّالِحِينَ ﴿١١٤﴾

115. जो नेकी भी ये करेंगे उस की नाक़द्री (उपेक्षा) नहीं की जाएगी और अल्लाह मुत्तक़ियों (परहेज़गारों) को ख़ूब जानता है।

وَمَا يَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ فَلَن يُكْفَرُوهُ وَاللَّهُ
عَلِيمٌ بِالْمُتَّقِينَ ﴿١١٥﴾

116. (लेकिन) जिन लोगों ने कुफ्र किया उन के माल और उन की औलाद अल्लाह के मुक़ाबले में उन के कुछ काम आने वाली नहीं [145] वे दोज़ख़ी हैं और उस में हमेशा रहेंगे।

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا لَن تُغْنِيَ عَنْهُمْ أَمْوَالُهُمْ وَلَآ أَوْلَادُهُم
مِّنَ اللَّهِ شَيْئًا وَأُولَٰٓئِكَ أَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ﴿١١٦﴾

117. दुनिया की इस जिन्दगी में वे जो कुछ ख़र्च करते हैं उस की मिसाल उस हवा की सी है जिस में पाला हो और वह उन लोगों की खेती पर चल जाये जिन्होंने अपने ऊपर ज़ुल्म किया है और वह उसे तबाह कर के रख दे।[146] अल्लाह ने उन पर ज़ुल्म नहीं किया बल्कि ये लोग ख़ुद अपने ऊपर ज़ुल्म कर रहे हैं।

مَثَلُ مَا يُنفِقُونَ فِي هَٰذِهِ الْحَيَاةِ الدُّنْيَا كَمَثَلِ رِيحٍ فِيهَا
صِرٌّ أَصَابَتْ حَرْثَ قَوْمٍ ظَلَمُوٓا أَنفُسَهُمْ فَأَهْلَكَتْهُ وَمَا
ظَلَمَهُمُ اللَّهُ وَلَٰكِنْ أَنفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿١١٧﴾

141. अर्थात ये अपने बल बूते पर क़ायम नहीं हैं बल्कि कई इस्लामी राज़्यों ने मुआहदे (सन्धि अथवा समझौते) के तहत उन को शरण दे दी है और कहीं दूसरी क़ौमों ने उन को सहारा दे दिया है। ये सहारे क्षणिक (Temporary) हैं इन का अपना मान सम्मान कुछ नहीं ।

142. दुनिया परस्ती के हावी हो जाने के परिणाम स्वरुप आख़िरत को प्रधानता देने और दीन के लिए बलिदान एवं क़ुर्बानी का हौसला उन के अन्दर बाक़ी नहीं रहा था और वह नैतिक पतन एवं व्यवहारिक गिरावट के कगार पर पहुँच गये थे।

143. उन के इन अपराधों का सबूत बाइबिल में भी मौजूद है :-

''हे यरुशलेम, हे येरुशलेम, तू जो भविष्यवक्ताओं को मार डालता है और जो तेरे पास भेजे गए उन्हें पत्थर वाह करता है।''(मत्ती २३:३७)

'' परन्तु वे तुझ से फिर कर बलवा करने वाले बन गए और तेरी व्यवस्था को त्याग दिया और तेरे जो नबी तेरी ओर से आए उन्हें फेरने के लिए उन को चिताते रहे उन को उन्होंने घात किया और तेरा बहुत तिरस्कार किया। इस कारण तूने उन को उन के शत्रुओं के हाथ में कर दिया।'' (नहेमायाह ९:२६,२७)

144. यह अहले-किताब अर्थात यहूदियों और ईसाईयों के उस गिरोह का वर्णन है जो अल्लाह से किए हुए प्रण पर क़ायम था । ये लोग सुलझे हुए मोमिन थे और जैसे जैसे इन पर क़ुर्आन और पैग़म्बर की हक़ीक़त खुलती गई वे ईमान ला कर मुसलमानों के समूह में सम्मिलित होते गए। क़ुर्आन ने यहाँ ऐसे ही अहले-किताब की तारीफ़ की है।

145. अर्थात उन को कुफ़्र (इन्कार) पर आमादा करने वाली चीज़ें उन्हें अल्लाह के अज़ाब (यातना) से नहीं बचा सकेंगी।

146. इस मिसाल में हवा से मुराद ख़ैर और ख़ैरात (भलाई एवं कल्याण) है और पाले से मुराद कुफ़्र और सही ईमान का न होना है तथा खेती से मुराद खेती का जीवन अथवा खेती की हरयाली है । जिस तरह हवा में जो कि खेती के लिए एक लाभदायक चीज़ है, अगर पाला हो तो वह खेती के लिए हानिकारक होती है क्यों कि बर्फबारी खेती को तबाह कर देती है उसी तरह ख़ैर ख़ैरात एक लाभदायक चीज़ होने के बावजूद जब इमानी जज़्बे से खाली होती है और कुफ़्र का ज़हर उस में मौजूद होता है तो वह आख़िरत के फल को तबाह कर देती है।

❒ ❒ ❒ ❒ ❒ ❒

118. ऐ ईमान वालो ! अपने सिवा किसी और को अपना राज़दार न बनाओ ।[147] वे नुकसान पहुँचाने में कोई कसर न उठा रखेंगे। वे तुम्हारे लिए तकलीफ़ के इच्छुक हैं। इन की दुश्मनी इन के मुँह से ज़ाहिर हो चुकी है और जो कुछ इन के सीनों में छिपा हुआ है वह इस से भी बढ़ कर है। हम ने तुम्हारे लिए अपनी हिदायतें स्पष्ट कर दी हैं अगर तुम सूझ बूझ से काम लो।

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ لَا تَتَّخِذُوا۟ بِطَانَةً مِّن دُونِكُمْ
لَا يَأْلُونَكُمْ خَبَالًا وَدُّوا۟ مَا عَنِتُّمْ قَدْ بَدَتِ ٱلْبَغْضَآءُ
مِنْ أَفْوَٰهِهِمْ وَمَا تُخْفِى صُدُورُهُمْ أَكْبَرُ ۚ قَدْ بَيَّنَّا لَكُمُ ٱلْءَايَٰتِ
إِن كُنتُمْ تَعْقِلُونَ ﴿١١٨﴾

119. यह तुम हो कि इन से दोस्ती रखते हो जब कि वे तुम से दोस्ती नहीं रखते।[148]और तुम तमाम किताबों पर ईमान रखते हो। वे जब तुम से मिलते हैं तो कहते हैं कि हम ईमान लाए हैं।[149] और जब अकेले में होते हैं तो मारे गुस्से के अपनी उंगलियाँ काटने लगते हैं। इन से कहो अपने गुस्से में जल मरो। अल्लाह उन बातों को अच्छी तरह जानता है जो सीनों के अन्दर निहित हैं।

هَٰٓأَنتُمْ أُو۟لَآءِ تُحِبُّونَهُمْ وَلَا يُحِبُّونَكُمْ وَتُؤْمِنُونَ بِٱلْكِتَٰبِ
كُلِّهِۦ وَإِذَا لَقُوكُمْ قَالُوٓا۟ ءَامَنَّا وَإِذَا خَلَوْا۟ عَضُّوا۟ عَلَيْكُمُ
ٱلْأَنَامِلَ مِنَ ٱلْغَيْظِ ۚ قُلْ مُوتُوا۟ بِغَيْظِكُمْ ۗ إِنَّ ٱللَّهَ عَلِيمٌۢ
بِذَاتِ ٱلصُّدُورِ ﴿١١٩﴾

120. अगर तुम्हें भलाई पहुँचती है तो इन को बुरा मालूम होता है और अगर तुम पर कोई मुसीबत आती है तो वे ख़ुश हो जाते हैं।[150] लेकिन अगर तुम सब्र करो और तक़वा (अल्लाह का डर) अपनाओ [151] तो इन की चालबाज़ियाँ तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकेंगी। और वे जो हरकतें कर रहे हैं अल्लाह उन्हें घेरे हुए है।

إِن تَمْسَسْكُمْ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ وَإِن تُصِبْكُمْ سَيِّئَةٌ
يَفْرَحُوا۟ بِهَا ۖ وَإِن تَصْبِرُوا۟ وَتَتَّقُوا۟ لَا يَضُرُّكُمْ كَيْدُهُمْ
شَيْـًٔا ۗ إِنَّ ٱللَّهَ بِمَا يَعْمَلُونَ مُحِيطٌ ﴿١٢٠﴾

121. और (याद करो)[152] जब तुम अपने घर से सुबह सवेरे निकले थे। और ईमान वालों को जंग के मोर्चों पर तैनात कर रहे थे । और अल्लाह सब कुछ सुनने वाला और जानने वाला है।

وَإِذْ غَدَوْتَ مِنْ أَهْلِكَ تُبَوِّئُ ٱلْمُؤْمِنِينَ مَقَٰعِدَ
لِلْقِتَالِ ۗ وَٱللَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿١٢١﴾

122. उस समय तुम में से दो गिरोह कमज़ोरी दिखाना चाहते थे [153] हालांकि अल्लाह उन का मददगार था और अल्लाह ही पर ईमान वालों को भरोसा रखना चाहिए।

إِذْ هَمَّت طَّآئِفَتَانِ مِنكُمْ أَن تَفْشَلَا وَٱللَّهُ وَلِيُّهُمَا ۗ وَعَلَى
ٱللَّهِ فَلْيَتَوَكَّلِ ٱلْمُؤْمِنُونَ ﴿١٢٢﴾

123. और यह हक़ीक़त है कि अल्लाह ने तुम्हारी मदद बद्र में की थी [154] जब कि तुम बेहद कमज़ोर थे।अतः अल्लाह से डरते रहो ताकि उस के शुक्रगुज़ार बनो।

وَلَقَدْ نَصَرَكُمُ ٱللَّهُ بِبَدْرٍ وَأَنتُمْ أَذِلَّةٌ ۖ فَٱتَّقُوا۟ ٱللَّهَ
لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿١٢٣﴾

147. इस आयत में मुसलमानों को हिदायत की गई है कि इस्लामी समुदाय के बाहर के किसी व्यक्ति को अपना राज़दार (भेदी) और विश्वासपात्र न बनाऐं और इस की वजह यह भी बयान कर दी गई है कि लोग अपनी इस्लाम दुश्मनी और मुस्लिम दुश्मनी के कारण तुम्हें नुक़्सान पहुँचाने में कोई कसर नहीं रखेंगे। यह हिदायत जंग के अवसर पर दी गई थी जब कि इस बात की आशंका थी कि मुसलमान यहूदियों से अपने पुराने मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के कारण उन के सामने जंग के राज़ इत्यादि का ज़िक्र न कर बैठें इस लिए कि यहूदी, मुसलमानों के दुश्मनों की सहायता कर रहे थे और इस्लाम के विरुद्ध उन के अन्दर द्वेष पैदा हो गया था।

इस से जो उसूली हिदायात (निर्देश) मिलती है वह यह है कि जहाँ इस्लामी आंदोलन जिहाद के मरहले (चरण) में दाख़िल हो गया हो, जहाँ मुसलमानों को राजनीतिक प्रभुत्व प्राप्त हो वहाँ उन्हें जंगी राज़ों एवं राजनीतिक नीतियों इत्यादि के सिलसिले में अत्यधिक सावधान रहना चाहिए और उन लोगों को अपना हमराज़ (भेदी) और विश्वासपात्र बनाने से परहेज़ करना चाहिए। जिन्हों ने ईमान लाने और इस्लामी समुदाय में शामिल होने से इन्कार किया है।

148. अर्थात तुम इन के शुभचिन्तक हो किन्तु ये तुम्हारे दुश्चिन्तक हैं और बुरी तरह इस्लाम दुश्मनी और मुस्लिम दुश्मनी में लिप्त हैं।

149. यहूदी इस बात के दावेदार थे कि हम अल्लाह और आख़िरत को मानते हैं इस लिए हम ईमान वाले हैं और हाल यह है कि वे क़ुर्आन को अल्लाह की किताब मानने को तैयार नहीं थे। क़ुर्आन कहता है कि जब तक कोई व्यक्ति क़ुर्आन सहित अल्लाह की तमाम किताबों को मानने के लिए तैयार नहीं होता वह हरगिज़ मोमिन नहीं है और उस का ईमान हरगिज़ मान्य एवं स्वीकृत नहीं।

150. यह तस्वीर (चरित्र चित्रण) है उन लोगों की जो इस बात को पसंद नहीं करते कि इस्लाम फले फूले और इस्लाम और उस के मानने वालों को विजय एवं सत्ता प्राप्त हो। वे इस्लाम और मुसलमानों के बारे में हमेशा साम्प्रदयिक द्वेष एवं घृणा में लिप्त रहते हैं और मुसलमानों कि हर कामयाबी उन के लिए दुखदायी बन जाती है।

151. यहाँ तक़्वा से इशारा इस बात की तरफ है कि ऊपर जो हिदायतें दी गई हैं उन पर अमल किया जाए।

152. यहाँ से ग़ज़्वा-ए-उहद (उहद के युद्ध) की घटनाओं पर तब्सिरा एवं उस की समीक्षा शुरु होती है। 'उहद' मदीना से तीन चार मील के फ़ासले पर उत्तर की तरफ़ स्थित एक पहाड़ी है जिस के दामन में यह जंग शव्वाल सन् ३ हिज़री (सन ६२५ ई.) में लड़ी गई। मक्का के काफ़िर आक्रमणकारी की हैसियत से मदीना पर हमलावर हुए थे और उन्हों ने उहद के पास पड़ाव डाल दिया था। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मुसलमानों से सलाह मश्विरा किया कि मुक़ाबला मदीना से बाहर निकल कर किया जाए या मदीना ही में रह कर। अधिकतर लोगों का सुझाव यह था कि बाहर निकल कर मुक़ाबला किया जाए । अलबत्ता मुनाफ़िकों (कपटियों) का सरदार अब्दुल्लाह बिन उबई का सुझाव था कि मदीना ही में रह कर मुक़ाबला किया जाए। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने मश्विरे के बाद बाहर निकल कर मुक़ाबला करने का फ़ैसला फ़रमाया और एक हज़ार मुसलमानों के साथ मुक़ाबले के लिए रवाना हो गए लेकिन रास्ते में अब्दुल्लाह बिन उबैई यह कहते हुए अपने तीन सौ साथियों को ले कर अलग हो गया कि, हमारा सुझाव नहीं माना गया। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के साथ अब केवल सात सौ मुसलमान रह गए थे और वह भी इस हालत में कि कोई ढंग का हथियार साथ नहीं था। लेकिन आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) इन ही को ले कर आगे बढ़े और उहद पहुँच कर काफिरों का मुक़ाबला किया जो तादाद में तीन हज़ार थे और युद्ध के सामानों से हर तरह लैस थे।

153. मुराद ख़ज़रज क़बीला के बनू सलमा और औस क़बीला के बनू हारिसा हैं।

उहुद की जंग में क़ाफिरों की संख्या तीन हज़ार थी और मुसलमानों की संख्या केवल एक हज़ार। इन में से भी तीन सौ की तादाद को ले कर मुनाफ़िक़ो (कपटियों) का सरदार अब्दुल्लाह बिन उबैई अलग हो गया। इस घटना का कुछ असर मुसलमानों के गिरोहों के हौसले पर पड़ा, जिस की तरफ़ आयत में इशारा किया गया है। क़ुर्आन ने इस पर पकड़ की और फ़रमाया कि अल्लाह की राह में ईमान वालों का सहायक अल्लाह होता है इस लिए उस की मदद पर पूरा पूरा भरोसा रखना चाहिए।

154. बद्र की जंग रमज़ान सन २ हिज़री (मार्च सन ६२४ ई.) में हुई थी जिस में मुसलमान विजयी रहे थे।

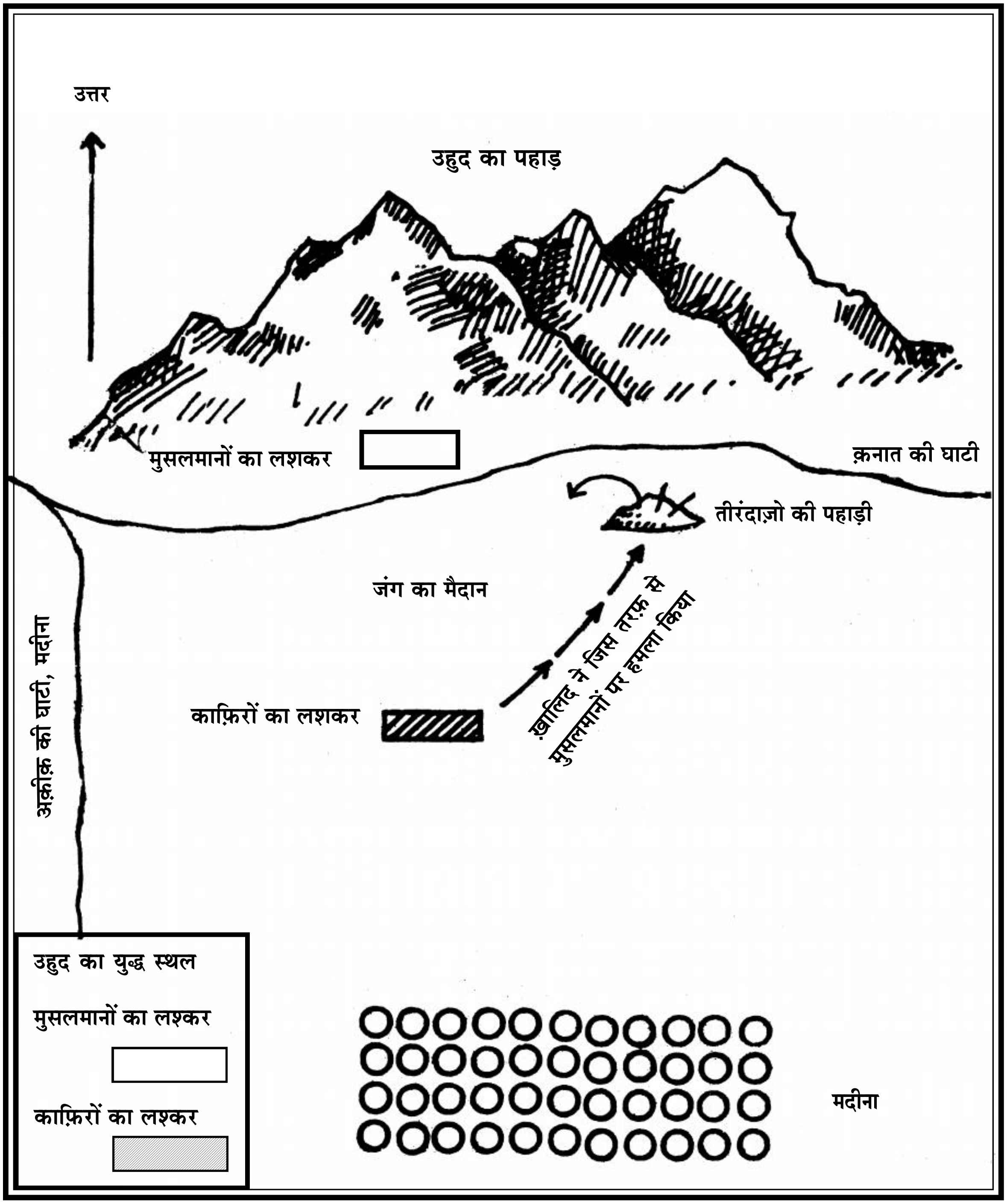
उत्तर
उहुद का पहाड़
मुसलमानों का लशकर
क़नात की घाटी
तीरंदाज़ो की पहाड़ी
जंग का मैदान
अक़ीक़ की घाटी, मदीना
ख़ालिद ने जिस तरफ़ से मुसलमानों पर हमला किया
काफ़िरों का लशकर
मदीना
उहुद का युद्ध स्थल
मुसलमानों का लश्कर
काफ़िरों का लश्कर

उहुद की जंग का नक़्शा

और अल्लाह ही के लिए है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में हैं। वह जिस को चाहे क्षमा कर दे और जिस को चाहे अज़ाब (यातना) दे। अल्लाह क्षमा करने वाला, रहम फ़रमाने वाला है। (अल-क़ुर्आन)

124. उस समय तुम ईमान वालों से कह रहे थे कि क्या तुम्हारे लिए यह बात काफ़ी नहीं है कि तुम्हारा रब तीन हज़ार फ़रिश्ते उतार कर तुम्हारी मदद करे ?[155]

إِذْ تَقُولُ لِلْمُؤْمِنِينَ أَلَن يَكْفِيَكُمْ أَن يُمِدَّكُمْ رَبُّكُم بِثَلَٰثَةِ
ءَالَٰفٍ مِّنَ ٱلْمَلَٰٓئِكَةِ مُنزَلِينَ ﴿١٢٤﴾

125. नि:संदेह अगर तुम सब्र करो और तक़वा (ईश भय) अपनाओ और वे तुम्हारे ऊपर अचानक हमलावर हुए तो तुम्हारा रब पाँच हज़ार निशान रखने वाले फ़रिश्तों से तुम्हारी मदद करेगा।[156]

بَلَىٰٓ ۚ إِن تَصْبِرُوا۟ وَتَتَّقُوا۟ وَيَأْتُوكُم مِّن فَوْرِهِمْ هَٰذَا
يُمْدِدْكُمْ رَبُّكُم بِخَمْسَةِ ءَالَٰفٍ مِّنَ ٱلْمَلَٰٓئِكَةِ مُسَوِّمِينَ ﴿١٢٥﴾

126. अल्लाह ने इसे तुम्हारे लिए बशारत (ख़ुशख़बरी) बनाया और ताकि तुम्हारे दिल इस से मुतमइन (संतुष्ट) हो जाऐं वरना मदद तो अल्लाह ही के पास से आती है जो ग़ालिब (प्रभुत्वशाली) भी है और हकीम (तत्वदर्शी)भी । [157]

وَمَا جَعَلَهُ ٱللَّهُ إِلَّا بُشْرَىٰ لَكُمْ وَلِتَطْمَئِنَّ قُلُوبُكُم بِهِۦ ۗ وَمَا
ٱلنَّصْرُ إِلَّا مِنْ عِندِ ٱللَّهِ ٱلْعَزِيزِ ٱلْحَكِيمِ ﴿١٢٦﴾

127. एवं (तुम्हारी मदद) इस लिए कि अल्लाह काफ़िरों के एक हिस्से को काट दे या उन्हें ऐसा ज़लील कर दे कि वे नामुराद हो कर लौटें।

لِيَقْطَعَ طَرَفًا مِّنَ ٱلَّذِينَ كَفَرُوٓا۟ أَوْ يَكْبِتَهُمْ فَيَنقَلِبُوا۟
خَآئِبِينَ ﴿١٢٧﴾

128. इस मामले में तुम्हें कोई इख़्तियार नहीं,[158] वह चाहे उन्हें माफ़ करे या सज़ा दे, कि वे ज़ालिम हैं।

لَيْسَ لَكَ مِنَ ٱلْأَمْرِ شَىْءٌ أَوْ يَتُوبَ عَلَيْهِمْ أَوْ يُعَذِّبَهُمْ
فَإِنَّهُمْ ظَٰلِمُونَ ﴿١٢٨﴾

129. और अल्लाह ही के लिए है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है। वह जिस को चाहे क्षमा कर दे और जिस को चाहे अज़ाब (यातना) दे। [159] अल्लाह क्षमा करने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।

وَلِلَّهِ مَا فِى ٱلسَّمَٰوَٰتِ وَمَا فِى ٱلْأَرْضِ ۚ يَغْفِرُ لِمَن يَشَآءُ
وَيُعَذِّبُ مَن يَشَآءُ ۚ وَٱللَّهُ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿١٢٩﴾

130. ऐ ईमान वालों ! यह दो गुना, चार गुना सूद न खाओ।[160] अल्लाह से डरो ताकि तुम कामयाब हो।

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ لَا تَأْكُلُوا۟ ٱلرِّبَوٰٓا۟ أَضْعَٰفًا
مُّضَٰعَفَةً ۖ وَٱتَّقُوا۟ ٱللَّهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿١٣٠﴾

131. और उस आग से बचो जो काफ़िरों के लिए तैयार की गई है।

وَٱتَّقُوا۟ ٱلنَّارَ ٱلَّتِىٓ أُعِدَّتْ لِلْكَٰفِرِينَ ﴿١٣١﴾

132. और अल्लाह और रसूल की आज्ञापालन करो ताकि तुम पर रहम किया जाए।

وَأَطِيعُوا۟ ٱللَّهَ وَٱلرَّسُولَ لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُونَ ﴿١٣٢﴾

155. यह बात नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने उस वक्त फ़रमाई थी जब कि अब्दुल्लाह बिन उबैई अपने तीन सौ साथियों को लेकर वापस हो गया था। इस अवसर पर मुसलमानों का हौसला बढ़ाने के लिए आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया ''क्या तुम्हारे लिए यह बात काफ़ी नहीं है कि इन तीन सौ आदमियों की जगह अल्लाह तआला तीन हज़ार फ़रिश्ते उतार कर तुम्हारी मदद फ़रमाए?''

156. यह बात अल्लाह तआला ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ताईद (समर्थन) में फ़रमाई कि तीन हज़ार नहीं बल्कि पाँच हज़ार फ़रिश्तों द्वारा तुम्हारी मदद की जाएगी बशर्ते कि तुम साबित क़दम (दृढ़) रहो और अल्लाह का डर (तक़वा) अपनाओ। लिहाज़ा अल्लाह तआला का यह वादा पूरा हुआ और मुसलमानों ने काफ़िरों को पराजित कर दिया किन्तु पराजित कर देने के बाद मुसलमानों के एक दस्ते ने रसूल के निर्देश की अवहेलना की और मोर्चा छोड़ कर माले-ग़नीमत (परिहार) समेटने में लग गए जिस के फलस्वरुप हानि हुई।

निशान रखने वाले फ़रिश्तों से मुराद यह है कि जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह (अल्लाह की राह में जिहाद) का निशान लगाए हुए होंगे और विशेष रुप से इस मक़सद के लिए नाज़िल किए जाऐंगे।

157. अर्थात फ़रिश्तों द्वारा मदद का यह वादा बशारत (शुभ सूचना) के तौर पर था। अगर यह बशारत न भी दी जाती तब भी तुम्हें यही समझना चाहिए था कि सहायता और विजय अल्लाह ही के हाथ में है। वह प्रभुत्वशाली है जिसे चाहे प्रभुत्व प्रदान करे और हकीम (तत्वदर्शी) है इस लिए उस का कोई काम हिकमत (तत्वदर्शिता) से खाली नहीं होता।

158. सम्बोधन नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से है और इख़्तियार से मुराद किसी के बारे में अल्लाह के अज़ाब का पात्र ठहराने का इख़्तियार है। मतलब यह है कि लोग आज तुम्हारे और इस्लाम के दुश्मन बने हुए हैं ज़रुरी नहीं कि आइन्दा भी दुश्मन ही रहें, हो सकता है कि अल्लाह उन्हें तौबा की तौफ़िक़ दे और वह इस्लाम की तरफ़ पलट आऐं और अल्लाह उन्हें माफ़ कर दे और यह भी संभव है कि वह अपने ज़ुल्म के कारण तौबा (प्रायश्चित) की तौफ़िक़ से वंचित रहें। और सज़ा के पात्र ठहराए जाऐं। इस आयत में तौबा का जो इशारा था वह कुछ दिनों के बाद हक़ीक़त बन गया। अत: यही इस्लाम के शत्रु जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ख़िलाफ़ उहुद में मुक़ाबले पर आए थे वे कुछ समय बाद ईमान ला कर नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हिमायती और मददगार बन गए। जैसे अबू सुफ़ियान, ख़ालिद बिन वलीद, सफ़वान बिन उमैया इत्यादि।

159. व्याख्या के लिए देखिए सूरह बक़र: नोट नं.४७८

160. दो गुने चार गुने सूद की मनाही का मतलब यह नहीं हैं कि केवल सूद दर सूद हराम हैं बल्कि सूद हर तरह का हराम है चाहे वह मिश्रित हो या अमिश्रित और उस की दर (%) साधारण हो या भारी जैसा कि सूरह बकर: आयत २७५ से स्पष्ट है।

यहाँ दो गुने चार गुने की सिफ़त मात्र सूद के दोष को स्पष्ट करने के लिए है ताकि इस से पूरी तरह नफ़रत पैदा हो। क्यों कि आदमी एक बार जब सूद ख़ोरी को जायज़ कर लेता है तो फिर उसे उसके क्रूरतम स्वरुप को अपनाने में भी हिचकिचाहट नहीं होती। अधिक व्याख्याय के लिए देखिए सूरह बक़रा:नोट नं. ४५६ से ४६४ तक ।

133. और दौड़ो अपने रब के क्षमादान और उस जन्नत की तरफ़ जिस का विस्तार आसमानों और ज़मीन के विस्तार की तरह है।[161] यह मुत्तकियों (अल्लाह से डरने वालों के लिए तैयार की गई है।

وَسَارِعُوْٓا اِلٰى مَغْفِرَةٍ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَجَنَّةٍ عَرْضُهَا السَّمٰوٰتُ
وَالْاَرْضُ ۙ اُعِدَّتْ لِلْمُتَّقِيْنَ ﴿١٣٣﴾

134. जो ख़ुशहाली और तंगी हर हाल में इन्फ़ाक़ (ख़र्च) करते हैं गुस्से को काबू में करते हैं और लोगों से दरगुज़र का व्यवहार करते हैं। अल्लाह ऐसे नेक लोगों को पसन्द करता है।

اَلَّذِيْنَ يُنْفِقُوْنَ فِي السَّرَّآءِ وَالضَّرَّآءِ وَالْكٰظِمِيْنَ الْغَيْظَ
وَالْعَافِيْنَ عَنِ النَّاسِ ۗ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِيْنَ ﴿١٣٤﴾

135. ये लोग जब किसी बेहयाई का व्यवहार या (कोई गुनाह कर के) अपने नफ़्स (आत्मा) पर ज़ुल्म कर बैठते हैं तो अल्लाह को याद कर के अपने गुनाहों की माफी माँगते हैं और अल्लाह के सिवा कौन है जो गुनाहों को माफ़ करे।[162] और वे जानते बुझते अपने किये पर आग्रह नहीं करते।[163]

وَالَّذِيْنَ اِذَا فَعَلُوْا فَاحِشَةً اَوْ ظَلَمُوْٓا اَنْفُسَهُمْ ذَكَرُوا اللّٰهَ
فَاسْتَغْفَرُوْا لِذُنُوْبِهِمْ ۗ وَمَنْ يَّغْفِرُ الذُّنُوْبَ اِلَّا اللّٰهُ ۗ
وَلَمْ يُصِرُّوْا عَلٰى مَا فَعَلُوْا وَهُمْ يَعْلَمُوْنَ ﴿١٣٥﴾

136. ऐसे लोगों का सिला उन के रब की तरफ़ मग़फ़िरत (क्षमादान) है एवं ऐसे बाग़ हैं जिन के तले नहरें बह रही हैं।वे उन में हमेशा रहेंगे। क्या ही अच्छा फ़ल है अमल करने वालों के लिए।

اُولٰٓئِكَ جَزَآؤُهُمْ مَّغْفِرَةٌ مِّنْ رَّبِّهِمْ وَجَنّٰتٌ تَجْرِيْ
مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَا ۗ وَنِعْمَ اَجْرُ الْعٰمِلِيْنَ ﴿١٣٦﴾

137. तुम से पहले सुनने इलाही (ईश्वरीय नियम पर) की घटनाऐं गुज़र चुकी हैं तो ज़मीन में चल फिर कर देख लो कि झुठलाने वालों का क्या अन्जाम हुआ ।[164]

قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِكُمْ سُنَنٌ ۙ فَسِيْرُوْا فِي الْاَرْضِ
فَانْظُرُوْا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِيْنَ ﴿١٣٧﴾

138. यह लोगों के लिए बयान है [165] और मुत्तक़ियों (अल्लाह से डरने वालों) के लिए हिदायत और नसीहत ।

هٰذَا بَيَانٌ لِّلنَّاسِ وَهُدًى وَّمَوْعِظَةٌ لِّلْمُتَّقِيْنَ ﴿١٣٨﴾

139. हिम्मत न हारो और ग़म न करो तुम ही ग़ालिब रहोगे (छाओगे) अगर तुम मोमिन हो।[166]

وَلَا تَهِنُوْا وَلَا تَحْزَنُوْا وَاَنْتُمُ الْاَعْلَوْنَ اِنْ كُنْتُمْ
مُّؤْمِنِيْنَ ﴿١٣٩﴾

140. अगर तुम को चोट लगी है तो इसी तरह की चोट उन लोगों (दुश्मन) को भी लग चुकी है।[167] इन अय्याम (दिनों)[168] को हम इसी तरह लोगों के बीच गर्दिश देते रहते हैं। और (यह दिन तुम पर इस लिए लाया गया) कि अल्लाह देखना चाहता था कि सच्चे ईमान वाले कौन हैं और चाहता था कि तुम में से कुछ लोगों को शहीद बनाए।[169] अल्लाह को ज़ालिम लोग पसन्द नहीं हैं।

اِنْ يَّمْسَسْكُمْ قَرْحٌ فَقَدْ مَسَّ الْقَوْمَ قَرْحٌ مِّثْلُهٗ ۗ
وَتِلْكَ الْاَيَّامُ نُدَاوِلُهَا بَيْنَ النَّاسِ ۚ وَلِيَعْلَمَ اللّٰهُ
الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَيَتَّخِذَ مِنْكُمْ شُهَدَآءَ ۗ وَاللّٰهُ
لَا يُحِبُّ الظّٰلِمِيْنَ ﴿١٤٠﴾

161. अर्थात् दुनिया परस्ती और संसार के मोह में लिप्त हो कर तुम अपने लिए सांसारिक लाभ की जो प्रतिष्ठा प्राप्त करना चाहते हो जो मात्र कुछ समय के लिए है लेकिन अल्लाह तुम्हें अथाह सागर प्रदान करना चाहता है अर्थात ऐसी बड़ी जन्नत जिस का क्षेत्रफल आसमान और ज़मीन के बराबर है और जो हमेशा हमेशा रहने वाली है। ऐसा प्रतित होता है कि क़ियामत के दिन ज़मीन और आसमान के बीच का वातावरण जन्नत का वातावरण होगा और जन्नती लोग उस वातावरण से आसानी के साथ आनन्दित हो सकेंगे। ज़मीन और आसमान के विस्तार के उदाहरण से जन्नत के विस्तार का यह धुंधला सा स्वरुप सामने आता है। असल वास्तविकता अल्लाह ही को मालूम है।

162. इस से ईसाईयों की इस धारणा का खण्डन होता है की गुनाह को क्षमा कर देने का अधिकार हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को और उन के चर्च पादरियों को है। बाइबिल में हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की तरफ़ यह बात जो मंसूब की गई वह ग़लत है कि उन्होंने अपने शागिर्दे से कहा:-''जिन के पाप तुम क्षमा करो वे उन के लिए क्षमा किए गए हैं, जिन के पाप तुम रखो, वे रखे गए हैं।'' (यूहन्ना २०:२३)

163. अर्थात अगर सामयिक भावनाओं से परास्त होकर कोई गुनाह कर बैठते हैं तो ख़ुदा की याद उन्हें पश्चाताप एवं प्रायश्चित पर आमादा करती है और वे गुनाह पर जमे नहीं रहते।

164. सुनन से मुराद अल्लाह के वे नियम हैं जिन के तहत वह क़ौमों को सजा देता रहा है। इस नियम (सुन्नत) के लक्षण तबाह शुदा क़ौमों स्मृतियों एवं उस के चिन्हों के रुप में अरब की धरती पर मौजूद थे, जैसे समूद की क़ौम और लूत की क़ौम आदि के चिन्ह। इन स्थानों का सफ़र कर के आदमी उन क़ौमों के अन्जाम से इबरत हासिल कर सकता है। जो सफ़र सत्य की खोज एवं ऐतिहासिक घटनाओं से इबरत हासिल करने के उद्देश्य से किया जाए वह निश्चय ही लाभदायक सिद्ध होगा। और यहाँ ऐसे ही सफ़र की प्रेरणा दी गई है। रहा वह सफ़र जो इतिहासिक स्मृतियों एवं चिन्हों की मात्र सैर करने और खण्डहरों को देख कर अपनी भौगोलिक तथा कलात्मक जानकारी में वृद्धि करने के लिए हो। इस से महान लक्ष्य को प्राप्त नहीं किया जा सकता।

165. अर्थात यह सत्य से परिपूर्ण बयान है।

166. मतलब यह कि अगर सामायिक रुप से तुम्हें पराजय से दो चार होना पड़ा है और वह भी तुम्हारी अपनी ग़लतियों के नतिजे में तो उस का ऐसा असर लेना सही न होगा कि भविष्य से मायूस हो कर बैठे रहो। बल्कि तुम्हारे हौसले बुलन्द होने चाहिऐं और तुम्हें विश्वास रखना चाहिए कि इस्लाम और कुफ्र की कशमकश में आख़िरकार तुम्हारा ही पलड़ा भारी रहेगा और सरबुलन्द तुम्ही होगे बशर्ते कि तुम ने अपने आप को सच्चा और पक्का मोमिन सिद्ध कर दिखाया क्यों कि यह किस तरह संभव है कि ईमान वाले अपने तक़ाज़ों को पूरा करें और रसूल की संगत में ख़ुदा की राह में तन मन धन की बाज़ी लगाऐं और इस के बाद भी अल्लाह की हिमायत से वंचित रहें। इतिहास गवाह है कि अल्लाह का यह वादा अक्षरश: और अशं अशं पूरा हुआ है।

स्पष्ट रहे कि ग़ालिब (विजयी) और सरबुलंद रहने का यह वादा व्यक्ति से नहीं बल्कि ईमान वालों के समूह से है और यह उस सूरत में है जब कि इस्लाम और कुफ्र की जंग बरपा हो अर्थात सच्चे मन से अल्लाह के बोल (कलिमे) को बुलंद करने के लिए जिहाद किया जाए और धैर्य एवं परहेज़गारी (तक़्वा) का दामन छोड़ न दिया जाए।

167. इशारा बद्र की जंग की तरफ़ है जिस में काफ़िरों को चोट खाना पड़ी थी।

168. अय्याम से मुराद वे ऐतिहासिक दिन हैं जिन में क़ौमों की हार जीत की घटनाऐं पेश आई। ये घटनाऐं अल्लाह के आज़माइशी नियमनुसार पेश आई।

169. शहीद वह है जो अल्लाह की राह में मारा जाए। उसे शहीद का लक़ब इस लिए दिया गया है कि वह इस्लाम की सत्यता की गवाही जान दे कर पेश करता है। शहादत अत्यंत बुलन्द दर्जा है और उहद की जंग में जो मुसलमान मारे गए उस की हिकमत यहाँ यह बयान की गई है कि अल्लाह उन्हें इस उच्च स्थान पर बैठाना चाहता था।

❐ ❐ ❐ ❐ ❐ ❐

141. और (यह हादसा इस लिए पेश आया) ताकि अल्लाह ईमान वालों को शुद्ध कर दे और काफिरों का दमन (सरकूबी)करे।

وَلِيُمَحِّصَ اللّٰهُ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَيَمْحَقَ الْكٰفِرِيْنَ ﴿١٤١﴾

142. क्या तुम ने यह समझ रखा है कि तुम जन्नत में दाखिल हो जाओगे हालांकि अल्लाह ने अभी यह देखा ही नहीं कि तुम में से कौन लोग जिहाद करने वाले हैं [170] और(यह आज़माइश इस लिए भी ज़रूरी है) ताकि वह देख लें कि कौन सब्र करने वाले हैं।

اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تَدْخُلُوا الْجَنَّةَ وَلَمَّا يَعْلَمِ اللّٰهُ الَّذِيْنَ
جٰهَدُوْا مِنْكُمْ وَيَعْلَمَ الصّٰبِرِيْنَ ﴿١٤٢﴾

143. तुम मौत के सामने आने से पहले इस की तमन्ना कर रहे थे।[171] लेकिन जब तुम ने इसे देख लिया तो देखते ही रह गए।

وَلَقَدْ كُنْتُمْ تَمَنَّوْنَ الْمَوْتَ مِنْ قَبْلِ اَنْ تَلْقَوْهُ فَقَدْ
رَاَيْتُمُوْهُ وَاَنْتُمْ تَنْظُرُوْنَ ﴿١٤٣﴾

144. मुहम्मद तो बस एक रसूल हैं उन से पहले भी रसूल गुज़र चुके हैं। फिर क्या अगर वह वफ़ात (मृत्यु) पा जाऐं या क़त्ल कर दिए जाऐं तो तुम उल्टे पाँव फिर जाओगे ?[172] जो कोई उल्टे पाँव फिर जाएगा वह अल्लाह का कुछ नहीं बिगाड़ेगा और अल्लाह क़द्रदानों को जल्द ही जज़ा (इनाम) से नवाज़ेगा।[173]

وَمَا مُحَمَّدٌ اِلَّا رَسُوْلٌ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ
اَفَا۟ئِنْ مَّاتَ اَوْ قُتِلَ انْقَلَبْتُمْ عَلٰٓى اَعْقَابِكُمْ وَمَنْ
يَّنْقَلِبْ عَلٰى عَقِبَيْهِ فَلَنْ يَّضُرَّ اللّٰهَ شَيْـًٔا وَسَيَجْزِى
اللّٰهُ الشّٰكِرِيْنَ ﴿١٤٤﴾

145. कोई प्राणी अल्लाह के इज़्न (आज्ञा) के बग़ैर मर नहीं सकता, उस का समय निश्चित है और लिखा हुआ है।[174] जो कोई दुनिया का इनाम चाहता है हम उसे उसी में से देते हैं और जो आख़िरत के इनाम का इच्छुक हो तो हम उसे उस में से देंगे और हम शुक्र करने वालों को ज़रुर जज़ा (इनाम) से नवाज़ेगे।

وَمَا كَانَ لِنَفْسٍ اَنْ تَمُوْتَ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ كِتٰبًا مُّؤَجَّلًا
وَمَنْ يُّرِدْ ثَوَابَ الدُّنْيَا نُؤْتِهٖ مِنْهَا وَمَنْ يُّرِدْ
ثَوَابَ الْاٰخِرَةِ نُؤْتِهٖ مِنْهَا وَسَنَجْزِى الشّٰكِرِيْنَ ﴿١٤٥﴾

146. कितने नबी गुज़रे हैं जिन के साथ हो कर बहुत से अल्लाह वालों ने जंग की [175] और जो मुसीबतें उन्हें अल्लाह की राह में पेश आई उन की वजह से वे हिम्मत नहीं हारे, न उन्हों ने कमज़ोरी दिखाई और न वे (दुश्मनों के आगे) झुके। और अल्लाह को साबित क़दम (जमे) रहने वाले लोग ही पसन्द हैं।

وَكَاَيِّنْ مِّنْ نَّبِيٍّ قٰتَلَ مَعَهٗ رِبِّيُّوْنَ كَثِيْرٌ فَمَا
وَهَنُوْا لِمَآ اَصَابَهُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَمَا ضَعُفُوْا
وَمَا اسْتَكَانُوْا وَاللّٰهُ يُحِبُّ الصّٰبِرِيْنَ ﴿١٤٦﴾

170. अर्थात यह सोचना ग़लत है कि हक़ की राह आज़माइशों की राह नहीं है और आदमी ईमान लाने का दावा कर के सीधे जन्नत में दाखिल हो सकता है और उसे किसी ऐसे मरहले से गुज़रना नहीं होगा जिस में उस के ईमान के दावे की जाँच हो और क़ुर्बानी (बलिदान) पेश करने की मांग (Demand) हो ।

171. इशारा है उन नवजवानों की तरफ़ जिन्हें बद्र की जंग में शामिल होने का मौक़ा नहीं मिला था। वे शहादत की तमन्ना प्रकट कर रहे थे इसी शौक़ शहादत में उन्होंने मदीने से बाहर निकल कर लड़ने का सुझाव दिया था।

172. उलटे पाँव फिर जाने का मतलब कुफ्र और आज्ञानता की तरफ़ पलटना है।

यहाँ जो बात ज़ेहन में बैठाना चाहता है वह यह है कि जिस तरह दुनिया में अल्लाह के बहुत से रसूल गुज़र चुके हैं उसी तरह हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम भी अल्लाह के एक रसूल हैं इस लिए जिस तरह दूसरे रसूलों को मौत से दोचार होना पड़ा उसी तरह हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) को भी एक दिन मृत्यु पाना है। उन के रसूल होने का मतलब यह नहीं है कि उन्हें मृत्यु नहीं आएगी या वे क़त्ल नहीं हो सकते। यह दुनिया परीक्षा स्थल है और इस में रसूलों के साथ भी आज़माइशें लगी हुई हैं।

संदर्भ से प्रतीत होता है कि यहाँ उस मनोभाव को समाप्त करना अभिप्रेत है जो कुछ मुसलमानों ने उहद की जंग के अवसर पर हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के शहीद हो जाने की अफ़वाह से प्रभावित हो कर क़ुबूल किया था।

ध्यान रहे की उहद की जंग के अवसर पर काफ़िरों ने यह अफ़वाह उड़ाई थी कि पैग़म्बर क़त्ल कर दिए गए जिस से मुसलमानों के व्यूह (सफ़ों) में क्षणिक रुप से अफ़रातफ़री फैल गई थी यद्यापि साहसी सहाबा ने यह उत्साही जवाब दिया था कि जिस उद्देश्य के लिए आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने जान दी उस के लिए हम क्यों न जान दें या यह कि जब आप ही न रहे तो हमारे रहने से क्या फ़ायदा?

173. अर्थात् जिन्होंने दीन इस्लाम की नेमत पा लेने के बाद उस की क़द्र की चाहे उस का रसूल उन के बीच उपस्थित हो या वफ़ात (मृत्यु) पा चुका हो उन को अल्लाह जज़ा (मज़दूरी अथवा इनाम) से नवाज़ेगा।

174. अल्लाह ने हर व्यक्ति की मौत का समय निर्धारित कर रखा है जो एक नविश्ते (लेखपत्र) में दर्ज (अंकित) है। मौत न उस से पहले आती है न उस के बाद, अत:मौत की आशंका से जिहाद जैसे कर्तव्य से विमुखता का मार्ग अपनाना सही नहीं।

175. इशारा है उन जंगों की तरफ़ जो हज़रत समोएल, हज़रत दाऊद, हज़रत सुलेमान और दूसरे नबियों के नेतृत्व में लड़ी गईं। इस से यह स्पष्ट करना अभिप्रेत है कि उहद की जंग में मुसलमानों को जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा उस से वे हिम्मत न हारे। अल्लाह की राह में जंग और मुसीबतों का पेश आ जाना कोई नई बात नहीं है। पिछले नबियों और उन के साथियों को भी इन कठिन चरणों से गुज़रना पड़ा है और इन से गुज़र कर ही वे बुलन्द मक़ाम (उच्च स्थान) तक पहुँच सके हैं ।

❖❖❖❖❖❖❖❖

147. उन की ज़बान से तो बस यही शब्द निकले कि, ऐ हमारे रब ! हमारे गुनाहों को क्षमा कर दे। हमारे काम में जो ज़्यादतियाँ हो गई हों उन से दरगुज़र फरमा, [176] हमारे क़दम जमा दे और काफ़िरों पर हमें प्रभुत्व (ग़लबा) प्रदान कर।

وَمَا كَانَ قَوْلَهُمْ إِلَّا أَنْ قَالُوا رَبَّنَا اغْفِرْ لَنَا
ذُنُوبَنَا وَإِسْرَافَنَا فِي أَمْرِنَا وَثَبِّتْ أَقْدَامَنَا
وَانْصُرْنَا عَلَى الْقَوْمِ الْكٰفِرِينَ ﴿١٤٧﴾

148. परिणाम यह कि अल्लाह ने उन को दुनिया के इनाम से भी नवाज़ा और आख़िरत के बेहतरीन इनाम से भी। और अल्लाह को ऐसे ही नेक चरित्र के लोग पसन्द हैं।[177]

فَآتٰهُمُ اللّٰهُ ثَوَابَ الدُّنْيَا وَحُسْنَ ثَوَابِ الْآخِرَةِ ۗ
وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ﴿١٤٨﴾

149. ऐ ईमान वालो ! अगर तुम काफिरों का कहना मान लोगे तो वह तुम्हें उल्टा फेर ले जाऐंगे और तुम नामुराद हो जाओगे।

يٰٓأَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوٓا إِنْ تُطِيعُوا الَّذِينَ كَفَرُوا
يَرُدُّوكُمْ عَلٰٓى أَعْقَابِكُمْ فَتَنْقَلِبُوا خٰسِرِينَ ﴿١٤٩﴾

150. तुम्हारा मौला (साथी) तो अल्लाह है और वह बेहतरीन मददगार है।

بَلِ اللّٰهُ مَوْلٰكُمْ ۚ وَهُوَ خَيْرُ النّٰصِرِينَ ﴿١٥٠﴾

151. बहुत जल्द हम क़ाफ़िरों के दिलों में रोब बिठा देंगे [178] इस वजह से कि उन्होंने ऐसी चीज़ों को अल्लाह का शरीक ठहराया जिन के लिए उस ने कोई सनद (प्रमाण) नहीं नाज़िल फ़रमाई। उन का ठिकाना जहन्नम है और क्या ही बुरा ठिकाना है ज़ालिमों के लिए।

سَنُلْقِي فِي قُلُوبِ الَّذِينَ كَفَرُوا الرُّعْبَ بِمَآ أَشْرَكُوا
بِاللّٰهِ مَا لَمْ يُنَزِّلْ بِهِ سُلْطٰنًا ۚ وَمَأْوٰىهُمُ النَّارُ ۖ وَ
بِئْسَ مَثْوَى الظّٰلِمِينَ ﴿١٥١﴾

152. अल्लाह ने जो वादा तुम से किया था उसे सच कर दिखाया जब कि तुम उस के इज़्न (अनुमति) से उन को नि:संकोच क़त्ल कर रहे थे [179] यहाँ तक की जब तुम ने कमज़ोरी दिखाई और (मोर्चे पर क़ायम रहने) के मामले में परस्पर मतभेद किया और नाफ़रमानी की बाद इस के किअल्लाह ने तुम्हें वह चीज़ दिखाई जिस का मोह तुम रखते थे। तुम में कुछ दुनिया के इच्छुक थे [180] और कुछ आख़िरत के अभिलाषी। तब उस ने तुम्हारा रुख़ उन (दुश्मनों) की तरफ़ से फेर दिया [181] ताकि वह तुम्हारी आज़माईश करे। फिर भी उस ने तुम्हें माफ कर दिया और अल्लाह ईमानवालों के हक़ में बड़ा मेहरबान है।[182]

وَلَقَدْ صَدَقَكُمُ اللّٰهُ وَعْدَهُ إِذْ تَحُسُّونَهُمْ بِإِذْنِهِ ۚ
حَتّٰٓى إِذَا فَشِلْتُمْ وَتَنَازَعْتُمْ فِي الْأَمْرِ وَعَصَيْتُمْ
مِنْ بَعْدِ مَآ أَرٰىكُمْ مَّا تُحِبُّونَ ۗ مِنْكُمْ مَّنْ يُرِيدُ
الدُّنْيَا وَمِنْكُمْ مَّنْ يُرِيدُ الْآخِرَةَ ۚ ثُمَّ صَرَفَكُمْ
عَنْهُمْ لِيَبْتَلِيَكُمْ ۚ وَلَقَدْ عَفَا عَنْكُمْ ۗ وَاللّٰهُ
ذُو فَضْلٍ عَلَى الْمُؤْمِنِينَ ﴿١٥٢﴾

176. अर्थात इन कठिनाइयों के सामने आने पर उन्होंने ख़ुदा और रसूल के विरुद्ध बातें नहीं कीं और अल्लाह से अपने क़ुसूरों के लिए माफ़ी चाही इस का परिणाम यह निकला कि उन को दुनिया में भी हर तरह की बुलन्दी नसीब हुई और आख़िरत में भी वे बेहतरीन इनामों से नवाज़े गए।

177. मतन (Text) में '' मुहसिनीन'' का शब्द इस्तेमाल हुआ है जिस के अर्थ हैं वे लोग जो एहसान अर्थात् अच्छे आचरण एवं अच्छे व्यवहार का रवैया अपनाऐं। मुराद सुचरित्र लोग हैं जो अपने कर्तव्य (Duties) को न केवल पूरा करते हैं बल्कि अच्छी तरह पूरा करते हैं। ऊपर जिन लोगों कि सिफ़त (गुण) ख़ुदा की राह में जान फ़रोशी बयान की गई है उन को मुहसिनीन के लक़ब से नवाज़ा गया है।

इस से स्पष्ट होता है कि एहसान के भावार्थ में दीन के लिए जान की भी परवाह न करते हुए संघर्ष करना और अल्लाह की ख़ातिर क़ुर्बानियाँ देना सर्वोपरि है।

178. ईमान, साहस और हौसले की आधारशिला है। इस लिए ईमान वालों के हौसले बुलन्द होते हैं और यही हौसले की बुलन्दी मुश्रिकों और काफ़िरों के दिलों में रोब पैदा करती है नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का इर्शाद है:-

نصرت بالرعب مسيرة شهر

(मेरी ऐसे रोब के द्वारा मदद की गई है कि अगर दुश्मन एक माह की यात्रा के अन्तराल पर हो तो उस पर भी रोब तारी होगा।'' (तफ़्सीर इब्ने-कसीर VOL.1 Pege 411 सहीहैन के हवाले से) और घटनाओं ने इस की पुष्टि की अत: मुसलमानों की धाक क़ैसर और किसरा (अर्थात् रोम और ईरान की शक्तिशाली हुकूमतों) पर ही नहीं बैठी बल्कि उस के प्रभाव हिन्दुस्तान और स्पेन तक फैले)।

179. अर्थात अल्लाह का सहायता करने का वादा उहुद की जंग के मौक़े पर भी पूरा हुआ। अत:मुसलमान संख्या में कम होने और जंगी सामानों की कमी के बावजूद मुश्रिकीन पर भारी रहे जिस का सबूत इस बात से मिलता है कि मुश्रिकों में से जो लोग एक के बाद एक पताका (परचम) संभाल रहे थे मुसलमानों के हाथों क़त्ल हुए और आख़िरकार परचम ज़मीन पर गिर गया जो उस ज़माने में पराजय का प्रतीक था लेकिन इस के बाद मुसलमानों से कुछ गलतियाँ हुईं जिसके फ़लस्वरुप उन्हें बड़ी हानि पहुँची।

180. ये थीं वे कमज़ोरियाँ एवं त्रुटियाँ जो उहुद की जंग के मौक़े पर मुसलमानों से हुई। प्रथम यह कि मुसलमान शुरु में अपनी विजय होते देख ढीले पड़ गए कि जैसे विजय तो हमारे लिए सुनिश्चित ही है।

दूसरे यह कि अल्लाह के रसूल ने एक टुकड़ी को पीछे की पहाड़ी के दर्रे पर रक्षा के लिए तैनात किया था और उन्हें ताकीद की थी कि वे अपने स्थान को किसी हाल में भी न छोड़ें। किन्तु विजय को अपने सामने देख कर उन के बीच यह विभेद उत्पन्न हो गया कि ऐसी सूरत में अपनी जगह को छोड़ कर माले-ग़नीमत (परिहार) हासिल करने में क्या हर्ज है हालांकि टुकड़ी के सरदार अबदुल्लाह बिन ज़ुबैर ने उन्हें रोकने की कोशिश की लेकिन सिवाय कुछ लोगों के सब ने नाफ़रमानी की।

तीसरे यह कि वे रसूल की आज्ञा के विरुद्ध समय से पहले माले-ग़नीमत (परिहार) समेटने में लग गए और सिर्फ़ थोड़े आदमी अपनी जगह क़ायम रहे। इस स्थिति से दुश्मन ने फ़ायदा उठाया और पीछे से मुसलमानों पर हमला कर दिया जिस के परिणामस्वरुप मुसलमानों के हौसले पस्त हुए।

चौथे यह कि मुसलमानों में कुछ लोगों ने माले-ग़नीमत समेटने में जल्दी कर के आख़िरत के बजाय दुनिया पर अपनी निगाहें जमा दीं।

181. अर्थात् इन कमज़ोरियों का नतीजा यह निकला कि तुम में दुश्मन से मुक़ाबले का हौसला नहीं रहा।

182. ''मतलब यह है कि मुसलमानों के लिए अल्लाह का सहायता करने का वादा बिना शर्त नहीं है कि वे जो रवैया भी चाहें अपनाऐं लेकिन अल्लाह की मदद हर हाल में उन के साथ ही है। बल्कि यह शर्त है, इस शर्त के साथ कि मुसलमान अपने दायित्व को निभाने में ढीले न पड़े। अपने सरदार (अमीर) के आज्ञापालन में विभेद न करें, ख़ुदा और रसूल की नाफ़रमानी न करें। आख़िरत को छोड़ कर दुनिया का मोह न करें अगर इस तरह की कोई चीज़ उन के अन्दर पाई जाती है तो भी अल्लाह तआला यह नहीं करता कि उन पर ग़ज़ब (प्रकोप) नाज़िल कर दे बल्कि उन को ऐसी आज़माइशों में मुब्तेला करता है जिन से उन की ये कमज़ोरियाँ दूर हों और वे ख़ुदा की सहायता एवं उस के समार्थन के हक़दार बन सकें। यह भी अल्लाह तआला की क्षमाशीलता, दरगुज़र, दया एवं कृपा ही की एक शक्ल होती है अत: आयत के अन्त में उस की क्षमाशीलता एवं दानशीलता की तरफ़ भी इशारा फ़रमाया।''

(तदब्बुरे क़ुर्आन जिल्द १पृष्ट ७९५)

إِذْ تُصْعِدُونَ وَلَا تَلْوُونَ عَلَىٰ أَحَدٍ وَالرَّسُولُ
يَدْعُوكُمْ فِي أُخْرَاكُمْ فَأَثَابَكُمْ غَمًّا بِغَمٍّ
لِكَيْلَا تَحْزَنُوا عَلَىٰ مَا فَاتَكُمْ
وَلَا مَا أَصَابَكُمْ ۗ وَاللَّهُ خَبِيرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ﴿١٥٣﴾

153. जब तुम (मोर्चा छोड़ कर) चले जा रहे थे और किसी तरफ़ मुड़ कर भी न देखते थे, हालाँकि रसूल तुम को पीछे से पुकार रहा था,[183] तो अल्लाह ने तुम को ग़म पर ग़म पहुँचाया [184] ताकि जो चीज़ तुम्हारे हाथ से जाती रहे या जो मुसीबत तुम्हें पेश आए उस पर तुम शोकाकुल न हो। तुम जो कुछ करते हो उस से अल्लाह बाख़बर है।

ثُمَّ أَنْزَلَ عَلَيْكُمْ مِنْ بَعْدِ الْغَمِّ أَمَنَةً نُعَاسًا يَغْشَىٰ طَائِفَةً
مِنْكُمْ ۖ وَطَائِفَةٌ قَدْ أَهَمَّتْهُمْ أَنْفُسُهُمْ يَظُنُّونَ بِاللَّهِ غَيْرَ الْحَقِّ
ظَنَّ الْجَاهِلِيَّةِ ۖ يَقُولُونَ هَلْ لَنَا مِنَ الْأَمْرِ مِنْ شَيْءٍ ۗ قُلْ إِنَّ
الْأَمْرَ كُلَّهُ لِلَّهِ ۗ يُخْفُونَ فِي أَنْفُسِهِمْ مَا لَا يُبْدُونَ لَكَ ۖ يَقُولُونَ
لَوْ كَانَ لَنَا مِنَ الْأَمْرِ شَيْءٌ مَا قُتِلْنَا هَاهُنَا ۗ قُلْ لَوْ كُنْتُمْ فِي بُيُوتِكُمْ
لَبَرَزَ الَّذِينَ كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقَتْلُ إِلَىٰ مَضَاجِعِهِمْ ۖ وَلِيَبْتَلِيَ
اللَّهُ مَا فِي صُدُورِكُمْ وَلِيُمَحِّصَ مَا فِي قُلُوبِكُمْ ۗ وَاللَّهُ عَلِيمٌ
بِذَاتِ الصُّدُورِ ﴿١٥٤﴾

154. फिर इस ग़म के बाद उस ने तुम पर इत्मीनान नाज़िल फ़रमाया।यह ऊँघ की हालत थी जो तुम में से एक गिरोह पर छा रही थी [185] मगर दूसरे गिरोह को अपनी जानों ही की पड़ी थी। यह लोग अल्लाह के बारे में हक़ के ख़िलाफ जाहिलिय्यत (अज्ञानता) की सी बदगुमानी कर रहे थे। कहते हैं क्या इस मामले में हमें भी कोई इख़्तियार है? कहो सारा मामला अल्लाह के इख़्तियार में है। वे अपने दिलों में जो बात छिपाये हुए हैं उसे तुम पर ज़ाहिर नहीं करते। (दरअसल) उन का कहना यह है कि अगर इस मामले में हमें कोई इख़्तियार होता तो हम यहाँ मारे न जाते। कहो अगर तुम अपने घरों में भी होते तो जिन का क़त्ल होना मुक़द्दर था वे अपनी क़त्लगाहों की तरफ़ निकल आते।[186] यह जो कुछ पेश आया इस लिए पेश आया ताकि जो कुछ तुम्हारे सीनों में निहित है उसे अल्लाह परखे और जो (द्वेष) तुम्हारे दिलों में है उसे साफ़ करे अल्लाह तुम्हारे (हृदय के) अन्दर का हाल अच्छी तरह जानता है।

إِنَّ الَّذِينَ تَوَلَّوْا مِنْكُمْ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعَانِ إِنَّمَا اسْتَزَلَّهُمُ
الشَّيْطَانُ بِبَعْضِ مَا كَسَبُوا ۖ وَلَقَدْ عَفَا اللَّهُ عَنْهُمْ ۗ
إِنَّ اللَّهَ غَفُورٌ حَلِيمٌ ﴿١٥٥﴾ ع

155. जिस दिन दोनों लश्कर एक दूसरे के आमने सामने हुए थे [187] उस दिन तुम में से जिन लोगों ने पीठ फेरी उन से शैतान ने कुछ कर्मों के कारण लग़्ज़िश (भूल) करा दी थी, [188] अल्लाह ने उन्हें माफ़ कर दिया निःसंदेह अल्लाह बड़ा क्षमाशील और सहनशील है।

183. मुसलमानों के समूह में जब अव्यवस्थ (गड़बड़ी) पैदा हुई तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कुछ निडर एवं साहसी सहाबा के साथ जिन में हज़रत अली, हज़रत अबू बक्र और हज़रत तलहा (रज़ियल्लाहु अन्हुम) जैसे जाँ निसार शामिल थे, अपनी जगह जमे रहे और मुसलमानों को आवाज़ दे रहे थे कि मेरी तरफ़ आओ मैं अल्लाह का रसूल हूँ। इस के बाद ख़ुद अल्लाह का रसूल ज़ख़्मी हुआ।

184. ग़म इस बात का कि इस जंग में मुसलमानों को बहुत नुक़सान पहुँचा। सत्तर मुसलमान शहीद हुए जिन में हज़रत हम्ज़ा और अब्दुल्लाह बिन जहश जैसी प्रमुख हस्तियाँ शामिल हैं। इस के अलावा मुसलमानों की एक बड़ी तादाद ज़ख़्मी हुई, पर दोहरा ग़म जो मुसलमानों पर पहाड़ की तरह टूट पड़ा वह उस ग़लत ख़बर का था कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम शहीद हो गए।

185. जंग में एक मौक़ा ऐसा आया कि भय की स्थिति को ख़त्म करने के लिए अल्लाह तआला ने मुसलमानों पर ऊँघ की हालत तारी कर दी। यह हालत उस समय छायी जब कि लड़ाई कुछ देर के लिए रुक गई थी और मुसलमान नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के गिर्द जमा हो कर शक्ति एकत्रित कर रहे थे।

186. अर्थात् तुम में एक गिरोह ख़ुदा के बारे में बदगुमानियों में लिप्त रहा। उस का ख़याल था अगर मदीना में रह कर जंग लड़ी जाती तो हम क़त्ल न होते, इस की रद्द में फ़रमाया तुम्हारा यह ख़याल ग़लत है अगर तुम अपने घरों में भी होते तो अल्लाह का लिखा हो कर रहता और तुम्हारी मौत वहीं होती जहाँ के लिए सुनिश्चित थी क्यों कि अल्लाह तआला ने हर एक की मौत का समय और उस के मरने की जगह लिख रखी है। और इस की पुष्टि आये दिन की घटनाओं से होती है कि आदमी जिस जगह के लिए अनुमान तक नहीं करता वहाँ वह किसी न किसी बहाने पहुँच कर रहता है और उस की मौत आ जाती है।

187. मुराद उहद की जंग है (देखिए नोट नं. १५२)

188. मुनाफ़िक़ों (पाखण्डियों) की शरारत से कुछ कमज़ोर क़िस्म के मुसलमान भी प्रभावित हुए थे लेकिन बाद में उन्हें अपनी ग़लती का एहसास हो गया इस लिए अल्लाह तआला ने उन्हें माफ़ कर दिया। यहाँ इस परिस्थिति की समीक्षा करते हुए फ़रमाया कि इन के कुछ पिछले गुनाहों के कारण शैतान ने इन्हें ठोकर खिलाई क्यों कि शैतान की चाल उन लोगों पर चल गई जो गुनाह के लिए अपने नफ़्स (आत्मा) को ढील दे देते हैं।

156. ऐ ईमान वालो ! उन लोगों की तरह न हो जाओ जिन्होंने कुफ्र किया और जो अपने भाईयों के बारे में जब कि वे सफर पर गए हों या जंग में शरीक हुए हों (और उन्हें मौत आ जाए तो) कहते हैं अगर वे हमारे पास मौजूद होते तो न मरते और न क़त्ल किये जाते (उन्हें यह ख़ुश फ़हमी इस लिए है) ताकि अल्लाह इस को उन के दिलों में हसरत की वजह बना दे।[189] वरना अल्लाह ही है जो जिलाता है और मारता है और तुम जो कुछ करते हो सब अल्लाह की निगाह में है।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَكُونُوا كَالَّذِينَ كَفَرُوا وَقَالُوا
لِإِخْوَانِهِمْ إِذَا ضَرَبُوا فِي الْأَرْضِ أَوْ كَانُوا غُزًّى لَوْ كَانُوا
عِنْدَنَا مَا مَاتُوا وَمَا قُتِلُوا لِيَجْعَلَ اللَّهُ ذَٰلِكَ حَسْرَةً فِي
قُلُوبِهِمْ ۗ وَاللَّهُ يُحْيِي وَيُمِيتُ ۗ وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ
بَصِيرٌ ﴿١٥٦﴾

157. अगर तुम अल्लाह की राह में क़त्ल हो गए या मर गए तो अल्लाह की दयालुता और क्षमादान (जिस से कि तुम नवाज़े जाओगे) उन तमाम चीज़ो से कहीं बेहतर है जिन को ये लोग जमा कर रहे हैं।

وَلَئِنْ قُتِلْتُمْ فِي سَبِيلِ اللَّهِ أَوْ مُتُّمْ لَمَغْفِرَةٌ مِنَ اللَّهِ
وَرَحْمَةٌ خَيْرٌ مِمَّا يَجْمَعُونَ ﴿١٥٧﴾

158. और चाहे तुम मरो या मारे जाओ बहरहाल तुम्हें अल्लाह ही के सामने जमा होना है।

وَلَئِنْ مُتُّمْ أَوْ قُتِلْتُمْ لَإِلَى اللَّهِ تُحْشَرُونَ ﴿١٥٨﴾

159. (ऐ पैग़म्बर) यह अल्लाह की रहमत है कि तुम उन के लिए नर्म हो।[190] अगर तुम क्रूर स्वभाव और कठोर हृदय के होते तो ये तुम्हारे पास से हट जाते। लिहाज़ा इन्हें माफ़ करो और इन के पक्ष में क्षमा की प्रार्थना करो एवं (जिहाद जैसे ज़बरदस्त) कार्यें में इन से मश्विरा करते रहो।[191] फ़िर जब दृढ़ संकल्प कर लो तो अल्लाह पर भरोसा करो। निश्चय ही अल्लाह भरोसा करने वालों को पसंद करता है।

فَبِمَا رَحْمَةٍ مِنَ اللَّهِ لِنْتَ لَهُمْ ۖ وَلَوْ كُنْتَ فَظًّا غَلِيظَ الْقَلْبِ
لَانْفَضُّوا مِنْ حَوْلِكَ ۖ فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاسْتَغْفِرْ لَهُمْ
وَشَاوِرْهُمْ فِي الْأَمْرِ ۖ فَإِذَا عَزَمْتَ فَتَوَكَّلْ عَلَى اللَّهِ ۚ إِنَّ
اللَّهَ يُحِبُّ الْمُتَوَكِّلِينَ ﴿١٥٩﴾

160. अगर अल्लाह तुम्हारी मदद फ़रमाए तो कौन है जो तुम पर ग़ालिब आए ? और अगर वह तुम्हें छोड़ दे तो उस के बाद कौन है जो तुम्हारी मदद करेगा। और ईमान वालों को अल्लाह ही पर भरोसा रखना चाहिए।

إِنْ يَنْصُرْكُمُ اللَّهُ فَلَا غَالِبَ لَكُمْ ۖ وَإِنْ يَخْذُلْكُمْ فَمَنْ ذَا الَّذِي
يَنْصُرُكُمْ مِنْ بَعْدِهِ ۗ وَعَلَى اللَّهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ﴿١٦٠﴾

161. किसी नबी का यह काम नहीं हो सकता कि वह ख़ियानत करे [192] और जो कोई ख़ियानत करेगा वह क़ियामत के दिन अपनी ख़ियानत को ला उपस्थित करेगा।[193] फिर हर प्राणी को उस की कमाई का पूरा बदला दिया जाएगा और किसी के साथ नाइन्साफ़ी न होगी ।

وَمَا كَانَ لِنَبِيٍّ أَنْ يَغُلَّ ۚ وَمَنْ يَغْلُلْ يَأْتِ بِمَا غَلَّ يَوْمَ
الْقِيَامَةِ ۚ ثُمَّ تُوَفَّىٰ كُلُّ نَفْسٍ مَا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿١٦١﴾

189. अर्थात् जो लोग अपनी तदबीरों को सब कुछ समझते हैं वे क़ुदरत के क़ानून के तहत घटित घटनाओं का ग़लत स्पष्टीकरण करते हैं और यह स्पष्टीकरण उन के लिए खुली हसरत बन कर रह जाती है और वह हाथ मलते रह जाते हैं कि अगर ऐसा किया होता तो ऐसा होता।

190. अर्थात् अपने साथियों के सुधार के मामले में जो नर्मी तुम बरत रहे हो वह आगे भी बरक़रार रहे। ऐसा न हो कि जिन कमज़ोरियों का इज़हार उस समय (उहुद की जंग के मौक़े पर) इन से हुआ है उस को देखते हुए तुम्हारा रवैया इन के साथ सख़्त हो जाए बल्कि यह कोमल स्वभाव ही इन्हें तुम्हारा हितैषी, शुभ चिन्तक एवं प्रिय बनाएगा और ये अपने सुधार की ओर ध्यान देंगे।

इस से पता चला कि कोमलता अथवा कोमल स्वभाव बहुत बड़ी नैतिक विशेषता है और एक आहवान कर्ता तथा सुधारक में इस विशेषता का होना अति आवश्यक है वरना वह लोगों को अपने से क़रीब नहीं कर सकता और यही गुण एवं यही विशेषता किसी भी मनुष्य को सर्वप्रिय बना देती है।

191. यहाँ मामलात में ईमान वालों से मश्विरा करते रहने की हिदायत नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को दे दी गई है और संदर्भ से स्पष्ट है कि मामलात से अभिप्राय जिहाद जैसे ज़बरदस्त मामले हैं जिन के सिलसिले में ख़ुदा की तरफ़ से कोई स्पष्ट आदेश न हुआ हो या आदेश तो हो किन्तु मामला उसे लागू करने और उस को व्यवहार में लाने से संबन्धित नीति का हो। वरना ख़ुदा के हुक्म के रहते परामर्श का सवाल पैदा ही नहीं होता। परामार्श के इस आदेश पर ग़ौर करने से निम्नलिखित बातों पर प्रकाश पड़ता है।

(A) शूराईयत (परामर्श का तरीक़ा) इस्लामी संगठन का एक महत्वपूर्ण उसूल और इस्लाम की राजनीतिक व्यवस्था की मौलिक विशेषता है।

(B) मश्विरे की हिदायत ज़बरदस्त मामलों के लिए है। अर्थात वे मामले एवं मसले जिन का असर उम्मत (मुस्लिम समुदाय) के सामाजिक जीवन पर पड़ता हो। इस में राजनीति, जंग, शान्ति और इस्लामी राज्य से सम्बन्धित तमाम महत्वपूर्ण मामले एवं उम्मत का हित तथा नीतियाँ और इस्लाम के प्रचार के अभियान से सम्बन्ध रखने वाले तमाम महत्वपूर्ण मामले और मसले शामिल हैं।

(C) परामर्श करने की हिदायत जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को दी गई है तो उम्मत अर्थात पूरे मुस्लिम समुदाय पर इस की पाबन्दी और अधिक आयद होती है क्यों कि उम्मत नबी से ज़्यादा इस की ज़रुरतमंद है ।

(D) ज़बरदस्त और बड़े मामलों पर फ़ैसला परामर्श के बाद करना चाहिए और यह फैसला (संकल्प) परामर्श का परिणाम हो। दूसरे शब्दों में जम्हूरी राय निर्णयक होगी। अगर ऐसा नहीं किया गया और मुख्य अधिकार (सरदार या अमीर) ने अपनी राय के अनुसार ही निर्णय करने का अधिकारी जताया तो शूरा (परामर्श समिति) की कोई अहमियत नहीं रहेगी और परामर्श प्रभावहीन एवं मूल्यहीन हो कर रह जाएगा तथा इस से तानाशाही का रुज्हान फले फूलेगा जिस का नतीजा वास्तविक लोकतंत्र (हक़ीक़ी जम्हूरियत) की समाप्ति और तानाशाही और अत्याचार के लिए मार्ग प्रशस्त होने ही की शक्ल में निकल सकता है। जो लोग यह कहते हैं कि अधिकाशं लोगों का एकमत होना स्वस्थ प्रमाण नहीं वे अवाम के विपरीत अमीर (अधिनायक या सरदार) को निर्णय का अधिकार देते हैं। दूसरे शब्दों में वे अमीर को स्वस्थ प्रमाण स्वीकार करते हैं जब कि यह धारणा ही सिरे से ग़लत है। हक़ीक़त यह है कि जहाँ तक स्वस्थ प्रमाण का सम्बन्ध है न अवाम दलील हैं और न अमीर अलबत्ता हितों एवं नीतियों को देखते हुए इस्लाम ने अधिकांश लोगों के एकमत होने को वजन दे कर उसे निर्णायक की हैसियत दी है जो एक बुद्धिसंगत और न्यायोचित बात है। और मौजूदा ज़माने में जब कि मनमानी करने और इच्छाओं के पीछे आँख मूँद कर भागने का दौर दौरा है, अमीर (सरदार) को अवाम की राय से मुक्त करना और उसे असाधारण अधिकार दे देना बड़े खतरों को निमंत्रण देने जैसा है।

192. इशारा है इस बात की तरफ़ कि तीरंदाज़ों ने अपनी जगह छोड़कर समय से पहले ग़नीमत (परिहार) लूटने में जो हिस्सा लिया इस की वजह उन का यह गुमान था कि अगर हम ग़नीमत लूटने में शरीक नहीं होंगे तो हमें उस में हिस्सा नहीं मिलेगा जब कि फौज का नेतृत्व अल्लाह का नबी कर रहा था। ऐसी सूरत में इस बदगुमानी के लिए कोई वजह न थी। क्यों कि कोई नबी अमानत और दयानत के खिलाफ़ काम हरगिज़ नहीं करता। ध्यान रहे कि इस बात का कोई सबूत मौजूद नहीं है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर किसी ने ख़ियानत का इल्ज़ाम लगाया था। फिर भी क़ुर्आन ने स्पष्ट किया कि एक नबी किसी हाल में ख़ियानत नहीं कर सकता यह स्पष्टीकरण इस लिए आवश्यक हुआ ताकि माले-ग़नीमत (परिहार) वग़ैरह के बंटवारे के सिलसिले में नबी के बारे में किसी प्रकार की बदगुमानी न होने पाए।

193. ख़ियानत के सिलसिले में हदीस में बहुत सख़्त चेतावनी दी गई है और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने राजकर्मचारियों को सरकारी खज़ाने के सिलसिले में इतना सावधान रहने का निर्देश दिया था कि एक सुई का छिपाना भी उन के लिए वैध न था। फ़रमाया :

يا ايها الناس من عمل لنا منكم عملاً فكتمنا منه مخيطا فما
فوقه فهو غل ياتى به يوم القيامة ۔ (ابن کثیر ج ۱ ص ۴۲۲ بحوالہ احمد)

“ लोगों ! तुम में से जो कोई हमारे किसी काम पर नियुक्त हो और फिर वह हम से एक सुई या उस से कमतर कोई चीज़ छिपाए तो वह ख़िनायत है जिसे वह क़ियामत के दिन ला हाज़िर करेगा” (इब्ने कसीर VOL.1 Page 422- अहमद के हवाले से)

أَفَمَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَ اللّٰهِ كَمَنْ بَاءَ بِسَخَطٍ مِّنَ اللّٰهِ وَمَأْوٰىهُ
جَهَنَّمُ ۚ وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ﴿۱۶۲﴾

162. क्या ऐसा व्यक्ति जो अल्लाह की इच्छा पर चलने वाला हो, उस व्यक्ति की तरह हो सकता है जो अल्लाह के प्रकोप का हक़दार हो और जिस का ठिकाना जहन्नम है, बहुत ही बुरा ठिकाना !

هُمْ دَرَجٰتٌ عِنْدَ اللّٰهِ ۗ وَاللّٰهُ بَصِيرٌۢ بِمَا يَعْمَلُونَ ﴿۱۶۳﴾

163. अल्लाह के नज़दीक लोगों के दर्जे अलग अलग हैं, और वे जो कुछ कर रहे हैं अल्लाह की निगाह में हैं ।[194]

لَقَدْ مَنَّ اللّٰهُ عَلَى الْمُؤْمِنِينَ إِذْ بَعَثَ فِيهِمْ رَسُولًا مِّنْ أَنْفُسِهِمْ
يَتْلُوا عَلَيْهِمْ اٰيٰتِهٖ وَيُزَكِّيهِمْ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ ۚ
وَإِنْ كَانُوا مِنْ قَبْلُ لَفِي ضَلٰلٍ مُّبِينٍ ﴿۱۶۴﴾

164. वास्तव में अल्लाह ने ईमान वालों पर यह बड़ा एहसान फ़रमाया कि उन में से एक ऐसा रसूल बरपा किया जो उन्हें उस की आयतें सुनाता है, उन को पाक करता है और उन को किताब और हिकमत की तालीम देता है,[195] वरना इस से पहले यह लोग खुली गुमराही में पड़े हुए थे।

أَوَلَمَّا أَصٰبَتْكُمْ مُّصِيبَةٌ قَدْ أَصَبْتُمْ مِّثْلَيْهَا ۙ قُلْتُمْ أَنّٰى هٰذَا ۖ
قُلْ هُوَ مِنْ عِنْدِ أَنْفُسِكُمْ ۗ إِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ
قَدِيرٌ ﴿۱۶۵﴾

165. यह क्या बात है कि जब तुम पर मुसीबत आ पड़ी जिस से दुगुनी मुसिबत तुम्हारे हाथों (दुश्मनों पर) पड़ चुकी है तो तुम कहने लगे यह कहाँ से आ गई ?[196] (ऐ पैग़म्बर !) कहो यह तुम्हारे ही हाथों आई है ।[197] निश्चय ही अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।[198]

وَمَا أَصٰبَكُمْ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعٰنِ فَبِإِذْنِ اللّٰهِ وَلِيَعْلَمَ
الْمُؤْمِنِينَ ﴿۱۶۶﴾

166. और दोनों गिरोहों के मुक़ाबले के दिन जो मुसीबत तुम्हें पहुँची वह अल्लाह के इज़्न (अनुमति) से ही पहुँची और यह इस लिए हुआ ताकि वह मोमिनों को देख ले।

وَلِيَعْلَمَ الَّذِينَ نَافَقُوا ۚ وَقِيلَ لَهُمْ تَعَالَوْا قٰتِلُوا
فِي سَبِيلِ اللّٰهِ أَوِ ادْفَعُوا ۖ قَالُوا لَوْ نَعْلَمُ قِتَالًا لَّاتَّبَعْنٰكُمْ ۗ
هُمْ لِلْكُفْرِ يَوْمَئِذٍ أَقْرَبُ مِنْهُمْ لِلْإِيمَانِ ۚ يَقُولُونَ
بِأَفْوَاهِهِمْ مَّا لَيْسَ فِي قُلُوبِهِمْ ۗ
وَاللّٰهُ أَعْلَمُ بِمَا يَكْتُمُونَ ﴿۱۶۷﴾

167. और उन लोगों को भी देख ले जो मुनाफ़िक़ (पाखण्डी) हैं।इन (मुनाफ़िक़ों) से जब कहा जाता है कि आओ अल्लाह की राह में जंग करो या (दुश्मन को) दफ़ा करो तो वे कहने लगे अगर हम को मालूम होता कि जंग होगी तो हम ज़रूर तुम्हारे साथ होते।[199] वे उस दिन ईमान की बनिस्बत कुफ़्र से ज़्यादा करीब थे।वे अपनी ज़बान से ऐसी बातें कहते हैं जो उन के दिलों में नहीं है और जिस बात को ये छिपाते हैं उस को अल्लाह अच्छी तरह जानता है।

194. अर्थात जो लोग अपने कर्मों में एक जैसे नहीं हैं तो वे अपने अन्जाम में एक जैसे कैसे हो सकते हैं।

195. ज़रूरी है कि भले और बुरे में फ़र्क़ किया जाए। (देखिए सूरह बक़र: नोट नं. 149)

196. मतलब यह की अगर इस जंग में तुम्हें नुक़सान पहुँचा है तो इस से पहले जंग बद्र में तुम्हारें हाथों दुश्मन को इस से दुगुना नुक़सान पहुँच चुका है, बद्र में काफ़िरों के 70 आदमी क़त्ल हुए और 70 क़ैदी बना लिए गए जब कि उहद में 70 मुसलमान शहीद हुए। तब भी इस जंग में मुसलमानों के हाथों काफ़िरों के कई आदमी क़त्ल हुए लेकिन बाद में मुसलमानों को उन की अपनी ग़लती की वजह से हानि पहुँची।

197. अर्थात तुम्हारी अपनी ग़लतियों और कमज़ोरियों के फ़ल्सवरुप ।

198. मतलब यह कि तुम्हें विजयी करने पर भी क़ादिर है और पराजित करने पर भी।

199. मुनाफ़िक़ों की तरफ़ इशारा है जिन्होंने मौत के डर से जिहाद में सम्मिलित होने से मुँह मोड़ा और बहाना यह बनाते रहे कि हम समझते थे कि जंग होगी ही नहीं। अगर हमें मालूम होता कि जंग होगी तो हम ज़रुर शामिल होते लेकिन साथ ही उन लोगों के बारे में जो जंग में मारे गए, कहते रहे कि अगर वे हमारी बात मानते, तो क़त्ल न होते। इस से पता चलता है कि असल चीज़ मौत का डर है जिस के कारण यह जंग पर नहीं निकले।

ध्यान रहे कि इन ग़ज़वात (जंगों) में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम स्वयं सम्मिलित हुए थे। और जब नबी स्वयं मोर्चे पर जंग लड़ रहा हो तो उस को छोड़कर किसी मुसलमान का घर में बैठ रहना ईमानी ग़ैरत के सरासर ख़िलाफ था। इस लिए ऐसे मुसलमानों पर जो वास्तव में मुनाफ़िक़ (पाखण्डी) थे क़ुर्आन में सख़्त पकड़ की गई है।

168. ये लोग ख़ुद तो बैठे रहे और अपने भाईयों के बारे में कहा कि अगर वे हमारी बात मान लेते तो मारे न जाते। इन से कहो अगर तुम सच्चे हो तो अपने ऊपर से मौत को टाल कर दिखाओ ।[200]

الَّذِينَ قَالُوا لِإِخْوَانِهِمْ وَقَعَدُوا لَوْ أَطَاعُونَا مَا قُتِلُوا ۗ قُلْ
فَادْرَءُوا عَنْ أَنفُسِكُمُ الْمَوْتَ إِن كُنتُمْ صَادِقِينَ ﴿١٦٨﴾

169. जो लोग अल्लाह की राह में क़त्ल हुए उन्हें मुर्दा ख़याल न करो बल्कि वे ज़िन्दा हैं, अपने रब के पास रिज़्क़ पर रहे हैं।[201]

وَلَا تَحْسَبَنَّ الَّذِينَ قُتِلُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ أَمْوَاتًا ۚ بَلْ أَحْيَاءٌ
عِندَ رَبِّهِمْ يُرْزَقُونَ ﴿١٦٩﴾

170. अल्लाह ने उदार कृपा (फ़ज़्ल) से उन्हें जो कुछ प्रदान किया है उस से वे खुश हैं और जो लोग उन के पीछे रह गए और अभी उन से मिले नहीं हैं उन के बारे में खुशियाँ मना रहे हैं कि उन के लिए भी न किसी तरह का ख़ौफ़ होगा और न वे दुखी होगें ।[202]

فَرِحِينَ بِمَا آتَاهُمُ اللَّهُ مِن فَضْلِهِ وَيَسْتَبْشِرُونَ بِالَّذِينَ لَمْ
يَلْحَقُوا بِهِم مِّنْ خَلْفِهِمْ أَلَّا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿١٧٠﴾

171. उन्हें अल्लाह की नेमत और उस की उदार कृपा की शुभ सूचना मिल रही है और वे संतुष्ट हैं कि अल्लाह ईमान वालों के अज्र (ईनाम) को अकारथ नहीं करेगा।[203]

يَسْتَبْشِرُونَ بِنِعْمَةٍ مِّنَ اللَّهِ وَفَضْلٍ وَأَنَّ اللَّهَ لَا يُضِيعُ أَجْرَ
الْمُؤْمِنِينَ ﴿١٧١﴾

172. जिन लोगों ने ज़ख्म खाने के बाद अल्लाह और उस के रसूल की पुकार पर अपने आप को प्रस्तुत कर दिया,[204] उन में से जो सदाचारी और परहेज़गार हैं उन के लिए बहुत बड़ा अज्र (ईनाम)है ।

الَّذِينَ اسْتَجَابُوا لِلَّهِ وَالرَّسُولِ مِن بَعْدِ
مَا أَصَابَهُمُ الْقَرْحُ ۚ
لِلَّذِينَ أَحْسَنُوا مِنْهُمْ وَاتَّقَوْا أَجْرٌ عَظِيمٌ ﴿١٧٢﴾

173. ये वे लोग हैं जिन से लोगों ने कहा कि तुम्हारे ख़िलाफ़ उन लोगों ने बड़ी ताक़त इकट्ठा की है अतः इन से डरो तो उन का ईमान और बढ़ गया [205] और वे बोल उठे अल्लाह हमारे लिए काफ़ी है और वह बेहतरीन काम बनाने वाला है।[206]

الَّذِينَ قَالَ لَهُمُ النَّاسُ إِنَّ النَّاسَ قَدْ جَمَعُوا لَكُمْ فَاخْشَوْهُمْ
فَزَادَهُمْ إِيمَانًا وَقَالُوا حَسْبُنَا اللَّهُ وَنِعْمَ الْوَكِيلُ ﴿١٧٣﴾

174. फिर ऐसा हुआ कि ये लोग अल्लाह की नेमत और उस के उदार दान (फज़्ल) के साथ वापस लौटे। उन को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँची। वे अल्लाह की इच्छा पर चले और अल्लाह बड़े फ़ज़्ल वाला है।

فَانقَلَبُوا بِنِعْمَةٍ مِّنَ اللَّهِ وَفَضْلٍ لَّمْ يَمْسَسْهُمْ سُوءٌ وَاتَّبَعُوا
رِضْوَانَ اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ ذُو فَضْلٍ عَظِيمٍ ﴿١٧٤﴾

200. अर्थात् अगर मौत से बचाना तुम्हारे सामर्थ्य में है तो अपने आप को मौत से बचाओ।

201. अल्लाह की राह में शहीद होना अमर एवं अनंत जीवन की ज़मानत है। यूँ तो महसूस यही होता है कि अल्लाह की राह में क़त्ल होने वाले मर गए लेकिन हक़ीक़त यह है कि मृत्यु तो शरीर को आती है,रुह को नहीं। शहीद होने वाले की रुह को स्वर्गलोक में एक विशेष प्रकार का जीवन प्राप्त होता है और यह जीवन आनन्द और उन्माद से इतना भरा होता है कि इस की कल्पना भी इस दुनिया में नहीं की जा सकती (देखिए सूरह बक़र: नोट नं. १८५)

सही मुस्लिम की हदीस है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया ''शहीदों'' की रुहें हरे परिन्दों के खोल (घेरे) में होती हैं और उन का ठिकाना अर्श (ऊपरी आसमान) से लटकते हुए किन्दीलों (दीप-पात्रों) के पास होता है। वे जन्नत में जहाँ चाहती हैं सैर करती हैं उस के बाद उन क़िन्दीलों के पास वापस आ जाती हैं। उन का रब उन से पूछता है, तुम्हें किस चीज़ की इच्छा है? वे कहती हैं हमें किस चीज़ की इच्छा हो सकती हैं जब कि हम जन्नत की जिस तरह चाहें सैर कर सकती हैं अल्लाह तआला उन से तीन बार यह सवाल करता है। वे जब देखती हैं कि उन से बार बार सवाल किया जा रहा है तो कहती हैं, ऐ हमारे रब हम चाहते हैं कि हमारी रुह हमारे शरीर में लौटा दी जाऐं ताकि हम दोबारा तेरी राह में क़त्ल किए जाऐं। अल्लाह तआला जब देखता है कि इन की कोई ज़रूरत बाक़ी नहीं रही तो उन्हें उन की हालत पर छोड़ देता है।

202. शहीदों की रुहें यमलोक (आलमे-बर्ज़ख) में सम्मानित एवं प्रतिष्ठित किए जाने पर बहुत ख़ुश हो जाती हैं तथा और भी ख़ुशी उन्हें इस बात की होती है कि जिन अच्छे साथियों को उन्होंने अपने पीछे छोड़ा है वे यद्यपि अभी उन से मिले नहीं हैं लेकिन बहुत जल्द उन से मिलेंगें और उन के लिए न किसी प्रकार की शंका है और न रन्ज एवं मलाल।

203. अर्थात क़ियामत के दिन जब कि अल्लाह तआला अदालत बरपा करेगा।

204. इशारा है उस घटना की ओर जो उहुद की जंग के तत्काल बाद पेश आई। उहुद में मुसलमानों को क्षति पहुँचाने के बाद मक्का के काफ़िर उसी दिन वापस रवाना हो गए लेकिन ''रौहा'' के स्थल पर पहुँचने के बाद जो मदीना से तीस मील के फ़ासले पर है उन को एहसास हुआ कि इतनी जल्दी वापस हो कर उन्होंने ग़लती की। इस अवसर पर उन्हें मदीना पर हमलावर होना चाहिए था और मुसलमानों का विनाश करना चाहिए था। अत: उन्होंने फिर जंग की ठान ली । उधर जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को उन के इरादों की ख़बर हुई तो आप अपने विश्वसनीय साथियों को ले कर उन का पीछा करते हुए '' हम्राउलअसद'' तक पहुँचे जो मदीना से ८ मील के फ़ासले पर है और यह घटना उहुद के दूसरे दिन अर्थात १६ शव्वाल सन ३ हिजरी की है। जब इस की सूचना काफ़िरों को मिली तो उन्होंने यह महसूस कर के कि मुसलमानों के हौसले टूटे नहीं हैं, इरादा बदल दिया और मक्का वापस हो गए। इधर मुसलमान अपनी धाक बिठा कर कामयाब लौटे। इस आयत में रसूल के उन ही सच्चे और वफ़ादार साथियों का ज़िक्र है जिन्होंने उहुद में ज़ख़्म खाने के बाद साहस का सबूत दिया और एक नई मुहिम पर रवाना हो गए।

205. अर्थात लोगों की तरफ़ से भय और आतंक पैदा करने की कुचेष्टा उन के साहस और ईमान में वृद्धि का कारण हुई । गोया इन बातों ने उन के साहस और संकल्प के लिए आग में घी डालने का काम किया।

206. अल्लाह पर भरोसा ईमान वालों के अन्दर दृढ़ता, और साहस पैदा करता है। हदीस में आता है कि ये शब्द ''हसबुनल्लाहु व निअ्मलवकील'' इब्राहीम अलैहिस्सलाम की ज़बान से उस समय निकले थे जब कि उन्हें आग में झोंक दिया गया था।

175. वह वास्तव में शैतान था जो अपने साथियों से डरा रहा था अतः तुम इन से न डरो, मुझ से डरो अगर तुम ईमान वाले हो।

إِنَّمَا ذَٰلِكُمُ الشَّيْطَانُ يُخَوِّفُ أَوْلِيَاءَهُ فَلَا تَخَافُوهُمْ وَخَافُونِ
إِن كُنتُم مُّؤْمِنِينَ ﴿١٧٥﴾

176. जो लोग कुफ़्र (की राह) में सक्रिय हैं उन की वजह से तुम दुखी न हो जाओ, वे अल्लाह का कुछ भी न बिगाड़ सकेंगे। अल्लाह चाहता है की उन के लिए आख़िरत में कोई हिस्सा न रखे, उन के लिए तो दुखदायी यातना (अज़ाब) है।

وَلَا يَحْزُنكَ الَّذِينَ يُسَارِعُونَ فِي الْكُفْرِ ۚ إِنَّهُمْ لَن يَضُرُّوا اللَّهَ شَيْئًا ۗ
يُرِيدُ اللَّهُ أَلَّا يَجْعَلَ لَهُمْ حَظًّا فِي الْآخِرَةِ ۖ وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿١٧٦﴾

177. निः संदेह जिन लोगों ने ईमान के बाद कुफ़्र का सौदा किया है वे अल्लाह का कुछ बिग़ाड़ न सकेंगें उन के लिए दुखदायी यातना (अज़ाब) है।

إِنَّ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الْكُفْرَ بِالْإِيمَانِ لَن يَضُرُّوا اللَّهَ شَيْئًا ۖ وَلَهُمْ
عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿١٧٧﴾

178. जिन लोगों ने कुफ़्र किया वे यह न समझें कि यह ढील जो हम उन्हें दे रहे हैं वह उन के लिए बेहतर है। यह ढील तो हम उन्हें इस लिए दे रहे हैं ताकि वे ख़ूब गुनाह समेट लें,[207] फिर उन के लिए अत्यंत अपमानजनक दंड है।

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا أَنَّمَا نُمْلِي لَهُمْ خَيْرٌ لِّأَنفُسِهِمْ ۚ
إِنَّمَا نُمْلِي لَهُمْ لِيَزْدَادُوا إِثْمًا ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّهِينٌ ﴿١٧٨﴾

179. अल्लाह ईमान वालों को इस हाल पर हरगिज़ न छोड़ेगा जिस पर तुम इस समय हो, जब तक कि वह नापाक को पाक से अलग न कर दे [208]और अल्लाह का यह तरीक़ा नहीं कि वह ग़ैब (की इन बातों) पर तुम्हें सूचित कर दे।[209] बल्कि अल्लाह अपने रसूलों में से जिस को चाहता है इस काम के लिए चुन लेता है। अतः अल्लाह और उस के रसूलों पर ईमान लाओ। अगर तुम ईमान लाए और अल्लाह से डरते रहे तो तुम्हारे लिए बहुत बड़ा अज्र (ईनाम) है।

مَّا كَانَ اللَّهُ لِيَذَرَ الْمُؤْمِنِينَ عَلَىٰ مَا أَنتُمْ عَلَيْهِ حَتَّىٰ يَمِيزَ
الْخَبِيثَ مِنَ الطَّيِّبِ ۗ وَمَا كَانَ اللَّهُ لِيُطْلِعَكُمْ عَلَى الْغَيْبِ
وَلَٰكِنَّ اللَّهَ يَجْتَبِي مِن رُّسُلِهِ مَن يَشَاءُ ۖ فَآمِنُوا بِاللَّهِ
وَرُسُلِهِ ۚ وَإِن تُؤْمِنُوا وَتَتَّقُوا فَلَكُمْ أَجْرٌ عَظِيمٌ ﴿١٧٩﴾

180. जिन लोगों को अल्लाह ने अपने फ़ज़्ल (अनुकंपा) से नवाज़ा है और फिर वे उस में कन्जूसी करते हैं वे यह न समझें कि ऐसा करना उन के लिए अच्छा है। नहीं यह उन के लिए बहुत बुरा है। यह माल जिस में यह कन्जूसी करते हैं क़ियामत के दिन उन की गदर्नों में तौक़ (पट्टा) बना कर पहनाया जाएगा।[210] और अल्लाह ही के लिए है आसमानों और ज़मीन की संपत्ति। [211] और तुम जो कुछ करते हो उस की अल्लाह को ख़बर है।

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِينَ يَبْخَلُونَ بِمَا آتَاهُمُ اللَّهُ
مِن فَضْلِهِ هُوَ خَيْرًا لَّهُم ۖ بَلْ هُوَ شَرٌّ لَّهُمْ ۖ سَيُطَوَّقُونَ
مَا بَخِلُوا بِهِ يَوْمَ الْقِيَامَةِ ۗ وَلِلَّهِ مِيرَاثُ السَّمَاوَاتِ
وَالْأَرْضِ ۗ وَاللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ ﴿١٨٠﴾

207. यहाँ शैतान के साथियों से अभिप्राय काफ़िरों का लश्कर है। अल्लाह तआला वास्तव में काफ़िरों को इस लिए ढील देता है ताकि उन्हें सोच विचार करने और अपना सुधार करने का पूरा मौक़ा मिले और वे किसी न किसी क्षण अपनी ग़लती का आभास कर के ईमान की तरफ़ पलट सकें। लेकिन जब वह इस ढील से ग़लत फ़ायदा उठा कर अपने कुफ्र में और पक्के हो जाते हैं तो वे गुनाह पर गुनाह ही किए जाते हैं और अपने बुरे अन्जाम को पहुँच जाते हैं। इस प्रकार नतीजे के लिहाज़ से यह ढील उन के लिए विनाश का कारण बन जाती है। गोया अल्लाह तआला ने इन्हें जो ढील दी थी वह इसी लिए थी कि वे अपनी तबाही का सामान करें।

208. मतलब यह कि अल्लाह तआला मुसलमानों की जमाअत को आज़माइशों से गुज़ारेगा ताकि सच्चे ईमान वालो का चरित्र भी स्पष्ट हो जाए और मुनाफ़िकों (पाखण्डियों) का भी।

209. अर्थात् लोगों के दिलों का हाल अल्लाह तआला ग़ैब (परोक्ष) के द्वारा तुम्हें नहीं बताएगा कि फ़लाँ व्यक्ति मोमिन है और फलाँ मुनाफ़िक़ बल्कि ऐसे हालात पैदा करेगा कि हर एक का हाल खुल जाए।

210. मतलब जो लोग अल्लाह के प्रदान किए हुए धन को अल्लाह की राह में ख़र्च करने और उस के बताए हुए अधिकारों को अदा करने से मुँह चुराते हैं, क़ियामत के दिन उन का यह माल उन की गर्दनों का भारी पट्टा (तौक़) बनेगा। पट्टे से इस बात की तरफ़ इशारा भी है कि अल्लाह के हक़ से बेपरवाह हो कर सोने के जो हार सौंदर्य एवं श्रंगार के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं वह उस रोज़ गले का पट्टा बन जाएंगे।

211. अर्थात् जो माल इन्सान को मिला है वह अमानत के रुप में है। आख़िर कार सारी चीज़ें अल्लाह ही की तरफ़ पलट जाने वाली हैं इस लिए जिस व्यक्ति को माल मिला है वह यह न समझे कि वह वास्तव में धन का मालिक बन बैठा है। बल्कि उस पर उस का क़ब्ज़ा और लाभ उठाने का इख़्तियार क्षणिक है अत: उसे अल्लाह की राह में ख़र्च करने में संकोच नहीं करना चाहिए। अल्लाह तआला के वारिस होने अर्थात् कुल संपत्ति पर उस के एकाधिकार की सत्यता तो लक्ष्मी पूजा, भौतिक वादिता एवं माया के मोह की जड़ काट देता है।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍ ❍

181. अल्लाह ने उन लोगों की बात सुन ली जिन्हों ने कहा अल्लाह फ़क़ीर है और हम ग़नी (धनी) हैं ।[212] हम उन के इस कथन को लिख रखेंगे और उन का नबियों को नाहक क़त्ल करना भी। और हम कहेंगे कि चखो अब आग की यातना का मज़ा।

لَقَدْ سَمِعَ اللَّهُ قَوْلَ الَّذِينَ قَالُوا إِنَّ اللَّهَ فَقِيرٌ وَنَحْنُ
أَغْنِيَاءُ سَنَكْتُبُ مَا قَالُوا وَقَتْلَهُمُ الْأَنْبِيَاءَ بِغَيْرِ حَقٍّ
وَنَقُولُ ذُوقُوا عَذَابَ الْحَرِيقِ ﴿١٨١﴾

182. यह वही है जो तुम ने अपने हाथों अपने लिए एकत्र किया है वरना अल्लाह अपने बन्दों पर हरगिज़ ज़ुल्म करने वाला नहीं है।

ذَٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ أَيْدِيكُمْ وَأَنَّ اللَّهَ لَيْسَ
بِظَلَّامٍ لِلْعَبِيدِ ﴿١٨٢﴾

183. जो लोग कहते हैं कि अल्लाह ने हमें हिदायत की है कि हम किसी रसूल को न मानें जब तक वह हमारे सामने ऐसी क़ुरबानी पेश न करे जिसे आग खा ले। इन से कहो, मुझ से पहले तुम्हारे पास कितने ही रसूल खुली निशानियाँ ले कर आए थे और वह चीज़ भी ले कर आए जो तुम कहते हो फिर तुम ने उन्हें क़त्ल क्यों किया अगर तुम सच्चे हो।[213]

الَّذِينَ قَالُوا إِنَّ اللَّهَ عَهِدَ إِلَيْنَا أَلَّا نُؤْمِنَ لِرَسُولٍ
حَتَّىٰ يَأْتِيَنَا بِقُرْبَانٍ تَأْكُلُهُ النَّارُ قُلْ قَدْ جَاءَكُمْ رُسُلٌ
مِنْ قَبْلِي بِالْبَيِّنَاتِ وَبِالَّذِي قُلْتُمْ فَلِمَ قَتَلْتُمُوهُمْ
إِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿١٨٣﴾

184. फिर (ऐ पैग़म्बर !) अगर ये तुम्हें झुठलाते हैं तो तुम से पहले भी कितने ही रसूलों को झुठलाया जा चुका है। वे खुली निशानियाँ,[214] सहीफ़े और रौशन किताब ले कर आए थे।

فَإِنْ كَذَّبُوكَ فَقَدْ كُذِّبَ رُسُلٌ مِنْ قَبْلِكَ جَاءُوا
بِالْبَيِّنَاتِ وَالزُّبُرِ وَالْكِتَابِ الْمُنِيرِ ﴿١٨٤﴾

185. हर प्राणी को मौत का मज़ा चखना है।[215] और तुम्हें पूरा पूरा अज्र (मज़दूरी) क़ियामत ही के दिन दी जाएगी। तो जो व्यक्ति (दोज़ख़ से) बचा लिया गया और जन्नत में दाखिल कर दिया गया वह निश्चय ही सफ़ल हुआ और यह दुनिया की ज़िन्दगी इस के सिवा कुछ नहीं कि फ़रेब का सामान है।

كُلُّ نَفْسٍ ذَائِقَةُ الْمَوْتِ وَإِنَّمَا تُوَفَّوْنَ أُجُورَكُمْ
يَوْمَ الْقِيَامَةِ فَمَنْ زُحْزِحَ عَنِ النَّارِ وَأُدْخِلَ
الْجَنَّةَ فَقَدْ فَازَ وَمَا الْحَيَاةُ الدُّنْيَا
إِلَّا مَتَاعُ الْغُرُورِ ﴿١٨٥﴾

186. तुम जान और माल की आज़माइश में ज़रुर डाले जाओगे। और तुम्हें उन लोगों से जिन्हें तुम से पहले किताब दी गई एवं मुश्रिकों से बहुत कुछ कष्टदायक बातें सुननी पड़ेंगी। लेकिन तुम ने सब्र (धैर्य) से काम लिया और तक़वा (परहेज़गारी) पर क़ायम रहे तो यह बड़ी दृढ़ता और साहस की बात होगी।

لَتُبْلَوُنَّ فِي أَمْوَالِكُمْ وَأَنْفُسِكُمْ وَلَتَسْمَعُنَّ
مِنَ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَمِنَ الَّذِينَ
أَشْرَكُوا أَذًى كَثِيرًا وَإِنْ تَصْبِرُوا وَتَتَّقُوا فَإِنَّ
ذَٰلِكَ مِنْ عَزْمِ الْأُمُورِ ﴿١٨٦﴾

212. संकेत है उस बात की तरफ़ कि जब क़ुर्आन में अल्लाह की राह में ख़र्च करने अर्थात् इन्फ़ाक़ की ओर प्रोत्साहित करते हुए फ़रमाया गया कि कौन है जो अल्लाह को क़र्ज़ दे,तो यहूदी और कुछ मुनाफ़िक़ जो यहूदियों में से थे यह कह कर मज़ाक़ उड़ाने लगे कि अल्लाह मियाँ भी फ़क़ीर हो गए हैं जो हम से क़र्ज़ माँग रहें हैं।

213. बनी इस्राईल के नबीयों में से कुछ रसूलों द्वारा यह मोजज़ा (चमत्कार) प्रकट हुआ कि बलिदान (क़ुर्बानी) की स्वीकृति के चिन्ह के तौर पर आसमान से आग उतरी और उस ने पेश की गई क़ुर्बानी को खा लिए। जैसे एलिय्याह नबी के सम्बन्ध में है।

''तब यहोवा की आग आकाश से प्रकट हुई और होम बलि को लकड़ी और पत्थरों और धूलि समेत भस्म कर दिया।''

(राजाओं का वृत्तांत प्रथम १८: ३८)

'' और जब सुलैमान यह प्रार्थना कर चुका तब स्वर्ग से आग ने गिर कर होम बलियों तथा और बलियों को भस्म किया।''(२ इतिहास ७:१)

इस के अलावा देखिए '' न्यायियों का वृत्तांत ६:१९,२०,२१ तथा लैव्यव्यवस्था ९:२४। लेकिन कहीं भी इस को रिसालत अर्थात् नबी होने की शर्त नहीं ठहराया गया कि जब तक कोई पैग़म्बर यह मोजज़ा न दिखाए उस को पैग़म्बर न मानना अथवा उस की नुबुव्वत को क़ुबूल न करना। यह शर्त यहूदियों ने अपनी तरफ़ से शरारतन पेश की थी इस लिए उन की इस मानसिकता को ध्यान में रखते हुए यह जवाब दिया गया कि हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से पहले कुछ ऐसे पैग़म्बर भी आ चुके हैं जिन्होंने होमबलि का मोजज़ा (चमत्कार) पेश किया फिर भी तुमने उन्हें क़त्ल किया। उदाहरण के तौर पर देखिए, बाइबिल में है।

''उस ने (एलिय्याह ने) कहा मुझे सेनाओं के परमेश्वर यहोवा के निमित्त बड़ी जलन हुई क्यों कि इस्राएलियों ने तेरी वाचा टाल दी और तेरी वेदियों को गिरा दिया है और तेरे नबियों को तलवार से घात किया है और मैं ही अकेला रह गया हूँ और वे मेरे प्राणों के भी खोजी हैं। (१ राजा १९: १४)

अत: जैसा मोजज़ा तुम चाहते हो अगर नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के हाथों वैसा मोजज़ा दिखा भी दिया जाए तो ये लोग जो शरारत पर उतर आए हैं ईमान न लाने के लिए कोई और बहाना तलाश करेंगें।

214. खुली निशानियों (बैय्यिनात) में मोजज़े भी शामिल हैं।

215. मौत एक ऐसी वास्तविकता है जिसे हर व्यक्ति देखता और समझता है। मनुष्य अपनी सारी वैज्ञानिक उन्नतियों के बावजूद मौत पर क़ाबू न पा सका और मानव शरीर की रचना को देखते हुए इस बात की कोई संभावना नहीं कि आगे चल कर मनुष्य मौत पर क़ाबू पा लेगा। अत:जब मौत अटल सच्चाई है तो यह सवाल कि मौत के उस पार क्या है हमारी पहली तवज्जोह का हक़दार हो जाता है। इतने महत्वपूर्ण प्रश्न पर गंभीरता से विचार न करना या कोई अंधी एवं असत्य धारणा अपने मस्तिष्क में बिठा लेना वह बुनियादी ग़लती है जिस के नतीजे में इन्सान का पूरा जीवन ग़लत हो कर रह जाता है। दूसरी बड़ी सच्चाई जिस पर से क़ुर्आन परदा उठाता है वह यह है कि मौत मानव जीवन की समाप्ति का नाम नहीं हैं बल्कि मौत वह क्षण है जिस को पार कर के आदमी कर्म की दुनिया से फल की दुनिया में पहुँच जाता है।

187. और याद करो जब अल्लाह ने उन लोगों से जिन्हें किताब दि गई है अहद (वचन) लिया था। कि तुम इसे लोगों के सामने बयान करोगे और छिपाओगे नहीं मगर उन्होंने इसे पीठ पीछे डाल दिया और इस को थोड़ी क़ीमत पर बेच दिया,[216] तो क्या ही बुरी क़ीमत है जिसे वे हासिल कर रहें हैं।

وَإِذْ أَخَذَ اللَّهُ مِيثَاقَ الَّذِينَ أُوتُوا الْكِتَابَ لَتُبَيِّنُنَّهُ
لِلنَّاسِ وَلَا تَكْتُمُونَهُ فَنَبَذُوهُ وَرَاءَ ظُهُورِهِمْ
وَاشْتَرَوْا بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا فَبِئْسَ مَا يَشْتَرُونَ ١٨٧

188. जो लोग अपनी इन करतूतों पर फूले नहीं समा रहे हैं और चाहते हैं कि जो काम उन्होंने नहीं किए उन पर उन की तारीफ़ की जाए,[217] उन्हें तुम अज़ाब (यातना) से सुरक्षित न समझो उन के लिए तो दुखदायी यातना है।

لَا تَحْسَبَنَّ الَّذِينَ يَفْرَحُونَ بِمَا أَتَوْا وَيُحِبُّونَ أَنْ يُحْمَدُوا
بِمَا لَمْ يَفْعَلُوا فَلَا تَحْسَبَنَّهُمْ بِمَفَازَةٍ مِنَ الْعَذَابِ
وَلَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ١٨٨

189. आसमानों और ज़मीन की बादशाही अल्लाह ही के लिए है और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।

وَلِلَّهِ مُلْكُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ وَاللَّهُ
عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ١٨٩

190. निःसंदेह [218]आसमानों और ज़मीन की पैदाइश और रात दिन के आगे पीछे आने में बुद्धिजीवियों के लिए [219] बड़ी ही निशानियाँ है।[220]

إِنَّ فِي خَلْقِ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ وَاخْتِلَافِ اللَّيْلِ
وَالنَّهَارِ لَآيَاتٍ لِأُولِي الْأَلْبَابِ ١٩٠

191. जिन का हाल यह है कि खड़े बैठे और लेटे अल्लाह को याद करते हैं।[221]और आसमानों और ज़मीन की रचना में चिन्तन मनन करते हैं।[222] (वे पुकार उठते हैं) ऐ हमारे रब ! यह सब कुछ तूने बेमक़सद पैदा नहीं किया है। तू पाक है (इस से कि व्यर्थ काम करे) अतः तू हमें दोज़ख़ (नरक) के अज़ाब से बचा ले।

الَّذِينَ يَذْكُرُونَ اللَّهَ قِيَامًا وَقُعُودًا وَعَلَىٰ جُنُوبِهِمْ
وَيَتَفَكَّرُونَ فِي خَلْقِ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ رَبَّنَا مَا
خَلَقْتَ هَٰذَا بَاطِلًا سُبْحَانَكَ فَقِنَا عَذَابَ النَّارِ ١٩١

192. ऐ हमारे रब ! जिस को तूने दोज़ख़ में डाला उसे वास्तव में तूने रुस्वा कर दिया और ज़ालिमों का कोई भी मददगार न होगा ।

رَبَّنَا إِنَّكَ مَنْ تُدْخِلِ النَّارَ فَقَدْ أَخْزَيْتَهُ وَمَا لِلظَّالِمِينَ
مِنْ أَنْصَارٍ ١٩٢

193. ऐ हमारे रब ! हम ने एक पुकारने वाले को सुना जो ईमान की तरफ़ बुला रहा था। उस की दअवत यह थी कि अपने रब पर ईमान लाओ, तो हम ईमान लाए अतः ऐ हमारे रब ! हमारे गुनाह क्षमा कर, हमारी बुराईयों को दूर फरमा, और हमें नेक लोगों के साथ (दुनिया से) उठा।

رَبَّنَا إِنَّنَا سَمِعْنَا مُنَادِيًا يُنَادِي لِلْإِيمَانِ
أَنْ آمِنُوا بِرَبِّكُمْ فَآمَنَّا رَبَّنَا فَاغْفِرْ لَنَا ذُنُوبَنَا
وَكَفِّرْ عَنَّا سَيِّئَاتِنَا وَتَوَفَّنَا مَعَ الْأَبْرَارِ ١٩٣

194. ऐ हमारे रब ! जिन चीज़ों का तूने अपने रसूलों द्वारा वादा फ़रमाया है वह हमें प्रदान कर और क़ियामत के दिन हमें रुस्वा न कर, बेशक तू अपने वादे के ख़िलाफ़ नहीं करता।

رَبَّنَا وَآتِنَا مَا وَعَدْتَنَا عَلَىٰ رُسُلِكَ وَلَا تُخْزِنَا يَوْمَ الْقِيَامَةِ
إِنَّكَ لَا تُخْلِفُ الْمِيعَادَ ١٩٤

216. देखिए सूरह बक़र: नोट नं. ६४ ।

217. जो लोग वास्तव में दीनदार नहीं होते वे जब दीनदारी की चादर अपने ऊपर डाल लेते हैं तो लोगों से अपनी दीनदारी और नेकी की तारीफ़ सुनना चाहते हैं और इस बात की इच्छा रखते हैं की लोग उन की प्रशंसा के गीत गाते रहें।

218. यहाँ से सूरह की समाप्ति तक की आयतें उपसंहार के तौर पर हैं। हदीस में आता है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम आधी रात गुज़र जाने पर उठ जाते और आसमान की तरफ़ देख कर यह आयतें पढ़ा करते । गोया अल्लाह की चर्चा (ज़िक्र) करने और उस की याद में लीन होने के लिए रात का आख़िरी भाग अति उत्तम है क्यों कि उस समय इन्सान को यकसूई (चित्तएकाग्रता) हासिल होती है।

219. क़ुर्आन की दृष्टि में बुद्धिमान वे हैं जो कायनात में चिन्तन मनन इस तरह से करते हैं कि उस के रचयिता से परिचय प्राप्त हो तथा उस तक पहुँचने के मार्ग को वे पा लें। कायनात के बनाये जाने का लक्ष्य उन पर स्पष्ट हो। न कि वे लोग जो इस बुनियादी सवाल के सिलसिले में एक द्वेषपूर्ण एवं पक्षपातपूर्ण जवाब अपने मस्तिष्क में रख कर अन्तरिक्ष, खगोल एवं प्रकृति आदि विषयों का अध्ययन मात्र अपनी जानकारी में वृद्धि करने के उद्देश्य से करते हैं। ऐसे लोग आसमान की सैर कर के भी ख़ाली हाथ वापस आते हैं। उन्हें न कहीं ख़ुदा मिलता है और न उन पर आख़िरत के भेद खुलते हैं।

ढूँढने वाला सितारों की गुज़र गाहों का ।
अपने अफ़्कार की दुनिया में सफ़र कर न सका ।।

खुली हुई बात है कि जिस का अभीष्ट लक्ष्य ''जानकारी'' मात्र हो उस की पहुँच ''सत्य एवं वास्तविकता''तक क्यों होने लगी । वहाँ तक तो उसी की पहुँच संभव है जिस का सफ़र ''सत्य की खोज'' के लिए हो।

220. अर्थात् आसमान और ज़मीन की पैदाइश और रात एवं दिन के आने जाने की यह व्यवस्था इस बात की गवाही देता है कि यह कायनात ख़ुदा के बग़ैर (ईश्वर रहित) नहीं है और न इस के बनाने और चलाने वाले कई ख़ुदा हैं। बल्कि यह मात्र एक अल्लाह सर्वशक्तिमान की रचना, एक तत्वदर्शी की तैयार की हुई नीतिपूर्ण योजना, एक न्यायकर्ता की न्याय और समानता पर आधारित व्यवस्था और अत्यंत कृपालु एवं दयावान की उदार कृपा एवं उदार दान का द्योतक है। अत: इन्सान और इस कायनात का अस्तित्व हरगिज़ बेमक़सद एवं निरुद्देश्य नहीं हो सकता। अल्लाह पाक है इस से कि कोई उद्देश्य रहित तथा व्यर्थ काम करे।

221. अल्लाह को याद करने के लिए किसी विशेष समय की क़ैद नहीं है बल्कि वह हर समय और हर हाल में याद करने योग्य है। चाहे आदमी खड़ा हो या बैठा. व्यस्त हो या फ़ुर्सत में हो। जिस तरह साँस मानव जीवन के लिए अनिवार्य है उसी तरह अल्लाह की याद रुहानी ज़िन्दगी के लिए ज़रुरी है और बुद्धिजीवियों की विशेषता यह है कि वे अल्लाह की याद से किसी क्षण भी ग़ाफ़िल नहीं होते ।

222. यह बुद्धिमानों की दूसरी विशेषता है उन का अल्लाह को याद करना चिन्तन से ख़ाली नहीं होता और इस्लाम में यह दोनों बातें वांछित हैं अर्थात् अल्लाह की याद और उस की चर्चा के साथ आख़िरत का ख़्याल भी होना चाहिए।

195. तो उन के रब ने उन की दुआ क़ुबूल फ़रमाई [223] कि मैं तुम में से किसी कर्म करने वाले के कर्म को, चाहे वह मर्द हो या औरत,[224] अकारथ नहीं करुँगा। तुम सब एक दूसरे से हो,[225] तो जिन लोगों ने हिजरत की और जो अपने घरों से निकाले गए और मेरी राह में सताए गए और लड़े और मारे गए उन से उन की बुराइयों को दूर करुँगा और उन्हें ऐसे बाग़ों में दाख़िल करुँगा जिन के नीचे नहरें बह रही होंगी। यह अल्लाह की तरफ़ से बदला (ईनाम) होगा और बेहतरीन बदला अल्लाह ही के पास है।

فَاسْتَجَابَ لَهُمْ رَبُّهُمْ أَنِّي لَا أُضِيعُ عَمَلَ عَامِلٍ مِّنكُم مِّن
ذَكَرٍ أَوْ أُنثَىٰ بَعْضُكُم مِّن بَعْضٍ فَالَّذِينَ هَاجَرُوا
وَأُخْرِجُوا مِن دِيَارِهِمْ وَأُوذُوا فِي سَبِيلِي وَقَاتَلُوا وَقُتِلُوا
لَأُكَفِّرَنَّ عَنْهُمْ سَيِّئَاتِهِمْ وَلَأُدْخِلَنَّهُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي
مِن تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ ثَوَابًا مِّنْ عِندِ اللَّهِ وَاللَّهُ
عِندَهُ حُسْنُ الثَّوَابِ ﴿١٩٥﴾

196. मुल्कों में काफिरों की दौड़ धूप तुम्हें धोखे में न डाल दे।[226]

لَا يَغُرَّنَّكَ تَقَلُّبُ الَّذِينَ كَفَرُوا فِي الْبِلَادِ ﴿١٩٦﴾

197. यह थोड़े से फ़ायदे का सामान है, इस के बाद उन का ठिकाना जहन्नम है, और क्या ही बुरी आरामगाह है वह।

مَتَاعٌ قَلِيلٌ ثُمَّ مَأْوَاهُمْ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمِهَادُ ﴿١٩٧﴾

198. अलबत्ता जो लोग अपने रब से डरते रहे उन के लिए ऐसे बाग़ हैं जिन के तले नहरें बह रही होंगी, वे उस में हमेशा रहेंगें। यह अल्लाह की तरफ़ से उन के लिए मेज़बानी का सामान है और जो कुछ अल्लाह के पास है वह नेक लोगों के लिए कहीं बेहतर है।[227]

لَٰكِنِ الَّذِينَ اتَّقَوْا رَبَّهُمْ لَهُمْ جَنَّاتٌ تَجْرِي
مِن تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا نُزُلًا مِّنْ عِندِ اللَّهِ
وَمَا عِندَ اللَّهِ خَيْرٌ لِّلْأَبْرَارِ ﴿١٩٨﴾

199. अहले-किताब में कुछ ऐसे लोग भी हैं जो अल्लाह पर ईमान रखते हैं और उस चीज़ पर भी ईमान लाते हैं जो तुम्हारी तरफ़ नाज़िल की गई है और उस चीज़ पर भी ईमान रखते हैं जो उन की तरफ़ नाज़िल की गई थी [228] और उन का हाल यह है कि वे अल्लाह के संमुख झुके हुए हैं। अल्लाह की आयतों को वे तुच्छ मूल्य पर बेच नहीं देते ऐसे ही लोगों के लिए उन के रब के पास उन का अज्र (मज़दूरी) है। यक़ीन जानों अल्लाह जल्द हिसाब चुकाने वाला है।

وَإِنَّ مِنْ أَهْلِ الْكِتَابِ لَمَن يُؤْمِنُ بِاللَّهِ
وَمَا أُنزِلَ إِلَيْكُمْ وَمَا أُنزِلَ إِلَيْهِمْ خَاشِعِينَ لِلَّهِ
لَا يَشْتَرُونَ بِآيَاتِ اللَّهِ ثَمَنًا قَلِيلًا أُولَٰئِكَ لَهُمْ أَجْرُهُمْ
عِندَ رَبِّهِمْ إِنَّ اللَّهَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ﴿١٩٩﴾

200. ऐ ईमान वालो ! [229] सब्र करो, मुक़ाबले में साबित क़दम (जमे) रहो, (जिहाद के लिए) तैयार रहो।[230] और अल्लाह से डरते रहो,[231] ताकि तुम कामयाब हो।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اصْبِرُوا وَصَابِرُوا
وَرَابِطُوا وَاتَّقُوا اللَّهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿٢٠٠﴾

223. यह दुआ ईमानी भावना के साथ थी इस लिए स्वीकृति का दर्जा पा गई ।

224. जिस समय यह सूरह नाज़िल हुई है मुसलमानों को अल्लाह की राह में घोर कठिनाइयाँ सहन करनी पड़ रही थीं। इस में मर्दों के साथ औरतें भी शामिल थीं इस लिए उन का ख़ास तौर से ज़िक्र कर के उन की ढारस बंधाई गई।

225. मतलब यह कि मर्द और औरत दोनों एक ही ज़ात से हैं और अल्लाह तआला के नज़दीक औरत और मर्द के लिए फ़ैसले के मापदंड अलग अलग नहीं हैं अत: किसी का औरत होना उस के अज्र (मज़दूरी) में हरग़िज़ कमी का कारण न होगा।

226. अर्थात् काफ़िरों की भौतिक उन्नति, संसारिक संपन्नता और उन की अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों को देख कर तुम इस धोखे में न पड़ो कि ये सही और सफल जीवन व्यतीत कर रहे हैं नहीं बल्कि यह जीवन के थोड़े ही दिनों की बहारें हैं, इस के बाद ये सीधे जहन्नम में पहुँचने वाले हैं।

227. मौक़े की मुनासिबत से इस आयत में कमज़ोर और मज़लूम मुसलमानों का साहस बढ़ाया गया है कि अगर वे तक़वा (ईश-भय) के रास्ते पर क़ायम रहे तो आख़िरत में बहुत ही शानदार तरीक़े पर उन की मेज़बानी का सामान किया जाएगा, अल्लाह तआला ने अपने वफ़ादार बन्दों के लिए बेहतरीन चीज़ें तैयार कर रखी हैं।

228. ये वे अहले-किताब (यहूदी एवं ईसाई) हैं जो वास्तव में अल्लाह तआला पर ईमान रखते थे, अत: वे पिछली किताबों पर ईमान रखने के साथ क़ुर्आन पर भी ईमान ले आए। दूसरे शब्दों में ये अहले-किताब वास्तव में मुसलमान थे इस लिए उन को क़ुरआन के अवतरण के बाद क़ुर्आन और उस के लाने वाले पैग़म्बर पर ईमान लाने में संकोच नहीं हुआ।

229. यह कलाम का परिशिष्ट है और इस में हालात का लिहाज़ करते हुए वे हिदायतें दी गई हैं जो इस्लाम विरोधी शक्तियों से मुक़ाबला करने के लिए ज़रुरी थीं।

230. अर्थात् इस्लाम दुश्मन शक्तियों का मुक़ाबला करने के लिए हर तरह तैयार रहो। शब्द ''राबितू'' में जिहाद के लिए भौतिक (हथयारों की) तैयारी करना, सुरक्षा का सामान करना, देखरेख करना कमर बस्ता रहना और शक्ति की प्राप्ति सब शामिल है। हदीस में '' रबात'' (जिहाद के लिए तैयार रहने और पासबानी करने) को उत्तम सेवा बताया गया है। {}¬ĕĀ {ĘĤ{¬ĜÀĔz ĞĘ Ä¬ Ī ĢĕĔz Ė¬¤Ç -Ĉ ĕĥ« û{ĘĂ

(ابن کثیر بحوالہ بخاری ج ۱ ص ۴۴۵)

''अल्लाह की राह में एक दिन की पासबानी (रबात) दुनिया और जो कुछ उस में है उस से बेहतर है।''(इब्ने कसीर Vol. 1 Page 445 बुख़ारी के हवाले से)।

231. सूरह बक़र: की शुरुआत में फ़रमाया था ''यह हिदायत है मुत्तक़ियों (परहेज़गारों) के लिए और यहाँ आले इमरान की समाप्ति पर फ़रमाया '' अल्लाह का तक़वा (डर) अपनाओ ताकि तुम कामयाब हो'' इस से स्पष्ट हुआ कि इन दो सूरतों के अन्दर जो आदेश और क़ानून बयान किए गये हैं और जो हिदायतें दी गई हैं उन की निगरानी और उन का पालन तक़वा है और मुत्तक़ी (तक़वा वाले) वे हैं जिन्होंने ये गुण एवं ये विशेषताऐं अपने अन्दर पैदा कर ली हों।

(४) सूरह अन् निसा

४. सूरह अन् निसा

नाम : इस सूरह का नाम अन्-निसा है । यह नाम उन विषयों की ओर इशारा करता है जिन में निसा अर्थात् स्त्री अधिकारों आदि का उल्लेख किया गया है।

नाज़िल होने का समय : यह सूरह मदनी अर्थात हिज़रत के बाद नाज़िल हुई है और कलाम से अन्दाज़ा होता है कि सूरह आले-इमरान के बाद नाज़िल होने वाली सूरह है और सन ३ हिज़री से ५ हिजरी तक अलग अलग समय में इस के थोड़े थोड़े अंश नाज़िल हुए होंगे जिन्हें बाद में एकत्र कर दिया गया।

केन्द्री विषय : इस सूरह में सामूहिक और सामाजिक जीवन से सम्बन्धित आदेश एवं क़ानून बयान हुए हैं लेकिन कलाम की शैली न शुष्क है और न पेचीदा बल्कि अत्यंत सरल, सादा, दिल और दिमाग़ को अपील करने वाली तथा आँख खोल देने वाली है। इन आदेशों और क़ानूनों के साथ ही साथ क़ुर्आन की दअवत को भी पेश किया गया है ताकि जीवन के वास्तविक उद्देश्य पर निगाहें जमी रहें और आदेश एवं क़ानून का पालन उन की स्पिरिट (Spirit) के साथ किया जाए न कि मात्र क़ानूनी अन्दाज़ में ।

सूरह के एक हिस्से में मुनाफ़िक़ो (पाखंडियों) की हरकतों तथा उपद्रवी मनोवृत्ति पर पकड़ की गई है जिस का एक कारण तो यह है कि इस सूरह के नाज़िल होने के समय हालात इस बात का तक़ाज़ा करते थे कि इन पाखंडियों (मुनाफ़िक़ों) की बढ़ती हुई उपद्रवी सरगर्मियों का नोटिस लिया जाए दूसरे यह कि दीनी एहकाम (आदेश) और शरीअत के क़ानून पर सही तौर पर अमल दरामद तभी हो सकता है जब कि आदमी अपने ईमान में सच्चा और पक्का हो। वरना इस से बच निकलने के लिए वह हज़ार बहाने पैदा करेगा और बस चले तो शरीअत के क़ानून को लागू करने की राह में रुकावटें भी पैदा करेगा। गोया मुसलमानों के समाज को असली खतरा मुनाफ़िक़ों ही से है और शरीअत के क़ानून पर अमल दरामद के सिलसिले में यह लोग बहुत बड़ी रुकावटें ख़ड़ी कर सकते हैं।

कलाम की तरतीब : यह सूरह अपनी पिछली सूरह आले इमरान से भी सम्बन्ध है और सूरह बक़र: से भी ! सूरह आले-इमरान की आख़िरी आयत में ईमान वालों को अल्लाह से डरने की ताकिद की गई थी (واتقوالله) और इस सूरह की शुरुआत ही तक़वा (ईश भय) की हिदायत से हुई है और आम लोगों को सम्बोधित कर के अल्लाह का डर (तक़वा) इख्तियार करने की दअवत दी गई है (يا ايهاالناس اتقواربكم) गोया यह एक ही लय के दो सुर हैं, रही बात सूरह बक़र: से संबद्धता की तो सूरह बक़र: में सामूहिक तथा सामाजिक जीवन के सिलसिले में हिदायत दी गई थीं । इस सिलसिले में कुछ और भी मार्ग निर्देश की सामाग्री इस सूरह में उपलब्ध की गई है, इस तरह सूरह का रुख़ शरीअत को पूरा करने की तरफ़ है।

आयत 1 की हैसियत तम्हीद (भूमिका) की है इस में जो बात इर्शाद फ़रमाई गई है वह इस्लाम की सामाजिक तथा संगठनात्मक जीवन के लिए बुनियाद की हैसियत रखती है ।

आयत 2 से 43 में सामाजिक आदेश तथा क़ानून बयान किए गए हैं जैसे यतीमों के अधिकार, निकाह के क़ानून, जान और माल की सुरक्षा के क़ानून इत्यादि। इन आदेशों की समाप्ति नमाज़ से सम्बन्धित एहकाम पर हुई है।

आयत 44 से 57 में अहले-किताब (यहूदियों और ईसाईयों) को उन की गुमराहियों पर सावधान करते हुए क़ुर्आन पर ईमान लाने का न्योता दिया गया है।

आयत 58 और 59 में ईमान के तक़ाज़े पेश किये गये हैं जो इस्लामी हुकूमत और इस्लाम की सामाजिक व्यवस्था से सम्बन्धित हैं।

आयत 60 से 70 में मुनाफ़िक़ों (पाखंडियों एवं कपटियों) के रवैया पर पकड़ की गई है और उन्हें सचेत करते हुए सोच विचार करने का निमंत्रण दिया गया है कि जो लोग अल्लाह और उस के रसूल के सच्चे वफ़ादार बन कर रहेंगे उन्हें आख़िरत में कितना उच्च स्थान प्राप्त होगा।

आयत 71 से 126 का मज़मून भी इसी संदर्भ में है। मुनाफ़िक (कपटी) क़ुर्बानियों से जी चुराते थे चाहे वह हिज़रत की राह में हो या जिहाद की राह में, इस को ध्यान में रखते हुए हिजरत और जिहाद के लिए प्रोतसाहन दिया गया है और स्पष्ट किया गया है कि ये क़ुर्बानियाँ ईमान वालों के लिए सौभाग्य की बात है। साथ ही जिहाद के सम्बन्ध से पैदा होने वाले मसलों जैसे सलाते-ख़ौफ़ वग़ैरा के सिलसिले में एहकाम दिए गए हैं। साथ ही मुनाफ़िक़ों के उपद्रवी कार्यक्रमों तथा फ़साद फैलाने वाली सरगर्मियों का ज़िक्र किया गया है और यह स्पष्ट किया गया है कि इस्लाम ही सही और सच्चा दीन है।

आयत 127 से 175 का मज़मून सूरह का अन्तिम भाग है इस में उन सवालों के जवाब दिए गए हैं जो सूरह के शरु में बयान किए गए एहकाम के सिलसिले में पैदा हुए थे। इस के बाद आख़िर सूरह तक ईमान वालों को सम्बोधित कर के हिदायतें दी गई हैं और मुनाफ़िक़ो और अहले-किताब को उन की कुछ गुमराहियों पर सावधान करते हुए सुधार की तरफ़ ध्यान दिलाया गया है।

आयत 176 परिशिष्ट के तौर पर है। इस में सम्पत्ति से सम्बन्धित एक सवाल का जवाब दिया गया है।

४-सूरह अन्-निसा

आयतें : १७६

سُورَةُ النِّسَاءِ

अल्लाह रहमान और रहीम के नाम से

بِسْمِ ٱللَّهِ ٱلرَّحْمَٰنِ ٱلرَّحِيمِ

1. ऐ लोगो ! अपने रब से डरो [1] जिस ने तुम को एक जान से पैदा किया [2] और उसी से उस का जोड़ा भी पैदा कर दिया [3] और उन दोनों से बहुत से मर्द और औरतें फैला दीं [4] और अल्लाह से डरो जिस के वास्ते से तुम एक दूसरे से (अधिकारों की) मांग करते हो [5] और नातेदारों से सम्बन्ध तोड़ने से बचो [6]। यक़ीन जानो अल्लाह तुम्हारी निगरानी कर रहा है।

يَٰٓأَيُّهَا ٱلنَّاسُ ٱتَّقُوا۟ رَبَّكُمُ ٱلَّذِى خَلَقَكُم مِّن نَّفْسٍ
وَٰحِدَةٍ وَخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَثِيرًا
وَنِسَآءً ۚ وَٱتَّقُوا۟ ٱللَّهَ ٱلَّذِى تَسَآءَلُونَ بِهِۦ وَٱلْأَرْحَامَ ۚ
إِنَّ ٱللَّهَ كَانَ عَلَيْكُمْ رَقِيبًا ١

2. यतीमों का माल उन के हवाले करो [7] और (उन के) अच्छे माल को (अपने) बुरे माल से बदल न डालो और न उनका माल अपने माल में मिला कर खा जाओ कि यह बहुत बड़े गुनाह की बात है।[8]

وَءَاتُوا۟ ٱلْيَتَٰمَىٰٓ أَمْوَٰلَهُمْ ۖ وَلَا تَتَبَدَّلُوا۟ ٱلْخَبِيثَ
بِٱلطَّيِّبِ ۖ وَلَا تَأْكُلُوٓا۟ أَمْوَٰلَهُمْ إِلَىٰٓ أَمْوَٰلِكُمْ ۚ إِنَّهُۥ
كَانَ حُوبًا كَبِيرًا ٢

3. अगर तुम्हें आशंका हो कि तुम यतीमों के साथ इन्साफ़ न कर सकोगे [9] तो जो औरतें तुम्हारे लिए जाइज़ हैं उन में से दो दो, तीन तीन, चार चार से निकाह कर लो।[10] लेकिन अगर तुम्हें आशंका हो कि न्याय न कर सकोगे [11] तो फिर एक ही पर संतोष करो या फिर उन औरतों पर जो तुम्हारे क़ब्ज़े में आ गई हैं।[12] बे इन्साफ़ी से बचने के लिए यह उचित नीति से अधिक निकट है।

وَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا تُقْسِطُوا۟ فِى ٱلْيَتَٰمَىٰ
فَٱنكِحُوا۟ مَا طَابَ لَكُم مِّنَ ٱلنِّسَآءِ مَثْنَىٰ
وَثُلَٰثَ وَرُبَٰعَ ۖ فَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا تَعْدِلُوا۟ فَوَٰحِدَةً
أَوْ مَا مَلَكَتْ أَيْمَٰنُكُمْ ۚ ذَٰلِكَ أَدْنَىٰٓ أَلَّا تَعُولُوا۟ ٣

4. और उन औरतों को उन के मह्र खुशी ख़ुशी से अतिया (उपहार) के तौर पर दो [13] हाँ अगर वे खुद अपनी ख़ुशी से कुछ छोड़ दें तो उसे मज़े से खा सकते हो।

وَءَاتُوا۟ ٱلنِّسَآءَ صَدُقَٰتِهِنَّ نِحْلَةً ۚ فَإِن طِبْنَ لَكُمْ
عَن شَىْءٍ مِّنْهُ نَفْسًا فَكُلُوهُ هَنِيٓـًٔا مَّرِيٓـًٔا ٤

5. अपना माल जिसे अल्लाह ने तुम्हारे लिए क़ियाम (आर्थिक स्थापन) का साधन बनाया है,[14] नादानों के हवाले न करो [15] अल्बत्ता उस में से उन को ख़िलाते और पहनाते रहो और उन से भली बात कहो ।

وَلَا تُؤْتُوا۟ ٱلسُّفَهَآءَ أَمْوَٰلَكُمُ ٱلَّتِى جَعَلَ ٱللَّهُ لَكُمْ قِيَٰمًا
وَٱرْزُقُوهُمْ فِيهَا وَٱكْسُوهُمْ وَقُولُوا۟ لَهُمْ
قَوْلًا مَّعْرُوفًا ٥

1. इस सूरह में जो मानवधिकार और जो सामाजिक कर्तव्य बयान किए गए हैं उन के लिए ये हिदायतें आधारशिला की हैसियत रखती हैं--- और यह हक़ीक़त है कि वास्तविक ईश-भय इन्सान के अन्दर इन्सानियत पैदा करता हैं और उसे दूसरे इन्सानों के हक़ अदा करने और विशेष रुप से कमज़ोर वर्गों के साथ सहानुभूति का रवैया अपनाने पर आमादा करता है--- जो लोग मज़हब से बेज़ार (क्रुद्ध) होने के कारण अल्लाह का डर (ईश-भय) रखने को बेक़ीमत क़रार देते हैं और फिर मानव समाज के निर्माण की योजना बनाते हैं, वे हवा में महल बनाते हैं । यही कारण है कि वे ऐसे इन्सान पैदा करने में बिलकुल नाकाम हैं जो मानवता के सच्चे शुभचिन्तक,उन के अधिकारों के रक्षक और अपने कर्तव्यों से परिचित हों। इस के विपरीत क़ुर्आन की इस हिदायत को जिस ने भी अपनाया अर्थात अल्लाह का डर अपने अन्दर बसाया वह वास्तव में मानवता का ध्वज उठाने वाला बना। क़ुर्आन ने हर दौर में इस की बेहतरीन मिसालें पेश कीं और यह सिलसिला बराबर जारी है। अत: आज भी मानवता एवं इस को प्रोत्साहन देने का वास्तविक गुण उन ही लोगों के अन्दर मिलेगा जिन्होंने क़ुर्आन की इस शिक्षा---ईश-भय---को अपने अन्दर पैदा किया है।

2. अर्थात् आदम से जो तमाम इन्सानों के बाप हैं।

3. अर्थात् हव्वा की पैदाइश आदम ही से हुई, क़ुर्आन का यह बयान कि तुम सब को एक जान से पैदा किया इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करता हैं कि हव्वा की पैदाइश आदम से हुई थी। अगर हव्वा की पैदाइश अलग से हुई होती तो कहा जाता तुम को दो जान से पैदा किया। रही हव्वा की पैदाइश की विस्तृत मनोदशा तो वह न क़ुर्आन में बयान हुई है और न हदीस में। इस लिए हमें क़ुर्आन के संक्षिप्त बयान को काफ़ी समझ कर संतोष करना चाहिए।

4. यहाँ दो महत्वपूर्ण हक़ीक़तें बयान की गई हैं। एक यह कि इन्सानों को अल्लाह ही ने पैदा फ़रमाया और वही उन का रब (प्रभु) भी है। दूसरे यह कि मानव जाति की नस्ल का आरंभ एक ही व्यक्ति आदम से हुआ है इस लिए तमाम इन्सान चाहे वे मर्द हों या औरतें, काले हों या गोरे और चाहे वे किसी क़ौम और किसी मुल्क में पैदा हुए हों, एक ही बाप आदम और एक ही माँ हव्वा की औलाद हैं इस लिए उन में इन्सान होने के लिहाज़ से कोई फ़र्क़ नहीं है। सब समान रुप से आदर के अधिकारी हैं और सब के अधिकारों का सम्मान किया जाना चाहिए ।

मानव जाति के बारें में क़ुर्आन द्वारा दी गई यह बुनियाद ज़ात पात की विचार धारा को बिलकुल ग़लत ठहराती है एवं उस बहुदेववादी कल्पना की भी जड़ काट देती है कि ऊँची ज़ात देवताओं की नस्ल से है (या शरीर के उच्च भाग से है) और निचली ज़ात (शूद्र) राक्षसों की नस्ल से हैं। (यह शरीर के निचले भाग से हैं)

5. इन्सान जब कि दूसरे से हमदर्दी, इंसाफ़ और अधिकारों को देने के लिए ख़ुदा ही के नाम पर अपील करते हैं।यह गोया इन्सान की अन्तरात्मा की पुकार है कि ख़ुदा ही तमाम इन्सानों का रब है और उस की महानता का ख़याल ही इन्सान को दूसरों के हक़ अदा करने पर आमादा करता है। क़ुर्आन अंतरात्मा की इस पुकार की पुष्टि करता है। और एक दूसरे के अधिकारों को अदा करने के लिए अल्लाह के डर (ईश-भय) को ही बुनियाद ठहराता है।

6. नातेदारों से संबन्धो को न तोड़ने की हिदायत जिस ताकिद के साथ यहाँ की गई है उस से इस का महापाप होना भी स्पष्ट होता है और सम्बन्ध बनाने और संबन्धियों के महत्व पर भी प्रकाश पड़ता है। हदीस में अत्यंत प्रभावपूर्ण तरीक़े से संबन्ध बनाने बढ़ाने का निर्देश दिया गया है और रिश्तेदारी के सम्बन्ध को ख़राब होने से रोका गया है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का इर्शाद है :

الرحم شجنة من الرحمٰن فقال اللّٰہ من وصلک
وصلته ومن قطعک قطعته۔ (مشکوٰۃ بحوالہ بخاری)

“ रह्म (सम्बन्ध) रहमान शब्द से निकला है अत: अल्लाह तआला फ़रमाता है जो तुझे जोड़ेगा मैं उस से जुडूंगा और जो तुझे काटेगा मैं उस से कट जाउँगा” (मिश्कात, बुख़ारी के हवाले से)

لا یدخل الجنة قاطع رحم۔ (مسلم)

“सम्बन्ध काटने वाला जन्नत में दाख़िल न होगा” (मुस्लिम)

7. यतीम बच्चे समाज का सर्वाधिक कमज़ोर वर्ग है। बाप का सहारा उठ जाने की वजह से वे बेसहारा होते हैं। इस लिए उन के हक़ अदा करने और उन के साथ इन्साफ़ करने की हिदायत प्रमुख रुप से और बड़े ताकीदी अन्दाज़ में दी गई हैं।

8. यतीम के माल को अलग रखना ज़रुरी है। उस में निकाल धर करना कबीरा गुनाह (बहुत बड़ा पाप) है और संरक्षक के लिए यह भी जायज़ नहीं कि वह यतीम के माल से फ़ायदा उठाए। अगर यतीम का माल व्यपार में लगाया गया हो तो उस का फ़ायदा उस यतीम ही को पहुँचाना चाहिए। रहा खाना पीने का साझा तो इस की अनुमति सूरह बक़र: आयत नं.२२० में दी गई है। देखिए सूरह बक़र: नोट नं. ३२१

9. यतीम उस नाबालिग़ को कहते हैं जिस के बाप का देहान्त हो चुका हो, लेकिन शरअी तौर पर यह बालिग़ होने के बाद भी लागू होता है, जब तक कि सूझ बूझ की आयु को न

पहुँच जाए। इस आयत में लफ़्ज़ यतामा (يتامىٰ) इस्तेमाल हुआ है जो यतीम का बहुवचन है और पुलिंग एवं स्त्रीलिंग दोनो के लिए बोला जाता है यहाँ इस से मुराद यतीम लड़कियाँ हैं और संबोधन मूलत: उन के सरपरस्तों (संरक्षकों) से है।

10. मतलब यह है कि अगर तुम यतीम लड़कियों के संरक्षक की हैसियत से ऐसी आशंका महसूस करते हो कि इन से निकाह करने की सूरत में इन के हक़ ठीक तरह से अदा न कर सकोगे तो दूसरी औरतों से निकाह कर लो इस बात का लिहाज़ रख कर कि वे महरम न हों ।

जाहिलिय्यत के ज़माने (अज्ञानता काल) में जो यतीम बच्चियाँ लोगों की सरपरस्ती में होती थीं उन के माल और उन के सौन्दर्य से प्रभावित हो कर उन के सरपरस्त उन से ख़ुद निकाह कर लेते और फिर उन के साथ इन्साफ़ न करते। और उन की संपत्ति पर अपना अधिपत्य जताते तथा उन के मेहर वग़ैरा भी न अदा करते इस लिए उन के साथ निकाह करने की अनुमति उन सरपरस्तों को इस शर्त के साथ दी गई कि वे उन के पूरे हक़ अदा करें। और उन के साथ इन्साफ़ करें।

चार पत्नियाँ रखने की जो अनुमति दी गई है वह कई नैतिक एवं सामाजिक मसलहतों पर आधारित है, जैसे विधवाओं की समस्या हल करने के उद्देश्य से या बे औलाद होन की सूरत में या पत्नी के हमेशा बीमार रहने की सूरत में या फिर मर्द का एक पत्नी पर संतोष न होने की सूरत में दुसरा निकाह करना। यह और इस तरह के दूसरे कारण अत्यंत औचित्यपूर्ण हैं और इन औचित्यों का लिहाज़ करते हुए शरीअत ने एक से अधिक औरतों से विवाह की राह खुली रखी है ताकि आदमी ग़लत और अवैध रास्ते अपनाने से बचे और उस की आवश्यकताऐं जायज़ तरीक़े से पूरी हों। जाहिलिय्यत के ज़माने में एक से अधिक पत्नियाँ रखने की कोई क़ैद नहीं थी लोग असंख्य पत्नियाँ रख लेते थे लेकिन क़ुर्आन ने इस आयत के माध्यम से एक से अधिक पत्नी की एक सीमा बाँध दी और अधिक से अधिक चार पत्नी तक विवाह करने की इजाज़त दे दी और वह भी न्याय करने की शर्त के साथ। स्पष्ट रहे कि चार औरतों की हद तक निकाह की वैधता पर सारे उलेमा एकमत हैं ।

11. इस से स्पष्ट है कि एक से अधिक बीवी की इजाज़त न्याय की शर्त के साथ है। जो व्यक्ति इस शर्त का लिहाज़ किए बग़ैर एक से अधिक निकाह करता है वह अल्लाह की प्रदान की हुई इस रिआयत से ग़लत फ़ायदा उठाता है और ऐसे व्यक्ति के लिए हदीस में सख़्त चेतावनी है।

من كانت له امراتان يميل لا حداهما اعلىٰ الاخرىٰ جاء يوم القيامة يجرّ احد شقيّه ، سا قطا او مائلا ۔ (اہل السنن)

''जिस की दो पत्नियाँ हों और वह केवल एक की तरफ आकर्षित हो कर रह जाए वह क़ियामत के दिन इस हाल में आएगा कि उस का एक बाजू गिर रहा होगा और वह उसे घसीट रहा होगा।'' (अहलुस्सुनन)

और न्याय से मुराद खाने पीने रहने सहने और रात बिताने आदि के मामले में सारी पत्नियों के साथ इन्साफ़ का व्यवहार करना और उन सब के सारे हक़ अदा करना है।

12. क़ुर्आन नाज़िल होने के समय में लौंडियों (गुलाम स्त्रियों) का वजूद था। इस्लाम ने एक तरफ़ उन को आज़ाद करने का प्रोत्साहन दिया एवं उन के आज़ाद करने के सिलसिले में कुछ नियम भी बनाए और दूसरी ओर मौजूद लौंडियों को आवारगी एवं व्यभिचार से बचाने का भी साधन किया। अत: जिन लोगों के क़ब्ज़े में लौंडियाँ थीं उन को उन से सम्बन्ध की इजाज़त दे दी। विस्तार के लिए देखें नोट नं. ६४

13. मेह्र वह अतिया (उपहार) है जो पति पत्नी को निकाह के बन्धन में बंध जाने पर देता है। इस की हैसियत उस अतिये की है जो कि अनिवार्य है और जिसे नामन्जूर करने का अधिकार किसी को नहीं क्यों कि यह अल्लाह तआला की तरफ़ से लागू (आयद) किया हुआ कर्तव्य है, अलबत्ता औरत को अधिकार है कि वह निकाह के बाद उस का जो हिस्सा चाहे माफ़ करे। इस्लाम में मेह्र औरत की क़ीमत या निकाह का मुआवज़ा (प्रतिदान) नहीं है बल्कि वह एक शरअी कर्तव्य और स्वेच्छा एवं दिल से दिया जाने वाला उपहार है जिस का उद्देश्य पति पत्नी के बीच चाहत एवं मुहब्बत का सम्बन्ध पैदा करना और विवाह के बन्धन के महत्व का एहसास पैदा करना है। ध्यान रहे कि मेह्र औरत का हक़ है न कि उस के बाप या सरपरस्तों का ।

14. माल को अल्लाह तआला ने आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ (कियामे-मअीशत) का साधन बनाया है अत: ज़रुरी है कि आदमी इस के मूल्य को पहचाने, उसे व्यर्थ होने से बचाए, विशेष रुप से यतीमों का माल जिस की देख रेख में हो वह उस की हिफ़ाज़त इस तरह करे जैसे कि वह उस का माल है।

15. मुराद यतीम बच्चे हैं और बताना यह अभिप्रेत है कि यतिमों को उन का माल हवाले करने की जो ताकिद की गई है उस का यह मतलब नहीं कि माल को नासमझ और बे अक़्ल (बुद्धिहीन) बच्चों के हवाले कर दिया जाए बल्कि यतीम के सरपरस्त की यह ज़िम्मेदारी है कि वह माल (धन) को व्यर्थ नष्ट होने से बचाए और उस की पूरी पूरी हिफ़ाज़त करे। उस में से वह यतीमों के खाने पीने और पहनाने ओढ़ने की ज़रुरतों पर ख़र्च कर सकता है । लेकिन जब वे बालिग़ हो जाऐं और उन में सूझ बूझ भी पैदा हो जाए तो उन का माल उन के हवाले किया जाए ।

और यतीमों को जाँचते रहो यहाँ तक के वे निकाह की आयु को पहुँच जाऐं । फिर अगर तुम उन के अन्दर सूझ बूझ पाओ तो उन का माल उन के हवाले कर दो। और इस ख़याल से कि वे बड़े हो जाऐंगे उन का माल इसराफ़ (अपव्यय) कर के जल्दी जल्दी खा न जाओ । जो ग़नी (धनी, सम्पन्न) हो उस को चाहिए कि परहेज़ करे और जो ज़रुरतमन्द हो वह मारुफ़ तरीक़े (सामान्य रुप) से खाए । फिर जब उन का माल उन के हवाले करो तो उस पर गवाह बना लो और अल्लाह हिसाब लेने के लिए काफ़ी है। (अल-क़ुर्आन)

6. और यतीमों को जाँचते रहो यहाँ तक कि वे निकाह की आयु को पहुँच जाऐं [16]। फिर अगर तुम उन के अन्दर सूझ बूझ [17] पाओ तो उन का माल उन के हवाले कर दो। और इस ख़याल से कि वे बड़े हो जाऐंगे उन का माल इसराफ़ (अपव्यय) कर के जल्दी जल्दी खा न जाओ । जो ग़नी (धनी, सम्पन्न) हो उस को चाहिए कि परहेज़ करे और जो ज़रुरतमन्द हो वह मारुफ़ तरीक़े (सामान्य रुप) से खाए [18]। फिर जब उन का माल उन के हवाले करो तो उस पर गवाह बना लो और अल्लाह हिसाब लेने के लिए काफ़ी है।

وَابْتَلُوا الْيَتٰمٰى حَتّٰىٓ اِذَا بَلَغُوا النِّكَاحَ ۚ فَاِنْ اٰنَسْتُمْ
مِّنْهُمْ رُشْدًا فَادْفَعُوْٓا اِلَيْهِمْ اَمْوَالَهُمْ ۚ وَلَا تَاْكُلُوْهَآ
اِسْرَافًا وَّبِدَارًا اَنْ يَّكْبَرُوْا ۭ وَمَنْ كَانَ غَنِيًّا
فَلْيَسْتَعْفِفْ ۚ وَمَنْ كَانَ فَقِيْرًا فَلْيَاْكُلْ بِالْمَعْرُوْفِ ۭ
فَاِذَا دَفَعْتُمْ اِلَيْهِمْ اَمْوَالَهُمْ فَاَشْهِدُوْا عَلَيْهِمْ ۭ
وَكَفٰى بِاللّٰهِ حَسِيْبًا (٦)

7. मर्दों के लिए उस माल में हिस्सा है जो माता पिता और नातेदारों ने छोड़ा हो और औरतों के लिए भी उस माल में हिस्सा है जो माता पिता और नातेदारों ने छोड़ा हो चाहे संपत्ति कम हो या अधिक । यह हिस्सा मुक़र्रर है ।[19]

لِلرِّجَالِ نَصِيْبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدٰنِ وَالْاَقْرَبُوْنَ ۠
وَلِلنِّسَاۗءِ نَصِيْبٌ مِّمَّا تَرَكَ الْوَالِدٰنِ وَالْاَقْرَبُوْنَ
مِمَّا قَلَّ مِنْهُ اَوْ كَثُرَ ۭ نَصِيْبًا مَّفْرُوْضًا (٧)

8. और अगर बंटवारे के समय, संबन्धी, यतीम और मिस्कीन (मुहताज) आ मौजूद हों तो उन को भी उस में से कुछ दो और उन से भली बात कहो।[20]

وَاِذَا حَضَرَ الْقِسْمَةَ اُولُوا الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنُ
فَارْزُقُوْهُمْ مِّنْهُ وَقُوْلُوْا لَهُمْ قَوْلًا مَّعْرُوْفًا (٨)

9. लोगों को डरना चाहिये कि अगर वे अपने पीछे कमज़ोर बच्चे छोड़ जाते तो उन के मामले में उन्हें कैसी कुछ आशंका होती ।[21] अतः उन्हें चाहिए कि अल्लाह से डरें और उचित बात कहें।

وَلْيَخْشَ الَّذِيْنَ لَوْ تَرَكُوْا مِنْ خَلْفِهِمْ ذُرِّيَّةً ضِعٰفًا
خَافُوْا عَلَيْهِمْ ۠ فَلْيَتَّقُوا اللّٰهَ وَلْيَقُوْلُوْا قَوْلًا سَدِيْدًا (٩)

10. जो लोग यतीमों का माल अन्याय के साथ खाते हैं वे अपने पेट में आग भरते हैं। बहुत जल्द वे भड़कती आग में दाख़िल होंगे।

اِنَّ الَّذِيْنَ يَاْكُلُوْنَ اَمْوَالَ الْيَتٰمٰى ظُلْمًا اِنَّمَا
يَاْكُلُوْنَ فِيْ بُطُوْنِهِمْ نَارًا ۭ وَسَيَصْلَوْنَ سَعِيْرًا (١٠)

11. अल्लाह तुम्हारी औलाद के बारे में तुम्हें वसीयत करता (हुक्म देता) है [22] कि लड़के का हिस्सा दो लड़कियों के बराबर है।[23] अगर सिर्फ लड़कियाँ हों, दो से अधिक तो छोड़ी हुई संपत्ति में उन का हिस्सा दो तिहाई होगा [24] और अगर एक ही लड़की हो तो उसे आधी (संपत्ति) मिलेगी।[25] और मैय्यत के माता पिता में से हर एक के लिए छटा हिस्सा है, बशर्ते कि मैय्यत की औलाद हो।[26] अगर मैय्यत की औलाद न हो और सिर्फ माँ बाप उस के वारिस हों तो उस की माँ का एक तिहाई हिस्सा होगा।[27] और अगर मैय्यत के भाई बहन भी हों तो उस की माँ को छटा हिस्सा मिलेगा।[28] ये हिस्से मैय्यत ने जो वसीयत की हो [29] उस के पालन और जो कर्ज़ छोड़ा हो [30] उस की अदायगी के बाद बाँटे जाऐं। तुम अपने बाप और बेटों के बारे में नहीं जानते कि मफ़ाद के लिहाज़ (लाभ की दृष्टि) से कौन तुम से निकटतम है।[31] ये हिस्से अल्लाह के मुक़र्रर (निश्चित) किए हुए हैं। यक़ीन जानों अल्लाह अलीम (सब कुछ जानने वाला) भी है और हकीम (तत्वदर्शी) भी। [32]

يُوْصِيْكُمُ اللّٰهُ فِيْٓ اَوْلَادِكُمْ ۤ لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ ۚ فَاِنْ كُنَّ
نِسَاۗءً فَوْقَ اثْنَتَيْنِ فَلَهُنَّ ثُلُثَا مَا تَرَكَ ۚ وَاِنْ كَانَتْ وَاحِدَةً فَلَهَا
النِّصْفُ ۭ وَلِاَبَوَيْهِ لِكُلِّ وَاحِدٍ مِّنْهُمَا السُّدُسُ مِمَّا تَرَكَ اِنْ
كَانَ لَهٗ وَلَدٌ ۚ فَاِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهٗ وَلَدٌ وَّوَرِثَهٗٓ اَبَوٰهُ فَلِاُمِّهِ الثُّلُثُ ۚ
فَاِنْ كَانَ لَهٗٓ اِخْوَةٌ فَلِاُمِّهِ السُّدُسُ مِنْۢ بَعْدِ وَصِيَّةٍ
يُّوْصِيْ بِهَآ اَوْ دَيْنٍ ۭ اٰبَاۗؤُكُمْ وَاَبْنَاۗؤُكُمْ لَا تَدْرُوْنَ اَيُّهُمْ اَقْرَبُ
لَكُمْ نَفْعًا ۭ فَرِيْضَةً مِّنَ اللّٰهِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيْمًا حَكِيْمًا (١١)

16. निकाह की आयु से मुराद बालिग़ होने की अवस्था को पहुँचना है। शरअी तौर पर (संवैधानिक रुप से) इसे प्रकृतिक रुप से विकसित हो जाने पर स्वीकार किया जाता है। इस से पता चला कि क़ुर्आन के नज़दीक शादी की आयु लड़के या लड़की के बालिग़ होने की अवस्था को पहुँच जाने पर है।

17. यतीमों का माल उन के हवाले करने के लिए उन का बालिग़ होने की अवस्था को पहुँचना काफ़ी नहीं है। बल्कि उन में सूझ बूझ का पाया जाना भी ज़रुरी है ताकि वे अपने माल को ज़िम्मेदारी के साथ ख़र्च कर सकें। अगर किसी यतीम लड़के या लड़की में बालिग़ हो जाने पर भी यह योग्यता पैदा न हुई हो तो उसे और इन्तिज़ार करना चाहिए।

18. अर्थात् अगर किसी यतीम का सरपरस्त मोहताज हो तो वह यतीम के माल में से उन की सेवा के सम्बन्ध से आवश्यकतानुसार ले सकता है अलबत्ता इस सिलसिले में उचित तरीक़ा अपनाना ज़रुरी है।

19. यह उस संपत्ति विधान (क़ानूने-विरासत) की भूमिका है जो आगे बयान किया जा रहा है। यतीमों के बाद दूसरा कमज़ोर वर्ग औरतों का है जिस को उस के उत्तराधिकार से वंचित किया जाता रहा है। अत: जाहिलिय्यत के ज़माने में औरतों का छोड़ी हुई संपत्ति में कोई हिस्सा न होता था और न बच्चों को उत्तराधिकारी समझा जाता था बल्कि केवल पुरूष ही उत्तराधिकारी ठहराए जाते थे। मृतक संपत्ति या छोड़ी हुई संपत्ति के बारे में उन का ख़्याल यह था कि जंग करने की योग्यता मर्दों ही में होती है इस लिए वही उत्तराधिकारी बनने योग्य हैं। औरत और बच्चे युद्ध के योग्य नहीं हैं अत:संपत्ति में उन का कोई हिस्सा नहीं होना चाहिए । इस ग़लत धारणा और ज़ालिमाना क़ानून ने विधवाओं और यतीम बच्चों और बच्चियों को उन के उत्तराधिकार से बिलकुल वंचित कर दिया।

इस्लाम ने अज्ञानता के इस क़ानून (Customary Law) को ग़लत ठहराते हुए एलान किया कि मर्दों के समान्तर औरतें भी उत्तराधिकार में शरीक हैं इसी तरह इस्लाम ने बच्चों को भी उत्तराधिकारी ठहराया और उन सब के हिस्से निर्धारित किए। इतिहास में समाज और क़ानून के सुधार का यह अत्याधिक महत्वपूर्ण काम था जो इस्लाम के हाथों अन्जाम पाया और जिस के प्रभाव दुनिया के सभी क़ौमों के सामाजिक जीवन पर पड़े वरना अरब वासियों के अलावा दूसरी क़ौमो की धारना भी औरतों के बारे में कुछ भिन्न न थी यहाँ तक कि असभ्य क़ौमों के नज़दीक भी औरत की हैसियत माल और जायदाद ही की थी जिस को संपत्ति समझ लिया जाता था इस लिए उन को संपत्ति में हिस्सा देने का सवाल ही पैदा नहीं होता था।

“Women do not inherit because they are themselves the property of their husband.” (Ency. of Religion & Ethics Vol. VII, p. 306).

“Women as inheritable property–many primitive people especially in Africa, regard wives and daughters as an important part of the estate to be transmitted in accordance with the regular rules of inheritance with the rest of the property. The explanation at is to be sought partly in the economic value of women either as workers or in the case of daughters, as potential wealth in the shape of a bride–price.” – (Do p. 290).

यह आयत जायदाद के सिलसिले में उस क़ानून को भी स्पष्ट करती है कि छोड़ी हुई संपत्ति हर हाल में बंटनी चाहिए चाहे इस की मात्रा कितनी ही कम हो। यह चल एवं अचल, हर तरह की संपत्ति पर लागू होगा और अगर कोई चीज़ ऐसी है जो बंट नहीं सकती है तो उसे बेच कर के उस की रक़म तमाम उत्तराधिकारीयों में उन के हिस्सों के उनुपात से बाँट दी जाएगी।

आयत में ‘‘अक़रबून اقربون’’ का लफ़्ज़ इस्तेमाल हुआ है जिस का अर्थ निकटतम सम्बन्धियों एवं नातेदारों के हैं। इस से यह बात निकलती है कि निकटतम सम्बन्धियों कि उपस्थिति में दूर के सम्बन्धि उत्तराधिकारी (वारिस) नहीं हो सकते।

20. संबोधन उत्तराधिकारियों से है। उन्हें प्रोत्साहन दिया गया है कि रिश्तेदारों में ऐसे लोग भी हो सकते हैं जिन का शरीअत के मुताबिक जायदाद में हिस्सा न हो लेकिन वह ग़रीब और ज़रुरतमन्द हों, इसी तरह जो यतीम और मुहताज आ मौजूद हों उन्हें जायदाद में से कुछ न कुछ दो और इस की गुन्जाइश न हो तो उन के साथ सहानुभूति ज़रुर प्रकट करो।

इस हिदायत से यह बात निकलती है कि अगर यतीम पोता वारिस न क़रार पाता हो और दादा ने उस के लिए वसीयत भी न की हो तो वारिसों (उत्तराधिकारियों) को चाहिए कि निकटतम सम्बन्धि और यतीम होने के आधार पर उसे उस के दादा की जायदाद में से कुछ न कुछ दें। उस से सहानुभुति करें उस का दिल रखें।

21. अर्थात लोगों को यह ख़याल करना चाहिए कि जिस तरह दूसरों के बच्चे यतीम हुए हैं उसी तरह उन के बच्चे भी यतीम हो सकते हैं। यह ख़याल उन्हें यतीमों का दिल तोड़ने और हक़ न देने से बाज़ रखेगा।

22. इन आयतों में जायदाद के बंटवारे के अहकाम (आदेश) बयान हुए हैं और इन को अल्लाह तआला ने अपनी वसीयत कहा है जिस से इस बात की ओर इशारा करना अभिप्रेत है कि यह अत्यन्त महत्वशाली एवं ज़रुरी हुक्म है। साथ ही इस में यह बात भी निहित है कि सूरह बक़र: की आयत 180 में ईमान वालों को माता पिता एवं सम्बन्धियों के बारे में वसीयत करने का जो हुक्म आदेश मात्र था, इस आयत ने उस की सीमा बाँध दी। इस लिए जिन लोगों के बारे में अल्लाह तआला ने वसीयत फ़रमा दी है उन उत्तराधिकारियों के लिए वसीयत करने का कोई सवाल ईमान वालों के लिए बाक़ी नहीं रहता। अर्थात अब वसीयत केवल ऐसे ही रिश्तेदारों के बारे में की जा सकती है जो शरई तौर पर (संवैधानिक रुप से) उत्तराधिकार न क़रार पाते हों।

23. अल्लाह तआला ने विरासत (छोड़ी हुई जायदाद) में लड़के का हिस्सा लड़कियों के मुक़ाबले में दोगुना रखा है जिस की वजह यह नहीं है कि औरतें मर्दों के मुक़ाबले में निम्न स्तर की हैं अगर ऐसा होता तो किसी सूरत में भी औरतों का हिस्सा मर्दों के बराबर न रखा जाता । हालांकि कई परिस्थितियाँ ऐसी हैं जिस में औरतों का हिस्सा मर्दों के बराबर रखा गया है। जैसे औलाद होने की सूरत में जहाँ बाप को १/६ मिलेगा वहीं माँ को भी १/६ मिलेगा इसी तरह मैय्यत (मृतक) के माँ शरीक भाई बहन का हिस्सा बराबर रखा गया है।

वास्तव में लड़की का हिस्सा लड़के के बराबर न रखने की वजह यह है कि इस्लाम ने कमाने की ज़िम्मेदारी औरत पर नहीं बल्कि मर्द पर डाली है। वह पत्नी का भी भरणपोषण करने का ज़िम्मेदार है और बच्चों का भी। जब कि औरत पर स्वयं अपनी ज़िम्मेदारी उठाने अथवा अपना भरण पोषण का बोझ भी नहीं डाला गया है इस के अलावा मर्द को औरत के मेह्र का दायित्व भी सौंपा गया है। इन ज़िम्मेदारियों को देखते हुए यही इन्साफ़ की माँग है कि मर्द का हिस्सा औरत के मुक़ाबले दोगुना रखा जाए।

लड़के का हिस्सा दो लड़कियों के बराबर होने का मतलब यह है कि अगर मरने वाले ने अपने पीछे एक लड़का और एक लड़की छोड़ी हो तो दूसरे उत्तराधिकारियों को ---यदि कोई हो-- उन का हिस्सा अदा करने के बाद शेष सम्पत्ति के तीन हिस्से किये जाऐंगे जिन में से एक हिस्सा लड़की को मिलेगा और दो हिस्से लड़के को और अगर कई लड़के, लड़कियाँ हों तो उन के बीच जायदाद इस तरह बटेगी कि हर लड़के को दो हिस्से और हर लड़की को एक हिस्सा मिलेगा और अगर सिर्फ लड़के हों तो उन के बीच जायदाद समान रुप से बंटेगी। स्पष्ट रहे कि अपनी वास्तविक सन्तान की मौजूदगी में पोते वारिस नहीं होते ठीक उसी तरह जिस तरह कि बाप की मौजूदगी में दादा वारिस नहीं होता।

24. मरने वाले ने अगर सिर्फ लड़कियाँ छोड़ी हों और वह दो से अधिक हों तो उन के बारे में यह हुक्म बयान किया गया है कि उन्हें दो तिहाई हिस्सा मिलेगा । यही हुक्म दो लड़कीयों का भी है। अर्थात अगर मरने वाले ने सिर्फ लड़कियाँ छोड़ी हों और वे दो हों तो उन को भी दो तिहाई ही मिलेगा। यह बात कलाम के भाव से स्पष्ट है क्यों कि इस से पहले यह जो फ़रमाया कि लड़के का हिस्सा दो लड़कियों के बराबर है, इस से यह बात निकलती है कि एक लड़का और एक लड़की होने की सूरत में लड़के को २/३ मिले गा और लड़की को १/३, लड़के का यह २/३ हिस्सा दो लड़कियों के बराबर है। यह बात कलाम के भाव से स्पष्ट थी इस लिए दो से अधिक लड़कियों का हुक्म स्पष्ट रुप से बयान किया गया। इस के अलावा आयत १७६ में दो बहनों का हिस्सा २/३ बयान किया गया है, अत: दो लड़कियों का हिस्सा २/३ सर्वोपरी होगा।

दो लड़कीयों का हिस्सा दो तिहाई होना हदीस से भी साबित है अत: तिर्मिज़ी की रिवायत (उल्लेख) है कि सअद बिन रबीअ् की पत्नी रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सेवा में उपस्थित हुई और निवेदन किया, ऐ अल्लाह के रसूल (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) सअद की यह दो बेटियाँ हैं, इन के पिता उहद की जंग में शहीद हो गए और उन के चचा ने इन के पूरे माल पर क़ब्ज़ा कर लिया है अब इन से निकाह कौन करेगा। इस पर संपत्ति से सम्बन्धित आयत नाज़िल हुई और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बच्चियों के चचा को बुला कर फ़रमाया कि सअद की दो बेटियों को दो तिहाई दे दो और इन की माता को १/८; इस के बाद जो बच जाए वह तुम ले लो (तफ़्सीर इब्ने कसीर Vol. 1 P. 457) संपत्ति का यह २/३ हिस्सा तमाम लड़कीयों में बराबर बराबर बाँट दिया जाएगा, शेष १/३ के हक़दार दूसरे वारिस होंगे।

25. अर्थात् अगर मरने वाले ने केवल एक लड़की छोड़ी हो और उस के साथ कोई लड़का न हो तो लड़की को आधि जायदाद मिलेगी और शेष आधी के हक़दार दूसरे वारिस होंगे। इस से यह हुक्म भी निकलता है कि अगर केवल एक लड़का हो तो वह लड़की के दोगुना अर्थात् पूरी जायदाद का वारिस होगा अलबत्ता दूसरे उत्तराधिकारी जैसे कि माता, पिता मौजूद हों तो उन के हिस्से अदा करने के बाद शेष जायदाद पूरी की पूरी लड़के को मिलेगी।

26. औलाद चाहे एक हो या अधिक और चाहे लड़की

हो या लड़का हर हालत में मृतक के माता पिता में से हर एक १/६ का हक़दार होगा । माता पिता का हक़ औलाद के मुक़ाबले में अधिक है किन्तु जायदाद में औलाद का हिस्सा अधिक और माता पिता का हिस्सा कम रखने का औचित्य यह है कि माता पिता एक ऐसी आयु को पहुँच चुके होते हैं जब उन्हें माल की आवश्यकता अधिक नहीं होती इस के विपरीत उस की औलाद अपनी अपनी आयु के हिलाज़ से माल की अधिक ज़रुरतमन्द होती है, इस से स्पष्ट है कि बटवारे की यह व्यवस्था कितनी ज्ञान और हिकमत से भरी हुई है। और बुद्धि को अपील करती है।

27. अर्थात् माता पिता के सिवा कोई और वारिस न हो तो माँ को १/३ और शेष जायदाद बाप को मिलेगी।

28. मतलब यह कि मरने वाले के भाई बहन मौजूद हों तो माँ को १/३ के बजाए १/६ मिलेगा और शेष बाप को मिलेगा क्यों कि इस सूरत में बाप की ज़िम्मेदारीयाँ बढ़ जाती हैं।

स्पष्ट रहे कि मृतक के माँ बाप दोनों या केवल बाप के जिन्दा होने की सूरत में उस के भाई बहनों को कुछ नहीं मिलता ।

29. वसीयत करने का अधिकार आदमी को अपनी संपत्ति के १/३ की हद तक है जैसा कि हदीस से स्पष्ट है, एवं किसी वारिस के बारे में वसीयत जायज़ नहीं है और न ऐसी वसीयत लागू होगी सिवाय इस के कि दूसरे उत्ताधिकारी इस की इजाज़त दें। एक तिहाई की हद तक वसीयत की गुन्जाइश इस लिए रखी गई है कि संपत्ति सम्बन्धि क़ानून के हिसाब से जिन रिश्तेदारों को हिस्सा न मिलता हो और वे सहायता के अधिकारी हों जैसे यतीम पोता या पोती या विधवा बहू आदि तो आदमी इन के बारे में वसीयत कर सकता है इसी तरह दूसरे अधिकार रखने वालों के पक्ष में या किसी पुण्य के काम में ख़र्च करने के लिए वसीयत की जा सकती है। (सूरह बक़र: नोट २३३ भी सामने रहे)

30. क़र्ज़ सब से पहले अदा किया जाएगा फिर वसीयत का पालन किया जाएगा और इस के बाद जायदाद बटेंगी। वसीयत का ज़िक्र क़र्ज़ से पहले इस लिए किया गया है ताकि इस मामले में बेपरवाही न बरतें क्योंकि वसीयत बग़ैर किसी बदले (प्रतिदान) के होती है जिस का अदा करना मन पर बोझ होता है, क़र्ज़ के विपरीत कि यह एक जीवन एवं स्वीकृत अधिकार है जिस का अदा करना अनिवार्य है।.

31. अर्थात् जायदाद और उस के उत्तराधिकार के मामले में मनुष्य अपने सीमित ज्ञान के आधार पर सही फ़ैसला नहीं कर सकता । न वह अपनी तुच्छ बुद्धि से सही तौर पर उत्तराधिकारियों को सुनिश्चित कर सकता है और न उन के हिस्सों को । अत: मनुष्य ने आसमानी हिदायत से बेपरवाह हो कर जब कभी जायदाद के बंटवारे का विधान बनाना चाहा है भावना में बह कर ग़लत एवं अन्यायपूर्ण निर्णय ही करता रहा है। अगर प्राचीन अज्ञानता काल में औरतों को जायदाद से वंचित रखा जाता था तो अधुनिक अज्ञानता ने इन को मर्दो के बराबर ला खड़ा कर दिया, जब कि दोनों की ज़िम्मेदारियाँ समान नहीं।

नेपोलियन ने जो सिविल कोड बनाया उस में ख़ूनी रिश्तेदारों की मौजूदगी में पति पत्नी को एक दूसरे की संपत्ति से वन्चित कर दिया । हिन्दू कोड औलाद की मौजूदगी में बाप का हिस्सा स्वीकार नहीं करता अलबत्ता माँ के हिस्से को मान्यता दे रखी है और इन्डियन सक्सेशन एक्ट Indian Succession Act 1925 के अनुसार औलाद की मौजूदगी में मैय्यत (मृतक) के माँ बाप दोनों को जायदाद में कोई हिस्सा नहीं। यह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि जायदाद के बंटवारे के मामले में मनुष्य अपनी इच्छाओं और समय के सिद्धान्तों और विचारों का शिकार रहा है और जो विधान भी इस सिलसिले में बनाए जाते रहे हैं वह किसी ठोस बुनियाद पर नहीं बनाए गए लेकिन इस्लाम का विधान अल्लाह के विस्तृत, विशाल एवं संपूर्ण ज्ञान पर आधारित है इस लिए इस में अत्यन्त उच्चस्तर का संतुलन पाया जाता है।

32. अल्लाह अलीम (सब कुछ जानने वाला) भी है और हकीम (नीतिज्ञ एवं तत्वदर्शी) भी है । इस लिए उस का बंटवारा ग़लत नहीं हो सकता। तुम्हारे अपने विचार एवं सिद्धान्त ग़लत और न्याय एवं समानता के तक़ाज़ों के विरुद्ध हो सकते हैं। तुम्हारे वास्तविक लाभ, हितों और मसलहतों को जानने वाला अल्लाह ही है अत: हमें उस की शरीअत के सही होने पर पूर्ण विश्वास करना चाहिए और शरीअत के क़ानून ही की पाबन्दी स्वीकार करना चाहिए।

12. और तुम्हारी पत्नियों के तरके (छोड़ी हुई संपत्ति) में तुम्हारा (पति का) आधा हिस्सा है बशर्ते कि उन के औलाद न हो। अगर उन के औलाद हो तो उन के तरके (छोड़ी हुई संपत्ति) में तुम्हारा हिस्सा एक चौथाई होगा उस वसीयत के पालन के बाद जो उन्होंने की हो और उस क़र्ज़ की अदायगी के बाद जो उन्हों ने छोड़ा हो। और उन के लिए (अर्थात् पत्नियों के लिए) तुम्हारे तरके (छोड़ी हुई संपत्ति) में चौथाई हिस्सा है बशर्ते कि तुम्हारे औलाद न हो। अगर तुम्हारे औलाद हो तो उन को तुम्हारे तरके (छोड़ी हुई संपत्ति) का आठवाँ हिस्सा मिलेगा,[33] उस वसीयत के पालन के बाद जो तुम कर जाओ और उस क़र्ज़ की अदायगी के बाद जो तुम ने छोड़ा है। और अगर वह मर्द या औरत जिस की मीरास (जायदाद) बाटनी है, कलाला हो (अर्थात् न उस के औलाद हो और न पिता ही जिन्दा हो) और उस का एक भाई या एक बहन मौजूद हो तो उन में से हर एक को छटवाँ हिस्सा मिलेगा और अगर इस से अधिक हों तो वे सब एक तिहाई में शरीक होंगे।[34] उस वसीयत के पालन के बाद जो की गई हो और उस क़र्ज़ की अदायगी के बाद जो मृतक ने छोड़ा हो बशर्ते कि वह हानिकारक न हो।[35] यह वसीयत (हुक्म) है अल्लाह की तरफ से और अल्लाह सब कुछ जानने वाला भी है और बहुत सहनशील भी।[36]

وَلَكُمْ نِصْفُ مَا تَرَكَ أَزْوَاجُكُمْ إِنْ لَمْ يَكُنْ لَهُنَّ وَلَدٌ ۚ فَإِنْ
كَانَ لَهُنَّ وَلَدٌ فَلَكُمُ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْنَ مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ
يُوصِينَ بِهَا أَوْ دَيْنٍ ۚ وَلَهُنَّ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْتُمْ إِنْ لَمْ يَكُنْ
لَكُمْ وَلَدٌ ۚ فَإِنْ كَانَ لَكُمْ وَلَدٌ فَلَهُنَّ الثُّمُنُ مِمَّا تَرَكْتُمْ
مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ تُوصُونَ بِهَا أَوْ دَيْنٍ ۗ وَإِنْ كَانَ رَجُلٌ
يُورَثُ كَلَالَةً أَوِ امْرَأَةٌ وَلَهُ أَخٌ أَوْ أُخْتٌ فَلِكُلِّ وَاحِدٍ مِنْهُمَا
السُّدُسُ ۚ فَإِنْ كَانُوا أَكْثَرَ مِنْ ذَٰلِكَ فَهُمْ شُرَكَاءُ فِي الثُّلُثِ
مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُوصَىٰ بِهَا أَوْ دَيْنٍ غَيْرَ مُضَارٍّ ۚ وَصِيَّةً
مِنَ اللَّهِ ۗ وَاللَّهُ عَلِيمٌ حَلِيمٌ ﴿١٢﴾

13. ये अल्लाह की (निश्चित की हुई) सीमाऐं हैं,[37] और जो अल्लाह और उस के रसूल (की आज्ञा) का पालन करेंगे उन्हें वह ऐसे बागों में दाखिल करेगा जिनके नीचे नहरें प्रवाहित होंगी। वे उन में हमेशा रहेंगे और यही बड़ी कामयाबी है।

تِلْكَ حُدُودُ اللَّهِ ۚ وَمَنْ يُطِعِ اللَّهَ وَرَسُولَهُ يُدْخِلْهُ جَنَّاتٍ
تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا ۚ
وَذَٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ﴿١٣﴾

14. और जो अल्लाह और उस के रसूल की नाफ़रमानी करेगा और उस की (निश्चित की हुई) सीमाओं का उल्लंघन करेगा, उसे वह आग में डालेगा जिस में वह हमेशा रहेगा। और उस के लिए अपमान जनक यातना (अज़ाब) है।[38]

وَمَنْ يَعْصِ اللَّهَ وَرَسُولَهُ وَيَتَعَدَّ حُدُودَهُ يُدْخِلْهُ
نَارًا خَالِدًا فِيهَا وَلَهُ عَذَابٌ مُهِينٌ ﴿١٤﴾

33. मरने वाले के औलाद न होने की सूरत में उस की पत्नी का हिस्सा १/४ और औलाद होने की सूरत में १/८ होगा । अगर एक से अधिक पत्नियाँ हों तो सब इस १/४ या १/८ में बराबर शरीक होंगी।

34. इस बात पर इजमाअ (सहमति) है कि यह हुक्म माँ शरीक भाई बहनों (अख़याफ़ी) का है रहे सगे और सिर्फ़ बाप शरीक भाई बहन तो उन का हुक्म इस सूरह के आख़िर में बयान हुआ है।

अख़याफ़ी भाई बहन (वह भाई बहन जिन के बाप अलग अलग हों और माँ एक हो) का हुक्म यह है कि अगर सिर्फ़ एक भाई या एक बहन हो तो उसे १/६ मिलेगा और दो या दो से अधिक भाई बहन हों तो १/३ में वह सब बराबर के शरीक होंगे। स्पष्ट रहे कि मरने वाले के अख़याफ़ी (माँ शरीक) भाई बहन उसी सूरत में हिस्सा पाते हैं जब कि मैय्यत के न औलाद हो और न बाप ज़िन्दा हो।

35. अर्थात् वसीयत और क़र्ज़ के लिए विरासत के क़ानून में जो गुन्जाइश रखी गई है उस से ग़लत फ़ायदा न उठाया जाए जैसे कि कोई व्यक्ति शरीअत के निर्धारित किए हुए उत्तराधिकारियों को उन के अधिकार से वंचित करने के उद्देश्य से अनुचित वसीयत कर जाए या अपने ज़िम्मे ऐसे क़र्ज़ का इक़रार करे जो उस ने वास्तव में न लिया हो। इस प्रकार से हानि एवं क्षति पहुँचाने को हदीस में कबीरा गुनाह (बड़ा गुनाह) ठहराया गया है।

36. यहाँ अल्लाह तआला ने अपनी दो विशेषताओं ज्ञान और सहनशीलता का हवाला दिया है जिस से यह स्पष्ट करना अभिप्रेत है कि अगर कोई व्यक्ति इन विरासत के क़ानूनों का उल्लंघन करता है तो उसे अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि उस के हाल से अल्लाह भली भाँति परिचित है और वह मात्र अपनी सहनशीलता के कारण फ़ौरन सज़ा नहीं दे रहा है। इस का यह मतलब नहीं कि वह अल्लाह की पकड़ से बच सकेगा।

37. सीमाओ से मुराद क़ानून और विधान हैं। विरासत के उन आदेश की हैसियत जो क़ुर्आन में बयान किए गए हैं अल्लाह के क़ानून (Divine Law) की है जिस की पाबन्दी अनिवार्य रुप से उस के बन्दों पर आयद होती है।

38. विरासत के एहकाम (आदेश) बयान करने के बाद उस का उल्लंघन करने वालों को कठोर यातना (अज़ाब) की धमकी दी गई है । इस से उन लोंगों के जुर्म की संगीनी स्पष्ट होती है जो अल्लाह के निश्चित किए हुए विरासत के क़ानून को परिवर्तित करना चाहें या विरासत के इस्लामी विधान की जगह कोई और विरासत का विधान (Succession Code) लाना चाहें। यह उन्हीं लोगों का काम हो सकता है जिन को अल्लाह और उस के रसूल के आज्ञापालन से कोई सरोकार न हो । वरना कोई मुसलमान ऐसा दुस्साहस हरगिज़ नहीं कर सकता ।

जायदाद में हिस्सा पाने वाले
Table of heirs with their sharier

क्रम संख्या	वारिस	विवरण	Normal Share or Portion हिस्सा साधारणतया		जायदाद पाने की शर्तें Conditions
			एक व्यक्ति होने की सूरत में	दो या अधिक व्यक्ति होने की सूरत में	
१.	लड़का	असबा (अवशिष्ट) Residuary	लड़की के दोगुना	हर लड़के का हिस्सा लड़की के दोगुना	जब कि मृतक के लड़के लड़कियाँ दोनो हों और सिर्फ वही वारिस हों।
	‘‘	‘‘	कुल (समस्त)	कुल में बराबर के शरीक	जब कि अकेले एक लड़का या कई लड़के वारिस हों।
	‘‘	‘‘	अस्हाबे फरीज़ा को देने के बाद जो बाक़ी बचे	अस्हाबे फरीज़ा को देने के बाद जो बाक़ी बचे उस में सब बराबर के शरीक	जब कि मृतक के माँ बाप पति या पत्नी मौजूद हों तो उन को देने के बाद जो बाक़ी बचे।
२.	लड़की	साहबे फरीज़ा क़ुर्आन का मुकर्रर किया हुआ हिस्सा पाने वाली	१/२	२/३ में बराबर की शरीक	जब कि मृतक का लड़का न हो।
	‘‘	असबा	लड़के का आधा	हर लड़की का हिस्सा लड़के का आधा	जब कि मृतक (मैय्यत)का लड़का मौजूद हो।
३.	पिता	साहबे फ़रीज़ा	१/६		जब कि मृतक का लड़का मौजूद हो
	‘‘	साहबे फ़रीज़ा और असबा	१/६ और अस्हाबे फ़रुज़ को देने के बाद जो बाक़ी बचे		जब की मृतक की लड़की मौजूद हो और लड़का न हो ।
	‘‘	असबा	कुल		जब कि मृतक की कोई औलाद न हो और न उस की माँ पति या पत्नी मौजूद हो।
४.	माता	साहबे-फ़रीज़ा (Quranic Sharer)	१/६		जब कि मृतक की औलाद या उस के भाई बहन दो या अधिक तादाद में मौजूद हों।

क्रम संख्या	वारिस	विवरण	Normal Share or Portion हिस्सा साधारणतय		जायदाद पाने की शर्तें Conditions
			एक व्यक्ति होने की सूरत में	दो या अधिक व्यक्ति होने की सूरत में	
	माता	साहबे-फ़रीज़ा (Quranic Sharer)	१/३		जब कि मृतक के कोई औलाद न हो और न उस के भाई बहन कम से कम दो की तादाद में मौजूद हों
	‘‘	‘‘	१/३		जब कि मृतक का पिता, पत्नी या पति मौजूद हो, इस सूरत में पति या पत्नी का हिस्सा अदा करने के बाद शेष जायदाद का १/३ माता को दिया जाएगा ।
५.	पति	साहबे फरीज़ा	१/२		जब कि मृतक की कोई औलाद न हो ।
	‘‘	‘‘	१/४		जब कि मृतक की औलाद मौजूद हो ।
६.	पत्नी	साहबे-फ़रीज़ा	१/४	१/४ में सब बराबर की शरीक	जब की मृतक की कोई औलाद न हो ।
	‘‘	‘‘	१/८	१/८ में सब बराबर की शरीक	जब की मृतक की औलाद मौजूद हो ।
७.	माँ शरीक भाई या बहन Uterine Brother or Sister	साहबे-फ़रीज़ा	१/६	१/३ में सब भाई बहन बराबर के शरीक	जब कि मृतक के कोई औलाद या बाप मौजूद न हो ।
	‘‘	महजूब (लुप्त) (Excluded)	कुछ नहीं	कुछ नहीं	जब की मृतक की औलाद या बाप मौजूद हो ।
८.	सगी बहन	साहबे-फ़रीज़ा	१/२	२/३	जब कि मृतक का बाप उस की औलाद और उस का सगा भाई इन में से. कोई भी मौजूद न हो।
	‘‘	असबा	लड़की को देने के बाद शेष हिस्सा	लड़की को देने के बाद शेष हिस्से में सब बराबर के शरीक	जब कि मृतक की लड़की मौजूद हो लेकिन उस का बाप, नर औलाद और सगा भाई इन में से कोई मौजूद न हो ।
	सगी बहन	असबा	भाई का आधा	हर बहन को भाई का आधा	जब की मृतक का सगा भाई मौजूद हो लेकिन उस का बाप या नर औलाद मौजूद न हो ।

क्रम संख्या	वारिस	विवरण	Normal Share or Portion हिस्सा साधारणतय		जायदाद पाने की शर्तें Conditions
			एक व्यक्ति होने की सूरत में	दो या अधिक व्यक्ति होने की सूरत में	
	सगी बहन	महजूब	कुछ नहीं	कुछ नहीं	जब कि मृतक का बाप या नर औलाद मौजूद हो।
९.	सगा भाई	असबा	कुल	कुल में सब बराबर के शरीक	जब कि मृतक का बाप, नर औलाद, पत्नी या पति और माँ शरीक भाई बहन में से कोई मौजूद न हो।
	‘‘	‘‘	अस्हाबे फुरुज को अदा करने के बाद जो बाक़ी बचे	अस्हाबे-फुरुज़ को अदा करने के बाद जो बाक़ी बचे उस में सब बराबर के शरीक	जब कि मृतक का बाप, नर औलाद, मौजूद न हो लेकिन लड़की, माँ, माँ शरीक भाई बहन और पति या पत्नी में से कोई मौजूद हो तो उस को देने के बाद जो शेष बचेगा वह सगे भाई को मिलेगा।
	‘‘	महजूब	कुछ नहीं	कुछ नहीं	जब की मृतक का बाप या नर औलाद मौजूद हो।
१०	बाप शरीक बहन Onsanguine Sister	साहबे-फ़रीज़ा	१/२	२/३	जब की मृतक के सगे भाई बहन, बाप शरीक भाई बाप औरऔलाद में से कोई मौजूद न हो।
	‘‘	‘‘	१/६	१/६	जब की मृतक की केवल एक सगी बहन मौजूद हो, और बाप शरीक भाई, बाप और औलाद में से कोई मौजूद न हो ।
	‘‘	असबा	लड़की को देने के बाद शेष हिस्सा	लड़की को देने के बाद शेष हिस्से में सब बराबर के शरीक	जब की मृतक की लड़की मौजूद हो लेकिन सगे भाई बहन, बाप शरीक भाई, माँ शरीक भाई बहन, पति या पत्नी बाप और नर औलाद में से कोई मौजूद न हो।
	‘‘	असबा	भाई का आधा	भाई का आधा	जब कि मृतक का बाप शरीक भाई मौजूद हो लेकिन सगा भाई, बाप, पति या पत्नी और नर औलाद में से कोई न हो।

क्रम संख्या	वारिस	विवरण	Normal Share or Portion हिस्सा साधारणतय		जायदाद पाने की शर्तें Conditions
			एक व्यक्ति होने की सूरत में	दो या अधिक व्यक्ति होने की सूरत में	
	बाप शरीक बहन Onsanguine Sister	महजूब	कुछ नहीं	कुछ नहीं	जब की मृतक की दो सगी बहनें, सगा भाई, बाप नर औलाद में से कोई मौजूद हो एक सगी बहन बतौर असबा के हो।
११.	बाप शरीक भाई	असबा	कुल जायदाद	कुल जायदाद में सब बराबर के शरीक	जब की मृतक के माँ बाप औलाद, पति या पत्नी,सगे भाई बहन, अल्लाती (बाप शरीक) बहन, माँ शरीक भाई , बहन में से कोई मौजूद न हो।
		असबा	असहाबे-फ़रुज़ को देने के बाद जो बाक़ी बचे	असहाबे-फ़रीजा को देने के बाद जो बाक़ी बचे उस में सब बराबर के शरीक	जब की मृतक की लड़की, माँ, पति या पत्नी, सगी बहन, माँ शरीक भाई बहन में से कोई मौजूद हो अगर बाप शरीक बहन मौजूद हो तो उस के दुगुना बाप शरीक भाई को मिलेगा।
	''	महजूब	कुछ नहीं	कुछ नहीं	जब कि मृतक का बाप, लड़का, सगा भाई या सगी बहन मौजूद हो।

नोट :

* इन नक़्शे में उन वारिसों के हिस्से बयान किए गए हैं जिन का ज़िक्र क़ुर्आन में स्पष्ट रुप से आया है।

* इस बात पर इज्माअ् (सहमति) है कि बेटों की अनुपस्थिति में पोते और बाप की अनुपस्थिति में दादा वारिस होगा।

* वर्णित वारिसों में से कोई भी मौजूद न हो तो ज़ुलअर्हाम (वे रिश्तेदार जो बाप की तरफ़ से न हों अथवा **Distant Kindred**)हिस्सा पाते हैं। ये मसअले हदीस और धर्मशास्त्रियों (फ़ुक़हा) के क़ियास (अन्दाज़े) और इज्तिहाद **(Interpretation)** पर आधारित हैं ।

15. और तुम्हारी औरतों में से जो कुकर्म कर बैठी हों [39] उन पर अपने में से चार आदमियों की गवाही लो,[40] अगर वे गवाही दें तो उन औरतों को घरों में रोके रखो [41] यहाँ तक कि मौत उन का वक्त पूरा कर दे या अल्लाह उन के लिए कोई राह निकाल दे।[42]

وَالّٰتِيْ يَاْتِيْنَ الْفَاحِشَةَ مِنْ نِّسَآئِكُمْ
فَاسْتَشْهِدُوْا عَلَيْهِنَّ اَرْبَعَةً مِّنْكُمْ ۚ فَاِنْ
شَهِدُوْا فَاَمْسِكُوْهُنَّ فِي الْبُيُوْتِ حَتّٰى
يَتَوَفّٰىهُنَّ الْمَوْتُ اَوْ يَجْعَلَ اللّٰهُ لَهُنَّ سَبِيْلًا ﴿١٥﴾

16. और तुम में से जो (मर्द औरत) यह कर्म करे उन दोनों को तकलीफ़ पहुँचाओ,[43] फिर अगर वे तौबा कर लें और अपनी इस्लाह (सुधार) कर लें तो उन से दर गुज़र करो [44] कि अल्लाह तौबा क़ुबूल करने वाला और रहम फ़रमाने वाला है।

وَالَّذٰنِ يَاْتِيٰنِهَا مِنْكُمْ فَاٰذُوْهُمَا ۚ فَاِنْ تَابَا وَاَصْلَحَا
فَاَعْرِضُوْا عَنْهُمَا ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ تَوَّابًا رَّحِيْمًا ﴿١٦﴾

17. अल्लाह पर तौबा क़ुबूल करने का हक तो उन्हीं लोगों के लिए है जो नादानी में कोई बुराई कर बैठते हैं फिर जल्द ही तौबा कर लेते हैं।[45] ऐसे ही लोगों की तौबा अल्लाह क़ुबूल फ़रमाता है, और अल्लाह जानने वाला और हिकमत वाला है।

اِنَّمَا التَّوْبَةُ عَلَى اللّٰهِ لِلَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ السُّوْۗءَ بِجَهَالَةٍ
ثُمَّ يَتُوْبُوْنَ مِنْ قَرِيْبٍ فَاُولٰۗىِٕكَ يَتُوْبُ اللّٰهُ
عَلَيْهِمْ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ﴿١٧﴾

18. और उन लोगों की तौबा, तौबा नहीं है जो बुरे काम करते रहते हैं यहाँ तक कि जब उन में से किसी की मौत आ खड़ी होती है तो कहने लगता है कि अब मैं ने तौबा की।और न उन लोगों की तौबा वास्तव में तौबा है जो कुफ्र की हालत में मर जाते हैं।[46]

وَلَيْسَتِ التَّوْبَةُ لِلَّذِيْنَ يَعْمَلُوْنَ السَّيِّاٰتِ ۚ حَتّٰٓى
اِذَا حَضَرَ اَحَدَهُمُ الْمَوْتُ قَالَ اِنِّىْ تُبْتُ الْـٰٔنَ
وَلَا الَّذِيْنَ يَمُوْتُوْنَ وَهُمْ كُفَّارٌ ۭ اُولٰۗىِٕكَ
اَعْتَدْنَا لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ﴿١٨﴾

19. ऐ ईमान वालों ! तुम्हारे लिए यह जाइज़ नहीं की तुम ज़बरदस्ती औरतों के वारिस बन जाओ।[47] और न यह जाइज़ है कि जो कुछ तुम उन्हें दे चुके हो उस में से कुछ वापस लेने के उद्देश्य से उन्हें तंग करने लगो, यह अलग बात है कि वे ख़ुली बेहयाई की अपराधी हुई हों।[48] उन के साथ अच्छा बरताव करो। अगर वो तुम्हें ना पसंद हों तो आश्चर्य नहीं कि एक चीज़ तुम्हें पसन्द न हो और अल्लाह ने उस में (तुम्हारे लिए) बहुत कुछ भलाई रख दी हो।[49]

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا يَحِلُّ لَكُمْ اَنْ تَرِثُوا النِّسَاۗءَ كَرْهًا ۭ وَلَا
تَعْضُلُوْهُنَّ لِتَذْهَبُوْا بِبَعْضِ مَآ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ اِلَّآ اَنْ يَّاْتِيْنَ
بِفَاحِشَةٍ مُّبَيِّنَةٍ ۚ وَعَاشِرُوْهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ ۚ فَاِنْ كَرِهْتُمُوْهُنَّ
فَعَسٰٓى اَنْ تَكْرَهُوْا شَيْـًٔا وَّيَجْعَلَ اللّٰهُ فِيْهِ خَيْرًا كَثِيْرًا ﴿١٩﴾

20. और अगर तुम एक पत्नी की जगह दूसरी पत्नी करना चाहो और तुम ने एक पत्नी को ढेरों माल भी दे रखा हो तो उस में से कुछ भी वापस न लो।[50] क्या उसे बोहतान (कलंक) लगा कर और खुला ज़ुल्म कर के वापस लोगे।

وَاِنْ اَرَدْتُّمُ اسْتِبْدَالَ زَوْجٍ مَّكَانَ زَوْجٍ ۙ وَّاٰتَيْتُمْ اِحْدٰىهُنَّ
قِنْطَارًا فَلَا تَاْخُذُوْا مِنْهُ شَيْـًٔا ۭ اَتَاْخُذُوْنَهٗ بُهْتَانًا
وَّاِثْمًا مُّبِيْنًا ﴿٢٠﴾

39. मुराद ज़िना (व्याभिचार) है।

40. अगर कोई मुसलमान औरत ज़िना (व्याभिचार) कर बैठी हो तो उस को इसी सूरत में सज़ा दी जा सकती है जब कि उस का जुर्म चार मुसलमान गवाहों के द्वारा साबित हो जाए इस के लिए इस्लाम ने चार की गवाही ज़रुरी क़रार दी है जब कि दूसरे अपराधों के लिए दो की गवाही काफ़ी है। कारण इस का यह है कि ज़िना (व्याभिचार) वह संगीन जुर्म है जिस के बाद इन्सान की पवित्रता और उस की इज़्ज़त बाक़ी नहीं रहती और नैतिक रुप से वह मर जाता है। ऐसे संगीन अपराध को किसी से जोड़ देने में ज़ाहिर है अत्याधिक सावधानी बरतने की ज़रुरत है।

41. जो औरतें ज़िना (व्याभिचार) कर बैठी हों और उन का यह जुर्म चार गवाहों के द्वारा साबित हो जाए उन्हें घर में नजरबन्द रखने का हुक्म इस आयत में दिया गया है ताकि वे कुकर्म से बाज़ आऐं उन्हें अपहरण आदि ख़तरों से बचाया जा सके यह हुक्म कुछ खास परिस्थिति के लिए है जिस का विस्तृत बयान आगे आ रहा है।

42. यह इस बात की तरफ़ इशारा है कि ज़िना (व्याभिचार) की अपराधी औरतों की नज़रबन्दी का हुक्म खास परिस्थिति के लिए दिया गया है रहा स्थाई आदेश तो वह बाद में नाज़िल किया जाएगा। अत: बाद मे अर्थात् सन ६ हिजरी में सूरह नूर में सौ कोड़ो की सज़ा निर्धारित की गई (सूरह नूर आयत २) इस का यह मतलब नहीं कि नज़रबन्दी का आदेश निरस्त हो गया, अगर ऐसा होता तो क़ुर्आन में इस की तिलावत (Reading) बाक़ी न रखी जाती। तिलावत जब बाक़ी रखी गई है तो इस से ज़ाहिर है कि यह हुक्म उन खास परिस्थितियों के लिए अब भी बाक़ी है जिन में मुस्लिम समाज इस पोज़ीशन में न हो कि कोड़ों की सज़ा लागू कर सके अलबत्ता जो समाज कोड़ों की सज़ा लागू करने की पोज़ीशन में हो उसे कोड़ों की सज़ा ही नाफ़िज़ करना होगी । इस आयत में ज़िना के सबूत के लिए चार गवाहों की जो शर्त बयान की गई है वह कोड़ों की सज़ा का हुक्म आ जाने के बाद भी बाक़ी रखी गई जो इस बात की दलील है कि यह आयत निरस्त नहीं है।

सच यह है कि क़ुर्आन में कोई आयत भी निरस्त (मन्सूख) नहीं है। कुछ एहकाम (आदेश) जो पहली निगाह में भिन्न प्रतीत होते हैं उन में वास्तव में कोई टकराव नहीं है बल्कि एक हुक्म एक तरह की परिस्थिति के लिए है और दूसरा हुक्म दूसरी तरह की परिस्थिति के लिए। उदाहरण के तौर पर एक जगह हुक्म दिया गया है कि काफ़िरों को अपनी जगह छोड़ दो और दूसरी जगह हुक्म दिया गया है कि इन से जंग करो। जाहिर है यह भिन्न मरहलों से सम्बन्ध रखने वाले एहकाम हैं न कि दूसरा हुक्म पहले हुक्म का निरस्तक ।

43. कष्ट से मुराद धिक्कारना, लताड़ना, भर्त्सना करना, और डराने एवं समझाने की हद तक मारना है। दण्ड का यह हुक्म स्त्री और पुरुष दोनों के लिए है जो ज़िना के अपराधी हुए हों।

44. इस्लाह (सुधार) की सूरत में चाहे वह स्त्री हो या पुरुष कष्ट पहुँचाने से बचा जाएगा। लेकिन औरत को रोके रखने का जो हुक्म आयत १५ में दिया गया है वह कष्ट के आदेश के अलावा है और इस की दूसरी मसलहतें भी हैं इस लिए इस पर अमलदरामद (कार्रवाई) किया जाएगा।

45. ऊपर जो तौबा का ज़िक्र हुआ है उस के हिसाब से तौबा की हक़ीक़त यहाँ स्पष्ट कर दी गई। तौबा (प्रायश्चित) का मतलब गुनाह से बाज़ आने और अल्लाह की फ़रमाँबरदारी की तरफ़ पलटने के हैं। जो व्यक्ति नादानी में या भावनाओं में बह कर और इच्छाओं के हाथों विवश हो कर गुनाह कर बैठता है मगर उस पर हठ नहीं करता बल्कि उस पर पश्चातापी हो कर अल्लाह की तरफ़ पलटता है, उस से लौ लगाता है और उस से क्षमायाचना करता है तो ऐसे व्यक्ति की तौबा सच्ची तौबा है और उसे क़ुबूल करने का वादा अल्लाह तआला ने किया है।

46. अर्थात जो लोग जीवन भर गुनाह पर गुनाह किये चले जाते हैं और इस से बाज़ नहीं आते मगर जब मौत का फ़रिश्ता सामने आ खड़ा होता है तो अल्लाह से माफी माँगने लगते हैं ऐसे लोगों की तौबा सच्ची तौबा नहीं है क्यों कि जब इम्तिहान की घड़ी ख़त्म हो गई और परिणाम निकलने का समय आ गया उस समय तौबा करने का कोई अर्थ नहीं। इस लिए ऐसे लोगों की तौबा अल्लाह क़ुबूल नहीं फ़रमाता और न उन लोगों की तौबा क़ुबूल फ़रमाता है जो मरते दम तक काफिर रहते हैं लेकिन जब मौत आ जाती है और आदमी सच्चाईयों को बेनिक़ाब होता देखने लगता है उस समय अल्लाह से क्षमा की प्रार्थना करने लगता है क्यों कि वह समय इम्तिहान का नहीं बल्कि परिणाम सामने आने का समय होता है। इस लिए अगर मामला गुनाह का हो तो आदमी को चाहिए की शीघ्र ही उस से बाज़ आ जाए और अगर अब तक वह कुफ़्र और इन्कार की राह पर चल रहा था तो अविलंब अपनी राह अपना रवैया बदल दे और इमान ले आए। मालूम नहीं किस की मौत का समय कब आ जाए और तौबा की मोहलत ख़त्म हो जाए।

47. अरब जाहिलिय्यत में यह घृणित रीति चली आ रही थी कि मरने वाले की पत्नियाँ भी मीरास (संपत्ति) में शामिल समझी जातीं। इसी लिए बाप के मरने पर बेटा अपनी सौतेली माँ का वारिस बन जाता था और उस से पति पत्नी के सम्बन्ध स्थापित कर लेता था। क़ुर्आन ने इस को हराम ठहराते हुए स्पष्ट

किया कि औरत छोड़ी हुई संपत्ति नहीं है कि उस पर मरने वाले के वारिस क़ब्ज़ा कर लें। बल्कि वह इद्दत के बाद आज़ाद हैं। शरीअत की हद में रह कर जिस से चाहे निकाह कर सकती हैं। यह भी एक महत्वपूर्ण एवं क्रान्तिकारी सुधार था जो इस्लाम ने औरतों के सिलसिले में किया ।

48. अर्थात बद्चलनी की अपराधी होने की सूरत में उन्हें कष्ट देने का हक़ तुम्हें पहुँचता है।

49. मतलब यह कि मात्र इस लिए कि पत्नी सुन्दर नहीं है या उस में कोई और ऐब है, उसे तंग करना जायज़ नहीं, और न उसे छोड़ देना कोई मुनासिब बात है। अगर वह पाकदामन है तो उसे जहाँ तक संभव हो निभाने की कोशिश करना चाहिए, क्यों कि हो सकता है उस में दूसरे गुण मौजूद हों जो वैवाहिक जीवन के लिए महत्व रखते हों। और हो सकता है कि अल्लाह तआला उस के अच्छे स्वभाव और अच्छे आचरण के कारण इस रिश्ते से कुछ और भलाइयाँ उत्पन्न कर दे। अत: सम्बन्ध तोड़ने के मामले में जल्द बाज़ी नहीं करनी चाहिए।

50. पत्नी को जो मेह्र दिया हो एवं उसे जीवन संगिनी समझ कर उपहार स्वरुप जो कुछ दिया गया हो, तलाक़ की सूरत में पति को हक़ नहीं पहुँचता कि उस में से किसी चीज़ की भी वापसी का मुतालबा (Demand) करे।

और उन औरतों से निकाह न करो जिन से तुम्हारे बाप निकाह कर चुके हों।मगर जो कुछ इस से पहले हो चुका सो हो चुका।यह बड़ी बेहयाई की और घृणित बात है और बहुत ही बुरा चलन है।(अल-क़ुर्आन)

21. तुम उसे किस तरह वापस ले सकते हो जब कि तुम एक दुसरे से पति पत्नी का सम्बन्ध स्थापित कर चुके हो और वे तुम से दृढ़ प्रतिज्ञा भी करा चुकी हैं।[51]

وَكَيْفَ تَأْخُذُونَهُ وَقَدْ أَفْضَىٰ بَعْضُكُمْ إِلَىٰ بَعْضٍ وَأَخَذْنَ مِنكُم
مِّيثَاقًا غَلِيظًا ﴿٢١﴾

22. और उन औरतों से निकाह न करो जिन से तुम्हारे बाप निकाह कर चुके हों ।[52] मगर जो कुछ इस से पहले हो चुका सो हो चुका।[53] यह बड़ी बेहयाई की और घृणित बात है और बहुत ही बुरा चलन है।

وَلَا تَنكِحُوا مَا نَكَحَ آبَاؤُكُم مِّنَ النِّسَاءِ إِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ
إِنَّهُ كَانَ فَاحِشَةً وَمَقْتًا وَسَاءَ سَبِيلًا ﴿٢٢﴾

23. तुम पर हराम की गईं [54] तुम्हारी माताऐं [55] बेटियाँ,[56] बहनें, [57] फूफियाँ, खालाऐं, भतीजियाँ, भानजियाँ, तुम्हारी वह माताऐं जिन्हों ने तुम को दूध पिलाया हो,[58]तुम्हारी दूध शरीक बहनें, तुम्हारी पत्नियों की माताऐं, तुम्हरी पत्नियों की बेटियाँ जिन्हों ने तुम्हारी गोदों में परवरिश पाई हैं।उन पत्नियों की बेटियाँ जिन से तुम ने सहवास किया हो लेकिन जिन पत्नियों से तुम ने सहवास न किया हो उन की बेटियों से निकाह करने में तुम पर कोई हरज नहीं [59] और (हराम की गईं तुम पर) तुम्हारे सुलबी (तुम्हारे वीर्य से उत्पन्न) बेटों की पत्नियाँ [60]एवं यह भी हराम है कि तुम दो बहनों को एक साथ जमा करो,[61] मगर जो पहले हो चुका [62] निःसंदेह अल्लाह अत्यन्त क्षमाशील और दया करने वाला है।

حُرِّمَتْ عَلَيْكُمْ أُمَّهَاتُكُمْ وَبَنَاتُكُمْ وَأَخَوَاتُكُمْ وَعَمَّاتُكُمْ وَخَالَاتُكُمْ
وَبَنَاتُ الْأَخِ وَبَنَاتُ الْأُخْتِ وَأُمَّهَاتُكُمُ اللَّاتِي أَرْضَعْنَكُمْ
وَأَخَوَاتُكُم مِّنَ الرَّضَاعَةِ وَأُمَّهَاتُ نِسَائِكُمْ وَرَبَائِبُكُمُ
اللَّاتِي فِي حُجُورِكُم مِّن نِّسَائِكُمُ اللَّاتِي دَخَلْتُم بِهِنَّ فَإِن لَّمْ تَكُونُوا
دَخَلْتُم بِهِنَّ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ وَحَلَائِلُ أَبْنَائِكُمُ الَّذِينَ
مِنْ أَصْلَابِكُمْ وَأَن تَجْمَعُوا بَيْنَ الْأُخْتَيْنِ إِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ
إِنَّ اللَّهَ كَانَ غَفُورًا رَّحِيمًا ﴿٢٣﴾

24. और वे औरतें भी हराम हैं जो दूसरों के निकाह में हों [63] सिवाए उन के जो जंग में तुम्हारे हाथ आ गई हों,[64] यह अल्लाह का क़ानून है जिस की पाबन्दी तुम पर अनिवार्य है।[65] इन औरतों के अलावा और औरतें तुम्हारे लिए हलाल हैं बशर्ते कि अपने माल के द्वारा उन्हें निकाह के बन्धन में लाना मक़सद हो [66] न कि कामतृप्ति।फिर जिन औरतों से तुम (विवाहिक जीवन का) लाभ उठाओ उन को उन के मह्‌र फ़रीज़े के तौर पर (अनिवार्य समझ कर) अदा करो। मह्‌र निर्धारित करने के बाद अगर आपस की रज़ामन्दी से (कमी बेशी की) कोई बात तय हो जाए तो इस में कोई हरज नहीं [67] निश्चय ही अल्लाह सर्वज्ञानता और तत्वदर्शी है।

وَالْمُحْصَنَاتُ مِنَ النِّسَاءِ إِلَّا مَا مَلَكَتْ أَيْمَانُكُمْ كِتَابَ
اللَّهِ عَلَيْكُمْ وَأُحِلَّ لَكُم مَّا وَرَاءَ ذَٰلِكُمْ أَن تَبْتَغُوا بِأَمْوَالِكُم
مُّحْصِنِينَ غَيْرَ مُسَافِحِينَ فَمَا اسْتَمْتَعْتُم بِهِ مِنْهُنَّ فَآتُوهُنَّ
أُجُورَهُنَّ فَرِيضَةً وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فِيمَا تَرَاضَيْتُم بِهِ مِن بَعْدِ
الْفَرِيضَةِ إِنَّ اللَّهَ كَانَ عَلِيمًا حَكِيمًا ﴿٢٤﴾

51. निकाह के बन्धन को दृढ़ प्रतिज्ञा (मीसाक़ ग़लीज़) फ़रमाया गया है क्यों कि इस के साथ ज़िम्मेदारियाँ और अधिकार जुड़े हुए हैं। यह कोई मामूली रिश्ता नहीं बल्कि अत्यन्त सुदृढ़ सम्बन्ध और वफ़ा करने की मज़बूत शपथ है। अत: अगर मर्द अपनी इच्छा से इस बन्धन को ख़त्म कर देना चाहता है तो उसे यह हक़ नहीं पहुँचता कि वह जो कुछ उस को दे चुका है उसे वापस ले ले चाहे वह मेह्र हो या दूसरे उपहार।

52. बाप के देहान्त पर अपनी सौतेली माँ से वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करने की जो रीति अज्ञानता काल से चली आ रही थी उस को क़ुर्आन ने बिलकुल अवैध और हराम घोषित किया।

53. अर्थात क़ानूनन पिछले रिश्तों की खोजबीन नहीं की जाएगी।

54. इस आयत में निकटतम सगे संबन्धियों से निकाह हराम क़रार दिया गया है यह सम्मान एवं प्रतिष्ठा मानव स्वभाव के उस तक़ाज़े पर आधारित है कि रिश्तेदारी के ये सम्बन्ध प्रेम, करुणा और दया की उच्च भावनाओं पर कायम होने चाहिए। इस में काम इच्छा एवं कामभावना का कोई दख़ल नहीं होना चाहिए वरना इस से मानव समाज में बहुत बड़ा फ़साद बरपा होगा।

55. माँ चाहे सगी हो या सौतेली हराम ही है इस तरह बाप की माँ और माँ की माँ भी।

56. बेटी के हुक्म में पोती और नवासी भी शामील हैं।

57. बहन चाहे सगी हो या बाप शरीक या माँ शरीक सब समान रुप से हराम हैं।

58. बच्चे की परवरिश जिस औरत के दूध से हुई है वह उस के लिए माँ के दर्जे पर होती है इस लिए इस्लाम ने इस रिश्ते की मार्यादा का लिहाज़ रखा है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का इर्शाद है।

يحرم من الرضاعة ما يحرم من النسب۔ (تفسیر ابن کثیر ص ۴۶۹ بحوالہ مسلم)

“ जो रिश्ते नसब (वीर्य) से हराम हैं वे रजाअत (दूध) से भी हराम हैं। (तफ़्सीर इब्ने कसीर पृष्ट ४६९ मुस्लिम के हवाले से)

59. पत्नी की वह लड़की जो उस के पहले पति से हो। उस का हराम होना उस सूरत में है जब कि वह उस पत्नी से हो जिस से सहवास किया हो लेकिन अगर वह ऐसी पत्नी से है जिस से मात्र निकाह हुआ था और सहवास से पहले उसे तलाक़ दी थी तो उस की लड़की से निकाह जायज़ है। रही बात गोद में पले होने की तो वह शर्त के तौर पर नहीं है, बल्कि रिश्ते की नज़ाकत का एहसास दिलाने के लिए है। अगर सौतेली लड़की की माँ से विवाह पश्चात सहवास किया जा चुका है तो वह (सौतेली) लड़की आदमी पर हर हाल में हराम है चाहे उस ने उस की गोद में परवरिश पाई हो या न पाई हो।

60. इस क़ैद ने मुतबन्ना (मुँह बोले बेटे अथवा गोद लिए बेटे) की पत्नी से निकाह को हराम होने के हुक्म से ख़ारिज कर दिया है। निकाह केवल उस बेटे की पत्नी से हराम है जो आदमी के अपने वीर्य से हो।

61. दो बहनों को जमा करने अर्थात् दोनों का एक ही व्यक्ति से निकाह करने की सूरत में इस बात की अधिक संभावना है कि उन के बीच आपस में विद्वेष कलह एवं शत्रुता की भावना उत्पन्न हो जाए वे उसी में ग्रस्त हो जाऐं। इस से ख़ून का रिश्ता प्रभावित होगा। यही फ़साद ख़ाला और भान्जि तथा फूफी और भतीजी के जमा करने में है। इस लिए हदीस में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इस की भी मनाही फ़रमाई है।

62. अर्थात् इस हुक्म के नाज़िल होने से पहले जो हो चुका सो हो चुका। अब इस से बाज़ आ जाओ तो जो ग़लतियाँ तुम करते रहे हो अल्लाह तआला उन्हें माफ़ फ़रमाएगा।

63. जो औरत किसी दूसरे के निकाह में हो वह हराम है क्यों कि औरत एक समय में एक मर्द ही के निकाह में हो सकती है, दो मर्दो के निकाह में नहीं हो सकती। बहुपति प्रथा (Polyandry) मानव प्रकृति और उस के स्वभाव के विरुद्ध है इस लिए अल्लाह का कलाम इसे हमेशा हराम ठहराता रहा है। इस की प्रथा अगर कहीं रही है तो असभ्य बर्बर जंगली क़बीलों में या फिर वर्तमान अनिश्वरवादी सभ्यता इसे स्वीकार करने पर आमादा नज़र आती है।

64. अर्थात् जो औरतें जंग में गिरफ़्तार हो कर आ गई हों और उन के काफ़िर शौहर दारुलहरब (वह देश जहाँ ग़ैरमुस्लिमों की हुकूमत हो और मुसलमानों को मज़हबी फ़र्ज़ अदा करने से रोका जाए) में मौजूद हों, वह हराम नहीं हैं क्यों कि इस सूरत में उन का पिछला निकाह टूट जाता है।

ग़ुलामों और दासियों से सम्बन्धित इस्लाम के एहकाम को समझने के लिए ज़रुरी है कि उस समय के हालात को सामने रखा जाए जिन में यह एहकाम दिये गए थे। उस ज़माने में जंगी क़ैदियों को गुलाम और दासी बनाने की प्रथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचलित थी। जेल का चलन बहुत कम था और जंगी क़ैदियों (War Prisoners) के लिए बड़े पैमाने पर उन को क़ैदी बना कर रखना और उन के खाने पीने का प्रबन्ध करना बहुत मुश्किल था। इस लिए उन को ग़ुलाम बना कर लोगों के हवाले कर दिया जाता था। इन हालात में इस्लाम ने जो ग़ुलाम बनाने

की नहीं बल्कि ग़ुलामों को रिहा करने की प्रेरणा दे रहा था और इसे मानवता की बहुत बड़ी सेवा और बहुत बड़ी नेकी क़रार दे रहा था एक अंतर्राष्ट्रीय समस्या होने की वजह से जंगी क़ैदियों की हद तक गवारा कर लिया। यद्यपि साधारण निर्देश यही था कि जंगी क़ैदियों को या तो एहसान के तौर पर छोड़ दिया जाए या फ़िदिय: (मुक्ति प्रतिदान) ले कर रिहा किया जाए जैसा कि सूरह मुहम्मद आयत ४ से स्पष्ट है।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के समय में जो जंगें लड़ी गईं उन में जंगी क़ैदियों के साथ आम तौर पर यही मामला किया जाता रहा। फिर भी चूँकि यह एक अंतर्राष्ट्रीय मसला था जिसे इतनी जल्दी पूर्ण रूप से समाप्त नहीं किया जा सकता था इस लिए इस्लाम ने ग़ुलामों और लौन्डियों (दास और दासियों) के अधिकार निर्धारित किए और उन के सिलसिले में ज़रूरी अहकाम दिए। इस सिलसिले में एक हुक्म यहाँ बयान किया गया है जिस का मतलब यह है कि जो औरतें जंग में गिरफ़्तार हो कर आई हों और उन को हुकूमत ने नियामानुसार मुसलमान व्यक्तियों के क़ब्ज़े में दिया हो उन के पिछले निकाह जो क़ाफ़िर शौहरों के साथ हो चुके हों, बाक़ी नहीं रहेंगे। और जिस व्यक्ति के क़ब्ज़े में ऐसी औरत दी गई हो, उस पर जहाँ उस के पालन पोषण के प्रबन्ध की ज़िम्मदारी आयद होती है वहीं उसे उस के साथ लाभ और आनन्द उठाने का हक़ भी होगा एवं उसे यह हक़ भी होगा कि वह खुद लाभ और आनन्द उठाने के बजाय किसी ज़रुरतमन्द मुसलमान के निकाह में उसे दे दे बशर्ते कि वह मुसलमान हो गई हो लेकिन जैसा कि बादवाली आयत के एहकाम से स्पष्ट है किसी को भी इस बात की हरगिज़ इजाज़त न होगी कि वह लौन्डियों दासियों को वैश्यावृत्ति अथवा काम तृप्ति का साधन बनाए।

यहाँ इस हक़ीक़त को भी नज़रअन्दाज़ नहीं किया जा सकता कि इस्लाम ने जंगी क़ैदियों के मामले में जो पॉलीसी अपनाई उस के फ़ल्सवरुप कितने ही लोगों को ईमान की दौलत नसीब हुई और कितनों ही ने इस्लामी सोसाईटी में बहुत ही ऊँचा स्थान प्राप्त कर लिया।

65. अर्थात् वैवाहिक जीवन से संबन्धित ये एहकाम (आदेश) क़ानूने-इलाही (Divine Law) की हैसियत रखते हैं जिस की पाबन्दी करना बिलकुल अनिवार्य है। इस का खुला तक़ाज़ा यह है कि मुस्लिम सोसाईटी में क़ुर्आन के दिए हुए विवाहिक क़ानून ही लागू होना चाहिए। उस के अलावा किसी भी विवाहिक क़ानून (Family Law) के मान्य होने का सवाल मुसलमानों के लिए पैदा ही नहीं होता ।

66. मतन (Text) में लफ़्ज़ (एहसान) इस्तेमाल हुआ है जिस का मतलब यह है कि पुरुष स्त्री को अपना जीवन साथी बनाने के संकल्प के साथ अपनी सुरक्षा में ले ले और औरत भी इसी इरादे के साथ निकाह के बन्धन में बंधे। किसी औरत से क्षणिक एवं सामयिक (Temporary) सम्बन्ध पैदा करने से यह मक़सद पूरा नहीं होता। इस लिए यह शर्त लगा कर क़ुर्आन ने मुतआ (सामयिक रुप से किसी स्त्री से लाभ एवं आनन्द उठाने) की इस घृणित प्रथा को हमेशा के लिए समाप्त कर दिया जो अज्ञानता काल में प्रचलित थी।

67. अर्थात् पति पत्नी आपस की रज़ामन्दी से निर्धारित मह्र में कमी बेशी कर सकते हैं। इस हिदायत में वर्तमान असीमित मह्र के अनुचित प्रचलन के मसले का हल मौजूद है। कुछ बिरादरियों में बड़ी मेह्र बाँधना एक रस्म के तौर पर चला आ रहा है जिस का मन्शा मात्र निर्धारण करना (बाँधना) होता है ताकि खानदान की नाक ऊँची रहे वरना पति की आर्थिक स्थिति आम तौर से इस की इजाज़त नहीं देती कि वह चालीस तोला सोना जैसी भारी मात्रा में मह्र अदा करे इस लिए अधिकतर इस की अदायगी की नौबत ही नहीं आती जब कि मह्र का असल मन्शा अदा करना है न कि मात्र बाँध देना। इस लिए जिन के ऐसे दिखावटी मह्र निर्धारित किये जा चुके हैं और उन की अदायगी उन के शौहरों के बस की बात न हो वे अपनी पत्नियों को इस पर फिर से विचार के लिए आमादा कर सकते हैं और आपसी रज़ामन्दी से इस में संशोधन हो सकता है।

अल्लाह चाहता है कि तुम पर अपने अहकाम स्पष्ट करे और तुम्हें उन लोगों के तरीक़ों की हिदायत बख़्शे जो तुम से पहले गुज़र चुके हैं। एवं वह चाहता है कि तुम पर अपनी रहमत के साथ आकृष्ट (मुतवज्जेह) हो। अल्लाह सब कुछ जानने वाला है और हिकमतवाला भी।(अल-क़ुर्आन)

25. और जो व्यक्ति तुम में से आज़ाद मोमिन औरतों से निकाह करने का सामार्थ्य न रखता हो वह उन लौन्डियों (दासियों) में से किसी के साथ निकाह कर सकता है जो तुम्हारे क़ब्ज़े में आ गई हों और ईमान वाली हों। अल्लाह तुम्हारे ईमान का हाल अच्छी तरह जानता है,[68] तुम सब एक ही सिलसिले से सम्बन्ध रखते हो।[69] अत: ऐसी औरतों से उन के मालिकों की इजाज़त से निकाह कर लो और सामान्य नियम के अनुसार उन के मह्‌र उन को अदा करो।[70]अलबत्ता यह ज़रुरी है कि उन को निकाह के बन्धन में रखा जाए, न तो वे स्वच्छन्द कामतृप्त करने वाली हों और न चोरी छिपे आश्नाइयाँ (अवैध सम्बन्ध स्थापित) करने वाली। अगर निकाह के बन्धन में बंधने के बाद वे व्यभिचार कर बैठें तो जो सज़ा आज़ाद औरतों के लिए है उस की आधी सज़ा उन के लिए होगी [71](लौन्डियों से निकाह की) यह छूट उन लोगों के लिए है जिन के गुनाह में मुब्तला हो जाने की आशंका हो और अगर तुम सब्र करो तो यह तुम्हारे लिए बेहतर है [72] और अल्लाह माफ़ करने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।

وَمَنْ لَّمْ يَسْتَطِعْ مِنْكُمْ طَوْلًا اَنْ يَّنْكِحَ الْمُحْصَنٰتِ الْمُؤْمِنٰتِ
فَمِنْ مَّا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ مِّنْ فَتَيٰتِكُمُ الْمُؤْمِنٰتِ ؕ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ
بِاِيْمَانِكُمْ ؕ بَعْضُكُمْ مِّنْ بَعْضٍ ۚ
فَانْكِحُوْهُنَّ بِاِذْنِ اَهْلِهِنَّ وَاٰتُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ بِالْمَعْرُوْفِ مُحْصَنٰتٍ
غَيْرَ مُسٰفِحٰتٍ وَّلَا مُتَّخِذٰتِ اَخْدَانٍ ۚ فَاِذَاۤ اُحْصِنَّ فَاِنْ اَتَيْنَ
بِفَاحِشَةٍ فَعَلَيْهِنَّ نِصْفُ مَا عَلَى الْمُحْصَنٰتِ مِنَ الْعَذَابِ ؕ ذٰلِكَ
لِمَنْ خَشِيَ الْعَنَتَ مِنْكُمْ ؕ وَاَنْ تَصْبِرُوْا خَيْرٌ لَّكُمْ ؕ وَاللّٰهُ غَفُوْرٌ
رَّحِيْمٌ ﴿٢٥﴾

26. अल्लाह चाहता है कि तुम पर अपने अहकाम स्पष्ट करे और तुम्हें उन लोगों के तरीक़ों की हिदायत बख़्शे जो तुम से पहले गुज़र चुके हैं।[73] एवं वह चाहता है कि तुम पर अपनी रहमत के साथ आकृष्ट (मुतवज्जेह) हो। अल्लाह सब कुछ जानने वाला है और हिकमतवाला भी।

يُرِيْدُ اللّٰهُ لِيُبَيِّنَ لَكُمْ وَيَهْدِيَكُمْ سُنَنَ الَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِكُمْ
وَيَتُوْبَ عَلَيْكُمْ ؕ وَاللّٰهُ عَلِيْمٌ حَكِيْمٌ ﴿٢٦﴾

27. अल्लाह तो तुम पर अपनी रहमत के साथ मुतवज्जेह (आकृष्ट) होना चाहता है लेकिन जो लोग काम इच्छाओं के पीछे पड़े हैं वे चाहते हैं कि तुम सीधी राह से भटक कर दूर जा पड़ो।

وَاللّٰهُ يُرِيْدُ اَنْ يَّتُوْبَ عَلَيْكُمْ ۫ وَيُرِيْدُ الَّذِيْنَ يَتَّبِعُوْنَ الشَّهَوٰتِ
اَنْ تَمِيْلُوْا مَيْلًا عَظِيْمًا ﴿٢٧﴾

28. अल्लाह चाहता है कि तुम पर से बोझ हल्का कर दे और (वास्तविकता यह है कि) इन्सान कमज़ोर पैदा किया गया है।[74]

يُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّخَفِّفَ عَنْكُمْ ۚ وَخُلِقَ الْاِنْسَانُ ضَعِيْفًا ﴿٢٨﴾

68. अर्थात् सम्मान एवं मर्यादा की असल बुनियाद ईमान है और हो सकता है कि एक लौन्डि (दासी) अपने ईमान के कारण आज़ाद औरत से बेहतर हो।

69. अर्थात् नस्ल के लिहाज़ से सब एक आदम और हव्वा की औलाद हैं चाहे आज़ाद हों चाहे गुलाम इस लिए लौन्डि से निकाह में कोई हरज नहीं है।

70. लौन्डि (दासी) से निकाह की सूरत में मह्र लौन्डि को अदा करने का हुक्म दिया गया है न कि उन के मालिकों को। दूसरे शब्दों में मह्र औरत का हक़ है चाहे वह आज़ाद हो या लौन्डि (दासी), इस से भी यह स्पष्ट होता है कि इस्लाम ने लौन्डियों को मिल्कियत का हक़ (स्वामित्व अधिकार) प्रदान करके सोसाईटी में उन का स्थान कितना बुलन्द किया है।

71. अर्थात् निकाह के बन्धन में बंध जाने के बाद अगर कोई दासी व्यभिचार (ज़िना) कर बैठे तो आज़ाद औरत के लिए जो सज़ा निर्धारित की गई है अर्थात् सौ कोड़े (सूरह नूर आयत २) उस की आधी सज़ा दासी को दी जाएगी। सज़ा में यह रिआयत इस लिए रखी गई है कि दासियों को वह सुरक्षा प्राप्त नहीं थी जो आज़ाद औरतों को प्राप्त थी।

72. दासियों के साथ निकाह करने की इजाज़त उन लोगों के लिए है जो यह भय महसूस करते हों कि अगर उन्हों ने निकाह नहीं किया तो वे गुनाह में लिप्त हो जाऐंगे। जो लोग यह भय न महसूस करते हों उन के लिए सब्र ही बेहतर है।

दूसरे मालिकों की दासियों के साथ निकाह की सूरत में मालिक के अधिकार और पति के अधिकारों को निभाना मुश्किल था इस लिए इस प्रकार के निकाह की हौसला अफ़ज़ाई (प्रोत्साहन) नहीं की गई।

73. मुराद नबियों और स्वालिहीन (नेक लोगों) के तरीक़े हैं। मतलब यह है कि क़ुर्आन वैवाहिक जीवन के लिए उस तरीक़े की रहनुमाई करता है जो हमेशा से खुदा के नबियों और नेक लोगों का तरीक़ा रहा है। इस से यह बात ख़ुद बख़ुद स्पष्ट हो जाती है कि ख़ुदा से सरकशी (उद्दण्डता) करने वाले लोग बाप दादा की पैरवी (अनुकरण) के नाम पर फ़ासिद कल्चर (विकृत सभ्यता) या आधुनिक कल्चर के नाम पर गुमराह करने वाले सिद्धान्त या आधुनिक सिविल कोड (Modern Civil Code) के नाम पर बातिल (ग़लत) क़ानून की तरफ़ तुम्हें भटका कर ले जाना चाहते हैं ।

74. अर्थात मनुष्य अपने स्वाभाव के अनुकूल अनावश्यक और अस्वाभाविक पाबन्दियों का बोझ नहीं उठा सकता अत:उसे ख़ुद अपने बनाए हुए क़ानूनों, शरीअतों और मनगढ़न्त रस्मों के बोझ को उतार फेंकना ज़रुरी है।

इस्लामी शरीअत बनावटी दिखावे से पाक एक सादा शरीअत है जिस में मनुष्य पर उतना ही बोझ डाला गया है जिस को वह अपने स्वभावनुकूल उठा सकता है।

29. ऐ ईमान वालो ! आपस में एक दूसरे के माल बातिल तरीक़े (ग़लत ढंग) से न खाओ [75]अलबत्ता आपसी रज़ामन्दी से लेन देन हो सकता है [76] और एक दूसरे को क़त्ल न करो, [77] अल्लाह तुम पर बड़ा मेहरबान है।[78]

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَاْكُلُوْٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ
اِلَّآ اَنْ تَكُوْنَ تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِّنْكُمْ
وَلَا تَقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُمْ رَحِيْمًا ۝۲۹

30. जो व्यक्ति ज़ुल्म और ज़्यादती के साथ ऐसा करेगा हम उसे ज़रूर आग में झोंकेंगे और यह अल्लाह के लिए बहुत आसान है।

وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ عُدْوَانًا وَّظُلْمًا فَسَوْفَ نُصْلِيْهِ نَارًا ۭ وَكَانَ
ذٰلِكَ عَلَي اللّٰهِ يَسِيْرًا ۝۳۰

31. अगर तुम बड़े बड़े गुनाहों से [79] बचते रहे जिन से कि तुम्हें रोका जा रहा है तो हम तुम्हारी छोटी मोटी बुराइयों को दूर करेंगे और तुम्हें बाइज़्ज़त (सम्मानित) जगह दाख़ील करेंगे।

اِنْ تَجْتَنِبُوْا كَبَاۗىِٕرَ مَا تُنْهَوْنَ عَنْهُ نُكَفِّرْ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ
وَنُدْخِلْكُمْ مُّدْخَلًا كَرِيْمًا ۝۳۱

32. अल्लाह ने जिस चीज़ में एक को दूसरे पर फ़ौक़ियत (प्रधानता) बख़्शी है उस की तमन्ना न करो।[80] मर्दों के लिए उन की अपनी कमाई के अनुसार (परिणाम में) हिस्सा है और औरतों के लिए उन की अपनी कमाई के अनुसार हिस्सा। अलबत्ता अल्लाह से उस का फ़ज़्ल (उदारदान) माँगो। निश्चय ही अल्लाह को हर चीज़ का ज्ञान है।

وَلَا تَتَمَنَّوْا مَا فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعْضَكُمْ عَلٰي بَعْضٍ ۭ لِلرِّجَالِ نَصِيْبٌ
مِّمَّا اكْتَسَبُوْا ۭ وَلِلنِّسَاۗءِ نَصِيْبٌ مِّمَّا اكْتَسَبْنَ ۭ وَسْـَٔــلُوا اللّٰهَ
مِنْ فَضْلِهٖ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِــيْمًا ۝۳۲

33. हम ने माता पिता और सम्बन्धियों में से हर एक के तरके में वारिस मुक़र्रर (निश्चित) किये हैं।[81] रहे वे लोग जिन के साथ तुम प्रतिज्ञाबद्ध हो तो उन को उन का हिस्सा दो [82] यक़ीन जानो अल्लाह हर चीज़ पर निगराँ है।[83]

وَلِكُلٍّ جَعَلْنَا مَوَالِيَ مِمَّا تَرَكَ الْوَالِدٰنِ وَالْاَقْرَبُوْنَ ۭ وَالَّذِيْنَ
عَقَدَتْ اَيْمَانُكُمْ فَاٰتُوْھُمْ نَصِيْبَھُمْ ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ
عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ شَهِيْدًا ۝۳۳

34. मर्द औरतों के सरबराह हैं [84]इस बिना पर अल्लाह ने एक को दूसरे पर प्रधानता प्रदान की है एवं इस बिना पर कि मर्द अपना माल ख़र्च करते हैं।तो जो नेक औरतें हैं वे आज्ञाकारी होती हैं [85] और अल्लाह की हिफ़ाज़त में राज़ की बातों की रक्षा करतीं हैं [86] और जिन औरतों से तुम्हें सरताबी (अवज्ञा) का भय हो उन को समझाओ, सोने की जगहों में उन्हें अकेला छोड़ दो और उन्हें पीट भी सकते हो।[87] फिर अगर वे तुम्हारा कहा मानें तो उन के ख़िलाफ़ कोई बहाना न ढूँढो। यक़ीन जानो अल्लाह बहुत बुलन्द और बहुत बड़ा है।

اَلرِّجَالُ قَوّٰمُوْنَ عَلَي النِّسَاۗءِ بِمَا فَضَّلَ اللّٰهُ بَعْضَھُمْ عَلٰي
بَعْضٍ وَّبِمَآ اَنْفَقُوْا مِنْ اَمْوَالِهِمْ ۭ
فَالصّٰلِحٰتُ قٰنِتٰتٌ حٰفِظٰتٌ لِّلْغَيْبِ بِمَا حَفِظَ اللّٰهُ ۭ وَالّٰتِيْ
تَخَافُوْنَ نُشُوْزَھُنَّ فَعِظُوْھُنَّ وَاهْجُرُوْھُنَّ فِي الْمَضَاجِعِ
وَاضْرِبُوْھُنَّ ۚ فَاِنْ اَطَعْنَكُمْ فَلَا تَبْغُوْا عَلَيْهِنَّ سَبِيْلًا ۭ
اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيًّا كَبِيْرًا ۝۳۴

75. बातिल तरिक़ों (ग़लत ढंग) से मुराद वे तमाम तरीक़े हैं जिन में नैतिक आपत्ति हो या जिन्हें शरीअत ने नाजायज़ क़रार दिया हो।

76. अर्थात् लेन देन वास्तव में आपसी रज़ामन्दी से होना चाहिए। जिस लेन देन में धोका और फ़रेब जैसी चीज़ें शामिल हों वे जायज़ नहीं । रिशवतख़ोरी भी बातिल की परिभाषा में आती है इस लिए कि उस में नैतिक आपत्ति का होना एक वास्तविकता है और इस में दूसरों की मजबूरी से फ़ायदा उठाया जाता है या उस के द्वारा किसी का हक़ छीना जाता है।

77. माल की प्राप्ति के लिए आदमी जब ग़लत तरीक़े अपनाता है तो इस के लिये क़त्ल और मार काट से भी काम लेने लगता है। गोया मार काट और हत्या परिणाम है माल की प्राप्ति के लिए नाजायज़ तरीक़े अपनाने का।

78. और यह उस की मेहरबानी है कि वह तुम को ऐसी बातों से मना कर रहा है जिन में तुम्हारी अपनी बरबादी है।

79. बड़े (कबीरा) गुनाहों से मुराद वे गुनाह हैं जिन की मनाही क़ुर्आन और सही हदीस में वारिद हुई है और जिसे कर बैठने पर सख़्त डरावा सुनाया गया है।हदीस में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने शिर्क,हत्या,माँ बाप की नाफ़रमानी, सूद ख़ोरी,यतीम का माल हड़प कर जाना, जिहाद में मुक़ाबले के वक्त भाग जाना और इसी प्रकार की दूसरी बातों के बड़े गुनाह होने की पुष्टि की है। लेकिन इस का मतलब यह नहीं है कि बड़े गुनाह उन ही चन्द गुनाहों तक सीमित हैं बल्कि बड़े गुनाहों की ये कुछ मिसालें हैं । अत: हज़रत इब्ने अब्बास से जब यह पूछा गया कि क्या कबीरा (बड़े) गुनाह सात हैं तो उन्हों ने फ़रमाया सात के मुक़ाबले में सात सौ होना निकटतम है। (तफ़्सीर इब्ने कसीर जिल्द १ पृष्ट ४८६)

80. अल्लाह तआला ने मर्द और औरत में रचनात्मक अन्तर रखा है। दोनों में प्रकृतिक रुप से समानता नहीं है और इसी कारण उन के अधिकार और उन की ज़िम्मेदारीयों में शरीअत ने अन्तर किया है। अत: मर्दों का औरत बनने की तमन्ना करना या औरतों का मर्द बनने की आरज़ू करना और इस तमन्ना और आरज़ू से प्रभावित हो कर एक दूसरे का रुप धारण करने की चेष्टा क़ुदरत के निज़ाम में ख़लल पैदा करने की कोशिश है और नतीजे के लिहाज़ से बिलकुल बेफ़ायदा है। इसी तरह शरीअत के निश्चित किये हुए अधिकारों और ज़िम्मेदारियों से मुँह मोड़ कर संपूर्ण समानता के सिद्धान्त पर दोनों के अधिकारों और ज़िम्मेदारियों को निर्धारित करना, शरीअत और प्रकृति दोनो से टक्कर लेने के बराबर है। इस लिए इस मानसिकता या ऐसे विचारों से बचने और अल्लाह से उस का फ़ज़्ल (उदार दान) चाहने की प्रार्थना करने की हिदायत इस आयत में की गई है।

81. इशारा विरासत के बंटवारे के उस क़ानून की तरफ़ है जो आयत ७ में बयान हुआ। यह आयत उस बात को और सुदृढ़ तथा उस की ताकिद कर रही है कि असल वारिस वही हैं जो अल्लाह तआला ने मुक़र्रर किए हैं। उन में अपनी इच्छापूर्ति की ख़ातिर किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं करना चाहिए ।

82. अर्थात् वारिस तो वही हैं जो अल्लाह तआला ने मुक़र्रर किये हैं, रहे वे लोग जिन को तुम ने कुछ देने का वादा किया है तो उन को उतना दो जो जायज़ वसीयत की सीमा में आता है। ध्यान रहे कि अज्ञानता काल में लोग एक दूसरे की जायदाद के हक़दार बनने का समझौता करते थे। इस्लाम ने इस तरीक़े को समाप्त कर के निकटतम सम्बन्धियों को असली वारिस निर्धारित किया और जायदाद में सिर्फ एक तिहाई की हद तक वसीयत के लिए गुन्जाइश रखी।

83. इशारा है इस बात की तरफ़ कि अगर विरासत के इस क़ानून से तुम ने मुँह मोड़ा तो यह बात अल्लाह से छिपी नहीं रहेगी।

84. मर्द को अल्लाह तआला ने सरबराही (प्रबन्धक) का दर्जा प्रदान किया है जिस की एक वजह तो यह बयान फ़रमाई है कि मर्द को औरत पर उस की फ़ितरत (प्रकृति) और क़ुदरती बनावट के लिहाज़ से स्पष्ट प्रधानता प्रदान की गई है जिस की बिना पर वह इस ज़िम्मेदारी को उठाने में सक्षम है अत: मर्द हिफ़ाज़त और देख रेख की भी योग्यता रखता है और आर्थिक दौड़ धूप की भी और दूसरी वजह यह है कि बीवी बच्चों के पालन पोषण की ज़िम्मेदारी मर्द पर आयद (लागू) होती है।

पश्चिमी सभ्यता जिसने स्त्री पुरुष की समानता के असंतुलित सिद्धान्त को पेश किया, ख़ानदान के लिए सरबराह की निर्धारण करने में बुरी तरह नाकाम रही है। नतीजा यह कि परिवारिक जीवन अनुशासन (Discipline) से वंचित हो गया। जब कि शक्ति, सक्रियता और साहस की दृष्टि से मर्द की औरतों पर प्रधानता एक ऐसी हक़ीक़त है जिस का इन्कार किया ही नहीं जा सकता :

" A connected result of male superiority in strength, activity and courage is the element of protection in male love and of trust on the side of the female." (—ERE Vlll P. 156).

अधिक व्याख्या के लिए देखिए सूरह बक़र: नोट नं.३३७

85. हदीस में आता है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया :

خیر النساء امراۃ اذا نظرت ، الیها سرتک و اذا امرتها اطاعتک و اِذا اغبت عنها حفظتک فی نفسها و مالک ۔ (تفسیر ابن کثیر بحوالہ ابن جریر)

" बेहतरीन औरत वह है जिसे तुम देखो तो वह तुम्हें ख़ुश करे, जब उसे हुक्म दो तो वह आज्ञा का पालन करे और तुम्हारी अनुपस्थिति में अपनी इच्छा और तुम्हारे माल की हिफ़ाज़त करे ।" (तफ़्सीर इब्ने कसीर, इब्ने जरीर के हवाले से)

आयत से इस विशेषता का नकारात्मक पक्ष भी स्पष्ट होता है अर्थात आज्ञाकारी के विपरीत जो औरतें मर्दों की अवज्ञा करने वाली हों और औरत के बजाय मर्द बन कर रहना चाहती हों वे सदाचारी नहीं बल्कि दुराचारी हैं।

86. अर्थात नेक औरत मर्द के राज़ो की अमानतदार, उस के घर उस के माल और अपनी इज़्ज़त की हिंफ़ाज़त करने वाली होती है।

87. घरेलू व्यवस्था को अनुशासित रखने के लिए कठोरता अपनाने के जो अधिकार मर्द को दिये गए हैं यह उसी सूरत में इस्तेमाल करने के लिए हैं जब कि औरत सरकशी और अवज्ञा पर उतर आए। औरत की तरफ़ से हर तरह की कोताही और ग़लती पर सख़्त क़दम उठाना उचित नहीं है। पिटाई के सिलसिले में हदीस में हिदायत की गई है कि इस तरह नहीं मारना चाहिए कि औरत को तकलीफ़ पहुँचे या उस के शरीर पर निशान पड़ जाए।

औरत को नैतिक सीमा में रखने और घरेलू व्यवस्था को ठीक ठाक रखने के लिए मर्द को यह अधिकार दिया जाना आवश्यक था। किन्तु इस का यह मन्शा हरगिज़ नहीं है कि मर्द इस अधिकार को मन माने ढंग से (Arbitrarily) इस्तेमाल करे। आयत के अन्त में अल्लाह की यह विशेषता कि वह बहुत बुलन्द और बहुत बड़ा है का हवाला मर्द को यह एहसास दिलाने के लिए है कि वह अपनी प्रधानता और सरबराह होने के भ्रम में औरत पर अत्याचार एवं ज़्यादती न करे बल्कि याद रखे कि एक बुलन्द और बड़ी हस्ती उस के ऊपर मौजूद है।

और अल्लाह ही की इबादत करो और किसी चीज़ को उस का साझीदार न ठहराओ। माता पिता के साथ नेक सुलूक करो एवं नातेदारों, यतीमों, मिस्कीनों, नातेदार पड़ोसी, अजनबी पड़ोसी, साथी (सहचर) मुसाफिर और लौंडी (दासी) ग़ुलामों के साथ जो तुम्हारे क़ब्ज़े में हों, अच्छा व्यवहार करो। अल्लाह इतराने वाले और बड़ाई हाँकने वाले लोगों को पसन्द नहीं करता ।(अल-क़ुर्आन)

35. और अगर तुम्हें पति पत्नी के बीच अलगाव पैदा होने की आशंका हो तो एक निर्णायक मर्द के नातेदारों में से और एक निर्णायक औरत के नातेदारों में से मुक़र्रर करो ।[88]अगर दोनों सुलह करा देना चाहेंगे तो अल्लाह दोनों (पति पत्नी) के बीच सहमति पैदा कर देगा अल्लाह सब कुछ जानने वाला और हर बात की ख़बर रखने वाला है।

وَإِنْ خِفْتُمْ شِقَاقَ بَيْنِهِمَا فَابْعَثُوا حَكَمًا مِّنْ أَهْلِهِ
وَحَكَمًا مِّنْ أَهْلِهَا إِن يُرِيدَا إِصْلَاحًا يُوَفِّقِ اللَّهُ بَيْنَهُمَا
إِنَّ اللَّهَ كَانَ عَلِيمًا خَبِيرًا ﴿٣٥﴾

36. और अल्लाह ही की इबादत करो [89] और किसी चीज़ को उस का साझीदार न ठहराओ। माता पिता के साथ नेक सुलूक करो [90] एवं नातेदारों, यतीमों, मिस्कीनों, नातेदार पड़ोसी,[91] अजनबी पड़ोसी, साथी [92] (सहचर) मुसाफिर और लौंडी (दासी) ग़ुलामों [93] के साथ जो तुम्हारे क़ब्ज़े में हों, अच्छा व्यवहार करो। अल्लाह इतराने वाले और बड़ाई हाँकने वाले लोगों को पसन्द नहीं करता । [94]

وَاعْبُدُوا اللَّهَ وَلَا تُشْرِكُوا بِهِ شَيْئًا وَبِالْوَالِدَيْنِ إِحْسَانًا
وَبِذِي الْقُرْبَىٰ وَالْيَتَامَىٰ وَالْمَسَاكِينِ وَالْجَارِ ذِي الْقُرْبَىٰ
وَالْجَارِ الْجُنُبِ وَالصَّاحِبِ بِالْجَنبِ وَابْنِ السَّبِيلِ وَمَا
مَلَكَتْ أَيْمَانُكُمْ إِنَّ اللَّهَ لَا يُحِبُّ مَن كَانَ
مُخْتَالًا فَخُورًا ﴿٣٦﴾

37. जो ख़ुद भी कंजूसी करते हैं और लोगों को भी कंजूसी करने के लिए कहते हैं और अल्लाह ने अपने उदारदान से उन्हें जो कुछ दे रखा है उसे छिपाते हैं। ऐसे नाशुकरी (अकृतज्ञता) करने वालों के लिए हम ने अपमानजनक यातना तैयार कर रखी है।

الَّذِينَ يَبْخَلُونَ وَيَأْمُرُونَ النَّاسَ بِالْبُخْلِ وَيَكْتُمُونَ
مَا آتَاهُمُ اللَّهُ مِن فَضْلِهِ وَأَعْتَدْنَا لِلْكَافِرِينَ
عَذَابًا مُّهِينًا ﴿٣٧﴾

38. जो अपना माल लोगों को दिखाने के लिए ख़र्च करते हैं और न अल्लाह पर ईमान रखते हैं और न अन्तिम दिन (आख़िरत)पर और जिस का साथी शैतान हुआ तो क्या ही बुरा साथी है यह।

وَالَّذِينَ يُنفِقُونَ أَمْوَالَهُمْ رِئَاءَ النَّاسِ
وَلَا يُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ وَلَا بِالْيَوْمِ الْآخِرِ وَمَن يَكُنِ الشَّيْطَانُ
لَهُ قَرِينًا فَسَاءَ قَرِينًا ﴿٣٨﴾

39. उन का क्या बिगड़ता अगर वे अल्लाह और अन्तिम दिन (आख़िरत) पर ईमान रखते और अल्लाह के बख़्शे हुए माल में से ख़र्च करते ? अल्लाह इन को ख़ूब जानता है।

وَمَاذَا عَلَيْهِمْ لَوْ آمَنُوا بِاللَّهِ وَالْيَوْمِ الْآخِرِ وَأَنفَقُوا مِمَّا
رَزَقَهُمُ اللَّهُ وَكَانَ اللَّهُ بِهِمْ عَلِيمًا ﴿٣٩﴾

40. अल्लाह रत्ती भर किसी की हक़ तल्फ़ी (स्वत्व हरण) नहीं करेगा। अगर एक नेकी होगी तो वह उस को कई गुना कर देगा और ख़ास अपने पास से बहुत बड़ा अज्र (बदला) प्रदान करेगा ।[95]

إِنَّ اللَّهَ لَا يَظْلِمُ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ وَإِن تَكُ حَسَنَةً يُضَاعِفْهَا
وَيُؤْتِ مِن لَّدُنْهُ أَجْرًا عَظِيمًا ﴿٤٠﴾

88. पति पत्नी के बीच मन मुटाव होने अथवा बिगाड़ की सूरत में यहाँ एक आख़िरी तदबीर अपनाने की हिदायत की गई है। वह तदबीर यह है कि पति पत्नी दोनों के रिश्तेदारों और क़रीबी लोगों में से एक एक फ़ैसला करने वाला मुक़र्रर किया जाए और यह दोनों मिल कर सुलह सफाई की कोशिश करें। अदालत के मुक़ाबले में यह तरीक़ा ज़्यादा मुनासिब है। क्यों कि अदालत में ले जाने की सूरत में पति पत्नी के मामले सब के सामने आ जाते हैं जो कोई मुनासिब बात नहीं एवं इस से सुलह सफ़ाई की संभावनाऐं भी ख़त्म हो जाती हैं। रहा निर्णायक (हकम) का शब्द इस बात की तरफ इशारा करता है कि दोनों को मिल कर फैसला करने का इख़्तियार होगा। यह फ़ैसला दोनों को मिलाने का भी हो सकता है और उन को जुदा करने का भी और जम्हूर उलमा इसी के क़ायल हैं। (देखिए तफ़्सीर इब्ने कसीर जिल्द १ पृष्ट ४९३)

89.सामाज़िक आदेश के ख़ात्मे (समाप्ति) पर अल्लाह की इबादत करने और उस के साथ किसी को शरीक न ठहराने की हिदायत इस बात की तरफ इशारा करती है कि तमाम शरीअत के एहकाम की बुनियाद तौहीद है और आदमी इस्लाम के सामाजिक एहकाम (आदेश) पर सही तौर से तभी अमल कर सकता है जब कि वह अल्लाह की इबादत ठीक तौर से कर रहा हो। क्योंकि अल्लाह की इबादत बशर्ते कि वह पूर्ण विवेक (शऊर) के साथ हो, इन्सान को इच्छाओं के पीछे चलने और भावनाओं में बह जाने से रोकती है।

90. ख़ुदा के बाद सब से बड़ा हक़ माता पिता का है। इस लिए कि वही परवरिश का माध्यम बने । उन का हक़ यह है कि उन के साथ अच्छा सुलूक किया जाए।

91. पड़ोसी के साथ अच्छा सुलूक करने की हदीस में भी बड़ी ताकीद आई है नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया :

مـازال جبـريـل يـوصيـنى بالجارحتى
ظننت انهٗ سيورثه. (بخاری،مسلم)

''जिब्रील मुझे पड़ोसी के साथ अच्छे व्यवहार की बराबर ताकीद करते रहे यहाँ तक कि मुझे ख़याल हुआ कि वह उसे वारिस क़रार देंगे।''(बुख़ारी, मुस्लिम)

92. मुराद दोस्त हैं और ऐसा व्यक्ति भी जिस का क्षणिक रुप से साथ हो जाए जैसे सफ़र का साथी, व्यापार का साथी, कक्षा का साथी, किसी मजलिस में साथ उठने बैठने वाले इत्यादि। ऐसे लोगों का खयाल रखना चाहिए कि उन्हें कोई कष्ट और तकलीफ़ न पहुँचे और उन के साथ नेक बर्ताव किया जाए।

93. हदीस में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने स्पष्ट फ़रमाया है कि ग़ुलामों के साथ किस प्रकार का व्यवहार किया जाए:

هم اخوانكم خولكم جعلهم اللّٰه تحت ايديكم فمن كان
اخـوه تـحـت يدهٖ فليطعمه مما ياكل وليلبسه مما يلبس
ولا تكلفوهم مما يغلبهم فان كلفتموهم فاعينوهم .
(تفسیر ابن کثیر ج ۱ ص ۴۹۵) (بحوالہ بخاری ومسلم)

''ये तुम्हारे भाई हैं जिन्हे अल्लाह तआला ने तुम्हारे मातहत कर दिया है। तो जिस के मातहत उस का भाई हो उसे चाहिए कि जो खाना वह खाता है वह उसे भी खिलाए और जो कपड़ा वह पहनता है वह उसे भी पहनाए। और देखो उन पर उतना बोझ न डालो जो उन की बर्दाश्त के बाहर हो। और अगर कोई भारी बोझ डालो तो उन की मदद करो ।''

(तफ़्सीर इब्ने कसीर जिल्द १ पृष्ट ४९५) (बुख़ारी मुस्लिम के हवाले से)

94. इतराना,और बड़ाई हाँकना अच्छे व्यवहार का उलटा है। जो लोग अल्लाह की बख़्शी हुई नेमतों को अपनी क़ाबिलिय्यत (योग्यता) का परिणाम समझने लगते हैं उन के अन्दर घमण्ड और अहं पैदा हो जाता है और यह मानसिकता उन्हें लोगों का हक़ अदा करने और उन के साथ नेक सुलूक करने से बाज़ रखती है।

95. हर नेक अमल का इनाम उस से दुगुना मिलेगा। इस के अलावा अल्लाह तआला खास अपनी तरफ़ से भी बदला देगा जो असीमित होगा।

41. उस दिन (इन का) क्या हाल होगा जब हम हर उम्मत में से एक गवाह लाऐंगे और तुम्हें इन लोगों पर गवाह बना कर खड़ा करेंगे ।[96]

فَكَيْفَ إِذَا جِئْنَا مِن كُلِّ أُمَّةٍ بِشَهِيدٍ وَجِئْنَا بِكَ
عَلَىٰ هَٰؤُلَاءِ شَهِيدًا ﴿٤١﴾

42. उस दिन वे लोग जिन्होंने कुफ्र किया था और रसूल की नाफ़रमानी की थी तमन्ना करेंगे कि काश उन के समेत ज़मीन बराबर कर दी जाती। वे अल्लाह से कोई बात छिपा न सकेंगे।

يَوْمَئِذٍ يَوَدُّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَعَصَوُا الرَّسُولَ لَوْ تُسَوَّىٰ
بِهِمُ الْأَرْضُ وَلَا يَكْتُمُونَ اللَّهَ حَدِيثًا ﴿٤٢﴾

43. ऐ ईमान वालों ! नशे की हालत में नमाज़ के क़रीब न जाओ [97] जब तक कि यह न जानो [98] कि तुम क्या कह रहे हो। और जनाबत (नापाकी) की हालत में भी नमाज़ के क़रीब न जाओ [99] जब तक कि गुस्ल (स्नान) न कर लो, यह और बात है कि राह से गुज़र रहे हो [100] और अगर तुम बीमार हो या सफ़र में हो या तुम में से कोई रफ़ा हाजत (शौच) कर के आए या तुम ने औरतों को छुआ हो [101] (सहवास किया हो) और पानी न मिले तो पाक ज़मीन से काम लो।इस से अपने चेहरे और हाथों पर मसह कर लो [102] (अर्थात् हाथ फेर लो) निःसंदेह अल्लाह दरगुज़र करने वाला और क्षमा करने वाला है।[103]

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَقْرَبُوا الصَّلَاةَ وَأَنتُمْ سُكَارَىٰ
حَتَّىٰ تَعْلَمُوا مَا تَقُولُونَ وَلَا جُنُبًا إِلَّا عَابِرِي سَبِيلٍ
حَتَّىٰ تَغْتَسِلُوا ۚ وَإِن كُنتُم مَّرْضَىٰ أَوْ عَلَىٰ سَفَرٍ أَوْ جَاءَ
أَحَدٌ مِّنكُم مِّنَ الْغَائِطِ أَوْ لَامَسْتُمُ النِّسَاءَ
فَلَمْ تَجِدُوا مَاءً فَتَيَمَّمُوا صَعِيدًا طَيِّبًا فَامْسَحُوا
بِوُجُوهِكُمْ وَأَيْدِيكُمْ ۗ إِنَّ اللَّهَ كَانَ عَفُوًّا غَفُورًا ﴿٤٣﴾

44. तुम ने उन लोगों को नहीं देखा जिन्हें [104] किताब का एक हिस्सा दिया गया है ।[105] वे गुमराही मोल ले रहे हैं वे चाहते हैं कि तुम भी राह से भटक जाओ।

أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ أُوتُوا نَصِيبًا مِّنَ الْكِتَابِ يَشْتَرُونَ
الضَّلَالَةَ وَيُرِيدُونَ أَن تَضِلُّوا السَّبِيلَ ﴿٤٤﴾

45. अल्लाह तुम्हारे दुश्मनों को अच्छी तरह जानता है और अल्लाह साथ के लिए भी काफी है और अल्लाह मदद के लिए भी काफ़ी है।

وَاللَّهُ أَعْلَمُ بِأَعْدَائِكُمْ ۚ وَكَفَىٰ بِاللَّهِ وَلِيًّا وَكَفَىٰ
بِاللَّهِ نَصِيرًا ﴿٤٥﴾

46. यहूदियों में कुछ लोग ऐसे हैं जो बात को उस की असल जगह से फेर देते हैं और दीन पर चोट करने के उद्देश्य से ज़बान को तोड़ मरोड़ कर कहते हैं [106] समेअ्ना व असैना (हम ने सुना और नहीं माना) इस्मअ् ग़ैर मुस्मअ् (सुनिए और न सुन सको) और रजिना (हे हमारे चरवाहे)[107] अगर वे समेअ्ना वअतअ्ना (हम ने सुना और माना) और इस्मअ् (सुनिए) और उन्ज़ुरना (हमारी तरफ ध्यान दें) कहते तो इन के हक़ में बेहतर होता और बात भी बिलकुल दुरुस्त होती लेकिन उन के कुफ्र की वजह से अल्लाह ने उन पर लानत कर दी है [108] इस लिए वे कम ही ईमान लाते हैं।

مِّنَ الَّذِينَ هَادُوا يُحَرِّفُونَ الْكَلِمَ عَن مَّوَاضِعِهِ
وَيَقُولُونَ سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا وَاسْمَعْ غَيْرَ مُسْمَعٍ وَرَاعِنَا
لَيًّا بِأَلْسِنَتِهِمْ وَطَعْنًا فِي الدِّينِ ۚ وَلَوْ أَنَّهُمْ قَالُوا سَمِعْنَا
وَأَطَعْنَا وَاسْمَعْ وَانظُرْنَا لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ وَأَقْوَمَ
وَلَٰكِن لَّعَنَهُمُ اللَّهُ بِكُفْرِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُونَ إِلَّا قَلِيلًا ﴿٤٦﴾

96. हदीस में आता है कि जब हज़रत अब्दुल्लाह बिन मसऊद रज़ियल्लाहु अन्हु नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को क़ुर्आन सुनाते हुए इस आयत पर पहुँचे तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम इतना अधिक प्रभावित हुए कि आँखें तर हो गईं क्यों कि यह आयत जहाँ आप के लिए सम्मान एवं प्रतिष्ठा का कारण है वहीं यह आप पर एक बड़ी ज़िम्मेदारी भी आयद करती है क़ियामत के दिन अल्लाह तआला की अदालत में हर पैग़म्बर को यह गवाही देना होगी कि उस ने अल्लाह का दीन बिना किसी लाग लपेट एवं बिना किसी कमी बेशी के उन लोगों तक पहुँचा दिया था जिन की तरफ़ वे भेजे गए थे और हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को भी यह गवाही देना होगी । और क़ुर्आन पुष्टि करता है कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की नियुक्ति दुनिया की तमाम क़ौमों के लिए है आप आख़िरी नबी हैं इस लिए आप की रिसालत का दौर (period) क़ियामत तक के लिए है।

97. मतन (Text) में लफ़्ज़ ''सुकारा'' इस्तेमाल हुआ है, जिस का अर्थ है ''नशे की हालत में'' इस से मालूम हुआ कि हर वह चीज़ जो नशा पैदा करे चाहे वह शराब हो या कोई ठोस चीज़।

शराब के हराम होने का हुक्म सूरह बक़र: आयत २१० में गुज़र चुका है। यहाँ नशे की हालत में नमाज़ की मनाही की गई है ।

(अधिक व्याख्या के लिए देखें सूरह बक़र: नोट ३१६)

98. मालूम हुआ नमाज़ के लिए होश और जागृति आवश्यक है।

99. ''जनाबत'' से मुराद वह नापाकी है जो काम इच्छा की पूर्ति के बाद या स्वप्नदोष की दशा में उत्पन्न होती है। इस हालत में नमाज़ पढ़ना मना है और इस को दूर करने का तरीक़ा यह है कि ग़ुस्ल (स्नान) किया जाए और ग़ुस्ल का बेहद सादा तरीक़ा इस्लाम ने निर्धारित किया है । वह तरीक़ा यह है कि आदमी अपने पूरे शरीर पर पानी बहावे जिस में कुल्ली करना और नाक में पानी डालना भी शामिल है।

100. अर्थात् सफ़र की हालत में ग़ुस्ल की रिआयत हो सकती जैसा कि इसी आयत में आगे बयान कर दिया गया है। यहाँ यह स्पष्ट करना अभिप्रेत है कि जनाबत (नापाकी) की हालत में शरअी उज्र (संवैधानिक कारण) होने की सूरत में जैसे कि सफ़र में पानी का न मिलना इत्यादि. ग़ुस्ल किये बग़ैर नमाज़ पढ़ सकते हो, बशर्ते कि तयम्मुम कर लो जैसा कि इसी आयत में आगे हुक्म दिया गया है।

101. मतन में शब्द ''लामस्तुम'' प्रयोग हुआ है जिस का अर्थ छूने के हैं। अरबी ज़बान में यह जिमाअ (संभोग) के लिए कनाया (संकेत) है (लिसानुल अरब) और हज़रत इब्ने अब्बास से यही तफ़सीर बयान हुई है।

102. इसे शरीअत की परिभाषा में तयम्मुम कहते हैं जो वुज़ू और ग़ुस्ल दोनों की ज़रुरत पूरी करता है। तयम्मुम का तरीक़ा यह है कि पाक मिट्टी पर हाथ मार कर उसे चेहरा और दोनों हाथों पर फेर लिया जाए। इस से उस वास्तविक पाकी के तरीक़े की याद भी ज़ेहन में बनी रहती है और पाकी (तहारत) का एहसास भी बरक़रार रहता है।

मर्ज़ (रोग) में चूँकि वुज़ू या ग़ुस्ल से नुक़सान होने की आशंका होती है इस लिए यह रिआयत हुई कि तयम्मुम किया जाए । इसी तरह सफ़र में ऐसी हालत पेश आ सकती है कि पानी न मिले। तयम्मुम की छूट इस सूरत के लिए भी है। इन दोनों सूरतों पर दूसरी सूरत को क़ियास (समझ कर अन्दाज़ा) किया जा सकता है जैसे कि कड़ाके की ठंड जब कि जनाबत (नापाकी) की हालत हो और नहाने से नुक़्सान का भय हो या किसी मौक़े पर पानी तो मौजूद हो लेकिन इतना कम हो कि उसे पीने के लिए बाक़ी रखना पड़े या रेल और हवाई जहाज़ का सफ़र जिस में ग़ुस्ल करना बहुत मुश्किल हो ऐसी तमाम सूरतों में तयम्मुम की छूट से फ़ायदा उठाया जा सकता है।

निजासत (नापाकी) की यहाँ दो हालतें बयान की गई हैं एक शौच और दूसरे काम इच्छा की तृप्ति । इस हुक्म में दूसरी छोटी मोटी निजासतें (नापाकी की सूरतें) भी दाखिल हैं और हर तरह की निजासत के लिए पानी न मिलने की सूरत में तयम्मुम किया जा सकता है।

103. अर्थात् उस की ये विशेषताऐं इस बात का तक़ाज़ा लिए हुए हैं कि तुम्हारे लिए शरअी एहकाम (संवैधानिक आदेश) में नरमी की जाए और तुम्हें तयम्मुम की छूट दी जाए।

104. ऊपर जो शरअी एहकाम दिये गए उन के सिलसिले में मुसलमानों को जिन लोगों की तरफ़ से मुख़ालफ़त (विरोध) का सामना करना पड़ रहा था उन का ज़िक्र इन आयतों में हो रहा है।

105. पिछले आसमानी ग्रंथों और क़ुर्आन-करीम के बीच अंश और पूर्ण की निस्बत है इस लिए अहले-किताब (यहूदियों और ईसाईयों) को जो किताब दी गई थी उस की हैसियत किताबे-इलाही (ईश्वरीय ग्रंथ) के लिए अशं की थी जब की हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को जो किताब दी गई है वह हर लिहाज़ से एक संपूर्ण किताब (ग्रंथ) है।

106.यहूदी नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की शान में जो गुस्ताखी भरे जुमले कहते थे उसे यहाँ दीन पर चोट करना बताया गया है। मालूम हुआ वह व्यंग्य एवं कटाक्ष जो पैग़म्बर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर किया वह सीधे दीन पर हमला है ।

107. देखिए सूरह बक़र: नोट १२२.

108. मालूम हुआ कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की शान में गुस्ताख़ी का दुस्साहस वही लोग करते हैं जो काफ़िर और सरकश हैं और उन के कुफ्र और सरकशी की वजह से अल्लाह तआला की फिटकार उन पर पड़ी है।

يا أيها الذين أوتوا الكتب آمنوا بما نزلنا مصدقا لما
معكم من قبل أن نطمس وجوها فنردها على أدبارها
أو نلعنهم كما لعنا أصحب السبت
وكان أمر الله مفعولا ٤٧

47. ऐ वे लोगों !जिन्हें किताब दी गई। ईमान लाओ उस (किताब) पर जो हम ने नाज़िल की है और जो उस किताब की पुष्टि और समर्थन करती है जो तुम्हारे पास मौजूद है, इस से पहले कि हम चेहरे बिगाड़ कर पीछे फेर दें [109] या उन पर भी उसी तरह लानत करें जिस तरह ‘‘सब्त’’ वालों पर लानत की थी [110] और अल्लाह की बात तो पूरी हो कर रहती है।

إن الله لا يغفر أن يشرك به ويغفر ما دون ذلك لمن
يشاء ومن يشرك بالله فقد افترى إثما عظيما ٤٨

48. अल्लाह ‘‘शिर्क’’को कभी क्षमा नहीं करेगा।[111] इस के सिवा दूसरे गुनाहों को जिस के लिए चाहेगा माफ़ कर देगा [112] और जो कोई अल्लाह का शरीक ठहराता है वह बहुत बड़े गुनाह का अपराधी होता है ।[113]

ألم تر إلى الذين يزكون أنفسهم بل الله يزكي من
يشاء ولا يظلمون فتيلا ٤٩

49. क्या तुम ने उन लोगों को नहीं देखा जो अपने को पाकीज़ा ठहराते हैं ।[114] हालाँकि पाकीज़गी अल्लाह ही जिसे चाहता है प्रदान करता है।और उन के साथ ज़र्रा (कण) बराबर भी नाइन्साफी नहीं की जाएगी।

انظر كيف يفترون على الله الكذب وكفى به
إثما مبينا ٥٠

50. देखो यह लोग किस तरह अल्लाह पर झूठ बाँध रहे हैं। और उन के खुले गुनाहगार होने के लिए यह एक गुनाह ही काफी है।

ألم تر إلى الذين أوتوا نصيبا من الكتب يؤمنون
بالجبت والطاغوت ويقولون للذين كفروا هؤلاء
أهدى من الذين آمنوا سبيلا ٥١

51. क्या तुम ने उन लोगों को नहीं देखा जिन्हें किताब का एक हिस्सा दिया गया था।ये जिब्त (अंधविश्वास एवं खुराफ़ात)[115] और ताग़ूत (अल्लाह के सिवा दूसरी शक्तियों)[116] पर विश्वास रखते हैं और काफ़िरों के बारे में कहते हैं कि ये लोग ईमानवालों के मुक़ाबले में अधिक सही राह पर हैं ।[117]

أولئك الذين لعنهم الله ومن يلعن الله فلن تجد
له نصيرا ٥٢

52. ये वे लोग हैं जिन पर अल्लाह ने लानत की है और जिन पर अल्लाह लानत कर दे उन का तुम कोई मददगार न पाओगे।

أم لهم نصيب من الملك فإذا لا يؤتون الناس
نقيرا ٥٣

53. क्या इन के क़ब्ज़े में सल्तनत का कोई हिस्सा आ गया है ? अगर ऐसा होता तो यह दूसरों [118] को रत्ती बराबर भी न देते।[119]

109. चेहरा शरीर का बेहतर हिस्सा और अल्लाह की नेअमत का ख़ास द्योतक है। इस नेअमत का तक़ाज़ा यह है कि आदमी अपने पैदा करने वाले का आभारी और कृतज्ञ हो तथा उस का गुणगान करे लेकिन जो कुफ़्र का रवैया अपनाते हैं वे अल्लाह की इस अज़ीम (महान) नेअमत का निरादर करते हैं। वे आँखें रखते हुए भी सत्य देखने के लिए अन्धे हो जाते हैं और मुँह में ज़बान रखते हुए भी सत्य बोलने के लिए गूँगे हो जाते हैं और अपनी देखने, सुनने, और बोलने की शक्तियों का दुरुपयोग करते हैं। इस लिए वे उचित रुप से इस योग्य ठहरे कि उन के चेहरे बिगाड़ कर के पीछे कर दिए जाऐं अत: क़ियामत के दिन उन्हें इस दुख़दायी यातना (दर्दनाक अज़ाब) से दोचार होना होगा। इन्सान अगर होश से काम ले तो यह भयावह चेतावनी उस को झंझोड़ने के लिए काफ़ी है। हज़रत कअब (मशहूर यहूदी विद्वान) इसी आयत को सुन कर ईमान लाए थे।

110. सब्त (सनीचर) वालों का ज़िक्र सूरह बक़र: आयत ६५ में गुज़र चुका है।

111. शिर्क यह है कि अल्लाह की ज़ात और उस की सिफ़ात में किसी को साझीदार ठहराया जाए चाहे वह सूरज हो या तारे, नाग हो या आग, बुत हो या इन्सान, फ़रिश्ते हों या जिन्न वली हों या पैग़म्बर, भौतिक चीज़े हों या आध्यात्मिक, काल्पनिक देवी हो या देवता ।

अल्लाह की ज़ात में शिर्क की एक मिसाल तो वह है जो नसरानियत (ईसाईयों) में पाई जाती है वे एक की जगह तीन ख़ुदाओं के कायल हो गए। बाप, बेटा और रुहुल क़ुद्दस (ख़ुदा की पवित्र रुह जो बीबी मरयम में फ़ूंकी गई थी जिस से हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम पैदा हुए) और दूसरी मिसाल हिन्दुस्तान के बहुत बड़े धार्मिक समूह के अक़ीदे (आस्था) की है जो सृष्टि और सृष्टा में अन्तर नहीं करता बल्कि एक ही अस्तित्व का क़ायल है।

अर्थात उस के नज़्दीक सब कुछ ख़ुदा है और इन्सान भी ख़ुदा ही का एक भाग है इस सिद्धान्त को ''हम:ओस्त'' अर्थात् सब कुछ ख़ुदा है, ख़ुदा के सिवा किसी वस्तु का अस्तित्व नहीं, या वह्दतुलवजूद अर्थात सारी रचनाओं को ख़ुदा का अंग मानना, कहते हैं।

अल्लाह की सिफ़ात में शिर्क की मिसाल यह अक़ीदा है कि अल्लाह के प्रबन्ध और उस की व्यवस्था और उस के इक़्तिदार (Sovereignty) में दूसरे भी शामिल और शरीक हैं, जैसे कोई बारिश का देवता है और कोई हवा का या कोई बीमारी की देवी है और कोई दौलत की। इसी तरह वलियों और बुज़ुर्गों के बारे में यह तसव्वुर कि यह ग़ौस (फ़रयाद सुनने वाले) और मुश्किल कुशा (मुश्किलों को दूर करने वाले) हैं और ज़रूरतों को पूरा करते हैं, ज़ाहिर है कि यह अल्लाह की उस सिफ़त में कि वही रब (पालनहार) और ज़रूरतों को पूरा करने वाला है, दूसरों को साझीदार बनाना या शरीक ठहराना है । अल्लाह तआला की एक महत्वशाली सिफ़त यह है कि वही परस्तिश (उपासना) के लायक है और उसी का यह हक़ है कि बन्दे उसी की इबादत करें।

इस में शिर्क यह है कि इस में आदमी अल्लाह के सिवा दूसरों (ग़ैरुल्लाह) को भी इबादत के योग्य समझने लगे या किसी देवी देवता बुत और सूरज इत्यादि की पूजा करने लगे या वलियों और नबियों की परस्तिश शुरू कर दे। ये शिर्क की सूरतें हैं इन के अलावा यह भी खुला शिर्क है कि अल्लाह के सिवा किसी को स्वतंत्र रुप से आज्ञा देने का अधिकार सौंप दिया जाए और फ़िर उस का पालन भी किया जाए या किसी के बारे में यह स्वीकार किया जाए कि वह शरअी क़ानून में परिवर्तन एवं संशोधन का हक़ रखता है या जम्हूर (जनतंत्र) के इस दावे को सही ठहराया जाए कि अल्लाह के आदेश और क़ानून से अलग हटकर उन्हें हर तरह के क़ानून बनाने का अधिकार है।

शिर्क चूँकि उस प्रकृति के विरुद्ध है जिस पर इन्सान को अल्लाह तआला ने पैदा फ़रमाया है और यह सरासर उस के विरुद्ध उद्दंडता और बग़ावत है इस लिए इस को सब से बड़ा जुर्म और कभी माफ़ न किया जाने वाला गुनाह क़रार दिया गया है।

यहाँ यह बात भी समझ लेनी चाहिए कि शिर्क के हुक्म (Category) में कुफ़्र (इन्कार) और इल्हाद (अनीश्वरवाद) भी शामिल है क्योंकि इस का अर्थ भी अल्लाह से उद्दंडता और बग़ावत ही हैं और अल्लाह का इन्कार कर के आदमी अपने को एवं दूसरे इन्सानों को ख़ुदा के स्थान पर बैठाता है ज़ाहिर है कि इस तरह वह अनिवार्य रूप से शिर्क का अपराधी होता है । फ़र्क सिर्फ़ यह है कि शिर्क धर्म के चोले में सामने आता है और इल्हाद (अनीश्वरवाद) अधर्म के रूप में । आयत के पृष्टभूमि में चूँकि यहूदी हैं जो ख़ुदा को मानते हुए शिर्क करते रहते थे इस लिए यहाँ स्पष्ट किया गया कि शिर्क कभी माफ़ न किया जानेवाला गुनाह है।

112. अर्थात शिर्क से कमतर श्रेणी के जो गुनाह होंगे उन के माफ़ होने की संभावना है लेकिन शिर्क पर अगर आदमी क़ायम रहा और उस ने तौबा नहीं की और इसी हाल में उस की मौत हो गई तो उस के गुनाह के बारे में अल्लाह का यह फ़ैसला है कि वह हरगिज़ माफ़ नहीं किया जाएगा।

113. अर्थात् शिर्क और बुतपरस्ती को मामूली गुनाह न समझो, वास्तव में यह प्रचंड गुनाह हैं और क़ियामत के दिन

मुश्रिकों (बहुदेववादियों) और बुत परस्तों के ख़िलाफ़ बग़ावत का मुक़दमा चलाया जाएगा।

114. अर्थात् धर्म का चोला पहन कर अपने को बड़ा धार्मिक और पवित्रात्मा प्रदर्शित करते हैं जब कि ये शिर्क की गन्दगी से अटे पड़े हैं और गुनाह पर इतने ढीट हो गए हैं कि उन्हें मन गढ़न्त बातों को धर्म के नाम से प्रस्तुत करने और उसे ख़ुदा से जोड़ देने में कोई ख़राबी नहीं महसूस होती।

स्पष्ट रहे कि यहूदी अपने अक़ीदे और अमल की इन तमाम ख़राबीयों के बावजूद इस बात के दावेदार थे कि हम अल्लाह के बड़े चहीते हैं।

115. मतन (Text) में लफ़्ज़ ''ज़िब्त'' इस्तेमाल हुआ है जिस का अर्थ बेफ़ायदा एवं निराधार चीज़ के हैं, यहाँ इस से मुराद अंधविश्वास, वहम, ख़ुराफ़ात और सिफ़ली आमाल के हैं जिन का सिरा शिर्क से जा मिलता है, जैसे जादू, टोने, टोटके, रमल, जफ़र (गिनतियों एवं रेखाओं द्वारा भविष्यवाणी) ज्योतिष, फ़ालगीरी बदशगुनी वग़ैरा तथा यह जादूगर, ज्योतिषी दैवज्ञ (काहिन) बुत और ग़लत एवं निराधार उपास्यों पर भी लागू होता है।

हदीस में आया है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया:

العيافة والطرق والطيرة من الجبت،

(مشكوة بحواله ابوداؤد)

''जानवरों के नामों, उन की आवाज़ो और उन के गुज़रने से शगुन लेना, कंकरियां मार कर या रेखा खींच कर कहानत (ज्योतिष) करना एवं हर प्रकार की बदशगुनी 'जिब्त' की श्रेणी से है।'' (मिश्कात अबूदाऊद के हवाले से)

वहम परस्ती (अंधविश्वास) और शिर्क का चोली दामन का साथ है और धर्म के ठेकेदारों ने अपने अपने धर्म में अंधविश्वास एवं ख़ुराफ़ात अर्थात् निराधार बातों को ख़ूब ख़ूब दाखिल किया है लेकिन इस्लाम का दामन इन चीज़ों से बिल्कुल पाक है। इस की बुनियाद वास्तविकताओं पर है और इस ने वहम परस्ती की जड़ काट दी है। वर्तमान मुस्लिम समाज में जो वहम,अंधविश्वास, और ख़ुराफ़ात पाये जाते हैं उन का इस्लाम से कोई सम्बन्ध नहीं है । इस्लाम उन का सख़्त विरोधी है।

116. तागूत की व्याख्या सूरह बक़र: नोट नं. ४१८ में गुज़र चुकी हैं।

यहाँ विशेष रुप से वे धार्मिक पेशवा मुराद हैं जो फ़ासिद (विकृत) धारणाओं की ओर रहनुमाई करतें हैं। ऐसे लोगों के साथ श्रद्धा रखने को तागूत पर विश्वास एवं आस्था रखना बताया गया है।

117. यहूदियों को मुसलमानों से ऐसी ईर्ष्या पैदा हो गई थी कि वे बुत परस्तों को एकेश्वरवादियों (तौहिदवालों) के मुक़ाबले में हक़ पर क़ायम ठहराने लगे थे जब कि उन का धार्मिक ग्रंथ ''तौरात'' बुत परस्ती को खुली गुमराही क़रार देती है ।

118. मुराद मुसलमान हैं ।

119. अर्थात् अगर मदीना में उन की सल्तनत क़ायम होती तो ये अपनी संकीर्णता और विद्वेष के कारण मुसलमानें को हर फ़ायदे से वंचित रखने की कोशिश करते, लेकिन अल्लाह तआला ने उन्हें इस का मौक़ा नहीं दिया इस लिए वे मुसलमानों की उभरती हुई ताक़त देख कर अन्दर ही अन्दर जल रहे हैं। स्पष्ट रहे कि मदीना के किनारे किनारे यहूदियों की जो आबादियाँ थीं उन की हैसियत आज़ाद क़बीलों की थी। इस क्षेत्र से बाहर मदीने की आम आबादी पर उन का कोई नियंत्रण न था।

और जो लोग ईमान लाए और नेक अमल किए उन को हम ऐसे बाग़ों में दाख़िल करेंगे जिन के नीचे नहरें बहती होंगी वे उन में हमेशा हमेशा रहेंगे। उन के लिए वहाँ पाकीज़ा बीवीयाँ होंगी एवं उन्हें हम घनी छाँव में दाख़िल करेंगे।(अल-क़ुर्आन)

54. या फिर ये लोगों से इस कारण ईर्ष्या कर रहे हैं कि अल्लाह ने उन्हें अपने फ़ज़्ल (उदारदान) से नवाज़ा है।[120] अगर यह बात है तो (इन्हें इस बात को भूलना नहीं चाहिए कि) हम ने इब्राहीम की सन्तान को किताब और हिकमत (गहरी समझ) से नवाज़ा था और महान राज्य (अज़ीम सल्तनत) भी प्रदान किया था।[121]

اَمْ يَحْسُدُوْنَ النَّاسَ عَلٰى مَآ اٰتٰهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ ۚ
فَقَدْ اٰتَيْنَآ اٰلَ اِبْرٰهِيْمَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ
وَاٰتَيْنٰهُمْ مُّلْكًا عَظِيْمًا ﴿۵۴﴾

55. मगर उन में से कोई उस पर ईमान लाया और किसी ने मुँह मोड़ा । और (मुँह मोड़ने वालों के लिए) जहन्नम की भड़कती हुई आग काफ़ी है।

فَمِنْهُمْ مَّنْ اٰمَنَ بِهٖ وَمِنْهُمْ مَّنْ صَدَّ عَنْهُ ۭ وَكَفٰى بِجَهَنَّمَ
سَعِيْرًا ﴿۵۵﴾

56. जिन लोगों ने हमारी आयतों का इन्कार किया उन को हम आग में झोंक देंगे। और जब कभी ऐसा होगा कि उन के बदन की खाल पक जाएगी, हम उस की जगह दूसरी खाल पैदा कर देंगे ताकि वे (अच्छी तरह) अज़ाब (यातना) का मज़ा चखें। निश्चय ही अल्लाह तआला ज़बरदस्त क़ुदरतवाला है और हक़ीम (तत्वदर्शी) भी है।[122]

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِاٰيٰتِنَا سَوْفَ نُصْلِيْهِمْ نَارًا ۭ كُلَّمَا نَضِجَتْ
جُلُوْدُهُمْ بَدَّلْنٰهُمْ جُلُوْدًا غَيْرَهَا لِيَذُوْقُوا الْعَذَابَ ۭ
اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَزِيْزًا حَكِيْمًا ﴿۵۶﴾

57. और जो लोग ईमान लाए और नेक अमल किए उन को हम ऐसे बाग़ों में दाख़िल करेंगे जिन के नीचे नहरें बहती होंगी वे उन में हमेशा हमेशा रहेंगे। उन के लिए वहाँ पाकीज़ा बीवीयाँ होंगी एवं उन्हें हम घनी छाँव में दाख़िल करेंगे।

وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ سَنُدْخِلُهُمْ جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ
تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۭ لَهُمْ فِيْهَآ اَزْوَاجٌ مُّطَهَّرَةٌ ۡ
وَّنُدْخِلُهُمْ ظِلًّا ظَلِيْلًا ﴿۵۷﴾

58. अल्लाह तुम्हें हुक्म देता है कि अमानतों को उन के हक़दारों के हवाले करो ।[123] और जब लोगों के बीच फ़ैसला करो तो इन्साफ़ के साथ फ़ैसला करो ।[124] अल्लाह तुम्हें बेहतरीन बात की नसीहत करता है। निश्चय ही अल्लाह सब कुछ सुनने वाला और सब कुछ जानने वाला है।

اِنَّ اللّٰهَ يَاْمُرُكُمْ اَنْ تُؤَدُّوا الْاَمٰنٰتِ اِلٰٓى اَهْلِهَا ۙ وَاِذَا حَكَمْتُمْ
بَيْنَ النَّاسِ اَنْ تَحْكُمُوْا بِالْعَدْلِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ نِعِمَّا يَعِظُكُمْ بِهٖ ۭ اِنَّ
اللّٰهَ كَانَ سَمِيْعًۢا بَصِيْرًا ﴿۵۸﴾

59. ऐ ईमान वालो ! अल्लाह का कहा मानो, रसूल का कहा मानो और उन लोगों का जो तुम में से साहबे-अम्र[125] (आदेश देने के अधिकारी) हों। फिर अगर तुम्हारे बीच किसी मामले में झगड़ा उत्पन्न हो जाए तो उस को अल्लाह और उस के रसूल की तरफ़ लौटाओ[126] अगर तुम अल्लाह और अन्तिम दिन (आख़िरत) पर ईमान रखते हो। यह तरीक़ा भलाई की बुनियाद भी है और बेहतर परिणाम का कारण भी।[127]

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَاَطِيْعُوا الرَّسُوْلَ وَاُولِي
الْاَمْرِ مِنْكُمْ ۚ فَاِنْ تَنَازَعْتُمْ فِيْ شَيْءٍ فَرُدُّوْهُ اِلَى اللّٰهِ
وَالرَّسُوْلِ اِنْ كُنْتُمْ تُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ۭ
ذٰلِكَ خَيْرٌ وَّاَحْسَنُ تَاْوِيْلًا ﴿۵۹﴾

120. अर्थात् उन्हें नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और उन के अनुयाईयों से इस लिए ईर्ष्या है कि नुबुव्वत जो उन के वंश (अर्थात् बनी इस्राईल) में चली आ रही थी वह दूसरे वंश (अर्थात् बनी इस्माईल) में किस तरह चली गई।

121. यहाँ यह बात बनी इस्राईल के ज़ेहन में बिठाना अभिप्रेत है कि इब्राहीम की औलाद तुम भी हो और बनी इस्माईल भी हैं। आज अगर हम ने बनी इस्माईल को किताब और हिकमत से नवाज़ा है और उन्हें इक़्तिदार बख़्श रहे हैं तो इस में जलने की क्या बात है। यह अल्लाह का फ़ज़्ल (अनुग्रह) है और वह जिसे चाहे बख़्शे। वैसे तुम्हें इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि वह इस से पहले तुम्हें भी किताब और हिकमत से नवाज़ चुका है और ज़बरदस्त सल्तनत भी प्रदान कर चुका है (उदाहरणार्थ हज़रत दाऊद और हज़रत सुलेमान की सल्तनत) लेकिन तुम ने अल्लाह की इन नेअमतों का निरादर किया और अपने अयोग्य होने का परिचय दिया इस लिए अल्लाह तआला ने अपने इस फ़ज़्ल के लिए इब्राहीम अलैहिस्सलाम के वंश की दूसरी शाख़ बनी इस्माईल का चुनाव किया।

122. इन सिफतों का हवाला देने से अभिप्रेत यह स्पष्ट करना है कि इतना कठोर दंड देने पर अल्लाह को सामर्थ्य प्राप्त है और उस की हिकमत का तक़ाज़ा भी यही है कि सरकशों को ऐसा कठोर दंड दिया जाए वरना कायनात की व्यवस्था हक़ और इन्साफ़ पर क़ायम नहीं रह सकेगी ।

123. अमानतों में आम अमानतें भी शामिल हैं, जैसे डिपाजिट,वाजिबुल-अदा कर्ज़े वग़ैरा और ज़िम्मेदारी के कार्य और उस के पद भी चाहे उन का सम्बन्ध नेतृत्व से हो या हुकूमत से। इस दूसरे भाव की ताईद संदर्भ से होती है एवं ज़िम्मेदारी के कार्य और उस के पद के लिए अमानत का लफ़्ज़ हदीस में भी इस्तेमाल हुआ है अत: इस सवाल के जवाब में कि क़ियामत कब आएगी, आप ने फ़रमाया :

اذا ضيعت الامانة فانتظر الساعة قال كيف
اضاعتها قال اذاوسد الامرُ الى غير اهله
فانتظر الساعة . (بخاری)

''जब अमानत नष्ट की जाने लगे तो क़ियामत का इन्तिज़ार करो, पूछा अमानत का नष्ट करना क्या है?फ़रमाया जब मामलात (हुकूमत) नाअहलों (अयोग्य लोगों) के हवाले कर दिए जाएें तो क़ियामत का इन्तिज़ार करो।'' (बुख़ारी)

मालूम हुआ की नेतृत्व तथा मार्गदर्शन और राजनीति तथा हुकूमत की ज़िम्मेदारियों के पद अयोग्य, दुराचारी, ज़ालिम, बददयानत और फ़ासिक एवं फ़ाजिर (अवज्ञाकारी एवं पापी) लोगों के सुपुर्द करना आम बिगाड़ और भयावह तबाही को न्योता देने जैसा है। (उसूली बात यही है रही हालात की मजबूरी तो उस का सम्बन्ध इज्तिहाद से है।)

अमानत का लफ़्ज़ इस बात की तरफ़ इशारा करता है कि ये ज़िम्मेदारीयाँ अल्लाह की तरफ़ से सुपुर्द की हुई अमानतें हैं जिन के बारे में उस के सामने जवाबदेही करनी होगी।

124. इशारा इक़्तिदार (सत्ता) की ज़िम्मेदारी की तरफ़ है और हिदायत यह की जा रही है कि अल्लाह की तरफ़ से सत्ता पाने के बाद तुम्हारी पहली ज़िम्मेदारी यह बनती है कि लोगों के बीच न्याय एवं समानता के साथ फ़ैसला करो ।

125. उलुलअम्र (साहबे अम्र अथवा आदेश देने के अधिकारी) से मुराद सत्ताधारी समूह (Men of Authourity) हैं चाहे उन का संबंध हुकूमत के किसी भी विभाग से हो। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम जिहाद के लिए जो फ़ौजी दस्ते रवाना करते थे उन पर किसी को अमीर (सरदार) नियुक्त फ़रमाते थे। ''मिनकुम'' का लफ़्ज़ पुष्टि करता है कि यहाँ वे सत्ताधारी लोग मुराद हैं जो मुसलमानों में से हों। उन का कहना मानना इस लिए ज़रूरी रखा गया है कि इस्लाम के सामाजिक आदेश का पालन हो, उस के क़ानून को लागू किया जा सके, सोसाईटी को बेहतर बनाने में मदद मिले और एक न्याय एवं समानता पर आधारित व्यवस्था स्थापित हो और सब से बड़ी बात यह कि हक़ का कलमा सरबुलन्द हो, आदेश देने के अधिकारियों के अनुपालन के सिलसिले में निम्न बातों का लिहाज़ रख़ना ज़रूरी है।

(A) इस आयत में अल्लाह, रसूल और उलुल अम्र का कहा मानने का हुक्म दिया गया है। इस हुक्म में इताअत (कहा मानने) का हुक्म दो जगह बयान हुआ है, एक अल्लाह के साथ दूसरा रसूल के साथ जब की उलुल अम्र (आदेश देने वाले अधिकारी) के साथ यह लफ़्ज़ इस्तेमाल नहीं हुआ है, इस से यह स्पष्ट करना अभिप्रेत है कि वास्तविक आज्ञापालन और वफ़ादारी अल्लाह की है और उस के बाद उस के रसूल की, रहा उलुलअम्र का अनुपालन तो वह इन दो फ़रमांबरदारियों के अधीन है इन से आज़ाद हरगिज़ नहीं।

(B) यहाँ उलुलअम्र की फ़रमाबरदारी का जो हुक्म दिया गया है इस को उन हुक्मरानों पर लागू करना उचित नहीं जिन्हों ने अल्लाह और उस के रसूल की फ़रमाँबरदारी का पट्टा अपनी गर्दन से उतार फ़ेंका, या जिस का मिशन ही अल्लाह से बगावत पर लोगों को आमादा करना हो या जो लादीनी (अधर्म की) हुकूमत का प्रतिनिधित्व

करते हों या खुद फ़िरऔन बन बैठे हों।

(C) उलुल अम्र (आदेश देने के अधिकारी) का कहा मानने का हुक्म उस वक्त तक है जब तक कि वे अल्लाह और उस के रसूल के हुक्म के ख़िलाफ़ कोई हुक्म न दें। अगर वे कोई ऐसा हुक्म दें जो अल्लाह और उस के रसूल के ख़िलाफ़ हो तो इस सूरत में उन की फ़रमांबरदारी का कोई सवाल पैदा नहीं होता। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की हदीस है।

لا طاعة لمخلوق فی معصیة الخالق -

''ख़ालिक (सृष्टा) की नाफ़रमानी में मख़्लूक़ (सृष्टि) की इताअत जायज़ नहीं ।

(D) इस आयत में आदेश देने के अधिकारियों का कहा मानने का जो सकारात्मक आदेश दिया गया है उस का भावार्थ वही है जो ऊपर बयान किया गया है इस से यह नकारात्मक अर्थ निकालना सही नहीं कि अगर मुसलमान किसी ग़ैर इस्लामी हुकूमत के मातहत हों तो वहाँ उन के लिए अव्यवस्था (Anarchy) की सूरत पैदा करना वैध है। वर्तमान सत्ता व्यवस्था में क़ानून की हुक्मरानी होती है इस लिए इस से अलग हट कर कि क़ानून बनाने वाले लोग कौन हैं और कैसे हैं, क़ानून अगर बजाए ख़ुद अल्लाह और उस के रसूल के हुक्म से नहीं टकराता या इस्लाम ने मुबाहात (वैध एवं उचित कार्यो) का बड़ा दायरा रखा है, उस से सम्बन्धित है तो उस की पाबन्दी इस्लाम के मंशा के ख़िलाफ़ हरगिज़ नहीं, और दूसरी सूरत में लाचारी और मजबूरी की हद तक गवारा किया जा सकता है।

126. अल्लाह और रसूल की तरफ़ लौटाने से मुराद किताब और सुन्नत की तरफ़ पलटना है।

ऊपर आदेश देने वाले अधिकारियों का कहा मानने का हुक्म दिया गया था। यहाँ यह हिदायत दी जा रही है कि इख़्तिलाफ़ (मतभेद) पैदा हो जाने की सूरत में किताब (क़ुर्आन) और सुन्नत (हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के तरीक़े और उन के आदेश) की तरफ़ पलटो। यह हिदायत दोनों के लिए है, उन के लिए भी जिन को उलुलअम्र की फ़रमांबरदारी करना है और उन के लिए भी जो उलुलअम्र (आदेश देनेवाले अधिकारी) हैं। यह एक व्यापक हिदायत है जिस से निम्न बातों पर रौशनी पड़ती है।

(A) मुसलमानों को सत्ताधारी लोगों से मतभेद करने का अधिकार है और इस सूरत में निर्णायक चीज़ किताब और सुन्नत हैं।

(B) इस अधिकार का तक़ाज़ा यह है कि आम मुसलमानों को सत्ताधारी लोगों पर आलोचना की आज़ादी का अधिकार प्राप्त हो।

(C) मतभेद चाहे उम्मत के बीच हो या हुकूमत और अवाम के बीच या स्वयं आदेश देने के अधिकारियों के अन्दर,फ़ैसले के लिए क़ुर्आन और सुन्नत की तरफ़ पलटना चाहिए और जो फ़ैसला वहाँ से मिले उस के सामने सब को सर झुका देना चाहिए ।

(D) हक़ की कसौटी अल्लाह की किताब और उस के रसूल की सुन्नत है इस लिए उलमा, बुज़ुर्ग, इमामों, फ़क़ीहों (धर्मशास्त्रियों) और क़ायदीन (Leaders) सब के कथनों को उसी कसौटी पर परखना चाहिए । इन में से कोई भी हक़ की कसौटी नहीं है कि उस का क़ौल और अमल (कथनी और करनी) अनिवार्य रुप से सही हो या अन्तिम शब्द अथवा निर्णायक की हैसियत रखता हो।

(E) इमाम के मासूम होने का विचार जैसा कि मुसलमानों के कुछ समुदायों की धारणा है सरासर ग़लत है। अगर यह सही होता तो आम मुसलमानों को उन से मतभेद करने का हक़ नहीं दिया जाता और आम मुसलमानों के आपस के मतभेद की सूरत में इमाम की तरफ़ पलटने का हुक्म दिया जाता जब कि इस आयत से इन दोनों बातों का खण्डन होता है। चर्च की मासूमियत जैसी कोई धारणा इस्लाम में हरगिज़ नहीं।

(F) किताब और सुन्नत की तरफ़ पलटने का मतलब यह है कि जिन मसलों में किताब और सुन्नत के खुले और स्पष्ट आदेश मौजूद हैं उन का उसी तरह पालन किया जाए और अगर हालात ने कोई नया मसला पैदा कर दिया हो तो किताब और सुन्नत की दलील को सम्बन्धित मसले में निर्णायक स्वीकार किया जाए। और इशारों और तक़ाज़ों को सामने रख कर यह मालूम किया जाए कि कौन सी बात किताब और सुन्नत से अधिक निकट एवं अनुकूल हैं। क़ुर्आन और सुन्नत से रहनुमाई हासिल करने के इस तरीक़े को क़ियास और इज्तिहाद कहते हैं।

127. हर तरह के मतभेदों में चाहे वे धार्मिक हों या राजनैतिक हों, क़ुर्आन और सुन्नत की तरफ़ पलटना ईमान का ख़ुला तक़ाज़ा है । इस से दुनिया में भी भलाई हासिल होती है और आखिरत में भी इस का बेहतरीन फ़ल मिलेगा।

जब उन से कहा जाता है कि आओ उस (हुक्म) की तरफ़ जो अल्लाह ने नाज़िल फ़रमाया है और आओ रसूल की तरफ़ तो तुम देखते हो कि मुनाफ़िक़ीन तुम से कतराने लगते हैं।(अल-क़ुर्आन)

60. क्या तुम ने उन लोगों को नहीं देखा जिनका दावा तो यह है कि जो किताब तुम पर नाज़िल की गई है उस पर एवं जो तुम से पहले नाज़िल की गई थी उस पर भी वे ईमान रखते हैं लेकिन चाहते हैं कि अपने मामले के फैसले के लिए ताग़ूत (सरकशों) के पास ले जाऐं [128] हालाँकि उन्हें इस से इन्कार का हुक्म दिया गया था। और शैतान चाहता है कि उन्हें भटका कर बहुत दूर ले जाए।

ألم تر إلى الذين يزعمون أنهم آمنوا بما أنزل إليك
وما أنزل من قبلك يريدون أن يتحاكموا إلى الطاغوت
وقد أمروا أن يكفروا به ويريد الشيطان أن
يضلهم ضلالا بعيدا ﴿٦٠﴾

61. जब उन से कहा जाता है कि आओ उस (हुक्म) की तरफ़ जो अल्लाह ने नाज़िल फ़रमाया है और आओ रसूल की तरफ़ तो तुम देखते हो कि मुनाफ़िक़ीन तुम से कतराने लगते हैं।[129]

وإذا قيل لهم تعالوا إلى ما أنزل الله وإلى الرسول
رأيت المنافقين يصدون عنك صدودا ﴿٦١﴾

62. तो उस समय उन का क्या हाल होगा जब कि उन की इन हरकतों की वजह से उन पर मुसीबत आ पड़ेगी ? उस समय वे तुम्हारे पास अल्लाह की क़समें खाते हुए आऐंगे कि हम तो भलाई चाहते थे और हमारा मक़सद तो (दोनों के बीच) सहमति पैदा करना था।[130]

فكيف إذا أصابتهم مصيبة بما قدمت أيديهم
ثم جاءوك يحلفون بالله إن أردنا إلا إحسانا
وتوفيقا ﴿٦٢﴾

63. इन लोगों के दिलों में जो कुछ है उसे अल्लाह जानता है तो इन को नज़र अन्दाज़ करो और इन्हें नसीहत करो और इन से ऐसी बात कहो जो इन के दिलों में उतर जाने वाली हो।[131]

أولئك الذين يعلم الله ما في قلوبهم فأعرض عنهم
وعظهم وقل لهم في أنفسهم قولا بليغا ﴿٦٣﴾

64. हम ने जो रसूल भी भेजा इस लिए भेजा कि अल्लाह के हुक्म से उस का आज्ञापालन किया जाए।[132] और ये लोग जब अपने नफ़्स पर ज़ुल्म कर बैठे थे अगर तुम्हारी ख़िदमत में हाज़िर होते और अल्लाह से माफ़ी माँगते और रसूल भी इन के लिए माफ़ी की दुआ करता [133] तो निश्चय ही वे अल्लाह को तौबा क़ुबूल करने वाला और रहम फ़रमाने वाला पाते।

وما أرسلنا من رسول إلا ليطاع بإذن الله ولو أنهم
إذ ظلموا أنفسهم جاءوك فاستغفروا الله واستغفر
لهم الرسول لوجدوا الله توابا رحيما ﴿٦٤﴾

65. मगर नहीं (ऐ पैग़म्बर !) तुम्हारे रब की कसम, ये लोग मोमिन नहीं हो सकते जब तक कि ये अपने विवादित मामलों में तुम्हें फ़ैसला करने वाला मान न लें। फिर जो फ़ैसला तुम करो उस पर अपने दिलों में भी कोई तंगी महसूस न करें बल्कि उसे सर आँखों से स्वीकार कर लें [134]।

فلا وربك لا يؤمنون حتى يحكموك فيما شجر
بينهم ثم لا يجدوا في أنفسهم
حرجا مما قضيت ويسلموا تسليما ﴿٦٥﴾

128. Text में लफ़्ज़ तागूत इस्तेमाल हुआ है जिस की व्याख्या इस से पहले गुज़र चुकी (सूरह निसा नोट नं. ११६ और सूरह बक़र: नोट नं. ४१८ देखिये)

यहाँ तागूत का लफ़्ज़ किताब और सुन्नत के प्रतिद्वन्द्वी की हैसियत से इस्तेमाल हुआ है जैसा कि बाद वाली आयत से स्पष्ट है । इस लिए यहाँ इस से मुराद वह हाकिम या जज है जो अल्लाह और रसूल का विरोधी हो और किताब एवं सुन्नत के खिलाफ़ फ़ैसला करता हो ।

129. यहाँ जिस बात को क़ुर्आन के विरुद्ध बताया गया है वह यह है कि आदमी किताब और सुन्नत के फ़ैसले पर राज़ी न हो और ''तागूत'' की अदालत में अपना मुक़दमा इस लिए ले जाए ताकि वहां उस के हक़ में फ़ैसला हो, चाहे वह फ़ैसला शरीअत के ख़िलाफ़ ही क्यों न हो। स्पष्ट रहे कि यहाँ जिन मुनाफ़िक़ों का ज़िक्र किया गया है वह अहले-किताब (यहूदी और ईसाई से सम्बन्धित थे। वे ईमान लाने के भी दावेदार थे और साथ ही अपने मुक़दमें रसूल की अदालत में पेश करने के बजाय यहूदियों की अदालत में पेश करना चाहते । रिवायतों में कअब बिन अशरफ़ का नाम आता है जो यहूदियों का सरदार था और मुक़दमों का फ़ैसला करता था। मुनाफ़िक़ (पाखण्डी एवं कपटी) उस की तरफ़ पलटते। स्पष्ट है कि उन का यह तरीक़ा इस्लाम के विरुद्ध था लेकिन वे ईमान और कुफ्र दोनों को जमा करना चाहते थे। यहाँ यह बात भी समझ लेना चाहिए कि इन आयतों के नाज़िल होने के समय तक मदीना की इस्लामी रियासत का दायरा अधिक विस्तार नहीं पा सका था और मदीना के किनारे किनारे यहूदियों की क़बायली रियासतें क़ायम थीं इस तरह गोया उस इलाक़े में इस्लाम और तागूत के समान्तर अदालतें (Parallel Courts) क़ायम थीं।

130. अर्थात् जिस समय इस्लाम दुश्मन शक्तियों का ज़ोर टूटेगा और मुसलमानों को प्रभुत्व एवं स्थिरता प्राप्त होगी उस समय ये मुनाफ़िक़ अपने को असहाय पा कर तुम्हारे पास क्षमायाचना करते हुए आऐंगे और अपने पिछले रवैये का यह औचित्य बताऐंगे कि हमारा मक़सद तो मुसलमानों और यहूदियों में मेल मिलाप पैदा करना था, अत: इस आयत के नाज़िल होने के कुछ ही साल बाद यह सूरत पेश आई।

131. जो लोग निफ़ाक़ (पाखण्ड) के रोग में लिप्त थे उन के इलाज की सही तदबीर यहाँ बताई गई जिस से दअवत और इस्लाह का काम करने वालों को यह रहनुमाई मिलती है कि वे अपने इस काम के लिए अपनी बात कहने का प्रभावपूर्ण तरीक़ा अपनाऐं और उन का दअवत पेश करने का तरीक़ा (Approach) ऐसा हो कि दिलों को झंझोड़ कर रख दें।

132. अर्थात् रसूल इस लिए नहीं आता कि उस के साथ मात्र श्रद्धा की अभिव्यक्ति (अक़िदत का इज़हार) करो और फिर उस की आज्ञा का पालन करो या न करो। बल्कि रसूल इस लिए आता है कि उस की आज्ञा का पालन किया जाए क्यों कि रसूल ख़ुदा की तरफ़ से एहकाम और क़ानून ले कर आता है।

133. रसूल की उपस्थिति में तागूत की अदालत में मुक़दमें ले जाना रसूल के लिए कष्टदायक बात थी और इस से रसूल की अदालत की तौहीन होती थी इस लिए इस गुनाह से छुटकारे के लिए ज़रुरी क़रार दिया कि वे रसूल की ख़िदमत में हाज़िर हो कर अपनी ग़लती स्वीकार करें और अल्लाह से क्षमायाचना करने के साथ रसूल से भी अनुरोध करें कि वह उन के क्षमा की प्रार्थना अल्लाह से करें ।

134. यह आयत पुष्टि करती है कि रसूल की आज्ञा का पालन बिना किसी सुरक्षा और अगर मगर के करना ईमान का खुला हुआ तक़ाज़ा है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के किसी भी फ़ैसले पर एक मुसलमान को ख़लिश तक महसूस नहीं करना चाहिए ना यह कि वह आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) के किसी भी फ़ैसले को अपनी इच्छाओं एवं ज़माने के चलन के अनुकूल न पा कर उस पर नाक भौं चढ़ाने लगे।

अल्लामा जस्सास लिखते हैं।

''यह आयत इस बात पर प्रमाण प्रस्तुत करती है कि जो व्यक्ति अल्लाह या उस के रसूल सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के किसी हुक्म को रद्द कर दे वह इस्लाम से खारिज है चाहे उस ने शक के कारण इस हुक्म को रद्द किया हो या मानने और क़ुबूल करने ही से इन्कार हो।''

(एहकामुल क़ुर्आन जिल्द २ पृष्ट २६०)

❍ ❍ ❍ ❍ ❍ ❍

66. अगर हम ने इन्हें हुक्म दिया होता कि अपने आप को क़त्ल करो या अपने घरों से निकल खड़े हों तो इन में से कुछ के सिवा कोई भी इस का पालन न करता [135] हालाँकि जिस बात की इन्हें नसीहत की जाती है अगर ये उस पर अमल करते तो यह बात इन के लिए बेहतरी का और अधिक साबित क़दमी का कारण होती।

وَلَوْ اَنَّا كَتَبْنَا عَلَيْهِمْ اَنِ اقْتُلُوْٓا اَنْفُسَكُمْ اَوِ اخْرُجُوْا
مِنْ دِيَارِكُمْ مَّا فَعَلُوْهُ اِلَّا قَلِيْلٌ مِّنْهُمْ ؕ وَلَوْ اَنَّهُمْ
فَعَلُوْا مَا يُوْعَظُوْنَ بِهٖ لَكَانَ خَيْرًا لَّهُمْ وَاَشَدَّ تَثْبِيْتًا ۙ ﴿۶۶﴾

67. और इस सूरत में हम इन्हें अपने पास से बहुत बड़ा बदला प्रदान करते।

وَّاِذًا لَّاٰتَيْنٰهُمْ مِّنْ لَّدُنَّآ اَجْرًا عَظِيْمًا ۙ ﴿۶۷﴾

68. और इन्हें सीधे रास्ते पर चलाते ।[136]

وَّلَهَدَيْنٰهُمْ صِرَاطًا مُّسْتَقِيْمًا ﴿۶۸﴾

69. जो लोग अल्लाह और उस के रसूल की आज्ञापालन करेंगे वे उन लोगों के साथ होंगे जिन पर अल्लाह ने इनाम फ़रमाया है[137],अर्थात नबी, सिद्दीक़ (सच्चे लोग) शहीद और स्वालेह (नेक लोग) और क्या ही अच्छे साथी हैं ये।[138]

وَمَنْ يُّطِعِ اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ فَاُولٰٓئِكَ مَعَ الَّذِيْنَ اَنْعَمَ
اللّٰهُ عَلَيْهِمْ مِّنَ النَّبِيّٖنَ وَالصِّدِّيْقِيْنَ وَالشُّهَدَآءِ وَالصّٰلِحِيْنَ ۚ
وَحَسُنَ اُولٰٓئِكَ رَفِيْقًا ؕ ﴿۶۹﴾

70. यह फ़ज़्ल (उदार अनुग्रह)अल्लाह की तरफ़ से है और अल्लाह का इल्म (ज्ञान) किफ़ायत करता है।

ذٰلِكَ الْفَضْلُ مِنَ اللّٰهِ ؕ وَكَفٰى بِاللّٰهِ عَلِيْمًا ﴿۷۰﴾ ع

71. ऐ ईमान वालों । अपने हथियार संभालो और जिहाद के लिए निकलो, अलग अलग दस्तों की शक्ल में या इकट्ठे हो कर ।[139]

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا خُذُوْا حِذْرَكُمْ فَانْفِرُوْا
ثُبَاتٍ اَوِ انْفِرُوْا جَمِيْعًا ﴿۷۱﴾

72. तुम में कोई तो ऐसा है जो टाल मटोल करता है।अगर तुम पर कोई मुसीबत आ पड़ती है तो कहता है अल्लाह ने मुझ पर बड़ी मेहरबानी की कि मैं उन लोगों के साथ शरीक न हुआ।

وَاِنَّ مِنْكُمْ لَمَنْ لَّيُبَطِّئَنَّ ۚ فَاِنْ اَصَابَتْكُمْ مُّصِيْبَةٌ قَالَ
قَدْ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيَّ اِذْ لَمْ اَكُنْ مَّعَهُمْ شَهِيْدًا ﴿۷۲﴾

73. और अगर तुम पर अल्लाह का फ़ज़्ल होता है तो गोया तुम्हारे और उस के बीच दोस्ती थी ही नहीं। कहने लगता है कि काश मैं भी उन के साथ होता कि मुझे बड़ी कामयाबी हासिल हो जाती।[140]

وَلَئِنْ اَصَابَكُمْ فَضْلٌ مِّنَ اللّٰهِ لَيَقُوْلَنَّ كَاَنْ لَّمْ
تَكُنْۢ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهٗ مَوَدَّةٌ يّٰلَيْتَنِيْ
كُنْتُ مَعَهُمْ فَاَفُوْزَ فَوْزًا عَظِيْمًا ﴿۷۳﴾

74. तो अल्लाह की राह में उन लोगो को जंग करनी चाहिए जो दुनिया की ज़िन्दगी को आख़िरत के बदले बेच दें [141] और जो व्यक्ति अल्लाह की राह में जंग करेगा फिर वह मारा जाए या ग़ालिब (विजयी) हो हम उसे ज़रूर बड़ा बदला प्रदान करेंगे ।

فَلْيُقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ الَّذِيْنَ يَشْرُوْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا
بِالْاٰخِرَةِ ؕ وَمَنْ يُّقَاتِلْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَيُقْتَلْ
اَوْ يَغْلِبْ فَسَوْفَ نُؤْتِيْهِ اَجْرًا عَظِيْمًا ﴿۷۴﴾

135. अल्लाह को अधिकार है कि वह अपने बन्दों को जिस बात का चाहे हुक्म दे और जब दुनिया की ज़िन्दगी आज़माइश ही के लिए है तो अपने आप को क़त्ल करने या घर बार छोड़ देने का हुक्म दे कर भी आज़माइश की जा सकती थी। लेकिन दयावान ख़ुदा ने इन्सान को इतनी ज़बरदस्त आज़माइश में नहीं डाला और शरीअत आसान बना दी। इस के बाद भी अगर लोग शरीअत पर न चलें तो यह उन का दुर्भाग्य होगा। इस आयत से यह बात अच्छी तरह स्पष्ट हो जाती है कि इस्लाम की असल रुह (Spirit) यह है कि अल्लाह की वफ़ादारी हर चीज़ पर हावी हो यहाँ तक कि अपनी जान पर भी। और इस की ख़ातिर हर चीज़ क़ुरबान की जा सकती है यहाँ तक कि अपने घर बार और अपने प्रिय देश को भी अलविदा किया जा सकता है। जिस मौक़े पर दीन का जो तक़ाज़ा हो उस का पूरा करना ही असल दीनदारी है।

136. अर्थात् अगर वे पाखण्ड के रवैया से बाज़ आ जाते और सच्चे मन से रसूल की आज्ञा पालन का रास्ता अपनाते तो उन्हें जिन्दगी के हर मामले में सीधा और सच्चा रास्ता नज़र आता और सही शैली का सौभाग्य प्राप्त होता।

137. ईनाम से मुराद ईनाम और हिदायत की नेमत से नवाज़ना है (देखिए सूरह फ़ातिहा नोट.१०)

138. ईनाम पाने वाले चार गिरोह हैं नबी, सच्चे लोग (सिद्दीक़ीन) साक्षी (शुहदा) अच्छे लोग (स्वालिहीन) नबियों से मुराद वे तमाम पैग़म्बर हैं जो विभिन्न युगों और विभिन्न क़ौमों में अल्लाह की तरफ़ से सत्य धर्म ले कर आए।

सिद्दीक़ीन अर्थात सच्चे लोगों से मुराद वे लोग हैं जिन में सच्चाई का गुण पूर्ण रुप से विद्यमान हो। ये ईमान और अमल की दृष्टि से नबियों के बाद प्रथम पंक्ति के लोग हैं।

शुहदा (साक्षी) से मुराद वे लोग हैं जिन्हों ने हक़ की गवाही देने में अपनी जान भी क़ुर्बान कर दी।

और स्वालिहीन (अच्छे लोगों) से मुराद वे लोग हैं जो ईमान लाए और जिन्हों ने नेकी का रास्ता अपनाया।

जन्नत की सोसाइटी ऐसे ही लोंगो पर आधारित होगी। गोया इन्सानियत की पूरी टीम वहाँ मौजूद होगी। ऐसे बेहतरीन लोगों का साथ वहाँ मयस्सर आना अल्लाह तआला का बहुत बड़ा ईनाम होगा । नेक आदमी दुनिया में भी अपनी संगत के लिए नेक आदमियों ही का चुनाव करता है और मरने के बाद भी नेक लोंगो ही की श्रेणी में शामिल होना चाहता है।

139. उस समय जंग की दो सूरतें थीं एक व्यवस्थित सैन्याक्रमण, दूसरे दस्तों की शक्ल में दुश्मन पर छापा मारना जिसे ''सरिय्यह'' कहते हैं । इन दोनों तरीक़ो को आवश्यकतानुसार अपनाने की हिदायत इस आयत में दी गई है और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ये दोनों तरीक़े इख़्तियार किए थे।

140. अर्थात् ये पाखण्डी (मुनाफ़िक़) मुसलमानों की कामयाबी को अपनी कामयाबी नहीं समझते इस लिए उन्हें इस बात पर अफ़सोस होता है कि मुसलमानों को कामयाबी हुई और वह माले-ग़नीमत (परिहार) में हिस्सेदार बनने से वंचित रहे। गोया यह कामयाबी ग़ैरों को हुई अपनों को नहीं हुई।

141. अर्थात् अल्लाह की राह में जिहाद के लिए उन लोगों को उठना चाहिए जो आख़िरत की ख़ातिर अपनी दुनिया त्याग दें। ऐसे ही लोग अपने ईमान में सच्चे और अल्लाह की राह के मुजाहिद (जिहाद करने वाले) हैं, रहे वे लोग जो आख़िरत के मुक़ाबले में दुनिया के लाभ को प्रिय रखते हैं और चाहते हैं कि दीन के लिए उन्हें कोई क़ुर्बानी न देना पड़े तो जिहाद की राह ऐसे लोगों के लिए नहीं है।

75. और तुम्हें क्या हो गया कि अल्लाह की राह में जंग नहीं करते उन बेबस मर्दों, औरतों और बच्चों की ख़ातिर जो फ़रयाद कर रहे हैं कि ऐ हमारे रब हमें इस बस्ती से निकाल जिस के बाशिन्दे ज़ालिम हैं [142]। और अपनी तरफ़ से किसी को हमारा समर्थक बना और अपने पास से हमारा कोई मददगार खड़ा कर।

وَمَا لَكُمْ لَا تُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَالْمُسْتَضْعَفِينَ
مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَاءِ وَالْوِلْدَانِ الَّذِينَ يَقُولُونَ
رَبَّنَا أَخْرِجْنَا مِنْ هَٰذِهِ الْقَرْيَةِ الظَّالِمِ أَهْلُهَا
وَاجْعَلْ لَنَا مِنْ لَدُنْكَ وَلِيًّا وَاجْعَلْ لَنَا
مِنْ لَدُنْكَ نَصِيرًا ﴿٧٥﴾

76. जो लोग ईमान रख़ते हैं वे अल्लाह की राह में लड़ते हैं और जो काफ़िर हैं वे तागूत की राह में लड़ते हैं [143] तो तुम शैतान के साथियों से लड़ो। यक़ीन जानो शैतान की चाल बिल्कुल कमज़ोर होती है।[144]

الَّذِينَ آمَنُوا يُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ اللَّهِ وَالَّذِينَ كَفَرُوا
يُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ الطَّاغُوتِ فَقَاتِلُوا أَوْلِيَاءَ الشَّيْطَانِ
إِنَّ كَيْدَ الشَّيْطَانِ كَانَ ضَعِيفًا ﴿٧٦﴾

77. तुम ने उन लोगों को नहीं देखा जिन से कहा गया था कि अपने हाथ रोके रखो और नमाज़ क़ायम करो और ज़कात दो [145] फिर जब उन पर जंग फ़र्ज़ (अनिवार्य) कर दी गई तो उन में से एक गिरोह लोगों से इस तरह डरने लगा जैसे कोई अल्लाह से डर रहा हो बल्कि उस से भी अधिक, [146] वे कहते हैं ऐ हमारे रब तूने हम पर जंग क्यों फ़र्ज़ की। हमें कुछ और मोहलत क्यों न दी। कहो दुनिया का फ़ायदा बहुत थोड़ा है।और तक़वा (अल्लाह का डर) अपनाने वालों के लिए आख़िरत कहीं बेहतर है, और तुम्हारे साथ ज़रा भी अन्याय न किया जाएगा [147]।

أَلَمْ تَرَ إِلَى الَّذِينَ قِيلَ لَهُمْ كُفُّوا أَيْدِيَكُمْ وَأَقِيمُوا الصَّلَاةَ
وَآتُوا الزَّكَاةَ فَلَمَّا كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقِتَالُ إِذَا فَرِيقٌ مِنْهُمْ
يَخْشَوْنَ النَّاسَ كَخَشْيَةِ اللَّهِ أَوْ أَشَدَّ خَشْيَةً وَقَالُوا رَبَّنَا لِمَ
كَتَبْتَ عَلَيْنَا الْقِتَالَ لَوْلَا أَخَّرْتَنَا إِلَىٰ أَجَلٍ قَرِيبٍ قُلْ
مَتَاعُ الدُّنْيَا قَلِيلٌ وَالْآخِرَةُ خَيْرٌ لِمَنِ اتَّقَىٰ وَلَا تُظْلَمُونَ
فَتِيلًا ﴿٧٧﴾

78. तुम जहाँ कहीं हो, मौत तुम को पा लेगी चाहे तुम मज़बूत किलों ही में क्यों न हो ।[148] अगर इन्हें कोई लाभ पहुँचता है तो कहते हैं यह अल्लाह की तरफ़ से है और अगर हानि पहुँचती है तो कहते हैं यह तुम्हारी वजह से है।कहो सब कुछ अल्लाह ही की तरफ़ से है। इन लोगों को क्या हो गया है कि कोई बात समझ नहीं पाते ।[149]

أَيْنَمَا تَكُونُوا يُدْرِكْكُمُ الْمَوْتُ وَلَوْ كُنْتُمْ فِي بُرُوجٍ
مُشَيَّدَةٍ وَإِنْ تُصِبْهُمْ حَسَنَةٌ يَقُولُوا هَٰذِهِ مِنْ عِنْدِ اللَّهِ
وَإِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ يَقُولُوا هَٰذِهِ مِنْ عِنْدِكَ قُلْ كُلٌّ
مِنْ عِنْدِ اللَّهِ فَمَالِ هَٰؤُلَاءِ الْقَوْمِ لَا يَكَادُونَ يَفْقَهُونَ
حَدِيثًا ﴿٧٨﴾

79. (वास्तव में) तुम्हें जो लाभ भी पहुँचता है, अल्लाह ही की तरफ़ से पहुँचता है और जो हानि पहुँचती है वह तुम्हारे अपने नफ़्स के कारण पहुँचती है।[150] और (ऐ पैग़म्बर) हम ने तुम्हें लोगों के लिए रसूल बना कर भेजा है और इस पर अल्लाह की गवाही बस करती है।[151]

مَا أَصَابَكَ مِنْ حَسَنَةٍ فَمِنَ اللَّهِ وَمَا أَصَابَكَ مِنْ سَيِّئَةٍ فَمِنْ
نَفْسِكَ وَأَرْسَلْنَاكَ لِلنَّاسِ رَسُولًا وَكَفَىٰ بِاللَّهِ شَهِيدًا ﴿٧٩﴾

142. उस समय मक्का और उस के ईद गिर्द मुसलमान सिर्फ इस लिए काफ़िरों के ज़ुल्म और सितम का निशाना बन गये थे कि उन्हों ने इस्लाम क़ुबूल किया था। दूसरे शब्दों में वे मुसलमानों को विचार और धर्म की आज़ादी का अधिकार देने के लिए तैयार न थे। उन के ज़ुल्म से औरतें और बच्चे भी सुरक्षित न थे। क़ुर्आन ने बतलाया कि ऐसे मज़लूमों को ज़ालिमों से छुटकारा दिलाने के लिए जंग करना अल्लाह के लिए जिहाद करना है।

143. यहाँ तागूत से मुराद शैतान है जैसा कि बाद के वाक्य से स्पष्ट है। और तागूत की राह में लड़ने से मुराद उन बातिल (ग़लत) उद्देश्यों के लिए लड़ना है जिन के लिए शैतान इन्सान को उभारता है अर्थात् अल्लाह के दीन का विरोध करने, उस के मानने वालों का ज़ोर तोड़ने, ख़ुदा के हुक्म की जगह इन्सान का हुक्म चलाने, ज़मीन पर इस्लाह (सुधार) के बजाए फ़साद बरपा करने और इस्लाम के बजाए कुफ्र को ग़ालिब करने के उद्देश्य से लड़ना है ।

144. मतलब यह कि जो लोग शैतान के वर्गलाने में आ कर इस्लाम और उस पर चलने वालों के ख़िलाफ कार्रवाइयाँ करते हैं उन की यह कार्रवाइयाँ किसी ठोस बुनियाद पर नहीं होतीं इस लिए अगर हक़ पर चलने वाले उन के मुक़ाबले में डट जाऐं तो उन की सारी योजनाऐं खाक हो जाऐं।

145. इस आयत से इमाम राज़ी यह दलील लाए हैं कि नमाज़ और ज़कात को जिहाद पर प्रधानता प्राप्त है।

(देखिए तफ़्सीर राज़ी जिल्द ३ पृष्ट २७२)

इस में कोई संदेह नहीं कि इन दो चीज़ों को प्रधानता प्राप्त है और ये इबादतें वास्तविक लक्ष्य हैं, रहा जिहाद तो उस का महत्व और उस की श्रेष्ठता अपनी जगह। वह वाजिब उसी समय होता है जब कि हालात इस का तक़ाज़ा करें वरना एक मुसलमान के लिए इस की नियत रखना काफ़ी है। यही वजह है कि इस्लाम में जिहाद का स्थान बेहद बुलन्द होने के बावजूद उस की गिनती अरकाने-ख़मसा (पाँच सतंभों, तौहीद, नमाज़, ज़कात, रोज़ा, हज्ज) में नहीं है। अलबत्ता यह हक़ीक़त है कि जिहाद जब बेहद ज़रूरी फ़र्ज़ क़रार पाए तो उस से जी चुराना, ईमान को संदिग्ध बना देता है क्यों कि यह ईमान का खुला तक़ाज़ा है कि आदमी दीन के लिए ग़लबा (वर्चस्व) चाहे और अल्लाह की ख़ातिर अपनी जान क़ुर्बान करने के लिए तैयार हो।

146. अर्थात् जब तक जंग का हुक्म नहीं दिया गया था, उस के लिए बड़े जोश और उन्माद का प्रदर्शन किया जा रहा था लेकिन जब उस का हुक्म दे दिया गया तो उन को भारी और अप्रिय लगने लगा। इशारा उन लोगों की तरफ़ है जो अपने ईमान में सच्चे नहीं थे।

147. मतलब यह है कि अल्लाह की राह में जो क़ुर्बानियाँ भी तुम दोगे वह व्यर्थ जाने वाली नहीं हैं बल्कि तुम्हें उन का पूरा पूरा बदला मिलेगा।

148. इस का यह मतलब नहीं कि आदमी, तदबीर और एहतियात से काम न ले बल्कि मतलब यह है कि वह इस गुमान में मुब्तिला न हो कि तदबीर उसे मौत से बचा सकती है। मौत तो अपने समय पर आ कर रहेगी। इस लिए आदमी को चाहिए कि अपनी ज़िम्मेदारियों को अदा करने से हाथ न ख़ींचे।

149. अर्थात् अगर किसी मुश्किल से दोचार हो तो उसे ये पाखंडी (मुनाफ़िक़) यह समझते हैं कि पैग़म्बर ने तदबीर से काम नहीं लिया । हालाँकि पैग़म्बर कोई काम बग़ैर ख़ुदा के हुक्म के नहीं करता । और कायनात में अधिपत्य भी अल्लाह ही का है। उस की मर्ज़ी के बग़ैर न कोई लाभ पहुँच सकता है और न हानि । इस लिए किसी हानि के पहुँच जाने पर इस की ज़िम्मेदारी पैग़म्बर पर डालना सत्य के विरुद्ध भी है और ईमान के ख़िलाफ़ भी ।

150. यद्यपि भली और बुरी दोनो चीज़ें अल्लाह ही की मर्ज़ी से ज़ाहिर होती हैं लेकिन दोनों में फ़र्क यह है कि नेकी और भले की हालत अल्लाह की रहमत का उपहार एवं उदार दान है जब कि बदी की और बुरी हालत इन्सान के अपने कर्मों का फल होता है जो अल्लाह के प्रदान किये हुए अधिकारों को ग़लत ढंग से इस्तेमाल करने पर ज़ाहिर होता है इस लिए शर (बुराई) को अपने नफ़्स से सम्बन्धित करना चाहिए ।

151. इशारा है इस बात की तरफ़ कि अगर मुनाफ़िक़ीन (पाखण्डी) रसूल की हर बात को ख़ुदा की तरफ़ से नहीं समझते हैं तो न समझें । मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के रसूल होने के लिए अल्लाह की गवाही काफ़ी है और यह गवाही अल्लाह ने क़ुर्आन के द्वारा दी है। और यह जो फ़रमाया कि हम ने तुम्हें लोगों के लिए रसूल बना कर भेजा है तो इस का मतलब यह है कि हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम केवल अरब वासियों की तरफ़ नहीं बल्कि तमाम क़ौमों की तरफ़ रसूल बना कर भेजे गए हैं।

80. जो रसूल का आज्ञापालन करता है वह अल्लाह का आज्ञापालन करता है [152] और जो मुँह फेरता है तो हमने तुम को ऐसे लोगों पर पासबान (चौकिदार) बना कर नहीं भेजा है।[153]

مَنْ يُطِعِ الرَّسُولَ فَقَدْ أَطَاعَ اللّٰهَ ۚ وَمَنْ تَوَلّٰى فَمَآ
أَرْسَلْنٰكَ عَلَيْهِمْ حَفِيظًا ﴿٨٠﴾

81. ये लोग (ज़बान से तो) कहते हैं हमने फ़रमांबरदारी क़ुबूल की लेकिन जब तुम्हारे पास से चले जाते हैं तो इन में से एक गिरोह तुम्हारी बातों के ख़िलाफ़ रात को मश्वरे करने लगता है।[154] अल्लाह उन की यह गुप्त वार्ता लिख रहा है, तो इन की बातों पर ध्यान न दो और अल्लाह पर भरोसा रखो कि काम बनाने के लिए अल्लाह काफ़ी है।

وَيَقُولُونَ طَاعَةٌ ۫ فَإِذَا بَرَزُوا مِنْ عِنْدِكَ بَيَّتَ طَآئِفَةٌ
مِّنْهُمْ غَيْرَ الَّذِي تَقُولُ ۖ وَاللّٰهُ يَكْتُبُ مَا يُبَيِّتُونَ ۖ فَأَعْرِضْ
عَنْهُمْ وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ ۗ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيلًا ﴿٨١﴾

82. क्या ये लोग क़ुर्आन पर ग़ौर नहीं करते। अगर यह अल्लाह के सिवा किसी और की तरफ़ से होता तो ये उस में ख़ूब भिन्नता पाते।[155]

أَفَلَا يَتَدَبَّرُونَ الْقُرْاٰنَ ۚ وَلَوْ كَانَ مِنْ عِنْدِ غَيْرِ اللّٰهِ
لَوَجَدُوا فِيهِ اخْتِلَافًا كَثِيرًا ﴿٨٢﴾

83. जब इन के पास शान्ति या ख़तरे की कोई ख़बर पहुँच जाती है तो यह उसे फैला देते हैं। अगर ये उसे रसूल के सामने और अस्हाबे-अम्र (आदेश देने के अधिकारियों) के सामने पेश करते तो जो लोग उन में से बात की तह तक पहुँचने वाले हैं वे इस की हक़ीक़त मालूम कर लेते ।[156] और अगर तुम पर अल्लाह का फ़ज़्ल (उदार अनुग्रह) और उस की रहमत न होती तो चंद लोगों के सिवा तुम सब शैतान के पीछे चल पड़ते।

وَإِذَا جَآءَهُمْ أَمْرٌ مِّنَ الْأَمْنِ أَوِ الْخَوْفِ أَذَاعُوا بِهٖ ۖ
وَلَوْ رَدُّوهُ إِلَى الرَّسُولِ
وَإِلٰىٓ أُولِي الْأَمْرِ مِنْهُمْ لَعَلِمَهُ الَّذِينَ يَسْتَنْبِطُونَهٗ مِنْهُمْ ۗ وَلَوْلَا
فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهٗ لَاتَّبَعْتُمُ الشَّيْطٰنَ إِلَّا قَلِيلًا ﴿٨٣﴾

84. तो (ऐ पैग़म्बर!) अल्लाह की राह में जंग करो। तुम पर अपने नफ़्स के सिवा किसी की ज़िम्मेदारी नहीं। और ईमानवालों को (जंग का) प्रोत्साहन दो। असंभव नहीं कि अल्लाह काफ़िरों का ज़ोर तोड़ दे। अल्लाह बड़ा ज़ोरावर (प्रबल) है और सज़ा देने में भी बहुत सख़्त है।

فَقَاتِلْ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ ۚ لَا تُكَلَّفُ إِلَّا نَفْسَكَ وَحَرِّضِ
الْمُؤْمِنِينَ ۚ عَسَى اللّٰهُ أَنْ يَكُفَّ بَأْسَ الَّذِينَ كَفَرُوا ۚ وَاللّٰهُ أَشَدُّ
بَأْسًا وَأَشَدُّ تَنْكِيلًا ﴿٨٤﴾

85. जो अच्छी बात की सिफ़ारिश करेगा वह उस में से हिस्सा पाएगा और जो बुरी बात की सिफ़ारिश करेगा वह उस में से हिस्सा पाएगा।[157] अल्लाह हर चीज़ पर निगाह रखे हुए है।

مَنْ يَشْفَعْ شَفَاعَةً حَسَنَةً يَكُنْ لَهٗ
نَصِيبٌ مِّنْهَا ۚ وَمَنْ يَشْفَعْ شَفَاعَةً سَيِّئَةً يَكُنْ
لَهٗ كِفْلٌ مِّنْهَا ۗ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ مُّقِيتًا ﴿٨٥﴾

152. यह और इस तरह की दूसरी आयतें पुष्टि करती हैं कि रसूल की आज्ञा का पालन वास्तव में अल्लाह ही की आज्ञा का पालन है। इस लिए कि रसूल जो हुक्म देता है ख़ुदा ही कि तरफ़ से देता है। एवं इस से यह भी स्पष्ट होता है कि हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की फ़रमाँबरदारी रसूल की हैसियत से न केवल आप की जिन्दगी में बल्कि आप की वफ़ात (इन्तिकाल) के बाद उसी तरह करना ज़रूरी है।

हमारे लिए आप के एहकाम मालूम करने का माध्यम प्रमाणित सुन्नत और सही हदीसें हैं इन की पैरवी आप की आज्ञा का पालन करने के समानार्थ है और इन से इन्कार आप की नाफ़रमानी के।

153. अर्थात् पैग़म्बर की यह ज़िम्मेदारी नहीं है कि वह लोगों को ज़बरदस्ती हिदायत की राह पर चलाए। बल्कि उस की ज़िम्मेदारी यह है कि वह अल्लाह का पैग़ाम लोगों तक पहुँचाए।

154. पाखण्डियों (मुनाफ़िक़ों) में कुछ ऐसे भी थे जो मदीना में रात को मजलिसें जमा कर इस्लाम और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के ख़िलाफ़ ख़ुफिया मश्वरे करते ताकि इस्लाम की राह में रुकावटें खड़ी की जा सकें और आप को कष्ट पहुँचाया जा सके।

155. इस आयत में क़ुर्आन में चिन्तन मनन अर्थात् ग़ौर करने की दअवत दी गई जिस से निम्न बातों पर रौशनी पड़ती है।

(A) ग़ौर और फ़िक्र (चिन्तन मनन) की यह दअवत आम है अत: उन लोगों को भी क़ुर्आन पर ग़ौर करने की दअवत दी गई है जो ईमान नहीं लाए हैं। ताकि उन पर स्पष्ट हो जाए की इस के मज़मून आपस में बिल्कुल जुड़े हुए और इस की शिक्षाऐं एक दूसरे से मेल खाती हैं जब कि इस का विषय बहुत बड़ा है अर्थात् मानव जीवन के लिए संपूर्ण हिदायत। यह इस बात का खुला प्रमाण है कि क़ुर्आन अल्लाह का कलाम है। अगर यह इन्सानी कलाम होता तो ऐसे विस्तृत विषय पर जिस का सम्बन्ध अनुभवों ही से नहीं अप्राकृतिक वास्तविकताओं से भी हो और जो इन्सान की फितरत (स्वभाव), उस की मानसिकता, उस के आरम्भ और उस के अन्त और उस के सारे पक्षों से बहस करता हो संभव नहीं उस में टकराव न पाया जाए। क्यों कि इन्सान की जानकारी सीमित है इस लिए वह न तो ब्रह्माण्ड के रहस्यों पर से परदा उठा सकता है और न ऐसी शिक्षा प्रस्तुत कर सकता है जो इन्सान को सही रुप से जीवन व्यतीत करने और उस के रचयता से सही सम्बन्ध पैदा करने के लिए ज़रुरी हैं।

(B) क़ुर्आन पर ग़ौर करते रहने से हिकमत के दरवाज़े खुलते हैं और ईमान, विश्वास और समझदारी में बढ़ोतरी होती है ।

(C) यह बात सही नहीं कि क़ुर्आन सिर्फ विद्वानों (आलिमों) के समझने की चीज़ है। अगर यह विद्वानों के लिए ख़ास होता तो इस पर ग़ौर करने की आम दअवत न दी जाती।

(D) क़ुर्आन की तमाम बातें आपस में क्रमबद्ध और एक दूसरे से मेल खाने वाली हैं इस लिए किसी आयत का ऐसा मतलब लेना सही नहीं हो सकता जो दूसरी आयतों से टकराता हो अर्थात् विपरीत हो।

(E) क़ुरआन को अल्लाह की किताब न मानना और उस की शिक्षाओं पर आपत्ति व्यक्त करना सरासर सोच की टेढ़ है और यह नतीजा है क़ुर्आन पर ग़ौर, फिक्र न करने का।

156. उस समय मदीने में जंग के हालात थे। ऐसे हालात में अफ़वाहें बड़ी ख़तरनाक साबित होती हैं लेकिन पाखण्डी लोग मुसलमानों को नुक़सान पहुँचाने के उद्देश्य से अफ़वाहें फ़ैलाने में सक्रिय हो गए थे इस लिए उन की इस हरकत पर पकड़ की गई और इस तरह की ख़बरों को रसूल और ज़िम्मेदार लोगों की तरफ़ लौटाने का हुक्म दिया गया है।

इस से उसूली तौर पर यह हिदायत मिलती है कि मिल्लत के राजनैतिक जीवन पर प्रभाव डालने वाली ख़बरों को अवाम में फैलाने से पहले ज़िम्मेदार लोगों की जानकारी में लाना चाहिए ताकि वे उन की वास्तविकता मालूम कर सकें। इस से यह बात भी निकलती है कि आदेश देने के अधिकारी (उलुलअम्र) के पद के लिए उचित वे लोग हो सकते हैं जिन के अन्दर सूझ बूझ, मामले को समझने और चिन्तन मनन के गुण पाए जाते हों।

157. अर्थात् जो सत्य (हक़्) का अनुमोदन एवं समर्थन करेंगे वे उस का बदला पाएंगे और जो उस का विरोध करेंगे वे उस की सज़ा भुगतेंगे ।

86. और जब कोई तुम्हें दुआ के शब्दों के साथ सलाम करे तो तुम भी उस के जवाब में बेहतर शब्द कहो या कम से कम उन ही शब्दों को लौटाओ।[158] अल्लाह हर चीज़ का हिसाब लेने वाला है।

وَإِذَا حُيِّيتُم بِتَحِيَّةٍ فَحَيُّوا بِأَحْسَنَ مِنْهَا أَوْ رُدُّوهَا ۗ إِنَّ اللَّهَ كَانَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ حَسِيبًا ﴿٨٦﴾

87. अल्लाह, जिस के सिवा कोई ख़ुदा नहीं, क़ियामत का दिन, जिस के आने में कोई संदेह नहीं, ज़रूर तुम्हें जमा करेगा, और कौन है जिस की बात अल्लाह से ज़्यादा सच्ची हो?

اللَّهُ لَا إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ ۚ لَيَجْمَعَنَّكُمْ إِلَىٰ يَوْمِ الْقِيَامَةِ لَا رَيْبَ فِيهِ ۗ وَمَنْ أَصْدَقُ مِنَ اللَّهِ حَدِيثًا ﴿٨٧﴾

88. यह क्या बात है कि तुम मुनाफ़िक़ों (पाखण्डियों) के बारे में दो गिरोह बन गए हो [159] हालाँकि अल्लाह ने उन्हें उन के करतूतों की वजह से उल्टा फेर दिया है।[160] क्या तुम ऐसे लोगों को हिदायत देना चाहते हो, जिन को अल्लाह ने गुमराह कर दिया है।(याद रखो) जिस को अल्लाह गुमराह कर दे उस के लिए तुम कोई राह नहीं पा सकते।

فَمَا لَكُمْ فِي الْمُنَافِقِينَ فِئَتَيْنِ وَاللَّهُ أَرْكَسَهُم بِمَا كَسَبُوا ۚ أَتُرِيدُونَ أَن تَهْدُوا مَنْ أَضَلَّ اللَّهُ ۖ وَمَن يُضْلِلِ اللَّهُ فَلَن تَجِدَ لَهُ سَبِيلًا ﴿٨٨﴾

89. वे तो चाहते हैं कि जिस तरह वे काफ़िर हुए हैं उसी तरह तुम भी काफ़िर हो जाओ [161] ताकि तुम सब एक जैसे हो जाओ, अतः तुम इन में से किसी को अपना दोस्त न बनाओ जब तक कि वे अल्लाह की राह में हिजरत न करें ।[162] और अगर वे इस से मुँह फेरें तो उन्हें जहाँ कहीं पाओ, पकड़ो और क़त्ल करो।[163]और इन में से किसी को अपना दोस्त और मददगार न बनाओ।

وَدُّوا لَوْ تَكْفُرُونَ كَمَا كَفَرُوا فَتَكُونُونَ سَوَاءً ۖ فَلَا تَتَّخِذُوا مِنْهُمْ أَوْلِيَاءَ حَتَّىٰ يُهَاجِرُوا فِي سَبِيلِ اللَّهِ ۚ فَإِن تَوَلَّوْا فَخُذُوهُمْ وَاقْتُلُوهُمْ حَيْثُ وَجَدتُّمُوهُمْ ۖ وَلَا تَتَّخِذُوا مِنْهُمْ وَلِيًّا وَلَا نَصِيرًا ﴿٨٩﴾

90. सिवाय उन के जो किसी ऐसी क़ौम से जा मिलें जिस के साथ तुम्हारा समझौता है इसी तरह वे लोग भी इस से अलग हैं जो तुम्हारे पास इस हाल में आऐं कि लड़ाई से खिन्न हों, न तुम से लड़ना चाहें और न अपनी क़ौम से ।[164] अगर अल्लाह चाहता तो उन को तुम पर मुसल्लत कर देता कि तुम से लड़े बग़ैर न रहते, [165] अतः अगर वे तुम से किनारा खींच लें और तुम से जंग न करें और तुम्हारी तरफ़ सुलह और सहमति के लिए बढ़ें तो अल्लाह ने तुम्हारे लिए उन के खिलाफ़ क़दम उठाने का कोई मार्ग नहीं रखा है।

إِلَّا الَّذِينَ يَصِلُونَ إِلَىٰ قَوْمٍ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُم مِّيثَاقٌ أَوْ جَاءُوكُمْ حَصِرَتْ صُدُورُهُمْ أَن يُقَاتِلُوكُمْ أَوْ يُقَاتِلُوا قَوْمَهُمْ ۚ وَلَوْ شَاءَ اللَّهُ لَسَلَّطَهُمْ عَلَيْكُمْ فَلَقَاتَلُوكُمْ ۚ فَإِنِ اعْتَزَلُوكُمْ فَلَمْ يُقَاتِلُوكُمْ وَأَلْقَوْا إِلَيْكُمُ السَّلَمَ فَمَا جَعَلَ اللَّهُ لَكُمْ عَلَيْهِمْ سَبِيلًا ﴿٩٠﴾

158. मुनाफ़िक़ों से विमुखता का जो निर्देश आयत ८१ में दिया गया है उस का मतलब यह नहीं है कि मुसलमान उन के साथ नैतिकता का व्यवहार न करें और उन के सुधार के प्रयास न करें। यहाँ इसी सिलसिले में हिदायत दी जा रही हैं कि जो व्यक्ति भी अपने को मुसलमान व्यक्त करता है और तुम्हें सलाम करता है तुम उस से बेरुख़ी न बरतो बल्कि उस के सलाम का जवाब उस से बेहतर तरीक़े पर दो या कम से कम उन शब्दों ही को लौटाओ।

इस्लामी सभ्यता का एक महत्वपूर्ण तत्व यह है कि जब मुसलमान आपस में मिलें तो एक मुसलमान दूसरे मुसलमान को अस्सलामु अलैकुम (तुम पर सलाम हो) के दुआ भरे शब्दों के साथ सलाम करें और इस के जवाब में दूसरा मुसलमान वअ्लैकुमुस्सलाम (तुम पर भी सलाम हो) कहे। सलाम के यह कम से कम शब्द हैं और अगर इस पर ''वरहमतुल्लाह व बराकातुहू (और तुम पर अल्लाह की रहमत और बरकत भी हो) की वृद्धि की जाए तो बेहतर होगा। हदीस में ये शब्द आए हैं।

159. मुराद दारुलहर्ब (अर्थात वह देश जहाँ ग़ैर मुस्लिमों की हुकूमत हो और मुसलमानों को धर्म पर पूरी तरह पालन न करने दिया जाए) के मुनाफ़िक़ हैं जो इस्लाम क़ुबूल करने का दावा करते थे लेकिन वास्तव में उन का लगाव कुफ्र से था अत: वे काफिरों के साथ मिल कर उन कार्रवाइयों में हिस्सा लेते थे जो इस्लाम और मुसलमानों के ख़िलाफ़ की जातीं और उन्हें अपना घरबार इतना प्रिय था कि वे हिजरत (घर बार छोड़) कर के नबी और उस के साथियों से मिलने के लिए तैयार न थे। उन के साथ मामला करने (व्यवहार बनाने) के बारे में मुसलमानों में दो विचार पाए जाते थे एक गिरोह कहता था कि इन के साथ भी काफ़िरों जैसा मामला किया जाना चाहिए लेकिन दूसरा गिरोह इस उम्मीद पर कि वे अच्छे मुसलमान बन जाऐंगे उन के साथ नर्मी अपनाना चाहता था। इस मौक़े पर क़ुर्आन ने उन्हें सावधान किया कि वे ख़ुद क्या मुसलमान बनेंगे उल्टे वे तुम्हें काफ़िर बनाने की फिक्र में हैं। अगर वे अपने ईमान में सच्चे हैं तो हिजरत (घरबार छोड़) कर के नबी और उस के साथियों से आ मिलें। वरना दूसरी सूरत में इन से भी जंग करना चाहिए।

160. मतलब यह कि इस्लाम क़ुबूल करने के बाद उन्होंने स्वार्थ परस्ती अपनाते हुए कुफ्र की तरफ़ क़दम बढ़ाया इस लिए अल्लाह तआला ने भी उन को उल्टे पाँव कुफ्र ही की तरफ़ ढकेल दिया।

161. मालूम हुआ कि यहाँ उन लोगों का हुक्म बयान किया गया है जिन्हों ने इस्लाम का चोला ओढ़ लिया था लेकिन वास्तव में वे काफ़िर थे और यह इच्छा रखते थे कि मुसलमान भी काफ़िर बन जाऐं। उन का यह कुफ्र ही था जो उन्हें घरबार छोड़ने (हिजरत) से रोक रहा था क्यों कि हिजरत के लिए बहुत बड़ी क़ुर्बानी की ज़रुरत थी।

162. अर्थात् अगर वे हिजरत करते हैं तो आशा की जा सकती है कि वे सच्चे मुसलमान बनेंगे और असंभव नहीं कि अल्लाह तआला उन की इस क़ुर्बानी को देखते हुए उन्हें सच्चा ईमानवाला बनने की तौफ़ीक़ प्रदान करे । स्पष्ट रहे कि यहाँ हिजरत के साथ फ़ी सबीलिल्लाह (अल्लाह की राह में हिजरत) की भी क़ैद है जिस का मतलब यह है कि उन की हिजरत ईमान की रक्षा और उस के तक़ाज़े को पूरा करने के लिए हो। इसी सूरत में उन्हें मित्र बनाया जा सकता है।

163. अर्थात् ऐसी सूरत में तुम उन्हें दुशमनों का साथी समझो और जहाँ पाओ पकड़ो और क़त्ल करो। यह हुक्म उन पाखण्डियों का है जो मुसलमान होने का दावा करने के बावजूद काफिर क़ौम के साथ मिल कर मुसलमानों के विरुद्ध जंग करें। ऊपर नोट १५९ में इस की व्याख्या गुज़र चुकी है।

164. यहाँ उन लोगों का हुक्म बयान किया गया है जो क़त्ल के हुक्म से अलग हैं। अर्थात् जो मुनाफ़िक़ किसी ऐसी क़ौम से जा मिलें जिस के साथ मुसलमानों का समझौता है, तो समझौते का आदर करते हुए इन मुनाफ़िक़ों से छेड़ नहीं की जाएगी इसी तरह उन मुनाफ़िक़ों से भी छेड़ नहीं की जाएगी जो निष्पक्ष रहें अर्थात न अपनी क़ौम के साथ मिल कर मुसलमानों से जंग करें और न मुसलमानों के समर्थन में अपनी क़ौम से लड़ें।

165. अर्थात अगर अल्लाह इन को साहस देता तो वे तुम से जंग करने के लिए उठ खड़े होते लेकिन ऐसा नहीं हुआ। अत: उन के मौजूदा रवैया को ग़नीमत समझो और जब तक वे तुम से न लड़ें और तुम्हारे साथ सुलह और सहमति का रवैया अपनाए रहें तुम उन के ख़िलाफ़ कुछ न करो।

91. दूसरे कुछ ऐसे लोग भी तुम्हें मिलेंगे जो चाहते हैं कि तुम से भी बच कर रहें और अपनी क़ौम से भी।(लेकिन उन का हाल यह है कि) जब कभी फ़ितने की तरफ़ फेर दिए जाऐं,[166] उस में गिर पड़ें। अगर ये तुम से किनारा न खींचें और तुम्हारी तरफ़ सुलह के लिए हाथ न बढ़ाऐं और जंग से अपने हाथ न रोकें तो उन्हें जहाँ कहीं पाओ गिरफ़्तार करो और क़त्ल करो। उन लोगों के विरुद्ध हम ने तुम्हें खुला इख़्तियार दे दिया है।[167]

سَتَجِدُونَ اٰخَرِيْنَ يُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّاْمَنُوْكُمْ وَ يَاْمَنُوْا
قَوْمَهُمْ ؕ كُلَّمَا رُدُّوْۤا اِلَى الْفِتْنَةِ اُرْكِسُوْا فِيْهَا ۚ فَاِنْ
لَّمْ يَعْتَزِلُوْكُمْ وَيُلْقُوْۤا اِلَيْكُمُ السَّلَمَ وَيَكُفُّوْۤا
اَيْدِيَهُمْ فَخُذُوْهُمْ وَاقْتُلُوْهُمْ حَيْثُ
ثَقِفْتُمُوْهُمْ ؕ وَاُولٰٓئِكُمْ جَعَلْنَا لَكُمْ عَلَيْهِمْ سُلْطٰنًا مُّبِيْنًا ﴿٩١﴾

92. और किसी ईमान वाले का यह काम नहीं कि वह किसी ईमान वाले को क़त्ल करे,यह और बात है कि ग़लती से ऐसा हो जाए। और जिस व्यक्ति ने किसी ईमान वाले को ग़लती से क़त्ल कर दिया हो तो उसे चाहिए कि एक मोमिन ग़ुलाम को आज़ाद करे [168] और मक़्तूल के वारिसों को ''ख़ूँ बहा''(अर्थ-दंड) दे [169] यह और बात है कि वे (ख़ूँ बहा) माफ़ कर दे लेकिन अगर मक़्तूल किसी ऐसी क़ौम से हो जो तुम्हारी दुश्मन है और वह खुद मोमिन हो तो एक मोमिन को ग़ुलामी से आज़ाद करना होगा और अगर वह किसी ऐसी क़ौम से हो जिस के साथ तुम्हारा समझौता है तो उस के वारिसों को ख़ूँ बहा (अर्थ दंड) भी देना होगा और एक मोमिन को ग़ुलामी से आज़ाद भी करना होगा।[170] जिसे यह मयस्सर न हो वह दो माह के लगातार रोज़े रखे।[171] तौबा का यह तरीक़ा अल्लाह का मुक़र्रर किया हुआ है [172] और अल्लाह अलीम (सब कुछ जानने वाला) और हकीम (गहरी समझ रखने वाला) है।

وَمَا كَانَ لِمُؤْمِنٍ اَنْ يَّقْتُلَ مُؤْمِنًا اِلَّا خَطَـًٔا ۚ وَمَنْ قَتَلَ مُؤْمِنًا خَطَـًٔا
فَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ وَّدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَهْلِهٖٓ اِلَّآ اَنْ يَّصَّدَّقُوْا ؕ فَاِنْ
كَانَ مِنْ قَوْمٍ عَدُوٍّ لَّكُمْ وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ ؕ وَاِنْ
كَانَ مِنْ قَوْمٍۭ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِّيْثَاقٌ فَدِيَةٌ مُّسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَهْلِهٖ
وَتَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ مُّؤْمِنَةٍ ۚ فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ شَهْرَيْنِ مُتَتَابِعَيْنِ ؗ
تَوْبَةً مِّنَ اللّٰهِ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيْمًا حَكِيْمًا ﴿٩٢﴾

93. और जिस व्यक्ति ने किसी ईमान वाले को जान बूझ कर क़त्ल किया तो उस की सज़ा जहन्नम है जहाँ वह हमेशा रहेगा। उस पर अल्लाह का प्रकोप हुआ और उस की लानत हुई और ऐसे व्यक्ति के लिए उस ने बहुत बड़ा अज़ाब तैयार कर रखा है।[173]

وَمَنْ يَّقْتُلْ مُؤْمِنًا مُّتَعَمِّدًا فَجَزَآؤُهٗ جَهَنَّمُ خٰلِدًا فِيْهَا وَغَضِبَ اللّٰهُ
عَلَيْهِ وَلَعَنَهٗ وَاَعَدَّ لَهٗ عَذَابًا عَظِيْمًا ﴿٩٣﴾

166. यहाँ फ़ितने से मुराद जंगी कार्रवाइयाँ हैं जो काफिर लोग मुसलमानों के ख़िलाफ़ करते थे।

167. यह हुक्म उन लोगों के बारे में है जो मुसलमानों के खतरे से भी सुरक्षित रहना चाहते थे और अपनी क़ौम के खतरे से भी। जब उन की क़ौम का दबाव पड़ जाता तो यह मुसलमानों के ख़िलाफ़ जंग में अपनी क़ौम के साथ शरीक हो जाते। अत: क़बीला असद और ग़त्फ़ान के लोगों ने मदीना आ कर इस्लाम क़ुबूल किया और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से समझौता भी किया लेकिन अपनी क़ौम में वापस लौट कर क़ौम के कहने सुनने पर मुसलमानों के ख़िलाफ़ जंगी कार्रवाइयों में शरीक हो गए। ऐसे लोगों के बारे में फ़रमाया कि वे किसी रिआयत के लायक नहीं हैं। अल्लाह ने तुम्हें इख़्तियार दिया है कि इन को जहाँ पाओ गिरफ़तार करो और क़त्ल करो।

168. यह ग़लती से हो जाने वाले क़त्ल का कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) है। चुँकि मक़तूल ईमान वाला था इस लिए उस का कफ़्फ़ारा यह निर्धारित किया गया कि एक ईमान वाले ग़ुलाम को आज़ाद किया जाए।

मौजूदा ज़माने में गुलामी की प्रथा का चलन नहीं रहा इस लिए कफ़्फ़ारा की अदायगी की दूसरी सूरत अपनानी होगी अर्थात् दो माह के लगातार रोज़े जैसा कि इसी आयत में आगे बयान हुआ है।

169. दियत (खूँ बहा या अर्थ दण्ड) की मात्रा नबी सल्लल्लाहु अलैहिवसल्लम ने एक सौ ऊँट मुक़र्रर फ़रमाई थी। (एहकामुल क़ुर्आन लिल जस्सास जिल्द २ पृष्ट २८३)

अत: अगर नक़दी की सूरत में अदा करना हो तो उस के समान क़ीमत अदा करनी होगी।

170. इस आयत में किसी मुसलमान के ग़लती से क़त्ल किए जाने की तीन सूरतें बयान की गई हैं पहली सूरत यह है कि मक़्तूल दारुल इस्लाम (वह देश जहाँ इस्लामी हुकूमत हो) का बाशिन्दा हो इस सूरत में कफ़्फ़ारा भी अदा करना होगा और ख़ूँ बहा (अर्थ दंड) भी देना होगा। दुसरी सूरत यह है कि मक़्तूल दारुलहर्ब (ग़ैर मुस्लिम हुकूमत) का बाशिन्दा हो इस सूरत में सिर्फ कफ़्फ़ारा देना होगा और तीसरी सूरत यह है कि मक़्तूल उस ग़ैर मुस्लिम हुकूमत का बाशिन्दा हो जिस से समझौता है। इस सूरत में कफ़्फ़ारा भी देना होगा और ख़ूँ बहा (अर्थ दंड) भी अदा करना होगा।

हदीस में आता है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अलैहि वसल्लम ने ख़ालिद बिन वलीद को बनी ख़ज़ीमा की तरफ़ भेजा। उन्हों ने बनी ख़ज़ीमा के सामने इस्लाम की दअवत पेश की। उन्हों ने अपने इस्लाम क़ुबूल करने का एलान एक ऐसे लफ़्ज़ से किया जो संदिग्ध था। अर्थात (अस्लम्ना) (हम इस्लाम लाए) के बजाय (सबाना) (हम परिवर्तित हुए) कहा। हज़रत ख़ालिद ने ग़लत फ़हमी में उन के कुछ लोगों को क़त्ल किया। जब नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को इस की सूचना मिली तो आप ने दुआ के लिए हाथ उठाए और कहा ऐ ख़ुदा ख़ालिद ने जो कुछ किया उस से मैं बरी हूँ। इस के बाद आप ने हज़रत अली को भेज कर उन के मक़्तूलों का ख़ूँ बहा अदा कर दिया और उन के क्षति की पूर्ति की यहाँ तक कि उन के कुत्ते की भी क़ीमत अदा कर दी। यह हदीस बुख़ारी की है और इसे नक़्ल कर के इब्ने कसीर लिखते हैं कि इस हदीस से यह हुक्म निकलता है कि इमाम या उस के नायब (सेनाध्यक्ष इत्यादि) से ग़लती हो जाए तो उस का मुआवज़ा (Retailiation) बैतुलमाल (राजकोष) से अदा किया जाएगा। (तफ़सीर इबने कसीर जिल्द १ पृष्ट ५३५)

171. मौजूदा ज़माने में जब कि ग़ुलामी की प्रथा समाप्त हो गई है, ग़ुलाम को आज़ाद करने का बदल यह होगा कि दो माह के लगातार रोज़े रखे जाऐं । लगातार का मतलब यह है कि बिना किसी शरई उज़्र (संवैधानिक कारण) के एक रोज़ा भी बीच में छोड़ न दिया जाए और जो व्यक्ति रोज़े भी न रख सकता हो उस के मसले का हल उलमा का एक गिरोह यह बताता है कि उसे साठ मिस्कीनों को खाना खिलाना होगा यह बात ज़िहार के कफ़्फ़ारे पर क़ियास कर के कही गई है।

172. अर्थात् यह कफ़्फ़ारा अल्लाह की तरफ़ से बताई गई तौबा है ताकि क़त्ल करने वाले को अपनी ग़लती की संगीनी का एहसास हो और वह अपराध बोध और पश्चाताप के साथ अल्लाह से लौ लगाए।

173. इस आयत में किसी मुसलमान को बेजा और जानबूझ कर क़त्ल करने वाले के लिए पाँच डरावे आए हैं। एक यह कि उस की सज़ा जहन्नम होगी दूसरे यह कि वह उस में हमेशा रहेगा,तीसरे यह कि उस पर अल्लाह का प्रकोप होगा, चौथे यह कि उस पर अल्लाह की लानत होगी और पाँचवे यह कि उसे बहुत बड़ा अज़ाब भुगतना होगा जो उस के लिए ख़ास तौर से तैयार रखा गया है। इस से उस गुनाह की संगीनी का अन्दाज़ा होता है। इस्लाम में यह शिर्क के बाद सब से बड़ा गुनाह है और हदीस में इसे कुफ़्र बताया गया है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम का इर्शाद है:

(مسلم کتاب الایمان) ›ÄĉĐ ĢĔ{¨ČĤ ď'ĥÈĈ ĔěÈęĔz ¦ {¤Ç

''मुसलमान को गाली देना फ़िस्क़ (दुष्कर्म) और उस से क़िताल (युद्ध) करना कुफ़्र है।''(मुस्लिम किताबुलईमान)

- Ö ā£ ¦ {ČÃ ĔđÔ ā£ ¦ ÄÔ « zÃ{ĉĐ ®Àā£ zĥā¯Ä§ Ý

(مسلم کتاب الایمان)

''मेरे बाद काफ़िर न बन जाना कि एक दूसरे की गर्दनें मारने लगो ।'' (मुस्लिम किताबुलईमान)

94. ऐ ईमान वालो ! जब तुम अल्लाह की राह में निकलो तो अच्छी तरह छान बीन कर लिया करो, और जो व्यक्ति तुम्हें सलाम करे उस से मात्र इस कारण कि सांसारिक जीवन के लाभ की चाह है यह न कहो कि तू मोमिन नहीं है।[174](तुम्हें मालूम होना चाहिए) कि अल्लाह के पास बहुत सारे माले ग़नीमत (परिहार) हैं। तुम्हारा हाल भी तो पहले ऐसा ही था लेकिन अल्लाह ने तुम पर फ़ज़्ल (उपकार) फ़रमाया।[175] अतः छान बीन कर लिया करो। तुम जो कुछ करते हो अल्लाह को उस की ख़बर रहती है।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا ضَرَبْتُمْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ فَتَبَيَّنُوْا
وَلَا تَقُوْلُوْا لِمَنْ اَلْقٰٓى اِلَيْكُمُ السَّلٰمَ لَسْتَ مُؤْمِنًا ۚ تَبْتَغُوْنَ عَرَضَ
الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ۡ فَعِنْدَ اللّٰهِ مَغَانِمُ كَثِيْرَةٌ ۭ كَذٰلِكَ كُنْتُمْ مِّنْ قَبْلُ
فَمَنَّ اللّٰهُ عَلَيْكُمْ فَتَبَيَّنُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا ﴿۹۴﴾

95. ईमान वालों में बिना उज़्र (अकारण) बैठे रहने वाले और अपनी जान और माल से अल्लाह की राह में जिहाद करने वाले बराबर नहीं हैं। अल्लाह ने जान और माल से जिहाद करने वालों को बैठ रहने वालों पर दर्जे के लिहाज़ से फज़ीलत (श्रेष्ठता) बख़्शी है। और दोनों ही से अल्लाह ने भलाई का वादा किया है।[176] मगर जिहाद करने वालों को बैठ रहने वालों के मुक़ाबले में बहुत बड़े बदले (ईनाम) की फ़ज़ीलत बख्शी है।

لَا يَسْتَوِي الْقٰعِدُوْنَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ غَيْرُ اُولِي الضَّرَرِ وَالْمُجٰهِدُوْنَ
فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ ۭ فَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجٰهِدِيْنَ
بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ عَلَى الْقٰعِدِيْنَ دَرَجَةً ۭ وَكُلًّا وَّعَدَ اللّٰهُ
الْحُسْنٰى ۭ وَفَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجٰهِدِيْنَ عَلَى الْقٰعِدِيْنَ اَجْرًا عَظِيْمًا ﴿۹۵﴾

96. उस की तरफ़ से दर्जे हैं और क्षमादान, और दयालुता और अल्लाह बड़ा क्षमाशील और दया करने वाला है।

دَرَجٰتٍ مِّنْهُ وَمَغْفِرَةً وَّرَحْمَةً ۭ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُوْرًا
رَّحِيْمًا ﴿۹۶﴾

97. जिन लोगों ने अपने नफ़्स पर ज़ुल्म ढाया है उन की जान जब फ़रिश्ते खींचते हैं तो उन से पूछते हैं कि तुम किस हाल में थे ? वे जवाब देते हैं कि हम तो इस मुल्क में बिल्कुल बेबस थे। वे कहते हैं कि क्या अल्लाह की सरज़मीन फैली हुई न थी कि उस में (घर बार छोड़ कर) हिज़रत कर जाते ? ऐसे लोगों का ठिकाना जहन्नम है और वह बहुत बुरी जगह है।[177]

اِنَّ الَّذِيْنَ تَوَفّٰىهُمُ الْمَلٰۗىِٕكَةُ ظَالِمِيْٓ
اَنْفُسِهِمْ قَالُوْا فِيْمَ كُنْتُمْ ۭ
قَالُوْا كُنَّا مُسْتَضْعَفِيْنَ فِي الْاَرْضِ ۭ قَالُوْٓا اَلَمْ تَكُنْ
اَرْضُ اللّٰهِ وَاسِعَةً فَتُهَاجِرُوْا فِيْهَا ۭ فَاُولٰۗىِٕكَ مَاْوٰىهُمْ
جَهَنَّمُ ۭ وَسَاۗءَتْ مَصِيْرًا ﴿۹۷﴾

98. अलबत्ता वे बेबस मर्द, औरतें और बच्चे जो न तो कोई तदबीर कर सकते हैं और न (हिजरत की कोई) राह पाते हैं।

اِلَّا الْمُسْتَضْعَفِيْنَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَاۗءِ وَالْوِلْدَانِ
لَا يَسْتَطِيْعُوْنَ حِيْلَةً وَّلَا يَهْتَدُوْنَ سَبِيْلًا ﴿۹۸﴾

174. मतलब यह है कि जब किसी इलाक़े पर हमले के लिए निकलो तो पूरी छानबीन कर लो कि मुसलमान कहाँ कहाँ हैं ताकि उन पर ग़लती से हमला न कर बैठो और अगर कोई व्यक्ति अपने ईमान को ज़ाहिर करने के लिए तुम्हें सलाम करे तो उस के इस्लाम का इन्कार न करो। अगर माले ग़नीमत (परिहार) की लालच में उस पर हमला करना चाहते हो तो तुम्हें मालूम होना चाहिए कि अल्लाह के पास माल के बड़े भण्डार हैं अत: आख़िरत के ईनाम को लक्ष्य बनाओ।

इस्लाम में जंग का उद्देश्य मात्र मुल्क को जीत लेना नहीं है बल्कि सत्य और न्याय की स्थापना है। इस लिए अगर ठीक जंग की हालत में दुश्मन का कोई आदमी कलमा पढ़ता है या अस्सलामु अलैकुम कह कर अपने मुसलमान होने का इज़्हार करता है तो इस संदेह के बावजूद कि संभव है वह जान बचाने के लिए झूठ बोल रहा हो उस को क़त्ल नहीं किया जा सकता। क्यों कि इस बात की भी संभावना है कि वह वास्तव में मुसलमान हो गया हो। अत: सावधानी और एहतियात का तक़ाज़ा यही है कि उसे क़त्ल न किया जाए।

इस से यह उसूली हिदायत भी मिलती है कि किसी कलमा गो (ईमान का इक़रार करने वाले) को काफ़िर नहीं मानना चाहिए और जो व्यक्ति भी अपने आप को मुसलमान कहलाए उसे मुसलमान स्वीकार करना चाहिए । यह अलग बात है कि छानबीन से साबित हो जाए कि वह अपने दावे में बिलकुल झूठा है।

175. अर्थात् इस से पहले तुम ने भी सिर्फ कलमा पढ़ कर इस्लाम में प्रवेश किया था। इस के बाद अल्लाह तआला ने तुम्हें ईमान में दृढ़ता प्रदान की और तुम पक्के मुसलमान बन गए । इसी तरह यह लोग भी अगर अपने मुसलमान होने का ज़बानी इक़रार करें तो उसे स्वीकार करो।

176. यह उस सूरत का ज़िक्र है जब कि जिहाद के लिए सार्वजनिक बिगुल न बजा हो और कुछ लोगों का जिहाद के लिए निकलना काफ़ी हो। अत: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम छोटी छोटी मुहिम पर फ़ौज़ी दस्ते रवाना करते थे जिस को 'सरिय्या'' कहा जाता है। ऐसे हालात में जिहाद की हैसियत एक श्रेष्ठ श्रेणी की ही है लेकिन अगर जिहाद का सार्वजनिक बिगुल हो जाए तो इस सूरत में भलाई का वादा अकारण (बिना उज़्र) बैठ रहने वालों के लिए नहीं है।

स्पष्ट रहे कि जिन युद्धों में स्वयं नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम निकल गए थे उन में बिना उज़्र (अकारण) बैठ रहने वालों पर क़ुर्आन में सख़्त पकड़ की गई है क्यों कि यह बात ईमान के विपरीत है कि अल्लाह का रसूल अपनी जान जोखिम में डाल कर एक मुहिम (सैन्याक्रमण) पर रवाना हो जाए और उस के अनुयायी जान बचाने के लिए अपने घरों में बैठे रहें जब कि ईमान का खुला तक़ाज़ा यह है कि नबी की जान अपनी जान से भी प्रिय हो और सच्चाई यह है कि ऐसे मौक़े पर जिहाद से वही कतराते थे जो मुनाफ़िक़ (पाखण्डी) थे वर्ना हर मुसलमान रसूल पर जान निछावर करने को तैयार था।

177. नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के मदीना हिजरत कर जाने के बाद जो मुसलमान मक्का और उस के इर्द गिर्द रह गए थे उन पर हिजरत फ़र्ज़ हो गई थी। हिजरत का यह हुक्म निम्न कारणों से दिया गया था।

(A) मक्का और उस के इर्द गिर्द के इलाक़े जहाँ मुश्रिकों को प्रभुत्व प्राप्त था अक़ीदा और विचार की आज़ादी हासिल नहीं थी। इस लिए जो लोग बहुदेववादी धर्म को त्याग कर इस्लाम की शरण में आ रहे थे उन पर अमानुषिक अत्याचार तोड़े जा रहे थे। और उन्हें इस बात के लिए मजबूर किया जा रहा था कि वे इस्लामी व्यवस्था से निकल कर बहुदेववादी व्यवस्था में वापस आ जाऐं। इन हालात में ईमान पर क़ायम रहना जान जोख़िम में डालने के समानार्थ था। नतीजा यह कि जिन लोगों का अभी ईमान दृढ़ नहीं था वे या तो अपने ईमान को छिपाते या बहुदेववादी व्यवस्था के साथ समझौता करते। इस तरह इस्लाम और शिर्क (बहुदेववाद) तथा ईमान और कुफ़्र दोनों को एकत्र किया जाता । ज़ाहिर है कि जिस ज़मीन में ईमान पर क़ायम रहने की अज़ादी नसीब न हो उस ज़मीन को त्याग देना ईमान का ख़ुला तक़ाज़ा है। चाहे वह मक्का की पावन धरती ही क्यों न हो। क्यों कि ईमान और ख़ुदा से वफ़ादारी ख़ाक और ख़ून तथा वशं और मातृभूमि की वफ़ादारियाँ पर हावी है।

(B) अल्लाह के रसूल के हिजरत कर जाने के बाद मुसलमानों का हिजरत से मुँह फेरने का अर्थ यह था कि वे रसूल की मुहब्बत पर अपने घर बार की मुहब्बत को वरीयता देते हैं। जब कि रसूल से मुहब्बत का तक़ाज़ा यह है कि जिस चीज़ को रसूल ने छोड़ा उसे ईमान वाले भी छोड़ दें और रसूल का साथ, उस की सेवा में उपस्थिति और उस की मदद को अपने लिए सौभाग्य की बात समझें और अपना सब कुछ उस पर निछावर करने के लिए तैयार हो जाऐं।

(C) इस्लाम और कुफ़्र के बीच जंग बरपा थी और अल्लाह का रसूल अपने मुट्ठी भर साथियों के साथ मक्का के मुश्रिकों के चेलेंन्ज का जवाब देने के लिए स्वयं युद्ध स्थल में मौजूद होता था इस लिए उस समय इस बात की आवश्यकता थी कि इस्लाम की ताक़त एक केन्द्र पर एकत्रित हो और रसूल

के नेतृत्व में इस्लाम दुश्मनों का मुक़ाबला किया जाए। लेकिन जिन मुसलमानों ने हिजरत नहीं की थी उन का वज़न इस्लाम के पलड़े में पड़ने के बजाए इस्लाम दुश्मनों के पलड़े में पड़ रहा था। यहाँ तक कि कुछ लोग मुश्रिकों के दबाव की वजह से उन के लश्कर में शरीक होने के लिए अपने को मजबूर पाते और इस तरह रसूल और उस के साथियों के मुक़ाबले के लिए जंग के मैदान में आ मौजूद होते ।

ये थे उस समय के हालात जिन में मक्का और उस के ईर्द गिर्द रहने वाले मुसलमानों को हुक्म दिया गया कि वे मदीना को हिजरत कर जाऐं। इस हुक्म का पालन न करने का मतलब यह था कि वे अपने ईमान को फितने में डालना गवारा कर लें लेकिन अपना घर बार छोड़ने के लिए तैयार न हों। इसी लिए इस आयत में किसी वास्तविक कारण के बिना हिजरत न करने को अपने ही नफ़्स पर ज़ुल्म ढाना बताया गया है उन्हें सख़्त अज़ाब की चेतावनी सुनाई गई है।

इस से जो उसूली हिदायत मिलती है वह यह है कि जिस मुल्क में भी इस्लाम प्रकट करने की स्वतंत्रता न हो और दमन एवं अत्याचार के कारण ईमान ही ख़तरे में पड़ जाए वहाँ से किसी ऐसे भू भाग की ओर मात्र अल्लाह की ख़ातिर घर बार छोड़ कर कूच (हिजरत) करना ज़रुरी है जहाँ ईमान की रक्षा की जा सकती हो और इस्लाम के कम से कम बुनियादी तक़ाज़ों को पूरा किया जा सकता हो। अब यह और बात है कि ऐसे हालात में भी आदमी हिजरत करने पर समर्थ न हो।

और जो कोई अल्लाह की राह में (घर बार छोड़ कर) हिज़रत करेगा वह ज़मीन में बहुत से ठिकाने, और बड़ी समाई पाएगा और जो व्यक्ति अपने घर से अल्लाह और उस के रसूल की तरफ़ हिजरत कर के निकले फिर उसे मौत आ जाए तो उस का बदला अल्लाह के ज़िम्मे साबित (अनिवार्य) हो गया। अल्लाह क्षमाशील और दया करने वाला है।(अल-क़ुर्आन)

99. ऐसे लोगों को उम्मीद है कि अल्लाह माफ़ कर देगा । अल्लाह बड़ा माफ़ करने वाला और क्षमा करने वाला है।

فَاُولٰٓئِكَ عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَّعْفُوَ عَنْهُمْ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ
عَفُوًّا غَفُوْرًا ﴿٩٩﴾

100. और जो कोई अल्लाह की राह में (घर बार छोड़ कर) हिज़रत करेगा वह ज़मीन में बहुत से ठिकाने, और बड़ी समाई पाएगा [178] और जो व्यक्ति अपने घर से अल्लाह और उस के रसूल की तरफ़ हिजरत कर के निकले फिर उसे मौत आ जाए तो उस का बदला अल्लाह के ज़िम्मे साबित (अनिवार्य) हो गया।[179] अल्लाह क्षमाशील और दया करने वाला है।

وَمَنْ يُّهَاجِرْ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ يَجِدْ فِي الْاَرْضِ
مُرٰغَمًا كَثِيْرًا وَّسَعَةً ؕ وَمَنْ يَّخْرُجْ مِنْۢ بَيْتِهٖ
مُهَاجِرًا اِلَى اللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ ثُمَّ يُدْرِكْهُ الْمَوْتُ
فَقَدْ وَقَعَ اَجْرُهٗ عَلَى اللّٰهِ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ
غَفُوْرًا رَّحِيْمًا ﴿١٠٠﴾

101. और जब तुम सफ़र में निकलो तो नमाज़ कस्र (संक्षिप्त) करने में तुम पर कोई गुनाह नहीं, अगर तुम्हें भय हो कि काफ़िर तुम्हें कष्ट देंगे ।[180] काफ़िर तो हैं ही तुम्हारे खुले दुश्मन।

وَاِذَا ضَرَبْتُمْ فِي الْاَرْضِ فَلَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ
تَقْصُرُوْا مِنَ الصَّلٰوةِ ۖۗ اِنْ خِفْتُمْ اَنْ يَّفْتِنَكُمُ الَّذِيْنَ
كَفَرُوْا ؕ اِنَّ الْكٰفِرِيْنَ كَانُوْا لَكُمْ عَدُوًّا مُّبِيْنًا ﴿١٠١﴾

102. और जब तुम (ऐ पैग़म्बर !) इन (मुसलमानों) के बीच मौजूद हो और नमाज़ में इन की इमामत कर रहे हों तो चाहिए कि एक गिरोह तुम्हारे साथ खड़ा हो जाए और अपने हथियार लिए रहे जब वह सजदा कर चुके तो वह तुम्हारे पीछे चला जाए और दूसरा गिरोह जिसने अभी नमाज़ नहीं पढ़ी है, तुम्हारे साथ नमाज़ में शरीक हो जाए। और चाहिए कि वे अपनी हिफ़ाज़त का सामान और अपने असलहे लिए हुए हों ।[181] काफ़िर चाहते हैं कि तुम अपने असलहे और (जंग के) सामान से ज़रा भी ग़ाफिल हो तो वे एकबारगी तुम पर टूट पड़ें। अलबत्ता अगर बारीश की वजह से तकलीफ़ हो या तुम बीमार हो तो कोई दोष नहीं अगर तुम अपने हथियार उतार कर रख दो। फिर भी अपनी सुरक्षा का सामान लिए रहो।[182] यक़ीन जानों अल्लाह ने काफ़िरों के लिए अपमानजनक यातना (अज़ाब) तैयार कर रखी है।

وَاِذَا كُنْتَ فِيْهِمْ فَاَقَمْتَ لَهُمُ الصَّلٰوةَ فَلْتَقُمْ طَآئِفَةٌ
مِّنْهُمْ مَّعَكَ وَلْيَاْخُذُوْٓا اَسْلِحَتَهُمْ ۫ فَاِذَا سَجَدُوْا فَلْيَكُوْنُوْا
مِنْ وَّرَآئِكُمْ ۪ وَلْتَاْتِ طَآئِفَةٌ اُخْرٰى لَمْ يُصَلُّوْا فَلْيُصَلُّوْا
مَعَكَ وَلْيَاْخُذُوْا حِذْرَهُمْ وَاَسْلِحَتَهُمْ ۚ وَدَّ الَّذِيْنَ
كَفَرُوْا لَوْ تَغْفُلُوْنَ عَنْ اَسْلِحَتِكُمْ وَاَمْتِعَتِكُمْ فَيَمِيْلُوْنَ
عَلَيْكُمْ مَّيْلَةً وَّاحِدَةً ؕ وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِنْ كَانَ بِكُمْ
اَذًى مِّنْ مَّطَرٍ اَوْ كُنْتُمْ مَّرْضٰٓى اَنْ تَضَعُوْٓا اَسْلِحَتَكُمْ ۚ وَ
خُذُوْا حِذْرَكُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ اَعَدَّ لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابًا مُّهِيْنًا ﴿١٠٢﴾

103. फिर जब तुम नमाज़ अदा कर चुको तो अल्लाह को याद करो खड़े, बैठे और लेटे [183] और जब इत्मीनान की हालत मयस्सर आए तो पूरी नमाज़ क़ायम करो।[184] बेशक नमाज़ ईमान वालों पर वक्त की पाबन्दी के साथ फ़र्ज़ कर दी गई है ।[185]

فَاِذَا قَضَيْتُمُ الصَّلٰوةَ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ قِيٰمًا وَّقُعُوْدًا
وَّعَلٰى جُنُوْبِكُمْ ۚ فَاِذَا اطْمَاْنَنْتُمْ فَاَقِيْمُوا الصَّلٰوةَ ۚ اِنَّ
الصَّلٰوةَ كَانَتْ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ كِتٰبًا مَّوْقُوْتًا ﴿١٠٣﴾

178. क़ुर्आन का यह वादा शब्द शब्द पूरा हुआ और मुहाजिरीन (हिजरत करने वालों को) मदीना में बहुत ही अच्छा ठिकाना मिल गया और धीरे धीरे वे आर्थिक रुप से भी सुदृढ़ होते गए।

179. इस से इस बात पर रौशनी पड़ती है कि अल्लाह तआला के यहाँ किसी भी हुक्म को पूरा करने के सिलसिले में आदमी की नीयत और उस का पालन शुरू कर देना ही मान्य है। अगर उस काम के पूरा होने से पहले उस की मौत हो जाए तो अल्लाह तआला के यहाँ उस की मज़दूरी मारी नहीं जाएगी और वह उस की बख़्शिशों और रहमतों का हक़दार ठहराया जाएगा ।

180. यह ''सलात-ए-ख़ौफ़ अर्थात् जंग में नमाज़ अदा करने का तरीक़ा जिसे ''कस्र''(संक्षिप्त) बताया गया है। और कस्र की शक्ल तो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की सुन्नत से साबित है वह यह कि जुहर, अस्र और इशा की फ़र्ज़ नमाज़ों की रकअतें चार चार के बजाय दो दो पढ़ी जाती। रहीं फ़ज्र और मग़रिब की नमाज़ें वे ''कस्र'' (संक्षिप्त) नहीं हैं। अत: एक जगह ठहरे होने की हालत और सफ़र की हालत दोनों में मग़िरब की तीन रकअतें और फ़ज्र की दो रकअतें अदा की जाऐंगी।

कस्र का हुक्म वास्तव में जिहाद के लिए दिया गया था लेकिन फिर हर तरह के सफ़र के लिए आम कर दिया गया। लेकिन सफ़र में साधारणता कष्ट संतोष की मनोदशा होती है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने शान्तिपूर्ण सफ़र में कस्र की इजाज़त से फायदा उठाने को जायज़ ठहराते हुए फ़रमाया:

صدقه تصدق الله بِهَا عليكم

فاقبلُوا صدقته۔ (مسلم کتاب صلوة المسافرين)

''कस्र की इजाज़त अल्लाह तआला की बख़्शिश है अत: इस बख़्शिश को क़ुबूल करो'' (मुस्लिम किताबुल मुसाफ़िरीन)

और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से यह तरीक़ा (सुन्नत) भी साबित है कि आप ख़ौफ़ और अमन दोनो हालतों में कस्र फ़रमाया करते थे।

181. यहाँ जंग की हालत में जमाअत के साथ नमाज़ अदा करने का एक ख़ास तरीक़ा बताया गया है जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की मौजूदगी में इख़्तियार करना ज़रुरी था। क्यों कि आप की मौजूदगी में जब कि आप नमाज़ की इमामत फ़रमा रहें हों, मुनासिब यही था कि पूरी फ़ौज आप की पैरवी में आप के पीछे नमाज़ अदा करे। अलग अलग इमाम और अलग जमाअतें न हों। और आप के साथियों (सहाबा) पर भी यह बात भारी थी कि आप इमामत फ़रमाऐं और उन में से कोई व्यक्ति उस में हिस्सा लेने से वंचित रहे। इस लिए आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की मौजूदगी में ''सलाते-ख़ौफ़'' अदा करने का ख़ास तरीक़ा बताया गया जिस की तफ़सील यह है कि एक गिरोह असलहे के साथ आप के पीछे खड़ा हो और दूसरा गिरोह सुरक्षा का काम अन्जाम दे। जब पहला गिरोह आप की पैरवी में आप के पीछे एक रकअत अदा कर चुके तो दूसरी रकअत अपने तौर पर अदा करे और इस के बाद पीछे चला जाए और सुरक्षा का काम संभाले और दूसरा गिरोह असलहे के साथ आए और आप के साथ नमाज़ में शरीक हो जाए। जब आप के साथ एक रकअत अदाकर चुके तो दूसरी रकअत खुद अदा करे ।

इस से नमाज़ के महत्व का पता चलता है कि ठीक रणक्षेत्र में भी इस की अदायगी ज़रुरी है और हक़ीक़त यह है कि जिहाद की असल रुह नमाज़ ही है तथा इस से जमाअत के साथ नमाज़ पढ़ने की भी अहमियत स्पष्ट होती है। जंग की हालत में अगर जमाअत से नमाज़ अदा न की जा सकती हो तो फिर अलग अलग नमाज़ अदा करना चाहिए। अगर क़िबला की तरफ़ रुख़ न किया जा सके और अगर रुकू और सजदा न किया जा सकता हो तो इशारे से नमाज़ पढ़ना चाहिए। और अगर ऐसी हालत हो कि किसी तरह से भी नमाज़ अदा न की जा सकती हो तो फ़िर क़ज़ा करनी चाहिए। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने ख़न्दक़ की जंग के मौके पर जब कि युद्ध जारी था नमाज़ न पढ़ सके और बाद में क़ज़ा पढ़ी ।

182. अर्थात् अगर बारिश के कारण हथियार उतारना पड़े तो सुरक्षात्मक वस्तुऐं जरुर लिए रहो। उस ज़माने में सुराक्षत्मक वस्तुऐं कवच (जंगी लिबास) ढाल, लोहे की टोपी आदि थीं। इस से यह बात भी स्पष्ट होती है कि क़ुर्आन ने रक्षा (Defence) का प्रबन्ध करने पर कितना बल दिया है।

183. अर्थात हर हाल में अल्लाह को याद करो। अल्लाह को याद करने से हौसले बुलन्द होते हैं अत:रणक्षेत्र (जंग के मैदान) में भी अल्लाह की याद से ग़ाफ़िल नहीं होना चाहिए।

184. मतलब यह कि जब ख़ौफ़ की हालत दूर हो और इत्मीनान की सूरत पैदा हो जाए तो नित्यक्रम (Routine) के अनुसार पूरी नमाज़ अदा करो ।

185. इस से स्पष्ट हुआ कि नमाज़ के समय निश्चित हैं जिन की पाबन्दी ईमान वालों पर फ़र्ज़ हैं । रात और दिन में पाँच नमाज़ें फ़ज्र, जुहर, अस्र, मग़्रिब और इशा। इन नमाज़ों के समय के बारे में तफ़सील नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने बयान फ़रमाई।

وَلَا تَهِنُوا فِي ابْتِغَاءِ الْقَوْمِ ۖ إِن تَكُونُوا تَأْلَمُونَ
فَإِنَّهُمْ يَأْلَمُونَ كَمَا تَأْلَمُونَ ۖ وَتَرْجُونَ مِنَ اللَّهِ مَا
لَا يَرْجُونَ ۗ وَكَانَ اللَّهُ عَلِيمًا حَكِيمًا ﴿١٠٤﴾

104. और दुश्मनों का पीछा करने में कमज़ोरी न दिखाओ। अगर तुम तकलीफ़ उठा रहे हो तो वे भी तुम्हारी ही तरह तकलीफ़ उठा रहे हैं। और तुम अल्लाह से उस चीज़ की उम्मीद रखते हो [186] जिस चीज़ की उम्मीद वे नहीं रखते। अल्लाह इल्म वाला भी है और हिकमत वाला भी।

إِنَّا أَنزَلْنَا إِلَيْكَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ لِتَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ بِمَا أَرَاكَ
اللَّهُ ۚ وَلَا تَكُن لِّلْخَائِنِينَ خَصِيمًا ﴿١٠٥﴾

105. हम ने यह किताब तुम पर हक़ के साथ उतारी है ताकि जो हक़ अल्लाह ने तुम्हें दिखाया है उस के अनुसार लोगों के बीच फैसला करो और ख़ियानत (विश्वासघात) करने वालों के हिमायती न बनो।[187]

وَاسْتَغْفِرِ اللَّهَ ۖ إِنَّ اللَّهَ كَانَ غَفُورًا رَّحِيمًا ﴿١٠٦﴾

106. और अल्लाह से क्षमा माँगो। नि:संदेह अल्लाह क्षमा करने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।

وَلَا تُجَادِلْ عَنِ الَّذِينَ يَخْتَانُونَ أَنفُسَهُمْ ۚ إِنَّ اللَّهَ
لَا يُحِبُّ مَن كَانَ خَوَّانًا أَثِيمًا ﴿١٠٧﴾

107. उन लोगों की वकालत न करो जो अपने नफ़्स से खियानत करते हैं।अल्लाह ऐसे लोगों को पसन्द नहीं करता जो विश्वासघाती और पाप करने वाले हों।

يَسْتَخْفُونَ مِنَ النَّاسِ وَلَا يَسْتَخْفُونَ مِنَ اللَّهِ
وَهُوَ مَعَهُمْ إِذْ يُبَيِّتُونَ مَا لَا يَرْضَىٰ مِنَ الْقَوْلِ ۚ وَكَانَ
اللَّهُ بِمَا يَعْمَلُونَ مُحِيطًا ﴿١٠٨﴾

108. ये लोगों से छिपते हैं लेकिन अल्लाह से नहीं छिप सकते। वह उस समय भी उन के साथ होता है जब कि वे रात को उस की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ परामर्श कर रहे होते हैं।[188] वे जो कुछ करते हैं अल्लाह उस को अपने घेरे में लिए हुए है।

هَا أَنتُمْ هَٰؤُلَاءِ جَادَلْتُمْ عَنْهُمْ فِي الْحَيَاةِ الدُّنْيَا فَمَن
يُجَادِلُ اللَّهَ عَنْهُمْ يَوْمَ الْقِيَامَةِ أَم مَّن يَكُونُ عَلَيْهِمْ
وَكِيلًا ﴿١٠٩﴾

109. देखो ये तुम हो कि दुनिया की ज़िन्दगी में तुम ने इन की तरफ़ से झगड़ा कर लिया लेकिन क़ियामत के दिन कौन होगा जो इन की तरफ़ से अल्लाह से झगड़ा करेगा या कौन इन का जिम्मेदार बनेगा ?[189]

وَمَن يَعْمَلْ سُوءًا أَوْ يَظْلِمْ نَفْسَهُ
ثُمَّ يَسْتَغْفِرِ اللَّهَ يَجِدِ اللَّهَ غَفُورًا رَّحِيمًا ﴿١١٠﴾

110. जो व्यक्ति कोई बुराई कर बैठे या अपने नफ़्स पर जुल्म करे और फ़िर अल्लाह से क्षमा माँगे तो वह अल्लाह को क्षमा करने वाला, रहम करने वाला पाएगा।[190]

وَمَن يَكْسِبْ إِثْمًا فَإِنَّمَا يَكْسِبُهُ عَلَىٰ نَفْسِهِ ۚ وَكَانَ اللَّهُ
عَلِيمًا حَكِيمًا ﴿١١١﴾

111. और जो व्यक्ति भी बुराई कमाता है उस की कमाई का वबाल उसी पर है। अल्लाह सब कुछ जानता है और हिकमत रखने वाला है।

186. अर्थात् तुम अल्लाह से उस की मदद और आख़िरत की कामयाबी की उम्मीद रखते हो इस लिए तुम्हारे हौसले बुलन्द होने चाहिए और तुम्हें सब्र से काम लेना चाहिए।

187. इस आयत में ख़ियानत से मुराद अल्लाह और उस के रसूल के साथ बेवफ़ाई है। जो लोग अपने ईमान में सच्चे नहीं थे वे एक न एक हरकत ऐसी करते जिस से दीन को हानि पहुँचती और ख़ुदा एवं रसूल के बारे में उन की विकृत मानसिकता प्रकट होती। लेकिन चूँकि वे लोग मुसलमान कहलाने के कारण मुस्लिम समाज का हिस्सा बन गए थे और मुसलमानों की उन से रिश्तेदारियाँ भी थीं। इस लिए जब उन की ग़लत हरकतों पर पकड़ की जाती तो कुछ मुसलमान उन की हिमायत करने लगते। यहाँ इसी बात पर सावधान किया गया है कि अल्लाह और उस के रसूल के साथ विश्वासघात करने वालों की हिमायत करना सही नहीं। किसी के हक़ (सत्य) पर होने या बातिल (असत्य) पर होने का फैसला अल्लाह की किताब की रौशनी ही में होना चाहिए और बेलाग होना चाहिए। आयत में खिताब नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से है लेकिन दरअसल आप के माध्यम से तंबीह उन मुसलमानों को है जो मुनाफ़िक़ों (पाखण्डियों तथा विश्वासघातियों) की हिमायत करते हैं।

188. इशारा है मुनाफ़िक़ों की ख़ुफ़िया मज़लिसों और साज़िशों की तरफ़ ।

189. अर्थात् क़ियामत के दिन प्रत्येक व्यक्ति केवल अपने किए का ज़िम्मेदार होगा और दूसरों के गुनाहों का बोझ स्वीकार करने वाला नहीं। फिर तुम दुनिया में दिखावटी मुसलमानों की बेजा हिमायत कर के क्या हासिल करोगे?

190. जो लोग अपने ईमान में सच्चे नहीं थे और इस्लाम की उभरती हुई ताक़त के ख़िलाफ़ गुप्त रुप से साज़िशें कर रहे थे उन्हें ध्यान दिलाया गया है कि अगर अब भी वे अपनी पिछली हरकतों पर लज्जित हो कर अल्लाह से माफ़ी माँगें और अल्लाह से वफ़ादारी का सम्बन्ध जोड़ें तो अल्लाह की क्षमा और रहमत के हक़दार हो सकते हैं।

112. और जिस व्यक्ति ने कोई गुनाह या जुर्म कर के उस का इल्ज़ाम किसी बेगुनाह के सर थोप दिया तो उस ने बड़े बोहतान और खुले गुनाह का बोझ अपने सर ले लिया ।[191]

وَمَنْ يَكْسِبْ خَطِيٓئَةً اَوْ اِثْمًا ثُمَّ يَرْمِ بِهٖ بَرِيٓـًٔا فَقَدِ احْتَمَلَ بُهْتَانًا وَّاِثْمًا مُّبِيْنًا ﴿١١٢﴾

113. और अगर तुम पर अल्लाह का फ़ज़्ल (उदार अनुग्रह) और उस की रहमत न होती तो इन में से एक गिरोह ने तुम्हें ग़लत रास्ते पर डाल देने का निश्चय कर ही लिया था। हालाँकि ये अपने ही को ग़लत रास्ते पर डाल रहे हैं। ये तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। अल्लाह ने तुम पर किताब और हिकमत नाज़िल फ़रमाई है और तुम्हें वह कुछ सिखाया है जो तुम्हें मालूम न था। अल्लाह का तुम पर बड़ा फ़ज़्ल है।[192]

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ وَرَحْمَتُهٗ لَهَمَّتْ طَّآئِفَةٌ مِّنْهُمْ اَنْ يُّضِلُّوْكَ ؕ وَمَا يُضِلُّوْنَ اِلَّآ اَنْفُسَهُمْ وَمَا يَضُرُّوْنَكَ مِنْ شَيْءٍ ؕ وَاَنْزَلَ اللّٰهُ عَلَيْكَ الْكِتٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَعَلَّمَكَ مَا لَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ ؕ وَكَانَ فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ عَظِيْمًا ﴿١١٣﴾

114. इन की गुप्त कानाफूसियों में अधिकतर कोई भलाई नहीं होती।[193] हाँ जो व्यक्ति गुप्त रुप से सदक़ा, या भली बात या लोगों के बीच सुलह सफ़ाई के लिए कहे तो इस में ज़रुर भलाई है।[194] और जो कोई अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए ऐसे काम करेगा हम उसे बड़ा बदला देंगे।

لَا خَيْرَ فِيْ كَثِيْرٍ مِّنْ نَّجْوٰىهُمْ اِلَّا مَنْ اَمَرَ بِصَدَقَةٍ اَوْ مَعْرُوْفٍ اَوْ اِصْلَاحٍۢ بَيْنَ النَّاسِ ؕ وَمَنْ يَّفْعَلْ ذٰلِكَ ابْتِغَآءَ مَرْضَاتِ اللّٰهِ فَسَوْفَ نُؤْتِيْهِ اَجْرًا عَظِيْمًا ﴿١١٤﴾

115. और जो व्यक्ति हिदायत के स्पष्ट हो जाने के बाद रसूल का विरोध करेगा और ईमान लाने वालों की राह को छोड़ कर किसी अन्य राह को अपनाएगा[195] हम उसे उसी राह पर डाल देंगे जिस की तरफ़ वह फिरा और उसे जहन्नम में दाख़िल करेंगे जो बहुत बुरी जगह है।

وَمَنْ يُّشَاقِقِ الرَّسُوْلَ مِنْۢ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُ الْهُدٰى وَيَتَّبِعْ غَيْرَ سَبِيْلِ الْمُؤْمِنِيْنَ نُوَلِّهٖ مَا تَوَلّٰى وَنُصْلِهٖ جَهَنَّمَ ؕ وَسَآءَتْ مَصِيْرًا ﴿١١٥﴾

116. अल्लाह इस बात को हरगिज़ क्षमा नहीं करेगा कि उस का शरीक (साझीदार) ठहराया जाए।[196] इस के सिवा जो गुनाह हैं वह जिस के लिए चाहेगा बख़्श देगा ।[197] और जिस ने अल्लाह का साझीदार ठहराया वह भटक कर बहुत दूर जा पड़ा ।

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُّشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُوْنَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَّشَآءُ ؕ وَمَنْ يُّشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدْ ضَلَّ ضَلٰلًاۢ بَعِيْدًا ﴿١١٦﴾

117. ये लोग उस को छोड़ कर देवियों को पुकारते हैं[198] और (हक़ीक़त यह है कि) यह शैतान सरकश ही को पुकारते हैं।[199]

اِنْ يَّدْعُوْنَ مِنْ دُوْنِهٖۤ اِلَّآ اِنٰثًا ۚ وَاِنْ يَّدْعُوْنَ اِلَّا شَيْطٰنًا مَّرِيْدًا ﴿١١٧﴾

118. अल्लाह ने उस पर लानत फ़रमाई है।[200] उस ने (अल्लाह से) कहा था कि मैं तेरे बन्दों में से एक निश्चित हिस्सा ले कर रहूँगा।[201]

لَّعَنَهُ اللّٰهُ ۘ وَقَالَ لَاَتَّخِذَنَّ مِنْ عِبَادِكَ نَصِيْبًا مَّفْرُوْضًا ﴿١١٨﴾

191. इशारा है मुनाफ़िक़ों की उस हरकत की तरफ़ कि जब उन की कोई साज़िश पकड़ी जाती या उन का कोई गुनाह ज़ाहिर हो जाता तो वह बहाने बना कर दूसरों को उस का अपराधी ठहराने की कुचेष्ठा करते। क़ुर्आन ने उसूली तौर पर स्पष्ट किया कि किसी भी जुर्म या गुनाह का कर बैठना अपने आप में स्वयं बुरी बात है लेकिन इस का इल्ज़ाम किसी बेगुनाह पर थोपना, गुनाह का बहुत बड़ा बोझ अपने सर लेना है क्यों कि यह गुनाह से भी बदतर बात है।

192. यहाँ नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को सम्बोधित कर के ईमान वालों को सावधान किया गया है कि अगर अल्लाह का फ़ज़्ल न होता तो मुनाफ़िक़ों के फ़ितने से तुम बच नहीं सकते थे। वे तुम्हारे ख़िलाफ़ बराबर साज़िशें कर रहे हैं और तुम्हें ग़लत रास्ते पर डालने की कोशिश में लगे हुए हैं। उन के फ़ितनों से बचने की सूरत यह है कि जिस किताब और हिकमत को अल्लाह तआला ने तुम्हें प्रदान किया है उस की क़द्र (मान सम्मान) करो।

193. अर्थात् इन मुनाफ़िक़ो (पाखन्डियों) की गुप्त कानाफूसियाँ अधिकतर फ़ितना और फ़साद के लिए होती हैं।

194. यह इस बात का प्रोत्साहन है कि गुप्त रुप से भी भलाई की बातें की जाऐं और भलाई ही की योजनाऐं बनाई जाऐं।

195. ईमान वालों की राह से मुराद सच्चे ईमान वालों का तरीक़ा है। इस आयत के नाज़िल होने के समय इस के अनुकूल सहाबा किराम थे जिन्होंने दीन की पैरवी सच्चे मन से की थी, वे रसूल के सच्चे वफ़ादार थे। उन का पूर्ण रुप से अनुकरण करते और उन्हें रसूल की तरफ़ से जो हुक्म भी मिलता उस का पालन करने में वे कोई कसर उठा न रखते चाहे इस के लिए उन्हें कैसे ही ख़तरे मोल लेने पड़ते। दूसरी तरफ़ मुनाफ़िक़ो का गिरोह था जो अपने को मुसलमान कहलाता था किन्तु जिस के लिए दीन की सच्चे मन से पैरवी करना और रसूल की सच्ची वफ़ादारी का सूबत देना कठिन एवं अप्रिय था इस लिए वह दीन के मामले में ऐसा तरीक़ा अपनाना चाहता था जो उस के हितों के अनुसार हो और उसे अपनी इच्छाओं, अपने विचारों, अपने माल और अपनी जान की क़ुर्बानी न देना पड़े। वह साधारण और बेरुह दीनदारी को अपना कर संतुष्ट था कि जन्नत में जाने के लिए यह ''शार्टकट'' काफी है।

इस मानसिकता के लोग आज भी मुसलमानों के अन्दर देखे जा सकते हैं। ज़माने की ''मसलहतों'' ने उन्हें इस्लाम में एक नई राह निकालने पर मजबूर किया है इस लिए उन की ''दीनदारी'' में और सच्चे मुसलमानों की ''दीनदारी'' में ज़मीन आसमान का फ़र्क होता है। एक का रुख़ क़िबले कि तरफ़ होता है तो दूसरे का उस की उल्टी दिशा को। एक इस्लाम पर सच्चे मन से अमल करने का प्रयत्न करता है तो दूसरा बहाने तलाश कर के उस से बच निकलने की राह ढूँढता है। एक दीन की रुह उजागर करता है तो दूसरा उस पर भौतिकता का परदा डाल देता है। एक गिरोह चाहता है कि इस्लाम के सामाजिक क़ानून बरक़रार रहें मगर दूसरा उस की समाप्ति चाहता है। एक गिरोह शरीअत के आदेशों को लागू करने पर ज़ोर देता है लेकिन दूसरा गिरोह इन्सानों के स्वयं रचित क़ानूनों को ही लागू कराने पर हठ करता है। इस तरह दोनो के दृष्टिकोण, कार्य पद्धाति, और प्रयासों में पूरब और पश्चिम का अन्तर होता है।ये सब लोग मुस्लिम समाज में शामिल समझे जाते हैं लेकिन वास्तव में यह दूसरा गिरोह मुसलमान नहीं होता। इस तरह के लोग मुसलमान कहलाने के बावजूद आख़िरत में जहन्नम के हक़दार क़रार पाते हैं।

196. शिर्क की व्याख्या के लिए देखिए सूरह निसा नोट नं. १११।

197. अर्थात् शिर्क अल्लाह तआला के यहाँ माफ़ न किया जाने वाला गुनाह है अत: इस से हर हाल में बचना चाहिए।

198. पुकारने से मुराद हाजतों को पूरा करने, मुश्किलों को दूर करने और फ़रियादों को सुनने के लिए पुकारना है। बहुदेववादी (मुश्रिक) हाजतों की पूर्ति के लिए देवियों को पुकारते हैं क्यों कि वे इस ख़ाम ख़याली में लिप्त होते हैं कि ख़ुदा ने अपने अधिकार इन में बाँट दिए हैं अत:कोई देवी धन दौलत प्रदान कर सकती है तो कोई बीमार को अच्छा कर सकती है और कोई बिगड़ी हुई क़िस्मत बना सकती है। क़ुर्आन बताता है और बुद्धि और प्रकृति इस का अनुमोदन एवं समर्थन करती है कि देवी देवताओं का कोई अस्तित्व ही नहीं है। सारे अधिकार और संपूर्ण सत्ता अल्लाह ही के पास है और उस की संप्रभुता और प्रबन्धशक्ति अविभाज्य है और फ़िर हाजतों की पूर्ति के लिए किसी को पुकारना वास्तव में उस को माबूद बनाना है जब कि सच यह है कि अल्लाह के सिवा कोई भी इबादत के लायक नहीं है।

> ''यह बात याद रखनी चाहिए कि बहुदेववादियों की देव माला में चाहे वे किसी क़ौम और मुल्क के बहुदेववादी (मुश्रिक) हों देवियों को सर्वाधिक महत्व प्राप्त रहा है, चीन, हिन्दुस्तान, अरब, मिस्र और बाबिल नेनवा आदि के बहुदेववादी धर्मो का जो इतिहास मौजूद है उस पर एक सरसरी नज़र डालकर इस की पुष्टि की जा सकती है। यह बात भी विशेष रुप से ध्यान देने योग्य है कि

ज़िन्दगी की जो असल ज़रुरतें हैं वे अधिकार इन्ही देवियों से सम्बन्धित समझी जाती रही हैं। अरब जाहिलिय्यत में भी खुदा की व्यवस्था और प्रबन्ध शक्ति पर अधिकतर देवियों का ही क़ब्ज़ा था। लात मनात उज़्ज़ा आदि देवियों ही के नाम हैं । ये----- फ़रिश्तों के बुत थे जिन के बारे में मुश्रिकों की धारणा थीं कि ये ख़ुदा की लाडली और चहीती बेटियाँ हैं जिन की बात ख़ुदा कभी नहीं टालता। इस कारण इन के माध्यम से जो कुछ माँगा जाए अगर ये राज़ी हों तो वह मिल के रहता है।''(तदब्बुरे-क़ुर्आन जिल्द २ पृष्ट १६०)

स्पष्ट रहे कि शिर्क सिर्फ़ मुश्रिकों में ही नहीं था बल्कि अहले-किताब ने भी मुश्रिक क़ौमों से प्रभावित हो कर मुश्रिकाना तरीक़े अपना लिए थे।

199. देवी देवताओं की धारणा वास्तव में शैतान का फ़रेब है और उन की परस्तिश करने का हुक्म भी शैतान ही देता है इस लिए जो लोग उस के आदेशों का पालन करते हुए शिर्क में लिप्त होते हैं वे वास्तव में शैतान ही के उपासक हैं।

200. शैतान पर अल्लाह ने लानत फ़रमाई है इस लिए वह भलाई से बिलकुल वंचित और सर से पैर तक बुराई ही बुराई है। अत: जो विचार भी वह इन्सान की बुद्धि में डालेगा वे गुमराह करने वाले ही होंगे। इस वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए इन्सान को चाहिए कि वह शैतान से चौकन्ना रहे और दिमाग़ में पैदा होने वाले विकृत विचारों का कोई असर क़ुबूल न करे।

201. यह इब्लीस का कथन है जो शैतानों का सरदार है। उस ने यह बात अल्लाह तआला से उस समय कही थी जब कि अल्लाह तआला ने इन्सान को पैदा कर के ज़मीन की ख़िलाफ़त (प्रतिनिधित्व) का ताज उस के सर पर रखा था। इब्लीस को इन्सान से ईर्ष्या थी और उस ने क़ियामत तक ज़िन्दा रहने की मोहलत अल्लाह तआला से हासिल कर ली थी इस लिए उस ने अपनी इस योजना का एलान कर दिया कि वह ख़ुदा के बन्दों की एक बड़ी संख्या पर अपना अधिपत्य जमायेगा।

शैतान अपने आप में स्वयं एक बेबस सृष्टि है लेकिन चूँकि अल्लाह तआला ने उसे इस दुनिया में जिसे उस ने आज़माइश के ही उद्देश्य से बनाया है, गुमराह करने की मोहलत प्रदान की है इस लिए उस ने दावे के साथ कहा कि मैं ख़ुदा के बन्दो की एक तादाद को गुमराह कर के रहूँगा। इस से यह ग़लत फ़हमी नहीं होनी चाहिए कि शैतान ने यह चेलेन्ज खुदा की संप्रभुता एवं उस की प्रबन्ध शक्ति के विरुद्ध किया था। बल्कि जब उस पर ख़ुदा ने अपनी योजना प्रकट की थी और उसे मालूम हो गया कि इन्सान को बहकाने का सामान करने का अधिकार उसे मिल गया है तो उस ने अपनी योजना सामने रख दी कि वह एक बड़ी संख्या को गुमराह करने में सफल होगा।

स्पष्ट रहे कि शैतान को अल्लाह तआला ने यह अधिकार नहीं दिया है कि वह इन्सान को ज़बरदस्ती ग़लत रास्ते पर डाल दे। बल्कि उसे ग़लत रास्ते की तरफ़ बुलाने, गुनाह का प्रलोभन देने और बुराई को आकर्षक बना कर प्रस्तुत करने का इख़्तियार दिया है ताकि भलाई और बुराई के मामले में इन्सान की आज़माइश हो।

और जो ईमान लाए और नेक काम किए उन को हम ऐसे बाग़ो में दाख़िल करेंगे जिस के नीचे नहरें प्रवाहित होंगी। वे वहाँ हमेशा हमेश रहेंगे। अल्लाह का वादा हक़ है और अल्लाह से बढ़ कर कौन अपनी बात में सच्चा हो सकता है।(अल-क़ुर्आन)

119. और मैं ज़रुर उन्हें बहकाऊँगा, उन को उम्मीदें दिलाऊँगा,[202] उन्हें हुक्म दूँगा तो वे जानवरों के कान चीरेंगे [203] और उन्हें हुक्म दूँगा तो वे अल्लाह की बनाई हुई साख़्त (रचना) में तब्दीली करेंगे।[204] और जिस ने अल्लाह को छोड़ कर शैतान को अपना शुभचिन्तक मित्र बना लिया वह ख़ुली तबाही में पड़ गया।

وَّلَاُضِلَّنَّهُمْ وَلَاُمَنِّيَنَّهُمْ وَلَاٰمُرَنَّهُمْ فَلَيُبَتِّكُنَّ اٰذَانَ
الْاَنْعَامِ وَلَاٰمُرَنَّهُمْ فَلَيُغَيِّرُنَّ خَلْقَ اللّٰهِ ۭ وَمَنْ
يَّتَّخِذِ الشَّيْطٰنَ وَلِيًّا مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ فَقَدْ
خَسِرَ خُسْرَانًا مُّبِيْنًا ۱۱۹ۭ

120. वह उन से वादे करता और उम्मीदें दिलाता है और शैतान के वादे तो सरासर फ़रेब हैं।

يَعِدُهُمْ وَيُمَنِّيْهِمْ ۭ وَمَا يَعِدُهُمُ الشَّيْطٰنُ اِلَّا غُرُوْرًا ۱۲۰

121. ऐसे लोगों का ठिकाना जहन्नम है और ये उस से निकल भागने की कोई सूरत न पाएँगे।

اُولٰۗىِٕكَ مَاْوٰىهُمْ جَهَنَّمُ ۡ وَلَا يَجِدُوْنَ عَنْهَا مَحِيْصًا ۱۲۱

122. और जो ईमान लाए और नेक काम किए उन को हम ऐसे बाग़ो में दाख़िल करेंगे जिस के नीचे नहरें प्रवाहित होंगी । वे वहाँ हमेशा हमेश रहेंगे। अल्लाह का वादा हक़ है और अल्लाह से बढ़ कर कौन अपनी बात में सच्चा हो सकता है।

وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَعَمِلُوا الصّٰلِحٰتِ سَنُدْخِلُهُمْ جَنّٰتٍ
تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ اَبَدًا ۭ وَعْدَ اللّٰهِ
حَقًّا ۭ وَمَنْ اَصْدَقُ مِنَ اللّٰهِ قِيْلًا ۱۲۲

123. (नजात) न तुम्हारी कामनाओं पर निर्भर है और न अहले-किताब की कामनाओं पर जो कोई बुराई करेगा उस का बदला पाएगा।[205] और फिर अल्लाह के मुक़ाबले में न उसे कोई समर्थक मिलेगा न सहायक।

لَيْسَ بِاَمَانِيِّكُمْ وَلَآ اَمَانِيِّ اَهْلِ الْكِتٰبِ ۭ مَنْ يَّعْمَلْ
سُوْۗءًا يُّجْزَ بِهٖ ۙ وَلَا يَجِدْ لَهٗ مِنْ دُوْنِ اللّٰهِ وَلِيًّا
وَّلَا نَصِيْرًا ۱۲۳

124. और जो नेक अमल (अच्छे काम) करेगा, चाहे मर्द हो या औरत, इस शर्त के साथ कि हो वह मोमिन, तो ऐसे लोग जन्नत में दाखिल होंगे और उन का थोड़ा भी हक़ मारा न जाएगा।

وَمَنْ يَّعْمَلْ مِنَ الصّٰلِحٰتِ مِنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى وَھُوَ مُؤْمِنٌ
فَاُولٰۗىِٕكَ يَدْخُلُوْنَ الْجَنَّةَ وَلَا يُظْلَمُوْنَ نَقِيْرًا ۱۲۴

125. और दीन के मामले में उस से बेहतर और कौन हो सकता जिस ने अपने आप को अल्लाह के हवाले कर दिया और वह नेक (कर्म करने वाला) भी है और उस ने इब्राहीम के तरीक़े की पैरवी की जो सीधे रास्ते पर था और अल्लाह ने इब्राहीम को अपना मुख्लिस दोस्त बनाया था।[206]

وَمَنْ اَحْسَنُ دِيْنًا مِّمَّنْ اَسْلَمَ وَجْهَهٗ لِلّٰهِ
وَھُوَ مُحْسِنٌ وَّاتَّبَعَ مِلَّةَ
اِبْرٰهِيْمَ حَنِيْفًا ۭ وَاتَّخَذَ اللّٰهُ اِبْرٰهِيْمَ خَلِيْلًا ۱۲۵

126. जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है सब अल्लाह ही का है और अल्लाह हर चीज़ को अपने घेरे में लिए हुए है।[207]

وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوٰتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ بِكُلِّ
شَيْءٍ مُّحِيْطًا ۱۲۶ۧ

202. शैतान की यह पूरी कोशिश होती है कि इन्सान दीन के मामले में सत्यप्रिय न बने । इस लिए वह दीन की बुनियादी बातों के सिलसिले में ग़लत स्पष्टिकरण एवं ग़लत व्याख्याओं में उलझा कर उसे सफ़लता के सुनहरे ख़्वाब दिखाने लगता है। यही कारण है कि लोग खुले शिर्क में मुब्तिला होने के बावजूद ख़ुदा से इनाम की उम्मीद रखते हैं। और मुसलमानों में भी ऐसे लोगों की कमी नहीं जो दीन में नई नई बातें एवं ख़ुराफ़ात पैदा कर के उस की जड़ पर कुल्हाड़ा चलाते हैं और अपनी इन ''सेवाओ'' पर अल्लाह से सवाब की आशा रखते हैं।

203. शिर्क करने वाले, जानवरों के कान ''नज़्र''(भेंट) के चिन्ह के तौर पर चीरते थे और उन्हें अपने माबूदों (उपास्यों) के नाम पर छोड़ देते थे।

204. अल्लाह की बनाई हुई रचना में परिवर्तन की एक सूरत तो वह है जो ऊपर बयान हुई अर्थात् जानवरों के कान चीरना। इस के अलावा इस की दूसरी भी बहुत सारी सूरतें हो सकती हैं जैसे परिवार नियोजन के लिए नसबन्दी, नज़ाकत पैदा करने के लिए पिंडलियों को काटना, ख़सी करना, योन परिवर्तन करना, मर्द का औरत जैसा और औरत का मर्द जैसा रुप धारना आदि। वास्तव में अल्लाह तआला ने जिस आकृति पर इन्सान को पैदा किया है उस में वह किसी प्रकार के परिवर्तन का अधिकार नहीं रखता। यह अलग बात है कि रचयिता ने स्वयं इस की अनुमति दी हो जैसे ख़त्ना करना नाख़ुन कटाना, बग़ल के बाल मूँडना आदि जो वास्तव में प्रकृति की माँग है या फिर मानव अंगों में किसी प्रकार की काट छाँट करना बिलकुल विवशता हो जैसा कि कुछ परिस्थितियों में आपरेशन कर के हाथ पाँव भी काट डालना पड़ते हैं। इन अपवादी सूरतों को छोड़ कर बहुदेववादी उद्देश्यों के लिए या आधुनिक सभ्यता के नाम पर या ग़लत सिद्धान्तों से प्राभावित हो कर खुदा की बनाई हुई आकृति में किसी प्रकार के परिवर्तन का मतलब यह है कि हम अपना वह मॉडल (Model) पसन्द नहीं करते जो हमारे रचयिता ने बनाया है बल्कि चाहते हैं कि अपनी पसन्द के माडल में ढल जाऐं। ज़ाहिर है यह फितरत (प्रकृति) से जंग करने के समानार्थ और शैतान के उकसाने का परिणाम है।

205. अर्थात् आख़िरत में जहन्नम से मुक्ति ग़लत कामनाओं और झूठी आशाओं में मगन रहने से नहीं मिलेगी बल्कि वहाँ ''कर्म के अनुसार फल'' का क़ानून चलेगा दुनिया में हर धर्म के लोग अपने अपने धर्म से साधारण एवं प्रचलित लगाव को अपनी मुक्ति के लिए काफ़ी समझते हैं और ख़ुशफ़हमी में मुब्तिला रहते हैं कि हम फलाँ और फलाँ धार्मिक गुरुओं एवं पेशवाओं के अनुयायी हैं इस लिए हमारा बेड़ा पार है। मुसलमान भी इसी प्रकार के मनबहलावों में लिप्त हो गए हैं, किन्तु क़ुर्आन सावधान करता है कि कामनाओं से कुछ बनने वाला नहीं है। आख़िरत में जिस बुनियाद पर फैसला होगा वह इन्सान का अपना ईमान और अच्छे कर्म हैं। अत: जिस किसी का कर्म बुरा होगा वह उस की सज़ा ज़रुर पाएगा चाहे वह अपने को किसी भी धर्म से जोड़ता रहा हो।

206. अल्लाह का मुख़्लिस (सच्चा) दोस्त। यह बहुत बड़ा सम्मान है जो अल्लाह तआला ने हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम को प्रदान किया । बाइबिल से भी इस का अनुमोदन (ताईद) होता है।

''हे मेरे चुने हुए याक़ूब, हे मेरे प्रेमी इब्राहीम के वंश,'' (यशायाह ४१:८)

207. इशारा है इस बात की तरफ़ कि अल्लाह की सत्ता भी सार्वभौम है और ज्ञान भी सार्वभौम (हम:गीर)

❐ ❐ ❐ ❐ ❐ ❐

127. लोग तुम से औरतों के बारे में फ़तवा पूछते हैं,[208] कहो अल्लाह तुम्हें उन के बारे में फ़तवा देता है एवं (उन अहकाम की याददेहानी कराता है) जो तुम्हें किताब में यतीम लड़कियों के बारे में सुनाए जा रहें हैं।[209] वे यतिम लड़कियाँ जिन्हें तुम उन का निर्धारित हक़ नहीं देते और चाहते हो कि उन से निकाह करलो।[210] इसी तरह बे सहारा बच्चों के बारे में जो अहकाम दिए गए हैं [211](उन की भी याद देहानी कराता है) एवं उस हुक्म की भी कि यतिमों के साथ इन्साफ़ करो।[212] और जो भलाई भी तुम करोगे अल्लाह उस को जानता है।

وَيَسْتَفْتُونَكَ فِي النِّسَاءِ ۖ قُلِ اللَّهُ يُفْتِيكُمْ فِيهِنَّ وَمَا
يُتْلَىٰ عَلَيْكُمْ فِي الْكِتَابِ فِي يَتَامَى النِّسَاءِ اللَّاتِي لَا
تُؤْتُونَهُنَّ مَا كُتِبَ لَهُنَّ وَتَرْغَبُونَ أَنْ تَنْكِحُوهُنَّ
وَالْمُسْتَضْعَفِينَ مِنَ الْوِلْدَانِ وَأَنْ تَقُومُوا لِلْيَتَامَىٰ
بِالْقِسْطِ ۚ وَمَا تَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ فَإِنَّ اللَّهَ كَانَ بِهِ عَلِيمًا ﴿١٢٧﴾

128. अगर किसी औरत को अपने पति की तरफ़ से ज़्यादती या बेरुखी की आशंका हो तो इस बात में कोई हरज नहीं कि दोनों आपस में सुलह कर लें और सुलह करना ही बेहतर हैं [213] मन तंग दिली की ओर झुक जाते हैं।[214] लेकिन अगर तुम अच्छा व्यवहार करो [215] और तक़्वा (ईश भय) अपनाओ तो यक़ीन जानो तुम जो कुछ करोगे अल्लाह उस की ख़बर रखने वाला है।

وَإِنِ امْرَأَةٌ خَافَتْ مِنْ بَعْلِهَا نُشُوزًا أَوْ إِعْرَاضًا فَلَا
جُنَاحَ عَلَيْهِمَا أَنْ يُصْلِحَا بَيْنَهُمَا صُلْحًا ۚ وَالصُّلْحُ خَيْرٌ ۗ
وَأُحْضِرَتِ الْأَنْفُسُ الشُّحَّ ۚ وَإِنْ تُحْسِنُوا وَتَتَّقُوا فَإِنَّ اللَّهَ
كَانَ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرًا ﴿١٢٨﴾

129. तुम औरतों के बीच न्याय करना चाहो भी तो पूरा पूरा न्याय नहीं कर सकते मगर ऐसा भी नहीं होना चाहिए कि एक ही की तरफ़ झुक पड़ो और दूसरी को इस तरह छोड़ दो कि जैसे वह अधर में है। और अगर तुम मामला दुरुस्त रखो और अल्लाह से डरते रहो तो अल्लाह माफ़ करने वाला और रहम फ़रमाने वाला है।[216]

وَلَنْ تَسْتَطِيعُوا أَنْ تَعْدِلُوا بَيْنَ النِّسَاءِ وَلَوْ حَرَصْتُمْ
فَلَا تَمِيلُوا كُلَّ الْمَيْلِ فَتَذَرُوهَا كَالْمُعَلَّقَةِ ۚ وَإِنْ تُصْلِحُوا
وَتَتَّقُوا فَإِنَّ اللَّهَ كَانَ غَفُورًا رَحِيمًا ﴿١٢٩﴾

130. और अगर दोनों एक दूसरे से अलग हो ही जाऐं तो अल्लाह अपनी समाई से हर एक को (दूसरे से) बेपरवाह कर देगा ।[217] अल्लाह बड़ी समाई वाला और बड़ी हिकमत वाला है।

وَإِنْ يَتَفَرَّقَا يُغْنِ اللَّهُ كُلًّا مِنْ سَعَتِهِ ۚ وَكَانَ
اللَّهُ وَاسِعًا حَكِيمًا ﴿١٣٠﴾

131. आसमानों और ज़मीन की चीज़ें अल्लाह ही की संपत्ति हैं।तुम से पहले जिन को किताब दी गई थी उन्हें भी हम ने यह हिदायत की थी और तुम्हें भी यह हिदायत करते हैं कि अल्लाह से डरते रहो और अगर तुम कुफ़्र करोगे तो (याद रखो) जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है सब अल्लाह ही के लिए है। अल्लाह बेनियाज़ (बेपरवाह) और हर तरह के गुणों से युक्त है।

وَلِلَّهِ مَا فِي السَّمَاوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ ۗ وَلَقَدْ وَصَّيْنَا الَّذِينَ
أُوتُوا الْكِتَابَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَإِيَّاكُمْ أَنِ اتَّقُوا اللَّهَ ۚ وَإِنْ تَكْفُرُوا
فَإِنَّ لِلَّهِ مَا فِي السَّمَاوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ ۚ وَكَانَ اللَّهُ
غَنِيًّا حَمِيدًا ﴿١٣١﴾

208. सूरह के शुरू में इन्साफ़ के साथ बहुपत्नित्व की जो अनुमति दी गई है उस के सिलसिले में कुछ सवाल पैदा हो गए थे जिनका जवाब यहाँ दिया गया है।यह जवाब आगे आयत 128 में है और इस जवाब से स्वयं स्पष्ट हो जाता है कि सवाल किस प्रकार का है।

209. लोगों के असल सवाल का जवाब देने से पहले उन अहकाम (आदेशों) की याद देहानी कराई गई है जिन में यतीमों के अधिकार और विशेष रुप से यतीम लड़कियों के साथ इन्साफ़ करने की हिदायत की गई है जिस से अन्दाज़ा होता है कि क़ुर्आन के नज़दीक यतीमों के अधिकार का क्या महत्व है और उन्हें अदा करने की ताकीद कितनी सख़्त की गई है।

210. इशारा है आयात 3 की तरफ़ जिस में फ़रमाया गया था कि अगर तुम्हें आशंका हो कि तुम यतिमों के साथ इन्साफ़ न कर सकोगे तो जो औरतें तुम्हारे लिए जायज़ हैं उन में से दो दो, तीन तीन और चार चार से निकाह कर लो।

यहाँ स्पष्ट रुप से बताया कि ''वे यतीम लड़कियाँ जिन्हें तुम उन का निर्धारित अधिकार नहीं देते और चाहते हो कि उन से निकाह कर लो''--- इस से मालूम हुआ कि आयत 3 में यतीमों से मुराद यतीम लड़कियाँ हैं और उन के साथ इन्साफ़ न करने से मुराद उन का हक़ अदा न करना है। इस निर्धारित अधिकार में उन का उत्तराधिकार का अधिकार (उन के पिता की छोड़ी हुई दौलत) भी शामिल है और यह बात भी शामिल है कि अगर किसी ने पत्नी के होते हुए यतीम लड़की से शादी कर ली तो उसे उस के साथ भी समानता का व्यवहार करना होगा।

आयत का सम्बोधन यद्यपि सार्वजनिक है लेकिन यहाँ ख़ास तौर से यतीम बच्चियों के संरक्षक मुराद हैं। अत: हज़रत आयशा रज़ियल्लाहु अन्हा की रिवायत से मालूम होता है कि जो यतीम बच्चियाँ मालदार होने के साथ ख़ूबसूरत भी होतीं उन से उन के संरक्षक स्वयं निकाह कर लेते और उन के माल पर क़ब्ज़ा कर लेते। उन का निकाह दूसरी जगह करने से इस लिए कतराते थे कि उन की उत्तराधिकार की संपत्ति अदा करनी पड़ेगी (तफ़्सीर इब्ने कसीर जिल्द 1 पृष्ट 561)

इस से यह ग़लत फ़हमी न हो कि क़ुर्आन यतीम लड़कियों के साथ निकाह के उत्साह को कम करता है। यतीम लड़की को जीवन साथी बना लेना अपने आप में नेकी का काम है किन्तु जब यह काम किसी का माल हड़प करने के उद्देश्य से किया जाए या एक पत्नी के रहते किसी यतीम लड़की से उसे महत्वहीन समझकर शादी कर ली जाए और न्याय एवं समानता के तक़ाज़ो को एक किनारे रख कर बहुपत्नित्व के क़ानून से लाभ उठाया जाए तो फिर यह काम नेकी का नही रहता ।

इस से इस बात पर भी रौशनी पड़ती है कि इस्लाम में असल महत्व मनुष्य के नैतिक व्यवहार का है इस लिए उसे इस पहलू से सोचना चाहिए न कि मात्र ''मसले को हल करने'' के पहलू से।

211. इशारा है उन आदेशों की तरफ़ जो सूरह के शुरु में नादानों को उन का माल हवाले करने एवं बच्चों के उत्तराधिकार के अधिकार के बारे में दिए गए हैं।

212. इशारा है उन आदेशों की तरफ़ जो इस सूरह की शुरु की आयतों में यतीमों के सम्बन्ध में दिए गए हैं।

213. यह है असली सवाल का जवाब । क़ुर्आन ने बहुपत्नित्व की अनुमति को जो न्याय और समानता की शर्त के साथ जोड़ा है उस को देखते हुए यह सवाल पैदा हुआ कि अगर कोई व्यक्ति अपनी पत्नी से न्याय का व्यवहार न करे और उस पत्नी को यह आशंका हो कि अगर वह उस पर ज़ोर देती है तो वह उसे तलाक़ दे देगा और वह नहीं चाहती कि वह उसे तलाक़ दे तो क्या ऐसी सूरत में पत्नी अपने कुछ अधिकारों से परित्याग (Withdraw) कर पति को इस बात पर आमादा कर सकती है कि वह तलाक़ न दे। अल्लाह तआला ने जवाब में इस बात की स्वीकृति दे दी। अर्थात् अगर कोई औरत यह महसूस करे कि पति उस के अधिकारों को अदा करने के लिए तैयार नहीं है या इस मामले में बे परवाह है और उस पर ज़ोर देने की सूरत में तलाक़ का भय है तो आपस में समझौता कर लेना बेहतर है। ऐसी सूरत में औरत अपने कुछ अधिकारों से अपने आप को अलग (Withdraw) कर सकती है। क्यों कि तलाक़ के मामले में समझौता बहरहाल बेहतर है।

214. घरेलू सम्बन्ध की ख़राबी में तंग दिली का बड़ा हिस्सा होता है और यह तंग दिली मर्द की तरफ़ से भी हो सकती है और औरत की तरफ़ से भी। अगर दोनों खुले दिल से और पूरी समाई के साथ एक दूसरे से मामला करें तो एक दूसरे के हक़ भी अदा हो सकते हैं और इस तरह घरेलू वातावरण दूषित भी न हो सकेगा बल्कि अच्छा होगा।

215. यहाँ मर्द को रुचि दिलाई गई है कि वह अपने जीवन साथी के मामले में एहसान और तक़्वा का रवैया अपनाए।

216. बहुपत्नित्व की सूरत में न्याय और समानता को जो अनिवार्य ठहराया गया है उस से सम्बन्धित यह सवाल पैदा हुआ कि प्रेम और रुचि सब पत्नियों के साथ समान रुप से नहीं हो सकती और न शारीरिक सम्बन्ध सब के साथ

समान रुप से रखा जा सकता है ऐसी सूरत में समानता एवं न्याय की शर्त कैसे पूरी की जा सकती है ? इस सवाल का जवाब यहाँ यह दिया गया कि इस हद तक समानता तो निश्चय ही मनुष्य के बस की बात नहीं क्यों कि औरतों के बीच कुछ हैसियतों से फ़र्क़ भी होता है जैसे ख़ूबसूरती, मिज़ाज, उम्र सेहत और योग्यता आदि के लिहाज़ से एक को दूसरे पर श्रेष्ठता प्राप्त होती है और इसी कारण मर्द का झुकाव किसी की तरफ़ ज़्यादा हो सकता है इस लिए शरीअत पत्नियों के बीच ऐसी समानता स्थापित करने की माँग नहीं करती जो इन्सान के बस में नहीं है। बल्कि उस की माँग यह है कि पत्नियों के बीच जहाँ तक समाई हो न्याय करो एक पत्नी की तरफ़ इस तरह झुक न पड़ो कि दूसरी को अधर में लटकता छोड़ दो । तुम्हें दोनों के अधिकारों को अदा करने की कोशिश करनी चाहिए। इस्लाह और तक़्वा के रवैया के बावजूद इस मामले में अगर कोई कोताही हो जाए तो उस का सुधार करना चाहिए । इस्लाह और तक़्वा का रवैया अपनाने के बावजूद इस मामले में अगर कुछ ग़लतियाँ हो गईं तो अल्लाह से उम्मीद रखो कि वह क्षमा करेगा।

217. अर्थात् अगर कोशिश के बावजूद निभ न सके और पति पत्नि को एक दूसरे से अलग ही होना पड़े तो उन्हें चाहिए कि अल्लाह पर भरोसा रखें। वह दोनों को अपनी कृपा से निश्चिन्त करेगा ।

आसमानों और ज़मीन की सारी चीज़ो का मालिक अल्लाह ही है और काम बनाने के लिए अल्लाह काफ़ी है।(अल-क़ुर्आन)

132. आसमानों और ज़मीन की सारी चीज़ो का मालिक अल्लाह ही है। [218] और काम बनाने के लिए अल्लाह काफ़ी है।

وَلِلّٰهِ مَا فِى السَّمٰوٰتِ وَمَا فِى الْاَرْضِ ۭ وَكَفٰى بِاللّٰهِ
وَكِيْلًا ١٣٢

133. अगर वह चाहे तो ऐ लोगो तुम को हटा दे और (तुम्हारी जगह) दूसरों को ले आए। अल्लाह इस का पूरा सामर्थ्य रखता है।

اِنْ يَّشَاْ يُذْهِبْكُمْ اَيُّهَا النَّاسُ وَيَاْتِ بِاٰخَرِيْنَ ۭ وَكَانَ
اللّٰهُ عَلٰي ذٰلِكَ قَدِيْرًا ١٣٣

134. जो व्यक्ति दुनिया के अज्र (बदले) का इच्छुक हो तो (उसे मालूम होना चाहिए कि) अल्लाह के पास दुनिया और आख़िरत दोनों का अज्र (बदला) है [219]।और अल्लाह सब कुछ सुनने वाला और सब कुछ देखने वाला है।

مَنْ كَانَ يُرِيْدُ ثَوَابَ الدُّنْيَا فَعِنْدَ اللّٰهِ ثَوَابُ الدُّنْيَا
وَالْاٰخِرَةِ ۭ وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيْعًۢا بَصِيْرًا ١٣٤

135. ऐ ईमान वालो ! इन्साफ़ पर पूरी तरह क़ायम रहने वाले और अल्लाह की ख़ातिर गवाही देने वाले बनो चाहे यह गवाही ख़ुद तुम्हारे अपने, तुम्हारे माता पिता और तुम्हारे नाते दारों के ख़िलाफ़ ही क्यों न पड़ती हो, [220] अगर कोई अमीर है या ग़रीब है तो अल्लाह का हक़ उन पर सब से अधिक है [221] अत: इच्छाओं की पैरवी में इन्साफ़ से गुरेज़ न करो। और अगर तुम ने गोल मोल कहा या पहलू बचाया तो याद रखो अल्लाह को तुम्हारी कार्रवाईयों की ख़बर है।[222]

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا كُوْنُوْا قَوّٰمِيْنَ بِالْقِسْطِ شُهَدَاۗءَ لِلّٰهِ
وَلَوْ عَلٰٓي اَنْفُسِكُمْ اَوِ الْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِيْنَ ۚ اِنْ يَّكُنْ غَنِيًّا
اَوْ فَقِيْرًا فَاللّٰهُ اَوْلٰى بِهِمَا ۣ فَلَا تَتَّبِعُوا الْهَوٰٓى اَنْ تَعْدِلُوْا ۚ
وَاِنْ تَلْوٗٓا اَوْ تُعْرِضُوْا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُوْنَ خَبِيْرًا ١٣٥

136. ऐ ईमान वालो ! ईमान लाओ [223] अल्लाह पर और उस के रसूल पर, और उस किताब पर, जो उस ने नाज़िल फ़रमाई है और उस किताब पर भी जो इस से पहले वह नाज़िल कर चुका है । और जिस ने अल्लाह और उस के फ़रिश्तों और उस की किताबों और उस के रसूलों और अन्तिम दिन से कुफ्र (इन्कार)किया [224] वह भटक कर गुमराही में बहुत दूर निकल गया।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اٰمِنُوْا بِاللّٰهِ وَرَسُوْلِهٖ وَالْكِتٰبِ الَّذِيْ نَزَّلَ
عَلٰي رَسُوْلِهٖ وَالْكِتٰبِ الَّذِيْٓ اَنْزَلَ مِنْ قَبْلُ ۭ وَمَنْ يَّكْفُرْ بِاللّٰهِ
وَمَلٰۗىِٕكَتِهٖ وَكُتُبِهٖ وَرُسُلِهٖ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَقَدْ ضَلَّ ضَلٰلًۢا
بَعِيْدًا ١٣٦

137. जो लोग ईमान लाए फिर कुफ्र किया फिर ईमान लाए फिर कुफ्र किया फिर कुफ्र में बढ़ते चले गए अल्लाह उन को हरगिज़ माफ़ न करेगा और न उन को राह दिखाएगा ।

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ثُمَّ كَفَرُوْا ثُمَّ اٰمَنُوْا ثُمَّ كَفَرُوْا ثُمَّ ازْدَادُوْا
كُفْرًا لَّمْ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ سَبِيْلًا ١٣٧

218. ''आसमानों और ज़मीन की सारी चीज़ों का मालिक अल्लाह ही है'' इस को यहाँ तीन बार दोहराया गया है (आयत 131 में दो बार और 132 में एक बार) यह केवल दोहराना नहीं है बल्कि कई पहलुओं से यह बात ज़ेहन में बिठाना मक़सद है कि पूर्ण जगत का मालिक अकेला वही है इस लिए उसी से आशाऐं बाँधनी चाहिऐं। उसी से डरना चाहिए। पहली बार इस जुमले का ज़िक्र इस पहलू से है कि जो हस्ती आसमान और ज़मीन की सारी चीज़ो की मालिक है।वह नज़र और हाथ दोनों का तंग नहीं। वह निश्चय ही बड़ा दानी और उदार है इस लिए तुम (पति पत्नी अलग होने की सूरत में उस से उचित रुप से यह आशा कर सकते हो कि वह तुम में से हर एक को अपने फ़ज़्ल (उदार अनुग्रह) से निश्चिन्त कर देगा । दूसरी बार इस को दोहराने से यह स्पष्ट करना उद्देश्य है कि यह जो परिवारिक हिदायतें दी गई हैं वे तुम्हारी अपनी भलाई के लिए है। इस से अल्लाह का कोई लाभ जुड़ा नहीं है। अगर तुम कुफ्र भी करो तो इस से अल्लाह तआला का कुछ बिगड़ने वाला नहीं क्यों कि सारी कायनात उसी के लिए है और वह हर चीज़ से बेनियाज़ (बेपरवाह) और हर तरह के गुणों से युक्त है। और तीसरी बार इसे दोहराने का मन्शा यह है कि बन्दे उसी पर भरोसा करें।

219. अर्थात अल्लाह के नज़दीक दुनिया के फ़ायदे भी हैं और आख़िरत के भी। अब यह तुम्हारी अपनी बुद्धि और साहस की बात है कि तुम सिर्फ दुनिया के फ़ायदे हासिल करना चाहते हो या दुनिया और आख़िरत दोनों के। अगर दुनिया और आख़िरत दोनों का लाभ हासिल करना चाहते हो तो अल्लाह के आज्ञापालन और उस की दासता का रास्ता अपनाओ।

220. इस आयत में इन्साफ़ पर मज़बूती के साथ क़ायम रहने, बेलाग इन्साफ़ करने और निष्पक्ष रुप से बिल्कुल नि:स्वार्थ हो कर केवल ख़ुदा की खातिर गवाही देने की हिदायत की गई है। यह न्याय और समानता और हक़ की गवाही (शहादते-हक़) का वह उच्चस्तरीय स्थान है जिस पर अल्लाह तआला ईमान वालों को देखना चाहता है।

221. बन्दों के अधिकारों में सब से बड़ा अधिकार माता पिता का है लेकिन क़ुर्आन के नज़दीक सत्य प्रियता का तक़ाज़ा यह है कि बेलाग इन्साफ़ किया जाए और गवाही के मामले में उन की भी परवाह न की जाए और जब माता पिता की परवाह करना उचित नहीं तो इन के बाद जिन का दर्जा है उन की परवाह के लिए क्या गुन्जाइश बाक़ी रह जाती है? दूसरे शब्दों में यह उसूली हिदायत हर प्रकार के बेजा पक्षपात और विद्वेष एवं कलह की जड़ काट देती है और यह स्पष्ट करती है कि आदमी चाहे कितने ही बुलन्द दर्जे का क्यों न हो इन्साफ़ के मामले में सब समान हैं।

222. अर्थात् मुक़दमे में गवाही साफ़ साफ़ देनी चाहिए और गवाही देने से गुरेज़ नहीं करना चाहिए वरना इस पर ख़ुदा के यहाँ पकड़ होगी ।

223. यहाँ ईमान लाने वालों से मुराद आम मुसलमान हैं जो इस बात का इक़रार करते हैं कि उन का दीन इस्लाम है चाहे वह अपने दावे में सच्चे हों या न हों। उन से ईमान लाने की माँग का यह मतलब है कि वे सच्चे मन से ईमान लाऐं और सच्चे और पक्के मोमिन बन जाऐं।

224. कुफ्र की एक सूरत यह है कि आदमी साफ़ साफ़ इन्कार कर दे और दूसरी सूरत यह है कि ज़बान से तो इक़रार करे लेकिन दिल से न माने।

138. मुनाफ़िक़ो को ख़ुशख़बरी दे दो कि उन के लिए दुखदायिनी यातना है।

بَشِّرِ الْمُنٰفِقِيْنَ بِاَنَّ لَهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ۙ ۝١٣٨

139. जो मोमिनों के बजाय काफ़िरों को अपना दोस्त बनाते हैं क्या वे उन के पास इज़्ज़त के इच्छुक हैं ?इज़्ज़त तो सारी की सारी अल्लाह ही के लिए है ।[225]

الَّذِيْنَ يَتَّخِذُوْنَ الْكٰفِرِيْنَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُوْنِ الْمُؤْمِنِيْنَ ؕ
اَيَبْتَغُوْنَ عِنْدَهُمُ الْعِزَّةَ فَاِنَّ الْعِزَّةَ لِلّٰهِ جَمِيْعًا ؕ ۝١٣٩

140. वह अपनी किताब में तुम पर यह हिदायत उतार चुका है [226] कि जब तुम सुनो (या देखो) कि अल्लाह की आयतों के साथ कुफ़्र किया जा रहा है और उन का मज़ाक़ उड़ाया जा रहा है तो उन के साथ न बैठो जब तक कि वे किसी और बात में न लग जाऐं वरना तुम भी उन ही जैसे हो जाओगे ।[227]अल्लाह सब मुनाफ़िक़ों (पाखण्डियों) और काफ़िरों को जहन्नम में जमा करने वाला है।

وَقَدْ نَزَّلَ عَلَيْكُمْ فِى الْكِتٰبِ اَنْ اِذَا سَمِعْتُمْ اٰيٰتِ اللّٰهِ يُكْفَرُ
بِهَا وَيُسْتَهْزَاُ بِهَا فَلَا تَقْعُدُوْا مَعَهُمْ حَتّٰى يَخُوْضُوْا فِىْ
حَدِيْثٍ غَيْرِهٖۤ ۖ اِنَّكُمْ اِذًا مِّثْلُهُمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ جَامِعُ
الْمُنٰفِقِيْنَ وَالْكٰفِرِيْنَ فِىْ جَهَنَّمَ جَمِيْعَا ۙ ۝١٤٠

141. ये लोग तुम्हारे मामले में परिणाम की प्रतीक्षा में हैं।अगर तुम्हें अल्लाह की तरफ़ से विजय प्राप्त हो जाए तो कहेंगे,क्या हम तुम्हारे साथ न थे ? और अगर काफ़िरों का पलड़ा भारी हो जाए तो कहेंगे क्या हम तुम पर ग़ालिब न आ गए थे फिर भी हम ने तुम को मुसलमानों से बचा लिया?तो अल्लाह ही क़ियामत के दिन तुम्हारे बीच फैसला कर देगा और अल्लाह काफ़िरों के लिए मोमिनों पर ग़ालिब आने (प्रभुत्व पाने) का हरगिज़ कोई रास्ता न रखेगा।

الَّذِيْنَ يَتَرَبَّصُوْنَ بِكُمْ ۚ فَاِنْ كَانَ لَكُمْ فَتْحٌ مِّنَ اللّٰهِ قَالُوْۤا
اَلَمْ نَكُنْ مَّعَكُمْ ۖ وَاِنْ كَانَ لِلْكٰفِرِيْنَ نَصِيْبٌ ۙ قَالُوْۤا اَلَمْ
نَسْتَحْوِذْ عَلَيْكُمْ وَنَمْنَعْكُمْ مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ؕ فَاللّٰهُ يَحْكُمُ
بَيْنَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ؕ وَلَنْ يَّجْعَلَ اللّٰهُ لِلْكٰفِرِيْنَ عَلَى
الْمُؤْمِنِيْنَ سَبِيْلًا ۝١٤١

142. मुनाफ़िक़ीन (कपटाचारी) अल्लाह के साथ धोखे बाज़ी कर रह हैं [228] हालाँकि अल्लाह ही ने उन्हें धोखे में डाल रखा है। जब ये नमाज़ के लिए खड़े होते हैं तो काहिली के साथ खड़े होते हैं, मात्र लोगों को दिखाने के लिए।[229] और अल्लाह को कम ही याद करते हैं।[230]

اِنَّ الْمُنٰفِقِيْنَ يُخٰدِعُوْنَ اللّٰهَ وَهُوَ خَادِعُهُمْ ۚ وَاِذَا قَامُوْۤا
اِلَى الصَّلٰوةِ قَامُوْا كُسَالٰى ۙ يُرَآءُوْنَ النَّاسَ وَلَا يَذْكُرُوْنَ
اللّٰهَ اِلَّا قَلِيْلًا ۝١٤٢

143. दोनों के बीच डावाँडोल हैं न उन की तरफ़ हैं और न इन की तरफ़। और जिसे अल्लाह भटकाए उस के लिए तुम कोई राह नहीं पा सकते।[231]

مُّذَبْذَبِيْنَ بَيْنَ ذٰلِكَ ۖ لَاۤ اِلٰى هٰۤؤُلَآءِ وَلَاۤ اِلٰى هٰۤؤُلَآءِ ؕ وَمَنْ
يُّضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهٗ سَبِيْلًا ۝١٤٣

225. मालूम हुआ कि ईमान वालों के हितों के विरुद्ध काफ़िरों से दोस्ती गाँठना ताकि कुर्सी और पद मिलें और लोग इज़्ज़त की निगाह से देखने लगें, पाखंडपूर्ण (मुनाफ़िक़ाना) हरकत है किसी सच्चे मुसलमान का यह काम हो ही नहीं सकता कि वह अपनी मिल्लत (समूह) के साथ गद्दारी करे।

क़ुर्आन की इस स्पष्ट हिदायत के बावजूद आज मुसलमानों में ऐसे लोगों की कमी नहीं जो इस्लामी मिल्लत से ग़द्दारी कर के काफ़िरों की तरफ़ पेंगें बढ़ाते हैं और उन्हें हर क़ीमत पर ख़ुश करने का सामान करते हैं ताकि उन्हें इज़्ज़त का स्थान प्राप्त हो। काश उन्हें ख़बर होती कि यह झूठी इज़्ज़त है जिस पर वे रीझ गए हैं। सच्ची इज़्ज़त तो अल्लाह ही के पास है और उस की रज़ामन्दी (प्रसन्नता) के काम कर के ही इसे प्राप्त किया जा सकता है।

226. इशारा है सूरह अन्आम की आयत ६८ की तरफ़।

227. जिन मजलिसों में अल्लाह के दीन और उस के अहकाम और हिदायतों के ख़िलाफ़ काफ़िराना विचारों की अभिव्यक्ति होती हो या उन का मज़ाक़ उड़ाया जाता हो उन में सम्मिलित होना ईमानी ग़ैरत के ख़िलाफ़ है।

228. सूरह बक़र: आयत १ में यह मज़मून गुज़र चुका है।

229. अर्थात उन की नमाज़ दिखावा मात्र होती है।

उस ज़माने में अपनी गिनती मुसलमानों में कराने के लिए जमाअत के साथ नमाज़ ज़रुरी थी लेकिन अब गिरावट का यह हाल है कि जो व्यक्ति सिरे से नमाज़ ही न पढ़ता हो वह न केवल यह कि मुसलमान हो सकता है बल्कि मुसलमानों का नेतृत्व भी कर सकता, क़ायद (नेता) और हीरो भी बन सकता है। और मस्जिद में उपस्थित न होने वाला मस्जिद का प्रबन्धक भी बन सकता है।

230. यहाँ पाखण्डी ईमान वालों (मुनाफ़िक़ों) के नमाज़ की तीन बड़ी ख़राबियाँ बयान की गई हैं एक यह कि काहिली के साथ खड़े होना, दूसरे यह कि दिखावे की नमाज़ पढ़ना तीसरे यह कि अल्लाह को नाम मात्र याद करना। इस से सच्चे ईमान वालों के नमाज़ की विशेषताऐं आप से आप स्पष्ट हो जाती हैं। अर्थात् नमाज़ के लिए चुस्ती के साथ खड़े होना, दिखावे से बचते हुए सिर्फ अल्लाह के लिए नमाज़ पढ़ना और अल्लाह से दिल लगा कर उस को अधिकता के साथ याद करना।

231. अर्थात् जिस ने ग़लत रास्ते पर चलने का फैसला किया हो उस पर अल्लाह तआला की तरफ से हिदायत के दरवाज़े बन्द हो जाते हैं। ऐसे व्यक्ति को सीधी राह पर लगाना फिर किसी के बस की बात नहीं होती।

144. ऐ ईमान वालो ! ईमान वालों के बजाय काफ़िरों को अपना दोस्त न बनाओ [232] क्या तुम चाहते हो कि अपने ऊपर अल्लाह की खुली हुज्जत क़ायम कर लो ?

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ لَا تَتَّخِذُوا۟ ٱلْكَٰفِرِينَ أَوْلِيَآءَ مِن
دُونِ ٱلْمُؤْمِنِينَ ۚ أَتُرِيدُونَ أَن تَجْعَلُوا۟ لِلَّهِ عَلَيْكُمْ سُلْطَٰنًا
مُّبِينًا ﴿١٤٤﴾

145. मुनाफ़िक़ लोग जहन्नम के सब से निचले खण्ड में होंगे [233] और तुम उन का कोई मददगार न पाओगे।

إِنَّ ٱلْمُنَٰفِقِينَ فِى ٱلدَّرْكِ ٱلْأَسْفَلِ مِنَ ٱلنَّارِ وَلَن تَجِدَ
لَهُمْ نَصِيرًا ﴿١٤٥﴾

146. अलबत्ता जो लोग तौबा करें और अपना सुधार कर लें और अल्लाह से अपना तअल्लुक बना लें और अपने दीन को अल्लाह के लिए ख़ालिस कर दें [234] ऐसे लोग ज़रुर ईमान वालों के साथ होंगे और अल्लाह ईमान वालों को ज़रुर बड़ा बदला प्रदान करेगा।

إِلَّا ٱلَّذِينَ تَابُوا۟ وَأَصْلَحُوا۟ وَٱعْتَصَمُوا۟ بِٱللَّهِ وَأَخْلَصُوا۟
دِينَهُمْ لِلَّهِ فَأُو۟لَٰٓئِكَ مَعَ ٱلْمُؤْمِنِينَ ۖ وَسَوْفَ يُؤْتِ
ٱللَّهُ ٱلْمُؤْمِنِينَ أَجْرًا عَظِيمًا ﴿١٤٦﴾

147. अगर तुम शुक्र करो [235] और ईमान लाओ तो अल्लाह को तुम्हें अज़ाब दे कर क्या करना है ? अल्लाह बड़ा क़दरदान (गुणग्राहक)है [236] और सब कुछ जानने वाला है।

مَّا يَفْعَلُ ٱللَّهُ بِعَذَابِكُمْ إِن شَكَرْتُمْ وَءَامَنتُمْ ۚ
وَكَانَ ٱللَّهُ شَاكِرًا عَلِيمًا ﴿١٤٧﴾

148. अल्लाह को यह बात पसन्द नहीं कि (तुम किसी की) बुराई के लिए ज़बान खोलो, यह और बात है कि किसी पर ज़ुल्म हुआ हो [237] (और वह उस की निन्दा करे) अल्लाह सब कुछ सुनने वाला और जानने वाला है।[238]

۞ لَّا يُحِبُّ ٱللَّهُ ٱلْجَهْرَ بِٱلسُّوٓءِ مِنَ ٱلْقَوْلِ إِلَّا مَن ظُلِمَ ۚ
وَكَانَ ٱللَّهُ سَمِيعًا عَلِيمًا ﴿١٤٨﴾

149. अगर तुम भलाई की कोई बात ज़ाहिर तौर पर करो या छिपा कर करो या किसी बुराई से दरगुज़र करो तो (देखो) अल्लाह माफ़ करने वाला है (जब कि वह सज़ा देने पर) पूरी क़ुदरत रखता है।[239]

إِن تُبْدُوا۟ خَيْرًا أَوْ تُخْفُوهُ أَوْ تَعْفُوا۟ عَن سُوٓءٍ فَإِنَّ ٱللَّهَ كَانَ
عَفُوًّا قَدِيرًا ﴿١٤٩﴾

150. जो लोग अल्लाह और उस के रसूलों से कुफ़्र करते हैं और चाहते हैं कि अल्लाह और उस के रसूलों के बीच तफ़रीक (अन्तर) करें और कहते हैं कि हम किसी को मानते हैं, और किसी को नहीं मानते और चाहते हैं कि इस के (ईमान और इन्कार) के बीच की राह अपनाऐं ।

إِنَّ ٱلَّذِينَ يَكْفُرُونَ بِٱللَّهِ وَرُسُلِهِۦ وَيُرِيدُونَ أَن يُفَرِّقُوا۟
بَيْنَ ٱللَّهِ وَرُسُلِهِۦ وَيَقُولُونَ نُؤْمِنُ بِبَعْضٍ وَنَكْفُرُ بِبَعْضٍ
وَيُرِيدُونَ أَن يَتَّخِذُوا۟ بَيْنَ ذَٰلِكَ سَبِيلًا ﴿١٥٠﴾

232. व्याख्या के लिए देखें सूरह आले-इमरान नोट नं.४१

233. चेतावनी है मुनाफ़िक़ों को कि वे इस भ्रम में न रहें कि वे चुँकि अपने मुसलमान होने का दावा करते हैं इस लिए वे काफिरों के मुक़ाबले में बेहतर हैं और ख़ुदा के यहाँ वे प्रतिष्ठित होंगे,नहीं, बल्कि वे काफिरों से बदतर हैं और उन से अधिक दण्ड के लायक हैं इस लिए कि दिल से ये भी काफिर हैं इस के अलावा अपने को मुसलमान ज़ाहिर कर के ख़ुदा और बन्दों के साथ धोखेबाज़ी करते हैं।

234. अर्थात् मुनाफ़िक़ लोग अज़ाब (यातना) से इसी सूरत में बच सकते हैं जब कि वे अपना मानसिक, वैचारिक और व्यवहारिक सुधार कर लें।

235. मालूम हुआ कि कुफ्र और निफ़ाक़ (अधर्म और पाखण्ड) सरासर नाशुक्री है जब कि ईमान की हक़ीक़त शुक्र (कृतज्ञता) है।

236. अत: अगर तुम शुक्र गुज़ार (कृतज्ञ) बन्दे बनो तो वह तुम्हारे कर्मों और सेवाओं का मान करेगा और उस का भरपूर सिला देगा।

237. मतलब यह कि मज़लूम को ज़ालिम के खिलाफ़ बोलने का हक़ है।

238. यहाँ इन गुणों का उल्लेख करने से यह स्पष्ट करना अभिप्रेत है कि अल्लाह मज़लूमों की फ़रयाद सुनता है और उन के साथ जो ज़्यादतियाँ हो रही हैं उन से वह भली भाँति परिचित हैं । जिस संदर्भ में यह बात इर्शाद हुई है वह यह है कि इस्लाम के विरोधी और मुनाफ़िक मुसलमानों को उत्तेजित करने और उन्हें क्षति पहुँचाने पर तुले थे।

239. अर्थात् विरोधियों की ज्यादतियों के बावजूद तुम ने खुले और छिपे भलाई ही का रवैया अपनाया और दरगुज़र से काम लेते रहे तो तुम्हारा यह रवैया अल्लाह की निगाह में अत्यन्त प्रिय होगा क्यों कि वह सज़ा देने पर पूरी तरह सक्षम होने के बावजूद अपने बन्दों से दरगुज़र फ़रमाता है इस लिए वह चाहता है कि उस की इन विशेषताओं एवं गुणों का असर उस के बन्दे स्वीकार करें।

151. ऐसे लोग निश्चय ही काफ़िर हैं [240] और काफ़िरों के लिए हम ने अपमान जनक यातना तैयार कर रखी है।

أُولَٰئِكَ هُمُ الْكَافِرُونَ حَقًّا ۚ وَأَعْتَدْنَا لِلْكَافِرِينَ
عَذَابًا مُّهِينًا ﴿١٥١﴾

152. और जो लोग अल्लाह और उस के रसूलों पर ईमान लाए और उन में से किसी के बीच तफ़रीक (अन्तर) नहीं की उन को वह ज़रुर उन का बदला देगा [241] और अल्लाह क्षमा करने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।[242]

وَالَّذِينَ آمَنُوا بِاللَّهِ وَرُسُلِهِ وَلَمْ يُفَرِّقُوا بَيْنَ أَحَدٍ مِّنْهُمْ
أُولَٰئِكَ سَوْفَ يُؤْتِيهِمْ أُجُورَهُمْ ۗ وَكَانَ اللَّهُ غَفُورًا رَّحِيمًا ﴿١٥٢﴾

153. (ऐ पैग़म्बर !) अहले-किताब तुम से यह माँग कर रहे हैं कि तुम उन पर आसमान से कोई किताब नाज़िल करा दो । वह इस से भी बड़ी माँग मूसा से कर चुके हैं। उन्हों ने कहा था कि अल्लाह को खुल्लम खुल्ला दिखला दो। और उन की ज़ालिमाना हरकत के कारण कड़क (बिजली) ने उन्हें पकड़ लिया था।[243] फिर इस के बावजूद कि स्पष्ट निशानियाँ उन के पास आ चुकी थीं उन्होंने बछड़े को माबूद (उपास्य) बना लिया।[244] फिर भी हम ने उन की इस हरकत से दरगुज़र किया और मूसा को खुली हुज्जत (स्पष्ट प्रमाण) प्रदान की।[245]

يَسْأَلُكَ أَهْلُ الْكِتَابِ أَن تُنَزِّلَ عَلَيْهِمْ كِتَابًا مِّنَ السَّمَاءِ ۚ
فَقَدْ سَأَلُوا مُوسَىٰ أَكْبَرَ مِن ذَٰلِكَ
فَقَالُوا أَرِنَا اللَّهَ جَهْرَةً فَأَخَذَتْهُمُ الصَّاعِقَةُ بِظُلْمِهِمْ ۚ ثُمَّ
اتَّخَذُوا الْعِجْلَ مِن بَعْدِ مَا جَاءَتْهُمُ الْبَيِّنَاتُ فَعَفَوْنَا عَن
ذَٰلِكَ ۚ وَآتَيْنَا مُوسَىٰ سُلْطَانًا مُّبِينًا ﴿١٥٣﴾

154. और हम ने उन से अहद (प्रतिज्ञा) लेने के लिए तूर (पहाड़) उन पर उठा खड़ा किया था [246] और हुक्म दिया था कि दरवाज़े में सजदा करते हुए दाखिल हो [247] और हिदायत की थी कि 'सब्त' के हुक्म की अवज्ञा न करो [248] और हम ने उन से शरीअत की पाबन्दी की दृढ़ प्रतिज्ञा ली थी।

وَرَفَعْنَا فَوْقَهُمُ الطُّورَ بِمِيثَاقِهِمْ وَقُلْنَا لَهُمُ ادْخُلُوا
الْبَابَ سُجَّدًا وَقُلْنَا لَهُمْ لَا تَعْدُوا فِي السَّبْتِ وَأَخَذْنَا
مِنْهُم مِّيثَاقًا غَلِيظًا ﴿١٥٤﴾

155. लेकिन इन के प्रतिज्ञा भंग करने के कारण (हम ने इन पर लानत की)[249] और इस कारण कि इन्होंने अल्लाह की आयतों का इन्कार किया [250] और नबियों को नाहक क़त्ल करते रहे, एवं कहा कि हमारे दिल बन्द हैं [251] हालाँकि अल्लाह ने उन के कुफ्र के कारण उन के दिलों पर मुहर लगा दी है जिस की वजह से वे कम ही ईमान लाते हैं।

فَبِمَا نَقْضِهِم مِّيثَاقَهُمْ وَكُفْرِهِم بِآيَاتِ اللَّهِ وَقَتْلِهِمُ الْأَنبِيَاءَ
بِغَيْرِ حَقٍّ وَقَوْلِهِمْ قُلُوبُنَا غُلْفٌ ۚ بَلْ طَبَعَ اللَّهُ عَلَيْهَا بِكُفْرِهِمْ
فَلَا يُؤْمِنُونَ إِلَّا قَلِيلًا ﴿١٥٥﴾

240. यह आयत बहुत ही साफ़ तौर पर उन लोगों को काफिर क़रार देती है जो अल्लाह और उस के रसूलों को मानते हुए किसी एक रसूल को न मानें। क्यों कि ईमान वही मान्य है जो ख़ुदा की हिदायत के अनुसार हो न कि अपनी इच्छानुसार हो। अत: जो व्यक्ति हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की रिसालत पर ईमान नहीं लाता उस के कट्टर काफ़िर होने में कोई संदेह नहीं है चाहे वह ख़ुदा और उस के रसूलों को मानने का कितना ही प्रबल दावा करे।

241. ''उन का बदला'' का मतलब यह है कि वे अपने ईमान और कर्मों की दृष्टि से जिस दर्जे के होंगे उस दर्जे के बदले के वे योग्य ठहरेंगे।

242. इशारा है इस बात की तरफ़ कि जो लोग अल्लाह और उस के तमाम रसूलों पर ईमान लाऐंगे उन के साथ वह दरगुज़र का मामला करेगा और उन पर रहम फ़रमाएगा।

243. जो लोग इस तरह की माँग करते हैं वे वास्तव में उस बात की इच्छा लिए होते हैं कि सत्य इस तरह खुल कर उन के सामने आ जाए कि वे अपने सर की आँखों से उसे देख लें और ग़ैब पर ईमान लाने का सवाल बाक़ी न रहे। स्पष्ट है कि उन की यह इच्छा और यह माँग उस हिकमत एवं निति के सरासर ख़िलाफ़ है जो मनुष्य की रचना के पीछे निहित है और वह यह है कि मनुष्य का इम्तिहान लिया जाए और वह अपनी अक़्ल से काम ले कर और सत्य की ओर रहनुमानाई करने वाली निशानियों को देख कर आसमानी हिदायत की रौशनी में ग़ैब (अप्रत्यक्ष) की हक़ीक़तों पर ईमान लाए। अगर इन्सान हक़ीक़त पसन्दी से काम ले तो वह इस प्रकार की माँग कभी नहीं करेगा। बल्कि अल्लाह की उस स्कीम को जो इस जगत में लागू है गंभीरता के साथ समझने का प्रयास करेगा। ''कड़क'' ने पकड़ लिया था इस घटना की तफ़सील के लिए देखिए सूरह बक़र:नोट 75 ।

244. बनी इस्राईल ने मिस्र से निकलने के बाद बछड़े की पूजा की थी। उन के उसी क़ौमी जुर्म की तरफ़ यहाँ इशारा किया गया है और इस की तफ़सील सूरह ''आअ्राफ़'' आयत 148 से 152 और सूरह ताहा आयत 87 से 98 में बयान हुई है।

245. अल्लाह तआला ने मूसा अलैहिस्सलाम को प्रबल एवं स्पष्ट प्रमाण प्रदान किया था ताकि वह जो बातें अल्लाह की ओर से प्रस्तुत करें उन को सही मानने में कोई अड़चन बाक़ी न रहे।

संदर्भ से स्पष्ट है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को क़ुर्आन के रुप में प्रबल एवं स्पष्ट प्रमाण (आदेश) प्रदान किया गया है अत: इस को अल्लाह की ओर से अवतारित मानने में चाहे वह अहले-किताब हों या ग़ैर अहले-किताब, कोई अड़चन बाक़ी नहीं रही।

246. देखिए सूरह बक़र: नोट ८८

247. देखिए सूरह बक़र: नोट ७९

248. देखिए सूरह बक़र: नोट ७८

249. यहूदियों के अपराधों को बयान करने में इतने रोष एवं क्रोध की अभिव्यक्ति हुई है और कलाम में ऐसा ज़ोर एवं ऐसी उग्रता पैदा हो गई है कि उन अपराधों के आधार पर उन्हें जो दण्ड दिया गया उस को शब्दों में बयान करने की ज़रूरत नहीं रही। इसी लिए जो बात यहाँ लुप्त है उसे हम ने ब्रैकेट (Bracket) में बयान कर दिया है। अर्थात इन अपराधों की बिना पर अल्लाह का यहूदियों पर लानत करना गोया रोष एवं क्रोध को ज़ाहिर करने से आप से आप प्रकोप टूट पड़ा है।

250. यहाँ बनी इस्राईल के उन अपराधों की तरफ़ इशारा करने से यह स्पष्ट करना अभिप्रेत है कि जिस क़ौम का इतिहास इस तरह के अपराधों से भरा पड़ा हो और जिन का क़ौमी स्वभाव ही उद्दंडता हो चुका हो वे अगर आज तुम से यह माँग कर रहे हैं कि क़ुर्आन को आसमान से उतरता हुआ दिखा दो, तो इस में आश्चर्य की क्या बात है?उन को न कोई बात समझना है और न ईमान लाना है बल्कि वे मात्र टालने के उद्देश्य से शर्तें और माँगें पेश कर रहे हैं।

251. यहूदी गर्व के साथ कहते कि हमारा अक़ीदा (धार्मिक विश्वास) इतना पक्का है कि तुम्हारी बात का कोई असर हमारे दिलों पर न होगा । हालाँकि हक़ (सत्य) आ जाने के बाद ग़लत अक़ीदों पर जमे रहना हठ धर्मी के सिवा कुछ नहीं ।

156. और (वे अभिशप्त हुए) इस कारण से कि उन्हों ने कुफ़्र किया और मरयम पर बड़ा बोहतान (लांछन) लगाया ।[252]

وَّبِكُفْرِهِمْ وَقَوْلِهِمْ عَلٰى مَرْيَمَ بُهْتَانًا عَظِيْمًا ﴿۱۵۶﴾

157. और उन के इस दावे के कारण कि हम ने मसीह ईसा इब्ने मरयम अल्लाह के रसूल को क़त्ल कर दिया।[253] हालाँकि न तो वे क़त्ल कर सके और न सलीब (सूली) पर चढ़ा सके [254] बल्कि (वास्तविक सूरत) इन पर संदिग्ध हो गई ।[255] और जिन लोगों ने इस बारे में मतभेद किया [256] वे शक में पड़े हुए हैं। उन को इस (वास्तविक सूरत) का कोई ज्ञान नहीं है।बल्कि अटकल की पैरवी कर रहे हैं।[257] निश्चय ही उन्होंने उसे क़त्ल नहीं किया ।[258]

وَّقَوْلِهِمْ اِنَّا قَتَلْنَا الْمَسِيْحَ عِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ رَسُوْلَ
اللّٰهِ ۚ وَمَا قَتَلُوْهُ وَمَا صَلَبُوْهُ وَلٰكِنْ شُبِّهَ لَهُمْ ؕ
وَاِنَّ الَّذِيْنَ اخْتَلَفُوْا فِيْهِ لَفِيْ شَكٍّ مِّنْهُ ؕ مَا لَهُمْ بِهٖ مِنْ
عِلْمٍ اِلَّا اتِّبَاعَ الظَّنِّ ۚ وَمَا قَتَلُوْهُ يَقِيْنًا ﴿۱۵۷﴾

158. बल्कि अल्लाह ने उसे अपनी तरफ़ उठा लिया ।[259] अल्लाह सब पर ग़ालिब और हिकमत वाला है ।[260]

بَلْ رَّفَعَهُ اللّٰهُ اِلَيْهِ ؕ وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْمًا ﴿۱۵۸﴾

159. और अहले किताब में से ऐसा कोई न होगा जो उसकी मौत से पहले उस पर ईमान न ले आए [261] और क़ियामत के दिन वह उन पर गवाही देगा। [262]

وَاِنْ مِّنْ اَهْلِ الْكِتٰبِ اِلَّا لَيُؤْمِنَنَّ بِهٖ قَبْلَ مَوْتِهٖ ۚ
وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ يَكُوْنُ عَلَيْهِمْ شَهِيْدًا ﴿۱۵۹﴾

160. अल्क़िस्साः यही कि [263] यहूदियों की इन ज़ालिमाना हरक़तों की वजह से हम ने कितनी ही पाक चीज़ें उन पर हराम कर दीं जो (पहले) उन के लिए हलाल थीं । इस वजह से भी कि वे अल्लाह की राह से बहुत रोकने लगे थे।

فَبِظُلْمٍ مِّنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ طَيِّبٰتٍ اُحِلَّتْ لَهُمْ
وَبِصَدِّهِمْ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ كَثِيْرًا ﴿۱۶۰﴾

161. एवं उन के सूद लेने की वजह से हालाँकि उन्हें उस से मना किया गया था [264] और इस वजह से भी वे लोगों का माल नाजाइज़ तरीक़े से खाने लगे।और जो लोग उन में से काफिर हैं उन के लिए हम ने दुखदायिनी यातना तैयार कर रखी है ।[265]

وَّاَخْذِهِمُ الرِّبٰوا وَقَدْ نُهُوْا عَنْهُ وَاَكْلِهِمْ اَمْوَالَ النَّاسِ
بِالْبَاطِلِ ؕ وَاَعْتَدْنَا لِلْكٰفِرِيْنَ مِنْهُمْ عَذَابًا اَلِيْمًا ﴿۱۶۱﴾

162. अलबत्ता इन में से वे लोग जो ज्ञान में पक्के हैं,[266] और जो मोमिन हैं [267] वे उस (हिदायत) पर ईमान लाते हैं जो तुम्हारी तरफ़ उतारी गई है और उस पर भी जो तुम से पहले उतारी गई थी। ये लोग नमाज़ क़ायम करने वाले, ज़कात अदा करने वाले ।[268] और अल्लाह और अन्तिम दिन (आख़िरत) पर ईमान रखने वाले हैं। ऐसे लोगों को हम ज़रुर बड़ा कर्मफल प्रदान करेंगें।

لٰكِنِ الرّٰسِخُوْنَ فِى الْعِلْمِ مِنْهُمْ وَالْمُؤْمِنُوْنَ يُؤْمِنُوْنَ
بِمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَآ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ وَالْمُقِيْمِيْنَ الصَّلٰوةَ
وَالْمُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَالْمُؤْمِنُوْنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ؕ اُولٰٓئِكَ
سَنُؤْتِيْهِمْ اَجْرًا عَظِيْمًا ﴿۱۶۲﴾

252. हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की पैदाइश चमत्कारिक रुप से बिन बाप के हुई थी।और आप ने पालने में से ही बोल कर अपने नबी होने का एलान किया था। इस लिए आप के दौर में किसी को यह साहस नहीं हुआ था कि वे आप की आदरणीय माता पर इस सिलसिले में लांछन लगाता लेकिन बाद में यहूदियों ने जान बूझकर मात्र हक़ (सत्य) की मुख़ालफ़त के उद्देश्य में हज़रत मरयम पर घिनावना इल्ज़ाम लगाया।

253. यहूदी गुनाहों पर इतने ढीट हो गए थे कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम जैसे प्रतिष्ठित पैग़म्बर के विरुद्ध क़त्ल की साजिश करने में उन्हें थोड़ा भी संकोच न हुआ। और फिर गर्व के साथ दावा करने लगे कि हम ने अल्लाह के रसूल मसीह ईसा बिन मरयम को क़त्ल कर दिया।

यद्यपि उन का यह दावा झूठा है इस लिए कि अल्लाह तआला ने उन की इस साजिश को नाकाम बना दिया लेकिन इस से उन के जुर्म की संगीनी और उन की कठोरता का अन्दाज़ा होता है।

254. यहाँ से आयत 159 के अन्त ''उन पर गवाही देगा'' तक का मज़मून जुमला-ए-मुअ्तरिज़ा (व्यवहित वाक्य) के तौर पर है। चूँकि ईसा अलैहिस्सलाम के क़त्ल की बात छिड़ गई इस लिए अल्लाह तआला ने ऊपर के बयान के क्रम को रोक कर सही बात स्पष्ट कर दी।

255. यह आयत स्पष्ट रुप से यहूदियों के उस दावे का खण्डन करती है कि उन्होंने हज़रत मसीह को सूली दी, वे न क़त्ल कर सके और न सूली दे सके। बल्कि हुआ यूँ कि अल्लाह तआला ने आप को हिफ़ाज़त के साथ अपनी तरफ़ उठा लिया। और आप के अचानक ऊपर उठा लिए जाने से वास्तविकता उन पर संदिग्घ हो गई। उन्हों ने आप को अपमानित करने और आप के मिशन को नाकाम बनाने के लिए सूली दिए जाने की काल्पनिक कहानियाँ गढ़ लीं और उस का प्रोपैगेन्डा इतने बड़े पैमाने पर किया कि ईसाई भी उस फरेब में आ गए । अत: उन्होंने हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को मज़लूम साबित कर दिखाने और फिर उस पर कफ़्फ़ारे (प्रायश्चित) के अक़ीदे की इमारत खड़ी करने के उद्देश्य से न केवल इसे स्वीकार किया बल्कि इसे बाइबिल में भी शामिल कर लिया। हालाँकि यहूदियों के लिए यह बात जहाँ सर उठाने योग्य थी वहीं ईसाईयों के लिए यह बात सर नीचा कर देने वाली बात थी। क़ुर्आन ने मसीह के क़त्ल की हक़ीक़त पर से परदा उठा कर हज़रत मसीह की शान में वृद्धि ही की। रहा यह सवाल कि संदेह की स्थिति किस प्रकार बनी तो इस का स्वरुप निश्चित करना मुश्किल है। इस सिलसिले में अटकल से बात करने के बजाय क़ुर्आन के संक्षिप्त बयान पर संतोष कर लेने ही में भलाई है।स्पष्ट रहे कि उस समय बैतुलमुक़द्दस पर रोमियों की हुकूमत थी और यहूदी आलिमों और उन के सरदारों ने एक साज़िश के तहत रोम के शासक को हज़रत मसीह के ख़िलाफ़ उकसाया था और उन्हें गिरफ़्तार करने और सूली देने पर आमादा किया था। राज्य के अधिकारियों को उत्तेजित करने के लिए उन्होंने ख़ास तौर से जो दाँव खेला था वह उन का यह इल्ज़ाम था कि हज़रत मसीह यहूद का बादशाह होने का दावा करते हैं।

256. मतभेद वालों से मुराद ईसाई हैं।

257. मालूम हुआ कि जिस ज़माने में क़ुर्आन नाज़िल हो रहा था, मसीह के क़त्ल के बारे में ईसाईयों में बड़ा मतभेद पाया जाता था। जिस का स्पष्ट प्रमाण यह है कि हज़रत मसीह को सूली दिए जाने और क़ब्र से उन के उठ खड़े होने का जो किस्सा बाइबिल में बयान हुआ है,एक पहेली सी बन गई है। बाइबिल के बयान से साफ़ ज़ाहिर होता है कि वह घटना का सही विवरण देने में असमर्थ हैं। इसी कारण ईसाईयों ने हज़रत मसीह की मौत के बारे में अजीब फ़लसफ़े ईजाद किये। अत: एक फ़लसफ़ा (Docetism) के नाम से मशहूर हुआ जो इस बात को स्वीकार नहीं करता कि हज़रत ईसा का शरीर प्राकृतिक था। इस असत्य प्रिय मानसिकता ने उन्हें यह समझने पर विवश किया कि वह ख़ुदा के बन्दे नहीं बल्कि (अल्लाह माफ़ करे) उस के बेटे हैं यह सब बिचार बाद में पैदा हुए। अत:इन्साइकलोपीडिया आफ़ रिलीजन एन्ड एथिक्स में है :

"One would have thought that the first and second Christian generations would at any rate have had no doubt about our Lord's real manhood." -(Ency. Of Religion. & Ethics, Vol. IV P. 832).

It was possible to show any one who accepted the story of His life in the Gospels' that he was a real man, subject to the normal conditions of human life."-(ERE VOl. IV P. 833).

इस इन्साइकलोपीडिया में यह भी स्वीकार किया गया है कि बासलीक़ इस बात के क़ायल हैं अर्थात इसे मानते हैं कि सूली ग़लती से साइमन को दी थी ।

"Irenaeus says that Besilides' account of the Crucifixion was that Simon of Cyrene was crucified by mistake."-(ERE Vol.IV P.833).

रहा हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के कब्र से जी उठने का किस्सा जो बाइबिल में अलग अलग ढंग से बयान हुआ है तो उस के बयान के ढंग से ही मालूम होता है कि यह मात्र सुनी सुनाई बातें हैं। जिन को जमा कर लिया गया है और जिन की वास्तविकता कहानी से अधिक नहीं। उदाहरण के तौर पर यूहन्ना की इंजील में हैं ।

''परन्तु मरयम रोती हुई क़ब्र के पास ही बाहर खड़ी रही और रोते रोते क़ब्र की ओर झुक कर,दो स्वर्गदूतों को उज्जवल कपड़े पहने एक को सिरहाने और दूसरे को पैताने बैठे देखा, जहाँ यीशु की लोथ पड़ी थी। उन्होंने उस से कहा हे श्राही, तू क्यों रोती है?उस ने उन से कहा,वे मेरे प्रभु को उठा ले गए और मैं नहीं जानती कि उसे कहाँ रखा है, यह कह कर वह पीछे फिरी और यीशु को खड़े देखा और न पहचाना कि यह यीशु हैं। यीशु ने उस से कहा हे नारी, तू क्यों रोती है? किस को ढूँढती है? मरियम मगदलीनी ने आ कर चेलों को बताया कि मैं ने प्रभु को देखा और उस ने मुझ से ये बातें कहीं (यूहन्ना २०:११, से १८).

(स्पष्ट रहे कि यहाँ जिस मरयम का ज़िक्र है वह हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की माता नहीं बल्कि दूसरी मरयम है।) लेकिन लूका की इंजील में मरियम के यीशु को क़ब्र के पास खड़े देखने का विवरण नहीं है। बल्कि उस में यह किस्सा इस तरह बयान हुआ है।

''और जब उस की लोथ न पाई तो यह कहती हुई आई कि हम ने स्वप्न में स्वर्गदूतों का दर्शन पाया जिन्हों ने कहा कि वह जीवित है। तब हमारे साथियों में से कई एक क़ब्र पर गए, और जैसा स्त्रियों ने कहा था वैसा ही पाया, परन्तु उस को न देखा.'' (लूका २४:२३,२४)

इस बयान के अनुसार औरतों ने फ़रिशतों (स्वर्गदूतों) को देखा और फ़रिश्तों ने यह ख़बर दी थी कि ईसा ज़िन्दा हैं अर्थात् उन औरतों का आँखों देखा अनुभव न था।

इसी तरह मरकुस के इंजील में भी इस बात का कोई विवरण नहीं है कि उन औरतों ने यीशु को क़ब्र के पास खड़े देखा बल्कि यह स्पष्टीकरण हैं कि:

'' और वे निकल कर क़ब्र से भाग गईं क्यों कि कपकपी और घबराहट उन पर छा गई थी और उन्हों ने किसी से कुछ न कहा, क्यों कि डरती थीं।''(मरक़ुस १६:८)

इन इन्जीलों में यह भी दावा किया गया है कि चेलों ने यीशु को मरने के बाद गलील में देखा। साथ ही यह स्वीकृति भी विद्यमान है कि 'कुछ ने शक किया।

''और उन्होंने उस के दर्शन पा कर उसे प्रणाम किया पर किसी किसी को संदेह हुआ।''(मत्ती २८:१७) और मरक़ुस की इंजील कहती है कि:

''पिछे वह उन ग्यारहों को भी जब वे भोजन करने बैठे थे दिखाई दिया और उन के अविश्वास और मन की कठोरता पर उलाहना दिया क्यों कि जिन्हों ने उस के जी उठने के बाद उसे देखा था, उन्होंने उन की प्रतीति न की थी।''(मरक़ुस १६:१४) और यूहन्ना की इंजील में है कि यीशु आठ दिन बाद अपने चेलों के बीच प्रकट हुआ एवं यह भी बयान किया गया है:

''यह तीसरी बार है कि यीशु मरे हुओं में से जी उठने के बाद चेलों को दर्शन दिए।''(यूहन्ना २१:१४)

बाइबिल का यह उलझा हुआ एवं अविश्वस्नीय बयान इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि हज़रत मसीह के दफ़न होने और उस के बाद क़ब्र से जी उठने का किस्सा बिख़रे हुए ख़्वाब से अधिक कोई सच्चाई नहीं रख़ता। बयान इतना उलझा हुआ है कि बाइबिल का टीकाकार खुद स्वीकार करता है कि :

"There are however numerous critical problems about the story (see Taylor 602 ff) especially when it is compared in details with the accounts in the other Gospels."

—(Peake's commentary on the Bible, p.818).

और इस के टीकाकार ने मरकुस की इंजील के अन्तिम अध्याय के बारे में यहाँ तक लिखा है कि वह वास्तव में मरक़ुस का मूल हिस्सा नहीं है।

"It is now generally agreed that 9-20 are not an original part of MK. They are not found in the oldest MSS and indeed were apparently not in the copies used by Mt. and LK." (Do)

इसी तरह यूहन्ना की इंजील के अन्तिम अध्याय (२१) के बारे में उस का टीकाकार लिखता है कि इस का संशोधन इंजील के संकलनकर्ता ने स्वयं किया है:

"It was a supplement added by the evengelist himself ." (Do P. 867).

सारांश यह कि हज़रत ईसा के क़ब्र से जी उठने का किस्सा मात्र कहानी है और फिर यह मात्र कहानी नहीं रही बल्कि ईसाईयत का बुनियादी अक़ीदा बन गया जिस पर पूरे ईसाईयत की तर्क वितर्क के ज्ञान की इमारत खड़ी कर दी गई। लेकिन क़ुर्आन न अपने वास्तविकता पूर्ण बयान के द्वारा कि हज़रत ईसा को न क़त्ल किया जा सका और न सूली दी

जा सकी बल्कि अल्लाह तआला ने उन्हें अपनी तरफ़ उठा लिया, ईसाईयत के तर्क वितर्क की इमारत ढा देता है।

258. अर्थात् यहूदी हज़रत ईसा को हरगिज़ क़त्ल न कर सके। यह बात संदेह से परे है।

259. देखिए सूरह आले-इमरान नोट ८२

260. यहाँ अल्लाह के उन दो गुणों के ज़िक्र से अभिप्रेत इस बात की तरफ़ इशारा है कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के आसमान पर ज़िन्दा उठाए जाने की घटना एक असाधारण घटना है और यह अल्लाह की क़ुदरत और उस की हिकमत का असाधारण प्रदर्शन है।

261. अर्थात् हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की जब प्राकृतिक मौत होगी तो उस समय जितने अहले-किताब मौजूद होंगे चाहे वे यहूदी हों या ईसाई सब उन की रिसालत पर ईमान ला चुके होंगे।

हदीस में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने साफ़ साफ़ बतलाया है कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम क़ियामत के क़रीब नाज़िल होंगे और उस समय के सब से बड़े लीडर और फ़सादी दज्जाल को क़त्ल करेंगे। जिस के बाद सब अहले-किताब हज़रत मसीह पर ईमान ला कर मुसलमान हो जाएंगे और दुनिया में न यहूदियत बाक़ी रहेगी और न ईसाईत बल्कि इस्लाम और सिर्फ इस्लाम होगा।

हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के अवतरण के सिलसिले में जो सही हदीसें हैं उन में कुछ निम्न लिखित हैं।

عن ابی هريرة قال قال رسول الله صلى الله عليه وسلم : وَالَّذِی نَفْسِی بِیَدِہ لیُوشکن اَنْ یَنْزِلَ فیکم ابْن مریم حَکَمًا عَدْلاً فَیَکْسر الصَّلِیبَ وَ یَقْتُل الخِنْزِیرَ وَیَضع الحربَ و یَفیضُ المالُ حتیٰ لَا یَقْبَلُ اَحَدٌ حتی تَکُون السَّجْدَةُ الواحدة خیرًا من الدُّنیا وما فیها ثُمَّ یقول ابوهریرة اقرأ وا اِنْ شِئتُمْ وَ اِنْ مِنْ اهل الکتاب ۔ الخ

(بخاری کتاب احادیث الانبیاء)

हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु बयान फ़रमाते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया, क़सम उस ज़ात की जिस के हाथ में मेरी जान है इब्ने मरयम (ईसा)तुम्हारे बीच हाकिम, आदिल (न्याय करने वाले) बन कर ज़रुर आऐंगे, फिर वह सलीब को तोड़ डालेंगे और सुअर को क़त्ल करेंगे। और जंग ख़त्म कर देंगे (उस समय) माल की इतनी अधिकता होगी कि कोई क़ुबूल करने वाला न होगा। उस समय (अल्लाह के सम्मुख) एक सजदा दुनिया और उस में की सारी चीज़ों से बेहतर होगा। इस को रिवायत करने के बाद अबू हुरैरा ने फ़रमाया इस की पुष्टि चाहते हो तो यह आयत पढ़ो, वइन मिन अहलिल किताब-----अंत तक (बुख़ारी किताब अहादीसुलअम्बिया)

عن النواس بن سمعان قال قال رسول الله صلى الله عليه وسلم : فبینما هو کذلک اِذْ بَعَثَ اللّٰهُ الْمَسِیْح ابن مریم فینزل عِنْدَ الْمَنَارَة الْبَیْضاء شرقیَّ دِمِشْقَ مَهْرُوْدَتَیْنِ واضعاً کَفَّیْهِ عَلٰی اجنحه مَلَکَیْنِ اِذَا طا طاءَ راسهٗ قَطَرَ وَاِذَا رَفعه تحدَّرَ منه جُمانٌ کَاللُّؤْلُو فلا یحلُّ لِکافِرٍ یجدریح نَفَسِهِ الاماتَ وَنَفَسُهُ یَنْتَهی اِلٰی حیث یَنْتَهِیْ طَرْفُهٗ فَیَطْلُبُهُ حتّٰی یُدْرِکَهُ بِبَابِ لُدٍّ فَیَقْتُلُه. (مسلم کتاب الفتن)

"नवास बिन समआन रिवायत करते हैं कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया उस क्षण (कि दज्जाल फितना बरपा कर रहा होगा) अल्लाह मसीह इब्ने मरयम को भेज देगा और वह दमिश्क के पूर्वी हिस्से में सफ़ेद मीनारे के पास ज़र्द (पीले) रंग की दो चादरों को ओढ़े दो फ़रिश्तों के बाजुओं पर अपने हाथ रखे हुए नाज़िल होंगे। जब वह सर झुकाऐंगे तो ऐसा महसूस होगा कि मोती की बूँदे ढलक रही हैं। उन की साँस की हवा जिस काफ़िर तक पहुँचेगी वह मर जाएगा और उन की साँस दृष्टि की अन्तिम सीमा तक पहुँचेगी। फिर वह दज्जाल का पीछा करेंगे और उसे लुद के दरवाजे के पास पकड़ेंगे और क़त्ल कर देंगे।" (मुस्लिम किताबुलफ़ितन)

عن مجمع بن جارية الانصاری رضی الله عنه قال سَمِعتُ رسول اللهِ صلى الله عليه وسلم یَقُولُ یَقْتُلُ ابن مریم الدجَّال بِبَابِ لُدٍّ. (ترمذی ابواب الفتن)

"मजमा बिन जारिया रजियल्लाहु अन्हु कहते हैं कि मैं ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहिवसल्लम को फ़रमाते हुए सुना इब्ने-मरयम दज्जाल को लुद के दरवाज़े पर क़त्ल करेंगे।" (तिर्मिज़ी अबवाबुलफितन)

यह और इस तरह की दूसरी हदीसें जो इस विषय पर आई हैं उन से स्पष्ट होता है कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का अवतरण जो आखिरी ज़माने में होगा एक ख़ास मुहिम (अभियान) को सर करने के लिए होगा। अर्थात् दज्जाल को मारना और उस के पैदा किए हुए बड़े फितने को जड़ से उख़ाड़ फेंकना। और क़ुर्आन की इस आयत से पता चलता है कि ईसा के अवतरण का खास मकसद यह होगा कि यहूदियों के इस दावे को कि

'उन्हों ने हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम को क़त्ल किया.' ग़लत साबित कर दिखाया जाए । एवं ईसाईयों की ग़लत धारणा खास तौर से उन के खुदा का बेटा होने के अक़ीदे को ग़लत कर दिखाया जाए। और हज़रत ईसा की रिसालत और क़ुर्आन की सत्यता प्रमाणित हो जाए एवं उन की प्राकृतिक मौत जो अभी नहीं हुई है इसी ज़मीन पर हो जाए।

स्पष्ट रहे कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम रसूल की हैसियत से हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से पहले आ चुके हैं। और मुसलमान आप की रिसालत पर ईमान रखते हैं। आख़िरी ज़माने में उन का जो अवतरण होगा वह किसी नए नबी की हैसियत से नहीं होगा। इस लिए उन के अवतरण से हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के अन्तिम नबी होने की धारणा में कोई फ़र्क़ नहीं पड़ता।

यह भी स्पष्ट रहे कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम नाज़िल होते ही कोई दावा शुरु नहीं करेंगे बल्कि वह काम कर दिखाऐंगे जिस के लिए उन्हें ख़ास तौर से भेजा गया होगा। उन की इस मुहिम में क़ामयाबी खुद बता देगी कि वह ईसा इब्ने मरयम हैं । इस लिए मुसलमानों को उन्हें पहचानने में कोई दिक्कत न होगी। इस हक़ीक़त को अच्छी तरह समझ लिया जाए तो उन फ़ितने से आदमी बच सकता है जो क़ादियानियत आदि के रुप में उभरते रहते हैं, और अपने मसीह होने का ग़लत दावा कर के लोगों की गुमराही का सामान करते रहते हैं।

262. क़ियामत के दिन अल्लाह की अदालत में हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम जो गवाही देंगे उस की तफ़सीर सूरह माइदा आयत, 116,117 में बयान हुई है।

263. जुमला-ए-मुअतरिज़ा (व्यवहित वाक्य) ऊपर ख़त्म हो गया अब यहाँ से फिर कलाम का वही सिलसिला शुरू होता है जो आयत 155 से चला आ रहा था।

264. सूद के हराम होने का हुक्म बाइबिल में आज भी मौजूद है। जिस के कोटेशन (Quotation) हम सूरह बकर: के नोट 456 में नक़ल कर चुके हैं।

265. यहाँ तक यहूदियों के अपराधों का वर्णन हुआ है जिस से यह स्पष्ट करना अभिप्रेत है कि जिस क़ौम का रवैया इस सीमा तक उद्यण्ड रहा हो वह अगर आज क़ुर्आन पर ईमान लाने के सिलसिले में हठधर्मी दिखा रही है तो इस में आश्चर्य की क्या बात है? अल्लाह तआला उन्हें ख़बरदार करता है कि जो लोग भी कुफ़्र पर जमें रहेंगें उन के लिए उस ने दुखदायिनी यातना तैयार कर रखी है।

266. मुराद वे उलमा हैं जो दीन का सही ज्ञान रखते थे और उस में दृढ़ थे वे अपनी कथनी और करनी और अपने अचार व्यवहार के लिहाज़ से यहूदियों के साधारण विद्वानों से अलग थे। उन की सत्यप्रियता के कारण उन्हें क़ुर्आन पर ईमान लाने की तौफ़ीक़ नसीब हुई।

267. मुराद वे लोग हैं जो यद्यपि ज्ञान में सिद्धि का स्थान नहीं रखते थे किन्तु वे भलाई को प्रिय रखने वाले और चरित्रवान थे । क़ुर्आन की दअवत जब उन्होंने सुनी तो वह उस पर ईमान ले आए ।

268. यहूदी नमाज़ और ज़कात दोनों चीज़ों को त्याग चुके थे जिस का परिणाम यह निकला कि वह दीन ही को गवाँ बैठे सिर्फ वही लोग दीन पर क़ायम रहे जो नमाज़ और ज़कात पर कारबन्द थे।ऐसे ही लोगों ने आगे बढ़ कर क़ुर्आन की दअवत को क़ुबूल कर लिया। गोया यह नमाज़ और ज़कात ही की देन थी कि उन्हें हक़ को क़ुबूल कर लेने की तौफ़िक़ हुई। इस से स्पष्ट हुआ कि जहाँ इन दो बुनियादी स्तंभों को ढा दिया गया हो वहाँ दीन बाकी नहीं रहता।

ये सब रसूल ख़ुशख़बरी देने वाले और सचेत करने वाले बना कर भेजे गए थे ताकि उन रसूलों के आने के बाद लोगों के पास अल्लाह के सामने पेश करने के लिए कोई उज्र (तर्क) न रह जाए। अल्लाह ग़ालिब भी है और हिकमत वाला भी। (अल-क़ुर्आन)

إِنَّآ أَوْحَيْنَآ إِلَيْكَ كَمَآ أَوْحَيْنَآ إِلٰى نُوْحٍ وَّالنَّبِيّٖنَ مِنْۢ بَعْدِهٖ ۚ
وَأَوْحَيْنَآ إِلٰىٓ إِبْرٰهِيْمَ وَإِسْمٰعِيْلَ وَإِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ
وَالْأَسْبَاطِ وَعِيْسٰى وَأَيُّوْبَ وَيُوْنُسَ وَهٰرُوْنَ وَسُلَيْمٰنَ ۚ
وَاٰتَيْنَا دَاوٗدَ زَبُوْرًا ﴿١٦٣﴾

163. हम ने तुम्हारी तरफ़ उसी तरह वह्य भेजी है [269] जिस तरह नूह और उस के बाद के पैग़म्बरों की तरफ़ भेजी थी और हम ने इब्राहीम, इस्माईल, इस्हाक़, याकूब, याक़ूब की औलाद,[270] ईसा, अय्यूब, यूनुस, हारुन, और सुलेमान की तरफ़ भी वह्य भेजी थी।[271] तथा हम ने दाऊद को ज़बूर प्रदान की थी।[272]

وَرُسُلًا قَدْ قَصَصْنٰهُمْ عَلَيْكَ مِنْ قَبْلُ وَرُسُلًا لَّمْ
نَقْصُصْهُمْ عَلَيْكَ ۗ وَكَلَّمَ اللّٰهُ مُوْسٰى تَكْلِيْمًا ﴿١٦٤﴾

164. हम ने उन रसूलों पर भी वह्य भेजी जिन का हाल हम इस से पहले तुम से बयान कर चुके हैं और उन रसूलों पर भी जिन का हाल हम ने तुम्हें नहीं सुनाया [273] और अल्लाह ने मूसा से कलाम (बातचीत) किया जैसा कि वास्तव में कलाम किया जाता है।[274]

رُسُلًا مُّبَشِّرِيْنَ وَمُنْذِرِيْنَ لِئَلَّا يَكُوْنَ لِلنَّاسِ عَلَى اللّٰهِ
حُجَّةٌۢ بَعْدَ الرُّسُلِ ۗ وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْمًا ﴿١٦٥﴾

165. ये सब रसूल ख़ुशख़बरी देने वाले और सचेत करने वाले बना कर भेजे गए थे ताकि उन रसूलों के आने के बाद लोगों के पास अल्लाह के सामने पेश करने के लिए कोई उज्र (तर्क) न रह जाए।[275] अल्लाह ग़ालिब भी है और हिकमत वाला भी।

لٰكِنِ اللّٰهُ يَشْهَدُ بِمَآ أَنْزَلَ إِلَيْكَ أَنْزَلَهٗ بِعِلْمِهٖ ۚ وَالْمَلٰٓئِكَةُ
يَشْهَدُوْنَ ۗ وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيْدًا ﴿١٦٦﴾

166. (इस के बावजूद अगर ये झुठलाते हैं तो झुठलाऐं) मगर अल्लाह गवाही देता है कि उस ने जो कुछ तुम पर नाज़िल किया (उतारा) है अपने ज्ञान से नाज़िल किया है,[276] और फ़रिश्ते भी इस की गवाही देते हैं यद्यपि अल्लाह की गवाही काफ़ी है।

إِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَصَدُّوْا عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ قَدْ
ضَلُّوْا ضَلٰلًا بَعِيْدًا ﴿١٦٧﴾

167. जिन लोगों ने इस से इन्कार किया और अल्लाह के रास्ते से रोका वह गुमराही में बहुत दूर निकल गए।

إِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَظَلَمُوْا لَمْ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ
وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ طَرِيْقًا ﴿١٦٨﴾

168. जिन लोगों ने कुफ्र किया और ज़ुल्म ढाया अल्लाह उन्हें हरगिज़ माफ़ नहीं करेगा और न उन्हें राह दिखाएगा।

إِلَّا طَرِيْقَ جَهَنَّمَ خٰلِدِيْنَ فِيْهَآ أَبَدًا ۚ وَكَانَ ذٰلِكَ
عَلَى اللّٰهِ يَسِيْرًا ﴿١٦٩﴾

169. सिवाय जहन्नम की राह के जहाँ वे हमेशा हमेशा रहेंगे। और अल्लाह के लिए ऐसा करना बिल्कुल आसान है।

269. 'वह्य' का अर्थ इशारा करने और दिल में कोई बात डालने के हैं। अल्लाह अपना संदेश जिस गुप्त रुप से अपने पैग़म्बरों को भेजता है उस के लिए क़ुर्आन ने वह्य की परिभाषा इस्तेमाल की है । (मराठी और हिन्दी में इस भाव को व्यक्त करने के लिए कोई शब्द नहीं है। हिन्दी का शब्द प्रकाशना तथा अंग्रेज़ी का शब्द Reveal भी इस के पूर्ण भाव पर हावी नहीं)।

270. मतन (Text) में "अस्बात" शब्द इस्तेमाल हुआ है जो बनी इस्राईल के बारह क़बीलों के लिए विशेष परिभाषिक शब्द (Special Term) है। यहाँ इस से अभिप्राय वे नबी हैं जो इन बारह क़बीलों में नियुक्त हुए थे।

271. मक़सद यहाँ यह स्पष्ट करना है कि हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पहले व्यक्ति नहीं हैं जिन्हों ने अल्लाह की तरफ़ से वह्य के आने का दावा किया हो। बल्कि आप से पहले बहुत से पैग़म्बर गुज़र चुके हैं जिन पर अल्लाह तआला उसी तरह वह्य फ़रमाता रहा है जिस तरह हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर नाज़िल फ़रमा रहा है। सारे नबी (अलैहिमुस्सलाम) हिदायत के एक ही स्त्रोत से लाभान्वित होते रहे हैं ।

272. हज़रत दाऊद को अल्लाह तआला ने जो "ज़बूर" प्रदान की थी वह अपनी वास्तविक रुप में आज मौजूद नहीं है। अल्बत्ता उस के अंश उस ग्रंथ में देखे जा सकते हैं जो "भजन संहिता" के नाम से बाइबिल (पुराने नियम) में मौजूद है। उस में ख़ुदा की प्रशंसा और उस के अकेला ख़ुदा होने (तौहीद) के साथ उपदेशों एवं प्रवचनों की बातें बड़े प्रभाव पूर्ण ढंग से बयान हुई हैं।

273. क़ुर्आन यह नहीं कहता कि जिन पैग़म्बरों का वर्णन उस ने नामों के साथ किया बस वही पैग़म्बर थे और उन के अलावा कोई और पैग़म्बर नहीं भेजा गया था। बल्कि उस का कहना यह है कि उस के अलावा भी पैग़म्बर भेजे गए थे जिन के नामों की पुष्टि नहीं की गई है फिर भी सब पैग़म्बरों पर संक्षिप्त रुप से ईमान लाना ज़रुरी है।

274. मूसा अलैहिस्सलाम के लिए वह्य का ख़ास तरीका अपनाया गया था। अत:अल्लाह तआला उन से सीधे (Direct) संबोधन करता था। बाइबिल में भी इस का ज़िक्र है।

"और यहोवा मूसा से इस प्रकार आमने सामने बातें करता था जिस प्रकार कोई अपने मित्र से बातें करें। (निर्गमन ३३:११)

275. अर्थात् उन पैग़म्बरों को भेजने का उद्देश्य यह था कि क़ियामत के दिन लोग यह उज्र (तर्क) पेश न कर सकें कि हमें सोते से जगाने और बुरे कर्मो के परिणाम से आगाह करने का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया था वरना हम आख़िरत से बेपरवाह और दुनिया के मोह में मगन न रहते।

276. गवाही इस बात की कि क़ुर्आन अल्लाह की तरफ़ से नाज़िल हुआ है जिसमें शैतानों का कोई दख़ल नहीं है और यह शुद्ध और किसी भी तरह की मिलावट अथवा मिश्रण से पाक अल्लाह का कलाम है। अल्लाह की इस गवाही को हर वह व्यक्ति सुन सकता है जो क़ुर्आन को ध्यान से पढ़े क्यों कि इस की एक एक आयत पुकार पुकार कर कह रही है कि यह अल्लाह का कलाम (ईशवाणी) है मगर यह आवाज़ वही लोग सुन सकते हैं जो हक़ (सत्य) सुन सकने वाला कान रखते हों।

170. लोगों ! यह रसूल तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ़ से हक़ (सत्य) ले कर आ गया है। ईमान लाओ तुम्हारे हक़ में बेहतर होगा। और अगर कुफ़्र करते हो तो (याद रखो) जो कुछ आसमानों और ज़मीन में है सब अल्लाह ही का है और अल्लाह जानने वाला और हिकमत (गहरी समझ) वाला है।

يَا أَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَاءَكُمُ الرَّسُولُ بِالْحَقِّ مِنْ رَبِّكُمْ فَآمِنُوا
خَيْرًا لَكُمْ ۚ وَإِنْ تَكْفُرُوا فَإِنَّ لِلَّهِ مَا فِي السَّمَاوَاتِ
وَالْأَرْضِ ۚ وَكَانَ اللَّهُ عَلِيمًا حَكِيمًا ﴿١٧٠﴾

171. ऐ अहले-किताब ! अपने दीन में गुलू (अत्युक्ति) न करो [277] और अल्लाह के बारे में हक़ (सत्य) के सिवा कुछ न कहो ।[278] मसीह ईसा इब्ने मरयम तो इस के सिवा कुछ नहीं कि अल्लाह का रसूल और उस का एक कलिमह (आदेश) है जिस को अल्लाह ने मरयम की तरफ़ अल्क़ा किया (अर्थात भेजा) और उस की ओर से एक रुह है।[279] अतः तुम अल्लाह और उस के रसूलों पर ईमान लाओ और यह न कहो कि ख़ुदा तीन हैं।[280] बाज़ आ जाओ,यही तुम्हारे हक़ (पक्ष)में बेहतर है। हक़ीक़त इस के सिवा कुछ नहीं कि अल्लाह ही एक ख़ुदा है। वह पाक है इस से कि उस के औलाद हो। आसमानों और ज़मीन की सारी चीज़ें उसी की हैं और उन की ख़बरगीरी के लिए अल्लाह काफ़ी है।[281]

يَا أَهْلَ الْكِتَابِ لَا تَغْلُوا فِي دِينِكُمْ وَلَا تَقُولُوا عَلَى اللَّهِ
إِلَّا الْحَقَّ ۚ إِنَّمَا الْمَسِيحُ عِيسَى ابْنُ مَرْيَمَ رَسُولُ اللَّهِ وَكَلِمَتُهُ
أَلْقَاهَا إِلَىٰ مَرْيَمَ وَرُوحٌ مِنْهُ ۖ فَآمِنُوا بِاللَّهِ وَرُسُلِهِ ۖ وَلَا
تَقُولُوا ثَلَاثَةٌ ۚ انْتَهُوا خَيْرًا لَكُمْ ۚ إِنَّمَا اللَّهُ إِلَٰهٌ وَاحِدٌ ۖ
سُبْحَانَهُ أَنْ يَكُونَ لَهُ وَلَدٌ ۘ لَهُ مَا فِي السَّمَاوَاتِ وَمَا فِي
الْأَرْضِ ۗ وَكَفَىٰ بِاللَّهِ وَكِيلًا ﴿١٧١﴾

172. मसीह को हरगिज़ इस बात पर ऐब (आर) नहीं की वह अल्लाह का बन्दा हो और न निकटस्थ (मुक़र्रब) फ़रिश्ते इस पर ऐब (आर) हैं। और जो कोई उस की बन्दगी (उपासना)को ऐब (आर) समझेगा और घमंड करेगा तो वह समय दूर नहीं जब अल्लाह सब को अपने सम्मुख जमा करेगा।

لَنْ يَسْتَنْكِفَ الْمَسِيحُ أَنْ يَكُونَ عَبْدًا لِلَّهِ وَلَا الْمَلَائِكَةُ
الْمُقَرَّبُونَ ۚ وَمَنْ يَسْتَنْكِفْ عَنْ عِبَادَتِهِ وَيَسْتَكْبِرْ
فَسَيَحْشُرُهُمْ إِلَيْهِ جَمِيعًا ﴿١٧٢﴾

173. उस समय वह उन लोगों को जो ईमान लाए थे और जिन्होंने नेक काम किये थे, पूरा पूरा बदला देगा अपने फ़ज़्ल (उदार अनुग्रह)से और अधिक प्रदान करेगा। इस के विपरीत जिन्होंने उस की बन्दगी को अपनी (आर) ग़ैरत समझा और घमंड किया था उन को वह दुखदायी यातना देगा और वे अल्लाह के मुक़ाबले में किसी को अपना दोस्त या मददगार न पाऐंगे।

فَأَمَّا الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فَيُوَفِّيهِمْ أُجُورَهُمْ
وَيَزِيدُهُمْ مِنْ فَضْلِهِ ۖ وَأَمَّا الَّذِينَ اسْتَنْكَفُوا وَاسْتَكْبَرُوا
فَيُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا أَلِيمًا ۙ وَلَا يَجِدُونَ لَهُمْ مِنْ دُونِ اللَّهِ
وَلِيًّا وَلَا نَصِيرًا ﴿١٧٣﴾

277. "ग़ुलू" غلو किसी की श्रद्धा में या किसी बात के अनुमोदन (ताईद) एवं समर्थन में हद से गुज़र जाने को कहते हैं। दीन में ग़ुलू का मतलब यह है कि जिस चिज़ का जो स्थान दीन में निश्चित है उस को बढ़ा दिया जाए और उसे जो स्थान दिया गया है उस से अधिक उच्च स्थान उस के लिए निर्धारित किया जाए। ग़ुलू का बहुत स्पष्ट उदाहरण ईसाईयों का यह रवैया है कि वह हज़रत ईसा को जो अल्लाह के बन्दे और रसूल हैं ख़ुदा का बेटा मान कर उन की उपासना करने लगे। ग़ुलू के उदाहरण दूसरे धर्मों में भी अधिकता के साथ मिलते हैं। किसी ने रसूल को अवतार का दर्जा दे दिया है तो किसी ने अपने धार्मिक पेशवाओं को ख़ुदा की पदवी पर बिठा रखा है। क़ुर्आन के मानने वाले भी धीरे धीरे ग़ुलू का शिकार हो गए। अत: किसी ने बुज़ुर्गों के लिए पैग़म्बर का दर्जा निर्धारित किया तो किसी ने वलियों को ख़ुदा के स्थान पर पहुँचा दिया और उन के लिए ग़ौसुल आज़म (फ़रियादों का सुनने वाला) और मुश्किलकुशा (मुश्किलों को दूर करने वाला) जैसे उपनाम बनाए हालाँकि यह उपनाम ख़ुदा ही के लिए उचित हैं और उसी के लिए ख़ास (विशिष्ट) हैं। इसी तरह किसी ने इमाम के मासूम होने का अक़ीदा गढ़ लिया है और किसी ने तरीक़त (भक्तिमार्ग) का अविष्कार किया और शैख़ एवं पीर की धारणा में लिप्त हो गया। इस्लाम ने क़ब्रों को सादा बनाने का हुक्म दिया था लेकिन ग़ुलू पसंद (अत्युक्तिप्रिय) लोगों ने अपने बुज़ुर्गों की आलीशान (भव्य) दरगाहें निर्माण कर डालीं। इस्लाम ने सादगी और संतोष को प्रिय रखने की शिक्षा दी थी लेकिन ग़ुलू की मानसिकता ने ईशभय के रुप में सन्यास को अपना लिया। इसी तरह जो काम ज़रूरी (मुस्तहिब) थे उन्हें अनिवार्य (फ़र्ज़ और वाजिब) की श्रेणी में रख दिया। उस का असर दीन के मिज़ाज (Spirit) पर पड़ा और फिर न इस्लाम की सादगी बाक़ी रह सकी और न उस का संतुलन। नतीजा यह कि मिल्लत के अन्दर तरह तरह के फ़ितने पैदा हो गए और फ़िरकों (वर्गो) ने जन्म ले लिया और ग़ुलू पसन्द लोगों के हाथों दीन की कोई ईंट भी अपनी जगह पर क़ायम न रह सकी बल्कि दीन की पूरी व्यवस्था छिन्न भिन्न हो कर रह गई।

278. अगर अल्लाह से उन्हीं बातों को संबद्ध किया जाए जो हक़ हैं तो तमाम फ़ित्नों की समाप्ति हो जाती है। लेकिन जब उस से ऐसी बातों को जोड़ दिया जाए जो उस ने नहीं कहीं हैं तो ग़ुलू (अत्युक्ति) और बिदअत की राह खुल जाती है और फिर दीन का हुलिया बिगड़कर रह जाता है। ईसाईयों की गुमराहियों का असली कारण यही है कि उन्हों ने दीन में बहुत सी मन गढ़न्त बातें शामिल कर लीं। और किसी भी मन गढ़न्त बात को दीन में शामिल करना उसे अल्लाह से जोड़ने (संबद्ध करने) के समानार्थ है क्यों कि दीन का मतलब है इबादत (उपासना) और इताअत (आज्ञापालन) की वह व्यवस्था (System) जिसे अल्लाह ने उतारा हो। उस में अपनी तरफ़ से किसी भी चीज़ को दाखिल करना गोया इस बात का दावा करना है कि ये बात अल्लाह की तरफ़ से है जब कि यह सत्य नहीं है।

मुसलमानों के अन्दर भी बहुत सी गुमराहियाँ बिदअतों (नये नये चलन) के रास्ते ही से दाख़िल हुई हैं और उन्हों ने बहुत सी ख़ुराफ़ात को दीन का अंग बना लिया है । इस लिए आदमी जब तक खुले मन से क़ुर्आन और सुन्नत का अध्ययन न करे उस के लिए यह मालूम करना मुश्किल है कि अल्लाह का असल दीन क्या है।

279. यहाँ ईसा अलैहिस्सलाम के बारे में तीन बातें इर्शाद हुई हैं। एक यह कि वह अल्लाह के रसूल हैं, दूसरे यह कि वह अल्लाह का एक कलिम: हैं और तीसरे यह कि वह अल्लाह की ओर से एक रुह हैं। इस स्पष्टीकरण से अभिप्रेत हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के बारे में ईसाईयों के इस अक़ीदे का कि हज़रत मसीह ख़ुदा के बेटे हैं या उन में ख़ुदा का कोई अंश है,खण्डन करना है। मतलब यह है कि हज़रत मसीह का असाधारण रुप से जन्म लेना कोई ऐसी बात नहीं है कि उन को ख़ुदा का बेटा बनाया जाए। असाधारण रूप से उन का जन्म ख़ुदा की आज्ञा से हुआ था और उन के अन्दर जो रुह थी वह अल्लाह ही की प्रदान की हुई थी इस लिए यह अक़ीदा (धारणा) अत्याधिक गुमराह करने वाला है कि अल्लाह की आत्मा (रूह) उन के अन्दर समा गई थी । नऊज़ुबिल्लाह मिन ज़ालिका (अधिक व्याख्या के लिए देखिए सूरह आले-इमरान नोट ५६)

280. तीन ख़ुदाओं का अक़ीदा ईसाईयत का मन गढ़न्त अक़ीदा है जो बाप बेटा और पवित्र रुह का मिश्रण है। यह अक़ीदा सरासर मुश्रिकाना (बहुदेववादी) है लेकिन चूँकि तौरात, ज़बूर और इन्जील तमाम आसमानी किताबों की तालीम तौहीद (एकेश्वरवाद) की तालीम है इस लिए तौहीद और तस्लीस (त्रीश्वरवाद) दोनो का एक साथ दावा किया गया और दोनों को निभाने की कोशिश की गई और इस संकोच में दीन का हुलिया बुरी तरह बिगड़ कर रह गया।

यह आयत जहाँ ईसाईयों के तीन ख़ुदाओं के अक़ीदे का खंडन करती है वहाँ वह बहुदेववादी विचारों के असंख्य ख़ुदाओं की कल्पना को भी ग़लत ठहराती है चाहे वह दो ख़ुदाओं का अक़ीदा हो या सैंकड़ों एवं हज़ारों ख़ुदाओं का।

281. अर्थात जब आसमानों और ज़मीन की सारी चीज़ें अल्लाह ही की हैं तो फिर उसे बेटा बनाने की क्या ज़रुरत? और जब वह सब की ख़बरगीरी के लिए काफ़ी है तो उस को इस बात की कैसे आवश्यकता हो सकती है कि वह किसी को बेटा बना कर उस से मदद ले।

174. लोगो ! तुम्हारे पास तुम्हारे रब की तरफ़ से स्पष्ट हुज्जत (प्रमाण) आ गई है।[282] और हम ने तुम्हारी तरफ़ नूर मुबीन नाज़िल किया है।[283]

يٰۤاَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَآءَكُمْ بُرْهَانٌ مِّنْ رَّبِّكُمْ وَاَنْزَلْنَآ
اِلَيْكُمْ نُوْرًا مُّبِيْنًا ﴿۱۷۴﴾

175. तो जो लोग अल्लाह पर ईमान लाएंगे और उस को मज़बूत पकड़ लेंगे उन्हें वह अपनी रहमत और अपने फ़ज़्ल (उदार अनुदान) में दाखिल करेगा और अपनी तरफ़ सीधे रास्ते की हिदायत बख़्शेगा ।[284]

فَاَمَّا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا بِاللّٰهِ وَاعْتَصَمُوْا بِهٖ
فَسَيُدْخِلُهُمْ فِيْ رَحْمَةٍ مِّنْهُ وَفَضْلٍ ۙ وَّيَهْدِيْهِمْ
اِلَيْهِ صِرَاطًا مُّسْتَقِيْمًا ۭ ﴿۱۷۵﴾

176. वे तुम से फ़तवा पूछते हैं,[285] कहो अल्लाह तुम्हें कलाला के बारे में फ़तवा देता है।[286] अगर कोई व्यक्ति नि:संतान मर जाए और उस की एक बहन हो [287] तो उसे उस के तरके का आधा मिलेगा और (अगर बहन मर जाए और भाई ज़िन्दा हो तो) वह उस बहन का वारिस होगा, [288] बशर्ते कि उस बहन के कोई औलाद न हो। अगर बहनें दो हों तो वे उस के तरके का दो तिहाई पाऐंगी। [289] और अगर कई भाई बहन हों तो मर्द का हिस्सा दो औरतों के बराबर होगा।[290] अल्लाह तुम्हारे लिए (अहकाम) स्पष्ट करता है ताकि तुम भटक न जाओ और (याद रखो) अल्लाह को हर चीज़ का ज्ञान है।

يَسْتَفْتُوْنَكَ ۭ قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيْكُمْ فِي الْكَلٰلَةِ ۭ اِنِ امْرُؤٌا هَلَكَ
لَيْسَ لَهٗ وَلَدٌ وَّلَهٗٓ اُخْتٌ فَلَهَا نِصْفُ مَا تَرَكَ ۚ وَهُوَ يَرِثُهَآ
اِنْ لَّمْ يَكُنْ لَّهَا وَلَدٌ ۭ فَاِنْ كَانَتَا اثْنَتَيْنِ فَلَهُمَا الثُّلُثٰنِ مِمَّا
تَرَكَ ۭ وَاِنْ كَانُوْٓا اِخْوَةً رِّجَالًا وَّنِسَاۗءً فَلِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ
الْاُنْثَيَيْنِ ۭ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اَنْ تَضِلُّوْا ۭ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيْمٌ ﴿۱۷۶﴾

282. मुराद क़ुर्आन है जिस की दअवत का अन्दाज़ बुद्धि को अपील करने वाला और तर्क सहित है। इस लिहाज से वह इन्सानों पर अल्लाह की हुज्जत (प्रमाण) है।

283. यह क़ुर्आन की दूसरी विशेषता है कि वह हक़ और बातिल (सत्य एवं असत्य) में फ़र्क़ करता और जीवन व्यतीत करने का सही मार्ग दिखाता है।

284. अर्थात् आख़िरत में उन्हें अल्लाह का क़ुर्ब (निकटता) हासिल होगा जो हिदायत की आखिरी मन्ज़िल है। आयत का उद्देश्य यह है कि जो लोग क़ुर्आन पर ईमान लाऐंगे और अल्लाह का दामन पकड़ लेंगे वे अपने अन्तिम लक्ष्य अर्थात् अल्लाह को पा लेने में सफ़ल होंगे और ये सब से बड़ी नेअमत है जो उन्हें हासिल होगी।

285. सूरह के शुरु में विरासत के जो एहकाम बयान हुए हैं उन के सिलसिले में एक सवाल के जवाब में यह आयत स्पष्टीकरण हेतु उतारी गई जिसे सूरह के अन्त में परिशिष्ट के तौर पर शामिल कर दिया गया।

286. मालूम हुआ कि सवाल कलाला (अर्थात जिस का न बाप जीवित हो और न औलाद) की संपत्ति के बारे में था जिस का हुक्म आयत 12 में गुज़र चुका (देखें नोट नं.34)

287. आयत 12 में अख़्याफ़ी (माँ शरीक) भाई बहन का हिस्सा बयान किया गया था। इस आयत में अअयानी (सगे) और अल्लाती (बाप शरीक) भाई बहन का हिस्सा बयान किया गया है।

288. अर्थात अगर अस्हाबे फ़ुरुज़ (Quranic Sharers) में से कोई भी ज़िन्दा न हो तो भाई पूरे तरके का वारिस होगा और अगर उन में से कोई ज़िन्दा हो जैसे पति तो उस का हिस्सा अदा करने के बाद शेष धन का वारिस भाई होगा।

289. यही हुक्म दो से अधिक बहनो का भी है। वे दो तिहाई में बराबर की साझीदार होंगी।

290. सगे और बाप शरीक भाई बहन के संपत्ति में हिस्सा पाने की सूरतों की तफ़सील के लिए देखिए नक़्शा 'जायदाद में हिस्सा पाने वाले' पृष्ठ सं.252 ता 255 देखें ।

५. सूरह अल-माइदह

नाम : आयत 112 में हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के साथियों (हवारियों) का किस्सा बयान हुआ है कि उन्होंने अपनी इस इच्छा को प्रकट किया था कि अल्लाह तआला उन के लिए आसमान से माइदह (खाने से भरी हुई थाल) उतारे इसी मुनासिबत से इस सूरह का नाम अल्माइद: है।

नाज़िल होने का समय : मदनी है अर्थात हिजरत के बाद उतरी है और मज़मून से अन्दाज़ा होता है कि इस का अवतरण ७ हिजरी में हुआ होगा सुलह हुदैबिय: के बाद मुसलमानों को उमरह करने की इजाज़त मिल गई थी। इस लिए मौक़ा पैदा हो गया था कि काबे की ज़ियारत (दर्शन) और अल्लाह की इबादत और उस की परस्तिश की निशानियों (शआइरुल्लाह) से सम्बन्धित उन्हें ज़रुरी हिदायतें दी जाऐं।

केन्द्रीय विषय : यह उस समूह की जिस का सिलसिला सुरह बक़र: से शुरु हुआ था,आखिरी सूरह है जिस में शरीअत के मुकम्मल (पूर्ण) होने के एलान के साथ उस के अहकाम और क़ानूनों की पाबन्दी और शरीअत के क़ानून लागू करने पर ज़ोर दिया गया है। चूँकि यह शरीअत के मुकम्मल होने का मरहला था इस लिए व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन से सम्बन्धित शरआी अहकाम बयान करने के साथ ईमान वालों को उन की अल्लाह से की गई प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहने की कड़ी ताकीद की गई है। इस सम्बन्ध में मुस्लिम उम्मत को सावधान किया गया है कि वह यहूदियों और ईसाईयों के जैसा रवैया न अपनाऐं जिन्होंने अल्लाह से की गई प्रतिज्ञा को भंग किया और जो शरीअत की व्यवस्था को तितर बितर करने,उस की पाबन्दियों से निकल भागने और दीन में बिद्अतों (नई नई बातों) को पैदा करने का अपराध किया। चूँकि क़ुर्आन की शैली हिदायत और तरबियत की है इस लिए इन तमाम विषयों एवं मसलों पर मिले जुले अन्दाज़ में गुफ़्तगू की गई है ताकि शरीअत की पाबन्दियों को क़ुबूल करने के लिए मानसिक वातावरण पैदा हो जाए। इसी तरह मौक़े के लिहाज़ से यहूदियों (مَغۡضُوۡبِ عَلَيۡهِمۡ जिन पर अल्लाह का प्रकोप हुआ) और ईसाईयों (ضَآلِّيۡنَ जो गुमराह हुए) को आख़िरी हद तक झंझोड़ा गया है ताक़ि फिर वे कोई तर्क न प्रस्तुत कर सकें और उन के मुक़ाबले में ईमान वालों (اَنۡعَمۡتَ عَلَيۡهِمۡ जिनको उस ने इनाम दिया) की राह रौशन हो।

कलाम की तरतीब : आयत 1 आरंभिका है जिस में शरीअत की बाँधी गई सीमाओं की पाबन्दी की ताकीद की गई है।

आयत 2 से 6 में शरीअत के एहकाम बयान किए गए हैं।

आयत 7 से 11 में अल्लाह से की गई प्रतिज्ञा पर दृढ़ता के साथ जमे रहने और न्याय एवं समानता का रवैया अपनाने की ताकीद की गई है इसी सम्बन्ध में एक ऐसी क़ौम की साज़िश का ज़िक्र किया गया है जो प्रतिज्ञा भंग करने की आदी थी।

आयत 12 से 26 में यहूदियों और ईसाईयों की प्रतिज्ञाओं के विपरीत चलने तथा उस को नष्ट एवं भंग करने की घटनाऐं बयान की हैं ताकि ईमान वाले इस से सबक़ लें। साथ ही अहले किताब को अपने रब से की गई प्रतिज्ञा का पालन करने की फिर से दअवत दी गई है।

आयत 27 से 32 में आदम के दो बेटों का किस्सा बयान हुआ है जिस से यह स्पष्ट करना अभिप्रेत है कि अल्लाह से बाँधी गई प्रतिज्ञा पर जमे रहने के लिए तक़्वा (ईश भय) ज़रुरी हैं। अगर दिल में तक़्वा न हो, तो अपराधिक मानसिकता परवरिश पाती है।

आयत 33 से 40 में ज़मीन में फ़साद और अपराध को मिटाने के लिए क़ानून बनाए गए है। साथ ही तक़्वा अपनाने की ताकिद की गई है और कुफ्र के बुरे अन्जाम से आगाह किया गया है।

आयत 41 से 50 में यहूदियों और ईसाईयों की प्रतिज्ञा भंग करने के उदाहरण प्रस्तुत किए गए हैं कि किस

तरह अल्लाह की किताब को उन्होंने एक किनारे डाल रखा है और व्यवहारिक जीवन में शरीअत के फ़ैसले को क़ुबूल करने से मुँह चुरा रहे हैं।

आयत 51 से 66 में ईमान वालों को हिदायत की गई है कि वे ऐसे वादा ख़िलाफ़ और उपद्रवी लोगों (यहूदियों और ईसाईयों) को अपना दोस्त न बनाऐं और उन के असर को क़ुबूल करने अर्थात् उन से प्रभावित होने से बचें।

आयत 67 से 86 में नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की ज़बानी अहले-किताब को अपना सुधार कर लेने का न्योता दिया गया है। इस सिलसिले में उन की प्रतिज्ञा भंग करने,मना किए गए कामों को कर गुज़रने, और काफ़िरों से दोस्ती करने का ज़िक्र हुआ है। इस सम्बन्ध में उन लोगों की तारीफ़ की गई है जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की दअवत को क़ुबूल कर के तक़वा की ज़िन्दगी अपना रहे थे।

आयत 87 से 108 में शरीअत के वे अहकाम (आदेश) बयान किए गए हैं जो हलाल और हराम से संबन्धित हैं। अन्त में शहादत (गवाही) का क़ानून बयान किया गया है।

आयत 109 से 120 अन्तिम शब्द हैं जिस में स्पष्ट किया गया है कि क़ियामत के दिन रसूल शहादत देंगे कि उन्होंने अपनी उम्मतों तक ख़ुदा का दीन उस की शरीअत (संविधान) ठीक ठीक पहुचाई थी । इस सिलसिले में उदाहरणार्थ ईसा अलैहिस्सलाम का उदाहरण प्रस्तुत किया गया है ताकि ईसाईयों पर हुज्जत क़ायम हो जाए और वे कोई तर्क न कर सके। यह है वह शहादत (गवाही) जो ईसा अलैहिस्सलाम ख़ुदा की अदालत में पेश करेंगें

❐ ❐ ❐ ❐ ❐ ❐

५-सूरह अल-माइदह

आयतें : १२०

सورة المائدة

अल्लाह रहमान और रहीम के नाम से

بسم الله الرحمن الرحيم

1. ऐ ईमान वालो ! (शरई) प्रतिबन्धनों की पाबन्दी करो ।[1] तुम्हारे लिए मवेशी की जाति के जानवर हलाल कर दिए गए।[2] सिवाय उन के जिस का हुक्म तुम्हें सुनाया जा रहा है।[3] लेकिन इहराम [4] की हालत में शिकार को जायज़ न कर लो।[5] बेशक अल्लाह जो चाहता है हुक्म देता है।[6]

يا أيها الذين آمنوا أوفوا بالعقود ۚ أحلت لكم بهيمة
الأنعام إلا ما يتلى عليكم غير محلي الصيد وأنتم حرم ۗ إن الله
يحكم ما يريد (١)

2. ऐ ईमान वालों !अल्लाह के शआइर [7] (ईश भक्ति की निशानियों) का निरादर न करो और न हुर्मत वाले महीनों का,[8] न क़ुर्बानी के जानवरों का, न (कुर्बानी के चिन्ह के रुप में) पट्टे पड़े हुए जानवरों का,[9] न प्रतिष्ठित घर (काबा) का संकल्प करने वालों का जो अपने रब के फ़ज़्ल (उदार अनुग्रह) और उस की प्रसन्नता की चाह में निकले हों।[10] और जब तुम इहराम की हालत से बाहर आ जाओ तो शिकार कर सकते हो।और किसी क़ौम की दुश्मनी इस कारणवश कि उस ने तुम्हें मस्जिदे हराम (काबा) से रोका है [11] इस बात पर न उभारे कि ज़्यादती करने लगो,[12] नेकी और तक़्वा के कामों में तुम एक दूसरे से सहयोग करो और गुनाह और ज़्यादती के कामों में सहयोग न करो ।[13] अल्लाह से डरते रहो। निश्चय ही अल्लाह बड़ी सख़्त सज़ा देने वाला है।[14]

يا أيها الذين آمنوا لا تحلوا شعائر الله ولا الشهر الحرام
ولا الهدي ولا القلائد ولا آمين البيت الحرام يبتغون
فضلا من ربهم ورضوانا ۚ وإذا حللتم فاصطادوا ۚ
ولا يجرمنكم شنآن قوم أن صدوكم عن المسجد الحرام أن
تعتدوا ۘ وتعاونوا على البر والتقوى ۖ ولا تعاونوا على الإثم
والعدوان ۚ واتقوا الله ۖ إن الله شديد العقاب (٢)

3. तुम पर हराम किया गया मुर्दार,[15] ख़ून,[16] सुअर का गोश्त[17] वे (जानवर) जिस पर अल्लाह के सिवा किसी और का नाम लिया गया हो,[18] वह जो गला घुट जाने से,[19] या चोट लगने से [20] या ऊपर से गिर कर [21] या सींग लगने से मरा हो,[22] या जिसे किसी दरिन्दे ने फाड़ खाया हो।[23] सिवाय उस के जिसे तुम (ज़िन्दा पा कर) ज़ब्ह (वध) कर लो।[24] और वह (जानवर) जो किसी थान [25] पर ज़ब्ह किया गया हो। एवं यह भी हराम है कि तुम पाँसों के तीरों से फ़ाल निकालो।[26] यह फ़िस्क़ (आदेशोल्लंघन) है। आज [27] काफ़िरों को तुम्हारे दीन की तरफ़ से बिल्कुल मायूसी हो गई है लिहाज़ा इन से न डरो बल्कि मुझ से डरो।[28] आज [29] मैं ने तुम्हारे लिए तुम्हारे दीन को मुकम्मल (परिपूर्ण) कर दिया [30] और अपनी नेअमत तुम पर तमाम कर दी [31] और तुम्हारे लिए इस्लाम को दीन की हैसियत से पसन्द कर लिया।[32] अतः जो कोई भूख से मजबूर हो जाए (और इन में से कोई चीज़ खा ले) बशर्ते कि वह गुनाह की तरफ़ न झुके तो अल्लाह क्षमा करने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।[33]

حرمت عليكم الميتة والدم ولحم الخنزير وما أهل لغير
الله به والمنخنقة والموقوذة والمتردية والنطيحة وما
أكل السبع إلا ما ذكيتم وما ذبح على النصب وأن تستقسموا
بالأزلام ۚ ذلكم فسق ۗ اليوم يئس الذين كفروا من دينكم
فلا تخشوهم واخشون ۚ اليوم أكملت لكم دينكم وأتممت
عليكم نعمتي ورضيت لكم الإسلام دينا ۚ فمن اضطر في
مخمصة غير متجانف لإثم ۙ فإن الله غفور رحيم (٣)

1. शरीअत के अहकाम उतरने के लिहाज़ से चूँकि यह आखिरी सूरह है इस लिए इस की शुरुआत ही इस हिदायत के साथ हुई है कि अुक़ूद (शरीअत के प्रतिबंधनो) का पालन करो। यह गोया अन्तिम वादा है जो ईमान वालों से लिया गया है कि वे शरीअत के आदेश और क़ानूनों तथा सीमाओं और प्रतिबन्धनों की पूरी पूरी पाबन्दी करेंगे और उस से तिल भर भी फिरेंगे नहीं ।

इस के बाद अगर मुसलमान शरअी आदेश की अवहेलना करते हैं या शरअी सीमाओं एवं प्रतिबन्धनों का उल्लंघन करते हैं या शरीअत के क़ानून पर अपने बनाए हुए क़ानून को वरीयता देते हैं तो यह उस आसमानी हिदायत का भी उल्लंघन है जो उन्हें आखिरी तौर से दी गई है और उस प्रण एवं प्रतिज्ञा की भी जो उन्हों ने क़ुर्आन और पैग़म्बर पर ईमान लाकर अपने रब से बाँधी थी।

2. अन्आम (मवेशी) का शब्द अरबी में ऊँट, गाय, बैल और भेड़ बकरी के लिए बोला जाता है और ''बहीम:'' शब्द उस से भी आम (सामान्य) है इस में दूसरे चौपाये भी दाख़िल हैं अत: ''बहीमतुल-अन्आम'' से मुराद वे चरने वाले चौपाए हैं जो अन्आम (मवेशी) की जाति के हों अर्थात् जो जुगाली करते हों, कुचलियाँ अर्थात् नोकदार दाँत अथवा कुत्ता दाँत न रखते हों और आहार भी मवेशियों जैसा लेते हों जैसे हिरन, नीलगाय इत्यादि।

हलाल कर दिए गए का मतलब यह है कि उन जानवरों का गोश्त खाना दूध पीना, उन की चमड़ी, हड्डी और ऊन से लाभ उठाना वैध कर दिया गया है अत: वहम एवं अन्धविश्वास की बुनियाद पर इन को ज़बह करने या इन का गोश्त खाने में कोई दोष महसूस नहीं करना चाहिए।

3. अर्थात् इस वैधता से अलग हैं वे जानवर जिन की अवैधता का हुक्म इस से पहले क़ुर्आन में बयान किया जा चुका है और आगे आयत ३३ में बयान किया जा रहा है।

4. ख़ाना-ए-काबा की ज़ियारत (हज्ज या उमरह) करने वाले पर लिबास वग़ैरा की ख़ास तरह की पाबन्दियाँ आयद होती हैं। उन पाबन्दियों में दाख़िल होने का नाम इहराम की हालत है (अधिक व्याख्या के लिए देखिए, सूरह बकर: नोट२८४).

5. इहराम की हालत में थल (ख़ुश्की) का शिकार करने की मनाही है इस का विवरण आयत ९६ में आ रहा है।

6. अर्थात अल्लाह को हुक्म देने का सर्वथा अधिकार है और बन्दों को यह अधिकार नहीं है कि वे उस के किसी हुक्म पर अगर मगर करें। अल्लाह के आदेश यद्यपि नीति एवं मसलहत पर आधारित होते हैं लेकिन हो सकता है कि इम्तिहान के उद्देश्य से मसलहत एवं नीति को गुप्त रखा गया हो इस लिए इन्सान के लिए सही और उचित रवैया यही है कि वह ख़ुदा की आज्ञा का पालन बिना किसी अगर मगर के करे।

हुक्म (आज्ञा) देने का सर्वथा अधिकार केवल अल्लाह ही को है, अत: जो व्यक्ति भी उस के ठहराए हुए हलाल और हराम से बेपरवाह हो कर अपने को या किसी व्यक्ति विशेष को या जनता को सर्वथा रुप से हुक्म देने का अधिकारी समझता है वह वास्तव में इस बात का इन्कार करता है कि यह अधिकार अल्लाह के लिए विशिष्ट (मख़सूस) है और उस का ऐसा करना मुश्रिकाना एवं काफ़िराना रवैया है।

7. शआइर की व्याख्या के लिए देखिए सूरह बक़र: नोट 190

8. हुर्मत के महीनों की व्याख्या के लिए देखिए सूरह बक़र:नोट 269

9. जिन जानवरों को क़ुर्बानी के उद्देश्य से बैतुल्लाह की तरफ ले जाया जाता था उन की गर्दनों में पट्टे डाल दिए जाते थे ताकि वे पहचान लिए जाऐं और कोई उन के साथ छेड़ छाड़ न करे या उन पर कोई हाथ न साफ़ करे। ये पट्टे आम तौर से पेड़ की छाल के होते थे और ऊँट और गाय की गर्दनों में डाले जाते थे। बकरे आम तौर से इस से अलग थे। गोया क़ुर्बानी के जानवर दो प्रकार के थे। एक पट्टे पड़े हुए दूसरे बग़ैर पट्टे के। यहाँ दोनों का निरादर न करने की हिदायत की गई है। अर्थात् पट्टे पड़े हुए जानवरों का वर्णन ताकीद के लिए है कि जब उन के गले में क़ुर्बानी का चिन्ह पड़ा हुआ है तो उन पर हाथ साफ़ करने या उन से छेड़ छाड़ करने के लिए क्या तर्क हो सकता है।

स्पष्ट रहे कि उस समय मदीना के आस पास से अल्लाह के घर के दर्शनार्थियों (तीर्थ यात्रियों) के काफ़िले गुज़रते थे और हालात ख़राब होने के कारण इस बात की आशंका थी कि मुसलमान कोई ऐसा क़दम न उठा बैठें जिस से शआइरुल्लाह (ईश भक्ति की निशानियों) का निरादर होता हो। इस लिए सख़्ती के साथ इस की मनाही की गई है।

10. अर्थात जो लोग हज्ज या उमरह के इरादे से निकले हों वे आदर के योग्य हैं क्यों कि उन की यह यात्रा अल्लाह की कृपा, उदार अनुग्रह एवं उस की प्रसन्नता की प्राप्ति की चाह में होती है अत: उन की राह में कोई रुकावट पैदा करना या उन्हें किसी प्रकार की क्षति पहुँचाना सख्त गुनाह का काम है।

इस आदेश में जो सार्वजनिकता पाई जाती है वह उस समय के हालात के लिहाज़ से थी क्यों कि उस समय हज्ज

मुसलमान ही नहीं करते थे बल्कि अरब के कोने कोने से लोग हज्ज के लिए आया करते थे। बाद में जब सूरह तौबा की आयत:

اِنَّمَا الْمُشْرِكُوْنَ نَجَسٌ فَلَا يَقْرَبُوا الْمَسْجِدَ الْحَرَامَ بَعْدَ عَامِهِمْ هٰذَا.

अर्थ:-''मुश्रिक नजिस (अपवित्र) हैं अत: इस साल के बाद ये मस्जिदे-हराम (प्रतिष्ठित मस्जिद) के क़रीब न आने पाऐं।''(सूरह तौबा आयत 28)

नाज़िल हुई तो उस ने इस हुक्म को मुसलमान दर्शनार्थियों के लिए खास कर दिया।

11. मक्का के काफ़िरों की ओर संकेत है जिन्होंने मुसलमानों को हज्ज और उमरह से रोक दिया था।

12. अर्थात न शरीअत की सीमाओं को लांघो और न न्याय एवं समानता के विरुद्ध कोई काम करो।

13. यह बहुत बड़ी उसूली बात है जो इस आयत में कही गई हैं। मुसलमानों का नियम यह होना चाहिए कि वे नेकी और ईश भक्ति के कामों में एक दूसरे के सहायक हों और गुनाह और ज़्यादती के कामों में किसी के भी सहायक नहीं। यह उसूली सिद्धान्त उन्हें हर जगह और हर क्षेत्र में अपनाना चाहिए चाहे वे किसी देश में रहते हों और मामले धार्मिक एवं नैतिक हों या सियासी एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर के हों। उन की सामाजिक पॉलीसी इसी उसूल पर आधारित होना चाहिए न कि पाखंड से परिपूर्ण डिपलोमेसी पर।

14. अर्थात अगर अल्लाह का तक़वा (ईश भय) न अपनाओगे तो वह सख़्त सज़ा देगा।

15. मुर्दार की व्याख्या सूरह बक़र: नोट 210 में गुज़र चुकी ।

16.व्याख्या के लिए देखिए सूरह बक़र: नोट 211

17.व्याख्या के लिए देखिए सूरह बक़र: नोट 212

18.व्याख्या के लिए देखिए सूरह बक़र: नोट 213

19.गला घुट जाने की एक सूरत यह हो सकती है कि जानवर की गर्दन किसी चीज़ में फ़ँस गई हो जिस के कारण उस की मौत हो जाए और दूसरी सूरत यह कि वह गला दबा देने से मर गया हो।

20. चोट खा कर मरने की भी कई सूरतें हो सकती हैं जैसे लाठी की मार से मर जाना दीवार या छत का जानवर पर गिर पड़ना या मोटर आदि गाड़ियों की दुर्घटना का शिकार होना।

मौजूदा ज़माने में ज़ब्ह (वध) करने का आज कल एक नया तरीका प्रचलित हो रहा है अत: जानवर को ज़ब्ह करने से पहले बिजली के झटके (Electric Shock) दे कर बेहोश कर दिया जाता है जिसे (Stinning) कहते हैं । यह शाक आम तौर पर कम शक्ति का होता है इस लिए इस से जानवर मरता नहीं बल्कि सिर्फ बेहोश हो जाता है और इस बेहोशी की हालत में उसे ज़ब्ह कर दिया जाता है लेकिन अगर यह झटका (Shock) अधिक शक्ति का (Powerful) हो तो जानवर की मौत ज़ब्ह करने से पहले ही होगी। और ऐसी सूरत में उस पर भी मौक़ुज़ा अर्थात चोट खा कर मरने का नियम लागू होगा क्यों कि उस की मौत शाक लगने से हुई न कि ज़ब्ह करने से।

21. अर्थात् जिस की मौत कुँऐं में गिर जाने से या पहाड़ी आदि पर से गिर कर हुई हो।

22. अर्थात् जो किसी जानवर के सींग मारने के कारण ज़ख़्मी हो कर मर गया हो।

23. मतलब यह कि दरिन्दे ने फ़ाड़ कर उस का कुछ हिस्सा खा लिया हो।

'' रही दरिन्दों के फ़ाड़ खाए हुए जानवर के हराम होने की बात तो इस मामले में इन्सान के सम्मान एवं उस की प्रतिष्ठा का लिहाज़ रखा गया है और उसे दरिन्दे का छोड़ा खाने से मुक्त रखा गया है। जाहिलिय्यत के ज़माने में लोग दरिन्दे के फ़ाड़ खाए हुए ऊँट, गाय आदि को खा लिया करते थे लेकिन अल्लाह तआला ने मोमिनों के लिए दरिन्दों का छोड़ा खाना हराम कर दिया।''

(इस्लाम में हलाल और हराम, युसुफ़ क़रज़ावी पृष्ट ६६)

24. मालूम हुआ कि जानवर ज़ब्ह करने ही से हलाल होता है। और ज़ब्ह करने से मुराद गले का इतना भाग काट देना है कि रगें कट जाऐं और शरीर का ख़ून अच्छी तरह निकल जाए। झटका करने से दिमाग़ का सम्बन्ध शरीर से फौरन ख़त्म हो जाता है जिस के कारण ख़ून अच्छी तरह निकल कर साफ़ नहीं होता बल्कि गोश्त के साथ चिमट जाता है। अत: झटके का तरीक़ा ग़ैर शरई (असंवैधानिक) है।

25. नुसुब (स्थान) वे पत्थर थे जिन पर मुश्रिकीन (बहुदेववादी) अपने उपास्यों के निकटस्थ होने के लिए जानवर ज़ब्ह किया करते थे। चूँकि वे स्थान ग़ैरुल्लाह (अल्लाह को छोड़ कर दूसरी हस्तियों) की भेंट चढ़ाने के लिए खास (विशिष्ट) थे इस लिए उन स्थानों के ज़बीहे (बलि) को हराम ठहराया गया है चाहे ज़ब्ह करते समय ग़ैरुल्लाह का नाम लिया गया हो या न लिया गया हो। उस के हराम होने के लिए यह बात काफ़ी है कि उसे स्थान पर ज़ब्ह किया गया है। इसी लिए مَا اُهِلَّ لِغَيْرِ اللّٰهِ بِهٖ (जिस पर ग़ैरुल्लाह का नाम लिया

गया हो) के बाद नुसुब (स्थान) के ज़बीहे का ज़िक्र अलग से किया गया।

यह हुक्म उन क़ुर्बानियों (बलिदानों) पर भी लागू होता है जो बुज़ुर्गों के आस्तानों या वलियों के मज़ारों पर उन की निकटता तथा प्रसन्नता प्राप्त करने के उद्देश्य से प्रस्तुत की जाती हैं एवं इस से बिदअत में लिप्त लोगों के इस दावे का खण्डन होता है कि जानवर को किसी बुज़ुर्ग या वली की नियाज़ के लिए नामज़द करना जायज़ है और ऐसा ज़बीहा हलाल है, अगर ज़ब्ह के समय उस पर अल्लाह का नाम लिया गया हो। यह वास्तव में क़ुर्आन के स्पष्ट आदेश से मुँह मोड़ना एवं उस के विरुद्ध जाना है। क्यों कि क़ुर्आन ने सिर्फ़ उस ज़बीहे (बलि) को हराम नहीं ठहराया जिस पर ज़ब्ह करते समय ग़ैरुल्लाह का नाम लिया गया हो बल्कि ऐसे ज़बीहे को भी हराम ठहराया जो स्थान पर ज़ब्ह किया गया हो इस के अतिरिक्त कि उस को ज़ब्ह करते समय ग़ैरुल्लाह का नाम लिया गया हो या अल्लाह का । क्यों कि उस को स्थान पर ज़ब्ह करना इस बात का ख़ुला प्रमाण है कि वह ग़ैरुल्लाह की निकटता एवं उस की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए है। अत: जो जानवर किसी बुज़ुर्ग या वली की निकटता एवं प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए या जिन्न आदि को भेंट चढ़ाने के लिए ज़ब्ह किया जाए वह किस तरह जायज़ होगा ? शिर्क हर हाल में शिर्क है चाहे वह बुत परस्ती की शक्ल में हो या वली परस्ती (पूर्वजों की पूजा) की शक्ल में ।

26. अरब के अज्ञानता काल में मुश्रिकाना फालगीरी का तरीक़ा प्रचतिल था। इस उद्देश्य के लिए मक्का के मुश्रिकों (बहुदेववादियों) ने तीन प्रकार के तीर हुबुल देवता के स्थान में रख दिए थे जिन में से एक पर लिखा हुआ था यह काम करो'', दूसरे पर था ''न करो'' और तीसरा खाली होता। फ़ाल निकालने पर जो तीर निकल आता उस को ग़ैब (परोक्ष) का हुक्म समझ कर उस के अनुसार कर्म किए जाते और अगर खाली निकल आता तो दोबारा फ़ाल निकाली जाती। ये तीर जुए बाज़ी के लिए भी इस्तेमाल किए जाते थे। इस तरह यह फ़ाल गीरी शिर्क, अंधविश्वास और जुए बाज़ी का बहुत बड़ा साधन थी इस लिए इस को हराम ठहराया गया।

यह आदेश हर उस फ़ालगीरी पर लागू होता है जो शिर्क और अंधविश्वास का माध्यम हो चाहे इस के लिए तीर प्रयोग किये जाऐं या कोई और चीज़ और चाहे उस से चोर का पता मालूम करना हो या बीमार का हाल। ग़ैब की (अप्रत्यक्ष एवं अदृष्ट) बातों को मालूम करने के लिए फ़ालगीरी का तरीक़ा अपनाना अंधविश्वास के सिवा कुछ नहीं है।

27. 'आज' से अभिप्राय वह काल (ज़माना) है जिस में ये आयतें नाज़िल हुईं।

28. काफ़िरों के मायूस होने का मतलब यह है कि अब जब कि शरीअत मुकम्मल (पूर्ण) हो गई है और इस्लाम को प्रभुत्व भी प्राप्त हो गया है, इस्लाम विरोधियों को आशा नहीं रही कि वे इस्लाम को पूर्ण चन्द्रमा बनने से रोक सकेंगे या उसे मिटाने में कामयाब हो सकेंगे अत: इन से डर कर शरीअत के आदेशों के पालन में नरमी बरतने का कोई सवाल पैदा नहीं होता । अब इस्लाम स्वयं अपना लोहा मनवा चुका है। अत: तुम्हारा काम शरीअत के आदेशों का कड़ाई के साथ पालन करना और इस्लामी क़ानून पर किसी समझौते के बग़ैर दृढ़ रहना और चलते रहना है।

29. 'आज' से अभिप्राय कोई खास दिन नहीं बल्कि वह ज़माना है जब कि शरीअत मुकम्मल (पूर्ण) हुई। पूर्ण होने का यह मरहला हुदैबिय: की संधि के बाद से अर्थात् ज़ीक़ादा सन 6 हिजरी से शरु होता है जो सन 11 हिजरी के शुरु तक रहा । अन्तिम हज्ज (ज़िलहिज्जा सन 10 हिजरी) के अवसर पर प्रकाशमान शरीअत ने पूर्ण चन्द्रमा का रुप धार लिया था और दीन के परिपूर्ण होने का एलान पूरी शान के साथ हुआ था और इस पवित्र आयत की सच्चाई इस तरह ज़ाहिर हुई थी कि गोया यह आयत उस दिन नाज़िल हुई थी। इसी लिए उल्लेखकर्ताओं (रावियों) ने इस आयत के अवतरण को उस दिन का अवतरण समझा। वरना बयान के क्रम से ज़ाहिर होता है कि ये आयत हलाल और हराम के निर्धारण के बयान का एक अंश है और इस का अवतरण अन्तिम हज्ज से काफ़ी पहले हो गया था।

30. दीन को मुकम्मल (परिपूर्ण) करने का मतलब यह है कि दीन की इमारत का निर्माण परिपूर्ण हो गया। इस में न कोई रिक्ति रह गई है और न किसी वृद्धि एवं संशोधन की गुनजाइश है। मानव जाति के लिए अल्लाह तआला को जो हिदायत देना थी वह दे चुका और उपासना एवं आज्ञा पालन की जो व्यवस्था उतारना थी वह उतार चुका। अब इस दीन को इसी रुप में क़ियामत तक बाक़ी रहना है और संपूर्ण जगत की सारी क़ौमों के लिए यही हिदायत का स्तंभ है।

इस्लाम धर्म की परिपूर्णता का यह गौरव दो महत्वपूर्ण वास्तविकताओं की ओर इशारा करता है।

एक यह कि यह दीन या यह व्यवस्था मानव जीवन के तमाम विभागों पर हावी है। जन्म से ले कर मृत्यु तक जिन मार्ग निर्देशों की आवश्यकता थी और व्यक्तिगत जीवन के साथ साथ सामाजिक जीवन के लिए जो आसमानी हिदायत दरकार थीं उन सब का आयोजन इस दीन में समावेश किया गया है। अत: जितना महिमावान एवं गौरव शाली यह दीन

है उसी स्तर का इस के अनुयायियों को भी होना चाहिए। मतलब यह कि वे किसी रद्दोबदल एवं काट छाँट के बग़ैर सच्चे मन से इस की पैरवी करें। अपना व्यक्तिगत एवं समाजिक जीवन इसी की रौशनी में व्यतीत करें और इस के तक़ाज़ों को पूरा करें।

दूसरी वास्तविकता यह है कि जब दीन परिपूर्ण हो गया तो रिसलत का सिलसिला भी खत्म हो गया क्यों कि दीन के पूरा हो जाने के बाद और जब कि क़ियामत तक इस की सुरक्षा का सामान भी कर दिया गया है, किसी नये नबी के आने की ज़रुरत बाक़ी नहीं रहती। इसी लिए हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को रिसालत के सिलसिले की आख़िरी कड़ी क़रार दिया गया और क़ुर्आन को आख़िरी किताब। इस हक़ीक़त को हदीस में इस तरह बयान किया गया है कि आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की नियुक्ति दीन की इमारत की अन्तिम ईंट है।

عَنْ اَبِیْ هُرَيْرَةَ اَنَّ رسولَ الله صلى الله عليه وسلم قَالَ : اِنَّ مَثَلِیْ وَمَثَلُ الْاَنْبِيَاءِ مِنْ قَبْلِیْ كَمَثَلِ رَجُلٍ بَنٰى بَيْتاً فَاَحْسَنَهٗ وَاَجْمَلَهٗ اِلاَّ مَوْضِعَ لَبِنَةٍ مِنْ زَاوِيَةٍ فَجَعَلَ النَّاسُ يَطُوْفُوْنَ بِهٖ وَيَعْجَبُوْنَ لَهٗ وَيَقُوْلُوْنَ هَلاَّ وُضِعَتْ هٰذِهِ اللَّبِنَةُ قَالَ فَاَنَا اللَّبِنَةُ وَاَنَا خَاتِمُ النَّبِيّيْنَ ۔(بخاری کتاب احادیث الانبیاء)

''हज़रत अबू हुरैरा रज़ियल्लाहु अन्हु से रिवायत है कि रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया मेरी और गुज़रे हुए नबियों की मिसाल उस व्यक्ति जैसी है जिस ने एक सुन्दर एवं भव्य मकान बनाया लेकिन उस के एक तरफ़ एक ईंट की जगह खाली छोड़ दी। लोग उस के गिर्द घूमते और उस की ख़ूबसूरती पर आश्चर्य करते अलबत्ता (ख़ाली जगह को देख कर) कहते क्या बात है यहाँ ईंट नहीं रखी गई? आप ने फ़रमाया तो वह ईंट मैं हूँ और मैं ख़ातमन्नबिय्यीन (नबियों के सिलसिले को ख़त्म करने वाला) हूँ।''

(बुख़ारी किताब अहादीसुलअंबिया)

31. अर्थात दीन का पूरा होना तुम्हारे हक़ में नेअमतों का पूरा होना है। क्यों कि एक परिपूर्ण और व्यापक शरीअत ने तुम्हारे लिए जीवन के हर क्षेत्र में वास्तविक उन्नति की अनगिनत राहें खोल दी हैं और एक ऐसा चमनिस्तान मुहैय्या कर दिया है जिस का हर फूल मन मस्तिष्क को सुगन्धित कर देने वाला है।

32. इस्लाम के एकमात्र पसनदीदा दीन (प्रिय धर्म) होने के बारे में अल्लाह तआला की तरफ़ से यह आख़िरी एलान है वरना इस से पहले भी यह बात दूसरे अन्दाज़ में बयान हो चुकी है । जैसे सूरह आले इमरान में फ़रमाया:

اِنَّ الدِّيْنَ عِنْدَ اللّٰهِ الْاِسْلَامُ

''अल्लाह के नज़दीक असल दीन सिर्फ इस्लाम है।'' (आले इमरान -१९)''

وَمَنْ يَّبْتَغِ غَيْرَ الْاِسْلَامِ دِيْناً فَلَنْ يُّقْبَلَ مِنْهُ وَهُوَ فِى الآخِرَةِ مِنَ الخاسِرِيْنَ۔

''और जो कोई इस्लाम के सिवा किसी और दीन को अपनाएगा तो वह उस से हरगिज़ क़ुबूल नहीं किया जाएगा और आख़िरत में वह नामुराद होगा।''(आले इमरान - ८५)

यहाँ दीन के परिपूर्ण होने के एलान के साथ इस्लाम के पसन्दीदा दीन होने का एलान गोया अल्लाह की ओर से अन्तिम चेतावनी है कि इस्लाम के एक पूर्ण दीन की हैसियत से सामने आ जाने के बाद भी जो लोग दूसरे धर्मों से चिमटे रहेंगे वे अपनी गुमराही के आप ज़िम्मेदार होंगे। सूर्योदय के बाद टिमटिमाते दीये बेकार हो जाते हैं।लेकिन अगर किसी व्यक्ति को अपने दीये से ऐसा प्रेम हो कि वह सूरज की रौशनी को देखना भी पसन्द न करे तो उस का यह पक्षपात एवं अंधविश्वास उसी के ख़िलाफ़ पड़ेगा और उस के हिस्से में महरुमी के सिवा कुछ नहीं आएगा।

33. मतलब यह कि पवित्र शरीअत में वास्तविक मजबूरियों को नज़रअन्दाज़ नहीं किया गया है। बल्कि उन का लिहाज करते हुए छूट दे दी गई है। अत: यहाँ जिन चीज़ों को हराम बताया गया है उन के सिलसिले में यह रिआयत मौजूद है कि अगर वास्तव में कोई व्यक्ति भूख से मजबूर हो जाए और जान बचाने के लिए ज़रुरत भर कोई हराम वस्तु खा ले तो वह गुनेहगार न होगा लेकिन याद रहे कि जो व्यक्ति इस छूट से नाजायज़ फ़ायदा उठाएगा और हराम खाने का ललायित होगा तो उस की ज़रुर पकड़ होगी।

वे तुम से पूछते हैं कि उन के लिए क्या चीज़ें हलाल कर दी गई हैं। कहो तुम्हारे लिए सारी पाकीज़ा चीज़ें हलाल कर दी गई हैं।और जिन शिकारी जानवरों को तुम ने सधाया हो।जिन्हें तुम अल्लाह के दिए हुए ज्ञान के अधार पर शिकार की शिक्षा देते हो वह जिस शिकार को तुम्हारे लिए रोक रखें उस को तुम खाओ अलबत्ता उस पर अल्लाह का नाम ले लो और अल्लाह से डरो कि अल्लाह हिसाब लेने में बहुत तेज़ है।(अल-क़ुर्आन)

4. वे तुम से पूछते हैं कि उन के लिए क्या चीज़ें हलाल कर दी गई हैं। कहो तुम्हारे लिए सारी पाकीज़ा चीज़ें हलाल कर दी गई हैं।[34] और जिन शिकारी जानवरों [35] को तुम ने सधाया हो।[36] जिन्हें तुम अल्लाह के दिए हुए ज्ञान के अधार पर शिकार की शिक्षा देते हो [37] वह जिस शिकार को तुम्हारे लिए रोक रखें उस को तुम खाओ [38] अलबत्ता उस पर अल्लाह का नाम ले लो [39] और अल्लाह से डरो [40] कि अल्लाह हिसाब लेने में बहुत तेज़ है।

يَسْـَٔلُوْنَكَ مَاذَآ اُحِلَّ لَهُمْ ؕ قُلْ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ ۙ وَمَا عَلَّمْتُمْ مِّنَ
الْجَوَارِحِ مُكَلِّبِيْنَ تُعَلِّمُوْنَهُنَّ مِمَّا عَلَّمَكُمُ اللّٰهُ ۫ فَكُلُوْا مِمَّآ
اَمْسَكْنَ عَلَيْكُمْ وَاذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهِ ۪ وَاتَّقُوا اللّٰهَ ؕ اِنَّ اللّٰهَ
سَرِيْعُ الْحِسَابِ ﴿٤﴾

5. आज तुम्हारे लिए तमाम पाकीज़ा चीज़ें हलाल कर दी गई ।[41] अहले किताब का खाना तुम्हारे लिए हलाल है [42]और तुम्हारा खाना उन के लिए।[43] तुम्हारे लिए पाकदामन औरतें जो ईमान वालों में से हों हलाल हैं एवं वे पाकदामन औरतें भी जो उन लोगों में से हों जिन्हें तुम से पहले किताब दी गई थी।[44] बशर्ते कि उन के मह्र उन को अदा कर दो और मक़्सद निकाह की क़ैद में लाना हो न कि बदकारी (स्वच्छन्द काम तृप्ति) करना या चोरी छिपे आशनाईयाँ करना। और जो ईमान के साथ कुफ्र करेगा [45] तो उस का सारा किया कराया अकारथ जाएगा और आख़िरत में वह तबाह हाल (दिवालिया) होगा।[46]

اَلْيَوْمَ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبٰتُ ؕ وَطَعَامُ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ حِلٌّ
لَّكُمْ ۪ وَطَعَامُكُمْ حِلٌّ لَّهُمْ ۫ وَالْمُحْصَنٰتُ مِنَ الْمُؤْمِنٰتِ وَالْمُحْصَنٰتُ
مِنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ اِذَآ اٰتَيْتُمُوْهُنَّ اُجُوْرَهُنَّ
مُحْصِنِيْنَ غَيْرَ مُسٰفِحِيْنَ وَلَا مُتَّخِذِيْٓ اَخْدَانٍ ؕ وَمَنْ يَّكْفُرْ
بِالْاِيْمَانِ فَقَدْ حَبِطَ عَمَلُهٗ ؗ وَهُوَ فِى الْاٰخِرَةِ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ﴿٥﴾

6. ऐ ईमान वालों !जब तुम नमाज़ के लिए उठो [47] तो अपने मुँह और हाथ कुहनियाँ तक धो लो अपने सरों का मसह करो और पाँव टखनों तक धो लिया करो।[48] अगर जनाबत की हालत में हो तो [49] नहा कर पाक हो जाओ और अगर बीमार हो या सफ़र में हो या तुम में से कोई शौच कर के आया हो या तुम ने औरतों को छुआ हो [50] (सहवास किया हो) और पानी न मिले तो पवित्र ज़मीन से तयम्मुम करो [51] अर्थात अपने मुँह और हाथों पर उस से मसह कर लो। अल्लाह नहीं चाहता कि तुम्हें तंगी में डाले बल्कि वह चाहता है कि तुम्हें पाक करे और तुम पर अपनी नेअमत पूर्ण कर दे।[52]ताकि तुम शुक्रगुज़ार (कृतज्ञ) बनो।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا قُمْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ فَاغْسِلُوْا
وُجُوْهَكُمْ وَاَيْدِيَكُمْ اِلَى الْمَرَافِقِ وَامْسَحُوْا بِرُءُوْسِكُمْ وَاَرْجُلَكُمْ
اِلَى الْكَعْبَيْنِ ؕ وَاِنْ كُنْتُمْ جُنُبًا فَاطَّهَّرُوْا ؕ وَاِنْ كُنْتُمْ
مَّرْضٰٓى اَوْ عَلٰى سَفَرٍ اَوْ جَآءَ اَحَدٌ مِّنْكُمْ مِّنَ الْغَآئِطِ
اَوْ لٰمَسْتُمُ النِّسَآءَ فَلَمْ تَجِدُوْا مَآءً فَتَيَمَّمُوْا صَعِيْدًا
طَيِّبًا فَامْسَحُوْا بِوُجُوْهِكُمْ وَاَيْدِيْكُمْ مِّنْهُ ؕ مَا يُرِيْدُ اللّٰهُ
لِيَجْعَلَ عَلَيْكُمْ مِّنْ حَرَجٍ وَّلٰكِنْ يُّرِيْدُ لِيُطَهِّرَكُمْ وَ
لِيُتِمَّ نِعْمَتَهٗ عَلَيْكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ﴿٦﴾

34. तैय्यिबात (पाकीज़ा चीज़ों) से मुराद वे तमाम चीज़ें हैं जिन को न शरीअत ने हराम ठहराया है और न जिन को मनुष्य का स्वभाव ही अपवित्र (ख़बीस) ठहराता है।

सवाल जानवरों से सम्बन्धित था इस लिए इस के जवाब में जो बात इर्शाद हुई है उस से स्पष्ट हुआ कि जानवरों का गोश्त खाने के मामले में न शरीअत की पाबन्दियों से आज़ाद होना सही है और न भ्रम एवं अंधविश्वास में लिप्त हो कर मास खाने से परहेज़ करना। बल्कि इन्सान के लिए सही तरीक़ा यह है कि वह शरीअत के प्रतिबन्धनों का लिहाज़ करते हुए पाक एवं स्वच्छ जानवरों का गोश्त खाए।

35. शिकारी जानवरों से मुराद वे दरिन्दे और परिन्दे हैं जिन से मनुष्य शिकार का काम लेता है। जैसे, कुत्ते,चीते,बाज़, शिकरे आदि ।

36. सधाया हुआ अर्थात् जिन जानवरों को तुम ने शिकार की ट्रेनिंग दी हो। ऐसा जानवर जिस जानवर का शिकार करता है उसे फाड़ नहीं खाता बल्कि अपने मालिक के लिए रोक रखता है। इस लिए सधाए हुए जानवरों का शिकार हलाल है।

37. इन्सान जानवरों को शिकार की जो शिक्षा देता है वह उस ज्ञान के आधार पर है जो अल्लाह तआला ने उसे प्रदान किया है अत: ख़ुदा की इस नेअमत पर उसे अल्लाह का कृतज्ञ (शुक्रगुज़ार) होना चाहिए।

38. अर्थात जिस शिकार को वे खुद न खाऐं बल्कि तुम्हारे लिए रोक रखें उस को तुम खा सकते हो।

39. मतलब यह है कि शिकारी जानवरों को छोड़ते समय बिस्मिल्लाह कहो। हदीस में आता है कि अदी बिन हातिम ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से पूछा कि क्या मैं कुत्ते द्वारा शिकार कर सकता हूँ ? आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) ने फ़रमाया अगर उस को छोड़ते समय अल्लाह का नाम लिया है तो खाओ वरना नहीं और अगर उस ने शिकार में से कुछ खा लिया हो तो न खाओ क्यों कि उस ने शिकार को तुम्हारे लिए नहीं पकड़ा बल्कि अपने लिए पकड़ा है। (बुख़ारी किताबुज़्ज़बाइह वस्सैद)

शिकार के सिलसिले में यहाँ जो अहकाम बयान हुए हैं उन का सारांश यह है कि इस्लाम ने परिचित जानवरों को ज़ब्ह करने का जो तरीक़ा सुनिश्चित किया है अर्थात गले के एक भाग को काट देना जैसा कि भेड़ बकरी को ज़ब्ह किया जाता है या लब्बा को काट देना जैसा कि ऊँट को ज़ब्ह किया जाता है। इस के अलावा एक ख़ास तरीक़ा उस ने शिकार के हलाल होने के लिए भी निर्धारित किया है और वह है प्रशिक्षण प्राप्त शिकारी जानवर को अल्लाह का नाम ले कर शिकार के लिए छोड़ देना। यह छोड़ा हुआ शिकारी जानवर अगर पाक जानवरों में से किसी का शिकार करे अर्थात उसे मार डाले लेकिन शिकार को खुद न खाए बल्कि अपने मालिक के लिए पकड़ रखे तो वह उसे खा सकता है और अगर वह ज़िन्दा हालत में मिल जाए तो इस सूरत में अनिवार्य रुप से अल्लाह का नाम लेकर ज़ब्ह करना होगा।

فَاِنْ اَمُسَکَ عَلَیْکَ فَاَدْرَکْتَهُ حَیًّا فَاذْبَحْهُ ـ

(مسلم کتاب الصید)

“ अगर वह शिकार को तुम्हारे लिए रोक रखे और तुम उसे ज़िन्दा पाओ तो ज़ब्ह करो।”(मुस्लिम किताबुस्सैद)

स्पष्ट रहे कि शिकार अरबों के यहाँ मात्र मनोरंजन का सामना न था बल्कि गुज़र बसर का एक महत्त्वपूर्ण साधन था। विशेष रुप से वे सफ़र में इस पर निर्वाह करते थे इस लिए क़ुर्आन ने शिकार के बारे में शरिअत के आदेश स्पष्ट कर दिए ताकि इस मामले में इन्सान की सही रहनुमाई हो। अत: उस ने परिचित जानवरों को ज़ब्ह करने के लिए जो तरीक़ा सुनिश्चित किया है उस से कुछ आसान तरीक़ा अपरिचित जानवरों को शिकार की सूरत में ज़ब्ह करने का निर्धारण किया है।

40. यह चेतावनी है कि अगर शिकार के शौक़ में तुम ने शरीअत की बाँधी हुई सीमाओं की परवाह नहीं की तो खुदा के यहाँ पकड़ होगी अत: उस से डरो और शरीअत की बाँधी हुई सीमाओं का उल्लंघन न करो।

41. 'आज' से मुराद वह ज़माना (काल) है जब कि दीन-इस्लाम अपने पूर्ण होने के चरण में प्रवेश कर गया। इस अवसर पर एलान कर दिया गया कि अल्लाह की नाज़िल की हुई तमाम पाकीज़ा चीज़ों को हलाल और केवल नापाक चीज़ों को हराम ठहराया गया है इस लिए पिछली शरीअतों में ख़ास हालात के आधार पर जो प्रतिबंध लगाए गये थे उन सब को ख़त्म समझना चाहिए। इसी तरह जो प्रतिबंध विभिन्न धर्मों के पेश्वाओं ने भ्रम एवं अंधविश्वास के कारण लगा रखे हैं जैसे गोश्त खाने ही को इन्होंने सिरे से हराम क़रार दिया, तो इस प्रकार के सारे प्रतिबंधन शरीअत के पूरे हो जाने के बाद अपने आप निरस्त हो गए ।

मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) की शरीअत की यह प्रमुख विशेषता है कि उस ने हलाल और हराम के सिलसिले में इन्सान को तमाम अनावश्यक प्रतिबंधनों से मुक्त कर दिया है और तमाम पाकीज़ा खानों के दस्तरख्वान बिछा कर पूरी इन्सानियत को उस से लाभ उठाने का न्योता दिया है।

42. संदर्भ से स्पष्ट है कि यहाँ अहले-किताब के खाने से मुराद उन का (यहूदियों एवं ईसाईयों का) ज़बिहा है जब कि वह पाक जानवर का हो और ज़ब्ह करते समय अल्लाह का नाम लिया गया हो। यह मतलब नहीं है कि अगर वह नापाक जानवरों का गोश्त पेश करें तो वह मुसलमानों के लिए हलाल होगा और

न ही इस का यह मतलब लेना सही होगा कि वे अपने ज़बीहे (ज़ब्ह के जानवर) पर अल्लाह का नाम लें या न लें मुसलमान उसे खा सकते हैं। इस तरह का मतलब निकालने की यहाँ कदापि कोई गुंजाइश नहीं है क्योंकि अगर एक मुसलमान भी जान बूझ कर ज़ब्ह के समय अल्लाह का नाम लेना छोड़ दे तो उस का ज़बीहा हलाल नहीं फिर किसी यहूदी या ईसाई का वह ज़बीहा कैसे हलाल हो सकता है जिस पर अल्लाह का नाम न लिया गया हो।

रहा मशीनी ज़बीहा जो इस आधुनिक युग का आविष्कार है, तो यह मात्र गर्दन उड़ा देने का अमल है और यह अमल अल्लाह का नाम लेने से भी मुक्त है इस लिए इस पर शरअी ज़बीहा का मामला लागू (Impliment) नहीं होता चाहे मशीन चलाने वाला मुसलमान हो या अहले किताब में से।

43. मतलब यह है कि यहूदियों पर उन की उद्दंडता के कारण जो चीज़ें हराम कर दी गई थीं वे अन्तिम नबी की नियुक्ति तथा अन्तिम संविधान (शरीअत) के अवतरण के बाद हराम नहीं रहीं अत: अब उन के लिए खाने पीने के सिलसिले में केवल वही प्रतिबंध हैं जो शरीअते-मुहम्मदिय: में मुसलमानों पर लागू की गई हैं अर्थात् खबीस और नापाक चीज़ें। इस लिए मुसलमानों का ज़बीहा खाने में उन के लिए अल्लाह के क़ानून की तरफ़ से कोई रुकावट नहीं है । यह एलान वास्तव में अहले-किताब अर्थात यहूदियों और ईसाईयों के लिए आसानी की राह खोल देने वाला है बशर्ते कि वे इस के मुल्य को समझे और इस का आदर करें।

44. मुराद यहूदियों और ईसाईयों की औरतें हैं। उन से निकाह की इजाज़त इस शर्त के साथ दी गई है कि वे पाकदामन (पवित्र) हों। बदचलन और आवारा किताबी औरतों के साथ निकाह की इजाज़त नहीं है।

इब्ने कसीर लिखते हैं कि क़ुर्आन की इस इजाज़त के तहत कई सहाबा ने ईसाई औरतों से निकाह कर लिया था। और इस में उन्होंने कोई आपत्ति महसूस नहीं की (तफ़्सीर इब्ने कसीर जिल्द २ पृष्ट २०)

अहले-किताब की औरतों से निकाह की इजाज़त वास्तव में इस आधार पर दी गई है कि इस सूरत में उन के इस्लाम की परिधि में प्रवेश करने की प्रबल संभावनाऐं हैं किन्तु इस के विपरीत पति या संतान की काफ़िराना सभ्यता से प्रभावित होने की आशंका हो तो ऐसी सूरत में इस रिआयत से फ़ायदा उठाना सही न होगा। अत: आगे यह चेतावनी भी कर दी गई है कि जो अपने ईमान से हाथ धो बैठेगा वह तबाह हाल (दिवालिया) होगा।

मुसलमान मर्दों को यहूदी और ईसाई औरतों से निकाह की इजाज़त देने और मुसलमान औरतों को यहूदी और ईसाई मर्दों से निकाह की इजाज़त न देने की वजह यह है कि मर्द औरत के लिए क़व्वाम (ज़िम्मेदार) की हैसियत रखता है इस लिए उस पर प्रभावी हो सकता है और इस्लाम की सामाजिक पद्धति को घर में क़ायम रख सकता है बशर्ते कि वह सही अर्थो में मुसलमान हो इस के विपरीत औरत मर्द पर आश्रित होती है इस लिए एक मुसलमान औरत किसी यहूदी या ईसाई पुरुष की पत्नी हो तो उस का तौहीद के अक़ीदे पर क़ायम रहना और इस्लाम की सामाजिक पद्धति को अपनाए रहना मुश्किल होगा। इस स्पष्ट वास्तविकता के बाद भी यदि कोई व्यक्ति इस्लाम के इस हुक्म पर नाक भौं चढ़ाता है तो उसे समझ लेना चाहिए कि इस्लाम की फ़ितरत ग़लबा (प्रभुत्व) चाहती है। इस लिए वह किसी क्षेत्र एवं किसी परिधि में भी मग़लूबियत (दबाव की स्थिति) को क़ुबूल नहीं करता। الاسلام يعلو ولا يعلى

45. ईमान के साथ कुफ्र करने का मतलब यह है कि आदमी दावा तो अपने मुसलमान होने का करे किन्तु व्यवहारत: ऐसे मार्ग पर चल पड़े जो ईमान के विरूद्ध हो।

46. इस चेतावनी का मतलब यह है कि अहले-किताब की औरतों से निकाह की जो इजाज़त दी गई है इस से जो व्यक्ति फ़ायदा उठाना चाहे वह इस बात से होशियार रहे कि कहीं यह सम्बन्ध उस के दीन और ईमान के लिए फ़ितना (आज़माइश) का कारण तो नहीं बनेगा।

47. अर्थात जब नमाज़ का इरादा करो।

48. नमाज़ के लिए तहारत (शुद्धता) हासिल करना ज़रुरी है और तहारत का जो तरीक़ा यहाँ बताया गया है उस को शरीअत की परिभाषा में ''वुज़ू'' कहते हैं। इस हुक्म की जो व्याख्या नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाई है उस के अनुसार ''वुज़ू''का प्रमाणित तरीक़ा यह है कि पहले हाथ कलाई तक धोए जाऐं,उस के बाद नाक में पानी डाल कर उसे साफ किया जाए, फिर मुँह धो लिया जाए, उस के बाद दायाँ हाथ फिर बायाँ हाथ कुहनियों तक धो लिया जाए, फिर पानी से सर का मसह किया जाए और दोनों कानों को भी मसह (हाथ फेरने) में शामिल कर लिया जाए। अन्त में पहले दायाँ और फिर बायाँ पाँव टखनों तक धो लिया जाए।

वुज़ू के सिलसिले में लंबी बहसो से अलग हट कर कुछ ज़रूरी बातों का स्पष्टीकरण यहाँ किया जाता है।

(1) वुज़ू के हिस्सों को एक बार धोने से वुज़ू हो जाता है लेकिन तीन तीन बार धोना बेहतर है।

(2) हाथ में कुहनियाँ और पाँव में टखने धोना भी शामिल है।

(3) मसह बेहतर है कि पूरे सर का कर लिया जाए और

साथ ही कानों के अन्दरुनी और बाहरी हिस्से का भी मसह कर लिया जाए।

(4) वुज़ू के अंग इस तरह धोए जाऐं कि कोई हिस्सा सूखा न रहने पाए । हदीस में आता है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने कुछ लोगों को देखा जिन्हों ने अपने पाँव ठीक से नहीं धोए थे इस लिए उन की एड़ियाँ सूखी रह गई थीं। आप ने फ़रमाया:

وَيْلٌ لِلاَعْقَابِ مِنَ النَّار. (مسلم کتاب الطہارۃ)

''अर्थात इन एड़ियों पर अफ़सोस जो (सूखी रहने के कारण) आग में जलेंगी '' (मुस्लिम किताबुत्तहार:)

(5) पाँव के सिलसिले में कुछ लोगों को यह ग़लत फ़हमी हुई है कि इन का मसह कर लेना काफी है, जब कि क़ुर्आन और सुन्नत के अनुसार धो लेना ज़रुरी है। अगर मसह कर लेना काफी होता तो اِلَى الْكَعْبَيْن (टख़ने तक) की क़ैद न होती और न एड़ियाँ सूखी रह जाने पर वह डरावा सुनाया जाता जिस का ज़िक्र ऊपर हदीस में हुआ।

(6) एक नमाज़ के लिए जो वुज़ू किया गया वह जब तक कि टूट नहीं जाता दूसरी नमाज़ों के लिए काफी है।

रही वुज़ू की हिकमत और मसलहत तो इस से न केवल यह कि बाह्य शुद्धता प्राप्त होती है बल्कि यह आन्तरिक पवित्रता की प्राप्ति का साधन भी है अत: वुज़ू करने से गुनाह झड़ने लगते हैं और आदमी अपने आप को पाकीज़गी की हालत में महसूस करने लगता है। हदीस में आता है कि मोमिन बन्दा जब वुज़ू करता है तो चेहरा और हाथ पाँव से पानी के साथ साथ गुनाहों से पाक साफ़ हो कर निकलता है।

حتیّٰ يَخْرُجَ نَقِيًّا مِنَ الذُّنُوبُ (مسلم کتاب الطہارۃ)

'' और क़ियामत के दिन वुज़ू के असर से चेहरा और हाथ पाँव रौशन होंगे''।

اِنَّ اُمَّتِى يَأتُوْنَ يَوْمَ الْقِيَامَةِ غُرًّا مُّحَجَّلِيْنَ مِنْ اَثَرِ الْوُضُوءِ۔ (مسلم کتاب الطہارۃ)

49. जनाबत की व्याख्या सूरह निसा नोट 99 में गुज़र चुकी ।

50. व्याख्या के लिए देखिए सूरह निसा नोट 101

51. तयम्मुम की व्याख्या सूरह निसा नोट 102 में गुज़ चुकी ।

52. मतलब यह कि वुज़ू और ग़ुस्ल की पाबन्दीयाँ कष्ट में डालने के लिए नहीं बल्की पाकीज़ा (साफ़ सुथरा) बनाने के लिए आयद की गई हैं बदन की पाकीज़गी नफ़्स की पाकिज़गी का ज़रया है इस लिए वज़ू, ग़ुस्ल और तयम्मुम का तरीक़ा बता कर अल्लाह ने अपनी नेअमत ईमान वालों पर पूरी कर दी । ''अल्लाह तआला नहीं चाहता कि तुम्हें तंगी में डाले'' यह एक बहुत बड़ा रहनुमा उसूल है जो यहाँ बयान हुआ है। इस से स्वच्छता एवं पवित्रता के अध्याय में यह रहनुमाई मिलती है कि पाकीज़गी हासिल करने के जो नियम इस्लाम ने बताए हैं उन पर अगर नेक नियती के साथ और सीधे साधे ढंग से अमल किया जाए तो यह स्वच्छता एवं पवित्रता की प्राप्ति के लिए काफ़ी होगा। इन तरीक़ों में कड़ाई एवं उग्रता पैदा करना शरीअत बनाने वाले का मंशा हरगिज़ नहीं है। अत: फ़िक़्ही अर्थात् धर्मशास्त्र में नुक़्त: चीनियों के फलस्वरुप जो उग्रता पैदा हो गई है वह वास्तव में अनावश्यक प्रतिबंध हैं जो लोगों ने अपने ऊपर स्वयं लागू कर लिए हैं।

7. अल्लाह ने जो फ़ज़्ल तुम पर किया है [53] उसे याद रखो और उस के अहदो-पैमान [54] (दृढ़ प्रतिज्ञा) को न भूलो जो उस ने तुम से कराया है, जब तुम ने कहा था कि हम ने सुना और आज्ञापालन किया। और अल्लाह से डरो।[55] अल्लाह को उन बातों का भी ज्ञान है जो सीनों के अन्दर निहित हैं ।

وَاذْكُرُوا نِعْمَةَ اللَّهِ عَلَيْكُمْ وَمِيثَاقَهُ الَّذِي
وَاثَقَكُم بِهِ إِذْ قُلْتُمْ سَمِعْنَا وَأَطَعْنَا
وَاتَّقُوا اللَّهَ إِنَّ اللَّهَ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ٧

8. ऐ ईमान वालो ! अल्लाह की ख़ातिर उठ खड़े होने वाले [56] और इन्साफ़ के गवाह बनो।[57] और किसी क़ौम की दुश्मनी तुम्हें इस बात पर न उभारे कि नाइन्साफ़ी करने लगो।[58] इन्साफ़ करो कि यह तकवा (ईशपरायणता) से लगती हुई है और अल्लाह से डरो। जो कुछ तुम करते हो अल्लाह उस से बाख़बर (सूचित) है।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا كُونُوا قَوَّامِينَ لِلَّهِ شُهَدَاءَ
بِالْقِسْطِ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَآنُ قَوْمٍ عَلَىٰ
أَلَّا تَعْدِلُوا اعْدِلُوا هُوَ أَقْرَبُ لِلتَّقْوَىٰ
وَاتَّقُوا اللَّهَ إِنَّ اللَّهَ خَبِيرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ٨

9. जो लोग ईमान लाए और नेक अमल करते रहे अल्लाह ने उन से वादा कर रखा है कि उन के लिए क्षमा और बहुत बड़ा अज्र (बदला) होगा।

وَعَدَ اللَّهُ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَهُم
مَّغْفِرَةٌ وَأَجْرٌ عَظِيمٌ ٩

10. और जिन लोगों ने कुफ़्र किया और हमारी आयतों को झुठलाया वे दोज़खी हैं।

وَالَّذِينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِآيَاتِنَا أُولَٰئِكَ أَصْحَابُ
الْجَحِيمِ ١٠

11. ऐ ईमान वालो ! अपने ऊपर अल्लाह का वह एहसान याद करो जब एक गिरोह ने तुम पर हाथ डालने का इरादा किया तो अल्लाह ने उन के हाथ तुम पर उठने से रोक दिए।[59] अल्लाह से डरते रहो और मोमिनों को चाहिए कि वे अल्लाह ही पर भरोसा करें।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا اذْكُرُوا نِعْمَتَ اللَّهِ عَلَيْكُمْ إِذْ
هَمَّ قَوْمٌ أَن يَبْسُطُوا إِلَيْكُمْ أَيْدِيَهُمْ فَكَفَّ
أَيْدِيَهُمْ عَنكُمْ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَعَلَى اللَّهِ فَلْيَتَوَكَّلِ
الْمُؤْمِنُونَ ١١

12. अल्लाह ने बनी इस्राईल से प्रतिज्ञा ली थी और हम ने उन में से बारह व्यक्तियों को देख रेख करने वाला (सरदार) नियुक्त किया था । [61] और अल्लाह ने फ़रमाया था मैं तुम्हारे साथ हूँ [62] अगर तुम ने नमाज़ क़ायम की ज़कात देते रहे [63] मेरे रसूलों पर ईमान लाए और उन की मदद की [64] और अल्लाह को अच्छा क़र्ज़ दिया [65] तो मैं ज़रुर तुम्हारी बुराईयाँ तुम से दूर कर दूँगा [66] और तुम को ऐसे बाग़ो में दाख़िल करुँगा जिन के निचे नहरें बहती होंगी [67] लेकिन तुम में से जो कोई इस के बाद भी कुफ़्र करेगा तो वह सीधे मार्ग से भटक गया।[68]

وَلَقَدْ أَخَذَ اللَّهُ مِيثَاقَ بَنِي إِسْرَائِيلَ وَبَعَثْنَا مِنْهُمُ
اثْنَيْ عَشَرَ نَقِيبًا وَقَالَ اللَّهُ إِنِّي مَعَكُمْ لَئِنْ أَقَمْتُمُ
الصَّلَاةَ وَآتَيْتُمُ الزَّكَاةَ وَآمَنتُم بِرُسُلِي
وَعَزَّرْتُمُوهُمْ وَأَقْرَضْتُمُ اللَّهَ قَرْضًا حَسَنًا
لَّأُكَفِّرَنَّ عَنكُمْ سَيِّئَاتِكُمْ وَلَأُدْخِلَنَّكُمْ جَنَّاتٍ
تَجْرِي مِن تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ فَمَن كَفَرَ بَعْدَ ذَٰلِكَ
مِنكُمْ فَقَدْ ضَلَّ سَوَاءَ السَّبِيلِ ١٢

53. मुराद वह फ़ज़्ल (उदार कृपा) है जो पूर्ण शरीअत नाज़िल कर के ईमान वालों पर किया गया।

54. मुराद वह ज़िम्मेदारी है जिस को स्वीकार कर के आदमी दीन इस्लाम में दाखिल होता है। अर्थात् यह बात कि वह अल्लाह और उस के रसूल की आज्ञा का पालन करेगा। कलिमा-ए-शहादत के भावार्थ में यह बात शामिल है और स्पष्टीकरण के साथ यह प्रतिज्ञा पैग़म्बर के माध्यम से भी ईमान वालों से ली गई है।

55. अर्थात् इस बात से डरो कि शरीअत के आदेशों का उल्लंघन करने की स्थिति में अल्लाह के यहाँ इस की कड़ी सज़ा तुम्हें भुगतनी पड़ेगी।

56. अर्थात् तुम्हारी दौड़ धूप अल्लाह के लिए होनी चाहिए और तुम्हारे सारे कार्यक्रमों का केन्द्र बिन्दु अल्लाह की प्रसन्नता की प्राप्ति हो। यह बात ईमान वालों से व्यक्तिगत रुप से भी वांदित है और समाजिक रुप से भी वांदित है। व्यक्ति (अलग अलग) अपने कार्य क्षेत्र में शुद्ध हृदयता एवं ईशपरायणता का सबूत दें और मुस्लिम उम्मत सामूहिक रुप से सत्य धर्म का परचम उठाने वाली बन जाए।

57. देखिए सूरह निसा नोट 220

58. किसी क़ौम की दुश्मनी इन्सान को पक्षपात पूर्ण सांप्रदायिकता में मुब्तिला कर देती है जिस के कारण वह उस क़ौम अथवा वर्ग के साथ ग़लत रवैया अपनाने लगता है। फिर उस में न्याय और अन्याय की परख बाक़ी नहीं रहती लेकिन मुस्लिम उम्मत को अस्तित्व में लाने का उद्देश्य ही न्याय की स्थापना है इस लिए उसे किसी क़ौम की दुश्मनी में इस तरह लिप्त नहीं होना चाहिए कि न्याय का दामन हाथ से छूट जाए। बल्कि उस की प्रमुख विशेषता यह होनी चाहिए कि अपने तमाम मामलों में यहाँ तक कि अपनी सियासी पॉलीसी में भी, और तमाम लोगों के साथ यहाँ तक कि दुश्मन क़ौम के साथ भी वह न्याय एवं समता पर अडिग रहे।

नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम द्वारा प्रशिक्षण प्राप्त गिरोह में यह गुण एवं यह विशेषता उच्चस्तर पर विद्यमान थी। वे न तो अपने दुश्मनों से झूठी बातें जोड़ते और न उन के साथ अनैतिक व्यवहार करते। यहाँ तक कि वे युद्ध में भी ज़्यादती न करते। वे मरने वालों की लाशों का निरादर न करते न क़ैदियों के साथ बेजा सुलूक करते बच्चों और बूढ़ो की हत्या न करते और न औरतों की आबरु लूटते। इसी लिए वे इस योग्य ठहरे कि न्याय के साथ हुकूमत करें और धरती को न्याय एवं समानता से भर दें।

59. इशारा है उस साजिश की तरफ़ जो यहूदियों (बनी अन्नज़ीर) ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और आप के साथियों (सहाबा) को क़तल करने के लिए की थी। लेकिन अल्लाह तआला ने समय से आप को सूचित कर सुरक्षित रखा।

60. मुराद आज्ञापालन की प्रतिज्ञा है। तौरात में है कि जब मूसा अलैहिस्सलाम ने बनी इस्राईल को ख़ुदा की बात मानने और उस की प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहने का उपदेश दिया तो उन्होंने कहा "जो कुछ यहोवा ने कहा है वह सब हम नित करेंगें" (निर्गमन 19:8) एवं "व्यवस्थाविवरण में है:"तूने तो आज यहोवा को अपना परमेश्वर मान कर यह वचन दिया है कि मैं तेरे बनाए हुए मार्गे पर चलूँगा, और तेरी विधियों, और नियमों को माना करुँगा और तेरी सुना करूँगा । (व्यवस्थाविवरण 26:17)

61. बनी इस्राईल के बारह क़बीले थे इस लिए हर क़बीले में से एक एक व्यक्ति को देख रेख के कार्य पर नियुक्त किया था ताकि शरीअत के आदेशों पर अमलदरामद के सिलसिले में वे उन की देख रेख करें और उन में बिगाड़ पैदा होने न दें। बारह सरदारों का वर्णन बाइबिल में भी मौजूद है देखिए गिनती अध्याय १३, व्यवस्थाविवरण १:२३

62. और ख़ुदा जिस क़ौम के साथ होता है उस के साथ अनिवार्य रुप से उस का समर्थन और उस की सहायता होती है।

63. मालूम हुआ कि बनी इस्राईल को जो शरीअत दी गई थी उस में नमाज़ और ज़कात को बुनियादी अहमियत हासिल थी। लेकिन जहाँ तक मौजूदा तौरात का सम्बन्ध है उस में ज़कात का ज़िक्र तो है लेकिन नमाज़ को उस के पृष्टों से बिल्कुल गायब कर दिया गया है।

64. अर्थात् ख़ुदा की तरफ़ से जो पैग़म्बर भी आऐंगे उन पर तुम ईमान लाओगे और उन का अनुमोदन एवं समर्थन करोगे। इस में आख़िरी रसूल हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर ईमान लाना और आप की मदद करना शामिल है। और ख़ास तौर से इशारा इसी की तरफ़ है।

65. यह इन्फ़ाक़ (अल्लाह की राह में ख़र्च) ज़कात के अलावा है क्यों कि ज़कात का ज़िक्र ऊपर गुज़र चुका। ज़कात के अलावा कुछ और इन्फ़ाक़ (ख़र्च) की ज़रुरत जिहाद के लिए भी हो सकती है और दीन की दअवत को फैलाने के लिए भी। अधिक व्याख्या के लिए देखिए सूरह बक़र : नोट 381.

66. जिन मौलिक गुणों एवं विशेषताओं का ऊपर ज़िक्र हुआ है वह अगर इन्सान अपने अन्दर पैदा कर ले तो उस की कमज़ोरियाँ और बुराइयाँ दूर होने लगती हैं।

إِنَّ الْحَسَنٰتِ يُذْهِبْنَ السَّيِّاٰتِ ۔

"नेकियाँ बुराईयों को दूर कर देती हैं।" (हूद:११४)

और जो कुसूर और ग़लतियाँ उस से हो गई हों अल्लाह

तआला उन को माफ़ कर देता है।

67. मुराद जन्नत के सदाबहार बाग़ हैं ।

68. अर्थात इन स्पष्ट हिदायतों के बाद भी जिस ने कुफ्र की राह अपनाई और मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की रिसालत को स्वीकार करने से इन्कार किया उस ने वास्तविक राजमार्ग जो ख़ुदा तक पहुंचने का एक मात्र मार्ग है और जिस का नाम इस्लाम है अपने ऊपर गुम कर दिया ।

जिस के द्वारा अल्लाह उन लोगों को जो उस की रिज़ा (इच्छा) पर चलते हैं सलामती की राहें दिखाता है और अपनी तौफ़ीक़ से उन्हें अंधेरों से निकाल कर रौशनी में लाता है और सिधे मार्ग की तरफ़ उन की रहनुमाई करता है।(अल-क़ुर्आन)

13. फिर इस कारणवश कि उन्होंने अपनी प्रतिज्ञा को भंग कर दिया हम ने उन पर लानत की और उन के दिलों को सख़्त कर दिया।[69] वे शब्दों को उन की असल जगह (संदर्भ)से फेर देते हैं।[70] और जिस (ग्रंथ) के द्वारा उन्हें नसीहत की गई थी उस का एक हिस्सा वे भुला बैठे [71]और तुम्हें बराबर उन की किसी न किसी खियानत (विश्वासघात) का [72] पता चलता रहता है। इन में ऐसे लोग बहुत कम हैं जो इस से बचे हुए हैं।[73] अतः इन्हें माफ़ करो और इन से दरगुज़र करो।[74] अल्लाह एहसान करने वालों को पसन्द करता है।

فَبِمَا نَقْضِهِم مِّيثَاقَهُمْ لَعَنَّاهُمْ وَجَعَلْنَا قُلُوبَهُمْ
قَاسِيَةً ۖ يُحَرِّفُونَ الْكَلِمَ عَن مَّوَاضِعِهِ ۙ وَنَسُوا
حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوا بِهِ ۚ وَلَا تَزَالُ تَطَّلِعُ عَلَىٰ خَائِنَةٍ
مِّنْهُمْ إِلَّا قَلِيلًا مِّنْهُمْ ۖ فَاعْفُ عَنْهُمْ
وَاصْفَحْ ۚ إِنَّ اللَّهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ﴿١٣﴾

14. और जो लोग कहते हैं कि हम ''नसारा'' हैं [75] उन से भी हम ने प्रतिज्ञा ली थी [76] मगर जिस (किताब) के द्वारा उन को नसीहत की गई थी उस का एक हिस्सा वे भुला बैठे [77] तो हम ने उन के बीच क़ियामत तक के लिए पारस्परिक द्वेष एवं शत्रुता की आग भड़का दी [78] और बहुत जल्द अल्लाह उन्हें बताएगा कि वे क्या बनाते रहे हैं ।

وَمِنَ الَّذِينَ قَالُوا إِنَّا نَصَارَىٰ أَخَذْنَا مِيثَاقَهُمْ
فَنَسُوا حَظًّا مِّمَّا ذُكِّرُوا بِهِ فَأَغْرَيْنَا بَيْنَهُمُ
الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَاءَ إِلَىٰ يَوْمِ الْقِيَامَةِ ۚ وَسَوْفَ
يُنَبِّئُهُمُ اللَّهُ بِمَا كَانُوا يَصْنَعُونَ ﴿١٤﴾

15. ऐ अहले-किताब ! हमारा रसूल तुम्हारे पास आ गया है जो किताब की बहुत सी उन बातों को जिन को तुम छिपाते रहे हो, ज़ाहिर कर रहा है और बहुत सी बातों को नज़रंदाज़ भी करता है।[79] तुम्हारे पास अल्लाह की तरफ़ से नूर [80] (रौशनी) और एक स्पष्ट किताब आ गई है।[81]

يَا أَهْلَ الْكِتَابِ قَدْ جَاءَكُمْ رَسُولُنَا يُبَيِّنُ لَكُمْ
كَثِيرًا مِّمَّا كُنتُمْ تُخْفُونَ مِنَ الْكِتَابِ
وَيَعْفُو عَن كَثِيرٍ ۚ قَدْ جَاءَكُم مِّنَ اللَّهِ نُورٌ
وَكِتَابٌ مُّبِينٌ ﴿١٥﴾

16. जिस के द्वारा अल्लाह उन लोगों को जो उस की रिज़ा (इच्छा) पर चलते हैं सलामती की राहें दिखाता है [82] और अपनी तौफ़ीक़ से उन्हें अंधेरों से निकाल कर रौशनी में लाता है [83] और सिधे मार्ग की तरफ़ उन की रहनुमाई करता है।[84]

يَهْدِي بِهِ اللَّهُ مَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَهُ سُبُلَ
السَّلَامِ وَيُخْرِجُهُم مِّنَ الظُّلُمَاتِ إِلَى النُّورِ بِإِذْنِهِ
وَيَهْدِيهِمْ إِلَىٰ صِرَاطٍ مُّسْتَقِيمٍ ﴿١٦﴾

17. निश्चय ही उन लोगों ने कुफ्र किया जिन्होंने कहा अल्लाह ही है मसीह इब्ने मरयम [85] (इन से) कहो अगर अल्लाह मसीह इब्ने मरयम को, उस की माँ को और तमाम ज़मीन वालों को हलाक कर देना चाहे तो अल्लाह के सामने किस का बस चल सकता है।[86] आसमानों और ज़मीन की और उन के बीच पाई जाने वाली सारी वस्तुओं की बादशाही अल्लाह ही के लिए है। वह जो कुछ चाहता है पैदा करता है।[87] और अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर है।

لَّقَدْ كَفَرَ الَّذِينَ قَالُوا إِنَّ اللَّهَ هُوَ الْمَسِيحُ ابْنُ
مَرْيَمَ ۚ قُلْ فَمَن يَمْلِكُ مِنَ اللَّهِ شَيْئًا إِنْ أَرَادَ أَن
يُهْلِكَ الْمَسِيحَ ابْنَ مَرْيَمَ وَأُمَّهُ وَمَن فِي الْأَرْضِ
جَمِيعًا ۗ وَلِلَّهِ مُلْكُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا ۚ
يَخْلُقُ مَا يَشَاءُ ۚ وَاللَّهُ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ
قَدِيرٌ ﴿١٧﴾

69. जो क़ौम अल्लाह से की गई प्रतिज्ञा को भंग करती है वह लानत की हक़दार हो जाती है और इस के बाद हृदय प्रभावहीन हो जाता और उपदेश एवं नसीहत की बातें बेअसर हो कर रह जाती हैं।

बाइबिल की किताब ज़कर्याह में बनी इस्राईल की संगदीली की तस्वीर इस तरह प्रस्तुत की गई है।

''और उन्हों ने अपने हृदय को बज्र सा बना लिया कि वे उस व्यवस्था और उन वचनों को न मान सकें जिन्हें सेनाओं के यहोवा ने अपने आत्मा के द्वारा अगले भविष्द्वक्ताओं से कहला भेजा था, इस कारण सेनाओं के यहोवा की ओर से उन पर बड़ा क्रोध भड़का।'' (ज़कर्याह ७:१२)

70. अर्थात बात होती कुछ है और बना कुछ देते हैं। जब दिल कठोर हो जाते हैं तो उन में सत्य को स्वीकार करने की क्षमता बाक़ी नहीं रहती। ऐसे लोगों के सामने जब हक़ बात आ जाती है तो उसे अपनी इच्छाओं के विरुद्ध पा कर ऐसा अर्थ पहनाने लगते हैं जो न संदर्भ से संबद्ध होता है और न तो कहने के सार से।

यहूदी अल्लाह की किताब में जिस तरह के रद्दो बदल एवं काट छाँट करते थे उस की विस्तृत व्याख्या सूरह बक़र: नोट ९६ में की जा चुकी है।

71. अर्थात् उन्होंने तौरात को जिस के द्वारा उन्हें नसीहत की गई थी, सुरक्षित नहीं रखा बल्कि उस के एक हिस्से को वे भुला बैठे। अत: मौजूदा तौरात (बाइबिल) में कियामत की हौलनाकी और आखिरत के इनाम और सज़ा का ज़िक्र मुश्किल ही से मिलेगा। अलबत्ता सांसारिक यातना (अज़ाब) और इनामों का वर्णन सविस्तार मिलेगा। और शरीअत की पाबन्दी करने पर जो बड़े से बड़ा इनाम देने का वादा बार बार किया गया है वह मुल्क है जहाँ दूध और शहद की नहरें बहती हैं। अर्थात फ़िलस्तीन की धरती। ज़ाहिर है अल्लाह की तरफ़ से आने वाली किसी भी किताब का प्रेरित करने एवं प्रलोभन देने का अन्दाज़ यह नहीं हो सकता और यह इस बात का सबूत है कि तौरात का वह हिस्सा जो आख़िरत की याददेहानी पर आधारित था यहूदियों ने भुला दिया।

72.अल्लाह की किताब में परिवर्तन अथवा काट छाँट अमानत में ख़ियानत है।

73. अर्थात् यहूदियों में ऐसे लोग बहुत कम हैं जो इस प्रकार की शरारतें नहीं करते और ऐसे भी लोग हैं जिन्हें इस्लाम स्वीकार करने की तौफ़ीक़ हुई।

74. अर्थात ऐसे लोग कितनी ही कष्टदायक बातें करें वह उन से असंभव नहीं किन्तु तुम महानता के साथ इन्हें माफ़ करो और इन की हरकतों से दर गुज़र करो।

75. इशारा है इस बात की तरफ़ कि ''नसारा'' नसरानियत धर्म के अनुयायियों का अपना रखा हुआ नाम है। अल्लाह ने तो अपने दीन के अनुयायियों का नाम जैसा कि सूरह हज्ज की आखिरी आयत में इर्शाद हुआ है ''मुस्लिमीन'' रखा था न कि ''नसारा'' और जहाँ तक शाब्दिक प्रमाण का सम्बन्ध है ''नसारा'' नसरान का बहु बचन है जैसे ''नदामा''नदमान का बहुबचन है (अस्सिहाह लिलजौहरी Vol.II Page 829) और यह नासिरा की तरफ़ मंसूब है जो सीरिया का एक शहर है जहाँ हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम ने निवास बनाया था। अत:बाइबिल में है।

''और नासरत नाम के नगर में जा बसा ताकि वह वचन पूरा हो जो भविष्यद्वक्ताओं के द्वारा कहा गया था कि वह नासरी कहलाएगा (मत्ती २:२३)

76. मुराद आज्ञापालन करने की प्रतिज्ञा है।

77. मुराद इंजील है जिस के बड़े भाग को वे भुला बैठे।

78. अर्थात अल्लाह की हिदायतों को भुला बैठने का अनिवार्य परिणाम आपसी मतभेद और सम्प्रदायवाद है। चूँकि यह परिणाम अल्लाह के क़ानून के अनुसार सामने आता है इस लिए इस बात को ''हम ने उन के बीच पारस्परिक द्वेष एवं शत्रुता की आग भड़का दी'' कहा गया है इस से मुक्ति की सूरत यही है कि वे क़ुर्आन और हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर ईमान ला कर इस्लाम के राजमार्ग पर चल पड़ें लेकिन जब उन्होंने पक्षपात एवं द्वेष में लिप्त हो कर इस रहनुमाई को क़ुबूल नहीं किया तो अल्लाह ने उन्हें इस हाल में छोड़ दिया कि वे क़ियामत तक आपस में लड़ते मरते रहें और ईसाईयत का इतिहास गवाह है कि उन में धार्मिक वाद विवाद एवं शत्रुतापूर्ण संग्राम खूब गर्म रहा है।

इस घटना के वर्णन से मात्र नसारा (ईसाईयों) को डराना उद्देश्य नहीं है बल्कि साथ ही मुस्लिम उम्मत को भी आगाह करना है कि वे इस से सबक़ हासिल करें वरना क़ुर्आन की शिक्षाओं को भुला बैठने की सूरत में उन के अन्दर भी बिखराव पैदा हो सकता है।

79. अर्थात् यह पैग़म्बर उन बातों को बेनिकाब कर रहा है जिन पर अहले किताब ने पर्दा डाल रखा था और जिन को दीन की नवीनीकरण करने के उद्देश्य से खोलने की आवश्यकता थी। इन के अलावा अनगिनत परिवर्तन ऐसे हैं जिन से सीधे उलझने की ज़रूरत नहीं है बल्कि उन की हक़ीक़त क़ुर्आन की उसूली रहनुमाई से खुदबखुद ज़ाहिर हो जाती है इस लिए ऐसी बहुत सी बातों को पैग़म्बर नज़रंदाज़ कर देता है।

80. नूर (रौशनी) रसूल की सिफ़त है,मुराद हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम हैं जिन के आने से सच्चे दीन की रौशनी फैली।

81. मुराद क़ुर्आन है जिस की शिक्षाऐं अत्यन्त स्पष्ट हैं। अहले-किताब ने अल्लाह की किताब की शिक्षाओं को ऐसा उलझा कर रख दिया था कि उन को सुलझाना किसी के बस की बात नहीं थी लेकिन क़ुर्आन की रौशन तालीमात ने उन तमाम उलझी हुई बातों को समाप्त कर दिया। इस लिए क़ुर्आन की दअवत यह है कि जिन उलझी हुई बातों में धर्म के अधिकारी जकड़े हुए हैं उन से निकलने की राह यह है कि वे क़ुर्आन की स्पष्ट शिक्षाओं को स्वीकार कर लें।

82. जो व्यक्ति अल्लाह की प्रसन्नता प्रप्ति को लक्ष्य बना कर सत्य धर्म की सच्चे मन से पैरवी करेगा उस की तमाम उल्झनें दूर हो जाऐंगी और वह हर प्रकार के फितनों से सुरक्षित रहेगा। जिन्दगी के हर मोड़ पर उसे ग़लत राहों से बचने और सलामती की राहों पर चलने की तौफ़ीक़ नसीब होगी।

83. अंधेरों से अभिप्राय अज्ञानता एवं जिहालत के अंधकार हैं और रौशनी से मुराद इल्म की रौशनी.

84. सीधे मार्ग (सिराते-मुस्तक़ीम) से मुराद इस्लाम है।

85. अर्थात् अल्लाह मसीह इब्ने मरयम में हुलूल कर गया है और अल्लाह की वास्तविकता एवं गुण मसीह ही में पाए जाते हैं। दूसरे शब्दों में मसीह के रुप में ख़ुदा स्वयं है। मानव शरीर ले कर प्रकट हुआ है। बाइबिल की किताब ''प्रेरितों के काम'' में हैं: ''सो अब इस्राईल का सारा घराना निश्चय जान ले कि परमेश्वर के उसी यीशु को जिसे तुम ने क्रुस पर चढ़ाया, प्रभु भी ठहराया और मसीह भी।''(प्रेरितों के काम २:३६)

86. अर्थात अगर अल्लाह मसीह, उन की माता और सारी मख़्लूक़ को मिटा देना चाहे तो कौन उसे इस इरादे से रोक सकता है? और जब मसीह खुद अपने को हलाक होने से रोक नहीं सकते तो वह ख़ुदा कैसे हो सकते हैं? इतनी मोटी बात भी मसीह के भक्तों की समझ में नहीं आती।

87. अर्थात् अल्लाह जिस तरह चाहे पैदा कर सकता है। किसी का बग़ैर बाप के पैदा हो जाना यह अर्थ नहीं रखता कि वह ख़ुदा है या ख़ुदा का साझीदार हो गया है।

यहूदी और ईसाई कहते हैं कि हम अल्लाह के बेटे और उस के चहीते हैं। इन से कहो कि फिर वह तुम्हारे गुनाहों पर तुम्हें अज़ाब क्यों देता है? वास्तव में तुम भी वैसे ही इन्सान हो जैसे दूसरे इंसान उस ने पैदा किए हैं।वह जिसे चाहे क्षमा कर दे और जिसे चाहे अज़ाब दे।आसमान और ज़मीन और उन के बीच की सारी वस्तुओं की फ़रमाँरवाई अल्लाह ही के लिए है और सब को उसी की तरफ़ जाना है।(अल-क़ुर्आन)

18. यहूदी और ईसाई कहते हैं कि हम अल्लाह के बेटे और उस के चहीते हैं।[88] इन से कहो कि फिर वह तुम्हारे गुनाहों पर तुम्हें अज़ाब क्यों देता है?[89] वास्तव में तुम भी वैसे ही इन्सान हो जैसे दूसरे इंसान उस ने पैदा किए हैं।[90] वह जिसे चाहे क्षमा कर दे और जिसे चाहे अज़ाब दे।[91] आसमान और ज़मीन और उन के बीच की सारी वस्तुओं की फ़रमाँरवाई अल्लाह ही के लिए है और सब को उसी की तरफ़ जाना है।

وَقَالَتِ الْيَهُودُ وَالنَّصَارَىٰ نَحْنُ أَبْنَاءُ اللَّهِ وَأَحِبَّاؤُهُ ۚ قُلْ فَلِمَ
يُعَذِّبُكُمْ بِذُنُوبِكُمْ ۖ بَلْ أَنْتُمْ بَشَرٌ مِمَّنْ خَلَقَ ۚ يَغْفِرُ لِمَنْ يَشَاءُ
وَيُعَذِّبُ مَنْ يَشَاءُ ۚ وَلِلَّهِ مُلْكُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ وَمَا
بَيْنَهُمَا ۖ وَإِلَيْهِ الْمَصِيرُ ﴿١٨﴾

19. ऐ अहले-किताब ! हमारा रसूल तुम्हारे पास ऐसे समय आ गया है जब कि रसूलों की नियुक्ति का सिलसिला एक मुद्दत से बन्द था।[92] वह (वास्तविक दीन को) तुम पर स्पष्ट कर रहा है ताकि तुम यह न कहो कि हमारे पास कोई ख़ुशख़बरी देनेवाला और डराने वाला नहीं आया। अब ख़ुशख़बरी देने वाला और डराने वाला तुम्हारे पास आ गया है [93] और अल्लाह हर चीज़ पर क़ुदरत रखता है।[94]

يَا أَهْلَ الْكِتَابِ قَدْ جَاءَكُمْ رَسُولُنَا يُبَيِّنُ لَكُمْ عَلَىٰ فَتْرَةٍ مِنَ
الرُّسُلِ أَنْ تَقُولُوا مَا جَاءَنَا مِنْ بَشِيرٍ وَلَا نَذِيرٍ ۖ فَقَدْ جَاءَكُمْ
بَشِيرٌ وَنَذِيرٌ ۗ وَاللَّهُ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿١٩﴾

20. और (वह घटना याद करो) जब मूसा ने अपनी क़ौम से कहा कि ऐ मेरी क़ौम के लोगों ! अपने ऊपर अल्लाह के उस एहसान को याद करो कि उस ने तुम में नबी पैदा किए, तुम को सत्तावान (शासक) बनाया और तुम को वह कुछ प्रदान किया जो दुनिया की किसी क़ौम को नहीं प्रदान किया गया।[95]

وَإِذْ قَالَ مُوسَىٰ لِقَوْمِهِ يَا قَوْمِ اذْكُرُوا نِعْمَةَ اللَّهِ عَلَيْكُمْ
إِذْ جَعَلَ فِيكُمْ أَنْبِيَاءَ وَجَعَلَكُمْ مُلُوكًا وَآتَاكُمْ مَا لَمْ يُؤْتِ
أَحَدًا مِنَ الْعَالَمِينَ ﴿٢٠﴾

21. ऐ मेरी क़ौम के लोगो ! इस पवित्र धरती में प्रवेश करो जो अल्लाह ने तुम्हारे लिए सुनिश्चित कर दी है।[96] और पीछे न हटो वरना नामुराद हो जाओगे।

يَا قَوْمِ ادْخُلُوا الْأَرْضَ الْمُقَدَّسَةَ الَّتِي كَتَبَ اللَّهُ لَكُمْ
وَلَا تَرْتَدُّوا عَلَىٰ أَدْبَارِكُمْ فَتَنْقَلِبُوا خَاسِرِينَ ﴿٢١﴾

22. कहने लगे, ऐ मूसा ! वहाँ तो जब्बार (शक्तिशाली) लोग रहते हैं [97] हम वहाँ हरगिज़ न जाऐंगे जब तक कि वे वहाँ से निकल न जाऐं। हाँ अगर वे वहाँ से निकल गए तो हम ज़रूर प्रवेश करेंगे।

قَالُوا يَا مُوسَىٰ إِنَّ فِيهَا قَوْمًا جَبَّارِينَ وَإِنَّا لَنْ نَدْخُلَهَا
حَتَّىٰ يَخْرُجُوا مِنْهَا فَإِنْ يَخْرُجُوا مِنْهَا فَإِنَّا دَاخِلُونَ ﴿٢٢﴾

23. इन डरने वालों में से दो व्यक्तियों ने जिन पर अल्लाह ने फ़ज़्ल (कृपा) किया था, कहाः उन के मुक़ाबले में दरवाज़े में घुस जाओ।[98]जब तुम उस में घुस जाओगे तो तुम ही ग़ालिब रहोगे। और अल्लाह पर भरोसा रखो अगर तुम मोमिन हो।

قَالَ رَجُلَانِ مِنَ الَّذِينَ يَخَافُونَ أَنْعَمَ اللَّهُ عَلَيْهِمَا
ادْخُلُوا عَلَيْهِمُ الْبَابَ فَإِذَا دَخَلْتُمُوهُ فَإِنَّكُمْ غَالِبُونَ ۚ
وَعَلَى اللَّهِ فَتَوَكَّلُوا إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿٢٣﴾

88. उन्हों ने अपने इस दावे को साबित करने के लिए तौरात और इंजील में भी परिवर्तन किए अत: जहाँ बनी इस्राईल को ख़ुदा के बन्दे कहा गया था वहाँ उन्हों ने ख़ुदा के बेटे लिख दिया।

''तुम अपने परमेश्वर यहोवा के पुत्र हो'' (व्यवस्थाविवरण १४:१)

''देखो पिता ने हम से कैसा प्रेम किया है कि हम परमेश्वर की सन्तान कहलाए और हम हैं भी।''(यूहन्ना की पहली पत्री ३:१)

89. अर्थात् तुम्हारे इस दावे का खंडन तुम्हारे अपने इतिहास से होता है कि तुम्हारी उद्दंडता के कारण तुम्हें कैसा कठोर दंड दुनिया में मिलता रहा है। दुश्मनों का तुम पर मुसल्लत होना, पूरी क़ौम को ग़ुलाम बना देना, क़त्ले-आम, बैतुलमुक़द्दस की तबाही जैसी शिक्षाप्रद घटनाऐं क्या इस बात का सबूत नहीं है कि ख़ुदा के नज़दीक न तो कोई क़ौम चहीती है और न किसी गिरोह को मुक्ति का सर्टिफ़िकेट लिख कर दिया है बल्कि वह कर्म के आधार पर इनाम और सज़ा का फ़ैसला करता है फिर आख़िरत में फ़ैसला अमल की बुनियाद पर क्यों नहीं होगा ?

90. अर्थात् नबियों की नस्ल से होने के कारण कोई क़ौम नजात की हक़दार नहीं ठहरती। नजात (मुक्ति एवं सफ़लता) का दारोमदार ईमान और अच्छे कर्म पर है।

91. मतलब यह कि क्षमा करना और अज़ाब देना संपूर्ण रुप से अल्लाह के अधिकार में है वह जिस को क्षमा के योग्य समझेगा उसे क्षमा प्रदान करेगा और जिस को अज़ाब के लायक समझेगा उसे अज़ाब (यातना) देगा। रहा यह सवाल कि वह किस को क्षमा का पात्र समझेगा और किस को अज़ाब का? तो इस सिलसिले में उस ने अपने प्रतिफल (बदले) का क़ानून क़ुर्आन में स्पष्ट कर दिया है। और यह क़ानून नस्ल की बुनियाद पर इन्सान और इन्सान के बीच कोई भेद भाव नहीं करता।

92. हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम के बाद कोई नबी नहीं आया यहाँ तक कि हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नियुक्ति हुई। आप की नियुक्ति सन ६१० ई.में हुई अर्थात ईसा अलैहिस्सलाम के आसमान पर उठाए जाने के लगभग पौने छ सौ साल बाद ।

इस लम्बी मुद्दत में अहले-किताब ने अल्लाह की किताब में परिवर्तन कर के और अपनी बिद्अतों (नई नई ख़ुराफ़ातों) के द्वारा जो गुमराहियाँ फैलाई थीं उस के कारण लोगों के लिए यह मालूम करना मुश्किल हो गया था कि ख़ुदा का वास्तविक दीन क्या है। इन हालात का तक़ाज़ा था कि अल्लाह अपना रसूल भेजे जो उन तमाम गुमराहियों के मुक़ाबले में हिदायत की राह स्पष्ट करे और लोगों को बताए कि ख़ुदा का असल दीन यह है। हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की नियुक्ति इसी उद्देश्य के लिए हुई है।

93. अर्थात् अब अपनी गुमराही पर दृढ़ रहने के लिए तुम्हारे पास कोई तर्क (उज्र) बाक़ी नहीं रहा।

94. अर्थात् ख़ूब समझ लो कि अगर अब भी तुम अपनी उद्दंडता से बाज़ नहीं आए तो अल्लाह तुम्हें कठोर दण्ड देने पर सक्षम (क़ादिर) है।

95. इशारा है बनि इस्राईल के गौरवशाली अतीत की तरफ़। उन का इतिहास हज़रत इब्राहीम, हज़रत इसहाक़, हज़रत याक़ूब और हज़रत यूसुफ़ जैसे प्रतिष्ठित एवं सम्मानजनक नबियों से सम्बन्ध है और यूसुफ़ अलैहिस्सलाम के ज़माने में उन को मिस्र में सत्ता मिल गई।

बनी इस्राईल को अल्लाह तआला ने दूसरी क़ौमों के मुक़ाबले में यह प्रमुखता प्रदान की कि उन्हें नेतृत्व की पदवी प्रदान की ताकि वे सत्य धर्म के नायक बन कर शहादते हक़ (सत्य की गवाही) के कर्तव्य को निभाऐं। इस सिलसिले में अल्लाह तआला उन की असाधारण रुप से सहायता करता रहा। फ़िरऔन जैसे शक्तिशाली और ज़ालिम बादशाह से मुक्ति अल्लाह तआला की असाधारण सहायता का ही परिणाम थी।

96. मुराद कन्आन (फ़िलस्तीन) की धरती है। इस को पवित्र धरती कहने का कारण यह है कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने इसे इस्लामी दअवत का केन्द्र बनाया था और बनी इस्राईल से अल्लाह तआला ने यह वादा फ़रमाया था कि यह धरती उन को मीरास (संपत्ति के रुप) में देगा। तौरात में है.

''सुनो मैं उस देश को तुम्हारे सामने किए देता हूँ जिस देश के विषय में यहोवा ने, इब्राहीम, इसहाक और याक़ूब,तुम्हारे पितरों से शपथ खा कर कहा था कि मैं इसे तुम को और तुम्हारे बाद तुम्हारे वंश को दूँगा। उस को अब जा कर अपने अधिकार में कर लो।''(व्यवस्थाविवरण १:८)

स्पष्ट रहे कि हज़रत इब्राहीम अलैहिस्सलाम ने इस्लामी दअवत के दो केन्द्र (Centre) स्थापित किए थे। एक मक्का जहाँ अपने बेटे हज़रत इस्माईल को बसाया था और दूसरा कन्आन (फ़िलस्तीन) जहाँ अपने बेटे हज़रत इस्हाक़ को बसाया, हज़रत इस्हाक़ के बेटे हज़रत याक़ूब से जिन का लक़ब (उपनाम) इस्राईल है, जो नस्ल चली वह बनी इस्राईल कहलाई। हज़रत याकूब अपने बेटों के साथ हज़रत यूसुफ़ के सत्ताकाल में मिस्र चले गए थे। वहाँ सालों रहने के बाद उन की तादाद काफ़ी बढ़ गई। मगर उस समय फ़िरऔन उन पर शासन कर रहा था। हज़रत मूसा को जो बनी इस्राईल ही में से थे, अल्लाह तआला ने पैग़म्बर बना कर भेजा । उन्हों ने बनी इस्राईल को

फ़िरऔन के पंजे से छुड़ाया और हिज़रत कर के सीना में आए। यहाँ उन्हें तूर पहाड़ के दामन में अल्लाह तआला ने शरीअत प्रदान की। इस के बाद जब वे फ़ारान के बियाबान में पहुँचे और फ़िलस्तीन का इलाक़ा क़रीब आया तो उन्हें हुक्म दिया गया कि वे अपनी असल मन्ज़िल की तरफ़ कूच करें जो उन का असल वतन है। अर्थात कन्आन और फ़िलस्तीन का इलाक़ा,ताकि उस की यह हैसियत कि वह दअवत का केन्द्र है,बहाल हो । बाद में हज़रत सुलेमान अलैहिसस्लाम के ज़माने में उसी के प्रसिद्ध नगर येरुश्लम में बैतुल मुक़द्दस का निर्माण हुआ।

97.अर्थात वहाँ ऐसे शक्तिशाली एवं ज़बरदस्त लोग रहते हैं कि उन का मुक़ाबला करना हमारे बस की बात नहीं है। बाइबिल में उन का बयान इस तरह नक़ल हुआ है।:

और जितने पुरुष हमने उस में देखे वे सब के सब बड़े डील डोल के हैं। फ़िर हम ने वहाँ नपीलों को अर्थात् नपीली जाति वाले अनाकवंशियों को देखा, और हम अपनी दृष्टि में तो उन के सामने टिड्डे के समान दिखाई पड़ते थे और ऐसे ही उन की दृष्टि में मालूम पड़ते थे।''(गिनती १३:३२,३३)

98. तौरात में उन दो व्यक्तियों के नाम यहोशू और कालिब आए हैं और इस का जो विवरण बयान हुआ है उस का सारांश यह है कि हज़रत मूसा ने बारह सरदारों को इस अभियान पर भेजा था कि वे फ़िलस्तीन जा कर वहाँ के हालात मालूम कर आएं। वहाँ से वापस आ कर उन्होंने जनसमूह में बयान किया कि उस देश में तो ''दूध और मधु की धाराऐं बहती हैं....परन्तु उस देश के निवासी बलवान हैं।'' उन का यह बयान सुन कर सारी मण्डली चिल्लाने लगी और बुड़बुड़ाने लगी कि ''भला होता कि हम मिस्र ही में मर जाते या इस जंगल ही में मर जाते। और यहोवा हम को उस देश में ले जा कर क्यों तलवार से मरवाना चाहता है? हमारी स्त्रियाँ और बाल बच्चे तो लूट में चले जाऐंगे । क्या हमारे लिए अच्छा नहीं कि हम मिस्र देश को लौट जाऐं ? (गिनती १४:२,३)

इस मौक़े पर उन बारह सरदारों में से दो सरदार यहोशू और कालिब उठे और उन्होंने उन की हिम्मत बंधाने की कोशिश की और कहा:

''यहोवा हमारे संग है, उन से न डरो'' मगर उन्हों ने इस का उत्तर यह दिया कि ''इन को पत्थरवाह करो'' (गिनती १४:१०,११)

❍ ❍ ❍ ❍ ❍ ❍

फिर अल्लाह ने एक कौआ भेजा जो ज़मीन कुरेदने लगा ताकि उसे बताए कि अपने भाई की लाश किस तरह छिपाए। वह बोला अफ़सोस मुझ पर ! मैं इस कौए की तरह भी न हो सका कि अपने भाई की लाश छिपा देता ! तात्पर्य यह कि वह इस पर पछताया।(अल-क़ुर्आन)

24. बोले ऐ मूसा जब तक वे लोग वहाँ मौजूद हैं हम हरगिज़ दाख़िल होने वाले नहीं।तुम और तुम्हारा रब दोनों जाओ और लड़ो हम तो यहाँ बैठे रहेंगे।

قَالُوْا يٰمُوْسٰٓى اِنَّا لَنْ نَّدْخُلَهَآ اَبَدًا مَّا دَامُوْا فِيْهَا فَاذْهَبْ
اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَآ اِنَّا هٰهُنَا قٰعِدُوْنَ ﴿٢٤﴾

25. मूसा ने दुआ की ऐ मेरे रब ! मैं अपने अस्तित्व और भाई [99] के सिवा किसी पर अधिकार नहीं रखता। अत:तू हमारे और इन नाफ़रमान लोगों के बीच फ़ैसला फ़रमा दे।[100]

قَالَ رَبِّ اِنِّىْ لَآ اَمْلِكُ اِلَّا نَفْسِىْ وَاَخِىْ
فَافْرُقْ بَيْنَنَا وَبَيْنَ الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ﴿٢٥﴾

26. फ़रमाया, तो अब यह धरती चालीस साल तक इन पर हराम कर दी गई। ये लोग ज़मीन में भटकते फिरेंगे ।[101] तो तुम इन नाफ़रमान लोगों (के हाल) पर अफ़सोस न करो।

قَالَ فَاِنَّهَا مُحَرَّمَةٌ عَلَيْهِمْ اَرْبَعِيْنَ سَنَةً ۚ يَتِيْهُوْنَ
فِى الْاَرْضِ ؕ فَلَا تَاْسَ عَلَى الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ ﴿٢٦﴾

27. और तुम उन को आदम के दो बेटों [102] की घटना सही तौर पर सुना दो।[103] जब उन दोनों ने क़ुर्बानी पेश की तो एक की क़ुर्बानी क़ुबूल हुई और दूसरे की क़ुबूल नहीं हुई।[104] उस ने कहा मैं तुझे क़त्ल कर दूँगा।[105] उस ने कहा अल्लाह तो सिर्फ मुत्तकियों (परहेज़गारों) की क़ुर्बानी क़ुबूल करता है।[106]

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ ابْنَىْ اٰدَمَ بِالْحَقِّ ۘ اِذْ قَرَّبَا قُرْبَانًا فَتُقُبِّلَ
مِنْ اَحَدِهِمَا وَلَمْ يُتَقَبَّلْ مِنَ الْاٰخَرِ ؕ قَالَ لَاَقْتُلَنَّكَ ؕ قَالَ
اِنَّمَا يَتَقَبَّلُ اللّٰهُ مِنَ الْمُتَّقِيْنَ ﴿٢٧﴾

28. अगर तू मुझे क़त्ल करने के लिए हाथ उठाएगा तो मैं तुझे क़त्ल करने के लिए हाथ नहीं उठाऊँगा।[107] मैं अल्लाह, सारे जगत के रब (प्रभु) से डरता हूँ।

لَئِنْۢ بَسَطْتَّ اِلَىَّ يَدَكَ لِتَقْتُلَنِىْ مَآ اَنَا بِبَاسِطٍ يَّدِىَ اِلَيْكَ
لِاَقْتُلَكَ ۚ اِنِّىْٓ اَخَافُ اللّٰهَ رَبَّ الْعٰلَمِيْنَ ﴿٢٨﴾

29. मैं चाहता हूँ कि तू मेरा और अपना दोनों का गुनाह समेट ले [108] और दोज़ख़ियों में शामिल हो जाए कि ज़ालिमों की यही सज़ा है।

اِنِّىْٓ اُرِيْدُ اَنْ تَبُوْٓاَ بِاِثْمِىْ وَاِثْمِكَ فَتَكُوْنَ مِنْ
اَصْحٰبِ النَّارِ ۚ وَذٰلِكَ جَزٰٓؤُا الظّٰلِمِيْنَ ﴿٢٩﴾

30. मगर उस के नफ़्स (जी) ने उस को अपने भाई के क़त्ल पर आमादा कर ही लिया [109] और उसे क़त्ल कर के [110] वह तबाह होने वालों में शामिल हो गया।[111]

فَطَوَّعَتْ لَهٗ نَفْسُهٗ قَتْلَ اَخِيْهِ
فَقَتَلَهٗ فَاَصْبَحَ مِنَ الْخٰسِرِيْنَ ﴿٣٠﴾

31. फिर अल्लाह ने एक कौआ भेजा जो ज़मीन कुरेदने लगा ताकि उसे बताए कि अपने भाई की लाश किस तरह छिपाए।[112] वह बोला अफ़सोस मुझ पर ! मैं इस कौए की तरह भी न हो सका कि अपने भाई की लाश छिपा देता ! तात्पर्य यह कि वह इस पर पछताया।[113]

فَبَعَثَ اللّٰهُ غُرَابًا يَّبْحَثُ فِى الْاَرْضِ لِيُرِيَهٗ كَيْفَ يُوَارِىْ
سَوْءَةَ اَخِيْهِ ؕ قَالَ يٰوَيْلَتٰٓى اَعَجَزْتُ اَنْ اَكُوْنَ مِثْلَ هٰذَا
الْغُرَابِ فَاُوَارِىَ سَوْءَةَ اَخِىْ ۚ فَاَصْبَحَ مِنَ النّٰدِمِيْنَ ﴿٣١﴾

99. मुराद हज़रत हारुन हैं जो हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के भाई थे और नबी भी।

100. हज़रत मूसा ने जब देखा कि अल्लाह तआला ने पवित्र धरती को जीत लेने का जो हुक्म दिया है उस के पालन के लिए क़ौम किसी तरह तैयार नहीं है तो उन्होंने अल्लाह तआला से दुआ की कि एक तरफ़ मैं और मेरा भाई हारुन है जो हर तरह तेरी आज्ञा का पालन करने को तैयार हैं और दूसरी तरफ़ क़ौम है जो अवज्ञा पर तुल गई है। ऐसी सूरत में तू ही निर्णय दे कि हमें क्या करना चाहिए। और अगर तेरा प्रकोप उस पर टूटने वाला हो तो हमें उस से अलग रख।

101. अल्लाह तआला ने निर्णय दिया कि बनी इस्राईल को उस की नाफ़रमानी की सज़ा यह मिलेगी कि वह चालीस साल तक पवित्र धरती में प्रवेश न कर सकेंगे बल्कि बियाबान में मारे मारे फिरेंगे। तौरात में है:

''परन्तु तुम लोगों की लोथें इसी जंगल में पड़ी रहेंगी। और जब तक तुम्हारी लोथें जंगल में न गल जाए तब तक अर्थात चालीस वर्ष तक तुम्हारे बाल बच्चे जंगल में तुम्हारे व्यभिचार का फल भोगते हुए चरवाही करते रहेंगे ।.... मैं यहोवा यह कह चुका हूँ कि मैं इस बुरी मण्डली के लोग जो मेरे विरुद्ध इकट्ठे हुए है इसी जंगल में मर मिटेंगे और नि:संदेह ऐसा ही करुँगा भी। (गिनती १४:३२,३३,३५)

अत: बनी इस्राईल को चालीस साल उसी बयाबान में भटकते हुए गुज़ारना पड़े। इस मुद्दत में सब युवा पुरुष मर गए और उन की जगह नई नस्ल ने ले ली । आख़िरी दिनों में हज़रत हारुन और हज़रत मूसा का इन्तिक़ाल हो गया और बनी इस्राईल उन के नितृत्व से वंचित हो गए। अलबत्ता हज़रत मूसा अपने इन्तिक़ाल से पहले बनी इस्राईल को ले कर नगर यशोहो के क़रीब पहुँच गए जहाँ से फ़िलस्तीन की सरहद शुरु हो जाती है। और अबारीम पहाड़ पर चढ़ कर उस देश का अवलोकन किया था जिस को बनी इस्राईल जल्द ही फ़तेह करने वाले थे । हज़रत मूसा के इन्तिक़ाल के बाद बनी इस्राईल की नई नसल यहोशू पुत्र नून के नेतृत्व में आगे बढ़ी और उस ने मौऊदा (प्रतिज्ञात) मुल्क को फ़तेह कर लिया जिस की तफ़सील बाइबिल की किताब 'यहोशू' में मौजूद है।

102. तौरात में इन के नाम क़ाईन (क़ाबील) और हाबील आए है।

103. यह मानव जाति के आरंभिक काल की एक महत्वपूर्ण घटना है। यह घटना तौरात में भी बयान हुई है। लेकिन इस के शिक्षाप्रद अंश ग़ायब हो गये हैं। यहाँ क़ुर्आन ने इस किस्से को न केवल बिना किसी कमी बेशी के बयान कर दिया बल्कि साथ ही उस के पाठ को भी पूरी तरह उजागर कर दिया ।

104. हाबील की क़ुर्बानी क़ुबूल हुई क्यों कि वह मुत्तक़ी (धर्मपरायण) था और क़ाबील की क़ुर्बानी क़ुबूल नहीं हुई क्यों कि वह मुत्तक़ी नहीं था। क़ुर्बानी क़ुबूल हो जाने का कोई चिन्ह ज़रुर प्रकट हुआ होगा। यह चिन्ह क्या था इस का स्पष्टीकरण क़ुर्आन ने नहीं किया अलबत्ता कई मुफ़स्सिरीन (टीकाकार) कहते हैं कि उस ज़माने में क़ुर्बानी के क़ुबूल हो जाने का चिन्ह यह था कि आसमान से आग नाज़िल होती और क़ुर्बानी को खा जाती। (तफ़्सीर कबीर Vol. XI Page 205) संभव है उस समय की परिस्थितियों में जब कि इन्सानी आबादी थोड़ी थी, क़ुर्बानी को निगल जाने की यह असाधारण घटना घटित हुई हो। (क़ुर्बानी निगलने की व्याख्या के लिए देखिए सूरह आले-इमरान नोट:२१३)

इस से क़ुर्बानी का महत्व भी स्पष्ट होता है कि वह प्राचीनतम काल में भी इबादत की एक महत्वपूर्ण अंग रही है। एवं यह वास्तविकता भी स्पष्ट होती है कि सर्व प्रथम सभ्यता जिसमें इन्सान ने आँखें खोली ख़ालिस ख़ुदा परस्ती (ईशभक्ति) की सभ्यता थी।

105. क़ाबील को ईर्ष्या हुई कि हाबील की क़ुर्बानी क्यों क़ुबूल हुई और ख़ुद उस की क़ुर्बानी क्यों क़ुबूल नही हुई। इस ईर्ष्या के कारण उस ने अपने बेगुनाह भाई की हत्या की। मालूम हुआ कि ईर्ष्या वह ख़तरनाक बीमारी है जो मनुष्य को क़त्ल जैसे संगीन जुर्म पर आमादा करती है।

106. क़ुर्बानी स्वीकार होने के लिए तक़वा की शर्त उसी तरह है जिस तरह कि क़ुर्आन में दूसरी जगह इर्शाद हुआ है:

لَنْ يَّنَالَ اللّٰهَ لُحُوْمُهَا وَلَا دِمَآؤُهَا

وَلٰكِنْ يَّنَالُهُ التَّقْوٰى مِنْكُمْ ط

(ख़ुदा तक इन क़ुर्बानियों का न गोश्त पहुँचता है और न ख़ून बल्कि उस के पास सिर्फ तुम्हारा तक़वा (परहेज़गारी) पहुँचता है। हज्ज-३७)

गोया पहले दिन से ही इन्सान पर दीन की यह हक़ीक़त उजागर कर दी गई थी कि उपासना कर्म (मरासिमे-उबूदियत) की तक़वा (अर्थात ईश भय) के बग़ैर अदायगी, अल्लाह के यहाँ कोई मूल्य नहीं रखता।

107. मतलब यह कि अगर तू हत्या में पहल करता है तो कर मैं अपनी तरफ़ से हत्या की शुरुआत करने वाला नहीं । स्पष्ट रहे कि क़त्ल में पहल करना और बात है तथा बचाव करना और बात । यहाँ क़त्ल की शुरुआत करने को ग़लत कहा गया है न कि बचाव को।

108. अर्थात् तूने क़त्ल करने का जो चेलेन्ज किया है उस

पर उत्तेजित हो कर मैं तेरे क़त्ल पर आमादा हुआ तो मैं भी गुनाहगार हो जाऊँगा लेकिन चूँकि मैं तेरे ख़िलाफ़ इस तरह की कोई कार्रवाई नहीं कर रहा हूँ इस लिए क़त्ल का जो गुनाह मुझ से घटित होता वह भी तेरे ही हिस्से में चला गया। अब तू मुझे क़त्ल कर के दोहरे गुनाह का बोझ उठाएगा। एक गुनाह क़त्ल के लिए क़दम उठाने का और दूसरा गुनाह एक ऐसे व्यक्ति को क़त्ल करने का जिस ने यह जानने के बावजूद कि तू ने उसे मार देने की धमकी दी थी, तेरे क़त्ल पर आमादा नहीं हुआ हदीस में आता है:

اذا التقى المسلمان بسيفيهما فا لقاتل والمقتول فى النار ، قيل يا رسول الله هذا القاتل فما بال المقتول ؟ قال : انّه قد اراد قتل صاحبه۔ (مسلم كتاب الفتن)

''जब दो मुसलमान अपनी अपनी तलवार के साथ एक दूसरे के सामने हों तो क़ातिल और मक़तूल दोनों जहन्नम में होंगे। किसी ने पूछा ऐ अल्लाह के रसूल यह इस लिए जहन्नम का हक़दार हुआ कि क़ातिल है लेकिन मक़तूल किस कारण जहन्नम का हक़दार हुआ? फ़रमाया वह भी अपने साथी को क़त्ल करना चाहता था ! ''

अर्थात् जब दोनों की नीयत एक दूसरे को क़त्ल करने की हो और इस इरादे से दोनों लड़ पड़ें तो क़ातिल और मक़्तूल दोनों गुनाहगार होंगें और जहन्नम के हक़दार हो जाऐंगे।

स्पष्ट रहे कि अपना बचाव (Self Defence) की सूरत इस से भिन्न है। शरीअत ने हर व्यक्ति को अपनी जान,माल, और आबरु बचाने का हक़ दिया है इस लिए अगर बचाव करने वाले को हाथ उठाने वाले का ख़ून बहाना पड़ता है तो उस का गुनाह हाथ उठाने वाले ही पर है और इस्लामी क़ानून में ऐसे ख़ून का न क़सास (हत्या दण्ड) है और न ख़ून-बहा (जुर्माना)।

109. मनुष्य जब कोई गुनाह करना चाहता है तो उस का ज़मीर उस को रोकता है लेकिन जब वह निरन्तर ज़मीर की आवाज़ को दबाने लगता है तो फिर उस का जी गुनाह के लिए उसे आमादा कर ही लेता है।

110. तौरात में है:

''तब क़ैन ने अपने भाई हाबिल से कुछ कहा, और जब वे मैदान में थे तब क़ैन ने अपने भाई हाबिल पर चढ़ कर उसे घात किया।''(उत्पत्ति ४:८)

मालूम होता है कि वह हत्या अचेतावस्था में की गई थी।

111. यह पहला ख़ून था जो ज़मीन पर बहाया गया हदीस में आता है:

لا تقتل نفس ظلماً الاَّ كان على ابن آدم الاوَّل كفل من دمها لأ نه اوّل من سنَّ القتل ۔ (مسلم كتاب القسامة)

''जो व्यक्ति भी जुल्म के तौर पर क़त्ल किया जाता है उस के ख़ून के वबाल में आदम का पहला बेटा शरीक हो जाता है,क्यों कि वह पहला व्यक्ति है जिस ने क़त्ल का तरीक़ा प्रचलित किया ।'' (मुस्लिम किताबुल कसाम:)

112. क़ाबील (क़ैन) ने अपने भाई को क़त्ल करने के बाद उस की लाश यूँ ही छोड़ दी थी और लाश को मैदान में यूँ ही छोड़ देना कि वह सड़ गल जाए उस का निरादर है। यह निरादर न हो इस लिए अल्लाह तआला ने एक कौए के द्वारा क़ाबील को लाश दफ़न करने का तरीक़ा बतलाया । उस समय मानव जाति की शुरुआत हो रही थी और यह पहली लाश थी जो ज़मीन पर गिरा दी गई थी। इस लिए क़ाबील की बुद्धि में दफ़न करने की बात उस समय आई जब कि उस ने कौए को ज़मीन कुरेद कर कोई चीज़ छिपाते हुए देखा। कौए की यह आदत होती है कि वह ज़मीन कुरेदता है और उस में खाने की कोई चीज़ छिपा देता है। कौए की इस हरकत को देख कर क़ाबील की बुद्धि में भी लाश दफ़न करने की बात आई।

इस से मालूम हुआ कि इन्सान की लाश को ज़मीन में दफ़न करना प्रकृति की रहनुमाई है और यह तरीक़ा प्राचीन काल से चला आ रहा है।

113. और जुर्म का अनजाम आत्म ग्लानि ही है। ज़ालिमाना हरकतें कर के इन्सान कभी इत्मीनान और दिल का सुकून हासिल नहीं कर सकता इस के विपरीत हक़ और इन्साफ़ की राह अपना कर के वह इत्मीनान (संतोष) और सुकून की दौलत हासिल कर लेता है।

❒ ❒ ❒ ❒ ❒ ❒

बनी इस्राईल का बयाबान में भटकना

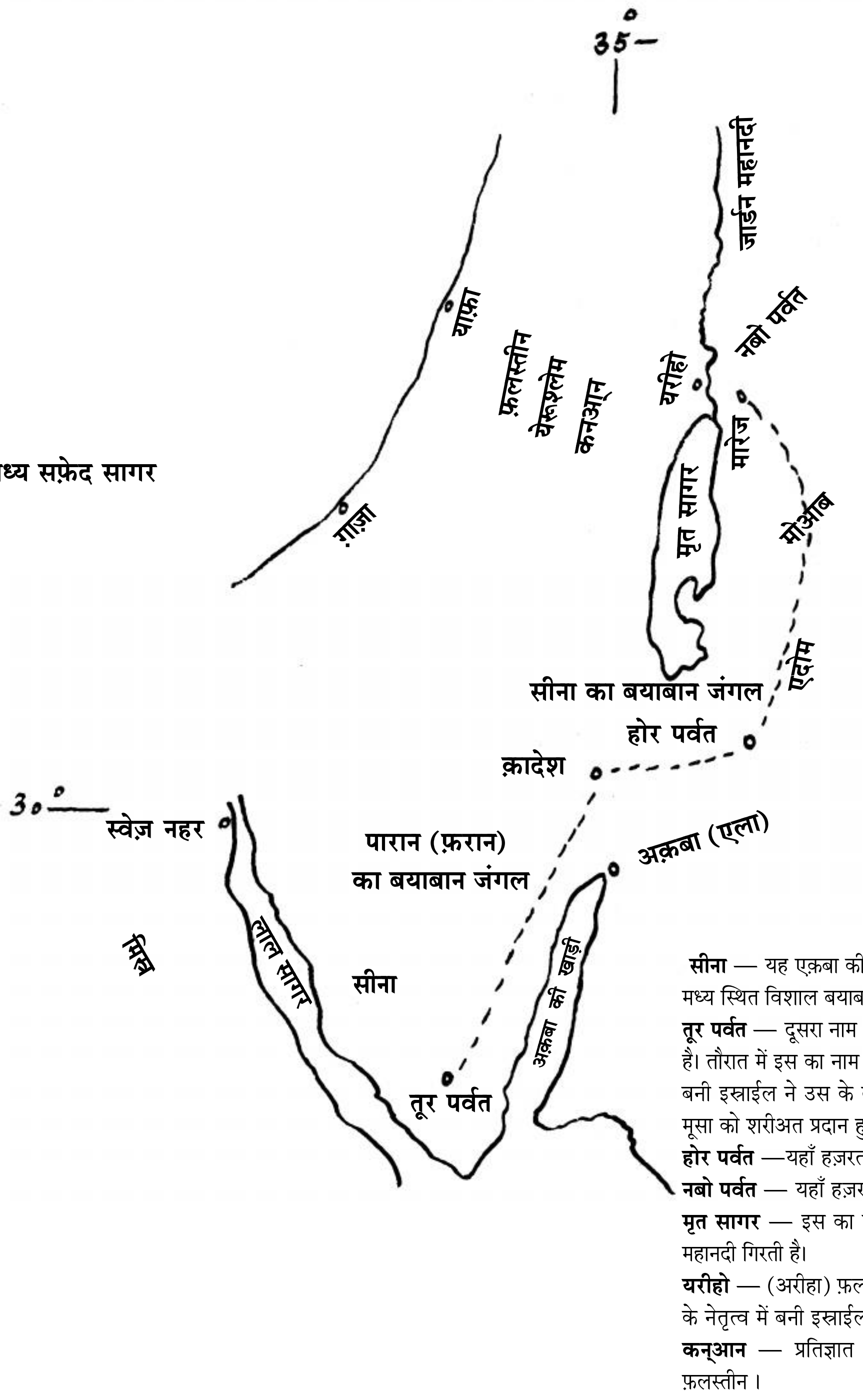

सीना — यह एक़बा की ख़ाड़ी और लाल सागर (स्वेज़ नहर) के मध्य स्थित विशाल बयाबान है।

तूर पर्वत — दूसरा नाम तूरे-सीनीन। यह सीना के दक्षिण में स्थित है। तौरात में इस का नाम होरेब आया है। मिस्र से निकलने के बाद बनी इस्राईल ने उस के दामन में पनाह ली थी और यहाँ हज़रत मूसा को शरीअत प्रदान हुई।

होर पर्वत —यहाँ हज़रत हारुन का इन्तिक़ाल हुआ।

नबो पर्वत — यहाँ हज़रत मूसा का इन्तिक़ाल हुआ।

मृत सागर — इस का दूसरा नाम लूत साग़र है। इस में जार्डन महानदी गिरती है।

यरीहो — (अरीहा) फ़लस्तीन का पहला शहर जो हज़रत यूशअ के नेतृत्व में बनी इस्राईल ने जीता।

कन्आन — प्रतिज्ञात (वादे में मिलने वाली) धरती अर्थात फ़लस्तीन ।

येरुश्लेम — नया नाम अलक़ुदुस

फ़ारान — (पारान) और सीना का बयाबान जंगल — इस क्षेत्र में बनी इस्राईल मारे मारे फ़िरते रहे।

32. इसी कारण [114] हम ने बनी इस्राईल के लिए यह हुक्म लिख दिया था कि जिस ने किसी को क़त्ल किया जब कि वह (मक़तूल) किसी की हत्या करने या ज़मीन में फ़साद बरपा करने का अपराधी नहीं हुआ था, उस ने गोया तमाम इन्सानों को क़त्ल कर दिया, और जिस ने किसी की जान बचाई उस ने गोया तमाम इन्सानों की जान बचाई।[115] और यह भी हक़ीक़त है कि हमारे रसूल उस के पास स्पष्ट आदेश ले कर आए लेकिन इस के बावजूद उन में अधिकतर लोग ऐसे हैं जो ज़मीन में ज़्याद्तियाँ करते हैं।[116]

مِنْ اَجْلِ ذٰلِكَ ۛۚ كَتَبْنَا عَلٰى بَنِىْٓ اِسْرَآءِيْلَ اَنَّهٗ مَنْ
قَتَلَ نَفْسًاۢ بِغَيْرِ نَفْسٍ اَوْ فَسَادٍ فِى الْاَرْضِ فَكَاَنَّمَا قَتَلَ
النَّاسَ جَمِيْعًا ؕ وَمَنْ اَحْيَاهَا فَكَاَنَّمَآ اَحْيَا النَّاسَ جَمِيْعًا ؕ
وَلَقَدْ جَآءَتْهُمْ رُسُلُنَا بِالْبَيِّنٰتِ ثُمَّ اِنَّ كَثِيْرًا مِّنْهُمْ بَعْدَ
ذٰلِكَ فِى الْاَرْضِ لَمُسْرِفُوْنَ ﴿٣٢﴾

33. जो लोग अल्लाह और उस के रसूल से जंग करते हैं और ज़मीन में फ़साद बरपा करने के लिए दौड़ धूप करते हैं उन की सज़ा यही है कि क़त्ल कर दिए जाएं या उन्हें सूली दे दी जाए या उन के हाथ पाँव विपरीत दिशाओं से काट डाले जाएं, या उन्हें देश निकाला दे दिया जाए।[117] यह उन के लिए दुनिया में रुस्वाई है [118] और आख़िरत में भी उन के लिए बहुत बड़ा अज़ाब है।

اِنَّمَا جَزٰٓؤُا الَّذِيْنَ يُحَارِبُوْنَ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَيَسْعَوْنَ
فِى الْاَرْضِ فَسَادًا اَنْ يُّقَتَّلُوْٓا اَوْ يُصَلَّبُوْٓا اَوْ تُقَطَّعَ
اَيْدِيْهِمْ وَاَرْجُلُهُمْ مِّنْ خِلَافٍ اَوْ يُنْفَوْا مِنَ
الْاَرْضِ ؕ ذٰلِكَ لَهُمْ خِزْىٌ فِى الدُّنْيَا وَلَهُمْ فِى
الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۙ ﴿٣٣﴾

34. मगर जो लोग इस के पहले कि तुम उन पर क़ाबू पाओ तौबा कर लें तो जान लो कि अल्लाह क्षमा करने वाला दयावान है।[119]

اِلَّا الَّذِيْنَ تَابُوْا مِنْ قَبْلِ اَنْ تَقْدِرُوْا عَلَيْهِمْ ۚ
فَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٣٤﴾

35. ऐ ईमान वालो ! [120] अल्लाह से डरो [121] और उस का क़ुर्ब (सामीप्य) तलाश करो [122] और उस की राह में जिहाद करो [123] ताकि तुम कामयाब हो।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَابْتَغُوْٓا اِلَيْهِ
الْوَسِيْلَةَ وَجَاهِدُوْا فِىْ سَبِيْلِهٖ لَعَلَّكُمْ
تُفْلِحُوْنَ ﴿٣٥﴾

36. यक़ीन जानो कि जिन लोगों ने कुफ्र किया अगर उन के क़ब्ज़े में वह सब कुछ आ जाए जो धरती पर मौजूद है और उतना ही और भी उन्हें प्राप्त हो जाए और वे क़ियामत के दिन अज़ाब (यातना) से बचने के लिए यह सब कुछ फिदय: (प्राण दंड) में देना चाहें तब भी वह उन से क़ुबूल नहीं किया जाएगा [124] और उन्हें दुखदायी यातना भुगतनी होगी।

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا لَوْ اَنَّ لَهُمْ مَّا فِى
الْاَرْضِ جَمِيْعًا وَّمِثْلَهٗ مَعَهٗ
لِيَفْتَدُوْا بِهٖ مِنْ عَذَابِ يَوْمِ الْقِيٰمَةِ مَا تُقُبِّلَ
مِنْهُمْ ۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيْمٌ ﴿٣٦﴾

114. अर्थात् लोगों में यह अपराधिक मनोवृति परवरिश न पाए और मानव रक्त की क्षति एवं उस का निरादर न हो इस लिए नाहक़ क़त्ल की संगीनी अल्लाह तआला ने बनी इस्राईल पर अच्छी तरह स्पष्ट कर दी थी।

115. इस से स्पष्ट होता है कि इस्लाम की निगाह में नाहक क़त्ल कितना बड़ा जुर्म है और किसी इन्सानी जान को बचाना कितनी बड़ी नेकी है। जो व्यक्ति नाहक किसी की जान लेता है वह एक जुर्म ही नहीं करता बल्कि इन्सानियत के विरुद्ध अभियान छेड़ता है क्यों कि असल चीज़ जान (मनुष्य की जान) का आदर है। और ख़ून आदमी तभी करता है जब कि उस के दिल में जान का एहतिराम (आदर) एवं सम्मान बाक़ी नहीं रहता। और जब जान का एहतिराम बाकी न रहा तो ऐसा व्यक्ति पूरे मानव समाज के लिए खतरनाक बन जाता है। वह कब क्या कर बैठेगा कुछ कहा नहीं जा सकता। इस के विपरीत जो व्यक्ति किसी ऐसे व्यक्ति की जो मौत के चंगुल में हो, जान बचाता है वह न केवल एक नेकी का काम करता है बल्कि इस बात का सबूत देता है कि उस के दिल में इन्सानी जान की प्रतिष्ठा एवं उस का आदर विद्यमान है और वह इन्सानियत का हमदर्द और हितैषी है। ऐसा ही व्यक्ति मानव समाज का रक्षक होता है।

116. अर्थात बनी इस्राईल के लिए क़त्ल की संगीनी का हुक्म लिख देने के बाद, उन के अन्दर रसूल भी भेजे जो उन पर ख़ुदा के आदेशों को स्पष्ट करते रहे और ख़ुदा की नाफ़रमानी और मुजरिमाना हरकतों पर उन्हें झकझोरते रहे लेकिन इन तमाम बातों के बावजूद बहुतेरे लोग ज़ुल्म और ज़्यादतियाँ करते रहे और आज भी वे फसादी ही बने हुए हैं।

इन आयतों के अवतरण के समय यहूदी मुसलमानों के विरुद्ध साजिशें कर रहे थे। मक्का के मुश्रिकों ने मुसलमानों के ख़िलाफ़ जो जंगें लड़ी थीं उन सब में पीठ पीछे यहूदियों का हाथ था और उन्हों ने नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम और आप के अस्हाब (साथियों) का क़त्ल करने की भी साज़िश की थी जिस में वे कामयाब न हो सके। यहाँ इसी पृष्ट भूमि में क़त्ल और ख़ून ख़राबा की संगीनी स्पष्ट करते हुए यहूदियों को झन्झोड़ा गया है।

117. यहाँ उन लोगों का हुक्म बयान किया गया है जो अल्लाह और उस के रसूल के खिलाफ़ बग़ावत करें और अपनी उद्दंडता एवं उपद्रवी हरकतों से इस्लाम के क़ानून और उस की व्यवस्था एवं अनुशासन को चेलेन्ज करें चाहे वे मुस्लिम हों या ग़ैर मुस्लिम । यह हुक्म ऐसे गिरोह पर भी लागू होता है जो इस्लाम द्वारा स्थापित की गई न्याय व्यवस्था को उलटने के लिए सशस्त्र बग़ावत करे,और उस जत्थे और टोली पर भी जो नरसंहार, लूटमार,डकैती, आगज़नी,तोड़ फ़ोड़, अपरहण (चाहे वह औरतों का हो या विमान आदि का) जैसे संगीन अपराधों द्वारा हुकूमत के लिए ला एण्ड आर्डर (क़ानून व्यवस्था) के लिए समस्या खड़ी कर दे ऐसे मुजरिमों से निपटने के लिए इस्लाम की साधारण दंड संहिता क़ाफ़ी नहीं हो सकती इस लिए शरीअत ने इन के ख़ात्में के लिए विशेष नियम बनाए है और इस्लामी हुकूमत को इस बात का अधिकार दिया है कि वह अपराध की श्रेणी को देखते हुए हालात और मसलहत के अनुसार इन में से जो सज़ा मुनासिब समझे दे يُنْفَوْا مِنَ الْأَرْضِ (देश निकाला दिए जाने) के भाव में क़ैद करना भी शामिल है ।

118. अर्थात जब उन्होंने अल्लाह और उस के रसूल के विरुद्ध बग़ावत का बिगुल बजाया और उस के क़ानून का आदर नहीं किया तो वे स्वयं सम्मान योग्य कहाँ हुए? ऐसे लोगों को शिक्षाप्रद एवं अपमानजनक दण्ड देना इन्साफ़ का खुला कताज़ा है।

119. अर्थात् इस से पहले कि इस्लामी हुकूमत उन पर क़ाबू पाए अथवा उन्हें गिरिफ़्तार करे अगर वे तौबा (प्रायश्चित) कर के अपने रवैये का सुधार कर चुके हों तो फिर उन के ख़िलाफ़ इस क़ानून के तहत कार्रवाई जायज़ नहीं होगी क्यों कि तौबा करने वालों को अल्लाह माफ़ कर देता है।

120. ऊपर उद्दंडतापूर्ण क़ामों एवं कार्यक्रमों और फ़ितना एवं फ़साद को समाप्त करने की तदबीर बयान हुई थी अब ईमान वालों को संबोधित कर के उन बुनियादी विशेषताओं एवं गुणों को अपने अन्दर पैदा करने की हिदायत की जा रही है जो उन्हें चरित्रवान और नेक बना सकती है।

121. अर्थात् गुनाह और नाफ़रमनी के कामों से बचो।

122. मतलब यह कि वह काम करो जिन के द्वारा अल्लाह का सामीप्य (क़ुर्ब) प्राप्त किया जा सकता है सामीप्य प्राप्त करने के लिए केवल गुनाहों से बचना काफ़ी नहीं बल्कि सकारात्मक रुप से इबादत और फ़रमाँबरदारी का आयोजन आवश्यक है। इस लिए तक़वा (परहेज़गारी) के साथ उन आमाल (कर्मों) का आयोजन करने को कहा गया है जो सामीप्य (क़ुर्ब) का साधन है।

वसीला का यह भावार्थ संदर्भ के लिहाज़ से भी सही है और क़ुर्आन के साधारण बयान से भी मेल खाता है। क्यों कि क़ुर्आन ने ख़ुदा तक पहुँचने और उस की ख़ुशनूदी (प्रसन्नता) हासिल करने का माध्यम ईमान और अच्छे कर्मों ही को ठहराया है और इसी पर आख़िरत की सफलता एवं मुक्ति का दारोमदार है।

मतन (Text) में शब्द वसीला नकर: (Negative) नहीं बल्कि मअरिफ़: (Positive) इस्तेमाल हुआ है। मअ्रिफ़ का यह ''अल''व्याकरण की परिभाषा में बुद्धि की स्वीकृति के लिए है। अर्थात् यह इस बात की तरफ़ इशारा करता है कि यहाँ वसीले

से मुराद वही वसीला है जिस की ओर क़ुर्आन के एक पाठक का ज़ेहन जाता है और ज़ाहिर है कि क़ुर्आन का अध्यन करने वालों का ज़ेहन वसीला (सामीप्य का माध्यम) से अच्छे कर्मों ही की तरफ़ मुड़ता है। अत: वसीले से दूसरा कोई माध्यम अथवा साधन मुराद लेने की अरबी ग्रामर के हिसाब से कोई गुन्जाइश नहीं है।

जहाँ तक शब्दकोष का सम्बन्ध है 'लिसानुल अरब' में जो अरबी की सब से बड़ी और प्रमाणित शब्दकोष है, वसीला का अर्थ क़ुर्बत (सामीप्य) ही बताए गए हैं ।

الوسيلة : القربة۔ (لسان العرب ج١١ص ٧٢٧)

"वसीला अर्थात सामीप्य" (लिसानुल अरब जिल्द ११ पृष्ट ७२७)

और प्राचीनतम शब्द कोष "सिहाहे-जौहरी" में है:

وسل فلان الی ربّه وسيلة •••• ای تقرّب اليه بعملٍ۔

(الصحاح للجوهری ج ۵ ص ۱۸۴۱)

"फ़्लाँ ने अपने रब के हुज़ूर वसीला इख्तियार किया अर्थात उस के सम्मुख कर्मों द्वारा सामीप्य (क़ुर्ब) का इच्छित हुआ।"

(अस्सिहाह-लिलजौहरी जिल्द ५ पृष्ट १८४१)

और परहेज़गार पूर्वजों (सलफ़ स्वालिहीन) ने इस आयत में वसीले से क़ुर्बत (सामीप्य) या क़ुर्बत का ज़रीआ ही मुराद लिया है। अत: इब्ने ज़रीर तबरी ने वसीला का अर्थ क़ुर्बत बयान करते हुए, मुजाहिद, अता, अबूवाइल, हसन आदि के कथन इस के समर्थन में नक़ल किये हैं और क़तादा की यह तफ़सीर भी कि:

ای تقربوا اليه بطاعته والعمل بما يرضيه

" अर्थात् उस की आज्ञा का पालन और उस के प्रिय कर्मों के द्वारा उस का सामीप्य प्राप्त करो।"

(तफ़्सीर तबरी जिल्द ४ पृष्ट १४७)

और अल्लामा इब्ने कसीर यही अर्थ बयान करते हुए लिखते हैं:

"यह बात जो (शब्द वसीला की तफ़्सीर में) इन इमामों ने कही है मुफ़स्सिरीन (टीकाकारों) के बीच इस (शब्द के इस अर्थ) के बारे में कोई मतभेद नहीं है।"

(तफ़्सीर इब्ने कसीर जिल्द २ पृष्ट ५२)

इस स्पष्टीकरण के बाद "माध्यमों एवं वसीलों"की इमारत जो बिद्अतियों ने इस आयत को ग़लत अर्थ पहना कर उठा रखी है, आप से आप ढह जाती है। उन्होंने आयत की तावील यह की कि "नबियों और वलियों का वसीला ढूँढो" और फिर हाजतों को पूरा करने के लिए उन को पुकारना और उन से फ़रियाद करना जायज़ क़रार दिया और यह विचार गढ़ लिया कि ख़ुदा जिन नेमतों को प्रदान करता है वह इन्हीं के माध्यम से प्रदान करता है। परिणाम यह कि उन का यह मन गढ़ंत "वसीला" शिर्क का वसीला बन गया और वे उस तौहीद पर क़ायम नहीं रह सके जिस की शिक्षा क़ुर्आन और उस के लाने वाले ने दी थी।

123. जिहाद से मुराद वह जद्दोजहद है जो सत्य धर्म पर दृढ़ता के साथ जमें रहने, उस की दअवत को फैलाने, उस के दुश्मनों का मुक़ाबला करने,उस के कलिमे को बुलन्द करने और उस के आदेशों को लागू करने के लिए की जाए। इस उद्देश्य के लिए अपनी शक्तियों और क्षमताओं को लगा दिया जाए और इस राह में अपने साधनों को झोंक दिया जाए यहाँ तक कि इस मक़सद की ख़ातिर जान की बाज़ी लगा देने से भी पीछे न हटा जाए।

जिहाद अल्लाह की राह में जंग करने को भी कहा जाता है और शान्तिपूर्ण आन्दोलन को भी जब कि इस्लाम की दअवत देने वालों को मुखालफ़तों के तूफ़ान से गुज़रना पड़ता है।

124. अख़िरत का इन्कार करने वाले दुनिया की दौलत को सब कुछ समझ बैठते हैं लेकिन जब कियामत बरपा होगी तो उन्हें महसूस होगा कि असल मसला तो आख़िरत की सफ़लता और उस की मुक्ति का था। इस को नज़रन्दाज़ कर के उन्होंने दुनिया में बहुत ही बड़ी ग़लती की थी। जिस के कारण वे अत्यधिक घाटे में रहे। वे चाहेंगे कि इस पूर्ति की कोई राह निकले किन्तु इस क्षति की पूर्ति की कोई राह भी संभव न होगी। उन की इसी बेबसी की तस्वीर इन शब्दों में खींच ली गई है कि अगर ज़मीन की सारी दौलत और उस के सारे ख़ज़ाने उन के पास हों और उतनी ही दौलत और ख़ज़ाने उन्हें और प्राप्त हो जाएं और वे ये सब कुछ अपने प्राणों के बदले में दण्ड स्वरुप दे कर आख़िरत के अज़ाब से मुक्ति पाना चाहें तो उन से अर्थदण्ड स्वीकार नहीं किया जाएगा। यही बात हदीस में इस तरह इर्शाद हुई है।

يقال للكافر يوم القيامة ارأيت لو كان ملا الأرض ذهبا اكنت تفتدى به فيقول نعم فيقال له قد سئلت أيسر من ذلک فأبيت ۔ (بخارى و مسلم)

"क़ियामत के दिन काफ़िर से कहा जाएगा कि अगर ज़मीन भर सोना तुझे हासिल हो जाए तो क्या तू उसे फ़िदय:(अर्थदंड अथवा प्राणदंड) में देने के लिए तैयार है? वह कहेगा हाँ ज़रुर । उस से कहा जाएगा कि इस से कम की माँग तुझ से की गई थी मगर तूने ने न मानी।"(बुख़ारी, मुस्लिम)

वे चाहेंगे कि आग से बाहर निकल जाऐं लेकिन वे उस से बाहर कभी न निकल सकेंगे उन के लिए क़ायम (स्थिर) रहने वाला अज़ाब होगा।(अल-क़ुर्आन)

37. वे चाहेंगे कि आग से बाहर निकल जाएं लेकिन वे उस से बाहर कभी न निकल सकेंगे [125] उन के लिए क़ायम (स्थिर) रहने वाला अज़ाब होगा।

يُرِيْدُوْنَ اَنْ يَّخْرُجُوْا مِنَ النَّارِ وَمَا هُمْ بِخٰرِجِيْنَ
مِنْهَا ۫ وَلَهُمْ عَذَابٌ مُّقِيْمٌ ﴿٣٧﴾

38. और चोर मर्द हो या औरत [126] दोनों के हाथ काट दो [127] यह उन की कमाई का बदला और अल्लाह की तरफ़ से इबरतनाक (शिक्षाप्रद) सजा है [128] और अल्लाह ग़ालिब और हिकमत वाला है।[129]

وَالسَّارِقُ وَالسَّارِقَةُ فَاقْطَعُوْٓا اَيْدِيَهُمَا جَزَآءًۢ بِمَا كَسَبَا
نَكَالًا مِّنَ اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ﴿٣٨﴾

39. फिर जिस किसी ने जुल्म करने के बाद तौबा कर ली, और अपनी इस्लाह (सुधार) कर ली तो अल्लाह उस की तौबा ज़रुर क़ुबूल करेगा।[130] अल्लाह क्षमा करने वाला, रहम करने वाला है।

فَمَنْ تَابَ مِنْۢ بَعْدِ ظُلْمِهٖ وَاَصْلَحَ فَاِنَّ اللّٰهَ يَتُوْبُ
عَلَيْهِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ﴿٣٩﴾

40. क्या तुम नहीं जानते कि आसमानों और ज़मीन की बादशाहत अल्लाह ही के लिए है। वह जिसे चाहे अज़ाब दे और जिसे चाहे बख़्श दे।[131] अल्लाह हर चीज़ पर क़ादिर (सामर्थ्य प्राप्त) है।

اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ لَهٗ مُلْكُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ ؕ يُعَذِّبُ
مَنْ يَّشَآءُ وَيَغْفِرُ لِمَنْ يَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ﴿٤٠﴾

41. ऐ रसूल । तुम उन लोगों की वजह से ग़मगीन (शोकाकुल) न हो जो कुफ़्र में बड़ी सरगर्मी दिखा रहे हैं [132] चाहे वे उन लोगों में से हों जो ज़बान से तो ईमान लाने का दावा करते हैं लेकिन उन के दिलों ने ईमान क़ुबूल नहीं किया [133] या उन लोगों में से हों जो यहूदी बन गए हैं। ये लोग झूठ के लिए कान लगाने वाले और दूसरों के लिए जो तुम्हारे पास नहीं आए, कान लगाने वाले हैं।[134] वे कलाम (ईशवाणी) को उस का ठीक स्थान निश्चित होने के बावजूद उस के वास्तविक स्थान (अर्थ) से हटा देते हैं।[135] और कहते हैं कि अगर तुम्हें यह हुक्म दिया जाए तो क़ुबूल कर लो और अगर न दिया जाए तो उस से बचो [136] और जिसे अल्लाह ही फ़ितने में डालना चाहे उस के लिए अल्लाह के मुक़ाबले में तुम्हारा कुछ बस नहीं चल सकता।[137] ये वे लोग हैं जिन के दिलों को पाक करना अल्लाह को मन्जूर न हुआ।[138] इन के लिए दुनिया में भी रुस्वाई है। और आख़िरत में भी बहुत बड़ा अज़ाब।

يٰۤاَيُّهَا الرَّسُوْلُ لَا يَحْزُنْكَ الَّذِيْنَ يُسَارِعُوْنَ فِي الْكُفْرِ
مِنَ الَّذِيْنَ قَالُوْٓا اٰمَنَّا بِاَفْوَاهِهِمْ وَلَمْ تُؤْمِنْ قُلُوْبُهُمْ ۛ
وَمِنَ الَّذِيْنَ هَادُوْا ۛ سَمّٰعُوْنَ لِلْكَذِبِ سَمّٰعُوْنَ
لِقَوْمٍ اٰخَرِيْنَ ۙ لَمْ يَاْتُوْكَ ؕ يُحَرِّفُوْنَ الْكَلِمَ مِنْۢ بَعْدِ
مَوَاضِعِهٖ ۚ يَقُوْلُوْنَ اِنْ اُوْتِيْتُمْ هٰذَا فَخُذُوْهُ وَاِنْ
لَّمْ تُؤْتَوْهُ فَاحْذَرُوْا ؕ
وَمَنْ يُّرِدِ اللّٰهُ فِتْنَتَهٗ فَلَنْ تَمْلِكَ لَهٗ مِنَ اللّٰهِ شَيْئًا ؕ
اُولٰٓئِكَ الَّذِيْنَ لَمْ يُرِدِ اللّٰهُ اَنْ يُّطَهِّرَ قُلُوْبَهُمْ ؕ لَهُمْ
فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ ۖۚ وَّلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ﴿٤١﴾

125. अर्थात् वे चाहेंगे कि दोज़ख़ से निकल भागें लेकिन उस बन्दीगृह से बाहर निकलने की कोई सूरत संभव न होगी।

126. इस्लाम की दण्ड संहिता लिंग (Sex) की बुनियाद पर अपराधियों के बीच कोई फ़र्क़ नहीं करता। अपराधी का पुरुष जाति से सम्बन्ध हो या नारी जाति से दोनों दंड के अधिकारी हैं।

127. चोरी का अपराध साबित हो जाने पर सिर्फ़ एक हाथ काट दिया जाएगा अर्थात दाहिना हाथ। यह और इस प्रकार की दूसरी दण्ड संहिता (हुदूद) जो क़ुर्आन में बयान हुई हैं उन्हें लागू करने की माँग किसी एक व्यक्ति से नहीं बल्कि ईमान वालों की सोसाइटी से किया गया है। और इस सूरह के उतरने का समय बताता है कि उस समय किया गया जब कि सत्ता मुसलमानों के हाथ आ गई थी और उन की अपनी न्याय व्यवस्था स्थापित हो गई थीं।

रहा यह प्रश्न कि जिस देश में मुसलमान अपनी न्याय व्यवस्था स्थापित करने के लिए आज़ाद न हों वहाँ इस्लाम की माँग उन से क्या हैं? तो इस का संक्षिप्त उत्तर यह है कि इस्लाम की दण्ड संहिता को लागू करने के सिलसिले में उन की विवशता स्पष्ट है किन्तु इस विवशता का यह मतलब हरगिज़ नहीं हैं कि वे इस्लाम की दण्ड संहिता के अनुमोदन एवं समर्थन से बिल्कुल हाथ खींच लें और आदमियों के अपने रचे हुए क़ानूनों को सही मानते हुए उन का अनुमोदन एवं समर्थन करने लगें। क्यों कि ख़ुदा के क़ानून के मुक़ाबले में इन्सानी क़ानून को सही समझना ईमान के भी विरुद्ध है और हक़ और इन्साफ़ के नायक होने के भी। उन का कर्तव्य यह है कि इस्लामी शरीअत के नायक बन कर इस्लाम की दअवत को लोगों के सामने पेश करें यहाँ तक कि यह दअवती जद्दोजहद किसी और चरण (मरहले) में प्रवेश कर जाए।

128. यह उस सज़ा की हिकमत है जो यहाँ बयान हुई है। चोरी की सज़ा हाथ काटना निश्चय ही एक सख़्त सज़ा है लेकिन यह सख़्त सज़ा इस लिए रखी गई है ताकि अपराधिक मनोवृत्ति के लोगो को इबरत हासिल हो और उन के हौसले टूट जाऐं। चोरी सिर्फ चोरी नहीं होती बल्कि उस के साथ सीना ज़ोरी भी होती है अत: चोरी के साथ बलात्कार और हत्या की वारदातें भी पेश आने लगती हैं। इस लिए इस्लाम ने यह कठोर दंड सुनिश्चित कर के न केवल चोरी बल्कि दूसरे अपराधों की भी समाप्ति की है। वर्तमान स्वरचित क़ानून ने चोरी की हल्की सज़ा निर्धारित कर के इस जुर्म को हल्का साबित करना चाहा है। जब कि चोरी की बहुतेरी वारदातों और उस के साथ ही दूसरे अपराधों की बढ़ती संख्या ने समाज की शान्ति को भंग कर के रख दिया है। क़ानून के विशेषज्ञ अपराधों के फ़लसफ़े बयान कर के हक़ीक़त पर पर्दा डालने की कोशिश करते हैं। उन को चोर पर रहम आता है मगर सोसाइटी पर रहम नहीं आता जिस की शान्ति और व्यवस्था को चोर चैलेन्ज करता है। वे चोर के हाथ कटते देख कर बिलबिला उठते हैं लेकिन चोर के हाथों बेगुनाहों के सर कटते देख कर चींख नहीं उठते। आज इस्लाम की यह दंड संहिता जहाँ कहीं लागू है वहां उस की धाक ऐसी है कि चोरी की घटनाऐं नाम मात्र ही होती हैं और यह वास्तविकता उन तमाम आपत्तियों को समाप्त करने के लिए काफ़ी है जो शरअी क़ानून को वहशियाना एवं बर्बर साबित करने के लिए किए जाते हैं।

129. अल्लाह ग़ालिब (प्रभुत्वशाली) है इस लिए उसी के क़ानून इस योग्य हैं कि उन के वर्चस्व को बरक़रार रखा जाए और उन्हें लागू किया जाए। और वह हकीम है इस लिए उस के क़ानून हिकमत और मसलहत से हरगिज़ खाली नहीं हो सकते। चोरी की सज़ा यद्यपि कठोर है मगर यह मानवता के हितों के विरूद्ध कदापि नहीं बल्कि उस की भलाई ही के लिए है ।

130. अर्थात् तौबा करने और अपने रवैये की इस्लाह (सुधार) करने की सूरत में वह आखिरत की सज़ा से बच जाएगा। स्पष्ट रहे कि क़ानून की पकड़ में आ जाने के बाद तौबा करने से शरीअत की कोई हद (दंड संहिता) निरस्त नहीं होती।

131. अर्थात् सज़ा देने और क्षमा करने का सारा अधिकार अल्लाह ही को है। कोई शक्ति ऐसी नहीं जो उस में हस्तक्षेप कर सके।

132. अर्थात् जो लोग इस बात के लिए एड़ी चोटी का ज़ोर लगा रहे हैं कि इस्लाम सत्ता में न आने पाऐं और न्याय की प्रतीक शरीअत के अनुसार मुक़दमों के फ़ैसले न हों ऐसे लोगों की हरकतों को देख कर एक आहवान कर्ता (दाअी) को स्वभाविक रुप से दुख होता है मगर इस से हिम्मत नहीं हारनी चाहिए।

133. मुराद मुनाफ़िक़ीन (पाखण्डी एवं विश्वासघाती) हैं विशेष रुप से वे जो यहूदियों से साज़ बाज़ रखते थे।

134. यह यहूदी गिरोह का हाल बयान किया जा रहा है कि इन में ऐसे लोग भी हैं जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से आ कर मिलते हैं और ऐसे भी हैं जो आप से आ कर नहीं मिलते । जो लोग आप से आ कर मिलते हैं उन का हाल यह है कि वे सच्चाई की तलाश में नहीं आते बल्कि इस लिए आते हैं कि जो कुछ सुनें उस में झूठ की मिलावट कर के उन लोगों तक पहुँचाऐं जो आप से आ कर नहीं मिले हैं ताकि उन के अन्दर आप (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) से सम्बन्धित घृणा पैदा कर के दूरी उत्पन्न की जा सके । अर्थात् जो यहूदी नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पास आते थे वे एक साज़िशी मन तैयार कर के आते थे।

135. इस की व्याख्या ऊपर नोट 70 में गुज़र चुकी है। यहाँ इस का भावार्थ यह भी है कि जब वे अल्लाह के कलाम में रद्दोबदल करने से बाज़ नहीं रहते तो उन के लिए यह क्या मुश्किल है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम की बातों को सुन कर उन को ग़लत अर्थ का रुप दें।

136. इशारा है यहूदी विद्वानों की ओर जो जन साधारण से कहते हैं कि जो हुक्म हम तुम्हें बताते हैं वह अगर पैग़म्बरे-इस्लाम भी दें तो क़ुबूल करो वरना क़ुबूल न करो।

137. जो लोग जान बूझ कर अपने आप को ग़लत राह पर डाल देते हैं और अपनी आत्मा की आवाज़ को निर्जीव बना लेते हैं उन पर कोई नसीहत असर नहीं करती। ऐसे लोगों को जब अल्लाह आज़माइश में डालता है तो वे उस से सबक़ हासिल करने के बजाए और अधिक बिगाड़ की तरफ़ झुक पड़ते हैं। परिणाम यह कि उन के बुराई, फितने, एवं फ़साद में वृद्धि ही हो जाती है। ऐसे लोगों को सीधी राह पर लाना किसी के बस की बात नहीं होती। अल्लाह तआला का यही वह गुमराही का नियम है जिस को ''अल्लाह ही फितने में डालना चाहे'' कहा गया है।

138. अर्थात् जब वे गुनाहों की गन्दगी से अपने दिलों को अटा पटा रखना चाहते हैं तो अल्लाह तआला क्यों उन को पाक करने लगे ।

ये तुम्हें हकम (निर्णायक) किस तरह बनाते हैं जब कि इन के पास तौरात मौजूद है जिस में अल्लाह का हुक्म मौजूद है फिर भी ये मुँह मोड़ते हैं। वास्तविकता यह है कि ये ईमान ही नहीं रखते। (अल-क़ुर्आन)

42. ये लोग झूठी बातें क़ुबूल करने वाले और हराम माल खाने में बेबाक हैं।[139] अत: अगर ये तुम्हारे पास आऐं तो तुम्हें इख़्तियार है उन के बीच फ़ैसला करो या इन से मुँह फेर लो।[140] अगर मुँह फेर लो तो वह तुम्हारा कुछ बिगाड़ न सकेंगे और अगर फ़ैसला करो तो इन्साफ़ के साथ करो [141] कि अल्लाह इन्साफ़ करने वालों को पसन्द करता है।

سَمّٰعُوْنَ لِلْكَذِبِ اَكّٰلُوْنَ لِلسُّحْتِ ؕ فَاِنْ جَآءُوْكَ فَاحْكُمْ
بَيْنَهُمْ اَوْ اَعْرِضْ عَنْهُمْ ۚ وَاِنْ تُعْرِضْ عَنْهُمْ فَلَنْ يَّضُرُّوْكَ
شَيْـًٔا ؕ وَاِنْ حَكَمْتَ فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ بِالْقِسْطِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ
الْمُقْسِطِيْنَ ﴿۴۲﴾

43. ये तुम्हें हकम (निर्णायक) किस तरह बनाते हैं जब कि इन के पास तौरात मौजूद है जिस में अल्लाह का हुक्म मौजूद है फिर भी ये मुँह मोड़ते हैं।वास्तविकता यह है कि ये ईमान ही नहीं रखते।[142]

وَكَيْفَ يُحَكِّمُوْنَكَ وَعِنْدَهُمُ التَّوْرٰىةُ فِيْهَا حُكْمُ اللّٰهِ
ثُمَّ يَتَوَلَّوْنَ مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ ؕ وَمَآ اُولٰٓئِكَ
بِالْمُؤْمِنِيْنَ ﴿۴۳﴾

44. हम ने तौरात नाज़िल की जिस में हिदायत और रौशनी थी।[143] सारे नबी जो मुस्लिम थे [144] उसी के अनुसार यहूदियों के मामलों का फ़ैसला करते थे एवं उलमा और फ़ुक़हा (धर्मशास्त्री) भी,[145] क्यों कि वे अल्लाह की किताब की सुरक्षा के उत्तरदायी बनाए गए थे और वे उस पर गवाह थे।[146] तो देखो लोगों से न डरो, मुझ से डरो और मेरी आयतों को थोड़ी क़ीमत पर न बेचो।[147] और जो लोग अल्लाह की नाज़िल की हुई शरीअत के अनुसार फैसला न करें, वही काफ़िर हैं।[148]

اِنَّآ اَنْزَلْنَا التَّوْرٰىةَ فِيْهَا هُدًى وَّنُوْرٌ ۚ يَحْكُمُ بِهَا
النَّبِيُّوْنَ الَّذِيْنَ اَسْلَمُوْا لِلَّذِيْنَ هَادُوْا وَالرَّبّٰنِيُّوْنَ
وَالْاَحْبَارُ بِمَا اسْتُحْفِظُوْا مِنْ كِتٰبِ اللّٰهِ وَكَانُوْا
عَلَيْهِ شُهَدَآءَ ۚ فَلَا تَخْشَوُا النَّاسَ وَاخْشَوْنِ وَلَا تَشْتَرُوْا
بِاٰيٰتِيْ ثَمَنًا قَلِيْلًا ؕ وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ
فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْكٰفِرُوْنَ ﴿۴۴﴾

45. और हम ने उन के लिए उस में यह हुक्म लिख दिया था कि जान के बदले जान, आँख के बदले आँख, नाक के बदले नाक, कान के बदले कान, दाँत के बदले दाँत और तमाम ज़ख्मों के लिए किसास (बराबर का बदला) है।[149] फिर जो माफ़ कर दे तो वह उस के लिए कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) है।[150] और जो अल्लाह की उतारी हुई शरीअत के अनुसार फ़ैसला न करें वही ज़ालिम हैं।[151]

وَكَتَبْنَا عَلَيْهِمْ فِيْهَآ اَنَّ النَّفْسَ بِالنَّفْسِ ۙ
وَالْعَيْنَ بِالْعَيْنِ وَالْاَنْفَ بِالْاَنْفِ وَالْاُذُنَ بِالْاُذُنِ
وَالسِّنَّ بِالسِّنِّ ۙ وَالْجُرُوْحَ قِصَاصٌ ؕ فَمَنْ تَصَدَّقَ
بِهٖ فَهُوَ كَفَّارَةٌ لَّهٗ ؕ وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ
فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظّٰلِمُوْنَ ﴿۴۵﴾

139. मतन (Text) में शब्द ''सुह्त''इस्तेमाल हुआ है जिस का मतलब ''हराम की कमाई'' के हैं। अरबी में इस का इस्तेमाल अधिकतर रिश्वत के लिए होता है। यहाँ इशारा विशेष रुप से यहूदियों के जजों की ओर है जो रिश्वत ले कर और झूठी गवाहियों को मान कर हक़ और इन्साफ़ के ख़िलाफ़ फैसले करते थे।

140. मतलब यह कि अगर ये लोग तुम्हारे पास अपने मुक़दमे ले कर आऐं तो तुम्हें अधिकार है कि उन का फैसला करो या इस ज़िम्मेदारी को क़ुबूल करने से इन्कार कर दो।

उस समय मदीना के ईर्द गिर्द जो यहूदियों की बस्तियाँ थीं वे अपना अलग प्रभुत्व क्षेत्र रखती थीं अत: लोगों के पारस्परिक मामलों का फ़ैसला करने की कोई ज़िम्मेदारी मदीना की इस्लामी हुकूमत पर आयद नहीं होती थी लेकिन यहूदी जिन मुक़दमों का फैसला अपने धार्मिक विधान (तौरात) के अनुसार करना चाहते थे उन का फैसला नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम से इस उम्मीद पर कराना चाहते थे कि शायद आप की शरीअत में कोई आसान हुक्म हो।

141. इंसाफ़ के साथ फैसला करने का मतलब जहाँ यह है कि मुकदमा के किसी भी पक्ष के साथ पक्षपात न किया जाए या ज़्यादती न की जाए वहाँ इस का मतलब यह भी है कि न्यायी शरीअत के क़ानून के अनुसार फैसले किए जाऐं।

142. इस आयत में यहूदियों की हरकत पर आशचर्य व्यक्त किया गया है कि वे ऐसे मुक़दमे ले कर आते हैं जिन के सिलसिले में तौरात में स्पष्ट आदेश मौजूद है ताकि आप तौरात के हुक्म के बजाए कोई और निर्णय दें। वे तौरात पर ईमान लाने के दावेदार भी हैं और साथ ही तौरात का हुक्म भी उन्हें मन्जूर नहीं। इसी तरह हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को वे पैग़म्बर भी स्वीकार नहीं करते और साथ ही तौरात को छोड़ कर आप से अपने मुक़दमे का फैसला भी कराना चाहते हैं। उन की ये हरकतें इस बात का काफी सबूत है कि उन का किसी चीज़ पर भी ईमान नहीं।

यहाँ यह बात जो फ़रमाई गई है कि तौरात में अल्लाह का हुक्म मौजूद है तो इस से मुराद दण्ड संहिता है जिस की पुष्टि आगे आयत 45 में की गई है। इस से उन मुकदमों की स्थिति भी मालूम हो जाती है जिस को ले कर यहूदी नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के पास आते थे। अर्थात् ये मुक़दमे दण्ड विधान से सम्बन्धित थे जिन के सिलसिले में तौरात में स्पष्ट आदेश मौजूद हैं मगर वे इस से बच निकलने की राह अपनाना चाहते थे।

143. अर्थात अल्लाह तआला ने हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम पर जो किताब उतारी थी उस में सच्चे दीन की तरफ़ रहनुमाई का सामान भी था और व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन को व्यवस्थित एवं अनुशासित करने तथा उस को हक़ और इन्साफ़ पर चलाने के लिए रौशन शरीअत भी थी। क़ुर्आन के अवतरण के समय असल तौरात का जो हिस्सा यहूदियों के पास मौजूद था उस में यह विशेषता पाई जाती थी और आज भी बाइबिल के संग्रह में जो शुरु की पाँच पुस्तकें ''उत्पत्ति, निर्गमन, लैव्यव्यवस्था,गिनती, और व्यवस्थाविवरण नामक पाई जाती हैं उन में असल तौरात के जो अशं मौजूद हैं-- और क़ुर्आन की कसौटी पर परखने से असल तौरात के हिस्सों की निशानदेही होती है--- उन में अब भी रौशनी की विशेषताऐं मौजूद हैं। क़ुर्आन का इशारा उसी हक़ीक़त की तरफ़ है और इस का यह मतलब हरगिज़ नहीं है कि तौरात के नाम से पाए जाने वाली वर्णित पुस्तकें सारी की सारी अल्लाह की हिदायतों पर आधारित हैं। क्यों कि यहूदियों ने परिवर्तन कर के उन में बहुत सी गुमराह कर देने वाली बातें शामिल कर दी हैं और असल शरीअत पर मनमानी टिप्पणी भी की है।

144. अर्थात बनी इस्राईल में जो नबी भी ख़ुदा की तरफ़ से भेजे गए उन सब का दीन इस्लाम था और वे सब मुस्लिम थे। अपने को यहूदी कहलाने वाले तो ये बनी इस्राईल हैं न कि इन के अन्दर नियुक्त किए जाने वाले नबी।

145. अर्थात सारे नबियों एवं सत्यनिष्ठ उलमा और फ़ुक़हा (धर्मशास्त्री) अल्लाह की शरीअत के अनुसार यहूदियों के मामलों एवं मुक़दमों का फैसला करते थे।

146. मतलब यह कि उन्हें इस बात का उत्तरदायी बनाया गया था कि वे अल्लाह की किताब की इस तरह हिफ़ाज़त करें कि उस में किसी प्रकार का रद्दोबदल न होने पाए और उस को कार्यप्रणाली बना कर उस की सच्चाई की गवाही दें।

147. अर्थात् अल्लाह के आदेशों के पालन और उसे लागू करने में किसी का डर आड़े नहीं आना चाहिए और न किसी प्रकार का लालच। अधिक व्याख्या के लिए देखिए सूरह बक़र:नोट६४।

148. इस आयत में स्पष्ट रुप से उन लोगों को काफिर कहा गया है जो अल्लाह के क़ानून के अनुसार फैसला नहीं करते। यद्यपि कि यह बात यहूदियों की उद्दंडता पर पकड़ करते हुए इर्शाद हुई है लेकिन चूँकि बात उसूली है इस लिए यह हर उस व्यक्ति पर भी लागू होती है जो अल्लाह के क़ानून के विरुद्ध फैसला दे,चाहे उन का सम्बन्ध किसी गिरोह से हो और चाहे उस की गिनती मुसलमानों ही में क्यों न होती हो। क्यों कि अदालत की कुर्सी पर बैठ कर ख़ुदा के क़ानून को रद्द करना उस संविधान (किताब) से खुली बग़ावत है, जिसे कायनात के रचयिता एवं उस के शासक ने उतारा है। रसूल के सहाबी (साथी) हज़रत

हुज़ैफ़ा रज़ियल्लाहु अन्हु से किसी ने पूछा कि क्या ये आयतें जिन में अल्लाह की शरीअत के अनुसार फैसला न करने वालों को काफ़िर, ज़ालिम, और फ़ासिक कहा गया है, बनी इस्राईल के बारे में हैं? उन्होंने तुरन्त जवाब दिया ''कितने अच्छे भाई हैं तुम्हारे लिए बनी इस्राईल कि सब कड़वी बातें उन के लिए हैं और सब मीठी बातें तुम्हारें लिए । नहीं ख़ुदा की क़सम तुम पग पग उन ही के तरीकों पर चलोगे। (तफ़्सीर इब्ने ज़रीर जिल्द ६ पृष्ट १६४)

स्पष्ट रहे कि शरअी क़ानून के ख़िलाफ़ फैसला करने वालों को काफ़िर उस सूरत में ठहराया गया जब कि उन पर शरीअत के आदेश भी स्पष्ट थे और वे उन को लागू करने के सिलसिले में भी स्वतंत्र थे। दूसरे शब्दों में यह उन की उद्दंड मानसिकता थी जिस ने उन्हें शरीअत के क़ानूनों से मुँह मोड़ने पर आमादा कर दिया था। अत: आज जो मुसलमान जान बूझ कर उसी रवैये का सबूत दे रहे हैं वे भी यहूदियों ही के पद चिन्हों पर हैं लेकिन हम उन्हें काफ़िर इस लिए नहीं ठहरा सकते की इस्लाम ने कलिमा पढ़ने वाले मुसलमानों को काफिर गिनने से मना कर दिया है और उन लोगों के मामलों को जिन का व्यवहारिक जीवन इस्लाम और कुफ्र दोनों का मिश्रण होता है, ख़ुदा के हवाले करने की हिदायत की है क्यों कि वही नीयतों एवं दिलों का हाल जानता है और वही इस बात से सूचित (बाख़बर) है कि किस के लिए क्या विवश्ताऐं एवं अड़चनें रही हैं।

149. तौरात में यह हुक्म इस तरह बयान हुआ है।

''परन्तु यदि उस को और कुछ हानि पहुँचे तो प्राण की सन्ती प्राण का, और आँख की सन्ती आँख का,और दाँत की सन्ती दाँत का और हाथ की सन्ती हाथ का,और पाँव की सन्ती पाँव का और दाग की सन्ती दाग का और घाव की सन्ती घाव का और मार की सन्ती मार का दण्ड हो।''

(निर्गम २१:२३,२४,२५)

लेकिन यहूदियों ने इस हुक्म के पालन एवं इसे लागू करने के मामले में ऊँच और नीच का भेद भाव उत्पन्न कर दिया। उन के दो क़बीलों बनी नुज़ैर और बनी क़ुरैज़ा में बनी नुज़ैर उच्च समझे जाते थे। अगर बनी नुज़ैर का कोई व्यक्ति बनी क़ुरैज़ा के किसी व्यक्ति के हाथों मारा जाता तो उसे क़िसास (बदले) में क़त्ल कर दिया जाता लेकिन अगर बनी नुज़ैर का कोई व्यक्ति बनी क़ुरैज़ा के किसी व्यक्ति को क़त्ल कर देता तो उसे क़िसास (बदले) में क़त्ल नहीं किया जा सकता था बल्कि उस की तरफ़ से मक़तूल के उत्तराधिकारियों को निश्चित रुप से ख़ून बहा (नर हत्या-अर्थदंड) स्वीकार करना पड़ता और वह भी आधा।

शरीअत के क़ानून को लागू करने के सिलसिले में उन्होंने यह जो परिवर्तन किए थे उस पर इन आयतों में कड़ी पकड़ की गई है।

क़ुर्आन ने तौरात के हवाले से जो क़ानून बयान किया है वह इस्लाम की दंड संहिता (Islamic Penal Laws) की महत्तवपूर्ण धारा है। तमाम ज़ख़्मों में बराबर का बदला यूँ तो कठोरतम दंड प्रतीत होता है मगर यह न केवल इन्साफ की उचित माँग है बल्कि इस से अपराधियों के दुस्साहस को भी चोट पहुँचती है और सोसाइटी को भी शान्ति मयस्सर आती है। मौजूदा दौर में समानता का नारा तो खूब प्रचलित है किन्तु जब अपराधों के सम्बन्ध में समानता पर आधारित कार्रवाई का समर्थन कीजिए तो समानता के ये नायक नाक भौं सिकोड़ने लगते हैं।

स्पष्ट रहे कि ज़ख्मों का क़िसास (बदला) ऐसी सूरत में लिया जाएगा जबकि उसी मात्रा में ज़ख़्म पहुँचाना संभव हो लेकिन अगर ऐसा करना संभव न हो और ज़्यादती की आशंका हो तो फ़िर ज़ख़्मी करने वाले को अर्थ दण्ड (दियत) अदा करना होगा जो उस ज़ख़्म के लिहाज़ से निश्चित की जाएगी।

150. अर्थात् जो व्यक्ति क़िसास (बदला) माफ़ कर दे उस के लिए यह नेकी गुनाहों का कफ़्फ़ारा बनेगी।

151. ज़ालिम इस लिए कि ख़ुदा के न्यायपूर्ण क़ानून को छोड़ कर उन्होंने मनुष्यों के स्वरचित क़ानूनों के अनुसार फैसला किया जो इन्साफ़ के तक़ाज़ों को पूरा कर ही नहीं सकते।

यहाँ यह बात अच्छी तरह समझ लेनी चाहिए कि फ़ैसला करने का मतलब सिर्फ अदालत की कुर्सी पर बैठ कर मुक़दमों का फैसला करना ही नहीं बल्कि क़ानून रचना और ख़ुद को सब का हाकिम समझ कर हाकिमाना फ़ैसले सादिर करना भी इस के भाव में शामिल है अत: जो व्यक्ति भी शरीअत के क़ानून के विरुद्ध क़ानून रचता है या जो शासक अपने शासकीय अधिकारों को अल्लाह की शरीअत के मुक़ाबले में इस्तेमाल करता है तो वह कुफ़्र ज़ुल्म, और फ़िस्क (अवज्ञा) तीनों का अपराधी होता है चाहे उस के आदेश एवं क़ानून रीति,रिवाज (Customary Law) पर आधारित हों या धार्मिक पुरातन कथाओं (Religious Mythology) तथा कलचर की बुनियादों पर हों या सेक्सूलरिज़्म के सिद्धान्त पर ।

इंजील (पर ईमान लाने) वालों को चाहिए कि वे उसी के अनुसार फ़ैसला करें जो अल्लाह ने उस में उतारा है। और जो अल्लाह के उतारे हुए आदेशानुसार फैसला न करें वही फ़ासिक (अवज्ञाकारी) हैं। (अल-क़ुर्आन)

46. फिर हम ने इन (पैग़म्बरों) के पीछे इन ही के पद चिन्हों पर ईसा इब्ने मरयम को भेजा।[152] तौरात में से जो कुछ उस के सामने मौजूद था वह उस की तस्दीक (पुष्टि) करने वाला था [153] और हम ने उस को इंजील प्रदान की जिस में हिदायत और रौशनी थी और तौरात में से जो कुछ उस के सामने मौजूद था उस की पुष्टि करने वाली थी और मुत्तक़ियों (अल्लाह से डरने वालों) के लिए सरासर हिदायत और नसीहत।

وَقَفَّيْنَا عَلَىٰٓ اٰثَارِهِمْ بِعِيْسَى ابْنِ مَرْيَمَ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ
يَدَيْهِ مِنَ التَّوْرٰىةِ ۪ وَاٰتَيْنٰهُ الْاِنْجِيْلَ فِيْهِ هُدًى وَّنُوْرٌ ۙ وَّ
مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ التَّوْرٰىةِ وَهُدًى وَّمَوْعِظَةً
لِّلْمُتَّقِيْنَ ﴿٤٦﴾

47. इंजील (पर ईमान लाने) वालों को चाहिए कि वे उसी के अनुसार फ़ैसला करें जो अल्लाह ने उस में उतारा है।[154] और जो अल्लाह के उतारे हुए आदेशानुसार फैसला न करें वही फ़ासिक (अवज्ञाकारी) हैं।

وَلْيَحْكُمْ اَهْلُ الْاِنْجِيْلِ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ فِيْهِ ۭ وَمَنْ لَّمْ يَحْكُمْ بِمَآ
اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُولٰۗىِٕكَ هُمُ الْفٰسِقُوْنَ ﴿٤٧﴾

48. और (ऐ पैग़म्बर) हम ने तुम्हारी तरफ़ यह किताब भेजी जो हक़ ले कर आई है। और (पिछली) किताबों [155] में से जो कुछ उस के सामने मौजूद है उस की पुष्टि करने वाली और उस की संरक्षक है।[156] अतः तुम ख़ुदा की उतारी हुई शरीअत के अनुसार उन के बीच फैसला करो और जो हक़ तुम्हारे पास आया है उसे छोड़ कर उन की इच्छाओं की पैरवी न करो।[157] हम ने तुम में से हर एक (गिरोह) के लिए एक शरीअत (धर्मविधान) और एक मिन्हाज (कार्य प्रणाली) ठहरा दी।[158] अगर अल्लाह चाहता तो तुम सब को एक उम्मत बना देता [159] लेकिन उस ने चाहा कि जो कुछ उस ने तुम को प्रदान किया है उस में तुम्हारी आज़माइश करे। अतः भलाई के कामों में एक दूसरे से आगे बढ़ने की कोशिश करो।[160] तुम सब को अल्लाह ही की तरफ़ लौटना है, फिर वह तुम्हें बतलाएगा कि जिन बातों में तुम मतभेद कर रहे हो उन की असल वास्तविकता क्या थी।[161]

وَاَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ الْكِتٰبَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِّمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ
الْكِتٰبِ وَمُهَيْمِنًا عَلَيْهِ فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ
وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَاۗءَهُمْ عَمَّا جَاۗءَكَ مِنَ الْحَقِّ ۭ لِكُلٍّ جَعَلْنَا
مِنْكُمْ شِرْعَةً وَّمِنْهَاجًا ۭ وَلَوْ شَاۗءَ اللّٰهُ لَجَعَلَكُمْ اُمَّةً
وَّاحِدَةً وَّلٰكِنْ لِّيَبْلُوَكُمْ فِيْ مَآ اٰتٰىكُمْ فَاسْتَبِقُوا
الْخَيْرٰتِ ۭ اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيْعًا
فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ فِيْهِ تَخْتَلِفُوْنَ ﴿٤٨﴾

152. अर्थात उन नबियों के पद् चिन्हों पर जो बनी इस्राईल में नियुक्त हुए ईसा इब्ने मरयम को भेजा। हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम की नियुक्ति हज़रत मूसा अलैहिस्सलाम के लगभग डेढ़ हज़ार साल बाद हुई थी।

153. हज़रत ईसा ने तौरात की पुष्टि की थी। इन्जील में है:

''यह न समझो कि मैं व्यवस्था या भविष्यद्वक्ताओं की पुस्तकों को लोप करने आया हूँ, लोप करने नहीं परन्तु पूरा करने आया हूँ क्यों कि मैं तुम से सच कहता हूँ कि जब तक आकाश और पृथ्वी टल न जाएं तब तक व्यवस्था से एक मात्र या एक बिन्दु भी बिना पूरा हुए नहीं टलेगा।''(मत्ती ५:१७,१८)

154. मतलब यह है कि अल्लाह तआला ने इन्जील को इस लिए उतारा था कि लोग अपने जीवन सम्बन्धी मामलों में इसे फैसले की बुनियाद बनाएं और इन्जील वाले अगर इन्जील के अनुसार फैसला करते तो वे ज़रुर क़ुर्आन को पाते क्यों कि आने वाले पैग़म्बर की जो ख़बर इन्जील में दी गई है क़ुर्आन से उस की पुष्टि होती है एवं यदि ख़ुदा की वाणी को इन्जील में पहचाना जा सकता है तो क़ुर्आन में उस से कहीं अधिक पहचाना जा सकता है। क्यों कि दोनों एक ही स्रोत से निकली हुए दो धाराऐं हैं।

155. मुराद तौरात है।

156. क़ुर्आन के तौरात का संरक्षक होने का मतलब यह है कि तौरात की असल शिक्षाओं को क़ुर्आन ने अपने अन्दर समेट लिया है और वह परिवर्तित तौरात के लिए कसौटी है जिस पर परख कर यह मालूम किया जा सकता है कि कौन सी बातें असल तौरात की हैं और कौन सी बातें यहूद की मन गढ़ंत।

157. अर्थात् अहले किताब ने दीन में जो मतभेद पैदा कर दिए हैं उन के लिए यह किताब (क़ुर्आन) निर्णायक की हैसियत रखती है। इस में अल्लाह का दीन उन तमाम मिलावटों एवं परिवर्तनों से पाक कर के जो अहले किताब ने उस में की थी अपनी असल शक्ल में पेश किया गया है। अत:जीवन के हर मामलों एवं मसलों में यही किताब मेयारे-हक़ (सही कसौटी) है और तमाम झगड़ों एवं मुक़दमों में इसी को फैसले की बुनियाद बनाना चाहिए।

158. शरीअत अर्थात फ़राइज़ (अनिवार्य कर्तव्यों) और आदेशों एवं क़ानून और मिन्हाज (कार्य प्रणाली)। मतलब इन फ़राइज़ को अदा करने के तौर तरीक़े तथा इन आदेशों एवं क़ानूनों का पालन करने एवं लागू करने की शक्लें हैं।

स्पष्ट रहे कि जहाँ शरीअत का शब्द अकेले इस्तेमाल किया जाए वहाँ यह दोनों सूरतों पर लागू होता है।

विभिन्न उम्मतों के लिए अल्लाह तआला ने अलग अलग शरीअतों और अमल की अलग अलग राहें निश्चित कर दी थीं जो परिस्थितियों का तक़ाज़ा था। लेकिन यह भिन्नता असल दीन की भिन्नता नहीं थी बल्कि तौर तरीक़ों की भिन्नता थी जहाँ तक असल दीन का सम्बन्ध है वह तमाम उम्मतों के लिए एक ही रहा है जैसे तौहीद का अक़ीदा (एकेश्वरवाद), आख़िरत, रिसालत (Prophethood) एक अल्लाह की इबादत एवं आज्ञापालन और उस के सम्मुख उत्तर देने की धारणा। नफ़्स को पाक करने और नैतिक एवं व्यवहारिक पवित्रता के उसूल आदि। इस लिए शरीअतों (संविधानों) एवं कार्य प्रणालियों के फ़र्क़ को दीन का फ़र्क़ समझना सही नहीं है। इस को इस मिसाल से समझा जा सकता है कि तमाम नबियों ने एक अल्लाह ही की इबादत करने का हुक्म दिया था लेकिन जहाँ उस के प्रारुप और उस की तफ़सील का मामला है, वे भिन्न रही हैं। जैसे क़ुर्बानी, कि उस के अल्लाह ही के लिए ख़ास होने के बारे में कोई मतभेद एवं फ़र्क़ नहीं। रही यह तफ़सील कि यह कब कब वाजिब होती है और इस के लिए किस तरह के जानवर चाहिए हैं और उन को ज़ब्ह करने के बाद क्या किया जाए। उसी तरह नमाज़ के आदाब जैसे क़िबला (दिशा) आदि का निर्धारण, तो इन बातों में परिस्थितियों के लिहाज़ से फ़र्क़ रहा है।

159. अगर अल्लाह चाहता तो सब को एक दीन पर चलने के लिए मज़बूर कर देता लेकिन यह बात उस की योजना के विरुद्ध होती जिस के तहत उस ने इन्सानों को पैदा किया है अर्थात् यह बात कि इन्सान की आज़माइश हो। और इस के लिए आवश्यक है कि इम्तिहान के अवसर भी पैदा कर दिया जाए। शरीअतों की यह भिन्नता इम्तिहान के अवसर पैदा कर देती है। जो लोग दीन के ज़ाहिरी तौर तरीक़ों के तअस्सुब (विद्वेष) में गिरफ़्तार होते हैं वे दीन की असल हक़ीक़त को समझ नहीं पाते और ख़ुदा की हिदायत जब उन के सामने आती है तो वह उस से मुँह मोड़ लेते हैं। इस के विपरीत जो लोग सत्यप्रिय होते हैं उन की निगाह असल दीन पर होती है और ख़ुदा की हिदायत जिस रुप में भी उन के सामने आती है वे उस की तरफ़ लपकते हैं। ऐसे ही लोग थे जिन्होंने क़ुर्आन की हिदायत क़ुबूल की।

160. अर्थात् अगर ये लोग धार्मिक बहसों में उलझना चाहते हैं तो इन्हें इन के हाल पर छोड़ दो और तुम नेकी की राह में दूसरों से आगे बढ़ो।

161. अर्थात् आख़िरी फ़ैसला अल्लाह ही की अदालत में होगा और उस समय लोगों को मालूम होगा कि जो धार्मिक बहसें उन्हों ने खड़ी कर दी थीं उन की वास्तविकता क्या थी।

49. और (ऐ पैग़म्बर !) हम ने तुम्हें हुक्म दिया कि जो कुछ अल्लाह ने नाज़िल फ़रमाया है उस के अनुसार इन लोगों के बीच फ़ैसला करो और इन की इच्छाओं की पैरवी न करो एवं होशियार रहो कि अल्लाह ने जो कुछ नाज़िल किया है उस के किसी हुक्म से वे तुम्हें विमुख न करें।[162] फिर अगर ये मुँह मोड़े तो जान लो कि अल्लाह ने इरादा कर लिया है कि इन को इन के कुछ गुनाहों की सज़ा दे और वास्तविकता यह है कि इन लोगों में से बहुतेरे नाफ़रमान हैं।

وَاَنِ احۡكُمۡ بَيۡنَهُمۡ بِمَاۤ اَنۡزَلَ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعۡ اَهۡوَآءَهُمۡ
وَاحۡذَرۡهُمۡ اَنۡ يَّفۡتِنُوۡكَ عَنۡ بَعۡضِ مَاۤ اَنۡزَلَ اللّٰهُ
اِلَيۡكَ ؕ فَاِنۡ تَوَلَّوۡا فَاعۡلَمۡ اَنَّمَا يُرِيۡدُ اللّٰهُ اَنۡ يُّصِيۡبَهُمۡ
بِبَعۡضِ ذُنُوۡبِهِمۡ ؕ وَاِنَّ كَثِيۡرًا مِّنَ النَّاسِ
لَفٰسِقُوۡنَ ﴿۴۹﴾

50. फिर क्या ये लोग जाहिलिय्यत (अज्ञान) का फैसला चाहते हैं ?[163] जो लोग यक़ीन रखने वाले हैं उन के लिए अल्लाह से बेहतर फ़ैसला किस का हो सकता है?

اَفَحُكۡمَ الۡجَاهِلِيَّةِ يَبۡغُوۡنَ ؕ وَمَنۡ اَحۡسَنُ مِنَ اللّٰهِ
حُكۡمًا لِّقَوۡمٍ يُّوۡقِنُوۡنَ ﴿۵۰﴾

51. ऐ ईमान वालों ! यहूदियों और ईसाईयों को अपना दोस्त न बनाओ। वे आपस में एक दूसरे के दोस्त हैं और तुम में से जो व्यक्ति इन को दोस्त बनाएगा तो उस की गिनती उन ही में होगी।[164] अल्लाह उन लोगों को राह नहीं दिखाता जो ज़ुल्म करने वाले हैं।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا لَا تَتَّخِذُوا الۡيَهُوۡدَ وَالنَّصٰرٰۤى اَوۡلِيَآءَ ؔۘ
بَعۡضُهُمۡ اَوۡلِيَآءُ بَعۡضٍ ؕ وَمَنۡ يَّتَوَلَّهُمۡ مِّنۡكُمۡ فَاِنَّهٗ مِنۡهُمۡ ؕ
اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهۡدِى الۡقَوۡمَ الظّٰلِمِيۡنَ ﴿۵۱﴾

52. तुम देखते हो कि जिन के दिलों में रोग है [165] वे उन ही के बीच दौड़ धूप करते हैं। कहते हैं कि हमें भय है कि हम किसी मुसीबत में फ़ँस न जाऐं।[166] मगर आश्चर्य नहीं कि अल्लाह फ़त्ह या अपनी तरफ़ से कोई और बात ज़ाहिर फ़रमा दे और उन्हें उस बात पर जिस को वे अपने दिलों में छिपाए हैं लज्जित होना पड़े।[167]

فَتَرَى الَّذِيۡنَ فِىۡ قُلُوۡبِهِمۡ مَّرَضٌ يُّسَارِعُوۡنَ فِيۡهِمۡ
يَقُوۡلُوۡنَ نَخۡشٰٓى اَنۡ تُصِيۡبَنَا دَآئِرَةٌ ؕ فَعَسَى اللّٰهُ اَنۡ يَّاۡتِىَ
بِالۡفَتۡحِ اَوۡ اَمۡرٍ مِّنۡ عِنۡدِهٖ فَيُصۡبِحُوۡا عَلٰى مَاۤ اَسَرُّوۡا
فِىۡۤ اَنۡفُسِهِمۡ نٰدِمِيۡنَ ﴿۵۲﴾ؕ

53. उस समय ईमान वाले कहेंगे कि क्या ये वही लोग हैं जो अल्लाह की कड़ी से कड़ी क़सम खा कर कहते थे कि हम तुम्हारे साथ हैं---उन के सब कर्म अकारथ गए [168] और वे तबाह हो कर रह गए।

وَيَقُوۡلُ الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡۤا اَهٰٓؤُلَاۤءِ الَّذِيۡنَ اَقۡسَمُوۡا بِاللّٰهِ
جَهۡدَ اَيۡمَانِهِمۡ ۙ
اِنَّهُمۡ لَمَعَكُمۡ ؕ حَبِطَتۡ اَعۡمَالُهُمۡ فَاَصۡبَحُوۡا خٰسِرِيۡنَ ﴿۵۳﴾

162. यह अतिरिक्त चेतावनी है कि विरोधी शक्तियाँ तुम्हें अल्लाह की किताब से विमुख करने के लिए जो ज़ोर लगा रही हैं और तुम्हारे ख़िलाफ़ जो साज़िशें कर रही हैं उन से चौकन्ना रहो।

अफ़सोस है कि इस चेतावनी के बावजूद मुसलमानों ने पश्चिमी क़ानून के फ़लसफ़े और बे दीन शासन प्रणाली से प्रभावित हो कर शरीअत के क़ानून और इस्लामी शासन प्रणाली को त्याग दिया है। और जहाँ उन्हें बिना किसी साझे के सत्ता प्राप्त नहीं हैं वहीं वे ग़ैर इस्लामी क़ानूनों एवं आदेशों से अप्रसन्नता एवं विमुख़ता प्रकट करने के बजाए उन का अनुमोदन एवं समर्थन करने लगते हैं । यह परिस्थिति जैसा कि इन आयतों से जाहिर हो रही हैं न केवल हक़ की शहादत (गवाही) के विरुद्ध है बल्कि असल ईमान ही के लिए घातक है।

163. जाहिलिय्यत (अज्ञान) की परिभाषा इस्लाम के विपरीत इस्तेमाल होती है और यहाँ जाहिलिय्यत के फैसले से मुराद वे आदेश, क़ानून एवं रीतियाँ हैं जिसे अल्लाह की शरीअत के मुक़ाबले में लोगों ने प्रचलित कर रखी हैं। इन को जाहिलिय्यत की व्यंजना देने का कारण यह है कि ऊपर ऊपर चाहे इन में सोसाइटी का लाभ नज़र आता हो मगर वह वास्तविक ज्ञान पर आधारित नहीं है बल्कि अज्ञानता एवं व्यर्थ की भावुकता पर आधारित है।

यह जाहिलिय्यत उस ज़माने के साथ ख़ास नहीं जो इस्लाम से पहले थी बल्कि उस के बाद के युगों में भी रही है और आज के वैज्ञानिक युग में भी इस का अन्धकार पूरी तरह छाया हुआ है। अल्लामा इब्ने कसीर अपने ज़माने (चौदहवीं सदी ईसवी) की जाहिलिय्यत की मिसाल देते हुए लिख़ते हैं:

''और जिस तरह तातारी,कि अपने राजनीतिक शासकीय आदेशों द्वारा फ़ैसला करते हैं जो उन के बादशाह चंगेज़ खाँ की हिदायत से लिए गए हैं और जिन को उस ने इल्यासिक के नाम से आविष्कार किया था। यह दरअसल उस किताब का नाम है जो आदेशों का संग्रह है और जिन को उस ने विभिन्न शरीअतों (संविधानों) जैसे यहूदियत, ईसाईयत और दीन इस्लाम आदि से ग्रहण किया था। और उस में बहुतेरे आदेश ऐसे हैं जो ख़ालिस उस की राय और इच्छाओं पर आधारित हैं। इस तरह यह संग्रह एक स्वरचित संविधान (शरीअत) बन गया है जिस का पालन किया जाता है और इसे अल्लाह की किताब और सुन्नत अर्थात् रसुलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम के आदेश और फ़ैसलों पर प्रधानता दी जाती है। तो जो कोई ऐसा करे वह काफ़िर गर्दन उड़ा देने योग्य है जब तक कि वह अल्लाह और उस के रसूल के फैसले की तरफ़ पलट न आए और किसी भी मामले में चाहे वह छोटा हो या बड़ा, उस को छोड़ कर कोई फ़ैसला न करे।''(तफ़्सीर इब्ने कसीर जिल्द २ पृष्ट ६७)

164. मुसलमानों में कुछ लोग ऐसे भी थे जो अपने ईमान में सच्चे न थे इस लिए वे अपने व्यक्तिगत लाभों की खातिर यहूदियों से मित्रता का सम्बन्ध रखते थे।''जब कि इस से इस के पहले ही मना किया जा चुका था।''(सूरह आले इमरान आयत २८) यहाँ फिर उस की ताकीद करते हुए सावधान कर दिया गया है कि ईमान और इस्लाम दुश्मनों से दोस्ती दोनों चीज़ें जमा नहीं हो सकतीं अत: जो लोग उन की तरफ़ पेंगें बढ़ाऐंगे उन की गिनती उन ही में होगी अर्थात् वे उन ही में समझे जाऐंगे।

स्पष्ट रहे कि यहूदियों और ईसाईयों एवं काफिरों से दोस्ती की जो मनाही की गई है वह एक तो इस अर्थ में है कि उन के साथ हार्दिक लगाव का सम्बन्ध न हो क्यों कि ख़ुदा के बाग़ियों और रसूल के विरोधियों के साथ हार्दिक लगाव ईमान के विपरीत है । दूसरे इस अर्थ में कि आदमी इस्लाम और मुसलमानों के दीनी और सियासी नीतियों एवं हितों को नज़रंदाज़ कर के काफ़िरों के किसी गिरोह या उन के लोगों के साथ, स्वार्थ के कारण या अवैध हितों के कारण उन से दोस्ती न गाँठ लें। इन आयतों के उतरने के समय की राजनीतिक परिस्थितियाँ इस बात की माँग करती थीं कि मुसलमान ग़ैर इस्लामी तत्वों के साथ ताल मेल पैदा करने में सावधान रहें ताकि उन पर जंगी राज़ ज़ाहिर न होने पाऐं। एवं अगर उन के किसी गिरोह के ख़िलाफ़ कोई कार्रवाई करनी पड़ती है तो इस में किसी के लिए उस की ''व्यक्तिगत मित्रता'' बाधक न हो बल्कि वहाँ उन तमाम मैत्रिक सम्बन्धो से ऊपर उठ कर ख़ुदा और उस के रसूल से वफ़ादारी का सबूत दें।

रही साधारण परिस्थितियों में ग़ैर मुस्लिमों के साथ इन्सानी दोस्ती तो इस की मनाही नहीं की गई है।(अधिक व्याख्या के लिए देखिए सूरह आले-इमरान नोट ४१)

165. अर्थात् निफ़ाक़ (विश्वासघात) का रोग।

166. मुनाफ़िक़ यह भय महसूस करते थे कि अगर आख़िरी जीत इस्लाम विरोधियों की हुई तो हमारा कोई भविष्य न होगा इस लिए वे खुल कर और एकाग्रचित हो कर इस्लाम का साथ नही दे रहे थे। उन के नज़दीक मसलहत इस में थी कि वे मुसलमानों की जमाअत में भी रहें और इस्लाम विरोधी समूहों से मेल जोल भी रखें।

167. अर्थात् मुसलमानों को अन्तिम विजय प्रदान करे

या इस से पहले कोई ऐसी घटना या ऐसी बात ज़ाहिर करे कि मुनाफ़िक़ों (पाखण्डियों) के लिए रुस्वाई का कारण हो।

168. आमाल (कर्मों) के क़ुबूल होने का दारोमदार ईमान में सच्चे होने पर है। कपटता (मुनाफ़िक़त) के साथ दीनदारी का जो प्रदर्शन किया गया हो वह अल्लाह के नज़दीक बिलकुल बेमुल्य है अत: ऐसे लोगों के वे तमाम आमाल जिन पर दीनदारी का नुमाइशी लेबल लगा हुआ हो बिलकुल अकारथ जाने वाले हैं।

❍ ❍ ❍ ❍ ❍ ❍

तुम्हारा दोस्त तो वास्तव में अल्लाह है, उस का रसूल है और वे ईमान वाले हैं जो नमाज़ क़ायम करते हैं, ज़कात देते हैं और अल्लाह के आगे झुके हुए हैं।(अल-क़ुर्आन)

54. ऐ ईमान वालो !तुम में से जो कोई दीन से फिर जाएगा तो (वह अल्लाह का कुछ न बिगाड़ सकेगा) अल्लाह ऐसे लोगों को ले आएगा जिन से अल्लाह मुहब्बत रखता होगा और जो अल्लाह से मुहब्बत रखते होंगे ।ईमान वालों के हक़ में नर्म और काफ़िरों के मुक़ाबले में सख़्त होंगे ।अल्लाह की राह में जिहाद करेंगे और किसी भर्त्सना करने वाले की भर्त्सना से नहीं डरेंगे।[169] यह अल्लाह का फ़ज़्ल (उदार अनुग्रह) है जिस को चाहे प्रदान करे। और अल्लाह बड़ी वुसअत (विस्तार) रखने वाला [170] और सब कुछ जानने वाला है।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا مَنْ يَّرْتَدَّ مِنْكُمْ عَنْ دِيْنِهٖ فَسَوْفَ يَاْتِى
اللّٰهُ بِقَوْمٍ يُّحِبُّهُمْ وَيُحِبُّوْنَهٗۤ ۙ اَذِلَّةٍ عَلَى الْمُؤْمِنِيْنَ اَعِزَّةٍ
عَلَى الْكٰفِرِيْنَ ۫ يُجَاهِدُوْنَ فِىْ سَبِيْلِ اللّٰهِ وَلَا يَخَافُوْنَ
لَوْمَةَ لَاۤئِمٍ ؕ ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْتِيْهِ مَنْ يَّشَآءُ ؕ وَاللّٰهُ
وَاسِعٌ عَلِيْمٌ ﴿٥٤﴾

55. तुम्हारा दोस्त तो वास्तव में अल्लाह है, उस का रसूल है और वे ईमान वाले हैं [171] जो नमाज़ क़ायम करते हैं, ज़कात देते हैं और अल्लाह के आगे झुके हुए हैं।[172]

اِنَّمَا وَلِيُّكُمُ اللّٰهُ وَرَسُوْلُهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوا الَّذِيْنَ يُقِيْمُوْنَ
الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُوْنَ الزَّكٰوةَ وَهُمْ رٰكِعُوْنَ ﴿٥٥﴾

56. और जो अल्लाह, उस के रसूल और ईमान वालों को दोस्त बना ले तो (वह अल्लाह का गिरोह है और) अल्लाह ही का गिरोह है जो ग़ालिब (विजयी) हो कर रहेगा।

وَمَنْ يَّتَوَلَّ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَالَّذِيْنَ اٰمَنُوْا فَاِنَّ حِزْبَ
اللّٰهِ هُمُ الْغٰلِبُوْنَ ﴿٥٦﴾ ع

57. ऐ ईमान वालो ! जिन लोगों को तुम से पहले किताब दी गई थी उन में से जिन्होंने तुम्हारे दीन को हँसी खेल बना रखा है उन को तथा दूसरे काफ़िरों को अपना दोस्त न बनाओ।[173] और अल्लाह से डरो अगर तुम मोमिन हो।

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَتَّخِذُوا الَّذِيْنَ اتَّخَذُوْا دِيْنَكُمْ
هُزُوًا وَّلَعِبًا مِّنَ الَّذِيْنَ اُوْتُوا الْكِتٰبَ مِنْ قَبْلِكُمْ
وَالْكُفَّارَ اَوْلِيَآءَ ۚ وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ﴿٥٧﴾

58. जब तुम नमाज़ के लिए पुकारते हो तो ये उसे मज़ाक़ और ख़ेल बना लेते हैं। यह इस लिए कि ये लोग बेअक़्ल हैं।[174]

وَاِذَا نَادَيْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ اتَّخَذُوْهَا
هُزُوًا وَّلَعِبًا ؕ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَعْقِلُوْنَ ﴿٥٨﴾

59. कहो ऐ अहले-किताब ! तुम्हारे हम पर क्रुद्ध होने का कारण इस के सिवा और क्या है कि हम अल्लाह पर ईमान लाए हैं और जो हिदायत हमारी तरफ़ भेजी गई और जो इस से पहले नाज़िल हुई थी उस पर भी ईमान रखते हैं। और यह कि तुम में से बहुतेरे लोग फ़ासिक़ (अवज्ञाकारी) हैं।[175]

قُلْ يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ هَلْ تَنْقِمُوْنَ مِنَّاۤ اِلَّاۤ اَنْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ
وَمَاۤ اُنْزِلَ اِلَيْنَا وَمَاۤ اُنْزِلَ مِنْ قَبْلُ ۙ وَاَنَّ اَكْثَرَكُمْ
فٰسِقُوْنَ ﴿٥٩﴾

169. यहाँ यह स्पष्ट करना अभिप्रेत है कि दीन की ख़ातिर संघर्ष करने के लिए मसलहत परस्त, स्वार्थी एवं मुनाफ़िक़ क़िस्म के लोग बिल्कुल बेकार हैं। इस बुलन्द मक़सद के लिए जिन विशेषताओं एवं जिन गुणों के लोग दरकार हैं वे ये और ये हैं।

मुनाफ़िक़ों को दुनिया से मुहब्बत थी। जाहिर है ऐसे लोगों को अपनी दुनिया बनाने से फ़ुर्सत ही कहाँ हो सकती है कि वे दीन की सेवा करने लगें। दीन के दुशमनों के लिए वे अपने दिल में नम्र भाव रखते थे फिर उन में यह साहस कहाँ हो सकता है कि जंग के मैदान में उन के विरुद्ध मौर्चा लें। वे अपनी तारीफ़ के इच्छुक थे इस लिए उन में बेलाग हक़ परस्ती कहाँ हो सकती है कि हक़ और इन्साफ़ की राह अपनाने पर दुनिया भर की भर्त्सना की परवाह न करें।

आयत में सकारात्मक रुप से जो गुण एवं विशेषताऐं बयान हुई हैं उन में सत्यमार्ग के सिपाहियों के लिए प्रशिक्षण (तरबियत) का भरपूर सामान है।

170. इशारा है इस बात की तरफ़ कि वह अपने उदार अनुग्रह (फ़ज़्ल) लुटाने में तंगी नहीं बरतता बल्कि अपने बन्दों के साथ वुस्अत (विस्तार एवं विशाल ह्रदय) के साथ मामला करता है।

171. अर्थात् तुम्हारे दोस्ती के योग्य वे लोग नहीं हैं जो ख़ुदा के वफ़ादार नहीं हैं बल्कि इस का अधिकारी अल्लाह, उस का रसूल, और उसके वफ़ादार बन्दे हैं उन को तुम अपना विश्वासपात्र (मित्र) बनाओ।

172. ''अल्लाह के आगे झुके हुए है'' यह नमाज़ और ज़कात दोनों की रुह (Spirit) बयान हुई है,कि ये सच्चे ईमान वाले इस तरह नमाज़ का आयोजन करते हैं कि उन के दिल में ख़ुशूअ् (विनम्रता एवं भय) का भाव होता है और ज़कात अदा करते हैं तो उस समय भी उन के दिल ख़ुदा के हुज़ूर झुके हुए होते हैं। लेकिन मुनाफ़िक़ों (कपटियों एवं पाखण्डियों) का हाल इस के विपरीत होता है। उन की नमाज़ें और उन की ज़कात सब दिखावे के लिए होते हैं और जब दिल झुका हुआ न हो तो सर झुकाने का क्या लाभ?

173. अर्थात् ऐसे लोगों को दोस्त बनाना जो इस्लाम का मज़ाक़ उड़ाते हैं, ईमानी ग़ैरत के विरुद्ध है।

174. मतलब,अज़ान का मज़ाक़ उड़ाते हैं।

अज़ान ईश-भक्ति की निशानियों में से है और इस बात का आहवान है कि अल्लाह की इबादत के लिए आओ। ऐसी चीज़ को खेल तमाशा बना लेना किसी बुद्धिजीवी का काम नहीं हो सकता । यह हरकत वही कर सकता है जिस की बुद्धि भ्रष्ट हो गई हो ।

175. अर्थात् तुम मात्र इस बात पर हम पर गुस्सा उतार रहे हो कि हम हर उस सत्यता पर ईमान लाए हैं जो अल्लाह की तरफ़ से उतारी गई है चाहे वे पिछली किताबें हों या क़ुर्आन। इस के सिवा अगर हमारा कोई दोष है तो बतलाओ। और अगर यही बात तुम को खटकती है तो इस का मतलब इस के सिवा कुछ नहीं कि तुम अल्लाह की नाफ़रमानी पर तुल गए हो वरना कोई ईमान वाला सच्चाई का रास्ता अपनाने वालों के साथ वह रवैया नहीं अपना सकता।

60. कहो क्या मैं तुम्हें बताऊँ कि अल्लाह के नज़दीक इस से भी बदतर अन्जाम किस का हुआ ?[176] वे जिन पर अल्लाह ने लानत की,[177] जिन पर उस का प्रकोप हुआ[178]और जिन में से उस ने बन्दर और सुअर बनाए[179] और वे जिन्हों ने तागूत की परस्तिश की।[180] यही लोग हैं जिन का दर्जा सब से बदतर है और वे सीधी राह से बिल्कुल भटके हुए हैं।

قُلْ هَلْ اُنَبِّئُكُمْ بِشَرٍّ مِّنْ ذٰلِكَ مَثُوْبَةً عِنْدَ اللّٰهِ ۭ مَنْ لَّعَنَهُ
اللّٰهُ وَغَضِبَ عَلَيْهِ وَجَعَلَ مِنْهُمُ الْقِرَدَةَ وَالْخَنَازِيْرَ
وَعَبَدَ الطَّاغُوْتَ ۭ اُولٰۗىِٕكَ شَرٌّ مَّكَانًا وَّاَضَلُّ عَنْ سَوَاۗءِ
السَّبِيْلِ ۝٦٠

61. जब यह लोग तुम्हारे पास आते हैं तो कहते हैं हम ईमान लाए, हालाँकि वे कुफ्र लिए हुए आए थे और कुफ्र लिए ही वापस गए। और जो कुछ ये अपने दिलों में छिपा रहे हैं अल्लाह उसे ख़ूब जानता है।

وَاِذَا جَاۗءُوْكُمْ قَالُوْٓا اٰمَنَّا وَقَدْ دَّخَلُوْا بِالْكُفْرِ وَهُمْ
قَدْ خَرَجُوْا بِهٖ ۭ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا كَانُوْا يَكْتُمُوْنَ ۝٦١

62. तुम देखोगे कि इन में से बहुतेरे लोग गुनाह, ज़्यादती और हराम माल खाने में तेज़गाम (द्रुतगामी) हैं। बहुत बुरे काम हैं जो ये कर रहे हैं।

وَتَرٰى كَثِيْرًا مِّنْهُمْ يُسَارِعُوْنَ فِي الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ
وَاَكْلِهِمُ السُّحْتَ ۭ لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَعْمَلُوْنَ ۝٦٢

63. इन के उलमा (धर्मज्ञाता)और फ़ुक़हा (संत एवं धर्मशात्री) इन को गुनाह की बात करने और हराम खाने से रोकते क्यों नहीं ?[181]बहुत बुरी हरकत है जो यह कर रहे हैं।

لَوْلَا يَنْهٰىهُمُ الرَّبّٰنِيُّوْنَ وَالْاَحْبَارُ عَنْ قَوْلِهِمُ
الْاِثْمَ وَاَكْلِهِمُ السُّحْتَ ۭ لَبِئْسَ مَا كَانُوْا يَصْنَعُوْنَ ۝٦٣

64. और यहूदी कहते हैं कि अल्लाह का हाथ बंध गया है।[182] बंध गए उन के हाथ और लानत हुई उन पर इस कारण कि उन्हों ने ऐसी बात कही,[183] उस के तो दोनों हाथ खुले हैं।[184] जिस तरह चाहता है ख़र्च करता है।[185] वास्तव में जो चीज़ तुम्हारे रब की तरफ़ से तुम पर नाज़िल हुई है वह उन में से बहुत से लोगों की उद्दंडता और कुफ्र में वृद्धि का कारण बन गई है [186] और हम ने उन के बीच वैर और द्वेष क़ियामत तक के लिए डाल दिया है।[187] जब कभी ये लड़ाई की आग भड़काते हैं अल्लाह उस को बुझा देता है।[188] ये ज़मीन में फ़साद बरपा करने की कोशिश करते हैं और अल्लाह फ़साद पैदा करने वालों को पसन्द नहीं करता।

وَقَالَتِ الْيَهُوْدُ يَدُ اللّٰهِ مَغْلُوْلَةٌ ۭ غُلَّتْ اَيْدِيْهِمْ وَلُعِنُوْا بِمَا
قَالُوْا ۘ بَلْ يَدٰهُ مَبْسُوْطَتٰنِ ۙ يُنْفِقُ كَيْفَ يَشَاۗءُ ۭ وَلَيَزِيْدَنَّ كَثِيْرًا
مِّنْهُمْ مَّآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ طُغْيَانًا وَّكُفْرًا ۭ وَاَلْقَيْنَا بَيْنَهُمُ
الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَاۗءَ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ ۭ كُلَّمَآ اَوْقَدُوْا نَارًا
لِّلْحَرْبِ اَطْفَاَهَا اللّٰهُ ۙ وَيَسْعَوْنَ فِي الْاَرْضِ فَسَادًا ۭ وَاللّٰهُ لَا
يُحِبُّ الْمُفْسِدِيْنَ ۝٦٤

176. अर्थात् तुम इस्लाम दुशमनी के कारण हमारे लिए जिस अन्जाम की प्रतीक्षा कर रहे हो उस से बदतर अन्जाम के उदाहरणों से तुम्हारे अपने इतिहास भरे हुए हैं और तुम ख़ुद उसी डगर पर चल रहे हो इस लिए दूसरे के बुरे अन्जाम का इन्तिज़ार करने के बजाय अपना अन्जाम सोच लो।

177. बाइबिल में इस लानत का वर्णन कई जगहों पर मिलता है। जैसे:

''उन से कहो इस्राईल का परमेश्वर यहोवा यूँ कहता है, स्रापित है वह मनुष्य जो इस वाचा के वचन न माने.... उन के अधर्मो का अनुसरण कर के दूसरे देवताओं के पीछे चलते और उन की उपासना करते हैं, इस्राईल और यहूदा के घरानों ने उस वाचा को जो मैं ने उन के पूर्वजों से बाँधी थी, तोड़ दिया है। इस लिए यहोवा यूँ कहता है, देख मैं इन पर ऐसी विपत्ति डालने पर हूँ जिस से ये बच न सकेंगे और चाहे ये मेरी दुहाई दें तो भी मैं इन की न सुनूँगा।'' (यिर्मयाह ११:३,१०,११)

178. बाइबिल की किताब यिर्मयाह में है।

''इस्राईल का परमेश्वर सेनाओं का यहोवा यूँ कहता है कि जो विपत्ति मैं यरुश्लेम और यहूदा के सब नगरों पर डाल चुका हूँ वह सब तुम लोगों ने देखी है। देखो वे आज़ के दिन कैसे उजड़े हुए और निर्जन हैं। क्यों कि उन के निवासियों ने वह बुराई की जिस से उन्होंने मुझे रिस दिलाई थी। वे जा कर दूसरे देवताओं के लिए धूप जलाते थे और उन की उपासना करते थे।..... इस कारण मेरी जलजलाहट और कोप की आग यहूदा के नगरों और यरुश्लेम की सड़कों पर भड़क गई।''(यिर्मयाह ४४:२,३,६)

179. अल्लाह तआला ने उन्हें सन्मानित एवं प्रतिष्ठित किया था और उन की नैतिक एवं आध्यात्मिक उन्नति के लिए हिदायत का सामान भी किया था। लेकिन जब उन्होंने अपनी इस प्रतिष्ठा एवं सम्मान का निरादर किया और मानवता के पद से अपने को गिराना चाहा तो फिर अल्लाह तआला ने उन के सम्मान को अपमान में बदल दिया और उन को बन्दर और सूअर बना कर एक शिक्षाप्रद उदाहरण स्थापित किया।

यह एक हृदयविदारक घटना है जो यहूद के एक गिरोह के साथ उस की उद्दंडता के फलस्वरुप घटी। रहा यह सवाल कि इन्सान किस तरह बन्दर और सुअर बनाए गए तो इस के लिए किसी तावील और किसी अगर मगर एवं ऐच पेंच की ज़रुरत नहीं। जो ख़ुदा इन्सान को इन्सान की सूरत प्रदान कर सकता है वह उस की सूरत बिगाड़ भी सकता है। इस लिए अल्लाह के दीन को बिगाड़ने वालों की अपनी सूरतें बिगड़ कर बन्दर और सूअर की सी हो गई हों तो इस में आश्चर्य की क्य बात है?

180. ताग़ूत से मुराद दुष्ट,उपद्रवी,एवं उद्दण्ड लोग हैं और परस्तिश (इबादत) से मुराद उन का अन्धा अनुसरण और गुनाह के कामों में उन का पालन है। यहाँ परस्तिश (इबादत) का शब्द आज्ञा पालन में हद से बढ़ जाने के अर्थ में इस्तेमाल हुआ है। इमाम राज़ी ताग़ूत की तफ़्सीर (टीका) करते हुए लिखते हैं :

''एक कथन यह है कि ताग़ूत से मुराद वह बछड़ा है जिस की परस्तिश की गई और दूसरा कथन यह है कि इस से मुराद अहबार अर्थात यहूदी धर्मशास्त्री हैं और हर वह व्यक्ति जिस ने बुराई एवं गुनाह में किसी का पालन किया उस ने वास्तव में उस की परस्तिश की।'' (अत्तफ़्सीरुलकबीर जिल्द १२ पृष्ट ३७)

आयत में जो कुछ इर्शाद हुआ है उस का सार यह है कि अल्लाह की आज्ञा का पालन करने के बजाय उस के नाफ़रमान एवं सरकश बन्दों का कहना मानना उन को पूजने के समानार्थ है। और यह बहुत बड़ा अपमान है जो किसी के हिस्से में आए। यहूदियों का इतिहास गवाह है कि यह अपमान उन के हिस्से में आया ।

181. इस से स्पष्ट हुआ कि एक बिगड़ी हुई सोसाइटी में इस्लाह एवं सुधार की बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी उलमा (धर्मज्ञाताओं एवं विद्वानों) पर आयद होती है। गुनाह की बातों और ख़ास तौर से हराम माल खाने से लोगों को रोकना उन के अनिवार्य कर्तव्यों में आता है। किन्तु जब उलमा का वर्ग पतन की ओर चल पड़ता है तो वे इन बुराइयों से दूसरों को क्या रोकेंगे खुद भी उन में लिप्त हो जाते हैं और ''हराम की मुर्गी क़ाज़ी के लिए हलाल हो जाती है।'' इब्ने ज़रीर तबरी कहते हैं कि उलमा को इस से अधिक कड़ाई के साथ झंझोड़ने वाली कोई आयत नहीं। इस के पक्ष में उन्हों ने इब्ने अब्बास का कथन नक़ल किया है। (तफ़्सीर तबरी भाग ६ पृष्ठ १९३)

यह एक आईना है जो क़ुर्आन ने मुसलमानों के सामने रख दिया है ताकि इन के उलमा (धर्माधिकारी) इस में अपना प्रतिबिम्ब देख लें।

182. अल्लाह की राह में जब खर्च करने के लिए कहा जाता तो यहूदी खिल्ली उड़ाते हुए कहते कि अल्लाह के हाथ तंग हो गए हैं। अर्थात वह कन्जूस हो गया है इस लिए हम से खर्च करने के लिए कह रहा है। उन के इसी दुस्साहस (गुस्ताख़ी) पर यहाँ पकड़ की गई है।

183. अल्लाह की शान में गुस्ताख़ी करने वाला लानत का अधिकारी है।

184. क़ुर्आन में अल्लाह तआला की मअ्रिफ़त (अध्यात्म) जिस तरह बख्शी गई है वह अत्यन्त सादा, स्वभाविक और समझ आ जाने वाले अन्दाज़ में है। इस लिए यहूदियों के इस कथन के खंडन में कि ''अल्लाह कंजूस हो गया है, यह जो कहा कि

उस के तो दोनों हाथ खुले हैं.'' तो इस का उद्देश्य बिल्कुल स्पष्ट है। मगर बाद में तर्क़ वितर्क करने वालों ने यहाँ यह बहस खड़ी कर दी कि अल्लाह के हाथ से क्या मुराद है? इस प्रकार की बहसें न केवल बेफ़ायदा हैं बल्कि क़ुर्आन की असल दअवत और उस के असल उद्देश्य से पाठक के मन को हटा देती है और वह अनावश्यक बातों में उलझ कर रह जाता है। इस लिए क़ुर्आन ने मुतशाबिहात (उपलक्षित) में कुरेद करने से मना किया है और पूर्वजों का तरीक़ा यही था कि वे उन (उपलक्षितों) की तावील (अर्थापन) से बचा करते थे। इमाम राज़ी फ़रमाते हैं।

''रहा यह सवाल कि हाथ से मुराद क्या है और इस की हक़ीक़त क्या है तो हम इस की पहचान (मअ्रिफ़त) अल्लाह तआला के हवाले करते हैं और पूर्वजों का यही तरीक़ा था।'' (अत्तफ़्सीरुलकबीर जिल्द १२ पृष्ट ४३)

185. अर्थात वह अपने बन्दों के लिए अत्यन्त उदार एवं दानी है और दानशीलता के शिख़र पर रह कर संपूर्ण जगत पर शासन कर रहा है।

186. अर्थात् पक्षपात एवं द्वेष ने उन्हें अन्धा कर दिया है इस लिए हिदायत से भी वे गुमराही ही ग्रहण करते हैं।

187. ईसाईयों के बीच वैर एवं विद्वेष की आग भड़काने का वर्णन आयत १४ में हुआ था। यहाँ यहूदियों के बीच शत्रुता एवं कटुता डाल देने का वर्णन हुआ है। यहूदियों और ईसाईयों के बीच जो मार काट का वातावरण पाया जाता है उस की जड़ें बहुत गहरी हैं और इस सिलसिले में हर गिरोह ने अपना एक इतिहास बना लिया है । इस लिए उन के बीच सामायिक रुप से कुछ नीतियों एवं मसलहतों के कारण कटुता एवं शत्रुता के बादल छट जाऐं तो और बात है लेकिन उन के सीने के दाग़ मिटाना किसी के बस की बात नहीं इस लिए ये हमेशा लड़ते और मरते ही रहेंगे। (अधिक व्याख्या के लिए देखिए नोट ७८)

188. अर्थात् जब कभी यहूदियों ने जंग की आग भड़काई है अल्लाह तआला ने उसे हिरन करने का सामान किया है। अगर वह ऐसा न करता तो ज़मीन में भयंकर फ़साद फूट पड़ता। मक्का के बहुदेववादियों ने मुसलमानों के साथ जो जंगे भी लड़ी उन सब के पीछे यहूदीयों का हाथ था। वे अपने कुचक्री मन के कारण जंग की आग भड़काते रहे मगर अल्लाह तआला उस आग में जलने से मुसलमानों को बचाता रहा।

आज भी इस्राईल (यहूदी) जंग की आग भड़काने में बुरी तरह सक्रिय हैं और इस से क़ुर्आन की सत्यता का प्रमाण मिलता है।

❒ ❒ ❒ ❒ ❒ ❒

और अगर अहले-किताब ईमान लाते और तक़वा (ईशपरायणता) अपनाते तो हम उन के गुनाह दूर कर देते और उन को नेमत भरे बाग़ों में दाख़िल कर देते।(अल-क़ुर्आन)

65. और अगर अहले-किताब ईमान लाते और तक़वा (ईशपरायणता) अपनाते तो हम उन के गुनाह दूर कर देते और उन को नेमत भरे बाग़ों में दाख़िल कर देते।[189]

وَلَوْ اَنَّ اَهْلَ الْكِتٰبِ اٰمَنُوْا وَاتَّقَوْا لَكَفَّرْنَا عَنْهُمْ سَيِّاٰتِهِمْ
وَلَاَدْخَلْنٰهُمْ جَنّٰتِ النَّعِيْمِ ﴿٦٥﴾

66. और अगर वे तौरात और इन्जील [190] और उस (किताब को जो उन के रब की तरफ़ से उन के पास भेजी गई है,[191] क़ायम करते तो उन्हें ऊपर से भी रिज़्क मिलता और उन के क़दमों के नीचे से भी।[192] उन में एक गिरोह ज़रुर सीधे चलने वाला है [193] लेकिन अधिकतर लोग ऐसे हैं जिन के आमाल (कर्म) बहुत बुरे हैं।

وَلَوْ اَنَّهُمْ اَقَامُوا التَّوْرٰىةَ وَالْاِنْجِيْلَ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْهِمْ مِّنْ
رَّبِّهِمْ لَاَكَلُوْا مِنْ فَوْقِهِمْ وَمِنْ تَحْتِ اَرْجُلِهِمْ ؕ مِنْهُمْ
اُمَّةٌ مُّقْتَصِدَةٌ ؕ وَكَثِيْرٌ مِّنْهُمْ سَآءَ مَا يَعْمَلُوْنَ ﴿٦٦﴾

67. ऐ रसूल ! तुम्हारे रब की ओर से जो कुछ तुम पर नाज़िल हुआ है वह (लोगों तक) पहुँचा दो। अगर तुम ने ऐसा नहीं किया तो उस के पैग़ाम को नहीं पहुँचाया।[194] अल्लाह तुम को लोगों से सुरक्षित रखेगा।[195] अल्लाह उन लोगों को हरगिज़ राह से नहीं लगाएगा जो काफ़िर हैं।[196]

يٰۤاَيُّهَا الرَّسُوْلُ بَلِّغْ مَآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ ؕ وَاِنْ لَّمْ تَفْعَلْ
فَمَا بَلَّغْتَ رِسَالَتَهٗ ؕ وَاللّٰهُ يَعْصِمُكَ مِنَ النَّاسِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ
لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الْكٰفِرِيْنَ ﴿٦٧﴾

68. कहो, ऐ अहले-किताब ! तुम किसी आधार पर नहीं हो जब तक कि तौरात और इन्जील और उस (किताब) को क़ायम न करो जो तुम्हारे रब की तरफ़ से तुम्हारे पास भेजी गई है।[197] मगर जो (कलाम) तुम्हारे रब की तरफ़ से तुम पर नाज़िल हुआ है वह इन में से बहुतेरे लोगों की उद्दंडता और कुफ्र में वृद्धि ही करेगा।[198] तो तुम इन काफ़िरों (के हाल) पर अफ़सोस न करो।

قُلْ يٰۤاَهْلَ الْكِتٰبِ لَسْتُمْ عَلٰى شَىْءٍ حَتّٰى تُقِيْمُوا التَّوْرٰىةَ
وَالْاِنْجِيْلَ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِّنْ رَّبِّكُمْ ؕ وَلَيَزِيْدَنَّ كَثِيْرًا
مِّنْهُمْ مَّآ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَّبِّكَ طُغْيَانًا وَّكُفْرًا ۚ فَلَا
تَاْسَ عَلَى الْقَوْمِ الْكٰفِرِيْنَ ﴿٦٨﴾

69. मुसलमान हो या यहूदी और साबी हों या ईसाई,[199] जो भी अल्लाह और अन्तिम दिन पर ईमान लाएगा और नेक अमल करेगा तो ऐसे लोगों को न कोई ख़ौफ़ होगा और न वे शोकाकुल होंगे।[200]

اِنَّ الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا وَالَّذِيْنَ هَادُوْا وَالصّٰبِئُوْنَ وَالنَّصٰرٰى
مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ
يَحْزَنُوْنَ ﴿٦٩﴾

70. हम ने बनी इस्राईल से प्रतिज्ञा ली [201] और उन की तरफ़ रसूल भेजे। मगर जब कभी कोई रसूल उन के पास ऐसी बात ले कर आया जो उन की इच्छाओं (एवं वासनाओं) के विपरीत थी तो किसी को उन्हों ने झुठलाया और किसी को क़त्ल कर दिया।[202]

لَقَدْ اَخَذْنَا مِيْثَاقَ بَنِىْۤ اِسْرَآءِيْلَ وَاَرْسَلْنَاۤ اِلَيْهِمْ رُسُلًا ؕ كُلَّمَا
جَآءَهُمْ رَسُوْلٌۢ بِمَا لَا تَهْوٰۤى اَنْفُسُهُمْ ۙ فَرِيْقًا كَذَّبُوْا
وَفَرِيْقًا يَّقْتُلُوْنَ ﴿٧٠﴾

189. अर्थात् अगर अहले-किताब हज़रत मुहम्मद सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम पर ईमान लाते और परहेज़गारी अपनाते तो अल्लाह उन के पिछले गुनाह माफ़ कर देता और उन को जन्नत के नेमत भरे बाग़ों में दाखिल करता ।

190. तौरात और इन्जील को क़ायम करने से मुराद असल तौरात और असल इन्जील को क़ायम करना है न कि संशोधित एवं परिवर्तित तौरात और इन्जील को (अधिक व्याख्या के लिए देखिए नोट १४३, १९७)

191. अर्थात् क़ुर्आन

अल्लाह की किताब को क़ायम (स्थापित) करने का मतलब इस को अपना रहनुमा और जीवन संविधान बनाना है।

192. मुराद दुनिया की नेमतें और बरकतें है। तौरात में है:

"यदि तुम मेरी विधियों पर चलो और मेरी आज्ञाओं को मान कर उन का पालन करो तो मैं तुम्हारे लिए समय समय पर मेंह बरसाऊँगा तथा भूमि अपनी उपज उपजाएगी और मैदान के वृक्ष अपने अपने फ़ल दिया करेंगे।"(लैव्यव्यवस्था २६:३,४)

"फ़िर अपने परमेश्वर यहोवा की सुनने के कारण ये सब आशिर्वाद तुझ पर पूरे होंगें धन्य हो तू नगर में, धन्य हो तू खेत में।" (व्यवस्थाविवरण २८:२,३)

मगर यह बात अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि क़ुर्आन सांसारिक लाभ को अल्लाह की आज्ञापालन के फल स्वरुप प्रस्तुत करता है न कि असल प्रेरक एवं लक्ष्य के तौर पर । यही कारण है कि ये लाभ और ये बरकतें क़ुर्आन में अप्रधान रुप से बयान हुई हैं जब कि अल्लाह की प्रसन्नता को आज्ञापालन एवं दास्ता (बन्दगी) के वास्तविक प्रेरक और आख़िरत की सफ़लता एवं मुक्ति को उद्देश्य एवं लक्ष्य की हैसियत से प्रस्तुत किया गया है। और यह बात क़ुर्आन में इतनी बार और इतने प्रभावपूर्ण ढंग से दोहराई गई है और बिना अपवाद के तमाम नबियों की दअवत का रंग यही रहा है। मगर परिवर्तित तौरात में आखिरत का पक्ष बार बार और वास्तविक लक्ष्य के तौर पर बयान हुए हैं। जिस से अन्दाज़ा होता है कि इस के संकलन कर्ताओं के मस्तिष्क पर दुनिया किस क़दर छाई हुई थी।

आज भी दबी मानसिकता के लोग जब इस्लामी दअवत को पेश करने के लिए उठते हैं तो इस्लामी व्यवस्था के सांसारिक एवं भौतिक लाभ बड़ी सुन्दरता के साथ प्रस्तुत करने लगते हैं।

रहा आख़िरत का पक्ष तो वह वचन को पूरा करने मात्र होता है। दअवत का यह तरीक़ा न नबियों का है और न क़ुर्आन का और न ही इस से इन्सान की अन्तरात्मा परिवर्तित हो सकती है।

193. यह अहले-किताब का वह गिरोह है जो यद्यपि गिनती के लिहाज़ से कम था किन्तु हक़ पर क़ायम था और जब क़ुर्आन की दअवत उस पर स्पष्ट हुई तो उसने उस पर अपने आप को हाज़िर कर दिया।

194. यह कड़ा एवं ताकीदी हुक्म है जो नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को दिया गया । रसूल, अल्लाह का संदेष्टा होता है इस लिए उस का अनिवार्य कर्तव्य यह है कि अल्लाह के पैग़ाम को बिना किसी कमी बेशी के निर्भीकता के साथ लोगों तक पहुँचा दे। इस में कोताही का मतलब रिसालत के कर्तव्य की अदायगी में कोताही है। नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने इस कर्तव्य को जैसा कि इस का हक़ था अदा किया और पूरा क़ुर्आन जूँ का तूँ लोगों तक पहुँचा दिया। आखिरी हज्ज के अवसर पर जो आप ने अपनी वफ़ात से लगभग तीन माह पहले किया था जन साधारण से संबोधित हो कर पूछा:

وَاَنْتُمْ تُسْأَلُوْنَ عَنِّیْ فَمَا اَنْتُمْ قَائِلُوْنَ ؟

"तुम से मेरे बारे में पूछा जाएगा तो तुम क्या जवाब दोगे?"

قَالُوْا نَشْهَدُ اَنَّکَ قَدْ بَلَّغْتَ وَاَدَّیْتَ وَنَصَحْتَ ـ

"उपस्थित लोगों ने कहा हम इस बात की गवाही देंगे कि आप ने हम तक (अल्लाह का) पैग़ाम पहुँचा दिया अपना फ़र्ज़ अदा किया और हमारा हित चाहा।"

आप ने अपनी शहादत की उंगली आसमान की तरफ़ उठाई और फ़रमाया: اللّٰهم اشهد (مسلم کتاب الحج)

"ख़ुदाया ! तू गवाह रह" (मुस्लिम किताबुलहज्ज)

आज क़ुर्आन जैसा कि वह नाज़िल हुआ था हमारे हाथ में मौजूद है इस लिए कल अल्लाह की अदालत में कोई व्यक्ति यह तर्क (उज़्र) प्रस्तुत नहीं कर सकेगा कि अल्लाह का पैग़ाम मुझ तक पहुँचा नहीं था।

195. और क़ुर्आन की यह भविष्यवाणी शब्द शब्द पूरी हुई। अत: नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम विरोधियों के कुचक्रों एवं जंगी कार्रवाईयों के बावजूद लोगों के शर (फितने) से महफ़ूज़ रहे और कोई ताक़त भी आप को क़त्ल करने में कामयाब न हो सकी।

196. अर्थात् काफ़िर अपने इरादों में हरगिज़ कामयाब नहीं हो सकेंगे। ख़ुदा की जो योजना आख़िरी नबी के सिलसिले में है वह पूरी हो कर रहे गी।

197. इस किताब को क़ायम करने से मुराद क़ुर्आन को कायम करना है और क़ुर्आन को क़ायम करना वास्तव में तौरात और इन्जील को भी क़ायम करना है। इस लिए कि जहाँ तक असल तौरात और इंजील का मामला है उन की बुनियादी शिक्षाओं और क़ुर्आन की बुनियादी शिक्षाओं में कोई अन्तर नहीं हैं। यह एक ही वृक्ष की शाखाऐं हैं। अगर अहले-किताब तौरात

और इन्जील की शिक्षाओं पर चलते होते तो उन्हें क़ुर्आन में कोई अजनबियत महसूस न होती बल्कि हिदायत की जिस राह पर वे चल रहे थे क़ुर्आन की रौशनी में उसी राह पर अपना सफ़र आगे जारी रख सकते थे।

198. अर्थात उन के पक्षपात एवं द्वेष और हठधर्मी के कारण।

199. देखिए सूरह बक़र: नोट ८६

200. इस की व्याख्या सूरह बक़र: नोट ८७ में गुज़र चुकी है।

201. मुराद शरीअत की पाबन्दी की प्रतिज्ञा भी है और इस बात की प्रतिज्ञा भी कि जब कभी उन के पास ख़ुदा की तरफ़ से कोई रसूल आएगा तो वे उसका अनुमोदन एवं समर्थन करेंगे।

202. अर्थात एक तरफ़ शरीअत की पाबन्दी की प्रतिज्ञा भी और दूसरी तरफ़ वह दुस्साहस भी कि पैग़म्बरों को क़त्ल करने के लिए लगना। इन्सान जब इच्छाओं का भक्त बनता है तो वह इस प्रकार की परस्पर विरोधी बातें अपने अन्दर जमा कर लेता है।

और यह गुमान कर बैठे कि (उन पर) कोई आफ़त नहीं आएगी, इस लिए अन्धे और बहरे बन गए। फिर अल्लाह ने (उन की तौबा क़ुबूल की और) उन्हें माफ़ कर दिया मगर उन में बहुत से लोग अन्धे और बहरे बन गए।और अल्लाह उन के करतूतों को देख रहा है। (अल-क़ुर्आन)

71. और यह गुमान कर बैठे कि (उन पर) कोई आफ़त नहीं आएगी, इस लिए अन्धे और बहरे बन गए।[203] फिर अल्लाह ने (उन की तौबा क़ुबूल की और) उन्हें माफ़ कर दिया मगर उन में बहुत से लोग अन्धे और बहरे बन गए।[204] और अल्लाह उन के करतूतों को देख रहा है।[205]

وَحَسِبُوٓا أَلَّا تَكُونَ فِتْنَةٌ فَعَمُوا وَصَمُّوا ثُمَّ تَابَ اللَّهُ عَلَيْهِمْ
ثُمَّ عَمُوا وَصَمُّوا كَثِيرٌ مِّنْهُمْ ۚ وَاللَّهُ بَصِيرٌۢ بِمَا يَعْمَلُونَ ٧١

72. निश्चय ही उन लोगों ने कुफ़्र किया जिन्होंने कहा कि अल्लाह यही मसीह इब्ने मरयम है।[206] हालांकि मसीह ने कहा था ''ऐ बनी इस्राईल अल्लाह की इबादत करो जो मेरा रब भी है और तुम्हारा रब भी।''[207] बेशक जिसने अल्लाह का साझीदार ठहराया उस पर अल्लाह ने जन्नत हराम कर दी और उस का ठिकाना दोज़ख़ की आग है और ज़ालिमों का कोई मददगार न होगा।

لَقَدْ كَفَرَ الَّذِينَ قَالُوٓا إِنَّ اللَّهَ هُوَ الْمَسِيحُ ابْنُ مَرْيَمَ ۖ وَقَالَ
الْمَسِيحُ يَٰبَنِىٓ إِسْرَٰٓءِيلَ اعْبُدُوا اللَّهَ رَبِّى وَرَبَّكُمْ ۖ إِنَّهُۥ
مَن يُشْرِكْ بِاللَّهِ فَقَدْ حَرَّمَ اللَّهُ عَلَيْهِ الْجَنَّةَ
وَمَأْوَىٰهُ النَّارُ ۖ وَمَا لِلظَّٰلِمِينَ مِنْ أَنصَارٍ ٧٢

73. निश्चय ही उन लोगों ने कुफ़्र किया जिन्होंने कहा अल्लाह तीन में का एक है।[208] हालांकि एक ख़ुदा के सिवा कोई ख़ुदा नहीं। और अगर ये इन बातों से बाज़ न आए तो इन में से जिन लोगों ने कुफ़्र किया है उन को दुखादायी यातना भुगतनी होगी।[209]

لَقَدْ كَفَرَ الَّذِينَ قَالُوٓا إِنَّ اللَّهَ ثَالِثُ ثَلَٰثَةٍ ۘ وَمَا مِنْ إِلَٰهٍ إِلَّآ
إِلَٰهٌ وَٰحِدٌ ۚ وَإِن لَّمْ يَنتَهُوا عَمَّا يَقُولُونَ لَيَمَسَّنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا
مِنْهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ٧٣

74. फिर क्या ये अल्लाह की ओर लौटेंगे नहीं और उस से माफ़ी नहीं चाहेंगे ?अल्लाह तो क्षमा करने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।

أَفَلَا يَتُوبُونَ إِلَى اللَّهِ وَيَسْتَغْفِرُونَهُۥ ۚ وَاللَّهُ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ٧٤

75. मसीह इब्ने मरयम इस के सिवा कुछ नहीं कि एक रसूल थे। उन से पहले भी कितने रसूल गुज़र चुके हैं।[210]और उन की माँ (माता) अति सत्यवती थीं।[211] दोनों खाना खाते थे।[212] देखो किस तरह हम इन के सामने दलीलें स्पष्ट कर रहे हैं और फिर देखो कि इन की अक़्ल किस तरह मारी जा रही है।

مَّا الْمَسِيحُ ابْنُ مَرْيَمَ إِلَّا رَسُولٌ قَدْ خَلَتْ مِن قَبْلِهِ الرُّسُلُ وَأُمُّهُۥ
صِدِّيقَةٌ ۖ كَانَا يَأْكُلَانِ الطَّعَامَ ۗ انظُرْ كَيْفَ نُبَيِّنُ لَهُمُ الْآيَٰتِ
ثُمَّ انظُرْ أَنَّىٰ يُؤْفَكُونَ ٧٥

76. कहो क्या तुम अल्लाह को छोड़ कर उस की परस्तिश करते हो जो न तुम्हें नुक़्सान पहुँचाने का इख़्तियार रखती है और न नफ़ा पहुँचाने का।[213] हालांकि अल्लाह ही है जो सब कुछ सुनने और जानाने वाला है।[214]

قُلْ أَتَعْبُدُونَ مِن دُونِ اللَّهِ مَا لَا يَمْلِكُ لَكُمْ ضَرًّا وَلَا نَفْعًا ۚ
وَاللَّهُ هُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ٧٦

203. अर्थात् इन अपराधों को कर बैठने के बाद जब इन पर तत्काल कोई आफ़त नहीं आई तो वे यह समझ बैठे कि उन को इस की सज़ा मिलने वाली ही नहीं। हालांकि यह ढील है जो अल्लाह मुजरिमों को देता है ताकि वे अपना सुधार कर लें।

204. मतलब यह है कि जब वे अल्लाह की तरफ़ पलट आए और अपना सुधार किया तो अल्लाह तआला ने उन्हें माफ़ कर दिया लेकिन इस के बाद वे फिर अन्धे और बहरे बन गए। यह इशारा है बनी इस्राईल के इतिहास की तरफ़ कि इस में उन के धार्मिक एवं नैतिक उत्थान एवं पतन की घटनाऐं कई बार पेश आई हैं। बाइबिल की किताब ''नहेम्याह'' में है:

''वे उसे खा कर तृप्त हो गए और हृष्ट पुष्ट हो गए और तेरी बड़ी भलाई के कारण सुख भोगते रहे परन्तु वे तुझ से फिर बलवा करने वाले बन गए और तेरी व्यवस्था को त्याग दिया और तेरे जो नबी तेरी ओर उन्हें फेरने के लिए उन को चिताते रहे उन को उन्होंने घात किया और तेरा बहुत तिरस्कार किया। इस कारण तूने उन को उन के शत्रुओं के हाथ में कर दिया.........तो भी जब वे फिर कर तेरी दोहाई देते तब तू स्वर्ग से उन की सुनता, और तू जो अति दयालु है इस लिए बार बार उन को छुड़ाता......परन्तु वे अभिमान करते रहे और तेरी आज्ञाऐं नहीं मानते थे।''(नहेम्याह ९:२५,२६,२७,२८,२९)

205. अर्थात ये यद्यपि अन्धे बन गए हैं लेकिन अल्लाह तो इन के करतूतों को अच्छी तरह देख रहा है। भजन संहिता (ज़बूर) में है:

''वे विधवा और परदेशी का घात करते और अनाथों को मार डालते हैं और कहते हैं कि यहोवा न देखेगा,याक़ूब का परमेश्वर विचार न करेगा । तुम जो प्रजा में पशु सरीखे हो, विचार करो और हे मूर्खो तुम कब बुद्धिमान हो जाओगे?जिस ने कान दिया क्या वह आप नहीं सुनता? जिस ने आँख रची, क्या वह आप नहीं देखता? जो जाति जाति को ताड़ना देता और मनुष्य को ज्ञान सिखाता है क्या वह न समझाएगा?(भंजन संहिता ९४:६,७,८,९,१०)

206. इस की व्याख्या नोट ८५ में गुज़र चुकी ।

207. हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम ने न अपने इलाह (पूज्य) या रब (स्वामी) होने का दावा किया था और न यह फ़रमाया था कि मेरी उपासना करो बल्कि एक अल्लाह को पूज्य (इलाह) और स्वामी (रब) मानने और केवल उस की उपासना करने का हुक्म दिया था । आज भी इंन्जील में हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का यह आदेश स्पष्ट रुप से मौजूद है।

''तू प्रभु अपने परमेश्वर को प्रणाम कर और केवल उसी की उपासना कर।''(मत्ती ४:१०) और इस से क़ुर्आन के बयान की पूरी पूरी पुष्टि होती है।

208. व्याख्या के लिए देखिए सूरह निसा नोट २८०, एवं सूरह इख़लास नोट ३

स्पष्ट रहे कि ईसाईयों के भी विभिन्न सम्प्रदाय हैं और उन की धारणाओं एवं विचारों में परस्पर विरोध है। कोई इस बात का क़ायल है कि ख़ुदा मसीह में हुलूल कर गया है। अर्थात् मसीह ख़ुदा का शारीरिक अस्तित्व है। और कोई तीन ख़ुदाओं का क़ायल है और फिर उन तीन ख़ुदाओं के निर्धारण में विरोध पाया जाता है। कोई बाप, बेटा और रुहुलक़ुदुस (पवित्र आत्मा) को त्रीश्वरवाद के रुप से मानता है तो कोई पवित्र आत्मा (रुहुल क़ुदुस) की जगह माँ (हज़रत मरयम) को ख़ुदा का दरजा देता है। (ख़ुदा की पनाह इन ग़लत एवं व्यर्थ की आस्थाओं एवं विचारधाराओं से)

209. अर्थात् इन में से जो लोग इन बातों से बाज़ आऐंगे उन को सज़ा नहीं मिलेगी लेकिन जो लोग बाज़ नहीं आऐंगे और कुफ्र पर अड़े रहेंगे उन्हें कठोर दंड भुगतना होगा ।

210. अर्थात् हज़रत मसीह उसी तरह रसूल थे जिस तरह दूसरे बहुत से रसूल गुज़र चुके हैं फ़िर अगर उन रसूलों में से कोई भी ख़ुदा नहीं था तो मसीह को ख़ुदा समझने का क्या कारण हैं?

211. अर्थात् मसीह की माँ हज़रत मरयम बेहद सच्ची और सत्यवान एवं पवित्रता की मूर्ति थीं इस गुण ने उन को निश्चय ही नैतिकता के शिखर पर पहुँचा दिया था मगर थीं वह बहर-हाल इन्सान ।

212. हज़रत मसीह और उन की माँ (मरयम) के ख़ुदा न होने का ख़ुला सबूत यह है कि दोनों खाना खाते थे और जो खाने का मुहताज हो वह ख़ुदा कैसे हो सकता है? और जो ख़ुदा मुहताज हो वह दूसरों की हाजत किस तरह दूर कर सकता है?

जहाँ तक इन्जील का सम्बन्ध है वह भी हज़रत मसीह और उन की माँ को इन्सान ही की हैसियत से प्रस्तुत करती है और उस में इस की भी पुष्टि है कि ईसा अलैहिस्सलाम खाना खाते थे।

''और जब वह घर में भोजन करने बैठा तो बहुतेरे महसूल लेने वाले और पापी आ कर यीशु और उस के चेलों के साथ खाने बैठे। यह देख कर फरीसियों (यहूदी विद्वानों) ने उस के चेलों से कहा तुम्हारा गुरु महसूल लेने वालों और पापियों के साथ क्यों खाता है?'' (मत्ती २१:१८)

213. अर्थात् एक अल्लाह के सिवा कोई हस्ती ऐसी नहीं जो सही अर्थो में लाभ और हानि पहुँचाने वाली हो फिर उस के सिवा किसी की परस्तिश का सवाल पैदा ही कहाँ होता है।

मसीह के अल्लाह का रसूल होने का मतलब यह कदापि नहीं कि वह लाभ और हानि पहुँचाने का सामर्थ्य रखते हैं। इस

लिए उन की परस्तिश की सिरे से कोई बुनियाद मौजूद ही नहीं है।

214. अर्थात् सब कुछ सुनना और सब कुछ जानना न मसीह की विशेषता एवं गुण है और न किसी अन्य की। बल्कि सिर्फ अल्लाह की सिफ़त है। फिर मसीह या किसी और को फ़रियाद सुनाने और हाजतों की पूर्ति के लिए पुकारने का क्या मतलब? वे जब तुम्हारी फ़रियाद को सुनते ही नहीं और न तुम्हारे हालात से परिचित हैं तो तुम्हारी ज़रुरतों को क्या पूरा करेंगे?

❒ ❒ ❒ ❒ ❒ ❒

कहो ऐ अहले-किताब ! अपने दीन में नाहक ग़ुलू न करो (अर्थात सीमा से आगे न बढ़ो) और उन लोगों के ख़यालों की पैरवी न करो जो इस से पहले गुमराह हुए और बहुतों को गुमराह किया और सीधे एवं सहज मार्ग से बिलकुल भटक गए।(अल-क़ुर्आन)

77. कहो ऐ अहले-किताब ! अपने दीन में नाहक ग़ुलू न करो [215](अर्थात सीमा से आगे न बढ़ो) और उन लोगों के ख़्यालों की पैरवी न करो जो इस से पहले गुमराह हुए और बहुतों को गुमराह किया और सीधे एवं सहज मार्ग से बिलकुल भटक गए।[216]

قُلْ يَا أَهْلَ الْكِتَابِ لَا تَغْلُوا فِي دِينِكُمْ غَيْرَ الْحَقِّ
وَلَا تَتَّبِعُوا أَهْوَاءَ قَوْمٍ قَدْ ضَلُّوا مِنْ قَبْلُ
وَأَضَلُّوا كَثِيرًا وَضَلُّوا عَنْ سَوَاءِ السَّبِيلِ ﴿٧٧﴾

78. बनी इस्राईल में से जिन लोगों ने कुफ्र किया उन पर दाऊद और ईसा इब्ने मरयम की ज़बान से लानत की गई [217]यह इस लिए कि वे नाफ़रमान हो गए थे और ज़्यादतियाँ करने लगे थे।

لُعِنَ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ بَنِي إِسْرَائِيلَ عَلَىٰ لِسَانِ دَاوُودَ
وَعِيسَى ابْنِ مَرْيَمَ ۚ ذَٰلِكَ بِمَا عَصَوْا وَكَانُوا يَعْتَدُونَ ﴿٧٨﴾

79. बुराई करने से वे एक दूसरे को रोकते न थे। बहुत बुरी बात थी जो वे कर रहे थे।[218]

كَانُوا لَا يَتَنَاهَوْنَ عَنْ مُنْكَرٍ فَعَلُوهُ ۚ لَبِئْسَ مَا كَانُوا
يَفْعَلُونَ ﴿٧٩﴾

80. तुम इन में से बहुत से लोगों को देखोगे कि वे काफ़िरों को अपना दोस्त बनाते हैं।[219] अत्यन्त बुरा सामान है जो उन्हों ने अपने आगे के लिए किया कि अल्लाह का उन पर प्रकोप हुआ और वे हमेशा के लिए अज़ाब में रहने वाले बने।

تَرَىٰ كَثِيرًا مِنْهُمْ يَتَوَلَّوْنَ الَّذِينَ كَفَرُوا ۚ لَبِئْسَ مَا قَدَّمَتْ
لَهُمْ أَنْفُسُهُمْ أَنْ سَخِطَ اللَّهُ عَلَيْهِمْ وَفِي الْعَذَابِ هُمْ
خَالِدُونَ ﴿٨٠﴾

81. अगर ये अल्लाह, नबी, और उस की ओर अवतरित (किताब) पर ईमान रखने वाले होते तो कभी काफ़िरों को अपना दोस्त न बनाते।[220] लेकिन उन में अधिकतर लोग नाफ़रमान हैं।

وَلَوْ كَانُوا يُؤْمِنُونَ بِاللَّهِ وَالنَّبِيِّ وَمَا أُنْزِلَ إِلَيْهِ مَا
اتَّخَذُوهُمْ أَوْلِيَاءَ وَلَٰكِنَّ كَثِيرًا مِنْهُمْ
فَاسِقُونَ ﴿٨١﴾

82. तुम ईमान वालों की दुश्मनी में सर्वाधिक क्रूर यहूदीयों और बहुदेववादियों (मुश्रिकों) को पाओगे। और ईमान वालों की दोस्ती में सर्वाधिक निकट उन लोगों को पाओगे जो अपने को ''नसारा'' कहते हैं।[221]यह इस लिए कि उन में इबादत गुज़ार आलिम (उपासक धर्मवेत्ता) और राहिब,(संसार त्यागी संत) पाए जाते हैं और वे तकब्बुर (अंह) नहीं करते।[222]

لَتَجِدَنَّ أَشَدَّ النَّاسِ عَدَاوَةً لِلَّذِينَ آمَنُوا الْيَهُودَ
وَالَّذِينَ أَشْرَكُوا ۖ وَلَتَجِدَنَّ أَقْرَبَهُمْ مَوَدَّةً
لِلَّذِينَ آمَنُوا الَّذِينَ قَالُوا إِنَّا نَصَارَىٰ ۚ ذَٰلِكَ
بِأَنَّ مِنْهُمْ قِسِّيسِينَ وَرُهْبَانًا وَأَنَّهُمْ
لَا يَسْتَكْبِرُونَ ﴿٨٢﴾

83. और जब वे उस कलाम को सुनते हैं जो रसूल पर उतरा है तो तुम देखते हो कि हक़ पहचान लेने की वजह से उन की आँखों से आँसू जारी हो जाते हैं। वे बोल उठते हैं ऐ हमारे रब ! हम ईमान लाए तू हमें गवाही देने वालों में लिख ले।[223]

وَإِذَا سَمِعُوا مَا أُنْزِلَ إِلَى الرَّسُولِ تَرَىٰ أَعْيُنَهُمْ
تَفِيضُ مِنَ الدَّمْعِ مِمَّا عَرَفُوا مِنَ الْحَقِّ ۖ يَقُولُونَ رَبَّنَا آمَنَّا
فَاكْتُبْنَا مَعَ الشَّاهِدِينَ ﴿٨٣﴾

215. इस की व्याख्या सूरह निसा नोट २७७ में गुज़र चुकि।

216. मुराद उन के पहले गुज़रने वाले वे लोग हैं जो हज़रत मसीह से आस्था एवं श्रद्धा रखने में हद से आगे बढ़ गए और व्यर्थ के अर्थापन (तावीलों) में पड़ कर तथा नई नई बातों को धर्म से जोड़ कर खुद भी गुमराह हुए और दुसरों को भी गुमराह कर दिया। और यह गुमराही चूँकि मौलिक आस्था में थी इस लिए इस का परिणाम यह निकला कि सीधा सच्चा रास्ता उन पर गुम हो गया और वे इस्लाम के राजमार्ग से बहुत दूर जा पड़े।

ईसाईयत का इतिहास बताता है कि पौलूस (पॉल) और उस के साथियों ने हज़रत मसीह के बारे में हद से आगे बढ़ कर (अर्थात ग़ुलू में लिप्त हो कर) उन के लिए यहोवा, और यहोवा का बेटा जैसे उपनाम रख डाले और प्रायश्चित की धारणा गढ़ी बाइबिल में चारों इन्जीलों के साथ पौलूस आदि के जो पत्र शामिल कर दिए गए हैं उन में उन के गुमराह कर देने वाले फ़लसफ़ों को देखा जा सकता है। क़ुर्आन का इशारा उन के इन्हीं ग़लत अक़िदों और बिद्अतों (धर्म के नाम से प्रस्तुत की गई नई नई बातों) की तरफ़ है।

217. बनी इस्राईल में से जो लोग उद्दण्ड हो गए थे और अल्लाह के आदेशों की खुली अवहेलना करने लगे थे उन को हज़रत दाऊद अलैहिस्सलाम ने बुरी तरह झंझोड़ा। ज़बूर (भजन संहिता) में इस की मिसालें मिलती हैं जैसे:

''हे यहोवा दृष्ट की इच्छा को पूरी न होने दे। उस की बुरी युक्ति को सफल न कर नहीं तो वह घमण्ड करेगा। मेरे घेरने वालों के सिर पर उन्हीं के होंठों का उत्पात पड़े। उन पर अंगारे डाले जाएं, वे आग में गिरा दिए जाएं और ऐसे गड़हों में गिरें कि फिर उठ न सकें।''(भजन संहिता १४०:८,९,१०)

''वह अपने मुँह के पाप और होठों के वचन और शाप देने और झूठ बोलने के कारण अभिमान में फंसे हुए पकड़े जाएं। जलजलाहट में आ कर उन का अन्त कर दे ताकि वे नष्ट हो जाएं।''(भजन संहिता ५९:१२,१३)

''वह शाप देना वस्त्र की नाईं पहिनता था,और वह उस के पेट में जल की नाईं और उस की हड्डियों की नाईं समा गया।....यहोवा की ओर से मेरे विरोधियों को और मेरे विरुद्ध बुरा कहने वालों को यही बदला मिले।''(भजन संहिता १०९:१८,२०)

और ईसा अलैहिस्सलाम ने उन धर्माधिकारियों को जो ईसा अलैहिस्सलाम के विरोध में सब से आगे आगे थे और जो दीन की असल हक़ीक़त को नज़रंदाज़ कर के मात्र दिखावे को ले बैठे थे, कड़ी लानत मलामत की। इस सिलसिले में इंजील की कुछ पंक्तियाँ देखें।

''हे कपटी शास्त्रियों और फ़रीसियों (विद्वानों) तुम पर हाय! तुम मनुष्यों के विरोध में स्वर्ग के राज्य का द्वार बन्द करते हो न तो आप ही उस में प्रवेश करते हो और न उस में प्रवेश करने वालों को प्रवेश करने देते हो।....हे कपटी शास्त्रियों और फ़रीसियो तुम पर हाय ! तुम कटोरे और थाली को ऊपर से तो माँजते हो परन्तु वे भीतर अंधेर असंयम से भरे हुए हैं। हे अंधे फरीसी, पहले कटोरे और थाली को भीतर से माँज ताकि वे बाहर से भी स्वच्छ हों।....हे कपटी शास्त्रियों और फ़रिसियों तुम पर हाय ! तुम भविष्य द्वक्ताओं की क़ब्रें संवारते और धार्मियों की क़ब्रें बनाते हो और कहते हो कि यदि हम अपने बाप दादों के दिनों में होते तो भविष्य द्वक्ताओं की हत्या में उन के साझी न होते।....हे साँपो, हे करैतों के बच्चो तुम नरक के दण्ड से क्योंकर बचोगे?....हे यरुशलेम हे यरुशलेम तू जो भविष्यद्वक्ताओं को मार डालता है और जो तेरे पास भेजे गए उन्हें पत्थरवाह करता है....देखो तुम्हारा घर तुम्हारे लिए उजाड़ छोड़ा जाता है। (मत्ती२३:१३से३८)

218. यह बनी इस्राईल की साधारण मनोदशा बयान हुई है कि उन्हों ने बुरे कामों के करने से एक दूसरे को रोकना छोड़ दिया जिस का परिणाम यह निकला कि उपद्रवियों एवं बुरे लोगों के हौसले बढ़ गए और बिगाड़ फैल गया।

इस में उम्मते मुस्लिमा के लिए ज़बरदस्त इन्तेबाह है।

219. अर्थात् उन को सच्चे ईमान वालों से तो बैर है लेकिन काफ़िरों से मुहब्बत, अत: वे मुसलमानों के तो दुश्मन बने हुए हैं लेकिन मक्का के बहुदेववादियों से दोस्ती गाँठ ली है। आज यही हाल कपट के गुणों से युक्त मुसलमानों का भी है कि वे सच्चे ईमान वालों से बेज़ार होते हैं और काफ़िरों और मुश्रिकों की तरफ़ दोस्ती के लिए पेंगें पढ़ाते हैं।

220. अर्थात् ये अपने उस दावे में बिलकुल झूठे हैं कि हम अल्लाह, नबी,और किताब पर ईमान रखने वाले हैं। अत: हम मूसा को अल्लाह का पैग़म्बर और तौरात को अल्लाह की किताब मानते हैं। अगर यह अपने अपने दावे में सच्चे होते तो ईमान वालों के दुश्मन और काफ़िरों के दोस्त न बन गये होते क्यों कि हर जाति अपनी जातिवालों के साथ चलती है।

कबूतर बा कबूतर बाज़ बा बाज़

221. अर्थात् यहूदी और बहुदेववादी तो मुस्लिम दुशमनी में मरे जा रहे हैं, अलबत्ता नसारा (ईसाई) को तुम इन की अपेक्षा दोस्ती में निकटतम पाओगे। और इस का कारण जैसा बाद के वाक्य में स्पष्ट कर दिया गया है कि उन में खुदा का डर रखने वाले लोग मौजूद हैं और सत्यता यह है कि क़ुर्आन उतरने के समय नसारा के इन गिरोह ने इस्लाम दोस्ती का सबूत दिया है

इस लिए आयत का इशारा उसी गिरोह की तरफ़ है। इस से स्वतंत्र रुप से हर दौर के ईसाई मुराद लेना सही नहीं है। और इतिहास बताता है कि ईसाईयों ने बहुतेरी बार इस्लाम दुश्मनी और मुस्लिम दुश्मनी का सबूत दिया है। अत: स्पेन की घटनाऐं, सलीबी जंगें इस के स्पष्ट उदाहरण हैं। इसी तरह वर्तमान काल के सेक्यूलरिज़्म पर विश्वास रखने वाले मसीही भी उस जैसे नहीं हो सकते क्यों कि वे उन विशेषताओं से ख़ाली हैं जिन का ज़िक्र इन आयतों में हुआ है।

222. राहिब से सन्यासी सन्त अभिप्रेत हैं और अहं नहीं करने का मतलब यह है कि उन में आन्तरिक घमण्ड नहीं है। इस लिए जब सत्य उन के सामने खुल कर आता है तो वे उसे ठुकराते नहीं हैं।

223. यह उन लोगों का हाल बयान हुआ है जो ''नसारा''(ईसाइयों) के गिरोह में से थे लेकिन उन के अन्दर सत्यप्रियता की भावना थी अत: जब उन्होंने क़ुर्आन को सुना तो पहचान लिया कि वास्तव में यह अल्लाह का कलाम है और सत्य को पहचान लेने के कारण बेसाख़्ता उन की आँखों से आँसू जारी हो गए।

इस सूरह के नाज़िल होने से काफ़ी पहले अर्थात् हब्शा की तरफ़ हिज़रत (सन ५ नबवी) के अवसर पर यह घटना घट चुकी थी कि जब हज़रत जाफ़र ने हब्शा के शासक नजाशी को सूरह मरयम की शुरु की आयतें पढ़ कर सुनाई तो अल्लाह की वाणी के प्रभाव से उस का दिल दहल गया, भाव विभोर हो उठा, और मारे आवेश के उस की आँखें बह पड़ीं यहाँ तक कि उस की दाढ़ी तर हो गई। और दरबार में उपस्थित बिशपगण भी रो पड़े फिर नज़ाशी ने कहा ''यह कलाम और ईसा पर अवतरित कलाम एक ही दीप से निकली दो किरणें हैं।''

(सीरतुन्नबी, इब्ने हश्शाम जिल्द १ पृष्ठ ३५९)

सच्चाई यह है कि जो व्यक्ति सत्य को पाना चाहेगा और क़ुर्आन का अध्ययन करेगा । वह सत्य को क़ुर्आन में पर्याप्त पायेगा और खुशी के मारे उस की आँखें भीगी होंगी कि तलाश जिस ख़ज़ाने की थी वह हाथ लग गया। अल्लाह के कलाम की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इस से हृदय करुणामय हो जाता है ।

❖❖❖❖❖❖❖❖

आख़िर हम अल्लाह पर और उस हक़ (सत्य) पर जो हमारे पास आया है क्यों न ईमान लाएं जब कि हम इस बात की इच्छा रखते हैं कि हमारा रब हम को अच्छे लोगों में शामिल करे।(अल-क़ुर्आन)

84. आख़िर हम अल्लाह पर और उस हक़ (सत्य) पर जो हमारे पास आया है क्यों न ईमान लाएं जब कि हम इस बात की इच्छा रखते हैं कि हमारा रब हम को अच्छे लोगों में शामिल करे।[224]

وَمَا لَنَا لَا نُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَمَا جَآءَنَا مِنَ الْحَقِّ وَنَطْمَعُ اَنْ يُّدْخِلَنَا
رَبُّنَا مَعَ الْقَوْمِ الصّٰلِحِيْنَ ﴿٨٤﴾

85. तो अल्लाह ने उन के इस कथन के बदले में उन को ऐसे बाग़ प्रदान किए जिन के नीचे नहरें प्रवाहित हैं। वे उन में हमेशा रहेंगे और अच्छी नीति अपनाने वालों का यही बदला (जज़ा) है।

فَاَثَابَهُمُ اللّٰهُ بِمَا قَالُوْا جَنّٰتٍ تَجْرِيْ مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهٰرُ خٰلِدِيْنَ
فِيْهَا ؕ وَذٰلِكَ جَزَآءُ الْمُحْسِنِيْنَ ﴿٨٥﴾

86. लेकिन जिन लोगों ने कुफ्र किया और हमारी आयतों को झुठलाया वे जहन्नमी हैं।[225]

وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا وَكَذَّبُوْا بِاٰيٰتِنَآ اُولٰٓئِكَ اَصْحٰبُ الْجَحِيْمِ ﴿٨٦﴾

87. ऐ ईमान वालो ! जो पाक चीज़ें अल्लाह ने तुम्हारे लिए हलाल की हैं उन्हें हराम न ठहराओ [226] और हद से आगे न बढ़ो।[227] अल्लाह हद से आगे बढ़ने वालों को पसन्द नहीं करता।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تُحَرِّمُوْا طَيِّبٰتِ مَآ اَحَلَّ اللّٰهُ لَكُمْ
وَلَا تَعْتَدُوْا ؕ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِيْنَ ﴿٨٧﴾

88. और जो हलाल और पाकीज़ा रिज़्क (रोज़ी) अल्लाह ने तुम्हें दिया है उस में से खाओ और अल्लाह से डरो जिस पर तुम ईमान लाए हो।

وَكُلُوْا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ حَلٰلًا طَيِّبًا ۪ وَّاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِيْٓ
اَنْتُمْ بِهٖ مُؤْمِنُوْنَ ﴿٨٨﴾

89. अल्लाह तुम्हारी बेईरादा क़समों पर तुम्हें नहीं पकड़ेगा लेकिन जो क़समें तुम ने जान बूझ कर खाई हों उन पर ज़रुर तुम से पूछेगा।[228] उस का कफ़्फ़ारा यह है कि [229] दस मिस्कीनों को खाना खिलाओ, औसत दर्जे का खाना जो तुम अपने घर वालों को खिलाते हो, या उन्हें कपड़े पहनाओ या एक ग़ुलाम आज़ाद करो। और जिस को यह मुयस्सर न हो वह तीन दिन के रोज़े रखे। यह तुम्हारी क़समों का कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) है जब कि तुम क़सम खा बैठो।[230] और अपनी क़समों की हिफ़ाज़त किया करो [231] इस तरह अल्लाह तुम्हारे लिए अपने आदेश स्पष्ट कर देता है ताकि तुम शुक्रगुज़ार (कृतज्ञ) बनो ।

لَا يُؤَاخِذُكُمُ اللّٰهُ بِاللَّغْوِ فِيْٓ اَيْمَانِكُمْ وَلٰكِنْ يُّؤَاخِذُكُمْ
بِمَا عَقَّدْتُّمُ الْاَيْمَانَ ۚ فَكَفَّارَتُهٗٓ اِطْعَامُ عَشَرَةِ مَسٰكِيْنَ
مِنْ اَوْسَطِ مَا تُطْعِمُوْنَ اَهْلِيْكُمْ اَوْ كِسْوَتُهُمْ اَوْ تَحْرِيْرُ رَقَبَةٍ ؕ
فَمَنْ لَّمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلٰثَةِ اَيَّامٍ ؕ ذٰلِكَ كَفَّارَةُ اَيْمَانِكُمْ
اِذَا حَلَفْتُمْ ؕ وَاحْفَظُوْٓا اَيْمَانَكُمْ ؕ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ
اٰيٰتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ﴿٨٩﴾

90. ऐ ईमान वालो ! शराब, जुआ, थान,[232] और पाँसे के तीर सब नजिस (गन्दे) और शैतानी काम हैं लिहाज़ा इन से बचो ताकि फ़लाह (सफलता) पाओ।

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِنَّمَا الْخَمْرُ وَالْمَيْسِرُ وَالْاَنْصَابُ وَالْاَزْلَامُ
رِجْسٌ مِّنْ عَمَلِ الشَّيْطٰنِ فَاجْتَنِبُوْهُ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ﴿٩٠﴾

224. अर्थात् जब हम यह चाहते हैं कि अल्लाह तआला हमें सच्चे लोगों में शामिल करे तो इस का तक़ाज़ा है कि हम मज़हबी गिरोहबन्दी से ऊपर उठ कर सत्य का स्वागत करें।

225. इशारा है उन ईसाईयों के अन्जाम की तरफ़ जो अपने कुफ्र (इन्कार) पर अड़े रहेंगे और क़ुर्आन की दअवत को क़ुबूल नहीं करेंगे।

226. ऊपर सन्यासियों का वर्णन हुआ था। इसी से संबद्ध एक सम्भावित ग़लत फ़हमी का निवारण किया जा रहा है। ईसाई सन्यासियों ने पाक चीज़ों और दुनिया की जायज़ लज़्ज़तों से अपने को महरुम करने का जो ढंग ग्रहण किया वह सही नहीं। क़ुर्आन का अनुपालन करने वालों को चाहिए कि वे सन्यास के इस नियम को अपना कर के हलाल चीज़ों को हराम न कर लें।

अफ़सोस है कि क़ुर्आन की इस स्पष्ट हिदायत के बावजूद मुसलमानों में सन्यास के तौर तरीक़े तसव्वुफ के नाम से दाखिल हो गए और नफ़्स (इच्छाओं) को मारने और जायज़ लज़्ज़तों से अपने को वंचित करने को नेकी समझी जाने लगी और तन्हाई की जिन्दगी परहेज़गारी की ज़िन्दगी क़रार पाई।

ख़ुदा के ठहराए हुए हलाल को हराम करने की एक सूरत तो वह है जो भारत के बहुदेववादियों ने मांस खाने के सम्बन्ध में अपना रखी है। अत: वे पाकिज़ा जानवरों को खाने में बहुत मुँह बिसोरते हैं और मात्र अपने भ्रम एवं अंधविश्वास के कारण इस से इस तरह परहेज़ करते हैं जिस तरह हराम चीज़ से परहेज़ किया जाता है और चाहते हैं कि दूसरे भी इस से परहेज़ करें।

227. हद से आगे बढ़ने की एक सूरत यह है कि हलाल को हराम किया जाए और दूसरी सूरत यह है कि हलाल चीज़ों के इस्तेमाल में व्यर्थ की ज़्यादती से काम लिया जाए।

228. इस की व्याख्या सूरह बकर: नोट३३२ में गुज़र चुकी है।

229. अर्थात क़सम तोड़ने का कफ़्फ़ारा ।

किसी अपराध (गुनाह) के हो जाने पर उस के पाप को लुप्त करने का जो तरीक़ा शरीअत ने निर्धारित किया है अर्थात् सद्का आदि उस को कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) कहते हैं। जिस का शाब्दिक अर्थ है ''ढाँकने वाली चीज़''।

230. अर्थात् क़सम खाने के बाद अगर तुम उसे तोड़ दो तो तुम्हें उस का कफ़्फ़ारा (पापघ्न) अदा करना होगा।

231. अर्थात क़सम ख़ाने में सावधान रहो और जब खा चुको तो उसे याद रखो और पूरा करो अगर तोड़ना पड़ें तो उस का कफ़्फ़ारा (प्रायश्चित) अदा करो । मतलब यह है कि क़सम के मामले में बेपरवाह होना बड़ी ग़ैर ज़िम्मेदाराना बात है।

232. थान की व्यख्या नोट २५ और पाँसे के तीर की व्याख्या नोट २६ में गुज़र चुकी है।

91. शैतान तो चाहता है कि शराब और जुए में लगा कर तुम्हारे बीच बैर और द्वेष डाल दे और तुम्हें ख़ुदा की याद और नमाज़ से रोक दे।[233] फिर क्या तुम बाज़ न आओगे ?

إِنَّمَا يُرِيدُ الشَّيْطَٰنُ أَن يُوقِعَ بَيْنَكُمُ الْعَدَٰوَةَ وَالْبَغْضَآءَ
فِى الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ وَيَصُدَّكُمْ عَن ذِكْرِ اللَّهِ وَعَنِ الصَّلَوٰةِ فَهَلْ
أَنتُم مُّنتَهُونَ ﴿٩١﴾

92. आज्ञापालन करो अल्लाह का, और आज्ञापालन करो रसूल का और सतर्क रहो। लेकिन अगर तुम ने मुँह फेरा, तो जान लो कि हमारे रसूल पर तो केवल स्पष्ट रुप से संदेश पहुँचा देने की ज़िम्मेदारी थी।

وَأَطِيعُوا اللَّهَ وَأَطِيعُوا الرَّسُولَ وَاحْذَرُوا فَإِن تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوا أَنَّمَا
عَلَىٰ رَسُولِنَا الْبَلَٰغُ الْمُبِينُ ﴿٩٢﴾

93. जो लोग ईमान लाए और नेक अमल (सुकर्म) करते रहे उन्हों ने जो कुछ खा पी लिया था उस पर कोई पकड़ न होगी जब कि उन्होंने परहेज़गारी इख़्तियार की, ईमान लाए फिर तक़वा (अल्लाह का डर) अपनाया और अच्छे चरित्र वाले बन गए।[234] और अल्लाह चरित्रवान लोगों को पसन्द करता है।

لَيْسَ عَلَى الَّذِينَ ءَامَنُوا وَعَمِلُوا الصَّٰلِحَٰتِ جُنَاحٌ فِيمَا طَعِمُوا
إِذَا مَا اتَّقَوا وَّءَامَنُوا وَعَمِلُوا الصَّٰلِحَٰتِ ثُمَّ اتَّقَوا وَّءَامَنُوا ثُمَّ اتَّقَوا
وَّأَحْسَنُوا وَاللَّهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ﴿٩٣﴾

94. ऐ ईमान वालो ! अल्लाह तुम्हारी किसी ऐसे शिकार के द्वारा आज़माइश करेगा जो तुम्हारे हाथों और भालों की ज़द (पहुँच) में होगा [235] ताकि अल्लाह देख ले कि कौन उस से बिन देखे डरता है और जिस ने इस के बाद (सीमाओं का) उल्लंघन किया उस के लिए दुखदाई दण्ड है।

يَٰأَيُّهَا الَّذِينَ ءَامَنُوا لَيَبْلُوَنَّكُمُ اللَّهُ بِشَىْءٍ مِّنَ الصَّيْدِ تَنَالُهُ أَيْدِيكُمْ
وَرِمَاحُكُمْ لِيَعْلَمَ اللَّهُ مَن يَخَافُهُ بِالْغَيْبِ فَمَنِ اعْتَدَىٰ بَعْدَ
ذَٰلِكَ فَلَهُ عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿٩٤﴾

95. ऐ ईमान वालों ! एहराम की हालत में शिकार को न मारो [236] और जो कोई तुम में से जान बूझकर मार डाले तो इस का बदला यह है कि मवेशियों में से उसी जैसा जानवर---जिस का फ़ैसला तुम में से दो न्यायशील (आदिल) आदमी करेंगे ।बतौर क़ुर्बानी काबा पहुँचा देना होगा।[237] या यह कफ़्फ़ारा (पापघ्न) देना हो गा कि मिस्कीनों को खाना खिलाए या उस के बराबर रोज़े रखे [238] ताकि वह अपने किये का मज़ा चख ले। इस से पहले जो हो चुका उस से अल्लाह ने दरगुज़र किया। लेकिन जो कोई फिर करेगा उसे अल्लाह सज़ा देगा।[239] अल्लाह ग़ालिब और सज़ा देने वाला है।

يَٰأَيُّهَا الَّذِينَ ءَامَنُوا لَا تَقْتُلُوا الصَّيْدَ وَأَنتُمْ حُرُمٌ وَمَن قَتَلَهُ مِنكُم
مُّتَعَمِّدًا فَجَزَآءٌ مِّثْلُ مَا قَتَلَ مِنَ النَّعَمِ يَحْكُمُ بِهِ ذَوَا عَدْلٍ
مِّنكُمْ هَدْيًا بَٰلِغَ الْكَعْبَةِ أَوْ كَفَّٰرَةٌ طَعَامُ مَسَٰكِينَ أَوْ عَدْلُ
ذَٰلِكَ صِيَامًا لِّيَذُوقَ وَبَالَ أَمْرِهِ عَفَا اللَّهُ عَمَّا سَلَفَ وَمَنْ عَادَ
فَيَنتَقِمُ اللَّهُ مِنْهُ وَاللَّهُ عَزِيزٌ ذُو انتِقَامٍ ﴿٩٥﴾

233. यहाँ शराब और जुए के ऐसे तीन कारणों पर प्रकाश डाला गया है जो बिगाड़ को जन्म देते हैं।

एक यह कि वे चीज़ें आपस में बैर एवं द्वेष की आग भड़काती हैं जहाँ तक शराब की बात है कि वह चूँकि प्रेरक भी है और विवेक और बुद्धि को प्रभावित करने वाली भी इस लिए शराब पीने के बाद मन में उत्तेजना पैदा होती है और प्रतिशोध की ज्वाला भड़क उठती है। एवं बुद्धि इस दशा में नहीं होती कि आदमी सही फैसला कर सके या अपने को क़ाबू में रख सके। यही कारण है कि शराब पीने के परिणाम स्वरुप दुर्घटनाऐं भी अधिक होने लगती हैं और अपराध भी। गोया शराब और अपराध का चोली दामन का साथ है।

रहा जुआ तो हारने वाले के दिल में जीतने वाले के विरुद्ध द्वेष उत्पन्न हो जाता है क्यों कि वह समझता है कि उस का माल सत्य और न्याय के आधार पर बाज़ी जीतने वाले के हिस्से में नहीं गया है बल्कि बस इत्तिफ़ाक़ (Chance) से चला गया है। व्यपार में आदमी घाटा उठाता है लेकिन हारता नहीं है जब कि जुए में घाटे के साथ हार साथ लगी हुई है और हार का ख़्याल आदमी के अन्दर जीतने वाले के विरुद्ध ग़लत भावनाऐं पैदा कर देता है।

दूसरे यह कि शराब और जुआ दोनों की विशेषता यह है कि वह आदमी को ख़ुदा की याद से बेपरवाह कर देती है और यह सच्चाई है कि शराबी दुष्कर्म एवं पथभ्रष्ठता में लिप्त हो कर मस्ती से झूम रहे होते हैं उसी तरह जुआरी के मस्तिष्क पर हार जीत की कल्पना ऐसी सवार रहती है कि एक दायित्वपूर्ण जीवन व्यतीत करने का आभास उस में उभरने ही नहीं पाता और झुकाव काल्पनिक ऐश्वर्य की ओर हो जाता है।

तीसरे यह कि ये चीज़ें नमाज़ से रोकती हैं। और यह तो साधारण अनुभव में आने वाली बात है कि शराब और जुए के रसिया नमाज़ से बेपरवाह होते हैं। वास्तव में नमाज़ वही व्यक्ति पढ़ता है जिस की आत्मा जाग रही होती है लेकिन शराब और जुआ तो आदमी की आत्मा को बेसुध करने वाली चीज़ें हैं फिर ऐसा व्यक्ति नमाज़ के लिए किस तरह उठ खड़ा हो सकता है। अधिक व्याख्या के लिए देखिए सूरह बक़र: नोट ३१६,३१७,३१८ एवं सूरह निसा नोट ९७।

स्पष्ट रहे कि ख़म्र (शराब) से मुराद जैसा कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया है हर नशीली चीज़ है:

كُلُّ مُسْكِرٍ خَمْرٌ وَ كُلُّ مُسْكِرٍ حَرَامٌ

(مسلم کتاب الأشربة)

''हर वह चीज़ जो नशा पैदा करे ख़म्र है और हर नशीली चीज़ हराम है।'' (मुस्लिम किताबुल अशरबा)

كُلُّ مَا اَسْكَرَ عَنِ الصَّلٰوةِ فَهُوَ حَرَامٌ

(مسلم کتاب الأشربة)

''हर वह चीज़ जो नशा ला कर नमाज़ से रोक दे, हराम है।'' (मुस्लिम किताबुल अशरबा)

मालूम हुआ कि हराम होने का वास्तविक कारण नशा है अत: जो चीज़ भी नशा पैदा करने वाली हो वह ख़म्र अर्थात शराब है चाहे वह अंगूर से बनाई गई हो या खजूर से और जौ से बनाई गई हो या गुड़ से और चाहे लोगों ने उस का कोई भी नाम रखा हो (Whisky,Beer,Wine) के अलावा शराब के उद्देश्य से इस्तेमाल किए जाने वाले अल्कोहल और तमाम नशावर चीज़ों पर चाहे वह द्रव्य हों या ठोस, यह हुक्म लागू होता है। एवं हदीस में ईर्शाद हुआ है:

مَا اَسْكَرَ كَثِيْرُهٗ فَقِيْلُهٗ حَرَامٌ

(الترمذی ابواب الأشربة)

''जिस वस्तु की अधिक मात्रा नशा पैदा कर दे उस की थोड़ी मात्रा भी हराम है''। (अत्तिर्मिज़ी अबवाबुल अश्रबा)

यह इस लिए कि हराम की ओर झुकाव न हो और फितने का दरवाज़ा बन्द हो जाए।

जुए के बारे में भी यह बात समझ लेनी चाहिए कि हर वह लेन देन जिस की बुनियाद बस इत्तिफ़ाक़ (Chance) या हार,जीत पर हो, जुआ है चाहे वह सट्टे की शक्ल में हो यह घोड़ों और कुत्तों की रेस (Race) की शक्ल में या किसी और रुप में । मौजूदा ज़माने की लाटरियाँ जुए का ही आधुनिक रुप हैं चाहे वे सरकारी लाट्रियाँ (State Lotteries) ही क्यों न हों।

234. अर्थात् शराब आदि के स्पष्ट रुप से हराम ठहराए जाने से पूर्व जिन लोगों ने जो कुछ खा पी लिया उस पर अल्लाह के यहाँ कोई पूछताछ न होगी बशरतीका कि उन्हों ने हर आज़माइश के अवसर पर ईश भय दृढ़ता, और सत्यनिष्ठा का सबूत दिया हो। आयत में तक़वा, ईमान और सुकर्म का जो बार बार ज़िक्र हुआ है वह इस बात की तरफ़ इशारा करता है कि अल्लाह के आदेशों के पालन से सम्बन्धित आज़माइश के चरण (मरहले) बार बार पेश आए और अल्लाह के इन सच्चे एवं नि:स्वार्थ बन्दों ने हर ऐसे अवसर पर पूरी वफ़ादारी का सबूत दिया।

235. एहराम की हालत में शिकार की मनाही का हुक्म आयत १ में गुज़र चुका। यहाँ उसी सिलसिले में आगाह किया जा रहा है कि इस मामले में तुम्हारी कड़ी आज़माइश होगी।

अर्थात अल्लाह तआला ऐसे हालात पैदा करेगा कि शिकार तुम्हारे तीरों और भालों की बिलकुल जद में होगा, अगर तुम चाहो तो आसानी से शिकार कर सकते हो लेकिन तुम्हें चाहिए कि ख़ुदा से डरो और शरीअत की पाबन्दी की जो प्रतिज्ञा तुम ने की है उस पर क़ायम रहो । क़ुर्आन उतरने के समय अरब वासियों के लिए सफ़र के दौरान शिकार एक ज़रुरत की चीज़ थी अत: यह पाबन्दी उन के लिए आसान न थी और इस में उन का खुला इम्तिहान था।

236. इहराम की हालत में शिकार मना होने में यह बात भी शामिल है कि जिन जानवरों का शिकार किया जाता है उन में से अगर कोई जानवर अकस्मात निकट आ जाए और उसे पकड़ कर ज़ब्ह किया जा सकता हो तो भी उसे पकड़ना और जब्ह करना जायज़ न होगा ।

237. अर्थात् जिस तरह का जानवर उस ने मारा है उस जैसा जानवर जो घरेलू चौपायों में से हो क़ुर्बानी के लिए खाना-ए-काबा भेज देना होगा। जैसे हिरन को अगर मारा है तो उस के बराबर (समकक्ष) बकरी हो सकती है और नील गाय के समकक्ष गाय। लेकिन इस बात का फैसला कि कौन सा जानवर समकक्ष है ईमान वालों में से दो विश्वस्नीय एवं न्यायप्रिय आदमी करेंगे।

238. यह फैसला भी दो न्यायशील आदमी ही करेंगे कि कितने मिस्कीनों को खाना खिलाया जाए या कितने रोज़े रखे जाऐं।

239. कफ़्फ़ारा का मतलब यह नहीं हो कि आदमी नाफ़रमानी करता रहे और कफ़्फ़ारा देता रहे और यह समझता रहे कि उस पर आखिरत में कोई सज़ा न होगी।

तुम्हारे लिए हलाल कर दिया गया समुद्र का शिकार और उस की (अर्थात् समुद्री एवं दरियाई) ग़िज़ा (आहार) ताकि तुम भी लाभ उठाओ और क़ाफ़िले वाले भी। लेकिन ज़मीन (थल) का शिकार जब तक कि एहराम की हालत में हो तुम पर हराम है। अल्लाह से डरो जिस के सामने तुम सब हाज़िर किए जाओगे। (अल-क़ुर्आन)

96. तुम्हारे लिए हलाल कर दिया गया समुद्र का शिकार और उस की (अर्थात् समुद्री एवं दरियाई) ग़िज़ा (आहार)[240] ताकि तुम भी लाभ उठाओ और क़ाफ़िले वाले भी। लेकिन ज़मीन (थल) का शिकार जब तक कि एहराम की हालत में हो तुम पर हराम है। अल्लाह से डरो जिस के सामने तुम सब हाज़िर किए जाओगे।

أُحِلَّ لَكُمْ صَيْدُ الْبَحْرِ وَطَعَامُهُ مَتَاعًا لَّكُمْ وَلِلسَّيَّارَةِ ۖ وَحُرِّمَ
عَلَيْكُمْ صَيْدُ الْبَرِّ مَا دُمْتُمْ حُرُمًا ۗ وَاتَّقُوا اللَّهَ الَّذِي إِلَيْهِ
تُحْشَرُونَ ﴿٩٦﴾

97. अल्लाह ने हुर्मतवाले (आदरणीय) घर काबा को लोगों के लिए क़ियाम का साधन बनाया है।[241] और माहे हराम (आदरणीय मास) और क़ुर्बानी के जानवरों और (क़ुर्बानी के चिन्ह के तौर पर) पट्टे पड़े हुए जानवरों को भी।[242] इस लिए कि तुम जान लो कि अल्लाह जानता है जो कुछ आसमानों में है और जो कुछ ज़मीन में है। और अल्लाह हर चीज़ का इल्म (ज्ञान) रखने वाला है।[243]

جَعَلَ اللَّهُ الْكَعْبَةَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ قِيَامًا لِّلنَّاسِ وَالشَّهْرَ الْحَرَامَ
وَالْهَدْيَ وَالْقَلَائِدَ ۚ ذَٰلِكَ لِتَعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ يَعْلَمُ مَا فِي
السَّمَاوَاتِ وَمَا فِي الْأَرْضِ وَأَنَّ اللَّهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ﴿٩٧﴾

98. जान रखो कि अल्लाह कठोर दंड देने वाला भी है और बड़ा क्षमाशील और दयावान भी।[244]

اعْلَمُوا أَنَّ اللَّهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ وَأَنَّ اللَّهَ غَفُورٌ رَّحِيمٌ ﴿٩٨﴾

99. रसूल पर केवल पैग़ाम पहुँचा देने की ज़िम्मेदारी है। और (याद रखो) अल्लाह जानता है जो कुछ तुम ज़ाहिर करते हो और जो कुछ तुम छिपाते हो।

مَّا عَلَى الرَّسُولِ إِلَّا الْبَلَاغُ ۗ وَاللَّهُ يَعْلَمُ مَا تُبْدُونَ
وَمَا تَكْتُمُونَ ﴿٩٩﴾

100. कह दो, नापाक और पाक दोनों एक जैसे नहीं हो सकते यद्यपि नापाक की अधिकता तुम्हें भली लगे।[245] तो ऐ अक़्ल वालो ! अल्लाह से डरो ताकि सफ़लता एवं मुक्ति पाओ।

قُل لَّا يَسْتَوِي الْخَبِيثُ وَالطَّيِّبُ وَلَوْ أَعْجَبَكَ كَثْرَةُ
الْخَبِيثِ ۚ فَاتَّقُوا اللَّهَ يَا أُولِي الْأَلْبَابِ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿١٠٠﴾

101. ऐ ईमान वालो ! ऐसी बातों के बारे में सवालात न करो जो तुम पर ज़ाहिर कर दी जाऐं तो तुम्हें नागवार (अप्रिय) हों।[246] और अगर तुम उन के बारे में ऐसे समय सवाल करोगे जब कि क़ुर्आन नाज़िल हो रहा है तो वे तुम पर ज़ाहिर कर दी जाऐंगी। अल्लाह ने इन बातों से दरगुज़र फ़रमाया।[247] और अल्लाह क्षमा करने वाला और सहनशील है।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا لَا تَسْأَلُوا عَنْ أَشْيَاءَ إِن تُبْدَ لَكُمْ
تَسُؤْكُمْ وَإِن تَسْأَلُوا عَنْهَا حِينَ يُنَزَّلُ الْقُرْآنُ تُبْدَ
لَكُمْ عَفَا اللَّهُ عَنْهَا ۗ وَاللَّهُ غَفُورٌ حَلِيمٌ ﴿١٠١﴾

240. अर्थात् समुद्र और दरिया का शिकार करना एहराम की हालत में भी जायज़ है। उसी तरह उस से जो आहार प्राप्त हुआ हो चाहे एहराम बाँधने वाले के शिकार करने से प्राप्त हो या एहराम न बाँधने वाले के शिकार करने से, वह एहराम बाँधने वाले और न बाँधने वाले सब ही के लिए जायज़ है।

''तआमुहू'' (समुद्री आहार) के शब्द इस बात का प्रमाण भी प्रस्तुत करते हैं कि बग़ैर शिकार के जो खाने की चीज़ें समुद्र या दरिया खुद उगल दे उन का खाना भी जायज़ है।

241. अर्थात यह लोगों के एकत्रित होने का केनद्रीय स्थल है और उन की तमाम सरगर्मियों का केन्द्र है। हज्ज और उमरह की इबादतें इसी से सम्बद्ध हैं। यहाँ हिदायत का स्रोत उबलता है। यह अमन (शान्ति) का घर, इन्सानियत की पनाह गाह (शरणस्थल) और मुस्लिम मिल्लत को एक कड़ी में पिरो देने का महत्वपूर्ण साधन है।

242. इन चीज़ों का हुक्म आयत २में बयान हो चुका है। यहाँ यह स्पष्ट किया जा रहा है कि खान-ए-काबा के आदर (हुर्मत) के साथ इन चीज़ों का आदर भी अपने अन्दर महत्वपूर्ण दीनी नीति को समोए हुए है इस लिए इन के आदर के सिलसिले में जो हिदायतें दी गई हैं उन का पूरा पूरा ख़्याल रखो ।

243. अर्थात् ईश भक्ति की इन निशानियों के साथ जो महान नीति सम्बद्ध हैं उन को देख कर यह विश्वास पैदा हो जाता है कि जिस हस्ती ने आदर की यह व्यवस्था बनाई और हिकमतों से लबालब शरीअत प्रदान की उस पर आसमान और ज़मीन की सारी हक़ीक़तें उजागर हैं और वह अपने ज्ञान में बिल्कुल संपूर्ण है।

244. इशारा है इस बात की तरफ़ कि जो लोग ईशभक्ति की इन निशानियों का निरादर करेंगे वे दंड के भागीदार होंगे और जो इन का आदर करेंगे वे बख़्शिश और रहमत के अधिकारी होंगे।

245. यह उस ग़लत मानसिकता पर करारा प्रहार है जो अच्छाई और बुराई के बारे में आम तौर से लोगों में पाया जाता है। जब किसी बुराई का चलन आम हो जाता है तो उस में लोगों को बड़ा आकर्षण महसूस होने लगता है और वे उस की तरफ़ लपकते हैं। फिर न वे पाक और नापाक में फर्क करने की ज़रुरत महसूस करते हैं और न उन्हें इस बात से दिलचस्पी होती है कि हलाल क्या है और हराम क्या? मगर बुराई की अधिकता को देख कर उस से प्रभावित हो जाना मूर्खों का काम है बुद्धि जीवियों का नहीं। क्यों कि विवेक और स्वभाव, अच्छाई और बुराई को एक जैसा नहीं ठहराता और न अच्छे एवं बुरे लोगों को एक ही सतह पर रखता है। वह दूध और गोबर में और शहद और शराब में अन्तर करता है और गन्दगी की मात्रा कितनी ही बड़ी क्यों न हो उस से घृणा ही करती है।

यह उसूली हक़ीक़त यहाँ इस लिए स्पष्ट कर दी गई है ताकि शरीअत ने जिन चीज़ों को नापाक और हराम ठहराया है उन में लोग इस कारण लिप्त न हों कि जनमानस की भारी संख्या उस पर टूट पड़ी है या ज़माने का बहाव उसी की ओर है।

246. अर्थात् शरीअत के आदेशों से सम्बन्ध अनावश्यक प्रश्न न करो क्यों कि इस के नतीजे में पाबन्दियों में वृद्धि होगी। यह और इसी तरह की दूसरी आयतों के द्वारा क़ुर्आन ने अपने अनुयाईयों की जो मानसिकता बनाई और नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने अपने साथियों की जिस तरह तरबियत फ़रमाई उस की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह थी कि वे शरीअत के आदेशों का सच्चे मन से पालन एवं अनुसरण करते और उस के वास्तविक उद्देश्य को पूरा करने का प्रयास करते। अनावश्यक बहसें खड़ी करने, उस में उलझने और बातों को कुरेदने से उन्हें कोई सरोकार नहीं था। क्यों कि कुरेदने और उलझाव उत्पन्न करने से वह विस्तार एवं व्यापकता जो आदेशों से संबद्ध शरीअत के सामने रही है, बाकी नहीं रहती, और तंगी पैदा हो जाती है। लेकिन बाद के दौर में यह विशेषता कम होती चली गई और जो मानसिकता बन गई उस को सहाबा किराम की मानसिकता से दूर का भी वास्तव नहीं था। अत: एक ख़ास तरह की फ़िक़ही मानसिकता परवान चढ़ी और जब कुरेद शुरु हुई और तफ़सीलों में मस्तिष्क उलझने लगा तो अमल कम और बातें अधिक होने लगीं। और एक विशेष वर्ग को तो खोज बीन कर के सवालात बनाने, बाल की खाल निकालने और अनावश्यक एवं मन गड़न्त समस्याऐं पैदा करने में ऐसी निपुणता आ गई जैसी कि वर्तमान दौर के क़ानूनविधों एवं वकीलों (Lawyers & Advocates) को होती है। फ़िक़्ह (इस्लामी धर्म शास्त्र) की किताबों में इस की अनगिनत मिसालें मिलेंगी । मिसाल के तौर पर यह सवाल कि कोई व्यक्ति हज्ज के लिए जाए और सफ़ा एवं मरवह के मध्य निर्वस्त्र हो कर सअी करे तो उस की सअी अदा होगी यह नहीं?ज़ाहिर है यह एक व्यर्थ का गढ़ा हुआ प्रश्न है क्यों कि जो व्यक्ति हज्ज के लिए जाएगा वह बेहयाई का काम क्यों करने लगे? या यह मसला कि अगर कोई अज़ान देते समय अज़ान के दौरान मुर्तद (इस्लाम से विमुख) हो जाए तो दूसरा अज़ान देने वाला अज़ान कहाँ से शुरु करे? संभवत: यह मसला न कभी पेश आया होगा और न क़ियामत तक पेश आने की संभावना है। इसी तरह यह मसला कि अगर किसी ने अपनी पत्नी से कहा कि तेरे हाथ को तलाक़ या तेरे पाँव को तलाक़ या तेरे सर को तलाक़ तो तलाक़ हो जाएगी या नहीं? या अगर किसी ने अपनी पत्नी से कहा कि आसमान में जितने तारे हैं तुझे उतनी ही तलाक़ें, तो कितनी तलाक़ें हुई?या यह मसला कि कोई

व्यक्ति उस लड़की से निकाह कर सकता है जिस की माँ से व्यभिचार कर चुका हो? जब इस तरह के प्रश्न उत्पन्न कर दिए गए तो उस का असर निश्चित रुप से आचार एवं विचार पर पड़ा और वह सोच, वह मानसिकता और वह स्पिरिट बाकी नहीं रही जो आरम्भिक काल के इस्लाम का अनुसरण करने वालों कि ख़ास पहचान थी। हदीस में आता है:

وَسَكَتَ عَنْ اَشْيَاءَ مِنْ غَيْرِ نِسْيَانٍ فَلاَ تَبْحَثُوا عَنْهَا ۔

(مشكوٰة كتاب الايمان باب الاعتصام)

"और अल्लाह ने कुछ चीज़ों के बारे में ख़ामोशी इख़्तियार कर ली है बग़ैर इस के कि उसे भूल लाहक़ हुई हो तो ऐसी चीज़ों को कुरेदों मत"। (मिश्कात किताबुल ईमान बाब अल- एतिसाम)

एक और हदीस में है कि नबी सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम अधिक सवाल करने से मना फ़रमाया करते थे। (मुस्लिम किताबुल अलक़ज़िया)

एक अवसर पर आप ने फ़रमाया "लोगों तुम पर हज्ज फ़र्ज़ किया गया है लिहाज़ा हज्ज करो ।" उस व्यक्ति ने कहा ! क्या हर साल या रसुलुल्लाह? आप ख़ामोश रहे। जब उस व्यक्ति ने अपना सवाल तीन बार दोहराया तो आप ने फ़रमाया, अगर मैं हाँ कह देता हुँ तो तुम पर फ़र्ज़ (अनिवार्य) हो जाता, फिर तुम उस का पालन न कर पाते । फिर आप ने फ़रमाया "मैं तुम्हें जिस हाल में छोड़ूँ उसी पर मुझे छोड़ दो क्यों कि तुम से पहले के लोग अधिक सवाल करने और अपने नबियों से मतभेद ही के कारण बर्बाद हो गए । अत: जब मैं तुम्हें किसी बात का हुक्म दूँ तो जिस हद तर तुम्हारी क्षमता एवं सामर्थ्य है उस पर अमल करो और जब किसी बात से मना करुँ तो उसे छोड़ दो।" (मुस्लिम किताबुल हज्ज बाब:७३)

247. मालूम होता है शरीअत के आदेशों की तफ़सील के सिलसिले में कुछ लोगों ने अनावश्यक सवाल किए थे। उस बारे में फ़रमाया कि अल्लाह ने उन को नज़रंदाज़ कर दिया। अलबत्ता आगे के लिए सावधान रहो ।

ऐ ईमान वालो ! अपनी चिन्ता करो । अगर तुम हिदायत पर हो तो दूसरों का गुमराह होना तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। तुम सब को अल्लाह ही की तरफ़ लौट कर जाना है। फिर वह तुम्हें बता देगा कि तुम क्या करते रहे हो। (अल-क़ुर्आन)

102. इसी तरह के सवालात तुम से पहले एक गिरोह ने किए थे। फिर वे लोग उन ही के कारण इन्कार करने वाले हो गए।[248]

قَدْ سَأَلَهَا قَوْمٌ مِّنْ قَبْلِكُمْ ثُمَّ أَصْبَحُوا بِهَا كَافِرِينَ ﴿١٠٢﴾

103. अल्लाह ने न ''बहीरा'' ठहराया और न ''साइबा'' और न ''वसीला'' और न ''हाम''।[249] लेकिन काफ़िर झूठ गढ़ कर उसे अल्लाह से सम्बद्ध करते हैं और उन में से बहुतेरे बे अक्ल हैं।

مَا جَعَلَ اللّٰهُ مِنْ بَحِيرَةٍ وَّلَا سَائِبَةٍ وَّلَا وَصِيلَةٍ وَّلَا حَامٍ
وَّلٰكِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا يَفْتَرُونَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ
وَأَكْثَرُهُمْ لَا يَعْقِلُونَ ﴿١٠٣﴾

104. और जब उन से कहा जाता है कि आओ उस बात की तरफ़ जो अल्लाह ने उतारी है और आओ रसूल की तरफ़ तो कहते हैं, हमारे लिए तो वही तरीक़ा काफ़ी है जिस पर हम ने अपने बाप दादा को पाया है। क्या ये उस सूरत में भी (बाप दादा का अंधानुकरण) करते रहेंगे जब कि उन के बाप दादा न कुछ जानते हों और न हिदायत पर रहे हों ?[250]

وَإِذَا قِيلَ لَهُمْ تَعَالَوْا إِلَىٰ مَا أَنْزَلَ اللّٰهُ وَإِلَى الرَّسُولِ قَالُوا
حَسْبُنَا مَا وَجَدْنَا عَلَيْهِ آبَاءَنَا أَوَلَوْ كَانَ آبَاؤُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ
شَيْئًا وَّلَا يَهْتَدُونَ ﴿١٠٤﴾

105. ऐ ईमान वालो ! अपनी चिन्ता करो। अगर तुम हिदायत पर हो तो दूसरों का गुमराह होना तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता।[251] तुम सब को अल्लाह ही की तरफ़ लौट कर जाना है। फिर वह तुम्हें बता देगा कि तुम क्या करते रहे हो।

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا عَلَيْكُمْ أَنْفُسَكُمْ لَا يَضُرُّكُمْ مَّنْ ضَلَّ إِذَا
اهْتَدَيْتُمْ إِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيعًا فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿١٠٥﴾

106. ऐ ईमान वालो ! जब तुम में से किसी की मौत आ खड़ी हो तो वसीयत के समय दुम्हारे बीच गवाही (की सूरत)यह है कि तुम में से दो न्यायप्रिय (विश्वसनीय) आदमी गवाह बनाये जाऐं।[252] या अगर तुम सफ़र में हो और मौत की मुसीबत आ पहुँचे तो ग़ैर मुस्लिमों में से दो आदमियों को गवाह बनाया जाए।[253] (फिर अगर तुम्हें शक हो जाए तो उन्हें नमाज़ के बाद रोक लो।[254] और वे अल्लाह की क़सम खा कर कहें कि हम किसी क़ीमत पर भी गवाही का सौदा नहीं करेंगे चाहे कोई हमारा रिश्तेदार ही क्यों न हो और न हम अल्लाह की गवाही छिपाऐंगे। अगर हम ने ऐसा किया तो गुनाहगार होंगे।[255]

يَا أَيُّهَا الَّذِينَ آمَنُوا شَهَادَةُ بَيْنِكُمْ إِذَا حَضَرَ أَحَدَكُمُ الْمَوْتُ
حِينَ الْوَصِيَّةِ اثْنَانِ ذَوَا عَدْلٍ مِّنْكُمْ أَوْ آخَرَانِ مِنْ غَيْرِكُمْ إِنْ
أَنْتُمْ ضَرَبْتُمْ فِي الْأَرْضِ فَأَصَابَتْكُمْ مُّصِيبَةُ الْمَوْتِ
تَحْبِسُونَهُمَا مِنْ بَعْدِ الصَّلٰوةِ فَيُقْسِمَانِ بِاللّٰهِ إِنِ ارْتَبْتُمْ
لَا نَشْتَرِي بِهِ ثَمَنًا وَّلَوْ كَانَ ذَا قُرْبَىٰ
وَلَا نَكْتُمُ شَهَادَةَ اللّٰهِ إِنَّا إِذًا لَّمِنَ الْآثِمِينَ ﴿١٠٦﴾

248. इशारा है यहूदियों की तरफ़ जिन्हों ने सवाल पे सवाल कर कर के अपने लिए मुश्किलें पैदा कर लीं और आदेशों की तफ़सील में इस तरह गए कि नई नई और बारीक बारीक बातों की खोज बीन के द्वारा अपने लिए और जकड़ बन्दियाँ पैदा कर लीं और फिर उन में इस तरह उलझ गए कि नाफ़रमान और इन्कार करने वाले बन कर रह गए । सूरह बक़र: आयत ६७ से ७१ में गाय का किस्सा ग़ुज़र चुका है कि जब उन को ज़ब्ह करने का हुक्म दिया गया तो उन्होंने तरह तरह के सवालात कर के शरीअत के एक आसान हुक्म को मुश्किल बना दिया और अपने ऊपर पाबन्दियों में वृद्धि करा ली।

249. मतलब यह कि अल्लाह ने ये चीज़ें शरीअत में शामिल नहीं की हैं। ये चीज़ें तो मनुष्य के भ्रम एवं अंधविश्वास ''की उपज हैं। और इन की कोई शरअी हैसियत नहीं।''बहीरा'' ''साइबा'' ''वसीला'' और हाम उन जानवरों के नाम हैं जिन को बहुदेववादी पुण्य (ख़ैरात) कर के देवताओं के नाम छोड़ देते थे।

''बहीरा'' उस ऊँटनी को कहते थे जिस का पाँचवा बच्चा नर होता । ऐसी ऊँटनी के कान चीर कर उसे बुतों के नाम पर आज़ाद छोड़ देते, न उस पर सवारी करते न उस का दूध दूहते और न उस को ज़ब्ह करते।

''साइबा'' उस ऊँट या ऊँटनी को कहते जो किसी की मन्नत पूरी होने पर या रोगी के अच्छे हो जाने पर शुक्राने के तौर पर देवताओं के नाम आज़ाद छोड़ दी जाती फिर उस से सवारी आदि का काम न लेते ।

''वसीला'' उस बकरी को कहते थे जो एक निश्चित संख्या में बच्चे जनती और आख़िरी बार नर और मादा एक साथ पैदा होते। ऐसी बकरी का दूध औरतों पर हराम होता और उसे देवताओं के नाम पर छोड़ देते।

''हाम'' उस ऊँट को कहते हैं जिस से दस बच्चे पैदा हो चुके होते। ऐसे ऊँट को बुतों के लिए आज़ाद छोड़ देते और उस से कोई काम लेना वैध नहीं समझते थे।

ये सब ख़ुराफ़ात और अंधविश्वास की दासता थी और ये तरीक़ा जैसा कि हदीस में आता है कि अज्ञानता काल में अमर बिन आमिर अलख़ज़ाअी ने प्रचलित किया था।

''रसूलुल्लाहु सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम ने फ़रमाया कि मैं ने अम्र बिन आमिर अलख़ज़ाअी को देखा कि दोज़ख में अपनी अंतड़ियाँ घसीट रहा है। वह पहला व्यक्ति है जिस ने ''साइबा''(देवताओं के नाम पर जानवरों को आज़ाद छोड़ने) का तरीक़ा प्रचलित किया । (बुख़ारी किताबुत्तफ़्सीर)

आज भी बहुदेववादी देवी देवताओं के नाम पर गाय, बैल आदि को पुण्य कर के आज़ाद छोड़ देते हैं और मुसलमानों में भी जो लोग शिर्क और बिद्अत में लिप्त हैं वे बकरे आदि पीर या वली के नाम छोड़ देते हैं। इन तमाम खुराफ़ात से अल्लाह की शरीअत पाक है।

250. अर्थात किसी रीति का बाप दादा के समय से चलते चले आना या सभ्यता का अंश होना इस बात का प्रमाण नहीं है कि वह तरीक़ा सही है और हिदायत पर आधारित है। अगर किसी के बाप दादा इल्म (ज्ञान) की रौशनी या हिदायत से वंचित रहे हों तो उन का अंधानुकरण करना कहाँ की बुद्धिमानी है।

251. अर्थात् जब अल्लाह के रसूल ने उन पर प्रमाण स्पष्ट कर दिया (अथवा हुज्जत क़ायम कर दी) और इस के बाद भी वे गुमराही में पड़े रहना चाहते हैं तो उन को उन के हाल पर छोड़ दो। उन की हठ्धर्मी उन ही को बुरे अन्जाम तक पहुँचाएगी । तुम्हारा वे कुछ नहीं बिगाड़ेंगे बशर्ते कि तुम हिदायत पर जमें रहो।

इस का यह मतलब नहीं है कि आदमी केवल अपनी चिन्ता करे और दूसरों के सुधार एवं हिदायत से बेपरवाह हो जाए। क़ुर्आन ने मुस्लिम उम्मत पर सत्य की गवाही देने, दीन की दअवत देने, हक़ की तल्क़ीन करने, नेकी का हुक्म करने और बुराई से रोकने की ज़िम्मेदारियाँ आयद की हैं। और इन को पूरा करना आदमी के हिदायत पा लेने का खुला तक़ाज़ा है। अत: इस आयत का ऐसा अर्थ लेना जिस से ज़िम्मेदारियाँ समाप्त होती हों हरगिज़ सही नहीं है। इस सिलसिले में कोई ग़लतफ़हमी न हो इस लिए हज़रत अबू बक्र सिद्दीक रज़ियल्लाहु अन्हु ने अपने ख़ुत्बे में इर्शाद फ़रमाया था:

लोगों! तुम यह आयत पढ़ते हो, और मैं ने रसूलुल्लाह सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम को यह फ़रमाते हुए सुना है कि जब लोगों का हाल यह हो जाए कि वह ज़ालिम को देखें और उस का हाथ न पकड़ें तो असंभव नहीं कि अल्लाह उन को अज़ाब की लपेट में ले ले।'' (तिर्मिज़ी अबवाबुत्तफ़्सीर)

252. अर्थात् जब किसी व्यक्ति पर मौत के चिन्ह प्रकट हों और वह वसीयत करना चाहे या उस के लिए वसीयत करना ज़रुरी हो तो वह मुसलमानों में से दो भरोसेमन्द (दीनदार और विश्वसनीय) आदमियों को उस पर गवाह बना ले। वसीयत अपने माल में से भी हो सकती है और इस बात की भी हो सकती है कि मेरे पास फ़लाँ फ़लाँ व्यक्ति की ये और ये अमानतें हैं और वह उन के हवाले कर दी जाऐं तथा क़र्ज़ या वाजिबात (ज़रुरी ज़िम्मेदारियों) की अदायगी भी हो सकती है। वसीयत की शरअी सीमा की व्याख्या सूरह निसा नोट २९ में गुज़र चुकी।

स्पष्ट रहे कि वसीयत अगर जबानी (Oral Will) हो तो इस्लाम में जायज़ है और अगर लिखित रुप से हो तो बेहतर है। चूँकि उस ज़माने में लिखने पढ़ने का चलन आम नहीं था

और लिखने की सामाग्री भी आसानी से उपलब्ध नहीं हो सकती थीं इस लिए क़ुर्आन ने वसीयत के लिए लिखित होने की क़ैद नहीं लगाई अलबत्ता उस पर दो सच्चे मुसलमानों को गवाह बनाना ज़रुरी ठहराया।

253. अर्थात् अगर सफ़र में मौत की मुसीबत पेश आ जाती है और गवाह बनाने के लिए दो मुसलमान नहीं मिल रहें हैं तो ग़ैर मुस्लिमों में से दो आदिमियों को गवाह बनाया जा सकता है। यह मजबूरी की सूरत होगी इस लिए इस्लाम ने इस का लिहाज़ किया है वरना गवाहों के सिलसिले में असल मेयार वही है जो ऊपर बयान हुआ है।

ध्यान रहे कि ग़ैर मुस्लिमों में से उन ही लोगों को गवाही के लिए चुना जा सकता है जो ख़ुदा के मानने वाले हों और समय पड़ने पर उस की क़सम खा कर बयान दे सकते हों। रहे वे लोग जो ख़ुदा का इन्कार करते हैं वे किसी तरह गवाह बनाए जाने के योग्य नहीं हैं । इस पर तर्क, आयत का वह मज़मून है जो आगे बयान हुआ है।

254. अर्थात् जब वसीयत करने वाले की मृत्यु हो चुकी हो और उस की वसीयत का किस तरह पालन किया जाए यह समस्या खड़ी हो और गवाहों के बयान के बारे में शंका पैदा हो तो उन्हें नमाज़ के बाद रोक कर उन से हलफ़िया (क़सम दिला कर) बयान लिया जाए। नमाज़ के बाद अर्थात् फ़र्ज़ नमाज़ों में से किसी भी नमाज़ के बाद ताकि गवाह पूरी ज़िम्मेदारी के एहसास के साथ हलफ़िया बयान दें।

255. इस हलफ़िया बयान के साथ उन्हें वसीयत के सिलसिले में अपनी गवाही पेश करना होगी। उस बयान में इस बात को सुनिश्चित करना होगा कि उन्होंने रिश्वत ले कर के या अपने किसी व्यक्तिगत लाभ के लिए या अपने किसी रिश्तेदार की तरफ़दारी के उद्देश्य से वसीयत के मामले में अपनी तरफ़ से कोई संशोधन तो नहीं किया है।

❒ ❒ ❒ ❒ ❒ ❒

जिस दिन अल्लाह सब रसूलों को जमा करेगा और पूछेगा कि तुम्हें क्या जवाब मिला ?वे कहेंगे, हमें कुछ ज्ञान नहीं तू ही ग़ैब की बातों को जानने वाला है।(अल-क़ुर्आन)

107. फिर अगर मालूम हो जाए कि वे दोनों गुनाह (हक़ मारने) के अपराधी हुए हैं तो उन की जगह दो और व्यक्ति जो गवाही देने के अधिक योग्य हों उन लोगों में से खड़े हो जाएं जिन का हक़ मारा गया है।[256] और वे अल्लाह की क़सम खा कर कहें कि हमारी गवाही उन की गवाही से अधिक ठीक है और हम ने कोई ज़्यादती नहीं की है। अगर हम ऐसा करें तो ज़ालिम होंगे।[257]

فَإِنْ عُثِرَ عَلَىٰٓ أَنَّهُمَا اسْتَحَقَّآ إِثْمًا فَـَٔاخَرَانِ يَقُومَانِ مَقَامَهُمَا
مِنَ الَّذِينَ اسْتَحَقَّ عَلَيْهِمُ الْأَوْلَيَـٰنِ فَيُقْسِمَانِ بِاللَّهِ
لَشَهَـٰدَتُنَآ أَحَقُّ مِن شَهَـٰدَتِهِمَا وَمَا اعْتَدَيْنَآ إِنَّآ إِذًا
لَّمِنَ الظَّـٰلِمِينَ ﴿١٠٧﴾

108. इस तरीक़े से अधिक आशा की जा सकती है कि वे ठीक ठीक गवाही देंगे या इस बात से डरेंगे कि उन की क़समों के बाद कुछ क़समें रद्द न कर दी जाऐं।[258] अल्लाह से डरो और सुनो, अल्लाह नाफ़रमानी करने वालों को राह से महरुम कर देता है।

ذَٰلِكَ أَدْنَىٰٓ أَن يَأْتُوا بِالشَّهَـٰدَةِ عَلَىٰ وَجْهِهَآ أَوْ يَخَافُوٓا أَن
تُرَدَّ أَيْمَـٰنٌۢ بَعْدَ أَيْمَـٰنِهِمْ ۗ وَاتَّقُوا اللَّهَ وَاسْمَعُوا ۗ وَاللَّهُ
لَا يَهْدِى الْقَوْمَ الْفَـٰسِقِينَ ﴿١٠٨﴾

109. जिस दिन अल्लाह सब रसूलों को जमा करेगा और पूछेगा कि तुम्हें क्या जवाब मिला ?[259] वे कहेंगे, हमें कुछ ज्ञान नहीं तू ही ग़ैब की बातों को जानने वाला है।[260]

يَوْمَ يَجْمَعُ اللَّهُ الرُّسُلَ فَيَقُولُ مَاذَآ أُجِبْتُمْ ۖ قَالُوا لَا عِلْمَ
لَنَآ ۖ إِنَّكَ أَنتَ عَلَّـٰمُ الْغُيُوبِ ﴿١٠٩﴾

110. (वह दिन) जब अल्लाह फ़रमाएगा ऐ ईसा इब्ने मरयम ![261] मेरी उस नेमत को याद करो जिस से मैं ने तुम को और तुम्हारी माँ को नवाज़ा था। जब मैं ने रुहुल कुदुस [262] (पवित्र आत्मा) से तुम्हारी मदद की, तुम पालने में भी लोगों से बात करते थे और बड़ी आयु में भी। [263] और जब मैं ने तुम्हें किताब और हिकमत (गहरी समझ) और तौरात और इन्जील की शिक्षा दी। और जब तुम मेरे हुक्म से मिट्टी से परिन्दा की सी (जैसी)सूरत बनाते थे और उस में फूँक मारते तो वह मेरे हुक्म से परिन्दा बन जाती थी।[264] और तुम मेरे हुक्म से पैदाइशी अन्धे और कोढ़ी को अच्छा करते थे।[265] और जब तुम मुर्दों को मेरे हुक्म से निकाल खड़ा करते थे।[266] और जब मैं ने बनी इस्राईल (के हाथों) को तुम से रोक दिया था [267] जब कि तुम उन के पास खुली निशानियाँ ले कर पहुँचे थे। और जो लोग उन में से काफ़िर थे उन्होंने कहा था कि यह इस के सिवा कुछ नहीं कि खुली जादूगरी है।[268]

إِذْ قَالَ اللَّهُ يَـٰعِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ اذْكُرْ نِعْمَتِى عَلَيْكَ وَعَلَىٰ
وَٰلِدَتِكَ إِذْ أَيَّدتُّكَ بِرُوحِ الْقُدُسِ تُكَلِّمُ النَّاسَ
فِى الْمَهْدِ وَكَهْلًا ۖ
وَإِذْ عَلَّمْتُكَ الْكِتَـٰبَ وَالْحِكْمَةَ وَالتَّوْرَىٰةَ وَالْإِنجِيلَ ۖ وَإِذْ
تَخْلُقُ مِنَ الطِّينِ كَهَيْـَٔةِ الطَّيْرِ بِإِذْنِى فَتَنفُخُ فِيهَا
فَتَكُونُ طَيْرًۢا بِإِذْنِى ۖ وَتُبْرِئُ الْأَكْمَهَ وَالْأَبْرَصَ بِإِذْنِى ۖ
وَإِذْ تُخْرِجُ الْمَوْتَىٰ بِإِذْنِى ۖ وَإِذْ كَفَفْتُ بَنِىٓ إِسْرَٰٓءِيلَ عَنكَ
إِذْ جِئْتَهُم بِالْبَيِّنَـٰتِ فَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْهُمْ إِنْ
هَـٰذَآ إِلَّا سِحْرٌ مُّبِينٌ ﴿١١٠﴾

256. मतलब यह है कि अगर दृढ़ एवं निकटतम अनुमान या हालात की गवाही (Circumstancial Evidence) के आधार पर उत्तराधिकारियों पर यह खुल जाए कि वसीयत के गवाहों ने गलतबयानी से काम लिया है या वसीयत करने वाले ने जो अमानत उन के हवाले की थी--- और सफ़र में इस तरह की परिस्थितियों का उत्पन्न होना संभावित ही है कि मरने वाला अपने सामान आदि अपने साथियों के हवाले कर के उन को वसीयत करे कि ये चीज़ें इन के वारिसों को पहुँचा दो--- उस में वे ख़ियानत कर बैठे हैं तो उन वारिसों में से दो व्यक्ति जो गवाही देने के अपेक्षाकृत अधिक योग्य हों उक्त गवाहों की जगह अपना हलफ़िया बयान देने के लिए खड़े हो जाऐं।

257. उन के खण्डन करने वाले इस हलफ़िया बयान के बाद वसीयत के गवाहों की गवाही रद्द हो जाएगी और इस विवादित मामले का फ़ैसला उन लोगों के बयान के अनुकूल होगा जिन का हक़ छिन गया है।

इस से इस्लाम के गवाही विधान के बारे में यह उसूली बात स्पष्ट होती है कि कुछ सूरतों में हालात की गवाही (Circumstancial Evidence) न केवल मान्य है बल्कि इस के आधार पर गवाहियाँ रद्द भी की जा सकती हैं बशर्ते कि उस की पुष्टि हलफ़िया बयान के द्वारा हुई हो।

258. गवाही का जो तरीक़ा यहाँ बयान हुआ है वह दो महत्त्वपूर्ण बातों पर आधारित है। एक हलफ़िया बयान और दूसरे खण्डन करने की क़सम। यह तरीक़ा सर्वाधिक उचित है। इस लिए कि इस के रहते गवाह सावधानी बरतें गे और ठीक ठीक गवाही देंगे। वरना उन्हें इस बात की आशंका रहेगी कि कहीं खण्डन करने वाली क़समों द्वारा उन की गवाहियाँ रद्द न कर दी जाऐं।

259. अर्थात् जितने पैग़म्बर (संदेष्टा) भी दुनिया में भेजे गए थे उन सब को अल्लाह तआला क़ियामत के दिन अपनी अदालत में जमा करेगा और उन से पूछेगा कि जो पैग़ाम दे कर तुम भेजे गए थे उस के साथ लोगों ने क्या व्यवहार किया?

260. इस का यह मतलब नहीं कि पैग़म्बरों को उन की ज़िन्दगी में उन की क़ौमों की तरफ़ से जो जवाब मिला उस सिलसिले में वे अनभिज्ञता प्रकट करेंगे क्यों कि उन के बारे में नबियों की गवाही देने का वर्णन क़ुर्आन में दूसरी जगहों पर हुआ है, बल्कि मतलब यह है ख़ुदा की अदालत के प्रताप को देखते हुऐ वे अपनी विनम्रता एवं विवशता प्रकट करेंगे कि हर चीज़ की ख़बर रखने वाले के सामने उन के ज्ञान की कोई हक़ीक़त नहीं। यह जवाब इस दृष्टि से भी औचित्यपूर्ण होगा कि सवाल का सम्बन्ध इन्कार करने वालों ही से नहीं बल्कि नबियों की उम्मतों से भी होगा । इस लिए वे इस बात से अपनी अनभिज्ञता प्रकट करेंगे कि उन के दुनिया से कूच कर जाने के बाद उन के अनुयायियों ने उन की शिक्षाओं में कोई रद्दोबदल किया या नहीं और किया तो किस प्रकार का।

261. क़ियामत के दिन अल्लाह तआला पैग़म्बरों से जो कुछ फ़रमाएगा उस सिलसिले में हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का वर्णन विशेष रुप से किया जा रहा है।

262. रुहुल-क़ुदुस की व्याख्या सूरह बक़र: नोट ११० और ४०५ में गुज़र चुकी।

263. देखिए सूरह आले-इमरान नोट ६८ और ६९।

264. मिट्टी से पक्षी बनाने का चमत्कार हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम ने अल्लाह ही के हुक्म से दिखाया था और उस में जान अल्लाह ही के हुक्म से पड़ती थी। अर्थात् हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम खुद जान डालने की क़ुदरत (सामर्थ्य) नहीं रखते थे बल्कि यह अल्लाह की क़ुदरत का करिश्मा था।

265. हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का यह चमत्कार (मोअजज़ा) बाइबिल में भी बयान हुआ है ''फिर जाते हुए उस ने एक मनुष्य को देखा जो जन्म का अन्धा था ......यह कह कर उस ने जमीन पर थूका और उस थूक से मिट्टी सानी और वह मिट्टी उस अन्धे की आँखों पर लगा कर उस से कहा जा, शीलोह के कुण्ड में धो ले। सो उस ने जा कर धोया और देखता हुआ लौट आया...... उन्हों ने उस अन्धे से फिर कहा, उस ने जो तेरी आँखें खोली तू उस के विषय में क्या कहता है? उस ने कहा वह भविष्यद्वक्ता है ।''(यूहन्ना अध्याय९)

''और किसी गाँव में प्रवेश करते समय उसे दस कोढ़ी मिले। और उन्हों ने दूर खड़े हो कर ऊँचे श्ब्दो से कहा, हे यीशु हे स्वामी, हम पर दया कर। उस ने उन्हें देख कर कहा जाओ और अपने तईं काहिनों को दिखाओ और जाते ही जाते वे शुद्ध हो गए तब उन में से एक यह देख कर कि मैं चंगा हो गया हूँ उँचे शब्द से परमेश्वर की बड़ाई करता हुआ लौटा।'' (लूका १७:१२ से १६)

266. अर्थात् मौत की हालत से निकाल कर ज़िन्दा कर देते थे। यह चमत्कार भी इन्जील में बयान हुआ है।

''वह यह कह ही रहा था कि किसी ने आराधनालय के सरदार के यहाँ से आ कर कहा तेरी बेटी मर गई गुरु को दुख न दे। यीशु ने सुन कर उसे उत्तर दिया, मत डर, केवल विश्वास रख, तो वह बच जाएगी। घर में आकर उस ने पतरस और यूहन्ना और याक़ूब और लड़की के माता पिता को छोड़ और किसी को अपने साथ भीतर आने न दिया। और सब उस के लिए रो पीट रहे थे, परन्तु उस ने कहा रोओ मत, वह मरी नहीं परन्तु सो रही है। वे ये जान कर कि मर गई है उस की

हँसी करने लगे। परन्तु उस ने उस का हाथ पकड़ा और पुकार कर कहा, हे लड़की उठ । तब उस के प्राण फिर आए और वह तुरन्त उठी फिर उस ने आज्ञा दी कि उसे कुछ खाने को दिया जाए।''(लूका ८:४९से ५५)

267. अर्थात बनी इस्राईल की साज़िशों से बचाया अत: वे सूली पर चढ़ाने या क़त्ल करने में सफल न हो सके। अधिक व्याख्या के लिए देखें सूरह आले-इमरान नोट८१।

268. अर्थात ईसा अलैहिस्लाम के इन चमत्कारों को उन्हों ने जादू करार दिया हालाँकि किसी जादूगर ने आज तक न किसी मुर्दे को जिन्दा किया है और न अन्धे को आँख वाला किया और न ही कोई जादूगर नैतिक एवं चारित्रिक पवित्रता का सबूत दे सका है।

और जब मैं ने हवारियों (मसीह के साथियों) पर इल्हाम किया था कि मुझ पर और मेरे रसूल पर ईमान लाओ तो उन्हों ने कहा था कि हम ईमान लाए और तू गवाह रह कि हम मुस्लिम हैं।(अल-क़ुर्आन)

111. और जब मैं ने हवारियों (मसीह के साथियों) पर इल्हाम किया था [269] कि मुझ पर और मेरे रसूल पर ईमान लाओ तो उन्हों ने कहा था कि हम ईमान लाए और तू गवाह रह कि हम मुस्लिम हैं।[270]

وَإِذْ أَوْحَيْتُ إِلَى الْحَوَارِيِّينَ أَنْ آمِنُوا بِي وَبِرَسُولِي
قَالُوا آمَنَّا وَاشْهَدْ بِأَنَّنَا مُسْلِمُونَ ﴿١١١﴾

112. जब हवारियों (मसीह के साथियों) ने कहा था ऐ ईसा इब्ने मरयम क्या आप का रब आसमान से हम पर खाने की एक थाल उतार सकता है?[271] (ईसा ने) कहा अल्लाह से डरो [272] अगर तुम मोमिन हो।

إِذْ قَالَ الْحَوَارِيُّونَ يَا عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ هَلْ يَسْتَطِيعُ
رَبُّكَ أَنْ يُنَزِّلَ عَلَيْنَا مَائِدَةً مِنَ السَّمَاءِ ۖ قَالَ
اتَّقُوا اللَّهَ إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿١١٢﴾

113. उन्हों ने कहा हम चाहते हैं कि उस में से खाऐं और हमारे हृदय संतुष्ट हों और हम जान लें कि आप ने हम से सच कहा है और हम उस पर गवाह हो जाऐं ।[273]

قَالُوا نُرِيدُ أَنْ نَأْكُلَ مِنْهَا وَتَطْمَئِنَّ قُلُوبُنَا وَنَعْلَمَ أَنْ قَدْ
صَدَقْتَنَا وَنَكُونَ عَلَيْهَا مِنَ الشَّاهِدِينَ ﴿١١٣﴾

114. ईसा इब्ने मरयम ने दुआ की ऐ अल्लाह हमारे रब ![274] हम पर आसमान से एक थाल उतार जो हमारे लिए और हमारे अगलों पिछलों के लिए ईद (ख़ुशी) करार पाए [275] और तेरी तरफ़ से एक निशानी हो और हमें रिज़्क (रोज़ी) दे और तू बेहतरीन रिज़्क देने वाला है।[276]

قَالَ عِيسَى ابْنُ مَرْيَمَ اللَّهُمَّ رَبَّنَا أَنْزِلْ عَلَيْنَا مَائِدَةً مِنَ السَّمَاءِ
تَكُونُ لَنَا عِيدًا لِأَوَّلِنَا وَآخِرِنَا وَآيَةً مِنْكَ ۖ وَارْزُقْنَا
وَأَنْتَ خَيْرُ الرَّازِقِينَ ﴿١١٤﴾

115. अल्लाह ने फ़रमाया मैं उस को ज़रुर तुम पर उतारुँगा [277] लेकिन इस के बाद जो तुम में से कुफ्र करेगा उसे मैं ऐसा दण्ड दूँगा जो दुनिया वालों में से किसी को न दूँगा।[278]

قَالَ اللَّهُ إِنِّي مُنَزِّلُهَا عَلَيْكُمْ ۖ فَمَنْ يَكْفُرْ بَعْدُ مِنْكُمْ فَإِنِّي
أُعَذِّبُهُ عَذَابًا لَا أُعَذِّبُهُ أَحَدًا مِنَ الْعَالَمِينَ ﴿١١٥﴾

116. और जब अल्लाह फ़रमाएगा !ऐ ईसा इब्ने मरयम क्या तुम ने लोगों से कहा था कि अल्लाह के सिवा मुझे और मेरी माँ को ख़ुदा बना लो?[279] वह कहेंगे तू पवित्र है,[280] मैं ऐसी बात कैसे कह सकता था जिस के कहने का मुझे हक़ नहीं।[281]अगर मैं ने यह बात कही हो तो वह ज़रुर तेरी जानकारी में होगी।तू जानता है जो कुछ मेरे दिल में है और मैं नहीं जानता जो तेरे दिल में है। तू हि है ग़ैब (छिपे तथ्यों) की सारी बातें जानने वाला ।

وَإِذْ قَالَ اللَّهُ يَا عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ أَأَنْتَ قُلْتَ لِلنَّاسِ اتَّخِذُونِي
وَأُمِّيَ إِلَٰهَيْنِ مِنْ دُونِ اللَّهِ ۖ قَالَ سُبْحَانَكَ مَا يَكُونُ لِي أَنْ أَقُولَ
مَا لَيْسَ لِي بِحَقٍّ ۚ إِنْ كُنْتُ قُلْتُهُ فَقَدْ عَلِمْتَهُ ۚ تَعْلَمُ مَا فِي نَفْسِي
وَلَا أَعْلَمُ مَا فِي نَفْسِكَ ۚ إِنَّكَ أَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوبِ ﴿١١٦﴾

269. अर्थात हवारियों (मसीह के साथियों) के दिल में यह बात डाल दी थी कि वे ईमान लाऐं। दूसरे शब्दों में ईसा अलैहिस्सलाम के साथियों का ईमान लाना अल्लाह की तौफ़िक़ का परिणाम था। हवारियों की व्याख्या सूरह आले-इमरान नोट ७७ में गुज़र चुकी ।

270. इस से स्पष्ट हुआ कि ईसा अलैहिस्सलाम के साथियों का दीन इस्लाम था न कि मसीहिय्यत (Christianity) और वह अल्लाह ही को ख़ुदा मानते थे न कि हज़रत ईसा को। इस अक़ीदे (धारणा) के ख़िलाफ़ ईसाईयों ने जो बातें उन से संबद्ध की हैं वे मात्र झूठारोपण हैं. और क़ियामत के दिन ये सारे झूठ की क़लई खुल जाएगी।

271. ''उतार सकता है'' का मतलब यह नहीं कि क्या ऐसा करने पर ख़ुदा सक्षम (क़ादिर) है? क्यों कि हवारी सच्चे ईमान वाले थे इस लिए ख़ुदा की क़ुदरत (सामर्थ्य) के बारे में उन के शक में पड़ जाने का सवाल पैदा ही नहीं होता बल्कि उन के कहने का मतलब यह था कि क्या आसमान से थाल उतारना हिकमत के अनुसार (नीतिपूर्ण) होगा? या उस की शाने-हिकमत (तत्वदर्शिता) से यह उम्मीद की जा सकती है कि वह चमत्कारिक रुप से थाल उतारने का फैसला करेगा।

272. अर्थात् ऐसी असाधारण वस्तु की माँग करते हुए अल्लाह से डरो कि अगर उस ने प्रदान कर दिया तो तुम कड़ी आज़माइश में पड़ जाओगे।

273. हवारियों के इस बयान से स्पष्ट हुआ कि उन्होंने थाल उतारने की माँग नहीं कि थी बल्कि प्रार्थना की थी और उन के यह कहने से कि हम उस में से खाऐं अन्दाज़ा होता है कि यह बात उन्होंने ऐसे मौक़े पर कही होगी जब कि भूख की तेज़ी ने उन्हें परेशान किया होगा।

274. दुआ के इन शब्दों से यह बात प्रमाणित होती है कि ईसा अलैहिस्सलाम अल्लाह को बाप नहीं कहते थे बल्कि अपना और सब का रब कहते थे। इस से बाइबिल के उस बयान का खण्डन होता है कि वह अल्लाह को बाप कह कर पुकारते थे।

275. अर्थात हवारियों के लिए आसमान से रिज़्क़ (आजीविका) उतरने की यह घटना इस उम्मत के तमाम लोगों के लिए यादगार क़रार पाए। अगलों से अभिप्राय ईसा अलैहिस्सलाम की उम्मत के वे लोग हैं जो उन के ज़माने में मौजूद थे और पिछलों से अभिप्राय बाद के लोग हैं।

ईद से अभिप्रेत त्योहार नहीं बल्कि हर्षोल्लास की वह घटना है जो आने वाली नस्लों के लिए यादगार (स्मृति) क़रार पाए।

बाइबिल में यद्यपि यह घटना स्पष्टीकरण के साथ विद्यमान नहीं है लेकिन ईसा अलैहिस्सलाम के आखरी खाने (Last Supper) का जो वर्णन हुआ है वह एक महत्त्वपूर्ण घटना का महत्त्व रखता है और ईसाईयों में इसे काफ़ी प्रसिद्धि प्राप्त है। असंभव नहीं कि यह घटना माइदा (खाने से भरी थाल) के उतारने का ही हो और उस की तफ़्सील इन्जील ने भुला दी हो बहरहाल इस में थाली का वर्णन है।

''अखमीरी रोटी के पर्व के पहिले दिन..... जब साँझ हुई तो वह उन बारहों के साथ आया। और जब वे बैठे भोजन कर रहे थे, तो यीशु ने कहा मैं तुम से सच कहता हूँ कि तुम में से एक जो मेरे साथ भोजन कर रहा है, मुझे पकड़वाएगा। उन पर उदासी छा गई और वे एक एक कर के उस से कहने लगे क्या वह मैं हूँ?उस ने उन से कहा वह बारहों में से एक है जो मेरे साथ थाली में हाथ डालता है। क्योंकि मनुष्य का पुत्र तो जैसा उस के विषय में लिखा है जाता ही है परन्तु उस मनुष्य पर हाय जिस के द्वारा मनुष्य का पुत्र पकड़वाया ही जाता है...... और जब वे खा ही रहे थे तो उस ने रोटी ली और आशीष माँग कर तोड़ी और उन्हें दी और कहा लो यह मेरी देह है। फिर उस ने कटोरा ले कर धन्यवाद किया और उन्हें दिया और उन सब ने उस में से पीया। (मरकुस १४:१२ से २३)

बाइबिल से यह भी मालूम होता है कि यह घटना जुमे के दिन साँझ को घटी थी (और उसी रोज रात हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम आसमान पर उठा लिए गए) और गुडफ्रइडे (Good Friday) जो मनाया जाता है उस की असल भी यही प्रतीत होती है कि उस रोज़ साँझ को हज़रत ईसा ने आखिरी खाना खाया था ।

"and often Good Friday is a special day for the administration of the Lord.'s Supper. –(The Oxford Dictionary of the Christian Church P-571).

276. प्रार्थना (दुआ) के इन शब्दों में ईसा अलैहिस्सलाम ने निशानी (चमत्कार) को भी अल्लाह की ओर संबद्ध किया है और रिज़्क़ (आजीविका) को भी। मतलब यह है कि चमत्कार (मोअजज़ा) दिखाना भी अल्लाह ही का काम है और रिज़्क़ देना भी। उस की इन सिफ़तों (गुणों) में न ईसा साझीदार हैं न कोई और।

277. यह इर्शाद इस बात का प्रमाण है कि अल्लाह तआला ने थाली उतारने का फैसला फ़रमाया था अत: उसे अवश्य ही उतारा होगा। और टीकाकारों की अधिक संख्या इसी की क़ायल है।

278. अर्थात् इतनी खुली निशानी देखने के बाद जो व्यक्ति कुफ़्र करेगा उस का कुफ़्र दुनिया वालों में सब से बढ़ कर होगा इस लिए वह सब से बड़े दण्ड का हक़दार ठहरेगा।

279. ईसाई हज़रत ईसा ही की नहीं बल्कि उन की माँ हज़रत मरयम की भी पूजा अर्चना करते हैं और यह स्वाभाविक

परिणाम है उन की इस धारणा (अक़ीदे) का कि हज़रत ईसा ख़ुदा के बेटे हैं जब ईसा ख़ुदा के बेटे ठहराए गए (ख़ुदा की पनाह ऐसी बातों से) तो उन की माँ जिन्हों ने उन को जन्म दिया है खुदा कैसे न ठहराई जाऐंगी अत: उन्हें ''ईश्वर की माँ'' (Mother of God) का उपनाम दिया गया।

"It was at Ephesus, the city of the goddess, that the earliest proof is found of an established cult of the Virgin Mary as the Mother of God, and in the council held at Ephesus in A.D. 431 this cult was definitely established as a feature of the orthodox ritual."

–(Ency. of Religion and Ethics,Vol. IX P.908).

स्पष्ट रहे कि क़ुर्आन के अवतरण के समय ईसाईयों का प्रोटेसटेन्ट सम्प्रदाय मौजूद न था। यह सदियों बाद पैदा हुआ। उस ज़माने में कैथोलिक (मल्लाकानी) और दूसरे सम्प्रादाय मौजूद थे जैसे जैकोबाइट, नेस्टोरियन, मारुनी या मरयमी आदि। इन सम्प्रदायों के बीच मतभेद पाया जाता है। जैसे किसी का दावा था कि ख़ुदा ही मसीह बन कर आया था इस लिए मसीह का अस्तित्व ख़ुदा का अस्तित्व है, कोई त्रीश्वरवाद का क़ायल था अर्थात् बाप, बेटा और रुहुलक़ुदुस (पवित्र आत्मा) से ख़ुदा के बने होने का और किसी ने रुहुल क़ुदुस की जगह हज़रत मरयम को ख़ुदा की हैसियत दी थी। और कोई त्रीश्वरवाद के तीनों (विषयों) के साथ हज़रत मरयम को ख़ुदा की माँ की हैसियत से पूजा के योग्य जानता था। देखिए अर्ज़ुलक़ुर्आन, लेखक सैय्यद सुलैमान नदवी जिल्द २ पृष्ठ १९६ से १९९ तक)

280. अर्थात् तू पाक है इस बात से कि ख़ुदा होने में तेरा कोई साझीदार हो।

281. ईसा अलैहिस्सलाम का यह खंडन करने वाला बयान जो आख़िरत की अदालत में होगा, क़ुर्आन उसे पहले ही दुनिया वालों और विशेष रुप से ईसाईयों के सामने ला रहा है ताकि उन्हें मालूम हो जाए कि ख़ुदा होने से सम्बन्धित जो बातें हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम से संबद्ध कर दी गई हैं उन की कोई हक़ीक़त नहीं बल्कि मात्र झूठारोपण है।

आसमानों की और ज़मीन की और उन में जो कुछ है सब की बादशाही अल्लाह ही के लिए है और वह हर चीज़ पर क़ादिर (सामर्थ्य प्राप्त) है।(अल-क़ुर्आन)

117. मैं ने उन से इस के सिवा कुछ नहीं कहा जिस का तू ने हुक्म दिया था यह कि अल्लाह की इबादत करो जो मेरा रब (स्वामी) भी है और तुम्हारा रब भी।[282] मैं उन का देखने वाला था जब तक उन में मौजूद रहा। फिर जब तूने मुझे क़ब्ज़ कर लिया (मेरा समय पूरा कर दिया) [283] तो तू ही उन को देखने वाला (निगेहबान) था। और तू हर चीज़ पर निगराँ (देख रेख करने वाला) है।[284]

مَا قُلْتُ لَهُمْ إِلَّا مَا أَمَرْتَنِي بِهِ أَنِ اعْبُدُوا اللَّهَ رَبِّي وَرَبَّكُمْ ۚ
وَكُنتُ عَلَيْهِمْ شَهِيدًا مَّا دُمْتُ فِيهِمْ ۖ فَلَمَّا تَوَفَّيْتَنِي كُنتَ
أَنتَ الرَّقِيبَ عَلَيْهِمْ ۚ وَأَنتَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ شَهِيدٌ ﴿١١٧﴾

118. अगर तू उन्हें सज़ा दे तो वे तेरे बन्दे हैं और अगर उन्हें क्षमा कर दे तो तू ग़ालिब (प्रभुत्वशाली) और हिकमत वाला (तत्वदर्शी) है।

إِن تُعَذِّبْهُمْ فَإِنَّهُمْ عِبَادُكَ ۖ وَإِن تَغْفِرْ لَهُمْ فَإِنَّكَ أَنتَ
الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿١١٨﴾

119. अल्लाह फ़रमाएगाः यह वह दिन है कि सच्चे लोगों को उन की सच्चाई लाभ देगी।[285] उन के लिए ऐसे बाग़ हैं जिन के तले नहरें प्रवाहित हैं। वे उन में हमेशा रहेंगे। अल्लाह उन से राज़ी हुआ और वे अल्लाह से राज़ी हुए। यह है बड़ी कामयाबी।

قَالَ اللَّهُ هَٰذَا يَوْمُ يَنفَعُ الصَّادِقِينَ صِدْقُهُمْ ۚ لَهُمْ جَنَّاتٌ تَجْرِي
مِن تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا أَبَدًا ۚ رَّضِيَ اللَّهُ عَنْهُمْ وَرَضُوا
عَنْهُ ۚ ذَٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ﴿١١٩﴾

120. आसमानों की और ज़मीन की और उन में जो कुछ है सब की बादशाही अल्लाह ही के लिए है और वह हर चीज़ पर क़ादिर (सामर्थ्य प्राप्त) है।

لِلَّهِ مُلْكُ السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ
وَمَا فِيهِنَّ ۚ وَهُوَ عَلَىٰ كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿١٢٠﴾

282. व्याख्या के लिए देखिए सूरह आले इमरान नोट ७६

283. मतन (Text) में शब्द تَوَفَّيْتَنِىْ ''तवफ़्फ़ैतनी'' इस्तेमाल हुआ है जिस का अर्थ यहाँ क़ब्ज़ करने और समय पूरा करने के हैं। इस शब्द के सिलसिले में बहस सूरह आले इमरान नोट ८२ में गुज़र चुकी।

चूँकि ईसा अलैहिस्सलाम को अल्लाह तआला ने ज़िन्दा आसमान पर उठा लिया था इस लिए इस मौक़े पर उन की ज़बान से ''तू ने मुझे मौत दी'' के बजाय ''तूने मुझे क़ब्ज़ कर लिया या मेरा समय पूरा कर दिया'' के शब्द मामले की सही तस्वीर सामने लाते हैं । इसी तरह ''जब तक मैं ज़िन्दा रहा'' के शब्द इस्तेमाल करने के बजाय ''जब तक मैं उन में मौजूद रहा'' مَادُمْتُ فِيهِمْ (**मा दुमतो फ़ीहिम**) के शब्दों का इस्तेमाल बिलकुल उचित हुआ है।

284. ईसा अलैहिस्सलाम का यह बयान संवेदनापूर्ण भी होगा और दायित्वपूर्ण भी। वह ईसाईयों के लिए शफ़ाअत (अनुशंसा) नहीं करेंगे क्यों कि शिर्क करने वालों के लिए शफ़ाअत जायज़ नहीं होगी बल्कि वे इस मामले को अल्लाह के हवाले करेंगे कि उसे अधिकार है जो चाहे फ़ैसला करे और उस का फ़ैसला निश्चित रुप से सत्य पर आधारित और उचित होगा। इस से बाइबिल के इस बयान का खण्डन होता है जो हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम से सम्बन्ध बताया गया है कि:

''और पिता किसी का न्याय भी नहीं करता, परन्तु न्याय करने का सब काम पुत्र को सौंप दिया है।''

(यूहन्ना ५:२२)

क़ियामत के दिन जब मसीह के भक्त देखेंगे कि अल्लाह तआला ने खुद अदालत बरपा की है और हज़रत ईसा को कोई अदालती अधिकार नहीं है बल्कि वह गवाह की हैसियत से उस अदालत में पेश हुए हैं तो मसीहिय्यत का पूरा महल ढह जाएगा और उन के पाँव तले से ज़मीन निकल जाएगी।

ईसा अलैहिस्सलाम का यह बयान इतना सच्चा, स्वभाविक और प्रभावपूर्ण है कि कोई बहुत ही पत्थर दिल होगा जिस का दिल न पसीजे। काश कि मसीह के नाम लेवा एवं भक्त इस पर विचार करते।

285. अर्थात् आज वही लोग अपनी मुराद (लक्ष्य) को पहुँचेंगे जिन्हों ने दुनिया में सत्यनिष्ठ होने का सबूत दिया था, जो तौहीद (एकेश्वरवाद) पर क़ायम रहे और जिन्हों ने अल्लाह के दीन में कोई बिदअत (नई बात) नहीं निकाली ।

❒ ❒ ❒ ❒ ❒ ❒